॥ कोबातीर्थमंडन श्री महावीरस्वामिने नमः ॥

॥ अनंतलब्धिनिधान श्री गौतमस्वामिने नमः ॥ ॥ गणधर भगवंत श्री सुधर्मास्वामिने नमः ॥

॥ योगनिष्ठ आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ॥ ॥ चारित्रचूडामणि आचार्य श्रीमद् कैलाससागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ॥

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

पुनितप्रेरणा व आशीर्वाद

राष्ट्रसंत श्रुतोद्धारक आचार्यदेव श्रीमत् पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा.

जैन मुद्रित ग्रंथ स्केनिंग प्रकल्प

ग्रंथांक : १



श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-३८२००७ (गुजरात)
(079) 23276252, 23276204
फेक्स : 23276249
Websiet : www.kobatirth.org
Email : Kendra@kobatirth.org

शहर शाखा

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
शहर शाखा
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
त्रण बंगला, टोलकनगर
परिवार डाइनिंग हॉल की गली में
पालडी, अहमदाबाद – ३८०००७
(079) 26582355

भारत-भैषज्य-रत्नाकर

भाग ३

रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह

आयुर्वेदीय साहित्य में फार्माकोपिया के अभाव को ध्यान में रखकर इस ग्रन्थ को परिश्रमपूर्वक तैयार किया गया था और आज भी यह ग्रन्थ उतना ही उपयोगी है जितना तब था। इसमें क्वाथ, चूर्ण, अवलेह, गुटिका, घृत, तैल, रस इत्यादि प्रकरणों में विभक्त दस सहस्र से अधिक प्राचीन एवं आर्वाचीन प्रयोगों का संग्रह सैकड़ों ग्रन्थों का मन्थन करके किया गया है।

इस ग्रन्थ में कोश-शैली का अनुसरण किया गया है, जिससे इष्ट प्रयोग बिना किसी कठिनाई के ढूंढा जा सकता है। एक और लाभ इस शैली का यह है कि भिन्न-भिन्न ग्रन्थों और पृथक्-पृथक् अधिकारों में एक नाम के जितने प्रयोग पाए जाते हैं वे सब इसमें एक ही स्थान में आ गए हैं। उद्धरण जिन ग्रन्थों से लिए गए हैं उनके नाम एवं अधिकार भी दे दिए गए हैं। रोगानुसारिणी सूची "चिकित्सापथ-प्रदर्शिनी" नाम से अन्त में दे दी गई है, जिससे ग्रन्थ की व्यावहारिक उपयोगिता बहुत बढ़ गई है।

(सम्पूर्ण ५ भागों में) मूल्य: रु० ५००

भारत-भैषज्य-रत्नाकर

तृतीय भाग

भारत-भैषज्य-रत्नाकर

तृतीय भाग

संग्रहकर्ता
रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह

व्याख्याकार
भिषग्रत्न गोपीनाथ गुप्त

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली वाराणसी पटना मद्रास

मो ती ला ल ब ना र सी दा स
मुख्य कार्यालय : बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली ११० ००७
शाखाएं : चौक, वाराणसी २२१ ००१
अशोक राजपथ, पटना ८०० ००४
६ अपर स्वामी कोइल स्ट्रीट, मैलापुर, मद्रास ६०० ००४

प्रथम संस्करण : ऊँझा (उत्तर गुजरात), १९२४-३७
पुनर्मुद्रण : दिल्ली, १९८५
मूल्य : रु० ५०० (पांच भागों में सम्पूर्ण)

नरेन्द्र प्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली ७
द्वारा प्रकाशित तथा शान्तिलाल जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस, ए-४५,
फेज-१, नारायणा, नई दिल्ली २८ द्वारा मुद्रित।

विषयानुक्रमणिका

तृतीय भाग



भारत-भैषज्य-रत्नाकरः

तृतीयो भागः

॥ श्री धन्वन्तरये नमः ॥

अथ मङ्गलाचरणम्

परात्मानमेकं जगद्वीजमाद्यम्
निरीहं निराकारमोंकारवेद्यम् ।
यतो जायते पाल्यते येन विश्वम्
तमीशं भजे लीयते यत्र विश्वम् ॥



अथ दकारादिकषायप्रकरणम्

(**दृष्टव्य**—कषाय प्रयोगोंमें जिन औषधियोंकी मात्रा न लिखी हो वह सब समान भाग मिलाकर २ तोले लीजिए और आधा सेर पानीमें पकाकर आध पाव शेष रहने पर छान लीजिए। विशेष व्याख्याके लिए भा. भै. र. प्रथम भाग पृ. १ अवलोकन कीजिए।

(२८१२) **दण्डोत्पलास्वरसः**

(रा. मा. । व्रणा.)

दण्डोत्पलायाः स्वरसेन पूर्णो
रिक्तीकृतो यः परिपूरितश्च ।
पश्चान्निबद्धो मृदुपट्टकेन
क्षिप्रं स संरोहति शस्त्रघातः ॥

शस्त्रके घावमें दण्डोत्पला (सहदेवी भेद) का स्वरस भरकर उसे निकाल दीजिये और फिर दुबारा भरकर उसपर कोमल वस्त्रकी पट्टी बांध दीजिये । इससे घाव शीघ्र ही भर जाता है ।

(२८१३) **दधिदुग्धकृतिः** (१)

(ग. नि. । ख. २ वाजी.)

लिप्ते कपित्थेन सुभाजने हि
चित्रेण पक्वाम्ररसेन तद्वत् ।
क्षुण्णाम्रकास्थ्ना च पृथक् पृथग्वै
न्यस्तं शृतं दुग्धवरं दधि स्यात् ॥

पात्रमें पानीमें पिसे हुवे कैथके गूदेका या चीतेको पानीमें पीस कर उसका अथवा पके आमके रसका लेप करें या आमकी गुठलीको पानीमें पीसकर उसका लेप कर दें । इस बरतनमें पका हुवा दूध भर देनेसे उसकी दही बन जाती है ।

(२८१४) **दधिदुग्धकृतिः** (२)

(ग. नि. । खं. २ वाजी. अ.)

सतिन्तडीकैर्बदराम्लदाडिमैः;
श्रेष्ठं तथैवं सरसं दधि स्यात् ।

इमलीका पीसकर बरतनमें उसका लेप कर दीजिए, अथवा बेर या खट्टे अनारके रसका लेप करके सुखा लीजिये । इस बरतनमें पका हुवा दूध भर देनेसे उसकी उत्तम दही बन जाती है ।

(२८१५) **दधिदुग्धकृतिः** (३)

(ग. नि. । ख. २ वा. अ.)

पक्वस्य मज्जा सुकपित्थकस्य
वारं च वारं शृतदुग्धभाविता ।
शुष्काम्रचूर्णेक्षुरसस्य मध्ये
क्षिप्तेक्षुजातं कुरुते सुदुग्धम् ॥

पके हुवे कैथके गूदेको बार बार गरम दूधमें घोटकर सुखा लीजिए, फिर ईखके रसमें थोड़ासा सूखे आमका चूर्ण डालकर उसमें यह चूर्ण डाल दीजिए । इससे उसका दूध बन जाता है ।

(२८१६) **दधिदुग्धकृतिः** (४)

(ग. नि. । ख. २ वाजि. अ.)

पक्वस्य चूर्णं सुकपित्थकस्य
दुग्धेन भाव्यं महिषीभवेन ।
शुष्कं क्षिपेत्तक्रयुते सुभाण्डे
तत्कालिकं स्याद्दधि निर्जलं वै ॥

कैथके पके फलोंके गूदेको भैंसके दूधकी भावना देकर सुखा लीजिए । इसे तक्रमें डालनेसे तुरन्त उसकी जल रहित दही बन जाती है ।

(२८१७) **दध्यम्लप्रयोगः**

(च. द. । वा. व्या. अ. २२)

हन्ति प्राग्भोजनात्पीतं दध्यम्लं सवचोषणम् ।
अपतानकमन्योऽपि वातव्याधिक्रमो हितः ॥

भोजनसे पहिले दहीके मस्तुमें बच और काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर पीनेसे अपतानक रोग नष्ट होता है ।

अपतानक रोगमें अन्य वातनाशक उपाय भी करने चाहियें ।

(२८१८) **दन्त्यादिकल्कः (१)**

(वं. से. । विषूच्य.)

हन्ति दन्त्यग्निकल्कस्तु पिप्पलीकल्कसंयुतः ।
पीतः कोष्णेन तोयेन क्षिप्रं हन्याद्विषूचिकाम् ॥

दन्ती, चीता, और पीपल समान भाग लेकर पत्थर पर पानीके साथ पीसकर मन्दोष्ण पानीके साथ पिलाने से विशूचिका शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(२८१९) **दन्त्यादिकल्कः (२)**

(च. द. । उदरा.)

दन्ती वचा गवाक्षी च शङ्खिनी तिल्वकं त्रिवृत् ।
गोमूत्रेण पिबेत्कल्कं जठरामयनाशनम् ॥

दन्ती, बच, इन्द्रायणकी जड़, शंखिनी, लोध और निसोत समान भाग लेकर गोमूत्रके साथ पत्थर पर पीसकर गोमूत्रके साथ पिलानेसे उदर रोग शान्त होते हैं ।

(२८२०) **दन्त्यादिक्वाथः**

(वं. से. । ज्व.)

दन्तीं द्रवन्तीं बृहतीमेरण्डं बीजपूरकम् ।
श्यामां व्याघ्रीञ्च निष्क्वाथ्याभिन्यासे बहुवर्चसि ॥

अभिन्यास ज्वरमें मल अधिक हो तो दन्ती, द्रवन्ती (बृहद्दन्ती), बड़ी कटेली, अरण्डकी जड़, बिजौरेकी जड़, निसोत (काली) और छोटी कटेलीका क्वाथ बनाकर पिलाना चाहिए ।

(२८२१) **दन्त्यादियोगः**

(वं. से. । ऊरुस्तम्भ.)

दन्तीद्रवन्तीसुरसासर्षपैश्चापि बुद्धिमान् ।
तर्कारीस्वरसं शिग्रुवचावत्सकनिम्बकैः
पत्रमूलफलैस्तोयैः शृतमुष्णञ्च सेवनम् ॥

दन्ती, द्रवन्ती (बृहद्दन्ती), तुलसी, सरसों, अरणी, सहंजना, बच, कुड़ा और नीम । इनके पत्र, मूल और फलोंका स्वरस या काथ बनाकर गरम गरम पिलाने से ऊरुस्तम्भ नष्ट होता है ।

(२८२२) **दर्भमूलादिक्वाथः**

(बृ. नि. र. । ज्वर.)

दर्भं बला गोक्षुरकं पचेत्पादावशेषितम् ।
शर्कराघृतसंयुक्तं पिबेद्वातज्वरापहम् ॥

दाभ, खरैटी और गोखरु बराबर बराबर मिलाकर २ तोले लें और ३२ तोले पानीमें पकावें। जब ८ तोले पानी बाकी रह जाय तो छानकर उसमें खांड और घी मिलाकर पिलावें ।

इसके सेवनसे वातज्वर नष्ट होता है ।

(२८२३) **दशमूलम्**

(च. द. । अ. १; भा. प्र. । म. ख. ज्व.; ग. नि; र. र.; ध.; बृ. नि. र. । ज्व.; आयु. वे. वि. । ज्वर; यो. त. । त. २०; यो. चि. । अ.४)

बिल्वश्योनाकखम्भारीपाटलागणिकारिकाः ।
दीपनं कफवातघ्नं पञ्चमूलमिदं महत् ॥
शालिपर्णी पृश्निपर्णी बृहतीद्वयगोक्षुरम् ।
वातपित्तहरं वृष्यं कनीयं पञ्चमूलकम् ॥
उभयं दशमूलन्तु सन्निपातज्वरापहम् ।
कासे श्वासे च तन्द्रायां पार्श्वशूले च शस्यते ॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं कण्ठहृद्ग्रहनाशनम् ।
महान्ति यानि मूलानि काष्ठगर्भाणि यानिच ॥

तेषान्तु वल्कलं ग्राह्यं ह्रस्वमूलानि कृत्स्नशः ॥
(अत्र बिल्वादीनां पञ्चानां मूलस्य वल्कलं ग्राह्यम्)

बेलकी जड़की छाल, सोनापाठा (अरलु) की जड़की छाल, खम्भारीकी जड़की छाल, पाढलकी जड़की छाल और अरणीकी जड़की छाल। इन पांचोंके योगको बृहत् पञ्चमूल कहते हैं। यह दीपन और कफवात-नाशक है।

शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, छोटी और बड़ी कटेरी तथा गोखरु। इन पांचों ओषधियोंके योगको "लघु पञ्चमूल" कहते हैं। यह वातपित्त नाशक और वृष्य है।

बृहत् पञ्चमूल और लघु पञ्चमूलके योगको दशमूल कहते हैं।

दशमूल सन्निपातज्वर, खांसी, श्वास, तन्द्रा और पसलीके दर्दको नष्ट करता है। यदि इसके क्काथमें पीपलीका चूर्ण मिलाकर पिलाया जाय तो कण्ठग्रह और हृद्ग्रहमें लाभ होता है।

जो बड़े वृक्ष हों और जिनके तने के भीतर सार भाग हो उनकी छाल और छोटे पौदोंका कि जिनकी जड़ छोटी हो पञ्चाङ्ग ग्रहण करना चाहिए। इस परिभाषाके अनुसार बृहत् पञ्चमूल में उन वृक्षोंकी जड़की छाल लेनी चाहिए।

(२८२४) **दशमूलक्काथः** (१)

(ग. नि. । सूतिका.)

पञ्चमूलद्वयक्काथं तप्तलोहेन संगतम् ।
सूतिकारोगनाशाय पिबेद्वा तद्युतां सुराम् ॥

दशमूलके क्काथमें लोहेको गरम करके बुझावें। यह क्काथ या इसमें मदिरा मिलाकर पीनेसे सूतिका रोग (प्रसूतरोग) नष्ट होता है।

(२८२५) **दशमूलक्काथः** (२)

(वं. से. । स्त्रीरो.)

दशमूलकृतं तोयं कोष्णञ्च हविषान्वितम् ।
पथ्याशिन्या हुतं नार्या पीतं सूतीरुजं जयेत् ॥

दशमूलके मन्दोष्ण क्काथमें घृत मिलाकर पीने और पथ्य पालन करनेसे सूतिका रोग (प्रसूतरोग) शीघ्र ही शान्त हो जाता है।

(२८२६) **दशमूलक्षीरयोगः**

(वृं. मा. । वा. र.; वा. भ. । चि. अ. २२; भा. प्र. । वा. र.)

दशमूलीशृतं क्षीरं सद्यः शूलविनाशनम् ।
परिषेकोऽनिलप्राये तद्वत्कोष्णेन सर्पिषा ॥

दशमूलसे यथाविधि दूध पकाकर[1] पिलानेसे वातरक्त सम्बन्धी पीड़ा तुरन्त नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार वात प्रधान वातरक्तमें मन्दोष्ण घृतसे परिषेक करनेसे भी पीड़ा शान्त होती है।

(२८२७) **दशमूलदुग्धप्रयोगः**

(र. र. । सूति.)

सिद्धं द्विपञ्चमूलाभ्यां पयः शार्करपादधृक् ।
सूतिकोपद्रवं हन्ति पीतमात्रं न संशयः ॥

दशमूलसे यथाविधि दूध पकाकर[1] उसमें उसका चौथा भाग खांड मिलाकर पिलानेसे सूतिकारोग (प्रसूतरोग) अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है।

(२८२८) **दशमूलादिकषायः** (१)

(ग. नि. । कर्ण.)

१-दशमूल २ तोला, दूध १६ तो., पानी ६४ तोले। सबको एकत्र मिलाकर पकावें और पानी जल जाने पर दूधको छानलें।

दशमूली वरा भद्रा भार्गी चैषां शृतं जलम् ।
व्योषहिङ्गुयुतं पीतं बाधिर्यं तेन शाम्यति ॥

दशमूल, हर्डे, बहेड़ा, आमला, कायफल और भरंगी के काथमें त्रिकुटा और हींग मिलाकर पीनेसे बधिरता जाती रहती है ।

नोट—त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) का चूर्ण १ माशा और हींग १ रत्ती मिलाना चाहिए ।

(२८२९) **दशमूलादिकषायः** (२)

(वं. से. । वातव्या.)

दशमूलीबलामाषक्राथं तैलाज्यमिश्रितम् ।
सायं भुक्त्वा पिबेन्नस्यं विश्वाच्यामपबाहुके ॥

दशमूल, खरैटी, और उर्दके काथमें तैल और घी मिलाकर सायंकालके भोजनके बाद नाकसे पीनेसे विश्वाची और अपबाहुक नामक वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(२८३०) **दशमूलादिकषायः** (३)

(ग. नि. । विस्फो.)

द्विपञ्चमूली त्रिफला गुडूची
किराततकं धन्वयवासकं च ।
जले शृतं मागधिकाविमिश्रं
त्रिदोषविस्फोटहरं प्रदिष्टम् ॥

दशमूल, त्रिफला, गिलोय, चिरायता और धमासा । इनके काथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पिलानेसे त्रिदोषज विस्फोटकका नाश होता है ।

(२८३१) **दशमूलादिकाथः** (१)

(वृ. नि. र. । सन्नि.; भा. प्र. । ज्व.)

दशमूलमत्स्यशकलाचपला
त्रिफलामहौषधकिराततयुतम् ।
मरिचं परिकथितमाशु बला-
दपहन्ति कर्णकरुजः सकलाः ॥

दशमूल, कुटकी, पीपल, त्रिफला, सोंठ, चिरायता और स्याह मिर्चका काथ पीनेसे कर्णक सन्निपात अवश्य शीघ्रही शान्त हो जाता है ।

(२८३२) **दशमूलादिकाथः** (२)

(भा. प्र. । म. ख. श्वास; वं. से.; यो. र. । हिक्का.)

दशमूलस्य वा क्वाथ पौष्करेणावचूर्णितः ।
श्वासकासप्रशमनः पार्श्वशूलनिवारणः ॥

दशमूलके काथमें पोखरमूलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे श्वास, खांसी और पसलीका दर्द नष्ट होता है ।

(२८३३) **दशमूलादिकाथः** (३)

(वृ. नि. र. । पाण्डु; ग. नि.; वृं. मा.; व. से.; यो. र. । पाण्डु)

द्विपञ्चमूलीकथितं सविश्वं
कफात्मके पाण्डुगदे पिबेत्तत् ।
ज्वरेतिसारे श्वयथौ ग्रहण्यां
कासेऽरुचौ कण्ठहृदामयेषु ॥

कफज पाण्डु, ज्वर, अतिसार, शोथ, संग्रहणी, खांसी, अरुचि, कण्ठरोग तथा हृद्रोगमें दशमूलके काथमें सोंठका चूर्ण मिलाकर पिलाना चाहिए ।

(२८३४) **दशमूलादिकाथः** (४)

(वै. म. र. । प. १३)

दशमूलानि च नलिनं कुष्ठमुशीरं नतस्पृक्के ।
एरण्डशिफां च पिबेद् गर्भाशयशोधनाय गो-
पयसा ॥

दशमूल, कमल, कूट, खस, तगर, स्पृक्का (सेवती) और अरण्डमूल के काथमें गायका दूध मिलाकर या इनसे गोदुग्ध पकाकर पीनेसे गर्भाशय शुद्ध होता है ।

(२८३५) **दशमूलादिकाथः** (५)

(वृ. नि. र. । विस्फो.; यो. र. । मसू.; भा. प्र. । खं.२ मसू.; र. र.; वृं. मा. । मसू.; वं.से. । विस्फो; वृ. यो. त. । त. १२५)

द्विपञ्चमूलं रास्ना च दार्व्युशीरं दुरालभम् ।
सामृता धान्यकं मुस्तां क्वाथयित्वा शृतं पिबेत् ॥
विस्फोटं वातसम्भूतं हन्त्येतन्नात्र संशयः ॥

दशमूल, रास्ना, दारुहल्दी, खस, धमासा, गिलोय, धनिया और मोथा। इनका काथ पीनेसे वातज विस्फोटक रोग अवश्य शान्त हो जाता है।

(२८३६) **दशमूलादिकाथः** (६)

(वृं. मा. । वाता.; च. द. । अ. २२)

दशमूली बला रास्ना गुडूची विश्वभेषजम् ।
पिबेदेरण्डतैलेन गृध्रसीखञ्जपङ्गुषु ॥

दशमूल, खरैटी, रास्ना, गिलोय और सोंठ के काथमें अरण्डीका तैल (कास्ट्रायल) मिलाकर पीनेसे गृध्रसी, खञ्जवात तथा पङ्गुत्व (लंगडा, लूला हो जाना) का नाश होता है।

(२८३७) **दशमूलादिकाथः** (७)

(वं० से० । राजय.)

द्विपञ्चमूलीमगधाधान्यनागरजं जलम् ।
चातुर्जातकसंयुक्तं पिबेन्नित्यं क्षयातुरः ॥
कासज्वरादिशमनं बलपुष्टि विवर्धनम् ॥

क्षय से पीड़ित रोगीको नित्य प्रति दशमूल, पीपल, धनिया और सोंठके काथमें चातुर्जात (दालचीनी, तेजपात, इलायची और नागकेसर) का चूर्ण मिलाकर पीना चाहिए।

यह काथ खांसी और ज्वरादिको नष्ट करता तथा बल और पुष्टि बढ़ाता है।

(२८३८) **दशमूलादिकाथः** (८)

(वृ. नि. र. । मूत्रा.; यो. र. । मूत्रकृ.; यो. त. । त. १०१)

दशमूलीशृतं पीत्वा सशिलाजतुशर्करम् ।
वातकुण्डलिकाष्ठीलावातबस्तेः प्रमुच्यते ॥

दशमूलके काथमें शिलाजीत और खांड मिलाकर पीनेसे वातकुण्डलिका,[१] अष्ठीला और वातवस्ति (वातज मूत्राघात रोग) नष्ट होता है।

(२८३९) **दशमूलादिकाथः** (९)

(ग० नि० । उदर.)

दशमूलदारुनागरच्छिन्नरुहपुनर्नवाक्काथः ।
जयति जलोदरशोथश्लीपदगलगण्डवातिकान् रोगान् ॥

दशमूल, देवदारु, सोंठ, गिलोय और पुनर्नवा (साठी) का काथ पीनेसे जलोदर, शोथ, श्लीपद और गलगण्ड तथा अन्य वातज रोग नष्ट होते हैं।

(२८४०) **दशमूलादिकाथः** (१०)

(यो. र.; वृ. मा.; वं. से. । हृद्रो.)

दशमूलकषायस्तु लवणक्षारसंयुतः ।
पीतो निहन्ति सहसा हृदामयमसंशयम् ॥

दशमूलके काथमें सेंधा नमक और जवाखार मिलाकर पीनेसे हृद्रोग अवश्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(२८४१) **दशमूलादिकाथः** (११)

(भा. प्र. । म. ख. ज्व.; आ. वे. वि. । उत्त. अ. ४.)

श्रीफलः सर्वतोभद्रा कामदूती च शोणकः ।
तर्कारी गोक्षुरः क्षुद्रा बृहती कलशी स्थिरा ॥

१ मूत्राघातका भेद जिसमें मूत्र थोड़ा थोड़ा रुकरुक कर पीड़ाके साथ आता है

रास्ना कणा कणामूलं कुष्ठं शुण्ठी किरातकः ।
मुस्ता बलामृता बालद्राक्षा यासः शताह्विका ॥
एषां क्वाथो निहन्त्येव प्रभञ्जनकृतं ज्वरम् ।
सोपद्रवश्च योगोऽयं सर्वयोगवरः स्मृतः ॥

दशमूल (बेल, कुम्हार, पाढल, सोना पाठा, अरणी, गोखरू, कटहली, कटहला, पृश्निपर्णी, शालपर्णी) रासना, पीपल, पीपलामूल, कूठ, सोंठ चिरायता, नागरमोथा, खरैटी, गिलोय, किसमिस जवासा और सतावर। इनका क्वाथ बनाकर पीनेसे उपद्रव सहित वातज्वर नष्ट होता है। ये प्रयोग सब योगोंमें उत्तम है।

दशमूलादिचतुर्दशाङ्गक्वाथः (वृं. मा. । ज्व.)

(भा. भै. र. प्रथम भागमें "किरातादि क्वाथ" सं. ६४८ देखिये।)

(२८४२) **दशमूलादिजलम्**

(वृ. मा. । हिक्का; वृ. नि. र. । हिक्का.)

तृषितो दशमूलस्य क्वाथं वा देवदारुणः ।
मदिरां वा पिबेद्युक्त्या हिक्काश्वासप्रपीडितः ॥

हिचकी या श्वासके रोगीको यदि तृषा अधिक हो तो यथोचित मात्रानुसार दशमूलका क्वाथ, या देवदारुका क्वाथ, या मदिरा पिलानी चाहिए।

(२८४३) **दशमूलादिपञ्चदशाङ्गः**

(च. द. । अ. १०; ग. नि. । रा. य.; यो. र.; वं. से. । रा. य.; वृ. मा. । रा. य.)

दशमूलबलारास्ना-
पुष्कर सुरदारुनागरैः क्वथितम् ।
पेयं पार्श्वांसशिरोरुक्-
क्षयकासादिशान्तये सलिलम् ॥

दशमूल, खरैटी, रास्ना, पोखरमूल, देवदारु और सोंठका क्वाथ पीनेसे पसली, कंधे, और शिरकी पीड़ा तथा क्षय और खांसीका नाश होता है।

(२८४४) **दशमूलादिपञ्चदशाङ्गक्वाथः**

(वृ. मा. । ज्व.)

दशमूलीशठीशृङ्गीव्योषक्वाथं पिबेन्नरः ।
सन्निपातज्वरं हन्ति इत्याह कपिलो मुनिः ॥

कपिल मुनिका कथन है कि दशमूल, शठी (कचूर), काकड़ासिंगी, सोंठ, काली मिर्च और पीपलका क्वाथ पीनेसे सन्निपातज्वर नष्ट होता है।

(२८४५) **दशमूलादियवागूः**

(वं. से. । श्वास.)

दशमूलीशठीरास्नापिप्पलीविश्वपौष्करैः ।
शृङ्गीतामलकीभार्ङ्गीगुडूचीनागरादिभिः ॥
यवागूर्विधिना सिद्धं कषायं वा पिबेन्नरः ।
सहृद्ग्रहपार्श्वार्तिहिक्काश्वासप्रशान्तये ॥

दशमूल, कचूर, रास्ना, पीपल, सोंठ, पोखरमूल, काकड़ासिंगी, भुई आमला, भारंगी, गिलोय और नागरादिगण[1]की ओषधियोंका क्वाथ बनाकर पीने या उससे यवागू[2] सिद्ध करके खानेसे हृद्ग्रह, पसलीकी पीड़ा, हिचकी और श्वास नष्ट होता है।

(२८४६) **दशमूलीयोगः**

(यो. र. । उदर.)

दशमूलकषायेण क्षीरवृत्तिः शिलाजतुः ।
सद्यो वातोदरी क्षीरमौष्ट्रमाजं च केवलम् ॥

१ नागरादि गण—सोंठ, देवदारु, धनिया, कटेली, कटेला।

२ सब ओषधियां समान भाग मिलाकर १ पाव (२० तोले) लें और १६० तोले पानीमें पकावें। जब ४० तोले पानी रहे तो उसमें ६—७ तोले चावल डालकर पकावें।

वातोदरी रोगीको केवल ऊंटनी या बकरीके दूध पर रखकर दशमूलके काथमें शिलाजीत मिलाकर पिलाना चाहिए।

(२८४७) **दशमूलावसेचनम्**

(वं. से. । व्रणा.)

त्रिपञ्चमूलकल्केन क्वथितेनाम्भसाऽपि वा ।
सर्पिषा सह तैलेन कोष्णेन परिषेचयेत् ॥

दशमूलके कल्क या काथमें घी या तेल मिलाकर थोड़ा गरम रहने पर उससे घावको धोना चाहिये।

(२८४८) **दशमूलीकषायः**

(भा. प्र. । ज्वर; वं. से.; र. र.; वृ. मा. । हिक्का.; वृ. यो. त. । त. ८०)

दशमूलीकषायन्तु पुष्कराह्वकणायुतम् ।
सन्निपातज्वरे देयं श्वासकासतृषान्विते ॥

दशमूल, पोखरमूल और पीपरका काथ पिलाने अथवा दशमूलके काथमें पोखरमूल और पीपलका चूर्ण मिलाकर पिलानेसे सन्निपातज्वर, श्वास, खांसी और तृष्णाका नाश होता है।

(२८४९) **दशमूलीयोगः**

(ग. नि. । आमवा.)

आमवाते कणायुक्तं दशमूलीजलं पिबेत् ।
पिबेद्वाऽप्यभयाविश्वागुडूचीनागरैर्युतम् ॥

आमवात (गठिया) की शान्तिके लिए दशमूल, या दशमूल, हर्र, शतावर, गिलोय और सोंठ के काथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीना चाहिये।

(२८५०) **दशमूलीरसप्रयोगः**।

(च. द. । अ. १; वृ. नि. र.; भा. प्र.; वृ. मा.; भै. र. । ज्वर.)

दशमूलीरसः पेयः कणायुक्तः कफानिले ।
अविपाकेऽतिनिद्रायां पार्श्वरुक्श्वासकासके ॥

कफवातज ज्वरमें अग्निमांद्य, अतिनिद्रा, पसलीका दर्द, श्वास और खांसी हो तो दशमूलके काथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पिलाना चाहिए।

(२८५१) **दशमूल्यादिक्वाथः**।

(वृ. यो. त. । त. ९०)

दशमूलस्य निर्यूहो हिङ्गुपुष्करचूर्णितः ।
शमयेत्परिपीतस्तु वातं मिम्मिणि संज्ञितम् ॥

दशमूलके काथमें हींग और पोखरमूलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे मिन्मिन रोग शान्त होता है।

(२८५२) **दशाङ्गक्वाथः**।

(भै. र. । अम्ल.; ग. नि.; र. र. । अम्ल.; वृ. यो. त. । त. १२२; यो. चिं. म. । अ. ४)

वासामृतापर्पटकनिम्बभूनिम्बमार्कवैः ।
त्रिफलाकुलत्थैः क्वाथः सक्षौद्रश्चाम्लपित्तहा ॥

बासा, गिलोय, पितपापड़ा, नीमकी छाल, चिरायता, भंगरा, हर्र, बहेड़ा, आमला और कुलथी। इनके काथमें शहद मिलाकर पीनेसे अम्लपित्तका नाश होता है।

(२८५३) **दशाष्टाङ्गक्वाथः**

(वृ. यो. त. । त. ५९; यो. र.; वं. से. । ज्वर.; वृ. नि. र.; वै. र. । ज्वर.)

द्राक्षामृता शठी शृङ्गीमुस्तकं रक्तचन्दनम् ।
नागरं कटुकं पाठा भूनिम्बं सदुरालभम् ॥
उशीरं धान्यकं पद्मं बालकं कण्टकारिका ।
पुष्करं पिचुमन्दश्च दशाष्टाङ्गमितिस्मृतम् ॥
जीर्णज्वरारुचिश्वासकासश्वयथुनाशनम् ॥

दाख (मुनका), गिलोय, शठी (कचूर),

काकड़ासिंगी, मोथा, लाल चन्दन, सोंठ, पटोलपत्र, पाठा, चिरायता, धमासा, खस, धनिया, पद्माक, सुगन्धबाला, कटेली, पोखरमूल और नीमकी छाल। इन अठारह ओषधियोंके योगको दशाष्टाङ्ग क्वाथ कहते हैं। इसके सेवनसे जीर्णज्वर, अरुचि, श्वास, खांसी, और सूजनका नाश होता है।

(२८५४) **दाडिमत्वक्क्वाथः**

(यो. र. । कृ. चि.)

दाडिमत्वक्कृतः क्वाथस्तिलतैलेन संयुतः ।
त्रिदिनात्पातयत्येव कोष्ठतः कृमिजालकम् ॥

दाड़िम (अनार) के वृक्षकी छालके क्वाथमें तिलतैल मिलाकर ३ दिनतक पिलानेसे उदरके कृमि अवश्य निकल जाते हैं।

(२८५५) **दाडिमपुटपाकः**

(भै. र.; यो. र. । अति.)

पुटपाकेन विपचेत्सुपक्वं दाडिमीफलम् ।
तद्रसो मधुसंयुक्तः सर्वातीसारनाशनः ॥

पके अनार (दाड़िम) को पुटपाक[१] विधिसे पकाकर उसका रस निकाल लीजिए। इसमें शहद मिलाकर सेवन करनेसे समस्त प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं।

(२८५६) **दाडिमबीजादिप्रयोगः**

(वं. से. । तृषा.)

अम्लं दाडिमबीजं पीतं धात्रीफलञ्च धान्याम्लैः
आर्द्रपटास्तरणकृतप्रावृतगात्रस्तृषां जयति ॥

खट्टे अनारके बीज और आमलेको काञ्जीके साथ पीसकर पीने और गीली चादरसे शरीरको ढकनेसे तृषा शान्त हो जाती है।

(२८५७) **दाडिमरसः**

(वृ. नि. र. । अरुचि.)

विडङ्गचूर्णसंयुक्तो रसो दाडिमसम्भवः ।
असाध्यमपि संहन्यादरुचिं वक्त्रधारितः ॥

अनार (दाड़िम) के रसमें बायबिडङ्गका चूर्ण मिलाकर मुंहमें रखने से असाध्य अरुचि भी नष्ट हो जाती है।

(२८५८) **दाडिमरसादिकवलग्रहः**

(ग. नि. । अरो.)

दाडिमोत्थस्तु निर्यासस्त्वजाजीशर्करान्वितः ।
मधुतैलयुतो हन्यादरुचिं कवलीकृतः ॥

अनार (दाड़िम) के स्वरस में जीरा, खांड शहद और तिलका तेल मिलाकर उसके कवल[२] धारण करने से अरुचि नष्ट होती है।

(२८५९) **दाडिमादिकल्कः** (१)

(ग. नि. । अति.)

दाडिमीधातकीमूलकण्टकारीकुटजत्वचः ।
रोध्रं तण्डुलतोयेन प्रपिष्टमतिसारजित् ॥

अनारकी छाल, धायकी जड़, कटेली, कुड़ेकी छाल और लोध; समान भाग लेकर चावलोंके पानीमें पीसकर पिलानेसे अतिसार नष्ट होता है।

(चावलोंका पानी—प्रथम भाग पृष्ठ ३५३ पर तण्डुलोदक बनानेकी विधि देखिए।)

१ पुट-पाक-विधि प्रथम भागके पृष्ठ ३५२ पर देखिये।

२ अनारकारस, शहद और तेल बराबर बराबर मिले हुवे ५ तोले। जीरा और खांड ६-६ माशे मिलाकर मुखमें भरें और थोड़ी देर मुखको चलाते रहें जब आंख नाकसे पानी निकलने लगे तो कुल्ला करदें और फिर दुबारा नया रस मुंहमें भरें। इसी प्रकार बार बार करें।

(२८६०) **दाडिमादिकल्कः**

(हा. सं. । अ० ३ स्था० ३)

दाडिमं च कपित्थं च पथ्या जम्ब्वाम्रपल्लवान्।
पिष्ट्वा देया मस्तुयुक्ता रक्तातीसारवारणाः ॥

अनार दाना, कैथका गूदा, हर्र, जामनके पत्ते और आमके पत्ते। सबको पीसकर मस्तुके[1] साथ पिलानेसे रक्तातिसार नष्ट होता है।

(२८६१) **दाडिमादिक्काथः**

(ग. नि.; वं. से. । अति.)

कषायो मधुना पीतस्त्वचो दाडिमवत्सकात्।
सद्यो जयेदतीसारं रक्तजं दुर्निवारकम् ॥

अनार और कुड़ेकी छालके क्राथमें शहद डालकर पीनेसे कष्टसाध्य रक्तातिसार भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(२८६२) **दाडिमाम्बुयोगः**

(वृ. मा. । मूत्राघात.)

दाडिमाम्बुयुतं मुख्यमेलाबीजं सनागरम्।
पीत्वा सुरां सलवणां मूत्राघाताद्विमुच्यते ॥

अनार के रसमें छोटी (गुजराती) इलायचीके बीज और सोंठका चूर्ण मिलाकर पीनेसे अथवा मदिरामें नमक मिलाकर पीनेसे मूत्राघात नष्ट होता है।

(२८६३) **दार्वादिकल्कः**

(वं. से. । शोथ.)

दारुगुग्गुलुशुण्ठीनां कल्को मूत्रेण शोथजित्।
वर्षाभूशृङ्गवेराभ्यां कल्को वा सर्वशोथजित् ॥

देवदार, गूगल और सोंठका कल्क या पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी) और सोंठका कल्क गोमूत्रके साथ सेवन करने से सर्व प्रकारके शोथ नष्ट होते हैं।

(२८६४) **दार्वादिक्काथः** (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ७)

दारु नागरकं वासा हिङ्गुसौवर्चलान्वितः।
क्काथो वातकफे शूले आमे जीर्णे विबन्धके ॥

देवदार, सोंठ और बासेके क्राथमें हींग तथा काला नमक (सञ्चल) मिलाकर पीनेसे वातकफज शूल, आमाजीर्ण और मलबन्ध नष्ट होता है।

(२८६५) **दार्वादिक्काथः**

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

दारुपर्पटभार्ग्यब्दवचाधान्यककट्फलैः।
साभया विश्वपूतीकैः क्काथो हिङ्गुमधूत्कटः ॥
कफवातज्वरे पीतो हिक्काशोषगलग्रहान्।
श्वासकासप्रमेहांश्च हन्यात्तमिवाशनिः ॥

देवदारु, पित्तपापड़ा, भरंगी, नागरमोथा, बच, धनिया, कायफल, हर्र, सोंठ और करञ्जकी छालके क्राथमें हींग और शहद मिलाकर पिलानेसे कफ-वातज ज्वर, हिचकी, शोष, गलग्रह, श्वास, खांसी और प्रमेहका नाश होता है।

(२८६६) **दार्वीसेकः**

(ग. नि. । नेत्ररोग)

षोडशभिः सलिलपलैः पलं तथैकं कटङ्कटेर्याः सिद्धम्।
सेकोऽष्टभागशिष्टः क्षौद्रयुतः सर्वदोषहरः ॥

५ तोले दारुहलदीको ८० तोले पानीमें पकावें जब १० तोले पानी शेष रहे तो छानलें। इसमें थोड़ा शहद डालकर बारीक धारसे आंखके

[1] मस्तु—दहीमें दो गुना पानी मिलाकर बनाया हुवा तक्र।

भीतर डालें (आंख धोएं) । इससे आंखोंके समस्त दोष दूर होते हैं । (दुखती हुई आंखोंमें हितकर है ।)

(२८६७) **दार्व्यम्बुदादिक्काथः**

(वृ. नि. र. । ज्वर.; यो. चिं. । अ. ४; यो. र. । ज्वर; ग. नि. । ज्वर. १)

दार्व्यम्बुदस्तिक्तफलत्रिकं च
क्षुद्रा पटोली रजनी सनिम्बा ।
क्काथं विदध्याज्ज्वरसन्निपाते
निश्चेतने पुंसि विबोधनार्थम् ॥

दारुहल्दी, नागरमोथा, चिरायता, त्रिफला, कटेली, पटोलपत्र, हल्दी और नीमकी छालका क्वाथ पिलानेसे सन्निपात ज्वरकी मूर्च्छा जाती रहती है।

(२८६८) **दार्व्यादिकषायाष्टकम्**

(चं. सं. । चि. अ. ८)

दार्व्या रसाञ्जनस्य च निम्बपटोलस्य खदिरसारस्य ।
आरग्वधवृक्षकयोस्त्रिफलायाः सप्तपर्णस्य ॥
इति षट् कषाययोगा निर्दिष्टाः सप्तमश्च तिनिशस्य ।
स्नाने पाने च हितास्तथाष्टमश्चाश्वमारस्य ॥
आलेपनं प्रघर्षणमवचूर्णनमेत एव च कषायाः।
तैलघृतपाकयोगे चेष्यन्ते कुष्ठशान्त्यर्थम् ॥

(१) रसौत । (२) नीमकी छाल और पटोल पत्र । (३) खैर सार । (४) अमलतास और कुड़ेकी छाल । (५) त्रिफला । (६) सतौना (सप्तपर्ण) । (७) सांदन वृक्षकी छाल । और (८) कनेर । यह आठ योग कुष्टको नष्ट करनेके लिए उत्तम हैं ।

इनका क्वाथ बनाकर पिलाना चाहिए । इनसे पके हुवे पानीसे रोगीको स्नान कराना चाहिए तथा इन्हीं से तेल और घृत सिद्ध करके सेवन कराने चाहिएं ।

(२८६९) **दार्व्यादिक्काथः** (१)

(च. सं. । चि. स्था. अ. ५)

दार्वीं सुराह्वं त्रिफलां समुस्तां
कषायमुत्क्काथ्य पिबेत्प्रमेही ।
क्षौद्रेणयुक्तामथवा हरिद्रां
पिबेद्रसेनामलकीफलानाम् ॥

दारुहल्दी, देवदारु, त्रिफला और मोथेका क्वाथ, या हल्दीके चूर्णको आमलेके रसमें मिलाकर उसमें शहद डालकर पीनेसे प्रमेह नष्ट होता है ।

नोटः—हल्दीके चूर्णको शहदके साथ चाटकर आमलेका रस अनुपानके रूपमें भी पी सकते हैं।

(२८७०) **दार्व्यादिक्काथः** (२)

(यो. चिं. । अ. ४.; वृ. यो. त. । त. ३४; आ.वे. वि.; यो. र. । सूतिका; यो. त. । त. ७४)

दार्वीरसाञ्जनं मुस्तं भल्लातश्रीःफलं वृषा ।
किरातश्च पिबेदेषां क्काथं शीतं समाक्षिकम् ॥
जयेत्सशूलं प्रदरं पीतश्वेतासितारुणम् ॥

रसौत, मोथा, शुद्ध भिलावा (अथवा भिलावेके वृक्षकी छाल), बेलगिरी, बासा और चिरायता । इनके क्वाथको ठण्डा करके उसमें शहद मिलाकर पिलानेसे शूलयुक्त पीला, सफेद, काला और लाल प्रदर नष्ट होता है ।

(२८७१) **दार्व्यादिक्काथः** (३)

(भा. प्र. । म. ख. ज्व.)

दार्वीरसाञ्जनकिरातवृषाब्दबिल्व-
सक्षौद्रचन्दनदिनेशभवप्रसूनैः ।

**क्वाथः कृतो मधुयुतो विधिना निपीतो
रक्तं सितञ्च सरुजं प्रदरं निहन्ति ॥**

रसौत, चिरायता, बासा, नागरमोथा बेलगिरी, लाल चन्दन और आकडेके फूलोंके काथमें शहद डालकर पीनेसे पीड़ायुक्त श्वेतप्रदर और रक्तप्रदर नष्ट होता है ।

(२८७२) **दार्व्याद्याश्च्योतनम्**

(ग. नि. । नेत्ररो.)

**दार्वीहरिद्रा त्रिफला समुस्तं
सशर्करं माक्षिकसंप्रयुक्तम् ।
आश्च्योतनं मानुषदुग्धमिश्रं
पित्तास्रवाते तु भिषग्विदध्यात् ॥**

पित्तज, रक्तज और वातज नेत्राभिष्यन्दमें दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला और नागरमोथा के काथमें खांड, शहद और स्त्रीका दूध मिलाकर उसकी बूंदें आंखमें डालनी चाहियें ।

(२८७३) **दास्यादि[1]क्वाथः**

(धन्व. । ज्वर.; भै. र. । ज्वर.; यो. चिं. । अ. ४; यो. त. । त. २०; वृ. यो. त. । त. ५९)

**दासी[2]दारुकलिङ्गलोहितलताश्यामाकपाठाशठी ।
शुण्ठयोशीरकिरातकुञ्जरकणात्रायन्तिकापद्मकैः॥
वज्रीधान्यकनागराब्दसरलैःशिग्रुवम्बुसिंहीशिवाः
व्याघ्रीपर्पटदर्भमूलकटुकानन्तामृतापुष्करैः ॥
धातुस्थं विषमं त्रिदोषजनितं चैकाहिकं
द्वयाहिकम् ।
कामैः शोकसमुद्भवं च विविधं यं छर्दियुक्तं
नृणाम् ॥
पीतो हन्ति क्षयोद्भवं सततकं चातुर्थिकं भूतजम्
योगोऽयं मुनिभिः पुराणगदितो जीर्णज्वरे
दुस्तरे ॥**

कटसरैया, देवदारु, इन्द्रजौ, मजीठ, कालीसर,[3] पाठा, शठी, सोंठ, खस, चिरायता, गजपीपल, त्रायमाणा, पद्माख, हस्तीसंहार, धनिया, मोथा, चीर (सरलकाष्ठ), सहंजनेकी छाल, सुगन्धबाला, बड़ी कटेली, हर्र, छोटी कटेली, पित्तपापड़ा, दाभकी जड़, कुटकी, अनन्तमूल, गिलोय, पोखरमूल । सब चीजें समान भाग लेकर अधकुटा करालें ।

इसमें से २ तोले काथ (चूर्ण) लेकर आधासेर पानीमें पकावें जब आध पाव रहजाय उतारकर छानलें ।

यह काथ धातुगत, विषम, सन्निपातज, रोजाना, तिजारी, कामज, शोकजनित, और छर्दि युक्त तथा अन्य अनेक प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता है। विशेषकर क्षयके ज्वर, सदा बना रहने वाले ज्वर (मयादी बुखार), चौथिया (चातुर्थिक) ज्वर, भूतजन्य ज्वर और कष्ट साध्य जीर्णज्वरमें अत्यन्त गुणकारी है ।

(२८७४) **दाहप्रशमनमहाकषायः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

लाजाचन्दनकाश्मर्यफलमधुकशर्करानीलोत्पलोशीरसारिवागुडूचीह्रीबेराणीति दशेमानि दाहप्रशमनानि भवन्ति ।

---

[1] दार्व्यादीति पाठभेदः ।
[2] दार्वीति पाठान्तरम् ।
[3] 'श्यामाक' यहां पर 'श्यामा'के स्थानमें लिखा गया प्रतीत होता है; इसी लिये उसका अर्थ कालीसर किया है ।

धानकी खील (लाजा), लालचन्दन, खम्भारीके फल, मुलैठी, खांड, नीलोत्पल (नीलकमल—नीलोफर), खस, सारिवा, गिलोय और सुगन्ध बाला । इन दश चीजों के समूहको "दाहप्रशमन महाकषाय" कहते हैं । (यह दसों ओषधियां दाहनाशक द्रव्यों में अग्रगण्य हैं ।)

(२८७५) **दीपनीयमहाकषायः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकशृङ्गवेराम्लवेतस मरिचाजमोदाभल्लातकास्थिहिङ्गुनिर्यासा इति दशेमानि दीपनीयानि भवन्ति ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सेंठ, अम्लबेत, काली मिर्च, अजमोद, भिलावेकी गिरी और हींग । इन दश चीजों के समूहको " दीपनीय महा कषाय " कहते हैं । (यह ओषधियां अग्निदीपक द्रव्यों में प्रधान हैं ।)

(२८७६) **दुग्धशोधकतथा वर्धक प्रयोगाः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५६)

पिप्पली पिप्पलीमूलं नागरं घनबालकम् ।
कुस्तुम्बरूणि मञ्जिष्ठां सह क्षीरेण कल्कयेत् ॥
पानं क्षीरविशुद्ध्यर्थं कल्कमप्रातराशिते ।
मरीचं पिप्पलीमूलं क्षीरं क्षीरविवृद्धये ॥
मागधी नागरं पथ्या गुडेन सघृतं पयः ।
पानं जनयते क्षीरं क्षीणां क्षीरक्षयादपि ॥

पीपल, पीपलामूल, सेंठ, नागरमोथा, सुगन्धबाला, कुस्तुम्बुरु, और मजीठको दूधके साथ पत्थर पर पिट्ठी की तरह पीसकर प्रातःकाल दूध के साथ पिलानेसे प्रसूता का दूध शुद्ध होता है ।

काली मिर्च और पीपलामूलके कल्कको दूधके साथ पिलाने से प्रसूता के स्तनोंमें दुग्धवृद्धि होती है ।

पीपल, सोंठ और हर्रके चूर्णको गुड़में मिलाकर उसमें थोड़ासा घी डालकर दूधके साथ पिलानेसे दूध बढ़ता है ।

(२८७७) **दुग्धामलकयोगः**

(वृ. नि. र. । स्व. भ.)

दुग्धे मयुक्तामलकी नराणाम्
नष्टस्वराणां सुखमातनोति ।
यथा मृगाक्षी सुरकिन्नराणाम्
कन्दर्पदर्प प्रतिपीडनं च ॥

आमलेके चूर्णको दूधके साथ पीनेसे स्वरभङ्ग नष्ट होता है । (मात्रा ६ माशे—प्रातः, दोपहर, सायम् ।)

(२८७८) **दुरालभादिकल्कः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ७)

दुरालभा पर्पटकं च विश्वा
पटोलनिम्बाम्बुदतिन्तडीकम् ।
सशर्करं कल्कमिदं प्रयोज्यं
सपित्तवातोद्भवशूलशान्त्यै ॥

वात पित्तज शूलकी शान्तिके लिए धमासा, पित्तपापड़ा, सेंठ, पटोलपत्र, नीमकी छाल, नागरमोथा और तिन्तडीक के कल्क (पानीके साथ पत्थर पर पिसी हुई चटनी) के साथ खांड मिलाकर सेवन कराना चाहिये । (मात्रा—सब चीजें समान भाग मिली हुई १ तोला और खांड सबके बराबर लेनी चाहिए)

(२८७९) **दुरालभादिकषायः** (१)

(ग. नि. । मूत्रकृ.)

दुरालभाश्मभित्पथ्याव्याघ्रीमधुकधान्यकैः ।
कृतः क्वाथो सितापीतो मूत्रकृच्छ्रविबन्धनुत् ॥
दाहं शूलं निहन्त्याशु तमः सूर्योदये यथा ॥

धमासा, पाषाण भेद, हर्र, कटेली, मुलैठी और धनिया; इनके क्वाथमें मिश्री मिलाकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र, मूत्रावरोध, मूत्रकी दाह और शूल अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ।

(मिश्री १० तोले क्वाथमें १। तोला मिलानी चाहिये ।)

(२८८०) **दुरालभादिकषायः** (२)

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

दुरालभामृताघनो जलं च रोहिणीरजो ।
ज्वरं च वातपित्तजं निहन्त्यसौ कषायकः ॥

धमासा, गिलोय, नागरमोथा, सुगन्धबाला, और कुटकी । इनका क्वाथ पीनेसे वात-पित्तज्वर नष्ट होता है ।

(२८८१) **दरालभादिकषायः** (३)

(ग. नि. । ज्वर.)

दुरालभामृताक्वाथस्तथा वातज्वरापहः ।

धमासा और गिलोयका क्वाथ वातज्वर को नष्ट करता है ।

(२८८२) **दुरालभादिकषायः** (४)

(ग. नि.; यो. र. । विस.; वा. भ. । चि. अ. १९)

दुरालभां पर्पटकं गुडूचीविश्वभेषजम् ।
निशापर्युषितं दद्यात्तृष्णावीसर्पनाशनम् ॥

धमासा, पित्तपापड़ा, गिलोय और सोंठ (हरेक ६-६ माशे) लेकर रात्रिको (१२ तोले) पानीमें मिट्टीके बरतनमें भिगोदें । प्रातः काल मल छानकर रोगीको पिला दें ।

इसके सेवनसे तृष्णा और वीसर्प रोग नष्ट होता है ।

(२८८३) **दुरालभादिकषायः** (५)

(ग. नि. । ज्वरा.)

दुरालभाबालकतिक्तरोहिणी
पयोदविश्वौषधिकल्पितं जलम् ।
प्रपीतमुष्णं सकलज्वरापहं
प्रवर्धनं जाठरजातवेदसः ॥

धमासा, सुगन्धबाला, कुटकी, नागरमोथा, और सोंठ का उष्ण क्वाथ पीनेसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते और जठराग्निकी वृद्धि होती है ।

(२८८४) **दुरालभादिकषायः** (६)

(यो. समु. । स. ६)

दुरालभावासकविश्वमुस्तैः
शृतं जलं स्यात् क्रमशो ज्वरघ्नम् ॥

धमासा, बासा, सोंठ और नागर मोथे का क्वाथ पीनेसे धीरे धीरे ज्वर नष्ट हो जाता है ।

(२८८५) **दुरालभादिकषायः** (७)

(ग.नि.; वृ. नि. र.; वं. से.; वृ.मा.; यो.र; मूर्च्छा.; वै. जी. । वि. ४)

दुरालभाकषायस्य घृतयुक्तस्य सेवनात् ।
भ्रमः शाम्यति गोविन्दचरणस्मरणादिव ॥

धमासेके क्वाथमें घी मिलाकर पीनेसे मूर्च्छा रोग नष्ट होता है ।

१० तोले क्वाथमें १। तोला घी डालना चाहिए)

(२८८६) **दुरालभादिक्वाथः** (१)

(वृ. नि. र.; वं.से.; ग. नि.; वृ. मा. । ज्वर.; वृ. यो. त. । त. ५९)

दुरालभापर्पटकप्रियङ्गुभूनिम्बवासाकटु रोहिणीनाम् ।
क्वाथं पिबेच्छर्करयावगाढं तृष्णास्रपित्तज्वर दाहयुक्तः ॥

धमासा, पित्त पापड़ा, फूल प्रियंगु, चिरायता, बासा और कुटकी के काथको खांडसे मीठा करके पीनेसे तृष्णा, रक्तपित्त, ज्वर और दाहका नाश होता है।

(२८८७) **दुरालभादिक्काथः** (२)
(वृ. नि. र. । श्वास.)

दुरालभानागरतिक्तपाठासठीवृषैरण्डजटाकषायः पीतः सशूलं शमयेज्ज्वरं च सश्वासकासं पवनप्रसूतम् ॥

धमासा, सोंठ, चिरायता, पाठा, सठी (कचूर) बासा, और अरण्डकी जड़का काथ पीनेसे शूल युक्त वातज ज्वर, खांसी और श्वास नष्ट होता है।

(२८८८) **दुरालभादिक्काथः** (३)
(वृ. यो. त. । त. १२६; यो. र.; बं. से. । मसूरि.)

दुरालभा पर्पटकं पटोलं कटुरोहिणी ।
पिबेन्मसूर्यामेतेषां क्वाथं पित्तकफात्मनि ॥

पित्त कफज मसूरिकामें धमासा, पित्तपापड़ा, पटोल पत्र, और कुटकीका काथ पिलाना चाहिये।

(२८८९) **दुरालभादिक्काथः** (४)
(वं. से.; वृं. मा. । विस्फो.)

दुरालभां पर्पटकं पटोलं कटुकां तथा ।
सोष्णं गुग्गुलुसंमिश्रं पिबेद्वा खदिराष्टकम् ॥

धमासा, पित्तपापड़ा, पटोलपत्र, और कुटकीके काथमें कालीमिर्च तथा शुद्ध गूगल मिलाकर पीनेसे या खदिराष्टक सेवन करनेसे विस्फोटक रोग नष्ट होता है।

(१० तोले काथमें १-१ माशा मिर्चका चूर्ण और गूगल मिलाना चाहिये।)

(२८९०) **दुःस्पर्शादिक्काथः** (यो. र. । ज्वर.)

दुःस्पर्शोशीरसिंहीघनमधुकशिवाजाजिविश्वाटरूषच्छिन्नारेणूकषायः समधुमगधको वापि तप्ताष्टमांशम् ।
दाहं स्वेदं च शोषं कृमिमथ रुधिरं शैत्यमुद्भ्रान्तचित्तं श्वासं शूलं च तृष्णामहरहरसमं हन्ति चातुर्थिकाख्यम् ॥

धमासा, खस, कटेली नागरमोथा, मुलैठी, हर्र, जीरा, सोंठ, बासा, गिलोय, और रेणुका। इनके काथमें शहद और पीपलका चूर्ण मिलाकर पिलानेसे दाह, स्वेद, शोष, कृमि, रुधिरस्राव, शीत, चित्तकी भ्रान्ति, श्वास, शूल, तृष्णा और चातुर्थिक (चौथिया) ज्वर नष्ट होता है।

नोट—शहद, १० तोले काथमें १। तोला और पीपलका चूर्ण १ माशा मिलाना चाहिये।

(२८९१) **दुःस्पर्शादिस्वरसप्रयोगः**
(वं. से. । उदावर्त.)

दुःस्पर्शास्वरसं वापि कषायं ककुभस्य च ।
एर्वारुबीजं तोयेन पिबेद्वा लवणीकृतम् ॥

धमासेका स्वरस या अर्जुनकी छालका काथ पीनेसे अथवा ककड़ीके बीजोंको पानीमें पीसकर (ठण्डाईसी बनाकर) उसमें जरासा सेंधा नमक मिलाकर पीनेसे; मूत्र रोकनेसे उत्पन्न हुवा उदावर्त रोग नष्ट होता है।

(२८९२) **दूर्वादिक्काथः**
(वं. से.; ग. नि.; वृं. मा. । प्रमे.)

दूर्वाकसेरुपूतीककुम्भीकप्लवशेवलम् ।
जलेन क्वथितं पीतं शुक्रमेहहरं परम् ॥

दूर्वा (दूब घास), कसेरु, करञ्ज (कञ्जा)

वृक्षकी छाल, जलपर्णी (सिरवाल), तथा कसेर। इनका क्वाथ पीनेसे शुक्रप्रमेह नष्ट होता है।

(२८९३) **दूर्वादियोगः** (ग. नि. । छर्द्य.)

पित्तच्छर्दिं व्रजेद्दूर्वातण्डुलोदकपानतः ।
धात्रीरसेन वा पीता सिता लाजा च हन्ति ताम् ॥

दूर्वा (दूब) घासको तण्डुलोदक (चावलोंके पानी) के साथ पीसकर पीनेसे पित्तज छर्दि नष्ट होती है। (मात्रा—६ माशे)

धानकी खील और मिश्रीके चूर्णको आमलेके रसमें मिलाकर चाटनेसे भी पित्तज छर्दि नष्ट हो जाती है।

नोट—तण्डुलोदक बनानेकी विधि भा. भै. र. भाग १ में पृष्ट ३५३ पर देखिये।

(२८९४) **देवदारुक्षीरम्** (यो. र. । शोफ.)

क्षीरं शोफहरं दारुवर्षाभूनागरैः शृतम् ।
पेयं वा चित्रकव्योषत्रिवृद्दारुप्रसाधितम् ॥

देवदारु, साठी (बिसखपरा—पुनर्नवा) और सोंठसे सिद्ध किया हुवा या चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, निसोत और देवदारसे सिद्ध किया हुवा दूध पिलानेसे शोथ नष्ट होता है।

(२८९५) **देवदार्वादिकषायः**
(वै.जी. । वि. १)

सुरदारुशिवाशिवास्थिराद्वषविश्वैः क्वथितः कषायकः ।
मधुना सितया समन्वितः परिपीतः शमयेच्चतुर्थकम् ॥

देवदारु, हर्र, आमला, शालपर्णी, बासा और सोंठके क्वाथमें शहद तथा मिश्री डालकर पीनेसे चातुर्थिक ज्वर नष्ट होता है।

(२८९६) **देवदार्वादिक्वाथः** (१)
(वृ. नि. र.; वं. से. । स्त्री; यो. र.; भा. प्र. । म. सूति.; यो. त. । त. ७५)

देवदारु वचा कुष्ठं पिप्पली विश्वभेषजम् ।
कट्फलमुस्तभूनिम्बतिक्ताधान्यहरीतकी ॥
गजकृष्णा च दुःस्पर्शा गोक्षुरं धन्वयासकम् ।
बृहत्यतिविषा छिन्ना कर्कटं कृष्णजीरकम् ॥
समभागान्वितैरेतैः सिन्धुरामठसंयुतम् ।
क्वाथमष्टावशेषन्तु प्रसूतां पाययेत्स्त्रियम् ॥
शूलकासज्वरश्वासमूर्च्छाकम्पशिरोऽर्त्तिनुत् ।
युक्तं प्रलापतृड्दाहतन्द्रातीसारवान्तिभिः ॥
निहन्ति सूतिकारोगं वातपित्तकफोत्थितम् ॥

देवदारु, बच, कूठ, पीपल, सोंठ, कायफल, मोथा, चिरायता, कुटकी, धनिया, हर्र, गजपीपल, धमासा, गोखरु, जवासा, कटेली, अतीस, गिलोय, काकड़ासिंगी और कालाजीरा। सब चीजें समान भाग लेकर एकत्र मिलाकर अधकुटी करलें। इसमें से प्रतिदिन २ तोले लेकर ३२ तोले पानीमें पकाकर ४ तोले शेष रहने पर छानकर उसमें २ रत्ती हींग और १॥ माशा सेंधा नमक मिलाकर पिलानेसे प्रसूता स्त्रीका शूल, खांसी, ज्वर, श्वास, मूर्च्छा, शरीर कांपना, शिरपीड़ा, प्रलाप, तृष्णा, दाह, तन्द्रा, अतिसार और वमनयुक्त प्रसूत रोग (चाहे वह वायुसे उत्पन्न हुवा हो या पित्तसे अथवा कफसे) नष्ट हो जाता है।

(२८९७) **देवदार्वादिक्वाथः** (२)
(वृ. नि. र. । अति.; वै. जी. । विला. २)

सदेवदारुः सविषः सपाठः सजन्तुशत्रुः सघनः सतीक्ष्णः ।

सवत्सकः क्वाथ उदाहृतोऽसौ शोकातिसारा-म्बुधिकुम्भजन्मा ॥

देवदारु, अतीस, पाठा, बायबिड़ंग, नागरमोथा, कालीमिर्च, और इन्द्रजौका काथ पीनेसे शोकातिसार नष्ट होता है।

(२८९८) **देवदार्वादिक्काथः** (३)
(वं. से.; ग. नि. । ज्वर.)

दारु पर्पटकं मुस्तमभया विश्वभेषजम् ।
पूतीकं कट्फलं भार्गी कुस्तुम्बरिवचे समम् ॥
पक्त्वा क्वाथं पिबेद्धिङ्गुमधुयुक्तं ज्वरापहम् ।
वातश्लेष्मणि कासे च कुष्ठरोगे गलग्रहे ॥

देवदारु, पित्तपापड़ा, मोथा, हर्र, सोंठ, करञ्जकी छाल, कायफल, भारंगी, कस्तुम्बरु और बच। इनके काथमें हींग और शहद मिलाकर पीनेसे वातकफज ज्वर, खांसी, गलग्रह और कुष्ठरोग नष्ट होता है।

(२८९९) **देवदार्वादिक्काथः** (४)
(वृ. नि. र. । सन्नि.; भा. प्र. । म. ख.)

सुरदारुसठीसुधालतासुवहाशुण्ठ्यमृताः शृता जलेन ।
सपुराः शमयन्ति सेविताः सततं सन्धिगतं सदागतिम् ॥

देवदारु, कचूर, रासना और सेंठ १–१ भाग तथा गिलोय २ भाग लेकर यथाविधि काथ बनाकर उसमें गूगल मिलाकर पीनेसे सन्धिगत सतत ज्वर नष्ट होता है।

(गूगल २ माशा मिलाना चाहिए।)

(२९००) **देवदार्वादिक्काथः** (५)
(वं. से. । श्वास.; वृ. यो. त. । त. ८०)

देवदारुवचाभार्गीविश्वपौष्करकट्फलैः ।
कृत्वा काथो जयत्याशु श्वासकासानशेषतः ॥

देवदारु, बच, भरंगी, सोंठ, पोखरमूल, और कायफलका काथ पीनेसे श्वास, खांसी शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(२९०१) **देवदार्वादिक्काथः** (६)
(वं. से.; यो. र. । अतिसा.)

देवदारुवचामुस्तं[1] नागरातिविषाभयाः ।
सर्वाजीर्णप्रशमनं पेयमेतैः शृतं जलम् ॥

देवदारु, बच, मोथा, सोंठ, अतीस और हर्रका काथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके अजीर्ण नष्ट होते हैं।

(२९०२) **देवदालीयोगः** (वृ. नि. र. । अर्श.)

देवदालीकषायेण शौचमाचरतां नृणाम् ।
किम्वाधूमसेवाभिः कुतः स्युर्गुदजाङ्कुराः ॥

देवदालीके काथसे शौच करनेसे या देवदालीकी धूनी लेनेसे मस्से नष्ट हो जाते हैं।

(२९०३) **देवद्रुमादियोगः**
(च. द.; ग. नि.; वृ. नि. र. । उद.; यो. र. । शोफ.

देवद्रुमं शिग्रु मसूरकञ्च[2] गोमूत्रपिष्टामथवाऽश्वगन्धाम् ।
पीत्वाऽऽशु हन्यादुदरं प्रवृद्धं कृमीन्सशोफानुदरं च दूष्यम् ॥

देवदारु, सहंजनेकी छाल और मसूरको समान भाग लेकर एकत्र मिलाकर गोमूत्रमें पीसकर पिलानेसे अथवा असगन्धको गोमूत्रमें पीसकर पिलानेसे शोथोदर और उदरके कृमि आदि नष्ट होते हैं।

१ कुष्ठमिति पाठान्तरम्। २ मयूरकोमिति पाठान्तरम्।

(२९०४) **द्राक्षादिकल्कः** (१)

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

द्राक्षामलकयोः कल्कं सघृतं वदने क्षिपेत् ।
तेन घृष्ट्वा मुखस्यान्तः कुर्वीत प्रतिसारणम् ॥
जिह्वातालुगलान्तस्थः संशोषस्तेन शाम्यति ।
सुरसं जायते वक्त्रं रुचिर्भवति भोजने ॥

दाख (मुनक्का) और आमलेको पत्थर पर पिट्ठीकी तरह पीसकर उसमें थोड़ा घी मिलाकर उसे जीभ तालु आदिपर मलें ।

इससे जीभ, तालु, और गलेका शोष नष्ट होकर मुखका स्वाद ठीक हो जाता है और भोजनमें रुचि बढ़ती है ।

(२९०५) **द्राक्षादिकल्कः** (२)

(यो. त. । त. २०)

शुष्कां च स्फुटितां जिह्वां द्राक्षया मधुपिष्टया ।
प्रलेपयेत्सघृतया सन्निपातज्वरे गदे ॥

यदि सन्निपात ज्वरमें जीभ शुष्क हो जाय और फट जाय तो उसपर मुनक्का (दाख) को शहदके साथ पीसकर उसमें थोड़ासा घी मिलाकर उसका लेप करना चाहिए ।

(२९०६) **द्राक्षादिकल्कः** (३)

(यो. र.; वृ. नि. र. । मूत्रकृ.)

द्राक्षासितोपलाकल्कं कृच्छ्रघ्नं मस्तुना युतम् ।
पिबेद्वा कामतः क्षीरमुष्णं गुडसमन्वितम् ॥

मुनक्का (दाख) और मिसरीको पत्थर पर चटनीकी तरह पीसकर मस्तु (दहीके तोड़) में मिलाकर पीनेसे अथवा उष्ण दूधमें गुड़ मिलाकर यथेच्छ परिमाणमें पीनेसे मूत्र कृच्छ्र नष्ट होता है ।

(मिसरी १ तोला, मुनक्का १ तोला, मस्तु ८ तोले)

(२९०७) **द्राक्षादिकषायः** (१)

(ग. नि. । मुख.)

द्राक्षागुडूचीसुमनःप्रवाला
दार्वीयवासत्रिफलाकषायः ।
क्षौद्रेण युक्तः कवलग्रहोऽयं
मुखस्य पाकं शमयत्युदीर्णम् ॥

दाख (मुनक्का), गिलोय, चमेलीकी कोंपल, दारुहल्दी, जवासा और त्रिफलाके काथमें शहद डालकर उससे कुल्ले (गरारे) करनेसे मुखपाक नष्ट हो जाता है ।

(२९०८) **द्राक्षादिकषायः** (२)

(वृ. नि. र. । गुल्म.)

द्राक्षाभयारसं गुल्मे पैत्तिके सगुडं पिबेत् ।
सशर्करं वा विलिहन् त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ॥

पैत्तिक गुल्ममें मुनक्का (दाख) और हर्र के रस (शीतकषाय) में गुड़ मिलाकर पिलाना या त्रिफलाके चूर्ण में खांड मिलाकर (शहदके साथ) चटाना चाहिये ।

(२९०९) **द्राक्षादिकषायः** (३)

(वैद्यामृत । वि. ४७)

द्राक्षादार्वीयासपथ्याऽक्षधात्री
छिन्नाजातीपल्लवानां कषायः ।
क्षौद्रोद्रिक्तो हन्ति गण्डूषयुक्त्या
पाकं वक्त्राम्भोजसंस्थं महान्तम् ॥

दाख (मुनक्का), दारुहल्दी, धमासा, हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, और चमेलीके पत्तों के काथमें शहद मिलाकर उसके कुल्ले करनेसे मुखपाक नष्ट होता है ।

(२९१०) **द्राक्षादिक्काथः** (१)

(वृ. नि. र. । वात.)

द्राक्षापटोलत्रिफलापिचुमन्दवृषैः कृतः ।
क्काथ एकाहिकं हन्ति परार्थमिव दुर्जनः ॥

दाख (मुनक्का), पटोल पत्र, त्रिफला, नीमकी छाल और बासेका काथ पिलानेसे इकतरा (एकाहिक) ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(२९११) **द्राक्षादिक्काथः** (२)

(वै. जी. । वि. ४)

द्राक्षापथ्याकृतः काथः शर्करामधुमिश्रितः ।
श्वासकासहरो देयो रक्तपित्तप्रशान्तये ॥

मुनक्का (दाख) और हर्रके काथमें मिश्री और शहद मिलाकर पिलानेसे श्वास, खांसी और रक्तपित्तका नाश होता है ।

(२९१२) **द्राक्षादिक्काथः** (३)

(वृ. नि. र. । वा. पि. ज्वर.)

द्राक्षाकिराताभृतावासासठी
क्काथं पिबेत्पित्तमरुज्ज्वरं हरेत् ॥

दाख (मुनक्का), चिरायता, गिलोय, बासा और सठी (कचूर) का काथ पिलानेसे वातपित्त ज्वर नष्ट होता है ।

(२९१३) **द्राक्षादिक्काथः** (४)

(यो. र. । ज्वर.)

द्राक्षालवङ्गशुण्ठीत्वग्धनिका च हरीतकी ।
मिसी मुस्ताऽमृता चैव कृतमालकषायकः ॥
वातपित्तज्वरं हन्ति पाचनो लघु दीपनः ।
दशभिश्चौषधैरेतैः सर्वज्वरविनाशनः ॥

दाख (मुनक्का), लौंग, सोंठ, दालचीनी, धनिया हर्र, सौंफ, मोथा, गिलोय और अमलतास; इन दश ओषधियोंका काथ लघु, दीपनपाचन और वातपित्त-ज्वर नाशक है ।

(२९१४) **द्राक्षादिक्काथः** (५)

(वं. से. । तृषा.)

द्राक्षाचन्दनखर्जूरीपीतं मधुयुतं जलम् ।
तृष्णाहरं पिबेद्वापि मधुना तण्डुलोदकम् ॥

मुनक्का, लालचन्दन और खजूरके काथमें शहद मिलाकर पीनेसे अथवा तण्डुलोदक (चावलोंके धोवन) में शहद मिलाकर पीनेसे तृष्णा शान्त हो जाती है ।

(तण्डुलोदक बनानेकी विधि प्रथम भागके पृष्ठ ३५३ पर देखिये ।)

(२९१५) **द्राक्षादिक्काथः** (६)

(वृ. नि. र.; वं. से. । पित्तज्वर.)

द्राक्षाशम्पाककटुकामुस्तं ग्रन्थिकधान्यकम् ।
पक्वं हन्यादुदावर्त्तं शूलं पित्तकफज्वरम् ॥

मुनक्का (दाख), अमलतास, कुटकी, मोथा, पीपलामूल और धनियेका काथ पीनेसे उदावर्त, शूल और पित्त कफज ज्वर नष्ट होता है ।

(२९१६) **द्राक्षादिक्काथः** (७)

(हा. सं.; वै. र.; भा. प्र.; वृ. नि. र.; ग. नि.; वृं. मा.; वं. से. । ज्वर.; यो. चि. । अ. ४)

द्राक्षाभयापर्पटकाब्दतिक्ता
काथः ससम्पाकफलो विदध्यात् ।
प्रलापमूर्छाभ्रमदाहशोष
तृष्णान्विते पित्तभवे ज्वरे च ॥

मुनक्का (दाख), हर्र, पित्त पापड़ा, नागरमोथा, कुटकी, और अमलतासका काथ पीनेसे प्रलाप,

मूर्च्छा, भ्रम, दाह, शोष, और तृष्णायुक्त पित्त ज्वर नष्ट होता है ।*

(२९१७) द्राक्षादिक्वाथः (८)

(ग. नि. । ज्वर.)

द्राक्षाशिवारग्वधरोहिणीनां
यःपर्पटोशीरविमिश्रितानाम् ।
क्वाथंपिबेत्पित्तसमुद्भवोऽस्य
ज्वरः शमं याति सतृटसमूर्च्छः ॥

मुनक्का, हर्र, अमलतास, कुटकी, पित्तपापड़ा और खसका क्वाथ पीनेसे पिपासा तथा मूर्च्छा युक्त पित्तज्वर नष्ट होता है ।

(२९१८) द्राक्षादिक्वाथः (९)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

द्राक्षामृतावासकतिक्तकाश्च
भूनिम्बतिक्तेन्द्रयवापटोलम् ।
मुस्ता सभार्ङ्गी क्वथितः कषायः
सपित्तश्लेष्मज्वरनाशनाय ॥

दाख (मुनक्का), गिलोय, बासा, कुटकी, चिरायता, पित्तपापड़ा, इन्द्रयव, पटोलपत्र, नागरमोथा और भारंगीका क्वाथ पिलानेसे पित्तकफज ज्वर नष्ट होता है ।

(२९१९) द्राक्षादिक्वाथः (१०)

(ग. नि. । ज्व.; वृ. नि. र. । ज्वर.)

द्राक्षा किरातको धात्री कचूरोऽमृतवल्लरी ।
एषां क्वाथो गुडोपेतः पीतो द्वन्द्वजरोगजित् ॥

द्राक्षा (मुनक्का), चिरायता, आमला, कचूर और गिलोयके क्वाथमें गुड़ मिलाकर पीनेसे द्विदोषज ज्वर नष्ट होता है ।

(१० तोले क्वाथमें १। तोला गुड़ डालना चाहिये ।)

(२९२०) द्राक्षादिक्वाथः (११)

(वृ. नि. र. । पित्तज्व.)

द्राक्षाचन्दनपद्मानि मुस्ता तिक्तामृतापि च ।
धात्रीबालमुशीरं च लोध्रेन्द्रयवपर्पटाः ॥
परूषकं प्रियङ्गुश्च यवासो वासकस्तथा ।
मधुकं कुलकं चापि किराती धान्यकस्तथा ॥
एषां क्वाथो निहन्त्येव ज्वरं पित्तसमुद्भवम् ।
तृष्णां दाहप्रलापं च रक्तपित्तं भ्रमं क्लमम् ॥
मूर्च्छां छर्दिं तथा शूलं मुखशोषमरोचकम् ।
कासं श्वासं च हृल्लासं नाशयेन्नात्र संशयः ॥

दाख (मुनक्का), लाल चन्दन, पदमाक, नागरमोथा, कुटकी, गिलोय, आमला, सुगन्ध बाला, खस, लोध, इन्द्रजौ, पित्तपापड़ा, फालसेकी छाल, फूल प्रियङ्गु, जवासा, बासा, मुलैठी, पटोल पत्र, चिरायता और धनिया । इनका क्वाथ पीनेसे तृष्णा, दाह, प्रलाप, रक्तपित्त, भ्रम, क्लम, मूर्च्छा, छर्दी, शूल, मुखशोष, अरुचि, खांसी, श्वास, हृल्लास और पित्तज्वर अवश्य ही नष्ट हो जाता है ।

(२९२१) द्राक्षादिक्वाथः (१२)

(वृ. नि. र.; वं. से.; यो. र.; भा. प्र. । ज्वर.)

द्राक्षापटोलनिम्बाब्दशक्राह्वत्रिफलाशृतम् ।
जलं जन्तुः पिबेच्छीघ्रं अन्येद्युज्वरशान्तये ॥

दाख (मुनक्का), पटोलपत्र, नीमकी छाल, नागरमोथा, इन्द्रजौ और त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला) का क्वाथ पीनेसे इकतरा ज्वर जाता रहता है ।

* हारीत संहिता, बैद्यरहस्य और भावप्रकाशमें पाठ भिन्न है परन्तु औषधियां वही हैं ।

(२९२२) **द्राक्षादिक्वाथः** (१३)

(यो. र.। विस्फो.; वृ. नि. र.। मसू.; वं. से.)

द्राक्षाकाश्मर्यखर्जूरपटोलारिष्टवासकैः ।
कटुकालाजदुःस्पर्शैः क्वाथः शर्करया युतः ॥
विस्फोटं पित्तजं हन्ति सोपद्रवमसंशयम् ॥

दाख (मुनक्का) खम्भारीके फल, खजूर (फल), पटोलपत्र, नीमकी छाल, बासा, कुटकी, खस और धमासा। इनके क्वाथमें खांड मिलाकर पीनेसे उपद्रव सहित पित्तज विस्फोटक अवश्य नष्ट हो जाता है।

(नोट—१० तोले क्वाथमें २॥ तोले खांड मिलानी चाहिये।)

(२९२३) **द्राक्षादिक्वाथः** (१४)

(वृ. नि. र.। मूर्च्छा.)

द्राक्षासितादाडिमलाजवन्ति
कह्लारनीलोत्पलपद्मवन्ति ।
पिबेत्कषायाणि च शीतलानि
पित्तज्वरं यानि च यापयन्ति ॥

(१) दाख (मुनक्का); मिश्री, अनारकी छाल, और खस। (२) लाल कमल, नीलकमल और सफेद कमल।

इन दोनो योगोमेंसे किसीका शीतकषाय पीनेसे मूर्च्छा नष्ट होती है।

मूर्च्छामें पित्तज्वरनाशक शीतल कषाय पिलाने चाहियें।

(५ तोले ओषधिको ३० तोले पानीमें मिलाकर रातभर रक्खा रहने दें। प्रातःकाल छानकर उसमेंसे १० तोले रोगीको पिलावें।

(२९२४) **द्राक्षादिक्वाथः** (१५)

(वृ०नि०र०। शूल०; वृ०यो०त०।त०९४)

पित्तश्लेष्मोद्भवं शूलं विरेकवमनैर्जयेत् ।
द्राक्षाटरूषयोः क्वाथः पित्तश्लेष्मरुजं जयेत् ॥

पित्तकफज शूलमें विरेचन और वमम कराना चाहिए।

मुनक्का (दाख) और बासेका क्वाथ पीनेसे पित्तकफज शूल शान्त हो जाता है।

(२९२५) **द्राक्षादिक्षीरम् ।** (१)

(यो० र० । रक्त पि०)

द्राक्षया फलिनीभिर्वा बलया नागरेण वा ।
श्वदंष्ट्रया शतावर्या रक्तजित्साधितं पयः ॥

मुनक्का, फूलप्रियंगु, खरैंटी, सोंठ, गोखरु और शतावरमें से किसी एकके साथ दूध पकाकर पिलाने से रक्तपित्त नष्ट होता है।

(ओषधि ५ तोले, बकरीका दूध ४० तोले, पानी १६० तोले मिलाकर पानी जलने तक पकावें।)

[२९२६) **द्राक्षादिक्षीरम्** (२)

(ग. नि.; रा. मा.। ज्वरा.)

द्राक्षाटरूषकृतमालयवासभूमि-
निम्बैः शृतं मलयजेन युतं पयो यः ।
दोषत्रयेण जनितेऽपि पिबेज्ज्वरेऽसौ
तत्कालमाशु लभते बलमत्युदारम् ॥

दाख (मुनक्का), बासा, अमलतास, जवासा, चिरायता, और सफेद चन्दनके साथ दूध पकाकर पीनेसे त्रिदोषज्वर नष्ट होता है।

नोट—हरेक ओषधि ६ माशे; दूध २४ तोले, पानी ९६ तोले। सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकावें।)

(२९२७) **द्राक्षादिपाचनम्**

(ग. नि. । पाण्डु.)

द्राक्षापर्पटधान्याककैरातोशीरवालकैः ।
गुडूचीकटुकायुक्तैर्हारिद्रज्वरपाचनम् ॥

दाख (मुनक्का), पित्तपापड़ा, धनिया, चिरायता, खस, सुगन्धबाला, गिलोय और कुटकी का काथ हारिद्र ज्वर में दोषोंको पचाता है ।

(२९२८) **द्राक्षादिप्रयोगः**

(वैद्यामृत । वि. १५)

द्राक्षामृतानागरपुष्कराणां
सग्रन्थिकानां कथितं सकृष्णम् ।
मदेषु मूर्च्छासहितं घृताढ्यं
दुरालभायाः कथितं भ्रमे च ॥

दाख (मुनक्का), गिलोय, सोंठ, पोखरमूल, और पीपलामूल के काथमें काली मिर्च का चूर्ण मिलाकर पिलानेसे मद जाता रहता है । तथा धमासेके काथमें घी मिलाकर पिलानेसे भ्रम और मूर्च्छा जाती रहती है ।

(२९२९) **द्राक्षादियोगः**

(वृ. नि. र. । अर्श.)

द्राक्षा हरिद्रा मधुकं मञ्जिष्ठा नीलमुत्पलम् ।
अजाक्षीरेण सम्पीतं रक्तजार्शोविनाशनम् ॥

दाख (मुनक्का), हल्दी, मुलैठी, मजीठ, और नीलकमल । सब चीजें समान भाग मिलाकर (१ तोला) लें और पत्थर पर पीस कर बकरीके दूधमें मिलाकर पियें । इससे रक्तार्श नष्ट होती है ।

(२९३०) **द्राक्षादिशीतकषायः**

(ग. नि. । ज्वरा.)

द्राक्षा च पिचुमन्दं च मधुकं तिक्तरोहिणी ।
निशां कषायोऽभ्युषितः पित्तज्वरविनाशनः॥

दाख (मुनक्का), नीमकी छाल, मुलैठी और कुटकी । इनका शीत कषाय पीनेसे पित्तज्वर शान्त होता है ।

(हरेक ओषधि १ तोला, पानी २४ तोले । सबको रातभर भीगनेदें । सुबह मलकर छानलें । मात्रा १० तोले ।)

(२९३१) **द्राक्षादिशोधनयोगः**

(वृं. मा.; ग. नि. । विस.)

द्राक्षारग्वधकाश्मर्यत्रिफलाविडङ्गपीलुभिः ।
त्रिवृद्धरीतकीभिश्च विसर्पे शोधनं हितम् ॥

विसर्प रोगमें—

दाख (मुनक्का), अमलतास, खम्भारीकी छाल, त्रिफला, वायबिडंग, पीलु, निसोत और हर्रका काथ पिलाकर विरेचन कराना हितकर है ।

(२९३२) **द्राक्षाद्याश्च्योतनम्**

(वं. से.; यो. र.; वृं. मा.; ग. नि. । नेत्ररोग.)

द्राक्षामधुकमञ्जिष्ठाजीवनीयैः शृतं पयः ।
प्रातराश्च्योतनं पथ्यं शोथशूलाक्षिरोगनुत् ॥

दाख (मुनक्का), मुलैठी, मजीठ और जीवनीय गणकी ओषधियों से दूध पकाकर उससे प्रातःकाल आश्च्योतन करने से (आंखोंमें उसकी बूंदें टपकानेसे) आंखोंकी खडक सूजन आदि नष्ट होती है ।

(सब ओषधियां समान भाग मिली हुई ५ तोले, गोदुग्ध ४० तोले, पानी १६० तोले । पानी जलने तक पकावें ।)

१ मण्डेति पाठान्तरम् ।

नोट—'जीवनीय गण' भारत भै. र. द्वितीय भागमें देखिये ।)

(२९३३) **द्राक्षारसादियोगः**

(हारी. सं. । स्था. ३ अ. १०)

द्राक्षारसं वा घृतशर्कराढ्यं
जलं सिताढ्यं च सरक्तपित्ते ।
पानेऽथवा चेक्षुरसं सिताढ्यं
क्षयं च कासं क्षतजं निहन्ति ॥

दाख (अंगूर) के रसमें घी और खांड मिलाकर पिलानेसे या खांडका शर्बत पिलानेसे रक्तपित्त शान्त होता है । तथा ईख (गन्ने) के रसमें खांड मिलाकर पिलाने से क्षतज क्षय और खांसी नष्ट होती है ।

(२९३४) **द्राक्षाहरीतकीयोगः**

(ग. नि. । र. पि.)

अपहरति रक्तपित्तकण्डूं गुल्मं च पैत्तिकं सद्यः।
जीर्णज्वरं च जयति मृद्वीकासंयुता पथ्या ॥

मुनक्का (दाख) और हर्र समान भाग लेकर पानीके साथ पीसकर खिलानेसे रक्तपित्त, खुजली, पैत्तिक गुल्म, और जीर्णज्वर नष्ट होता है । (मात्रा—६ माशे। अनुपान—बकरीका दूध ।)

(२९३५) **द्वात्रिंशदाख्यक्काथः**

(यो. र. । सन्नि.; वृ. नि. र. । ज्वर.; यो. त. । त. २०)

भार्गीभूनिम्बनिम्बैर्घनकटुकावचाव्योषवासा-
विशाला ।
रास्नानन्तापटोलीसुरतरुरजनीपाटलाटुण्डुकैश्च*
ब्राह्मीदार्वीगुडूचीत्रिवृदतिविषापुष्करत्रायमाणैः
व्याघ्रीसिंहीकलिङ्गैस्त्रिफलसटियुतैः कल्पित-
स्तुल्यभागैः ॥
क्वाथो द्वात्रिंशदाख्यस्त्र्यधिकदशमहासन्नि-
पाताग्निहन्याच्छूलं कासादिहिक्काकसनगुद-
रुजाध्मानविध्वंसकारी ॥
ऊरुस्तम्भान्त्रवृद्धिं गलगदमरुचिं सर्वसन्धि
ग्रहार्तिम्
मातङ्गौघाग्निहन्यान्मृगरिपुरिवचेद्रोगजालंतथैव

भरंगी, चिरायता, नीमकी छाल, नागरमोथा, कुटकी, बच, सोंठ, मिर्च, पीपल, बासा, इन्द्रायनकी जड़, रास्ना, अनन्तमूल, पटोलपत्र, देवदारु, हल्दी, पाढलकी छाल, अरलु (श्योनाक)की छाल, ब्राह्मी, दारुहल्दी, गिलोय, निसोत, अतीस, पोखरमूल, त्रायमाणा, कटेली, कटेला, इन्द्रजौ, हर्र, बहेड़ा, आमला, और शठी (कचूर) सब चीजें समान भाग ।

इन ३२ चीजोंके योगको द्वात्रिंशद् या बत्तीसा क्वाथ कहते हैं । यह १३ प्रकारके सन्निपात, शूल, खांसी, हिचकी, बवासीर, अफारा, ऊरुस्तम्भ, अन्त्रवृद्धि, गलरोग, अरुचि और सन्धिग्रह (गठिया) को नष्ट करता है ।

(२९३६) **द्वादशाङ्गक्वाथः** (१)

(वृ. यो. त. । त. १२५)

किराततिक्तकारिष्टयष्ट्याह्वाम्बुदपर्पटैः ।
पटोलवासकोशीरत्रिफलाकौटजैः शृतम् ॥
द्वादशाङ्गं नरःपीत्वा विस्फोटेभ्यो विमुच्यते ।
द्वंदजेभ्यस्त्रिदोषोत्थाद्रक्तजाच्चहिताशनः ॥

चिरायता, नीमकी छाल, मुलैठी, नागरमोथा,

* तिन्दुकैश्चेति पाठान्तरम् ।

पित्तपापड़ा, पटोलपत्र, बासा, खस, हर्र, बहेड़ा, आमला और इन्द्रजौ। इस क्काथ को पीनेसे द्वि-दोषज, सन्निपातज और रक्तज विस्फोटक नष्ट होता है।

(२९३७) **द्वादशाङ्गक्काथः** (२)

(र. र. । ज्वर)

दशमूलीकणाधान्यैः पित्तश्लेष्मोद्भवे ज्वरे।
दद्यात्पाचनकं पूर्वमामे स्तब्धे सनागरैः॥

दशमूल, पीपल और धनिये का क्काथ पित्त-कफज ज्वरमें पहिले ही पाचनार्थ देना चाहिए। सामज्वरमें शरीरके स्तब्ध होनेमें उसमें सोंठ और बढ़ा लेनी चाहिए।

(२९३८) **द्विनिशादिशीतकषायः**

(वृ. नि. र. । प्रमे.)

द्विनिशात्रिफलायुक्तं रात्रौ पर्युषितं जलम्।
प्रभाते मधुना पीतं मेहशूलं निकृन्तति॥

हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा और आमला (हरेक ६ माशे) लेकर रातको (१५ तोले) पानीमें भिगोदें। प्रातःकाल मलकर छानलें। इसमें शहद मिलाकर पीनेसे प्रमेह नष्ट होता है।

द्विपञ्चमूलादिक्काथः

(वृ. यो. त. । त. १२५)

दशमूलादिकाथ सं. २८३५ देखिये।

(२९३९) **द्विपञ्चमूल्यादिकल्कः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

द्विपञ्चमूली सह नागरेण
गुडूचिभूनिम्बघनैः समेताः।
कल्कःप्रशस्तः सगुडो मरुत्सु
सपित्तवातज्वरनाशहेतु॥

दशमूल, सोंठ, गिलोय, चिरायता और नागर मोथा समान भाग लेकर पानीमें पीसकर गुड़में मिला-कर खानेसे वातज तथा वातपित्तज्वर नष्ट होता है।

(२९४०) **द्विवार्त्ताकीफलरसादिप्रयोगः**

(यो. त. । त. । ७७)

द्विवार्ताकीफलरसं पञ्चकोलं च लेहयेत्।
एकद्वित्रीणि घस्राणि वातपित्तकफज्वरे॥

दोनों प्रकारकी (छोटी और बड़ी) कटेलीके फलोंके रस में पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ) का चूर्ण मिलाकर चटानेसे एक दिनमें वात ज्वर, दो दिनमें पित्तज्वर और तीन दिनमें कफज्वर नष्ट हो जाता है।

इति दकारादिकषायप्रकरणम्

अथ दकारादिचूर्णप्रकरणम्

(२९४१) **दन्तमसी**

(यो. चि. । अ. २)

कासीसं त्रिफला माजुफलं जांगीहरीतकी।
कर्पूरं खदिरं ताप्यं लोहचूर्णं च विद्रुमम्॥
दाडिमत्वक् च मञ्जिष्ठा लोध्रं तुत्थं सुराष्ट्रजा
मस्तंगी च बोलं पूगं सर्वं सूक्ष्मविचूर्णितम्॥
दन्तशूलहरं चाम्लैर्दन्तकृष्णीकरं तथा।

कसीस, हर्र, बहेड़ा, आमला, माजूफल, जंगी हर्र (काली हर्र), कपूर, खैरसार, सोनामक्खी भस्म, लोहभस्म, मूंगेका महीन चूर्ण (या भस्म), अनारकी छाल, मजीठ, लोध, फटकी, मस्तगी, बोल गोंद, और सुपारी (पुरानी)। सब चीजें समान भाग लेकर महीन चूर्ण करें।

इसे दांतों पर मलनेसे दन्तशूल नष्ट होता है।

इसे मलकर ऊपरसे खटाई मल दी जाय तो दांत काले हो जाते हैं ।

(२९४२) **दन्तरोगाशनिचूर्णम्**

(भै. र. । मुख.)

जातीपत्रपुनर्नवातिलकणाकौरण्टमुस्तावचाः ।
शुण्ठीदीप्यहरीतकी च सघृतं चूर्णं मुखे धारयेत्
वातघ्नं कृमिदन्तशूलदहनं सर्वामयध्वंसनम् ।
दौर्गन्ध्यादिसमस्तदोषहरणं दन्तस्य रोगाशनिः

चमेलीके पत्ते, बिसखपरा (साठी), तिल, पीपल, झिण्टी (पियाबांसा) के पत्ते, मोथा, बच, सोंठ, अजवायन, और हर्र । सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण करें और उसमें थोड़ासा घी डालकर अच्छी तरह मल दें । इसमें से थोड़ासा चूर्ण मुखमें रखनेसे दन्तकृमि, दांतोंकी वातज पीड़ा, दन्तशूल और मुखकी दुर्गन्धादि समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(२९४३) **दन्तशूलनाशकयोगः**

(वृं. मा. । मुख.)

माक्षिकं पिप्पलीसर्पिर्मिश्रितं धारयेन्मुखे ।
दन्तशूलहरं प्रोक्तं प्रधानमिदमौषधम् ॥

पीपलके चूर्णमें शहद और घी मिलाकर मुखमें (दांतके नीचे) रखने से दन्तशूल नष्ट होता है । दन्तशूलनाशक औषधोंमें यह एक प्रधान औषध है ।

(२९४४) **दन्त्यादिचूर्णम्** (१)

(वं. से. । दन्तरोगा.)

दन्तीसुवर्णदुग्धाकासीसविडङ्गवत्सकफलानाम् ।
चूर्णैरर्कस्नुह्योः पयोभिर्वा पूरणं श्रेष्ठम् ॥

दन्ती, सत्यानासी (स्वर्णक्षीरी) की जड़, कसीस, बायबिड़ंग और इन्द्रजौ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । इस चूर्णको या आक और स्नुही (सेंड—सेहुण्ड) के दूधको कृमिवाले दान्तमें भरनेसे दांतके कृमि नष्ट हो जाते हैं ।

(नोट—आक और स्नुहीका दूध सावधानी पूर्वक कृमिवाले दांतकी खोखरमें भरना चाहिये । अन्य दांत या मसूढ़ोंको न लगने देना चाहिये ।

(२९४५) **दन्त्यादिचूर्णम्** (२)

(वं. से. । शूला.)

दन्ती च त्रिवृता श्यामा कर्णिका कटुकाह्वया ।
नीलिका नागरं चूर्णं तैलेनैरण्डजेन वा ॥
युक्तं विरेचनं सद्यः पक्तिशूलनिवारणम् ॥

दन्ती, निसोत, काली निसोत, सेवतीके फूल, कुटकी, नीलका पंचांग, और सोंठ । इनके चूर्णको अरण्डके तेलमें मिलाकर देनेसे विरेचन होकर परिणाम शूल तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—बलवान पुरुषके लिए—तेल ४ तोले, चूर्ण ६ माशे ।)

(२९४६) **दशनसंस्कारचूर्णम्**

(धन्व.; भै. र. । मुख रोग.)

शुण्ठी हरीतकी मुस्ता खदिरं घनसारकम् ।
गुवाकुभस्म मरिचं देवपुष्पं तथा त्वचम् ॥
एतेषां समभागेन चूर्णमेव विनिर्दिशेत् ।
तत्समं प्रक्षिपेत्तत्र चूर्णं कठिनी सम्भवम् ॥
चूर्णं दशनसंस्कारं दन्तरोगविनाशनम् ॥

सोंठ, हर्र, मोथा, खैरसार, कपूर, सुपारीकी राख, काली मिर्च, लैांग और दालचीनी । सब चीजें समान भाग तथा साफ खिड़िया मिट्टी इन सबके बराबर लेकर सबका महीन चूर्ण बनावें ।

इस चूर्णको मंजनकी भांति लगानेसे दांतोंके समस्त रोग नष्ट होते और दांत साफ़ रहते हैं।

(खिड़िया और अन्य चीजोंको अलग अलग पीसकर कपड़ छन करें। कपूर सबसे पीछे मिलावें।)

(२९४७) **दशमूलादिचूर्णम्**

(वै. म. र. । प. ११)

दशांघ्रिकूष्माण्डलताद्रकाणाम्
चूर्णं मधौ शोफजयाय लिह्यात्।

दशमूल, पेठेकी बेल और अद्रक (सोंठ) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे शोथ रोग नष्ट होता है।

(२९४८) **दशसारचूर्णम्**

(र. र. स. । उ. खं. अ. १८)

यष्टी द्राक्षाफलं धात्र्या एलाचन्दनवालकम्।
मधूकपुष्पं खर्जूरं दाडिमं पेषयेत्समम्॥
सर्वतुल्या सिता योज्या पलार्धं भक्षयेत्सदा।
दशसारमिदं ख्यातं सर्वपित्तविकारजित्॥
मेहतृष्णाऽरतीश्चैव दाहं मूर्च्छां ज्वरं जयेत्॥

मुलैठी, मुनक्का (दाख), आमला, इलायची, सफेदचन्दन, सुगन्धबाला, महुवेके फूल, खजूर और अनारदाना एक एक भाग तथा खांड इन सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसमें से प्रतिदिन २॥ तोले की मात्रानुसार सेवन करने से समस्त पित्त विकार (गरमीके रोग), प्रमेह, तृष्णा, बेचैनी, दाह, मूर्च्छा और पित्तज्वर नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा-१ तोला। अनुपान शीतल जल या द्राक्षाका रस।)

दशाष्टाङ्गचूर्णम्

(यो. र. । ज्वर.)

(दशाष्टाङ्ग काथ देखिये)

(२९४९) **दाडिमकुसुमादियोगः**

(वं. से. । क्षुद्र.)

दाडिमजकुसुमधन्वयासाभयाश्लक्ष्णचूर्णिता क्षिप्ता।
नखकोटिपूतिभागं शमयति च शूलं तत्क्षणतः॥

अनारके फूल, धमासा, और हर्र समान भाग लेकर महीन चूर्ण करें।

इसे नखमें भरनेसे उसके भीतरका सड़ा हुवा मांस और पीड़ा नष्ट हो जाती है।

(२९५०) **दाडिमचतुःसमचूर्णम्**

(भै. र. । बा. रो.)

जातिफलं त्रिदशपुष्पसमन्वितश्च।
जीरश्च टङ्कनयुतं चरकैः प्रयुक्तम्॥
एतद्द्रव्यचतुष्कश्चेद् दाडिमीफलमध्यगम्।
पुटपक्वं पयःपिष्टं तद्दाडिमचतुःसमम्॥

(पयोऽत्रच्छाग्यास्तस्यातिसारहरत्वात्। पयः शब्दोऽत्र जल वाचकमिति च केचित्।)

जायफल, लैंग, जीरा और सुहागा समान भाग लेकर पीसलें; फिर एक अनारको खाली करके (भीतरके बीज निकालकर) उसके भीतर यह चूर्ण भरदें और उसके मुंहको बन्द करके उसके ऊपर पानीमें भीगी हुई मिट्टीका आधा अंगल मोटा लेप करके भूबल (कण्डों की मन्दाग्नि) में दबा दें। जब मिट्टीका रंग लाल हो जाय तो अनारको निकालकर बकरीके दूध या पानीमें पीसलें।

इसके सेवनसे बालकोंका अतिसार नष्ट होता है। (मात्रा-१ रत्ती).

(२९५१) **दाडिमबीजादिप्रयोगः**

(वं. से. । बालरो.)

दाडिमस्य तु बीजानि जीरकं नागकेसरम् ।
चूर्णः सशर्कराक्षौद्रो लेह्यस्तृष्णाविनाशनः ॥

अनारदाना, जीरा और नागकेशरका चूर्ण समान भाग तथा खांड सबके बराबर लेकर एकत्र मिलावें । इसे शहदमें मिलाकर चटानेसे बच्चोंकी तृष्णा शान्त होती है ।

(मात्रा २ रत्ती । दिनमें ५–६ वार चटावें ।)

(२९५२) **दाडिमादिचूर्णम्** (१)

(वृ. नि. र. । अरुचि.; भा. प्र. । ख. २ अरो.; ग. नि.। चूर्णा.; वं. से. । अरो.; ग. नि. । कासा.)

द्वे पले दाडिमादष्टौ खण्डाद्व्योषात्पलत्रयम् ।
त्रिसुगन्धिपलं चैकं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥
दीपनं रोचनं हृद्यं पीनसश्वासकासजित् ॥

अनारदाना १० तोले, खांड ४० तोले, सोंठ, मिर्च, पीपल हरेक ५ तोले, और दालचीनी, तेजपात तथा इलायची तीनों मिलाकर ५ तोले (अथवा सोंठ, मिर्च, पीपलमेंसे हरेक १५ तोले और दालचीनी आदि हरेक चीज ५ तोले) लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण दीपन, रोचक, हृद्य और पीनस, खांसी तथा श्वास नाशक है ।

(मात्रा–२–३ माशे । शहदके साथ ।)

(२९५३) **दाडिमादिचूर्णम्** (२)

(वृं. मा. । हृद्रोग.)

दाडिमं कृष्णलवणं शुण्ठीं हिङ्ग्वम्लवेतसम् ।
अपतन्त्रकहृद्रोगश्वासघ्नं चूर्णमुत्तमम् ॥

अनारदाना, कालानमक (सञ्चल), सोंठ, हींग (भुना हुवा) और अमलबेत समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे अपतन्त्रक, श्वास और हृद्रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा २–३ माशे । अनुपान उष्णजल या अदरकका रस ।)

(२९५४) **दाडिमादिचूर्णम्** (३)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ७)

विडालकं दाडिमपूतना च
धात्रीसमेतं विदधीत चूर्णम् ।
तन्मातुलुङ्गस्य रसेन भावितं
सपित्तशूले शमनाय भक्षेत् ॥

अनारदाना, हर्र और आमला हरेक १।–१। तोला लेकर चूर्ण बनावें; और उसे एक दिन बिजौरे नीबूके रसमें घोटें । इसके सेवनसे पित्तज शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा–३ माशे । अनुपान उष्णजल ।)

(२९५५) **दाडिमादियोगः**

(यो. र. । मूत्रकृ.)

दाडिमाम्लयुतां हृद्यां शुण्ठीजीरकसंयुताम् ।
पीत्वा सुरां सलवणां मूत्रकृच्छ्रात्प्रमुच्यते ॥

अनारके रसमें सोंठ और जीरेका चूर्ण मिलाकर लवणयुक्त सुरा (शराब) के साथ पीनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है । यह प्रयोग हृदयके लिए भी हितकारी है ।

(मात्रा १॥––२ माशा ।)

(२९५६) **दाडिमाद्यं चूर्णम्** (१)

(र. र. हिक्का.)

दाडिमं नागरहिङ्गुसर्जसैन्धवपौष्कराः।
रास्ना चात्र समं चूर्णं कर्षं घृतेन सम्पिबेत्॥
कासश्वासहरं चूर्णं दाडिमाद्यं न संशयः॥

अनारदाना, सोंठ, हींग, राल, सेंधानमक, पोखरमूल, और रास्ना। सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमें से प्रतिदिन १। तोला चूर्ण घीमें मिलाकर सेवन करनेसे खांसी और श्वास नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा २-३ माशे।)

(२९५७) **दाडिमाद्यं चूर्णम्** (२)

(ग. नि.। परिशिष्ट चूर्णा.)

दाडिमस्य पलान्यष्टौ शृङ्गवेरपलत्रयम्।
पलद्वयं पिप्पली च कोलचूर्णं पलद्वयम्॥
यवानी चाजमोदा च मिशिश्चैवाम्लवेतसम्।
वृक्षाम्लं चविका चात्र अभया च पलोन्मिता॥
सौवर्चलं धान्यकं च सूक्ष्मैला त्वक् तथैव च।
ग्रन्थिकं मरिचं चात्र पत्रकं सतुगाह्वयम्॥
एषामर्धपलान् भागान् सर्वैस्तुल्या सिता भवेत्।
एतत्प्राक् भोजनाच्चूर्णं दीपनं गुल्मनाशनम्॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषमतीसारं प्रवाहिकाम्।
पार्श्वशूलमथानाहं प्रमेहांश्च प्रणाशयेत्॥

अनारदाना ४० तोले, सोंठ १५ तोले, पीपल १० तोले, कंकोल १० तोले। अजवायन, अजमोद, सैांफ, अमलवेत, वृक्षाम्ल (इमली), चव, और हर्र ५-५ तोले। सैांचल (कालानमक), धनिया, छोटी इलायची, दालचीनी, पीपलामूल, काली मिर्च, तेजपात और बंसलोचन २॥-२॥ तोले तथा मिश्री सबके बराबर लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें।

इसे भोजनसे पहिले खानेसे अग्निदीप्त होती और गुल्म, बवासीर, ग्रहणी, अतिसार, प्रवाहिका (पेचिश), पसलीका शूल, अफारा और प्रमेह नष्ट होता है।

(मात्रा-३ से ६ माशे। अनुपान जल या बकरी का दूध।)

(२९५८) **दाडिमाष्टकचूर्णम्** (१)

(यो. चिं.। चूर्णा.)

दाडिमस्य पलान्यष्टौ शर्करायाः पलाष्टकम्।
पिप्पली पिप्पलीमूलं यवानी मरिचं तथा॥
धान्यकं जीरकं शुण्ठी प्रत्येकं पलसम्मितम्।
कर्षमात्रा तुगाक्षीरी त्वक्पत्रैलाश्च केसरम्॥
प्रत्येकं कोलमात्राः स्युः तच्चूर्णं दाडिमाष्टकम्।
अतिसारक्षयं गुल्मं ग्रहणीं च गलग्रहम्॥
मन्दाग्निं पीनसं कासं चूर्णमेतद्व्यपोहति॥

अनारदाना ८ पल, खांड ८ पल, पीपल, पीपलामूल, अजवायन, काली मिर्च, धनिया, जीरा और सोंठ प्रत्येक १-१ पल (५-५ तोले) बंसलोचन १। तोला तथा दालचीनी, तेजपात, इलायची, और नागकेसर प्रत्येक ७॥ माशे लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें।

यह 'दाडिमाष्टक चूर्ण' अतिसार, क्षय, गुल्म, ग्रहणी, गलग्रह, मन्दाग्नि, पीनस और खांसीका नाश करता है।

मात्रा-३ से ४ माशे तक। अनुपान उष्णजल। या शहदमें मिलाकर चटावें।)

(२९५९) **दाडिमाष्टकचूर्णम्** (२)

(ग. नि. । चूर्णा.; वै. र.; वृ. नि. र. । संग्र.)

दाडिमस्य पलान्यष्टौ [१]चातुर्जातं पलद्वयम्[२] ।
अजाजीनां पलार्धन्तु पलार्धं धान्यकस्य च ॥
पृथक् पलत्रिकान् भागान् त्रिकटोर्ग्रन्थिकस्य च।
त्वक्क्षीरी बालकं चैव दद्यात्कर्षसमान् भिषक् ॥
शर्करायाः पलान्यष्टौ तदेकस्थं विचूर्णयेत् ।
आमातीसारशमनं कासहृत्पार्श्वशूलनुत् ॥
हृद्रोगमरुचिं गुल्मं ग्रहणीमग्निमार्दवम् ।
प्रयुक्तो नाशयत्येष चूर्णोऽयं दाडिमाष्टकः ॥

अनारदाना ८ पल; दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, जीरा और धनिया, हरेक आधा पल, सोंठ, मिर्च, पीपल, और पीपलामूल हरेक १ पल (५ तोले); बंसलोचन और सुगन्धबाला १।—१। तोला तथा खांड ८ पल । सबका चूर्ण बनाकर रक्खें ।

यह 'दाडिमाष्टक चूर्ण' आमातिसार, खांसी हृदयकी पीड़ा, पसलीका दर्द, हृद्रोग, अरुचि, गुल्म, ग्रहणीरोग और अग्निमान्द्यका नाश करता है।

(मात्रा ३ माशे । अनुपान तक्र या रोगोचित अन्य पदार्थ ।)

नोट—दाडिमाष्टक नं. १ और इसमें ओषधियां लगभग समान ही पड़ती हैं कुछ ओषधियोंके परिमाणमें अन्तर है और अजवायनकी जगह सुगन्ध बाला पड़ता है ।

(२९६०) **दाडिमाष्टकचूर्णम्** (३)

(यो. र.; वृं. नि. र. । अति.; ग. नि. । चूर्णा.; च. द; वृं. मा.; भै. र. । ग्रहणी)

कर्षोन्मिता तुगाक्षीरी चातुर्जातं त्रिकार्षिकम्[३]।
यवानीधान्यकाजाजीग्रन्थिव्योषं पलांशकम् ॥
पलानि दाडिमस्याष्टौ सितायाश्चैकतः कृतम्।
गुणैःकपित्थाष्टकवच्चूर्णं तद्दाडिमाष्टकम् ॥

बनसलोचन १। तोला, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेशर प्रत्येक ३।।। तोले; अजवायन, धनिया, जीरा, पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, ५—५ तोले और खांड तथा अनार दाना ४०—४० तोले लेकर चूर्ण बनावें ।

इसके गुण कपित्थाष्टक चूर्णके समान हैं । (अतिसार, क्षय, ग्रहणी, गुल्म, खांसी, श्वास, अरुचि, हिचकी आदिमें उपयोगी है । मात्रा—३ माशे

नोट—इसमें और दाडिमाष्टक नं. १ में केवल इतना ही अन्तर है कि उसमें दालचीनी, तेजपात, इलायची और नागकेसर में से हरेक ७।। माशे है और इसमें हरेक ३।।। तोले। अगर त्रिकार्षिकम्‌की जगह द्विकार्षिकम् पाठ रखकर चारों चीज़ें मिलाकर २ कर्ष (२।।) तोले लें तो दोनों योग बिलकुल समान हो जाते हैं ।

(२९६१) **दाडिमाष्टकचूर्णम्** (४)

(वृ. नि. र. । संग्र.; वै. र. । संग्र.)

पलद्वयं दाडिमस्य व्योषस्य च पलद्वयं ।
त्रिगन्धस्य पलं चैकं खण्डस्याष्टपलानि च ॥
सर्वमेकीकृतं चूर्णं प्रशस्तं दाडिमाष्टकम् ।
दीपनं रुचिदं कण्ठ्यं संग्राहि ग्रहणीहरम् ॥

अनारदाना २ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल तीनों अलग अलग २—२ पल, दालचीनी, इलायची,

१-२ पलं सौगन्धिकस्य चेति पाठान्तरम् । ३—द्विकार्षिकमिति, कार्षिकमिति च पाठान्तरम् ।

तेजपात तीनों समान भाग मिलाकर ३ पल (१५ तोले) और खांड ८ पल लेकर चूर्ण बनावें।

यह " दाडिमाष्टक चूर्ण " दीपन, रोचक, कण्ठके लिए हितकारी और ग्रहणी रोग नाशक है।

(२९६२) **दार्व्यादिचूर्णम्**

(यो. र. । अति.)

पीतदारु वचा लोध्रं कलिङ्गफलं नागरम् ।
दाडिमाम्बुयुतं दद्यात्पित्तवातातिसारिणे ॥

दारुहल्दी, बच, लोध, इन्द्रजौ और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे अनारके स्वरस या क्वाथके साथ देनेसे पित्तज तथा वातज (या वातपित्तज) अतिसार नष्ट होता है।

(मात्रा ३ माशे ।)

(२९६३) **दार्व्यादियोगः**

(यो. र. । शोथ.)

पिबेदुष्णाम्बुना दारुपथ्याशुण्ठीपुनर्नवाः।
विडङ्गातिविषावासाविश्वदारूषणानि च ॥
वर्षाभूशृङ्गवेराभ्यां कल्कं वा सर्वशोफनुत् ॥

(१) देवदारु, हर्र, सोंठ, और पुनर्नवा (साठी)

(२) बायबिड़ंग, अतीस, बासा, सोंठ, देवदार और कालीमिर्च। इन दोनों योगोंमें से किसी एकका चूर्ण बनाकर या बिसखपरा (साठी) और सोंठका कल्क बनाकर गरम पानीके साथ पीनेसे समस्त प्रकारके शोथ नष्ट होते हैं।

(२९६४) **दार्वीचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । अण्डवृ.)

दार्वीचूर्णं गवां मूत्रैर्निपीतं मुष्कवृद्धिजित् ।

दारुहल्दीके चूर्णको गोमूत्रके साथ सेवन करने से अण्डवृद्धि रोग नष्ट हो जाता है। (मात्रा-३ माशे।)

(२९६५) **दार्व्यादिचूर्णम्**

(र. र. । बाल.)

दार्वीयष्ट्यभयाजातीपत्रक्षौद्रैस्तथापरम् ।
जातीपत्ररसः पूतः क्षौद्रयुक्तः प्रशस्यते ।
शिशोः कर्णव्रणस्रावे मुखपाके च शस्यते ॥

दारुहल्दी, मुलैठी, हर्र और चमेलीके पत्तोंका चूर्ण शहदमें मिलाकर या चमेलीके पत्तोंके रसको कपड़ेमें छानकर शहदमें मिलाकर कानमें डालने और मुखमें लेप करने से बालकोंके कानका घाव, कान बहना और मुखके छाले जाते रहते हैं।

(२९६६) **दीप्यकादिचूर्णम्**

(ग. नि.; वृ. नि. र. । शूला.)

दीप्यकं सैन्धवं पथ्या नागरञ्च चतुः पलम् ।
चूर्णं शूलं जयत्येतत्सद्यस्याग्नेश्च दीपनम् ॥

अजवायन, सेंधा, हर्र और सोंठ का चूर्ण ५-५ तोले ले कर एकत्र मिलावें।

यह चूर्ण शूलको नष्ट करता और मन्दाग्निको दीप्त करता है।

(मात्रा-३ माशे । अनुपान-गरम पानी या काञ्जी)

(२९६७) **दुरालभादिक्षारः**

(च. सं. । चि. अ. १९; वं. से. । ग्रह.)

दुरालभाकरञ्जौ द्वौ सप्तपर्णं सवत्सकम् ।
षड्ग्रन्थां मदनं मूर्वां पाठामारग्वधं तथा ॥
गोमूत्रेण समांशानि कृत्वा चूर्णानि दापयेत् ।
दग्ध्वा च तं पिबेत् क्षारं बलवर्णाग्नि वर्द्धनम् ॥

धमासा, दोनों प्रकारके करञ्ज की छाल, सतौनेकी छाल, कुड़ेकी छाल, बच, मैनफल (मेंडफल), मूर्वा, पाठा और अमलतासकी छाल समान भाग

लेकर चूर्ण करें फिर उसमें सबके बराबर गोमूत्र मिलाकर पकावें । जब गोमूत्र जल जाय तो उस चूर्णको हाण्डीमें बन्द करके या कढ़ाहीमें भस्म करलें ।

इस क्षारको सेवन करनेसे बल वर्ण और अग्नि बढ़ते है । (मात्रा—१ माशा। अनुपान—तक्र ।)

(२९६८) **दुरालभाद्यं चूर्णम्**

(ग. नि. । कासा; ग. नि. । परिशिष्ट. चूर्णा.; वा. भ. । चि. अ. ३; च. सं. । चि. अ. २२)

दुरालभां शृङ्गवेरं शठीं द्राक्षां सितोपलाम् ।
लिह्यात्कर्कटशृङ्गीं च कासे तैलेन वातजे ॥

धमासा, सोंठ, शटी (कचूर), मुनक्का (दाख) काकड़ासींगी और मिश्री समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । इसे तेलमें मिलाकर चाटनेसे वातज खांसी नष्ट होती है ।

(मात्रा २—३ माशे । दिन भरमें ३—४ बार चाटें ।)

(२९६९) **दुःस्पर्शादिचूर्णम्**

(च. सं. । चि. अ. २२)

दुःस्पर्शां पिप्पलीं मुस्तं भार्गीं कर्कटकीं शठीम् ।
पुराणगुडतैलाभ्यां चूर्णितं वापि लेहयेत् ॥

धमासा, पीपल, नागरमोथा, भारंगी, काकड़ासिंगी, और शठी (कचूर) समान भाग लेकर चूर्ण करें । इसे पुराने गुड़ और तेलमें मिलाकर चाटनेसे वातज खांसी नष्ट होती है ।

नोट—गुड़ सबके बराबर लेना चाहिए । मात्रा ३ माशे । ६ माशे तेलमें मिलाकर चाटें । दिन भरमें २—३ मात्रा खानी चाहियें ।

(२९७०) **देवदार्वादिचूर्णम्** (१)

(वृ. नि. र.; बं. से; यो. र. । कास.)

देवदारुबलारास्नात्रिफलाव्योषपद्मकैः ।
सविडङ्गैः [1]सितातुल्यै[2]स्तच्चूर्णं सर्वकासनुत् ॥

देवदार, खरैटी, रास्ना, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, पद्माक और बायबिडंग १—१ भाग तथा खांड सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें । इसके सेवनसे हर प्रकारकी खांसी नष्ट हो जाती है ।

(मात्रा ३—४ माशे। शहदमें चाटें ।)

(२९७१) **देवदार्वादिचूर्णम्** (२)

(ग. नि. । श्वयथु.)

देवदारुर्वृषोऽश्मन्तो विश्वा कृष्णा कुरण्टकः ।
रिङ्गणी चूर्णमेतेषां दध्ना पीतं च शोफहृत् ॥

देवदार, बांसा, पत्थरचटा, सोंठ, पीपल, पियाबांसा और कटेली समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे दहीके साथ पीनेसे शोथ नष्ट होता है।

(मात्रा—१ से ३ माशे तक)

(२९७२) **देवदार्वादिचूर्णम्** (३)

(ग. नि.; वं. से. । कासा.)

देवदारुशठीरास्नाशृङ्गीधन्वयवासकम् ।
तैलक्षौद्रयुतं लिह्याच्छ्लेष्मकासे सुदारुणे ॥

देवदारु, कचूर, रास्ना, काकड़ासिंगी और धमासा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे तैल और शहदमें मिलाकर चाटनेसे भयङ्कर कफज खांसी भी नष्ट हो जाती है ।

(२९७३) **देवदार्वादिचूर्णम्** (४)

(वा. भ. । चि. अ. ११)

देवदारुं घनं मूर्वां यष्टीमधुं हरीतकीम् ।

१—२ शिलातुल्यमिति पाठान्तरम् ।

मूत्राघातेषु सर्वेषु सुरासीरजलैः पिबेत् ॥

देवदारु, नागरमोथा, मूर्वा, मुलैठी और हर्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे मद्य, दूध या पानीके साथ सेवन करनेसे मूत्राघात नष्ट होता है ।

(मात्रा ३–४ माशे ।)

(२९७४) देवदालीप्रयोगः (१)

(र. चि. । स्तव. ३)

समुद्रफेनं भूनिम्बं निम्बपञ्चाङ्गमेव च ।
धात्रीफलं भृङ्गराजो बाकुचीचूर्णमुत्तमम् ॥
हरीतकी विभीतं च वाजिगन्धा पुनर्नवा ।
सेफाली देवकाष्ठं च गुडूची शक्रवारुणी ॥
मुण्डी सौभाञ्जनं श्वेतं फलं कन्दं पलाशजम् ।
एतानि समभागानि देवदाली च तत्समा ॥
पातव्यं शीततोयेन वेदमाषमिदं भिषक् ।
लघु योग्यं च भोज्यं स्यादेतान्दोषान्विनाशयेत् ॥
वातरक्तं च गुल्मं च कुष्ठं प्लीहानमुल्वणम् ।
भगन्दरं यकृद्दोषमुदरम्वारिसम्भवम् ॥
वायुक्षयकरं चैतद्धन्यात्कच्छपिकां दृढाम् ।
सर्वरोगाः प्रयान्त्याशु देवदालीप्रभावतः ॥

समुद्रफेन, चिरायता, नीमका पञ्चाङ्ग, आमला, भंगरा, बाबची, हर्र, बहेड़ा, असगन्ध, बिसखपरा (साठी), संभालु, देवदारु, गिलोय, इन्द्रायणकी जड़, गोरखमुण्डी, सफेद सहंजनेकी छाल, ढाक, (पलाश) की जड़ और फल । सब चीजें समान भाग तथा देवदाली (बिंडाल) सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे ४ माशेकी मात्रानुसार शीतल जलके साथ सेवन कराने और उचित तथा हल्का भोजन देनेसे वातरक्त, गुल्म, कुष्ठ, तिल्ली, भगन्दर, यकृद्दोष, जलोदर, वायु और कच्छपिका आदि रोगोंका नाश होता है ।

(२९७५) देवदालीप्रयोगः (२)

(र. चि. । स्त. ३]

सूरणं देवदाली च समभागमिदं द्वयम् ।
वेदमाषं प्रयोक्तव्यमर्शोदोषहरं परम् ।

जिमीकन्द (सूरण) और देवदाली (बिंडाल डोढा) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे ४ माशेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे अर्श (बवासीर) का नाश होता है ।

(अनुपान–पानी ।)

(२९७६) देवदालीप्रयोगः (३)

(र. चि. । स्त. ३)

सुरदालीभवं चूर्णं पिबेच्छीतेन वारिणा ।
ज्वरं विनाशयेद्गाढं मन्त्रद्धमचिरेण हि ॥

देवदाली (बिंडाल डोढे) के चूर्णको ठण्डे पानीके साथ सेवन करने से तीव्र ज्वर भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा–१ माषा ।)

(२९७७) देवदालीप्रयोगः (४)

(र. चिं. म. । स्त. ३)

देवदालीभवं चूर्णं सूक्ष्ममुष्णेन वारिणा ।
द्विमाषं घर्मसेवी स्याद्गाढकुष्ठं विनाशयेत् ॥

देवदाली (बिंडाल डोढे) के बारीक चूर्णको २ माशे की मात्रानुसार उष्ण जलके साथ सेवन करने और रोज थोड़ीदेर धूपमें बैठनेसे कुष्ठ नष्ट हो जाता है ।

(२९७८) **देवदालीप्रयोगः** (५)

(र. चिं. । स्तब. ३)

बाकुचीत्रिफलाचूर्णं पञ्चाङ्गं निम्बजं नयेत् ।
चित्रकस्य तथा मूलं देवदालीं समां क्षिपेत् ॥
अर्कसेहुण्डदुग्धेन भाव्यते दिनमात्रकम् ।
माषकद्वितयं दद्यात्रिफलाक्काथसंयुतम् ॥
निहन्ति सर्वकुष्ठानि मासेनैकेन निश्चितम् ।
अपि वर्षसहस्रस्य दृढीभूतं विनाशयेत् ॥

बावची, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), नीमका पञ्चाङ्ग, और चीतामूल, एक एक भाग तथा देवदाली सबके बराबर लेकर चूर्ण बनाकर उसे १ दिन सेहुण्ड (सेंड) और आकके दूधमें घोटें।

इसे २ माशेकी मात्रानुसार त्रिफलाके काथके साथ सेवन करानेसे बहुत पुराना कुष्ठ भी १ मासमें नष्ट हो जाता है ।

नोट—यह तीव्र रेचक है अत एव सावधानी पूर्वक सेवन कराना चाहिए । मात्रा आदि रोगीके बलाबलका विचार करके निश्चित करनी चाहिए ।

(२९७९) **देवदालीप्रयोगः** (६)

(र. चिं. । स्त. ३)

सपत्रां सफलां नीत्वा समूलां देवदालिकाम् ।
सेहुण्डार्कपयोभिस्तां भावयेत्सप्तधा बुधः ॥
माषद्वयमितं चूर्णं प्रत्यहं सह शर्करम् ।
त्रिमासादूर्ध्वतः कुष्ठमपहन्ति न संशयः ॥
गलत्प्रायाणि यानि स्युः कुष्ठानि तानि नाशयेत् ।
एकवेलं प्रलिप्ताङ्गं त्रियामान्ते परित्यजेत् ॥
तिलतैलेन संयुक्तं देवदालीफल द्रवम् ।
पिबंस्तल्लिप्तदेहस्तु दद्रुपामाविचर्चिकाम् ॥
श्वित्राणि नाशयेत्सद्यः सिध्मकुष्ठानि यानि च ॥

पत्र, फल और मूल युक्त देवदालीको सुखाकर चूर्ण करें और फिर उसे आक तथा सेहुण्ड (सेंड) के दूधकी सात सात भावना दें ।

इसमें से २ माशे चूर्ण प्रतिदिन खांडके साथ खानेसे ३ मास में गलत्प्रायः कुष्ठ भी अवश्य नष्ट हो जाते हैं ।

देवदाली के फलोंके रस में तिलका तैल मिलाकर प्रातःकाल शरीर पर मालिश करें और ३ पहर बाद पोंछ डालें तथा इसी योग को पिया भी करें । इससे दाद, खुजली, विचर्चिका, सफेद कोढ़ और सिध्म (छीप) का नाश होता है

(नोट—यह योग तीव्र रेचक है । सावधानी पूर्वक सेवन कराना चाहिये ।

(२९८०) **द्राक्षादिचूर्णम्** (१)

(वृं. मा. । हिक्का; वं. से. । श्वास.)

द्राक्षाहरीतकीकृष्णाकर्कटाख्यादुरालभाः ।
विलिहन्मधुसर्पिर्भ्यां श्वासान्हन्ति सुदारुणान् ॥

दाख (मुनक्का), हर्र, पीपल, काकड़ासिंगी, और धमासा । समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । इसे शहद और घीके साथ चाटनेसे भयङ्कर श्वास भी नष्ट हो जाता है ।

(२९८१) **द्राक्षादिचूर्णम्** (२)

(वं. से., यो. र. । मुख.)

मृद्वीकाकटुकाव्योषदार्वीत्वक्त्रिफलाघनम् ।
पाठा रसाञ्जनं दूर्वा[1] तेजोह्वेति सुचूर्णितम् ॥
क्षौद्रयुक्तं विधातव्यं गलरोगे महौषधम् ॥

[1] मूर्वेति पाठान्तरम् ।

मुनक्का (दाख), कुटकी, सोंठ, मिर्च, पीपल, दारुहल्दीकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, पाठा, रसौत, दूब घास, और चव। सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर मुखमें रखनेसे गलेके रोग नष्ट होते हैं।

(२९८२) **द्राक्षादिचूर्णम्** (३)

(वै. र.। रक्तपि.)

मृद्वीका चन्दनं लोध्रं प्रियङ्गुश्चेति चूर्णयेत्।
चूर्णमेतत्पिबेत्क्षौद्रवासारससमन्वितम् ॥
नासिकामुखपायुभ्यो योनिमेढ्रादिवेगिनाम्।
रक्तं पित्तं स्रवद्धन्ति सिद्ध एष प्रयोगराट् ॥
रक्तातिसारे प्रदरे रक्तार्शासि चिकित्सितम्।
अधोगे रक्तपित्ते च कार्यमुक्तं भिषग्वरैः ॥
बोलबद्धपर्पटीरसश्चात्रदेयामालिनीवसन्तश्च॥

दाख (मुनक्का), सफेद चन्दन, लोध और फूलप्रियङ्गु। सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहद और बासेके रसमें मिलाकर पिलानेसे नाक, मुंह, गुदा, योनि और लिङ्ग आदि से होने वाला रक्तस्राव (रक्तपित्त), रक्तातिसार, रक्तप्रदर, और रक्तार्शका रक्त बन्द होता है। यह एक सिद्ध प्रयोग है।

अधोगत रक्तपित्तमें बोलबद्ध पर्पटी रस तथा मालिनी वसन्तरस भी लाभ पहुंचाता है।

(२९८३) **द्राक्षादिचूर्णम्** (४)

(वृ. नि. र.। ज्वर.)

द्राक्षा दुरालभा पथ्या चिक्कणी समभागतः।
एता गुडान्विता नूनं नाशयन्त्यनिलज्वरम्।

मुनक्का (दाख), धमासा, हर्र, और चिकनी सुपारी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे गुड़के साथ मिलाकर सेवन करनेसे वातज ज्वर नष्ट होता है।

(मात्रा २—३ माशा। गुड़ सबके बराबर मिलाना चाहिये)

(२९८४) **द्राक्षादिचूर्णम्** (५)

(वृ. नि. र.। क्षयकर्म.)

द्राक्षाखर्जूरसर्पिर्भिः पिप्पल्या च सह स्मृतम्।
सक्षौद्रं ज्वरकासघ्नं श्वयथौ च प्रयोजयेत् ॥

दाख (मुनक्का), खजूर और पीपलके चूर्णको घी और शहदके साथ मिलाकर खानेसे ज्वर, खांसी और शोथ नष्ट होता है।

(२९८५) **द्राक्षादिचूर्णम्** (६)

(वृं. मा.; ग. नि.; यो. र.; वृ. नि. र.; वं. से.। कास.)

द्राक्षामधुक[1]खर्जूरपिप्पली मरिचान्वितम्।
पित्तकासहरं ह्येतल्लिह्यान्माक्षिकसर्पिषा ॥

दाख (मुनक्का), मुलैठी, खजूर, पीपल और काली मिरचके चूर्णको शहद और घीके साथ चाटनेसे पित्तज खांसी नष्ट होती है।

(२९८६) **द्राक्षादिचूर्णम्** (७)

(वृं. मा.; ग. नि.; भा. प्र.। म. ख. बालदो.; यो. र.। कास.)

द्राक्षावासा[2]भयाकृष्णाचूर्णं क्षौद्रेण सर्पिषा।
लीढं कासं निहन्त्याशु श्वासञ्च तमकं तथा ॥

दाख (मुनक्का), बासा, हर्र, और पीपलके

१ आमलकेति पाठान्तरम्। २ विश्वेति पाठान्तरम्

चूर्णको शहद तथा घीके साथ चाटनेसे श्वास, खांसी और तमक श्वास शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(२९८७) **द्राक्षादिचूर्णम्** (८)

(वं. से. । बाल.)

द्राक्षादुरालभाचैव पिप्पल्योऽथ हरीतकी ।
एतानि कृत्वा चूर्णानि योजयेन्मधुसर्पिषा ॥
त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा चूर्णमेतन्निषेवितम् ।
कासः श्वासश्च बालानां तमकश्चोपशाम्यति ॥

दाख (मुनक्का), धमासा, पीपल और हर्रके चूर्णको शहद और घीके साथ मिलाकर तीन दिन या ५ दिन तक चटानेसे बालकोंकी खांसी, श्वास और विशेषतः तमक श्वास नष्ट हो जाता है।

(२९८८) **द्राक्षादिचूर्णम्** (९)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ६)

द्राक्षाभयातिक्तकरोहिणी च
विदारिकाचन्दनवासकं च ।
मुस्तापटोलं किरातकानां
कृष्णां बलामूसलिकाविषाणाम् ॥
एलालवङ्गदलपद्मकं च
योज्या च भृङ्गी धनिका समांशा ।
चूर्णं सखर्जूरसितासमेतं
घृतेन तं चार्धपलप्रमाणम् ॥
भक्षेत् प्रभाते मनुजः पयश्च
निःक्वाथ्य पानं सघृतं विधेयम् ।
करोति तीव्राग्निसमं प्रकृष्टं
कृशस्य पुष्टिं तनुतेऽपि नूनम् ॥
क्लमभ्रमशोषविनाशनं स्यात्
तृष्णातिलौल्यशमनं करोति ।
सरक्तपित्तं क्षयपाण्डुरोगं
हलीमकं कामलमाशु नश्येत् ॥

मुनक्का (दाख), हर्र, कुटकी, बिदारीकन्द, सफेदचन्दन, बासा, नागरमोथा, पटोलपत्र, चिरायता, पीपल, खरैटी, मूसली, अतीस, इलायची, लौंग, तेजपात, पद्माक, काकड़ासिंगी, धनिया, खजूर और मिश्री । सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । इसे २॥ तोलेकी मात्रानुसार घीमें मिलाकर प्रातःकाल पके हुवे दूधमें घी डालकर उसके साथ सेवन करनेसे अग्नि तीव्र होती, कृश शरीर पुष्ट होता तथा क्लान्ति, भ्रम, शोष, तृष्णा, रक्तपित्त, क्षय, पाण्डु, हलीमक और कामला आदि रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ।

(व्यवहारिक मात्रा ६ माशे ।)

(२९८९) **द्राक्षादिचूर्णम्** (१०)

(ग. नि. । चूर्णा.; यो. र.)

द्राक्षा लाजसितोत्पलं समधुकं खर्जूरगोपीतुगा।
ह्रीवेरामलकाब्दचन्दननतं कक्कोलजातीफलम् ॥
चातुर्जातकणं सधान्यकमिदं चूर्णं समां शर्कराम् ।
दत्वा शीतजलेन भक्षितमिदं पित्तं सदाहं जयेत् ॥
मूर्च्छां छर्दिमरोचकं च प्रदरं पाण्डुभ्रमं कामलाम् ।
यक्ष्माणं समदात्ययं सतमकं तृष्णास्रपित्तं तथा ।

दाख (मुनक्का), खस, सफेद कमल, मुलैठी, खजूर, अनन्त मूल, बंसलोचन, सुगन्धबाला, आमला, मोथा, सफेद चन्दन, तगर, कंकोल,

जायफल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, स्याह मिर्च और धनिया । सब चीजें एक एक भाग लेकर चूर्ण करें तथा सबके बराबर खांड मिलावें ।

इसे शीतल जलके साथ सेवन करनेसे दाह, पित्त, छर्दि, मूर्च्छा, अरुचि, प्रदर, पाण्डु, भ्रम, कामला, यक्ष्मा, मदात्यय, तमकश्वास, तृष्णा और रक्तपित्त रोग नष्ट होता है ।

(२९९०) **द्राक्षादिप्रयोगः** (१)

(वा. भ. । चि. स्था. अ. ४)

द्राक्षां पयस्यां मधुकं चन्दनं पद्मकं मधु ।
पिबेत्तण्डुलतोयेन पित्तगुल्मोपशान्तये ॥

दाख (मुनक्का), क्षीरकाकोली, मुलैठी, सफेद चन्दन और पद्माक, समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । इसे शहदमें मिलाकर चावलोंके पानी (तण्डुलोदक) के साथ पीने से पित्तगुल्म नष्ट होता है ।

(मात्रा—३ माशे । तण्डुलोदक बनानेकी विधि भारत भै. र. प्रथम भागके ३५३ पृष्ठ पर देखिये ।)

(२९९१) **द्राक्षादिप्रयोगः** (२)

(वै. म. र. । प. ६)

द्राक्षाब्दयष्टीमधुकखर्जूरहिमकणाम्भोभिः ।
स्तन्यमधुघृतं सितेक्षुस्वरसेनोन्मादनाशःस्यात् ॥

दाख (मुनक्का), नागरमोथा, मुलैठी, खजूर, खस, पीपल, मिश्री और सुगन्ध बाला १—१ भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसमें १—१ भाग स्त्रीका दूध, शहद और घृत मिलाकर रक्खें ।

इसे ईखके रसके साथ सेवन करानेसे उन्माद रोग नष्ट होता है । (मात्रा—आधेसे १ तोले तक)

(२९९२) **द्राक्षादिप्रयोगः** (३)

(वै. म. । विषय २८)

द्राक्षाचन्दनकुष्ठकेसरतुगाक्षीरी च जातीफलम् ।
कङ्कोलं च पुनर्नवा मुशल्या धात्र्याश्वगन्धान्वितम् ॥
एतेषां समभागिकं समसितं सर्पिर्युतं खादये-द्धातुक्षैण्यबलक्षयाश्मरिरुजः पित्तास्रजं भ्रामकम् ॥

दाख (मुनक्का), सफेदचन्दन, कूठ, केसर, बंसलोचन, जायफल, कंकोल, बिसखपरा (साठी), मूसली, आमला और असगन्ध । एक एक भाग तथा मिश्री सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घीमें मिलाकर सेवन करनेसे धातुक्षीणता, बलह्रास, पथरी, रक्तपित्त और भ्रम का नाश होता है ।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक । घी १ तोला ।)

(२९९३) **द्राक्षादियोगः**

(र. र.; बं. से. । बाल.)

द्राक्षापिप्पलिशुण्ठीनां चूर्णं क्षौद्रेण सर्पिषा ।
लीढं निवारयत्याशु कासं पञ्चविधं शिशोः ॥

दाख (मुनक्का) पीपल, और सोंठ के चूर्णको शहद और घीमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी खांसी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(मात्रा—आधेसे १ मासे तक ।)

(२९९४) **द्राक्षाद्यं चूर्णम्**

(ग. नि. । चूर्णा.)

द्राक्षा हरिद्रा मञ्जिष्ठा त्रिफला देवदारु च ।
नागरं पञ्चमूले द्वे मुस्ता मधुरसा तथा ॥

सप्तपर्णो ह्यपामार्गं पिचुमन्दाटरूषकौ ।
विडङ्गं चित्रको दन्ती पिप्पल्यो मरिचानि च ॥
एतेषां समभागानां कुष्ठी चूर्णपलं पिबेत् ।
मासं गोमूत्रसंयुक्तं तथा कुष्ठात्प्रमुच्यते ॥

दाख (मुनक्का), हल्दी,मजीठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, सोंठ, दशमूलकी हरेक चीज़, मोथा, मूर्वा, सतौना (सतिवन) की छाल, चिरचिटा, नीमकी छाल, बासा, बायबिड़ंग, चीता, दन्ती, पीपल, और काली मिर्च । सब समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे ५ तोलेकी मात्रानुसार गोमूत्रके साथ १ मास तक सेवन कराने से कुष्ठरोग नष्ट हो जाता है ।

(व्यवहारिक मात्रा ६ माशे ।)

(२९९५) द्राक्षाषाडवः

(ग. नि. । अरोचका.)

अजाज्यौ मरिचं द्राक्षा तिन्तडीकं सदाडिमम् ।
सौवर्चलं कारवी च गुडमाक्षिकसंयुतः ॥
द्राक्षाषाडव इत्येष ख्यातो मुखविशोधनः ।
अरोचकानां सर्वेषां प्रशस्तः षाडवोत्तमः ॥
आरनालं च शुक्तं च मृद्वीकमदिरासवौ ।
अनुपानान्तरे धार्यास्तथैव कवलग्रहाः ॥

सफेद ज़ीरा, काला ज़ीरा, काली मिर्च, मुनक्का (दाख), तिन्तड़ीक, अनारदाना, सञ्चल (काला नमक), कलौंजी और गुड़ । समान भाग लेकर चूर्ण बनावें, और उसे शहदमें मिलाकर रक्खें ।

इसे आरनाल, शुक्त या मुनक्का से बनी हुई मदिरा या द्राक्षासवके साथ पीनेसे हर प्रकारकी अरुचि नष्ट होती और मुख शुद्ध होता है ।

अरुचिमें आरनाल, शुक्त, मुनक्का से बनी हुई सुरा या द्राक्षासवके कुल्ले भी करने चाहियें ।

(नोट—दोनों ज़ीरे भूनकर डालने चाहियें । मात्रा ३—४ माशे.)

(२९९६) द्विक्षारचूर्णम्

(वै. जी. । वि. २)

द्विक्षारषट्कटुपटुव्रजहिङ्गुदीप्यैः
स्यात्सारलुङ्गबदरैकरसेन युक्तम् ।
श्लेष्मानिलग्रहणिकागुदजे प्रशस्तं
लोकत्रयैकमतिदीपनपाचनेऽलम् ॥

सज्जीखार, यवक्षार, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, काली मिर्च, पांचों नमक, हींग, अजवायन और अमलबेत बराबर बराबर लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे बिजौरे नीबू या खट्टे बेर के रसमें घोटें ।

यह चूर्ण कफ—वातज ग्रहणी—विकार और बवासीरको नष्ट करता है तथा अत्यन्त अग्निदीपक और पाचक है ।

(मात्रा १—२ माशा । अनुपान उष्णजल ।)

(२९९७) द्विक्षारादिचूर्णम् (१)

(ग. नि. । हिक्काश्वास.)

द्वौ क्षारौ हरीतक्यौ भल्लातकफलानि च ।
घृतमृष्टमिदं सर्वं हिक्काश्वासनिवारणम् ॥

सज्जीखार, यवक्षार, हर्र और शुद्ध भिलावा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसमें थोड़ासा घी डालकर अच्छी तरह मलें । (घी इतना डालना चाहिये कि जिससे चूर्ण चिकना हो जाय ।)

यह चूर्ण हर प्रकारकी हिचकी और श्वासको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ से ३ माशे तक । शहदमें मिलाकर चटावें ।)

नोट—मिलावे वाला प्रयोग सावधानी पूर्वक सेवन कराना चाहिये ।

(२९९८) **द्विक्षारादिचूर्णम्** (२)

(बृ. नि. र. । कास.; यो. र. । कास.)

द्वौ क्षारौ पञ्चमूलानि पञ्चैव लवणानि च ।
सठीनागरकोदीच्यकल्कं वा वस्त्रगालितम् ॥
पाययेच्च घृतोन्मिश्रं सर्वकासनिबर्हणम् ॥

सज्जीखार, यवक्षार, बेलकी छाल, अरलुकी छाल, खम्भारीकी छाल, पाढलकी छाल, अरणीकी छाल, पांचों नमक, कचूर, सोंठ, और सुगन्धबाला समान भाग लेकर कपड़ छन चूर्ण बनावें ।

इसे घीके साथ पिलानेसे हर प्रकारकी खांसी नष्ट होती है ।

(मात्रा—१ से ३ माशे तक ।)

(२९९९) **द्विरुत्तरचूर्णम्**[1]

(यो. र. । उदावर्त.; वृ. यो त. । त. ९६)

हिङ्गुकुष्ठवचास्वर्जिविडं चेति द्विरुत्तरम् ।
पीतं मद्येन तच्चूर्णमुदावर्तहरं परम् ॥

हींग १ तोला, कूठ २ तोले, बच ४ तोले, सज्जीखार ८ तोले, और बायविडंग १६ तोले लेकर चूर्ण बनावें । इसे मद्यके साथ पीने से उदावर्तका नाश होता है । (मात्रा—३ माशे)

इति दकारादिचूर्णप्रकरणम् ।

अथ दकारादिगुटिकाप्रकरणम्

दन्तीमोदकः

(सु. सं. । सू. अ. ४४)

भारत भै. र. भाग २ के पृष्ठ ३५ पर प्रयोग सं. १३१२ देखिये ।

(३०००) **दन्त्यादिगुटिका**

(यो. र. । गुल्म.)

दन्तीहिङ्गुयवक्षाराकाबुबीजकणागुडाः ।
स्नुहीक्षीरेण गुटिका सर्वेषां कर्षमात्रिका ॥
भक्षिता रक्तगुल्मघ्नी रुधिरस्रावकारिणी ॥

दन्तीमूल, हींग, यवक्षार, कड़वी तुम्बी के बीज, पीपल और गुड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें; फिर उसे सेहुंड (सेंड) के दूधमें घोटकर १—१ कर्ष (१।—१। तोले) की गोलियां बना लें ।

इनके सेवन से रक्तगुल्म नष्ट होता और रुका हुवा मासिक धर्म खुलकर होने लगता है

(व्यवहारिक मात्रा १—१॥ माशा ।)

(३००१) **दशसारवटी**

(रसें. सा. सं. । वा. व्या; र. रा. सु.;) धन्वं. । वा. व्या.)

यष्टिधात्री बला द्राक्षा एला चन्दनबालुकम् ।
मधूकपुष्पं खर्जूरं दाडिमं पेषयेत्समम् ॥

---

१ यही योग बंगसेनमें गुल्माधिकारमें लिखा है । उसका पाठ भिन्न है योग यही है ।

सर्वतुल्या सिता योज्या पलार्द्धं भक्षयेत्सदा ।
" दशसारवटी " ख्याता सर्ववातविकारनुत् ॥

मुलैठी, आमला, खरैटी, दाख (मुनक्का), इलायची, सफेद चन्दन, एलवालुक, महुवेके फूल, खजूर और अनार दाना । सब चीजोंका चूर्ण समान भाग तथा खांड सबके बराबर लेकर एकत्र मिलाकर घोटें और (आवश्यकता हो तो) थोड़ा सा पानी डालकर आधे आधे पल (२॥–२॥ तोले) की गोलियां बना लें ।

यह 'दशसारवटी' समस्त वातज रोगोंका नाश करती है । (व्यवहारिक मात्रा–३ से ६ माशे तक ।)

(३००२) दाडिमादिगुटिका

(वा. भ. । चि. अ. ३)

द्वे पले दाडिमादष्टौ गुडाद्व्योषात्पलत्रयम् ।
रोचनं दीपनं स्वर्यं पीनसश्वासकासजित् ॥

अनार दाना १० तोले, गुड़ ४० तोले तथा सोंठ, मिर्च और पीपल ५–५ तोले लेकर सबका चूर्ण करके, एकत्र मिलाकर गोलियां बनावें।

यह गोलियां रोचक, दीपन, स्वरको सुधारने वाली, और पीनस खांसी तथा श्वास नाशक हैं ।

(३००३) दाडिमीवटी (१)

(वृ. नि. र.; वै. र. । अति.)

विश्वा च शतपुष्पा च यष्ट्याह्व चाहिफेनकम् ।
खर्जूरस्य फलं बिल्वं तथा मोचरसं स्मृतम् ॥
समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
अपक्वदाडिमीबीजं सर्वतुल्यं प्रदापयेत् ॥
अपक्वदाडिमीबीजकोशे क्षिप्त्वाखिलं हि तत् ।
पुटपाकविधानेन पक्त्वा कोशसमन्वितम् ॥
पिष्ट्वा कल्कं विधायाथ गुटिकाः संप्रकल्पयेत्
कर्कन्धुवत्प्रमाणेन तक्रेण सह दापयेत् ॥
पक्वातीसारशमनी " दाडिमीवटिका " स्मृता ॥

सोंठ, सोया (या सौंफ), मुलैठी, अफीम, खजूरके फल, बेलगिरी और मोचरस, १–१ भाग तथा कच्चे अनारके बीज सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें फिर कच्चे अनारको भीतरसे खाली करके उसके भीतर यह सब चूर्ण भरदें । उसपर चिकनी मिट्टीका आधा अंगुल मोटा लेप करके कण्डोंकी मन्दाग्निमें दबा दें । जब मिट्टीका रंग लाल हो जाय तो अनारको बाहर निकाल कर उसके ऊपरकी मिट्टी छुड़ा दें और उसे (अनार समेत ही) पानी के साथ पीसकर बेरके बराबर गोलियां बनावें ।

इन्हें तक्रके साथ खिलाने से पक्वातिसार नष्ट होता है ।

(३००४) दाडिमीवटी (२)

(वृ. नि. र.; वै. र. । अति.)

शुण्ठी जातीफलं चाहिफेनकं द्विगुणं भवेत् ।
अपक्व दाडिमीबीजं सर्वतुल्यं प्रदापयेत् ॥
अपक्वदाडिमीबीजकोशे क्षिप्त्वा मृदा लिपेत् ।
पुटपाकविधानेन पक्त्वा कोशसमन्वितम् ॥
पिष्ट्वा कल्कं विधायाथ गुटिकाः सम्प्रकल्पयेत् ।
बादरास्थिप्रमाणेन तक्रेण सह दापयेत् ॥
पक्वातिसारशमनी दाडिमीवटिका मता ॥

सोंठ १ भाग, जायफल १ भाग और अफीम ४ भाग तथा कच्चे अनारके बीज ६ भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे कच्चे अनारको भीतरसे खाली करके उसके भीतर भर दें और उसके

ऊपर चिकनी मिट्टीका आध अंगुल मोटा लेप करके कण्डोंकी मन्दाग्नि में दबा दें । जब मिट्टीका रंग लाल हो जाय तो ठण्डा करके अनार समेत पीसलें और बेरकी गुठली के बराबर गोलियां बनावें ।

इन्हें तक्रके साथ देनेसे पक्वातिसार नष्ट होता है ।

(३००५) **दुर्नामकुठाररसः**

(मोदक)

(वै. रह. । अर्श.)

मरिचं पिप्पली कुष्ठं सैन्धवं जीरनागरम् ।
वचाहिङ्गुविडङ्गानि पथ्या वह्न्यजमोदकम् ॥
एतेषां कारयेच्चूर्णं चूर्णस्य द्विगुणं गुडम् ।
खादेत्कर्षमितं चापि पिबेदुष्णजलं ततः ॥
सर्वाण्यर्शांसि नश्यन्ति वातजानि विशेषतः॥

काली मिर्च, पीपल, कूठ, सेंधानमक, जीरा, सोंठ, बच, हींग, बायबिडंग, हर्र, चीता, और अजमोदका चूर्ण १-१ भाग और गुड़ इन सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर १-१ कर्षके मोदक बनावें ।

इन्हें गर्म जलके साथ सेवन करने से समस्त प्रकारकी बवासीर और विशेषतः वातज अर्थात् बादीकी बवासीर नष्ट होती है ।

(३००६) **द्रवन्तीनागवटी**

(यो. र. । गुल्म; वृ. यो. त. । त. १०५)

तिलैरण्डद्रवन्तीनां क्षारो भल्लातकं कणा ।
एषां भागं समं कृत्वा तत्तुल्यं तु गुडं मतम् ॥
खादेदग्निबलं ज्ञात्वा पावकस्य विवृद्धये ।
जयेत्प्लीहानमत्युग्रं यकृद्गुल्मं तथैव च ॥

तिलका क्षार, अरण्डका क्षार, द्रवन्ती (महादन्ती) का क्षार, शुद्ध भिलावा और पीपल का चूर्ण १-१ भाग तथा गुड़ इन सबके बराबर लेकर एकत्र मिलाकर गोलियां बनावें ।

इन्हें अग्निबलोचित मात्रानुसार सेवन करने से अग्निकी वृद्धि होती और तिल्ली, यकृत् तथा गुल्मका नाश होता है ।

(मात्रा-३ माशे । अनुपान शीतल जल । जिन्हें भिलावा अनुकूल न आता हो उन्हें यह गोलियां सेवन न करनी चाहिएं ।)

(३००७) **द्राक्षादिगुटिका** (१)

(यो. र; वं. से. । विसर्प; वृ. यो. त. । त. १२२; यो. चिं. । अ. ७; यो. त. । त. ६४)

द्राक्षापथ्ये समे कृत्वा तयोस्तुल्यां सितां क्षिपेत् ।
सङ्कुट्याक्षद्वयमितां तत्पिण्डीं कारयेद्भिषक् ॥
तां खादेदम्लपित्तार्तो हृत्कण्ठदहनापहाम् ।
तृण्मूर्च्छाभ्रममन्दाग्निनाशिनीमामवातहाम् ॥

दाख और हर्रका चूर्ण १-१ भाग तथा खांड २ भाग लेकर एकत्र कूटकर २॥-२॥ तोलेकी गोलियां बनावें ।

इन्हें सेवन करने से अम्लपित्त, कण्ठ और हृदयकी दाह, तृष्णा, मूर्च्छा, भ्रम, मन्दाग्नि और आमवातका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा-१ तोला । अनुपान शीतल जल ।)

(३००८) **द्राक्षादिगुटिका** (२)

(वृ. नि. र. । ग्रह.)

द्राक्षा क्षीरेण संपाच्य यावद्दार्व्युपलेपनम् ।
पश्चाद्दद्याद्भिषक् प्राज्ञो औषधानि पृथक् पृथक्॥

पर्पटातिविषा मूर्वा पटोलं घनवालकम् ।
तथाभयानां चूर्णं तु समशर्करया युतम् ॥
तेन क्षीरेण संयोज्य विदार्याःकन्दमेव च ।
घनेन नवनीतेन पिण्डं कृत्वा तु भक्षयेत् ॥
ग्रहणीं पित्तजां पाण्डुं कामलार्तितृषापहम् ।
भ्रमं मूर्च्छां तथा हिक्कां तथोन्मादमपस्मृतिम् ॥
मरुत्पित्तं च कुष्ठं च नाशयत्याशु निश्चितम् ॥

२० तोले मुनक्काको ८० तोले दूधमें पकावें जब पकते पकते करछी से लगने लगे तो उसमें पित्तपापड़ा, अतीस, मूर्वा, पटोलपत्र, नागरमाथा, सुगन्धबाला, हर्र एवं विदारीकन्दका चूर्ण समान भाग मिश्रित ५ तोले तथा खांड ५ तोले मिलावें और फिर थोडा सा नवनीत (मक्खन) डालकर गोलियां बनालें ।

यह गोलियां पित्तज ग्रहणी, पाण्डु, कामला, तृषा, भ्रम, मूर्च्छा, हिचकी, उन्माद, अपस्मार, बातपित्तज रोग, और कुष्ठका अवश्य नाश करती हैं ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक । अनुपान—शीतल जल ।)

इति दकारादिगुटिकाप्रकरणम् ।

अथ दकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्.

(३००९) **दन्तीगुग्गुलुः**

(वं. से. । गुल्म.)

गुग्गुलुं त्रिवृतां दन्तीं द्रवन्तीं सैन्धवं वचाम् ।
मूत्रमद्यपयोद्राक्षारसैर्वीक्ष्य यथाबलम् ॥

शुद्ध गूगल, निसोत, दन्ती, द्रवन्ती (वृहद्दन्ती), सेंधा और बचका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर उसमें जरासा घी डालकर कूटें ।

इसे दोष बलानुसार गोमूत्र, मद्य, दूध या द्राक्षा (अंगूर) के रसके साथ सेवन कराने से गुल्म रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ से ३ माशे तक)

(३०१०) **दशाङ्गगुग्गुलुः**

(ग. नि. । व्रणा.)

अमृतापटोलमूलत्रिफलात्रिकटुकक्रिमिघ्नानाम् ।
सर्वसमो गुग्गुलुकः प्रतिवासरमेकपरिमाणम् ॥
जेतुं व्रणवातासृग्गुल्मोदरश्वयथुपाण्डुरोगांश्च ॥

गिलोय, पटोलकी जड़, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, और बायबिडंगका चूर्ण समान भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर उसमें ज़रासा घी डालकर कूटें ।

यह गुग्गुलु व्रण, वातरक्त, गुल्म, उदररोग, सूजन और पाण्डुको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ से ३ माशे ।)

(३०११) **दशाङ्गगुग्गुलुः**

(भा. प्र. । ख. २ मेदो.; वं. से. । मेदो.)

व्योषाग्नित्रिफलामुस्ताविडङ्गैर्गुग्गुलुं समम् ।
खादन्सर्वाञ्जयेद्व्याधीन्मेदःश्लेष्मामवातजान् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, और बायविडंग का चूर्ण समान भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर और उसमें जरासा घी डालकर कूटें।

यह गुग्गुलु मेदरोग, कफज व्याधि और आमवात (गठिया) को नष्ट करता है।

(३०१२) **द्वात्रिंशको गुग्गुलुः**

(वृ. यो. त. । त. ९०; वृ. नि. र.; यो. र. । वातव्या.; ग. नि. । गुटिका.; यो. त. । त. ४०)

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकौ ।
वचैला पिप्पलीमूलं हपुषा सुरदारु च ॥
तुम्बुरु पौष्करं कुष्ठं विषा च रजनीद्वयम् ।
वाष्पिका जीरकं शुण्ठी पत्रं च सदुरालभम् ॥
सौवर्चलं विडं चैव क्षारौ द्विरदपिप्पली ।
सैन्धवं च समानेतान्कृत्वा तुल्यं च तैः पुरम् ॥
साधयित्वा विधानेन कोलमात्रां वटीं चरेत् ।
घृतेन मधुना वापि भक्षयेत्तामहर्मुखे ॥
आमं हन्यादुदावर्त्तन्त्रवृद्धिं कृमीन्रुजः ।
महाज्वरोपसृष्टानां भूतोपहतचेतसाम् ॥
आनाहोन्मादकुष्ठानि पार्श्वशूलहृदामयान् ।
गृध्रसीं च हनुस्तम्भं पक्षाघातापतानकान् ॥
शोफं प्लीहानमत्युग्रकामलामपचीमपि ।
नाम्ना द्वात्रिंशको ह्येष गुग्गुलुः कथितो महान् ॥
धन्वन्तरिकृतो योगः सर्वरोगनिषूदनः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, मोथा, बायविडंग, चव्य, चीता, बच, इलायची, पीपलामूल, हाऊबेर, देवदारु, तुम्बरु, पोखरमूल, कूठ, अतीस, हल्दी, दारुहल्दी, कालाजीरा, सफेद जीरा, सोंठ, तेजपात, धमासा, सञ्चल (काला नमक) विडनोन, यवक्षार, सज्जीखार, गजपीपल और सेंधानमकका चूर्ण १-१ भाग तथा सबके बराबर शुद्ध गूगल लेकर सबको एकत्र मिलाकर थोडासा घी डालकर अच्छी तरह कूटकर १-१ कोल (लगभग ३ माशे) की गोलियां बनालें। इनमेंसे १-१ गोली नित्य प्रति प्रातः काल घी या शहद में मिलाकर खानेसे आम, उदावर्त, अन्त्रवृद्धि, कृमिरोग, भयङ्कर ज्वर, भूतकृत चित्त-विकृति (भूतोन्माद), आनाह, उन्माद, कुष्ठ, पसलीका शूल, हृद्रोग, गृध्रसी, हनुस्तम्भ, पक्षाघात, अपतानक, शोथ, दुस्साध्य तिल्ली, कामला और अपची (कण्ठमाला भेद) आदि अनेकों रोग नष्ट होते हैं।

इसके आविष्कारक महाराज धन्वन्तरि थे।

इति दकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्।

अथ दकाराद्यवलेहप्रकरणम्.

(३०१३) **दधित्थरसादिलेहः**

(वृं. नि. र. । छर्दि.)

दधित्थरससंयुक्तं पिप्पली माक्षिकं तथा ।
मुहुर्मुहुर्नरो लिह्याच्छर्दिभ्यः प्रतिमुच्यते ॥

कैथके रसमें पीपलका चूर्ण और शहद मिलाकर बार बार चाटनेसे छर्दि (वमन) नष्ट हो जाती है।

(पीपल ३ माशे, कैथका रस १ तोला, शहद १ तोला। यह एक दिनकी मात्रा है।)

(३०१४) **दन्तीहरीतक्यावलेहः**

(वं. से.; भै. र; वृं. मा.; धन्वं.; र. र.; च.द. । गुल्म.; ग. नि. । लेहा.; वा. भ. । चि. अ. १४)

जलद्रोणे विपक्तव्या विंशतिः पञ्चचाभयाः ।
दन्त्याः पलानि तावन्ति चित्रकस्य तथैव च ॥

अष्टभागावशेषन्तं रसं पूतमधिश्रयेत् ।
दन्तीसमं गुडं पूतं दद्यात्तत्राभयाश्च ताः ॥
तैलार्धकुडवं चैव त्रिवृतायाश्चतुष्पलम् ।
चूर्णितं चार्धपलिकं पिप्पलीविश्वभेषजम् ॥
तत्साध्यं लेहवच्छीते तस्मिंस्तैलसमं मधु ।
क्षिपेच्चूर्णं पलश्चैकं त्वगेलापत्रकेसरात् ॥
ततो लेहपलं लीढ्वा जग्ध्वा चैकां हरीतकीम् ।
सुखं विरिच्यते स्निग्धो दोषप्रस्थमनामयः ॥
गुल्मं श्वयथुमर्शांसि पाण्डुरोगमरोचकम् ।
हृद्रोगग्रहणीदोषान्कामलां विषमज्वरान् ॥
गुल्मंप्लीहानमानाहमेतान्हन्त्युपसेविता ॥

एक द्रोण (३२ सेर) पानीमें २५ पल दन्ती और २५ पल चीता डालकर पकावें साथ ही उसमें अच्छी बड़ी बड़ी २५ हरें भी कपड़े में बांधकर डालदें । जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो उन हरोंको निकाल कर अलग रख दें और काथको छानलें । इसके पश्चात् २ पल* तिलके तेलमें ४ पल निसोत और आधा आधा पल पीपल तथा सोंठका चूर्ण तथा वे हरें भून लें और उपरोक्त काथमें यह चूर्ण, २५ पल गुड़ और हरें डाल कर पकावें । जब अवलेह तैयार हो जाय और करछीको लगने लगे तो उतारकर ठण्डा करें और फिर उसमें २ पल शहद तथा दालचीनी, तेजपात, इलायची और नाग केसरका समानभाग मिश्रित १ पल (५ तोले) चूर्ण मिला दें ।

इसमें से १ पल (५ तोले) अवलेह और १ हरें खानेसे कोठा स्निग्ध होकर अच्छी तरह विरेचन हो जाता है ।

यह अवलेह गुल्म, सूजन, बवासीर, पाण्डु, अरुचि, हृद्रोग, ग्रहणी, कामला, विषमज्वर, तिल्ली और अफारा आदि रोगोंको नष्ट करता है ।

(व्यवहारिक मात्रा १ से २ तोले तक ।)

(३०१५) **दशमूलगुडः** (१)

(भै. र. । ग्रहणी.)

दशमूलीपलशतं जलद्रोणे विपाचयेत् ।
तेन पादावशेषेण पचेद्गुडतुलां भिषक् ॥
आर्द्रकस्वरसप्रस्थं दत्त्वा मृद्वग्निना ततः ।
लेहीभूते प्रदातव्यं चूर्णमेषां पलं पलम् ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम् ।
हिङ्गुभल्लातकश्चैव विडङ्गमजमोदकम् ॥
द्वौ क्षारौ चित्रकं चव्यं पञ्चैव लवणानि च ।
दत्त्वा सुमथितं कृत्वा स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥
कोलमात्रं ततः खादेत्प्रातः प्रातर्विचक्षणः ।
हन्ति मन्दानलं शोथमामजां ग्रहणीमपि ॥
आमं सर्वभवं शूलं प्लीहानमुदरं तथा ।
मन्दानलभवं रोगं विष्टम्भं गुदजानि च ॥
ज्वरं चिरन्तनं हन्ति तमिस्रं भानुमानिव ॥

१०० पल (६। सेर) दशमूलको १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें १ तुला (६। सेर) गुड़ और १ प्रस्थ (२ सेर) अद्रकका रस मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब गाढ़ा हो जाय और करछीको लगने लगे तो उसमें १-१ पल (५-५ तोले) पीपल, पीपलामूल, काली मिरच, सोंठ, हींग,

* ४ पल पाठ भी मिलता है ।

शुद्ध भिलावा, बायबिड़ंग, अजमोद, यवक्षार, सज्जीखार, चीता, चव और पांचों नमक; इनका चूर्ण डालकर अच्छी तरह मिला दें और स्निग्ध पात्रमें भरकर रख दें ।

इसमेंसे नित्य प्रातःकाल १ कोल (लगभग ३ माशे) खानेसे मन्दाग्नि, सूजन, साम ग्रहणी, आम, सर्वदोषज शूल, तिल्ली, उदर व्याधि, कुब्ज, बवासीर, मन्दाग्निसे होने वाले रोग और पुराने ज्वरका नाश होता है ।

(३०१६) **दशमूलगुडः** (२)

(वा. भ. । चि. अ. ८)

एकैकशो दशपलं दशमूलकुम्भ
पाठाद्वयार्कघुणवल्लभकट्फलानाम् ।
दग्धे मृतेऽनु कलशेन जलेन पक्वे
पादस्थिते गुडतुलां पलपञ्चकञ्च ॥
दद्यात्प्रत्येकं व्योषचव्याभयानां
वह्नेर्मुष्टी द्वे यवक्षारतश्च ।
दर्वीमालिम्पन्हन्ति लीढो गुडोऽयं
गुल्मप्लीहार्शःकुष्ठमेहाग्निसादान ॥

दशमूल, निसोत, पाठा, दोनों प्रकारका आक, अतीस और कायफल १०-१० पल (५०-५० तोले) लेकर जलाकर राख करलें और उसे ३२ सेर पानीमें पकावें जब ८ सेर पानी बाकी रह जाय तो छानकर (रंगरेजोंकी रैनीकी तरह एक कपड़ेके चारों कोने किसी घड़ौंचीके चारों पायों में बांधकर उस कपड़े में वह पानी भरकर ७ बार टपका लें) उसमें १ तुला (६ । सेर) गुड़ मिलाकर पुनः पकावें । जब पकते पकते करछीको लगने लगे तो उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, चव्य और हर्रेका चूर्ण २५-२५ तोले तथा चीते का चूर्ण और यवक्षार १०-१० तोले मिला दें ।

यह गुड़ गुल्म, तिल्ली, बवासीर, कुष्ठ, प्रमेह और अग्निमांद्यको नष्ट करता है ।

(मात्रा १ तोला । अनुपान उष्ण जल ।)

(३०१७) **दशमूलगुडः** (३)

(भै. र. । अर्शो.)

दशमूलाग्निदन्तीनां प्रत्येकं पलपञ्चकम् ।
जलद्रोणेन संक्वाथ्य पादशेषं समुद्धरेत् ॥
गुडं पलशतञ्चैव सिद्धेशीते विमिश्रयेत् ।
त्रिवृताया रजःप्रस्थं तदर्धं पिप्पलीरजः ॥
घृतभाण्डे स्थितं खादेत् तोलार्द्धकं दिने दिने ।
दशमूलगुडः ख्यातः शमयेदर्शआमयम् ॥
अजीर्णं पाण्डुरोगञ्च सर्वरोगहरं परम् ॥

दशमूल, चीता और दन्ती । प्रत्येक ५-५ पल (२५-२५ तोले) लेकर ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी बाकी रह जाय तो छानकर उसमें १०० पल(६। सेर) गुड़ मिलाकर पुनः पकावें। जब पकते पकते करछीको लगने लगे तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर ठण्डा करें और उसमें १ प्रस्थ (१ सेर-८० तोले) निसोत और आधा प्रस्थ पीपल का चूर्ण मिला कर चिकने पात्रमें सुरक्षित रक्खें।

यह " दशमूल गुड़ " बवासीर, अजीर्ण और पाण्डु रोग को नष्ट करता है। मात्रा-आधा तोला।

(३०१८) **दशमूलहरीतकी** (१)

(वा. भ. । चि. अ. ३)

दशमूलं स्वयंगुप्तां शंखपुष्पीं शटीं बलाम् ।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकान् ॥
भार्गी पुष्करमूलं च द्विपलांशान्यवाढकम् ।

हरीतकीशतं चैकं जले पञ्चाढके पचेत् ॥
यवस्विन्ने कषायं तं पूतं तच्चाभयाशतम्।
पचेद् गुडतुलां दत्त्वा कुडवं च पृथग्घृतात् ॥
तैलात्सपिप्पलीचूर्णात्सिद्धशीते च माक्षिकात्।
लेहं द्वे चाभये नित्यमतः खादेद्रसायनात् ॥
तद्वलीपलितं हन्याद्वर्णायुर्बलवर्द्धनम्।
पञ्चकासान् क्षयं श्वासं सहिध्मं विषमज्वरम् ॥
मेहगुल्मग्रहण्यर्शोहृद्रोगारुचिपीनसान्।
अगस्तिविहितं धन्यमिदं श्रेष्ठं रसायनम् ॥

दशमूल, कौंचके बीज (छिले हुवे), शंख-पुष्पी, कचूर, खरैटी, गजपीपल, चिरचिटा, पीपलामूल, चीता, भारंगी और पोखर मूल २–२ पल (१०–१० तोले), जौ ४ सेर, और हर्र १०० लेकर सबको ४० सेर पानीमें पकावें। जब जौ उसीज जायं तो हर्रों को अलग निकालकर रखदें और काथको छान लें फिर उसमें १ तुला (६। सेर) गुड़ और आधा आधा सेर घी तथा तेल एवं उपरोक्त हर्रें मिलाकर पुनः पकावें जब अवलेह तैयार हो जाय अर्थात् करछीको लगने लगे तो उसमें २० तोले पीपलका चूर्ण मिलाकर अग्निसे नीचे उतारलें और ठण्डा होने पर ४० तोले शहद मिला दें।

नित्य प्रति २ हर्र और यह अवलेह खानेसे, बली (शरीरकी झुर्री), पलित (बाल पकना), पांच प्रकारकी खांसी, क्षय, स्वास, हिचकी, विषम-ज्वर प्रमेह, गुल्म, ग्रहणी विकार, बवासीर, हृद्रोग, अरुचि और पीनस, आदि रोग नष्ट होते एवं आयु, बल तथा सौन्दर्य की वृद्धि होती है। इस का आविष्कार अगस्त्य मुनि ने किया था।

(अवलेहकी मात्रा–१ तोला। अनुपान दूध।)

(३०१९) **दशमूल हरीतकी** (२)

(वा. भ.। चि. अ. १७; वृं. मा.; यो. र.; वं. से.; च. द.; बृ. नि. र.। शोथ; बृ. यो. त। त. १०६

दशमूलकषायस्य कंसे पथ्याशतं गुडात्।
तुलां पचेद् घने तत्र व्योषक्षारचतुष्पलम् ॥
त्रिजातन्तु सुवर्णांशं प्रस्थार्धं मधुनो हिमे।
दशमूलहरीतक्यः शोफान् घ्नन्ति सुदुस्तरान् ॥

दशमूलके ८ सेर काथमें १०० हर्र और १ तुला (६। सेर) गुड़ मिलाकर पकावें। जब अवलेह लगभग तैयार हो जाय तो उसमें सोंठ, काली-मिर्च, पीपल और यवक्षार का चूर्ण २०–२० तोले और दालचीनी, इलायची तथा तेजपातका चूर्ण १। तोला मिलादें और जब वह ठण्डा हो जाय तो १ सेर (८० तोले) शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

यह दशमूल हरीतकी भयङ्कर शोथको भी नष्ट कर देती है।

(३०२०) **दाडिमावलेहः**

(बृ. नि. र.; यो. र.। अति.)

दाडिमस्य फलप्रस्थं चतुः प्रस्थे जले पचेत्।
चतुर्भागकषायेऽस्मिन् शर्कराप्रस्थमेव च ॥
नागरं पिप्पलीमूलं कणाधान्यकदीप्यकम्।
जातीफलं जातिपत्रं मरिचं जीरकं तुगा ॥
विजयानिम्बपत्रञ्च समङ्गा कूटशाल्मली।
अरलुर्अतिविषा पाठा लवङ्गं च पृथक्पलम् ॥
घृतस्य मधुनः प्रस्थं सर्वलेहं विपाचयेत्।
दाडिम्बलेहकं नाम ज्वरातिसारनाशनम् ॥
आमरक्तं चामशूलं मांद्यशोफक्षयापहम्।
धातुक्षीणं धातुगतमश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥

अनारके १ प्रस्थ (८० तोले) फलोंको ४ प्रस्थ (८ सेर) पानीमें पकावें । जब १ प्रस्थ (२ सेर) पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें १ प्रस्थ (१ सेर) खांड और १ प्रस्थ (२ सेर) घी मिलाकर पकावें । जब करछीको लगने लगे तो उसमें १-१ पल (५-५ तोले) सोंठ, पीपलामूल, पीपल, धनिया, अजवायन, जायफल, जावित्री, काली मिर्च, जीरा, बंसलोचन, भांग, नीमके पत्ते, मजीठ, कूठ, मोचरस (या सेंभलकी छाल), अरलुकी छाल, अतीस, पाठा, और लैांगका चूर्ण मिलाएं। और ठण्डा होनेपर १ प्रस्थ (२ सेर) शहद मिलाकर काच या चीनी आदिके पात्रमें भर कर रखदें ।

यह लेह ज्वरातिसार, आमरक्त, आमशूल, अग्निमांद्य, शोथ, क्षय, और धातुगत ज्वरोंका नाश करता है ।

प्राचीन समयमें अश्विनि कुमारोंने इसकी योजनाकी थी । (मात्रा १ तोला ।)

(३०२१) **दार्वीत्वकाद्यवलेहः**

(च. सं. । चि. अ. २२)

दार्वीत्वक् त्रिफला व्योषं विडङ्गमयसो रजः ।
मधुसर्पिर्युतं लिह्याद् गुडक्षौद्रे च वाभयाम् ॥
त्रिफला द्वे हरिद्रे च कटुरोहिण्ययोरजः ।
चूर्णितं क्षौद्रसर्पिर्भ्यां सलेहः कामलापहः ॥

दारु हल्दीकी छाल, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिडंग और लोहचूर्ण (लोहभस्म लेना उत्तम है) समान भाग लेकर घी और शहदमें मिलाकर चटावें । या हर्रके चूर्णको गुड़ और शहदमें मिलाकर चटावें या हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, दारुहल्दी, कुटकी और लोह भस्म के चूर्णको शहद और घीके साथ मिलाकर चटावें । यह सब प्रयोग कामला को नष्ट करते हैं ।

(३०२२) **दार्व्यवलेहः**

(ग. नि. । लेहा.)

दार्व्यास्तु मूलार्धतुलां जलस्य
द्रोणे मृतां पूतचतुर्थशेषाम् ।
भूनिम्बदार्वी खदिरारिमेदै
पुनर्विपक्वं पलिकैश्चतुर्भिः ॥
पूतं ततो गैरिकचूर्णपादं
मन्दानले तच्च पुनर्विपक्वम् ।
सञ्जीय शीतं मधुशर्कराभ्यां
सदा प्रयोज्यं घृतभाजनस्थम् ॥
नाना प्रकारेषु मुखामयेषु
मुदारुणेषूग्ररुजेषु चैव ।
प्रशीर्णजीर्णेष्वबलद्विजेषु
कृच्छ्रेषु दुष्टेषु व्रणेषु चैव ॥
कल्पोऽयमिष्टो मधुकस्य चैव
प्रपौण्डरीकस्य वृषस्य चैव ।
जातीरिमेदत्रिफलासमङ्गा
रोध्रस्य जम्बोः खदिरस्य चैव ॥

दारु हल्दीकी जड़की छाल आधी तुला (२ सेर १० तोले) लेकर, कूटकर १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान कर उसमें २०-२० तोले चिरायता, दारु हल्दी, खैरकी छाल, और, अरिमेद (दुर्गन्धित खैर)की छालका अधकुटा चूर्ण मिलाकर पुनः पकावें। जब २ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें

आधा सेर गेरु मिट्टी का चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकाकर गाढ़ा करें और उसमें २ सेर खांड मिला दें। जब ठण्डा हो जाय तो थोड़ा सा शहद मिलाकर चिकने बरतनमें भरकर रखदें।

इसे अनेक प्रकारके दारुण मुख रोगोंमें, दांतों की निर्बलता और उनके नष्ट होने में तथा दांतोंके दुष्ट व्रणों (पाइरिया) में प्रयुक्त करना चाहिये।

इसी प्रकार मुलैठी, पुण्डरिया, बासा, चमेली, अरिमेद, त्रिफला मजीठ, लोध, जामन और खैरका अवलेह बनाकर भी प्रयुक्त करना चाहिए।

(३०२३) दासलोहरसायनम्

(र. का. धे. । अधि. १४)

मूर्छितपुटितं शुद्धमयसः पलपञ्चकम् ।
शतावरीरसैः सम्यक्पुटितं पञ्चधा पुनः ॥
अष्टौ पलानि गृह्णीयात् त्रिफलायाः पृथक् पृथक् ।
सलिलात् द्वयार्मणे पक्त्वा चूर्णात्कर्षद्वयं पृथक् ॥
त्रिकटु त्रिफला वह्नि विडङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
पलाशस्य च बीजानि पक्त्वा कुर्याद्रसायनम् ॥
नागार्जुनेन कथितं दासाख्यं लोहमुत्तमम् ।
पित्तश्लेष्माधिकञ्चैव निहन्याद् ग्रहणीगदम् ॥
कफपित्तग्रहण्यान्तु लोहं दासरसायनम् ॥

२५ तोले शुद्ध लोह भस्म को शतावरीके रसमें घोटकर टिकिया बनाकर सुखावें और उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके गज पुटमें फूंक दें, इसी तरह शतावरीके रसकी ५ पुट दें। फिर हर्र, बहेड़ा और आमला ४०—४० तोले लेकर सबको २ द्रोण (६४ सेर) पानी में पकावें जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें उपरोक्त लोह भस्म मिलाकर पुनः पकावें और जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें २॥—२॥ तोले सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, बायबिडंग, नागरमोथा, और ढाकके बीज (पलाशपापड़ा) का चूर्ण मिला दें।

नागार्जुन कथित यह दासरसायन कफपित्तज ग्रहणीको नष्ट करता है।

(३०२४) दासरसायनलौहम्

(वै. से. । रसायना.)

पारदं विधिना शुद्धं पलद्वितयसम्मितम् ।
चतुष्पलं लोहचूर्णं चतुर्विंशपलं सिता ॥
मनोह्वागन्धपाषाणं हरितालञ्च शुद्धकम् ।
कासीसं हिङ्गुकुष्ठञ्च वचोशीररसाञ्जनम् ॥
सारं खदिरवृक्षस्य जातीफलसमन्वितम् ।
द्विपलं सूक्ष्मचूर्णन्तु सर्वेषां परिकीर्तितम् ॥
गगनाद्द्विपलं कृष्णाल्लोहवत्पुटितात् क्षुतात् ।
शास्त्रोक्तपृथगुद्दिष्टैः संयुज्य विधिनोचितम् ॥
त्रिंशच्च त्रैफले तोये प्रस्थेन सह सर्पिषा ।
शृङ्गवेररसप्रस्थं निष्काथ्यं वक्ष्यमाणकैः ॥
त्रिवर्णोदितं चित्रञ्च चास्थिसंहारसूरणम् ।
नामवर्षी सगोधूमभूमिकुष्माण्डतण्डुलाः ॥
सौभाञ्जनं तालमूली मोरटं शङ्खपुष्पिका ।
पृथगष्टपल षां वारिद्रोणे विपाचयेत् ॥
अष्टभागावशिष्टेन कषायं कारयेत्सुधीः ।
मधुनो द्वात्रिंशत्पलं क्षिपेत्तत्र सुशीतले ॥
त्रिकटुत्रिफलासिन्धुविडं सौवर्चलं तथा ।
टङ्कणो यावशूकश्च सुरदारु परं पराः ॥
अम्लवेतसमृद्वीकामहार्द्रमधुयष्टिका ।

शुण्ठी दुरालभा मुस्तं विडङ्गं रक्तचन्दनम् ॥
जीरकश्च सधन्यार्कं चूर्णं पलार्द्धकं पृथक् ।
दासरसायनं प्रोक्तं नराणां हितकाम्यया ॥
न चात्र परिहारोऽस्ति विहाराहारयन्त्रणे ।
अन्नपानानि सर्वाणि भक्ष्यभोज्यानि यानि च॥
तानि प्रकृतिभेदज्ञो बुद्धिपूर्वं प्रदापयेत् ।
सर्वव्याधिहरश्चैतत् स्वस्थास्वस्थहितं सदा ॥

विधिपूर्वक शुद्ध पारा २ पल (१० तोले), लोह भस्म ४ पल, खांड २४ पल, शुद्ध मनसिल, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, शुद्ध कसीस, हींग, कूठ, बच, खस, रसौत, खैरसार, और जायफल का चूर्ण १०–१० तोले तथा उपरोक्त लोहवाली विधिसे भस्म किया हुवा कृष्णाभ्रक १० तोले लें कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य चीजोंका चूर्ण मिलाकर घोटें ।

तत्पश्चात् सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, हडसंहारी, जिमीकन्द, पुनर्नवा, गेहूं, विदारीकन्द, चावल, सहंजनेकी छाल, तालमूली, मोरट लता, और शंख पुष्पी ८–८ पल (४०–४० तोले) लेकर सबको १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें जब ४ सेर पानी शेष रहजाय तो उसे छानलें और फिर उसमें उपरोक्त चूर्ण, ३० पल (३०० तोले) त्रिफलेका काथ, १ प्रस्थ (२ सेर) घी और २ सेर अदरकका रस मिलाकर पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे उतारकर ठण्डा करलें और फिर उसमें ३२ पल (४ सेर) शहद, तथा २॥–२॥ तोले सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सेंधानमक, विड नमक, सञ्चल (काला) नमक, सुहागेकी खील, जवाखार, देवदारुका चूर्ण, अम्लवेतस, मुनक्का, बम- अदरक, मुलैठी, काकड़ासिंगी, धमासा, नागरमोथा, बायबिड़ंग, लालचन्दन, जीरा और धनियेका चूर्ण मिलाकर रक्खें ।

यह "दास रसायन" स्वस्थ और अस्वस्थ दोनोंके लिए हितकारी, और सर्व रोग नाशक है। इसके सेवनकालमें किसी प्रकारके परहेजकी आवश्यकता नहीं है । प्रकृतिका विचार करके हर प्रकारका भोज्य, भक्ष्यादि आहार दिया जा सकता है ।

(३०२५) दुरालभादिलेहः (१)

(ग. नि. । कास.)

दुरालभा शठी कृष्णा मधुकं सितशर्करा ।
लीढं निहन्ति वातोत्थं कासं क्षौद्रेण योजितम् ॥

धमासा, शठी (कचूर), पीपल, मुलैठी और सफेद खांड । सब चीजोंका चूर्ण समान भाग लेकर एकत्र मिलावें और उसे शहदमें मिलाकर रोगीको चटावें । यह अवलेह वातज खांसीको नष्ट करता है ।

(३०२६) दुरालभादिलेहः (२)

(ग. नि. । कासा.)

दुरालभां शृङ्गबेरं शठीं द्राक्षां सितोपलाम् ।
लिह्यात् कर्कटशृङ्गीञ्च कासे तैलेन वातजे ॥

धमासा, सोंठ, कचूर, मुनक्का, काकड़ासिंगी और मिश्रीका चूर्ण बराबर बराबर लेकर तेल में मिलाकर रोगीको चटावें । इससे बातज खांसी नष्ट होती है ।

(३०२७) **देवदार्वाद्यवलेहः**

(वा. भ. । चि. स्था. अ. ३)

देवदारुशठीरास्नाकर्कटाख्यादुरालभाः ।
पिप्पली नागरं मुस्तं पथ्या धात्री सितोपला ॥
लाजा सितोपला सर्पिः शृङ्गी धात्रीफलोद्भवा ।
मधुतैलयुता लेहास्त्रयो वातानुगे कफे ॥

(१) देवदारु, कचूर, रास्ना, काकड़ासिंगी और धमासा ।

(२) पीपल, सोंठ, नागरमोथा, हर्र, आमला, और मिश्री ।

(३) धानकी खील, मिश्री, घी, काकड़ासिंगी और आमला । यह तीनों अवलेह शहद और तेलमें मिलाकर सेवन कराए जावें तो वात कफज खांसी नष्ट हो जाती है ।

(३०२८) **द्राक्षादियोगः**

(वृ. नि. र. । अजी.)

विदह्यते यस्य तु भुक्तमात्रं दह्यन्ति हृत्कोष्ठगतामलाश्च ।
द्राक्षासितामाक्षिकसंप्रयुक्ता लीढ्वाभयां वा स सुखं लभेच्च ॥

यदि आहार भली प्रकार न पचकर विदग्ध हो जाता हो और हृदय तथा उदर इत्यादि में दाह होती हो तो दाख और मिश्री को अथवा हर्र को पीसकर शहदके साथ मिलाकर चाटना चाहिये ।

(३०२९) **द्राक्षाद्यवलेहः** (१)

(वृ. नि. र. । सन्निपा.; वं. से. । मदात्यय.)

स्विन्नमामलकं पिष्ट्वा द्राक्षया सह मेलयेत् ।
विश्वभेषजसंयुक्तं मधुना सह लेहयेत् ॥
तेनास्य शाम्यति श्वासः कासो मूर्च्छारुचिस्तथा ॥

स्विन्न (उसीजे हुवे) आमलों को गुठली निकालकर पीस लीजिए और फिर उसमें उसके बराबर बीजरहित मुनकाकी पिट्ठी और सोंठका चूर्ण मिला दीजिये ।

इसे शहदमें मिलाकर चाटने से रोगीकी मूर्च्छा, श्वास, खांसी और अरुचि नष्ट होती है ।

(३०३०) **द्राक्षाद्यवलेहः** (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

द्राक्षामलक्याः फलं पिप्पलीनां
कोलं सखर्जूरयुतो च लेहः ।
सपित्तकासक्षयनाशकारी
सकामलं पाण्डुहलीमकं च ॥

दाख (मुनक्का) आमला, पीपल, बेर और खजूर को पीसकर (शहदमें मिलाकर) चटनी बना लीजिये । इसके सेवन से पित्तज खांसी, क्षय, कामला, पाण्डु और हलीमक रोग नष्ट होता है ।

(३०३१) **द्राक्षाद्यवलेहः** (३)

(वृ. नि. र. । अपस्मार.)

द्राक्षादारुनिशायुतं समधुकं कृष्णा विशाला त्रिवृत् ।
पृथ्वीका त्रिफला विडङ्गकटुका श्रीचन्दनं बालकम् ॥
चातुर्जातकनिम्बकाञ्चनतुगाताकीसपत्रं घनम् ।
मेदे द्वे सुरदारुकुष्ठकमलं धात्री समङ्गा बला ॥
भार्ङ्गीकोलकदाडिमाम्लसहितं काश्मर्यशृङ्गाटकम् ।

काश्माह्वामलधण्टिकालघुतराक्षुद्रा च रास्नायुतम् ॥
चूर्णं शर्करया समं मधुघृतं खर्जूरकैः संयुतम् ।
लिह्यात्कर्षमिदं समस्तबलवान् हन्यादपस्मारकम् ॥
उन्मादं च सुदारुणं क्षयमथो गुल्मं सपाण्डुं तथा ।
कासश्वासमसृक्प्रवाहमुदरं स्त्रीणां हितं शस्यते॥

द्राक्षा (दाख), दारुहल्दी, मुलैठी, पीपल, इन्द्रायण, निसोत, इलायची, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायविडंग, कुटकी, सफेदचन्दन, सुगन्ध बाला, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, नीमकीछाल, कचनारकी छाल, बंसलोचन, तालीसपत्र, नागरमोथा, मेदा, महामेदा, देवदारु, कूठ, कमल, आमला, मजीठ, खरैटी, भारंगी, कंकोल, दाड़िम (अनारदाना), खम्भारी, सिंघाड़ा सूखा हुवा), हल्दी, कपूर, शणपुष्पी, छोटीकटेली, खजूर और रास्ना । सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । इसमें इस सब चूर्णके बराबर मिश्री मिलाकर उसमें शहद और घी मिलाकर रक्खें ।

इसे नित्य प्रति १। तोलेकी मात्रानुसार सेवन करानेसे भयङ्कर अपस्मार, उन्माद, क्षय, गुल्म, पाण्डु, खांसी, श्वास, रक्तप्रदर और उदर रोग नष्ट होते हैं ।

(नोट—शहद समस्त चूर्णसे २ गुना और घी आधा मिलाना चाहिये ।)

(३०३२) **द्राक्षापाकः**

(वृ. नि. र.; यो. र.; प्रमे.)

द्राक्षादुग्धसिता पृथक् परिमिता प्रस्थेन संपाचिता ।
युक्तया वैद्यवरेण चूर्णमधुना देयं पलार्धं पृथक् ॥
चातुर्जातकटुत्रयं मृगमदं लोहाभ्रकं केशरम् ।
पत्री जातिफलं मृगाङ्करजतं कुस्तुम्बरी चन्दनम् ॥
सम्यक् जातरसं प्रभातसमये सेव्यं द्विकर्षोन्मितम् ।
स्निग्धं शुक्रकरं प्रमेहशमनं पित्तामयध्वंसनम् ॥
मूत्राघातविबन्धकृच्छ्रशमनं रक्तार्तिनेत्रार्तिहृत् ।
पादे पाणितले विदाहशमनं सौख्यप्रदं प्राणिनाम् ॥

१ सेर बीज रहित द्राक्षा (मुनक्का) लेकर पत्थर पर पिसवा लीजिये फिर एक कढ़ाई में १ सेर दूध और १ सेर खांड तथा यह मुनक्का डालकर पकाइये । जब अवलेह तैयार हो जाय (करछीको लगने लगे) तो उसमें २॥—२॥ तोले दाल चीनी. तेजपात, इलायची, नागकेसर, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, कस्तूरी, लोहभस्म, अभ्रक भस्म, केसर, जावित्री, जायफल, कपूर, चांदी भस्म, कुस्तुम्बरु और सफेद चन्दनका चूर्ण मिला दीजिये।

इसमेंसे प्रतिदिन २॥ तोले अवलेह प्रातः काल सेवन करना चाहिये ।

यह स्निग्ध, शुक्र वर्द्धक, प्रमेह, पित्तरोग, मूत्राघात, विबन्ध, मूत्रकृच्छ्र, रक्तविकार, नेत्ररोग, और हाथ पैरांकी दाहको शान्त करने वाला तथा सौख्यवर्द्धक है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ तोला । अनुपान—दूध)

(३०३३) द्विमेदादिलेहः

(ग. नि. । कासा.)

उभे मेदे तुगाक्षीरी पिप्पली सितशर्करा ।
घृतक्षौद्रं च लेहोऽयं कासं जयति पैत्तिकम् ॥

मेदा, महामेदा, बंसलोचन, पीपल और सफेद खांड समान भाग लेकर चूर्ण करें और उसे घी तथा शहद में मिलाकर अवलेह बनालें ।

यह अवलेह पित्तज खांसीको नष्ट करता है ।

इति दकारादिलेहप्रकरणम् ।

अथ दकारादिघृतप्रकरणम्

द्रष्टव्य

१—घृत और तैलादिमें द्रव पदार्थों के लिये १६० तोलेका प्रस्थ मान कर द्रव्योंका परिमाण लिखा गया है अत एव हिन्दी अर्थ में द्रव पदार्थोंका जो परिमाण सेरों या तोलों आदि में लिखा है परिभाषाके अनुसार उसका द्विगुण करने की आवश्यकता नहीं है ।

२—जिन स्नेहोंका पाक केवल क्वाथ से लिखा है और कल्कादिका परिमाण नहीं बतलाया गया उनमें परिभाषानुसार कल्क स्नेहका छठा भाग लिखा है, परन्तु जहां क्वाथके साथ दूध इत्यादि भी लिखे हैं वहां साधारण नियमानुसार चौथा भाग कल्क लिखा है ।

(३०३४) दन्तीघृतम्

(वं. से. । विद्र.; र. र. । श्लीप.)

दन्तीमूलपलं दद्यात्त्रिवृन्मूलपलं तथा ।
त्रिफलातिविषाचित्रविडङ्गार्धपलोन्मितम् ॥
स्नुहीक्षीरसमायुक्तं घृतस्य कुडवं पचेत् ।
बिन्दुमात्रोपयोगेन वेगःसमुपजायते ॥
दुर्वारं श्लीपदं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

दन्तीमूल १ पल (५ तोले), निसोत ५ तोले, तथा हर्र, बहेड़ा, आमला, अतीस, चीता और बायबिडंग २॥-२॥ तोले लेकर सबको पानी के साथ पीसलें फिर १ कुड़व (४० तोले) घीमें यह कल्क और १६० तोले सेहुण्ड (सेंड) का दूध मिलाकर पकावें । जब दूध जल जाय तो घृतको छान लें ।

इस घीमें से केवल एक बिन्दु रोगीको पिलानेसे विरेचन होकर दुस्साध्य श्लीपद रोग भी नष्ट हो जाता है ।

(नोट—घी पकाते समय उसमें २ सेर पानी भी डालना चाहिये ।)

(३०३५) दन्त्यादिघृतम् (१)

(वा. भ. । चि. स्था. अ. १९)

दन्त्याढकमपां द्रोणे पक्त्वा तेन घृतं पचेत् ।
धामार्गवपले पीतं तदूर्ध्वाधोविशुद्धिकृत् ॥

४ सेर दन्तीमूलको ३२ सेर पानीमें पकावें जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें २ सेर घी और १० तोले तुरई का कल्क मिलाकर पकाइये । जब सब पानी जल जाय तो घृतको छान लीजिए ।

यह घृत पीनेसे वमन विरेचन होकर कुष्ठ नष्ट होता है।

(मात्रा—३—४ तोले ।)

(३०३६) **दन्त्यादिघृतम्** (२)

(वा. भ. । चि. स्था. अ. १९.)

आवर्त्तकीतुलां द्रोणे पचेदष्टांशशेषितम् ।
तन्मूलैस्तत्र निर्यूहे घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
पीत्वा तदेकदिवसान्तरितं सुजीर्णे ।
भुञ्जीत कोद्रवमुसंस्कृतकाञ्जिकेन ॥
कुष्ठं किलासमपचीश्च विजेतुमिच्छ-
न्निच्छन् प्रजाश्च विपुलां ग्रहणं स्मृतिश्च ॥

१ तुला (६। सेर) महादन्ती को १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकाइये । जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें २ सेर या १६० तोले घी और १३ तोले ४ माशे महा-दन्तीकी जड़का कल्क मिलाकर पकाइये । जब पानी जल जाय तो घृतको छान लीजिये ।

इस घृतको तीसरे दिन पीने और घृत पचने पर काञ्जीसे बना हुवा कोदों का अन्न खानेसे कुष्ठ, किलास और अपची (गण्डमाला भेद) नष्ट होती तथा स्मरण शक्ति और सन्तानोत्पादन शक्ति की वृद्धि होती है।

नोट—घृत पकाते समय उसमें ८ सेर पानी भी डालना चाहिये ।

(३०३७) **दन्त्याद्यं घृतम्**

(च. सं. । चि. स्था. अ. २०; वं. से. । पाण्डु.)

दन्त्याश्चतुष्पलरसे पिष्टैर्दन्तीशलाटुभिः ।
तद्वत् प्रस्थो घृताद् गुल्मप्लीहपाण्डुर्वाग्निदोषनुत् ॥

४ पल (२० तोले) दन्तीमूलको ३२० तोले पानीमें पकाकर चौथा भाग पानी शेष रहने पर छान लीजिये । तत्पश्चात् इसमें १ प्रस्थ (१६० तोले) घी और दन्तीमूल तथा बेलगिरीका समान भाग मिश्रित १३ तो. ४ माशे कल्क मिला कर पकाइये । जब समस्त पानी जल जाय तो घृतको छान लीजिये ।

यह घृत गुल्म, तिल्ली और पाण्डु रोगको नष्ट करता है ।

नोट—पाककी उत्तमताके लिये ४ प्रस्थ (८ सेर) पानी भी डालना चाहिये ।

(३०३८) **दशमूलक्षीरषट्पलघृतम्**

(वं. से.; च. द.; वृं. मा.; र. र. । ज्वरा.)

दशमूलीरसैः सर्पिः सक्षीरैः पञ्चकोलकैः ।
सक्षारैर्हन्ति तत्सिद्धं ज्वरकासाग्निमन्दताम् ॥
वातपित्तकफव्याधीन्प्लीहानं चापकर्षति ॥

४ सेर दशमूलको ३२ सेर पानीमें पकाइये जब चौथा भाग पानी शेष रहे तो छान लीजिये। तत्पश्चात् यह काथ, २ सेर घी और २ सेर दूध तथा पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और यवक्षारका समान भाग मिश्रित २० तो. कल्क लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकाइये । जब दूध और काथ जल जाय तो घीको छान लीजिए ।

यह घी ज्वर, खांसी, अग्निमांद्य, वातज पित्तज और कफज रोग तथा तिल्ली को नष्ट करता है ।

(३०३९) **दशमूलघृतम्** (१)

(र. र. । शिरो; वृ. नि. र.; यो. र. । नेत्र.)

दशमूलाम्बुना पक्वं घृतं दुग्धचतुर्गुणम् ।
त्रिफलाकल्कसंयुक्तं तिमिरे वातजे पिबेत् ॥

दशमूलका काथ ४ सेर, दूध ४ सेर, घी १ सेर, और त्रिफलेका कल्क १० तोले लेकर सबको

एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

यह घृत वातज तिमिर को नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक । अनुपान दूध ।)

(३०४०) **दशमूलघृतम्** (२)

(वृं. मा.; च. द. । वातव्या.)

दशमूलस्य निर्यूहे जीवनीयैः पलोन्मितैः ।
क्षीरेण च घृतं पक्वं तर्पणं पवनार्तिजित् ॥

दशमूलका क्वाथ २४ सेर, दूध ६ सेर, घी ६ सेर तथा जीवनीयगण (मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती, मुलैठी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि और वृद्धि) का कल्क १२ पल (प्रत्येक ५ तोले) लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब घी मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

यह घृत वातव्याधि नाशक है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।अनुपान गरम दूध या दशमूलका क्वाथ ।)

नोट—मेदा, महामेदाके अभावमें शतावर; जीवक, ऋषभक के अभावमें विदारीकंद, ऋद्धि, वृद्धिके अभावमें वाराहीकन्द और काकोली, क्षीर काकोलीके अभावमें असगंध लेना चाहिये ।

(३०४१) **दशमूलघृतम्** (३)

(र. र. । मेह; वा. भ. । चि. अ. १२)

दशमूली शठी-दन्ती देवदारुपुनर्नवा ।
मूलं स्नुगर्कयोः पथ्या भूकन्दश्च सपुष्करम् ॥
करञ्जं वारुणं मूलं पिप्पली च समं समम् ।
प्रतिदशपलं योज्यं कुलत्थबदरीयवाः ॥
प्रत्येकं षोडशपलं सर्वमेकत्र पाचयेत् ।
तेषामष्टगुणे तोये पादशेषं समाहरेत् ॥
वस्त्रपूतं कषायन्तं पुनः पाच्यमिमैः सह ।
चव्यं द्विपिप्पली भार्गी वचा त्रिवृद्विडङ्गकम् ॥
लोध्रं कम्पिल्लकम् शुण्ठी प्रत्येकं पलसम्मितम् ।
चूर्णितं योजयेत्तत्र घृतप्रस्थयुतं पचेत् ॥
घृतावशेषमुत्तार्य कर्षमात्रं प्रयोजयेत् ।
प्रमेहोपद्रवाणाञ्च शमनं पवनं हितम् ॥
पिडकाव्रणगण्डानां सर्वोपद्रवशान्तिकृत् ॥

क्वाथ—दशमूलकी हरेक वस्तु, शठी (कचूर), दन्तीमूल, देवदारु, पुनर्नवा (साठी), स्नुही (सेंड) और आककी जड़, हर्र, जिमिकन्द (शूरण), पोखरमूल, करञ्ज, बरनेकी छाल, और पीपल; प्रत्येक १० पल (५० तोले) तथा बेर, कुलथी और जौ १६–१६ पल लेकर सबको अधकुटा करके १६ गुने पानीमें पकावें; जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो क्वाथको छानलें ।

कल्क—चव, पीपल, गजपीपल, भरंगी, बच, निसोत, बायबिड़ंग, लोध, कबीला और सोंठ; हरेक ५–५ तोले लेकर पानीके साथ पीस लें ।

२ सेर घी तथा उपरोक्त क्वाथ और कल्क को एकत्र मिलाकर पकावें; जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें ।

यह घृत प्रमेहपिडिका, गण्ड और घाव आदि प्रमेहके समस्त उपद्रवोंको नष्ट करता है।

मात्रा—१। तोला। (त्रिफला क्वाथ या मञ्जिष्ठादि क्वाथ में डालकर पियें।)

(३०४२) **दशमूलषट्पलघृतम्** (१)

(वृ. मा. । उदरा.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः।
सक्षारैरर्द्धपलिकैर्द्विः प्रस्थं सर्पिषः पचेत् ॥
कल्कैर्द्विपञ्चमूलस्य तुलार्धस्य रसेन तु।
दधिमण्डाढकं दत्त्वा तत्सर्पिर्जठरापहम् ॥
श्वयथुं वातविष्टम्भं गुल्मार्शांसि च नाशयेत् ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और यवक्षारका कल्क ३ पल (हरेक २॥ तोले), घी २ प्रस्थ (४ सेर), दशमूलका क्वाथ ६। सेर, और दहीका पानी ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब क्वाथ और पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे उदरव्याधि, सूजन, अपान वायुका रुकना, गुल्म और बवासीरका नाश होता है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक। अनुपान पीपलका क्वाथ या गर्म जल।)

(३०४३) **दशमूलषट्पलघृतम्** (२)

(वृं. मा.; च. द. । कास. चि.)

दशमूलीचतुष्प्रस्थे रसे प्रस्थोन्मितं हविः।
सक्षारैः पञ्चकोलैस्तु कल्कितं साधुसाधितम् ॥
कासहृत्पार्श्वशूलघ्नं हिक्काश्वासनिबर्हणम्।
कल्कं षट्पलमेवात्र ग्राहयन्ति भिषग्वराः ॥

दशमूलका क्वाथ ४ प्रस्थ (८ सेर), घी १ प्रस्थ (२ सेर) तथा पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और यवक्षार का कल्क ६ पल (हरेक ५ तोले) लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो घी को छान लें।

यह घी खांसी, पसलीका दर्द, हिचकी और श्वास को नष्ट करता है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक। अनुपान—दूध या गर्म जल या दशमूलका क्वाथ।)

नोट—प्रयोग संख्या ३०३८, ३०४२ और ३०४३ में बहुत थोड़ा अन्तर है। नं. ३०३८ में दूध पड़ता है, नं. ३०४२ में दहीका पानी और नं. ३०४३ में केवल क्वाथ ही पड़ता है। ओषधियोंके परिमाणमें भी अन्तर है।

(३०४४) **दशमूलादिघृतम्** (१)

(वृ. नि. र; यो. र. । अजी.)

मरीचं पिप्पलीमूलं नागरं पिप्पली तथा।
भल्लातकं यवानी च विडङ्गं गजपिप्पली ॥
हिङ्गुसौवर्चलं चैव त्वजाजी विडधान्यकम्।
सामुद्रं सैन्धवं क्षारं चित्रकं वचया सह ॥
एभिरर्धपलैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
दशमूलरसे सिद्धं पयसाष्टगुणेन वा ॥
मन्दाग्नेश्च हितं सिद्धं ग्रहणीदोषनाशनम्।
विष्टम्भमामं दौर्बल्यं प्लीहानमपकर्षयेत् ॥
कासं श्वासं क्षयं वापि दुर्नामसभगन्दरम्।
कफजान्हन्ति रोगांश्च वायुजान्कृमिसम्भवान्॥
तान्सर्वान्नाशयत्याशु शुष्कं दावनलो यथा ॥

कल्क—कालीमिर्च, पीपलामूल, सोंठ, पीपल, शुद्ध भिलावा, अजवायन, बायबिड़ंग, गजपीपल. हींग, सञ्चल (काला नमक), जीरा, बिड लवण, धनिया, समुद्रनमक, सेंधानमक, यवक्षार, चीता

और बच । प्रत्येक आधा आधा पल (२॥-२॥ तोले) लेकर सबको पानीके साथ पत्थर पर पीस लें ।

द्रव पदार्थ—दशमूलका क्वाथ १६ सेर, या गायका दूध १६ सेर ।

विधि—२ सेर घी और द्रवपदार्थ तथा कल्क द्रव्योंको एकत्र मिलाकर पकावें । जब द्रव पदार्थ जल जायं तो घीको छान लें ।

यह घृत अग्निमांद्य, ग्रहणीविकार, विष्टम्भ, आम, दुर्बलता, तिल्ली, खांसी, श्वास, क्षय, बवासीर, भगन्दर, कफज और वातज रोग तथा कृमिजन्य रोगोंको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक । दूध या गरम पानीके साथ पियें ।)

(३०४५) दशमूलादिघृतम् (२)

(च. सं. । चि. अ. २८; ग. नि. । घृता.; वं. से. । वातव्या.)

द्रोणेऽम्भसः पचेद्भागान् दशमूलांश्चतुष्पलान् ।
यवकोलकुलत्थानां भागैः प्रस्थोन्मितैः सह ॥
पादशेषे रसे पिष्टैर्जीवनीयैः सशर्करैः ।
तथा खर्जूरकाश्मर्यद्राक्षाबदरफल्गुभिः ॥
सक्षीरैः सर्पिषः प्रस्थं सिद्धं केवलवातनुत् ।
निरत्ययं प्रयोक्तव्यं पानाभ्यञ्जनबस्तिषु ॥

दशमूलकी हरेक चीज़ ४ पल (२० तोले) तथा जौ, कुलथी और बेर १-१ प्रस्थ (८० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें । जब चौथा भाग (८ सेर) पानी बाक़ी रह जाय तो क्वाथको छान लें । फिर यह क्वाथ, २ सेर घी, २ सेर दूध और जीवनीय गण,[1] खांड, खजूर, खम्भारीके फल, दाख (मुनक्का), बेर, और कठूमर के फलों का समान भाग मिश्रित २० तोले कल्क लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और पानी जल जाने पर घृतको छान लें ।

इसे पिलाने या अभ्यंग अथवा बस्ति द्वारा प्रयुक्त करने से वातव्याधि नष्ट होती है ।

नोट—यह घृत एकदोषज (केवल वातज) व्याधि में हितकर है ।

(३०४६) दशमूलादिघृतम् (३)

(च. सं. । चि. स्था. अ. २२.; ग. नि. । घृता.; र. र.; च. द.; वृ. मा.; वं. से. । कासा.; ध. । राजय.)

दशमूलाढके प्रस्थं घृतस्याक्षसमैः पचेत् ।
पुष्कराह्वशठीबिल्वसुरसव्योषहिङ्गुभिः ॥
पेयं पेयानुपानं तत्कासे वातकफात्मके ।
श्वासरोगेषु सर्वेषु कफवातात्मकेषु च ॥

क्वाथ—दशमूल ४ सेर; पानी ३२ सेर । शेष ८ सेर ।

कल्क—पोखरमूल, शठी (कचूर), बेलछाल, तुलसी, सोंठ, मिर्च, पीपल, और हींग । प्रत्येक १। तोला लेकर पानीके साथ पीसलें ।

विधि—२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर क्वाथ जलने तक पकावें ।

यह घी वातकफज खांसी और श्वासको नष्ट करता है ।

अनुपान—पेया (मात्रा—१ से २ तोला तक ।)

---

१ जीवनीय गण प्रयोग सं० १९८२ में देखिये ।

(३०४७) **दशमूलादिघृतम्** (४)

(वं. से. । अति.)

विश्वौषधस्य गर्भेण दशमूलजले शृतम् ।
घृतं निहन्त्यतीसारं ग्रहणीं पाण्डुकामलाम् ॥

सोंठका कल्क १३ तोले ४ माशे, घी २ सेर, दशमूलका काथ ८ सेर । (४ सेर दशमूलको ३२ सेर पानीमें पकाकर ८ सेर शेष रक्खें ।)

सबको एकत्र मिलाकर काथ जलने तक पकावें ।

यह घी अतिसार, संग्रहणी, पाण्डु और कामलाको नष्ट करता है ।

(३०४८) **दशमूलादिघृतम्** (५)

(वं. से., वृ. नि. र.; यो. र. । नेत्ररोग.)

वातिके तिमिरे पक्वं दशमूलीरसे घृतम् ।
त्रिवृच्चूर्णसमायुक्तं विरेकार्थं प्रयोजयेत् ॥

वातज तिमिर रोगमें दशमूलके काथ से पके हुवे घीमें निसोतका चूर्ण मिलाकर उससे विरेचन कराना चाहिए ।

(दशमूलका काथ ४ सेर, घी १ सेर । मात्रा ३-४ तोले । निसोतका चूर्ण ३ से ६ माशे तक ।)

(३०४९) **दशमूलादिघृतम्** (६)

(यो. र.; वं. से.; ग. नि. । उदररो.; वृ. यो. त. । त. १०५; यो. चिं. । अ. ५)

दशमूलीकषायेण रास्नानागरदारुभिः ।
पुनर्नवाभ्यां च घृतं सिद्धं वातोदरापहम् ॥

दशमूलके काथ और रास्ना, सोंठ, देवदारु, तथा सफेद और लाल पुनर्नवाके कल्कसे पकाया हुवा घृत वातोदरको नष्ट करता है । (दशमूलका काथ ८ सेर, घी २ सेर, कल्ककी सब चीजें समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे ।)

(३०५०) **दशमूलाद्यं घृतम्** (१)

(वृ. नि. र. । क्षय; वृ. मा; वं. से. । राजय.; ग. नि. । स्वरभे.)

दशमूली शृतात्क्षीरात्सर्पिर्यदुदियान्नवम् ।
सपिप्पलीकं सक्षौद्रं तत्परं स्वरशोधनम् ॥
शिरःपार्श्वाङ्गशूलघ्नं कासश्वासज्वरापहम् ।
सिद्धं जगति विख्यातं शोषिणां परमौषधम् ॥

दशमूल २० तोले, गायका दूध ४ सेर, पानी १६ सेर । सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो दूधको छानकर उसका दही जमा दें ।

इस दहीसे निकाले हुवे नवनी घी (मक्खन –नवनीत) में पीपलका चूर्ण और शहद मिलाकर सेवन करनेसे शिर, पसली, और शरीरकी पीड़ा तथा खांसी, श्वास और ज्वर नष्ट होता है ।

यह अत्यन्त स्वर शोधक और शोष रोगियोंके लिए परमौषध है ।

(मात्रा–घी १ से २ तोले तक, शहद ६ माशेसे १ तोले तक, पीपलका चूर्ण १ से २ माशे तक ।)

(३०५१) **दशमूलाद्यं घृतम्** (२)

(वं. से. । हिक्का.; च. सं. । चि. अ. २१)

दशमूलीरसे सर्पिर्दधिमण्डेन साधयेत् ।
कृष्णासौवर्चलक्षारवयस्थाहिङ्गुरोचकैः ॥
कायस्थया च तत्पानाद्धिक्काश्वासो नियच्छति ॥

दशमूलका काथ ४ सेर, घी २ सेर, दहीका पानी ४ सेर, पीपल, सञ्चल (काला नमक),

यवक्षार, आमला, हींग, बिजौरेकी छाल और हर्र का कल्क २० तोले (सब समान भाग मिश्रित) लेकर सबको एकत्र मिलाकर घृत मात्र शेष रहने तक पकावें।

यह घृत हिचकी और श्वासको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(३०५२) **दशमूलीघृतम्**

(च. सं. । चि. अ. ५)

सव्योषक्षारलवणं दशमूलीभृतं घृतम् ।
कफगुल्मञ्जयत्याशु सहिङ्गुःविडदाडिमम् ॥

दशमूलका क्काथ ८ सेर, घी २ सेर तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, यवक्षार, सेंधानमक, हींग, विडनमक और अनारदानेका कल्क १३ तोले ४ माशे लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें ।

यह घृत कफज गुल्मको अत्यन्त शीघ्र नष्ट कर देता है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक । गर्म पानीमें डालकर पियें ।)

(३०५३) **दशाङ्गघृतम्**

(ग. नि. । घृता०)

यावशूकं वचा व्योषं विडङ्गं कटुरोहिणीम् ।
सौवर्चलं हरीतक्यचित्रकं चाक्षसंमितैः ॥
एभिः पचेद्घृतं दत्त्वा क्षीरजलाढकम् ।
तत्पक्वं वातगुल्मघ्नं कृमिप्लीहज्वरापहम् ॥
कासहिक्कारुचिहरं दशाङ्गं नाम दीपनम् ॥

जवाखार, बच, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, कुटकी, सञ्चल (काला नमक), हर्र, और चीता हरेक १।—१। तोला लेकर पानीके साथ पीसकर कल्क बनावें । तत्पश्चात् यह कल्क, २ सेर घी, ८ सेर दूध और ८ सेर पानी एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर रक्खें ।

यह "दशाङ्ग घृत" वातगुल्म, कृमि, प्लीहा, ज्वर, खांसी, हिचकी और अरुचि, को नष्ट करता है ।

(मात्रा १ से २ तोले तक ।)

(३०५४) **दाडिमाद्यं घृतम्** (१)

(ग. नि. । परिशिष्ट घृता.)

दाडिमं तिन्तडीकञ्च नागपुष्पं शतावरी ।
काकोली क्षीरकाकोली बिदारी यक्षहस्तकः ॥
बीजपूरकमूलं च राजवृक्षात्मगुप्तयोः ।
कुष्ठं चेति समैरेतैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
चतुर्गुणेन पयसा जलेनाष्टगुणेन च ।
तत्सर्पिः पिबतः सिद्धं कासश्वासापतानकाः ॥
हृद्रोगो रक्तपित्तञ्च ह्यचिराद्यान्ति संक्षयम् ॥

अनार दाना, तिंतड़ीक, नागकेसर, शतावरी, काकोली, क्षीर काकोली (दोनोंके अभावमें असगन्ध), विदारीकन्द, अरण्डकी जड़, बिजौरेकी जड़, अमलतासकी जड़, कौंचकी जड़, और कूठ; सब चीजें समान भाग मिलाकर २० तोले लें और पानीके साथ पत्थरपर पीस लें । फिर यह पिसी हुई ओषधियां और २ सेर घी, ८ सेर दूध तथा १६ सेर पानी को एकत्र मिलाकर पकावें । जब दूध और पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे खांसी, श्वास, अपतानक, हृद्रोग और रक्तपित्त, अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(३०५५) दाडिमाद्यं घृतम् (२)

(ग. नि. । घृता.; च. सं. । चि. अ. २०.)

दाडिमात्कुडवो धान्यात्कुडवार्धं पलं पलम् ।
चित्राच्छृङ्गवेराच्च पिप्पल्यष्टमिका तथा ॥
कल्कैस्तैर्विंशतिपलं घृतस्य सलिलाढके ।
सिद्धं हृत्पाण्डुगुल्मार्शःप्लीहवातातिशूलनुत् ॥
दीपनं श्वासकासघ्नं मूढवातानुलोमनम् ।
दुःखप्रसविनीनां च वन्ध्यानां चैव पुत्रदम् ॥

२० पल (२॥ सेर) घी, ८ सेर पानी और २० तोले अनारकी छाल (या अनारदाना), १० तोले धनिया, तथा ५-५ तोले दन्ती और सोंठ एवं २॥ तोले पीपलके कल्कको एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत हृद्रोग, पाण्डु, गुल्म, अर्श, तिल्ली वातव्याधि, शूल, श्वास, खांसी, और मूढवात को नष्ट करता तथा अग्नि प्रदीप्त करता है। जिन स्त्रियोंके सन्तान न होती हो या जिनको प्रसवके समय अधिक कष्ट होता हो उनके लिए हित-कारी है।

(मात्रा १ से २ तोले तक।)

(३०५६) दाडिमाद्यं घृतम् (३)

(भै. र.; वं. से.; र. र. । प्रमे.; वृ. यो. त. । त. १०३; भा. प्र. ख. २ । प्रमे.)

दाडिमस्य तु बीजानि कृमिघ्नस्य च तण्डुलाः ।
रजनी चविकाजाजी त्रिफला नागरकणा ॥
त्रिकण्टकस्य बीजानि यमानी धान्यकन्तथा ।
वृक्षाम्लश्चपलाकोलं सिन्धूद्भवसमायुतम् ॥
कल्कैरक्षसमैरेभिर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
पाने भोज्ये च दातव्यं सर्वर्त्तुषु च मात्रया ॥
प्रमेहान् विंशतिविधान् मूत्राघातांस्तथाश्मरीम् ।
कृच्छ्रं सुदारुणञ्चैव हन्यादेतन्न संशयः ॥
विबन्धानाहशूलघ्नं कामलाज्वरनाशनम् ।
दाडिमाद्यं घृतं नाम्ना अश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥
(अत्र चपलापिप्पलीमूलमिति वृन्दः गजपिप्पलीति पद्मसेनत्रिपुरकवीन्द्रौ ।)

अनारदाना, बायबिड़ंगके चावल,[1] हल्दी, चव, जीरा, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, पीपल, गोखरु, अजवायन, धनिया, वृक्षाम्ल (तितंड़ीक), पीपलामूल (या गजपीपल), बेर और सैंधा नमक। हरेक चीज १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पत्थर पर पीसकर कल्क बनावें। तत्पश्चात् २ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिला-कर पकावें और पानीके जल जाने पर घीको छान लें।

यह घी २० प्रकारके प्रमेह, मूत्राघात, अश्मरी, भयङ्कर मूत्रकृच्छ्र, विबन्ध, अफारा, शूल, कामला और ज्वरको नष्ट करता है।

इसे सभी ऋतुओं में भोजन के साथ खिला सकते हैं या वैसे ही पिला सकते हैं।

(मात्रा-१ से २ तोले तक।)

(३०५७) दाधिकं घृतम् (१)

(वा. भ. । चि. अ. १४.; ग. नि. । परि. घृता.)

दशमूलं बलां कालां सुपर्वीं द्वे पुनर्नवे ।
पौष्करैरण्डरास्नाश्वगन्धाभार्ङ्ग्यमृताशठीः ॥

[1] —बायबिडंगको धानोंकी तरह कूटकर निकाली हुइ तुष रहित गिरी।

पचेद्गन्धपलाशीश्च द्रोणेऽपां द्विपलोन्मितम् ।
यवैः कोलैः कुलत्थैश्च माषैश्च प्रास्थिकैः सह ॥
क्वाथेऽस्मिन्दधिपात्रे च घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
स्वरसैर्दाडिमाम्रातमातुलुङ्गोद्भवैर्युतम् ॥
तथा तुषाम्बुधान्याम्लयुतैः श्लक्ष्णैश्च कल्कितैः ।
भार्ङ्गीतुम्बुरुषड्ग्रन्थाग्रन्थिरास्नाग्निधान्यकैः ॥
यवानकयवान्यम्लवेतसासितजीरकैः ।
अजाजीहिङ्गुहपुषाकारवीवृषकोषकैः ॥
निकुम्भकुम्भमूर्वेभपिप्पलीवेल्लदाडिमैः ।
श्वदंष्ट्रात्रपुसैर्वारुबीजहिंस्राश्ममेदकैः ॥
मिसिद्विक्षारसुरससारिवानीलिनीफलैः ।
त्रिकटुत्रिपटूपेतैर्दाधिकं तद्व्यपोहति ॥
रोगानाशुतरान्पूर्वान्कष्टानपि च शीलितम् ।
अपस्मारगरोन्मादमूत्राघातानिलामयान् ॥

क्वाथ्य द्रव्य—दशमूलकी प्रत्येक ओषधि, बला (खरैटी), नीलका पञ्चाङ्ग, कलौंजी, सफेद और लाल पुनर्नवा (साठी), पोखरमूल, अरण्डकी जड़, रास्ना, असगन्ध, भरंगी, गिलोय, शठी (कचूर) और कपूरकचरी । प्रत्येक २ पल (१०–१० तोले) तथा जौ, कुलथी, बेर, और उर्द; हरेक १ प्रस्थ (८० तोले) पानी १ द्रोण (३२ सेर) ।

सबको अधकुटाकरके पकावें । जब ८ सेर पानी रह जाय तो ठण्डा करके छान लें ।

अन्य द्रवपदार्थ—दही ४ प्रस्थ (८ सेर), अनारका स्वरस ८ सेर, अम्बाड़ाका स्वरस ८ सेर, बिजौरे नीबूका रस ८ सेर, तुषाम्बु[1] ८ सेर और काञ्जी ८ सेर ।

कल्क—भरंगी, तुम्बुरु, बच, पीपलामूल, रास्ना, चीता, धनिया, अजवायन, खुरासानी अजवायन, अमलबेत, कालाजीरा, जीरा, हींग, हाऊबेर, कलौंजी, बासा, रेह मिट्टी, दन्तीमूल, निसोत, मूर्वा, गजपीपल, वायबिड़ंग, अनारकी छाल (या अनारदाना), गोखरु, खीरे और ककड़ीके बीज, कटेली, पत्थरचटा, सौंफ, सज्जीक्षार, यवक्षार, तुलसी, सारिवा, नीलके फल, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधा नमक, काच लवण और विड लवण । सब चीजें समान भाग मिलाकर २० तोले लें और पानीके साथ पत्थर पर पिसवा लें ।

विधि—क्वाथ, अन्य द्रव पदार्थ और कल्क तथा २ सेर घीको एकत्र मिलाकर पकावें, जब द्रव पदार्थ जल कर घी मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इस ' दाधिक घृत ' के सेवनसे कष्ट साध्य अपस्मार, विषविकार, उन्माद, मूत्राघात और वातव्याधिका शीघ्र ही नाश हो जाता है ।

(मात्रा १ तोले से २ तोले तक ।)

नोट—उपरोक्त पाठ वागभट्ट से उद्धृत किया गया है । गदनिग्रह के पाठानुसार इस प्रयोग में निम्न लिखित अन्तर पड़ता है—

गद निग्रह में **क्वाथमें**—लाल पुनर्नवा, अरण्ड, भरंगी और गन्धपलाशी नहीं है तथा गोखरु और देवदारु अधिक हैं ।

कल्कमें—बच, कालाजीरा, सौंफ, सारिवा, नील के फल, सोंठ और पीपल नहीं हैं तथा दोनों पुनर्नवा, खरैंटी, पाठा और शतावर, अधिक हैं ।

[1] तुषाम्बु और काञ्जी बनानेकी विधि भारत भै. र. भाग १ के पृष्ठ ३५४ पर देखिये ।

द्रव पदार्थोंमें—गदनिग्रह में शुक्त अधिक लिखा है। शेष प्रयोग दोनों में समान है।

(३०५८) **दाधिकं घृतम्** (२)

(च. द. । शूला.)

पिप्पली नागरं बिल्वं कारवी चव्यचित्रकम्।
हिङ्गुदाडिमवृक्षाम्लवचाक्षाराम्लवेतसम् ॥
वर्षाभूकृष्णलवणमजाजीबीजपूरकम्।
दधित्रिगुणितं सर्पिस्तत्सिद्धं दाधिकं स्मृतम् ॥
गुल्मार्शःप्लीहहृत्पार्श्वशूलयोनिरुजापहम्।
दोषसंशमनं श्रेष्ठं दाधिकं परमं स्मृतम् ॥

कल्क द्रव्य—पीपल, सोंठ, बेल छाल, कलौंजी, चव, चीता, हींग, अनारदाना, तिन्तड़ीक, बच, यवक्षार, अम्लबेतस, पुनर्नवा, काला नमक (सञ्चल), जीरा और बिजौरे नीबूकी छाल; सब चीज़ें समान भाग मिलाकर २० तोले लें। कल्ककी चीज़ोंको पानी के साथ पीसलें फिर उन्हें २ सेर घीमें मिला दें और उसमें ६ सेर दही डालकर पकावें।

यह घृत गुल्म, अर्श, तिल्ली, हृदयका शूल, पसली-शूल और योनि-शूलको नष्ट तथा दोषोंको शमन करता है।

नोट—पाककी उत्तमता के लिये ८ सेर पानी भी डालना चाहिये।

(३०५९) **दाधिकं घृतम्** (३)

(वृ. यो. त. । ९८ त.; ग. नि. । घृता.; यो. र. । गुल्म; वं. से. । गु.; सु. सं. । चि. अ. गुल्म.)

बिड्दाडिमसिन्धूत्थहुतभुग्व्योषजीरकैः।
हिङ्गुसौवर्चलक्षारचुक्रवृक्षाम्लवेतसैः ॥
बीजपूररसोपेतैः सर्पिर्दधिचतुर्गुणम्।
साधितं दाधिकं नाम्ना गुल्महृत्प्लीहनुत्परम् ॥

बिडलवण, अनारदाना, सेंधानमक, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, ज़ीरा, हींग, सञ्चल (काला-नमक) यवक्षार, चूका, तिंतड़ीक, और अमलबेत के कल्क, चार गुने दही, और बिजौरे के रससे सिद्ध किया हुआ घृत हृद्रोग, गुल्म और प्लीहा को नष्ट करता है।

(कल्ककी सब चीज़ें समान भाग मिली हुई २० तोले, घी २ सेर, दही ८ सेर, बिजौरेका रस २ सेर, पानी ८ सेर।)

(३०६०) **दारुहरिद्रादिघृतम्**

(चं. सं. । चि. अ. १०)

त्वक् च दारुहरिद्रायाः कुटजस्य फलानि च।
पिप्पली शृङ्गवेरश्च द्राक्षा कटुकरोहिणी ॥
षड्भिरेतैर्घृतं सिद्धं पेयामण्डावचारितम्।
अतीसारं जयेच्छीघ्रं त्रिदोषमपि दारुणम् ॥

दारुहल्दी की छाल, इन्द्रजौ, पीपल, सोंठ, दाख और कुटकीके कल्क तथा क्वाथ से सिद्ध घृत पेया या मण्डके साथ पीनेसे त्रिदोषज अतिसार भी नष्ट हो जाता है।

(निर्माण विधि—क्वाथके लिए सब चीज़ें मिलाकर २ सेर लें और १६ सेर पानीमें पकाकर ४ सेर पानी शेष रक्खें फिर उसमें १ सेर घी और उपरोक्त चीज़ोंका समान भाग मिश्रित ६ तोले ८ माशे कल्क मिलाकर पानी जलने तक पकावें।)

(३०६१) **दार्व्यादिघृतम्**

(ग. नि. । विसर्प.)

दार्वीत्वङ्मधुकं रोध्रं केसरं चावचूर्णितम्।
पटोलपत्रं त्रिफलां कुर्यादर्धपलोन्मितान् ॥
पक्वं यष्ट्याह्वकल्केन घृतं स्याद्व्रणरोपणम् ॥

दारुहल्दीकी छाल, मुलैठी, लोध, नागकेसर, पटोलपत्र, हर्र, बहेड़ा और आमला । हरेक २॥–२॥ तोले लेकर २ सेर पानीमें पकावें, जब आधा सेर पानी रह जाय तो छान लें । इसमें १० तोले घी और १ तोले ८ माशे मुलैठीका कल्क मिलाकर काथ जलने तक पुनः पकावें ।

इस घी के लगाने से व्रण भरजाते हैं ।

नोट—उपरोक्त सब चीजोंका काथ न बनाकर कल्क डालने से अधिक गुणकारी होगा। उस दशामें २ सेर घी और ८ सेर पानी मिलाकर पकाना चाहिये ।

(३०६२) **दुरालभाद्यं घृतम्**

(च. सं. । चि. अ. ८)

दुरालभां श्वदंष्ट्रांश्च चतस्रः पर्णिनीर्बलाम् ।
भागान्पलोन्मितान् कृत्वा पलं पर्पटकस्य च ॥
पचेद्दशगुणे तोये दशभागावशेषिते ।
रसे सुपूते द्रव्याणामेषां कल्कान्समावपेत् ॥
शठ्याः पुष्करमूलस्य पिप्पलीत्रायमाणयोः ।
तामलक्याः किराताना तिक्तस्य कुटजस्य च ॥
फलानां शारिवायाश्च सुपिष्टान् कर्षसम्मितान्।
ततस्तेन घृतप्रस्थं क्षीरद्विगुणितं पचेत् ॥
ज्वरं दाहं भ्रमं कासमंसपार्श्वशिरोरुजम् ।
तृष्णां छर्दिमतीसारमेतान्सर्पिरपोहति ॥

काथ—धमासा, गोखरु, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, पित्तपापड़ा और खरैटी । सब चीजें ५–५ तोले लेकर १० सेर पानी में पकावें और १ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—शठी (कचूर), पोखरमूल, पीपल, त्रायमाना, भुईआमला, चिरायता, पटोलपत्र, इन्द्रजौ, और सारिवा । हरेक चीज १।–१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पत्थर पर पीसलें ।

विधि—२ सेर घी, ४ सेर दूध, उपरोक्त काथ और कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें ॥

यह घृत ज्वर, दाह, भ्रम, खांसी, कन्धोंकी पीड़ा, पसलीका दर्द, शिरशूल, तृष्णा, छर्दि, और अतिसारको नष्ट करता है ।

(मात्रा १ से २ तोले तक ।)

(पाककी उत्तमताके लिये ८ सेर पानी भी डालना चाहिये ।)

(३०६३) **दूर्वादिघृतम्** (१)

(ग. नि. । विसर्प.)

दूर्वास्वरससिद्धञ्च घृतं स्याद्व्रणरोपणम् ।

दूबके स्वरसके साथ पका हुवा घृत लगानेसे व्रण (घाव) भर जाते हैं ।

(दूबका स्वरस ४ सेर, पानी ४ सेर, घी १ सेर ।)

दूर्वादिघृतम् (२)

(वृं. मा.; वं. से. । आगन्तुक व्रण; वृ. यो. त. । त. ११२; भै. र.; च. द. । व्रणशोथ ।)

दूर्वादि तैल सं. ३१०८ देखिये ।

(३०६४) **दूर्वादिघृतम्** (३)

(वृ. नि. र.; यो. र. । विसर्प.)

दूर्वावटोदुम्बरजम्बुशाल
सप्तच्छदाश्वत्थकषायकल्कैः ।
सिद्धो विसर्पज्वरदाहपाक
विस्फोटशोफान्विनिहन्ति सर्पिः ॥

दूर्वा (दूब घास), बड़ की छाल, गूलरकी छाल जामन की छाल, सालकी छाल, सतवन (सतौना) की छाल और पीपल वृक्षकी छालके काथ और कल्क से सिद्ध घृत ज्वर, दाह, पाक, विस्फोटक और शोफ युक्त विसर्पको नष्ट करता है।

(विधि—कषाय के लिए सब चीजें समान भाग मिलाकर १॥ सेर लें और १२ सेर पानीमें पकाकर ३ सेर शेष रक्खें। कल्कके लिए सब चीजें समान भाग मिश्रित १० तोले लेकर पानी के साथ पीसलें। काथ, कल्क और ६० तोले घीको एकत्र मिलाकर पकावें।)

(३०६५) दूर्वाद्यं घृतम्

(भै. र.; वं. से.; यो. र.; वृं. मा.; च. द.; भा. प्र.। रक्तपित्त.; वृ. यो. त.। त. ७५.; ग. नि.। घृता.; यो. त.। त. २६;

दूर्वासोत्पलकिञ्जल्कमञ्जिष्ठासैलवालुकम्।
मूर्वालोध्रमुशीरञ्च मुस्तं चन्दनपद्मकम्॥
द्राक्षामधुकपथ्या च काश्मरी चन्दनं सितम्।
एतैः पिष्टं कर्षमात्रैर्घृतमस्थं विपाचयेत्॥
अजाक्षीरं तण्डुलाम्बु पृथक् दत्त्वा चतुर्गुणम्।
तत्पानं वमतो रक्तं नावनं नासिकागते॥
कर्णाभ्यां यस्य गच्छेत्तु तस्य कर्णौ प्रपूरयेत्।
चक्षुः स्राविणी रक्ते च पूरयेत्तेन चक्षुषी॥
मेढ्रपायुप्रवृत्ते च तत्कर्मसु तद्धितम्।
रोमकूपप्रवृत्ते च तदभ्यङ्गे प्रयोजयेत्॥

दूब घास, नीलोत्पल (नीलकमल), नागकेसर, मजीठ, एलवालु, मूर्वा, लोध, खस, मोथा, लालचन्दन, पद्माक, दाख, मुलैठी, हर्र, खम्भारीके फल और सफेद चन्दन। हरेक चीज १।—१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पीस लें फिर २ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर बकरीका दूध तथा ८ सेर तण्डुलोदक (चावलोंका पानी) मिलाकर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

यह घृत हर प्रकार के रक्तपित्तको नष्ट करता है। यदि रक्त की उल्टी होती हो तो यह घी पिलाना चाहिए; नाकसे रक्त निकलता हो तो इसे नाकमें डालना चाहिए, कानोंसे रक्त आता हो तो इसे कानों में भरना चाहिये, यदि आंखों से रक्तस्राव होता हो तो आंखोंमें भरना चाहिये, यदि गुदा या लिंगसे खून आता हो तो इससे बस्ति और उत्तरबस्ति करानी चाहिये और यदि रोमकूपोंसे रक्त स्राव होता हो तो शरीरपर इसकी मालिश करानी चाहिए।

(खाने के लिये मात्रा—२ तोले। बकरीके गर्म करके ठंडे किये हुवे दूधके साथ।)

(३०६६) देवदार्वादिघृतम्

(हा. सं.। स्था. ३ अ. ४४)

देवदारु रजनीघनं सठी पुष्करं कुटजबीजमागधी
कुष्ठरोध्रचविकायवासकं क्वथितं च पुनरेव विस्तृतम्॥
तत्र गुग्गुलु विनिक्षिपेत् पुनः शुण्ठिसैन्धवफलत्रिकं हितम्।
चूर्णितं दधिपयोविमिश्रितं पाचितं च नवनीतकं च तत्॥
सिद्धमेव विदधीत शीतलं शर्करायुतमिदं तु नस्यकम्।

तण्डुलोदक बनानेकी विधि भा. भै. र. प्रथम भाग पृष्ट ३५३ पर देखिये।

नस्यकर्मशिरसोरुजापहं भ्रूललाटभुजशङ्खमूलकम् ॥
शीर्षरोगमपि चार्धशीर्षकं तोदने च विहिते न केवलम् ।
कर्णरोगमपि वारयत्यपि देवदारुजघृतंपरंस्मृतम् ॥

क्वाथ—देवदारु, हल्दी, नागरमोथा, सठी (कचूर), पोखरमूल, इन्द्रजौ, पीपल, कूठ, लोध, चव, और जवासा । सब समान भाग मिलाकर २ सेर लें और १६ सेर पानीमें पकावें जब ४ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—गूगल, सोंठ, सेंधा, हर्र, बहेड़ा और आमला सब समान भाग मिलाकर २० तोले लें और पानीके साथ पीसलें ।

विधि—कल्क, क्वाथ, २ सेर नवनीत (दहीका मक्खन), २ सेर दूध और ४ सेर दही एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर ठण्डा करके उसमें (आधा सेर) खांड मिलावें ।

इसकी नस्य लेनेसे शिरपीड़ा, शिरके अन्य रोग, भ्रू ललाट भुज और शङ्ख प्रदेशकी पीड़ा, आधासीसी, और कर्णरोग नष्ट होते हैं ।

(३०६७) देवदार्वाद्यं घृतम्

(वं. से. । पाण्डु.)

देवद्रुत्रिफलाव्योषवृश्चिकालीद्वयोरजः ।
हरिद्रे चित्रकं भार्गी पाठे द्वे च पुनर्नवा ॥
विडङ्गं पिप्पली लोध्रं पचेन्मूत्रचतुर्गुणे ।
घृतं तत्पाण्डुहृद्रोगग्रहणीगुददोषनुत् ॥

देवदारु, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, वृश्चिकाली (विछाटी), लोह चूर्ण, हल्दी, दारु हल्दी, चीता, भारंगी, दो प्रकारका पाठा, पुनर्नवा (बिसखपरा), बायबिडंग, पीपल और लोध । सब चीजें समान भाग मिलाकर २० तोले लें और पानीके साथ पीसकर कल्क बनावें तत्पश्चात् इस कल्क और ८ सेर गोमूत्र के साथ २ सेर घृत पकावें ।

यह घृत पाण्डु, हृद्रोग, ग्रहणी और अर्शादि गुदरोगों को नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ से २ तोलेतक ।)

नोट—इसमें पाकके समय फेन अधिक आएंगे इसलिये बड़े बरतनमें पकावें ।

(३०६८) द्राक्षाघृतम् (१)

(च. सं. । चि. अ. २०; च. द. । पाण्डु.; ग. नि.[1] । घृता.)

पुराणसर्पिषःप्रस्थो द्राक्षार्द्धप्रस्थसाधितः ।
कामलागुल्मपाण्ड्वर्तिज्वरमेहोदरापहः ॥

पुराना घी २ सेर, दाख (मुनक्का) का कल्क (बीज रहित और पत्थर पर पिसा हुवा) आधा सेर (तथा पानी ८ सेर) लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें ।

यह घृत कामला, गुल्म, पाण्डु, ज्वर, प्रमेह और उदररोगोंको नष्ट करता है ।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक ।)

(३०६९) द्राक्षाघृतम् (२)

(वै. क. द्रु. । स्क. २ राजय.; यो. र.; वं. से. । क्षत.; भा. प्र. । ख. २ उरःक्षत; ग. नि. । घृता.; वृ. यो. त. । त.७७; यो. त. । त. २८)

[1] गदनिग्रहमें श्लोक भिन्न है, प्रयोग वही है ।

द्राक्षायाः संमतं प्रस्थं मधुकस्य पलाष्टकम् ।
पचेत्तोयाढके[१] सिद्धे पादशेषेण तेन तु ॥
पलिके मधुकद्राक्षे पिष्टे कृष्णापलद्वयम् ।
प्रदाय सर्पिषः प्रस्थं पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ॥
सिद्धे शीते पलान्यष्टौ शर्करायाः प्रदापयेत् ।
एतद्द्राक्षाघृतं सिद्धं क्षतक्षीणे सुखावहम् ॥
वातपित्तज्वरश्वासविस्फोटकहलीमकान् ।
प्रदरं रक्तपित्तं च हन्यान्मांसबलप्रदम् ॥

दाख १ प्रस्थ (१ सेर–८० तोले) और मुलैठी ८ पल (४० तोले), लेकर दोनोंको ८ सेर पानीमें पकावें। जब दो सेर पानी रह जाय तो छान लें। फिर यह क्राथ, २ सेर घी, ८ सेर दूध और १–१ पल मुलैठी और दाखका, तथा २ पल (१० तोले) पीपलका कल्क एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान-कर ठण्डा करके उसमें ८ पल खाण्ड मिलावें।

यह द्राक्षाघृत क्षत और क्षीण मनुष्योंके लिए हितकारी तथा वात-पित्तज्वर, श्वास, विस्फोटक, हलीमक, प्रदर और रक्तपित्त नाशक एवं मांस और बल वर्द्धक है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक। अनुपान—दूध।)

(३०७०) द्राक्षादिघृतम् (१)

(र. र.; वृ. नि. र.; यो. र.; वं. से; ग. नि.; वृं. मा.; च. द. । अम्लपि.; यो. त. । त. १२२)[१]

द्राक्षाभयाशक्रपटोलपत्रैः सोशीरधात्रीयवचन्दनैश्च ।
त्रायन्तिकापद्मकिरातधान्यैः कल्कैःपचेत्सर्पिरुपेतमेभिः ॥
भुञ्जीत मात्रां सह भोजनेन सर्वर्तुपानेऽमृतोपमं च ।
बलासपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां कासाग्निसादं ज्वरमम्लपित्तम् ॥
सर्वं निहन्याद् घृतमेतदाशु सम्यक् प्रयुक्तं ह्यमृतोपमं च ॥

दाख (मुनक्का), हर्र, इन्द्रजौ, पटोलपत्र, खस, आमला, जौ, सफेद चन्दन, त्रायमाना, पद्माक (या कमल), चिरायता और धनिया समान भाग मिलाकर २० तोले लें और पत्थर पर पानीकी सहायता से पीसकर कल्क बनावें। तत्पश्चात् २ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर पानी जलने तक पकावें।

इसे भोजनके साथ खिलानेसे ग्रहणी, खांसी अग्निमांद्य, ज्वर, अम्लपित्त, और कफपित्तज रोग नष्ट होते हैं। यह सभी ऋतुओंमें सेवन किया जा सकता है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक।)

(३०७१) द्राक्षादिघृतम् (२)

(च. सं. । चि. अ. ५; यो. र.; वृ. नि. र.; वृं. मा.; धन्व.; ग. नि.; र. र.; वा. भ.; वं. से. । गुल्माधिकार.)

द्राक्षां मधुकं खर्जूरं विदारीं सशतावरीम् ।
परूषकाणि त्रिफलां साधयेत् पलसम्मिताम् ॥

---

१ तोयमर्मणेति पाठान्तरम् ।

१ रसरत्नाकरमें श्लोकभिन्नहैं तथा हर्रके स्थानमें गिलोय लिखी है। शेष प्रयोग समान है।

२ घनेतिपाठान्तरम् ।

जलाढके पादशेषे रसमामलकस्य च ।
घृतमिक्षुरसं क्षीरमभयाकल्कपादिकम् ॥
साधयेत्तं घृतं सिद्धं शर्कराक्षौद्रपादिकम् ।
प्रयोगात् पित्तगुल्मघ्नं सर्वपित्तविकारनुत् ॥

दाख (मुनक्का), मुलैठी, खजूर, बिदारीकन्द, शतावरी, फालसा (फल), हर्र, बहेड़ा तथा आमला १-१ पल (५-५ तोले) लेकर सबको ८ सेर पानीमें पकावें। जब २ सेर पानी शेष रहे तो छान लें, फिर यह क्वाथ, २ सेर आमलेका रस, २ सेर ईखका रस और २ सेर दूध, तथा २ सेर घी और २० तोले हर्रका कल्क लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छानकर ठण्डा करलें और उसमें २०-२० तोले मिश्री तथा शहद मिलाकर रक्खें।

यह घृत पित्तज गुल्म और अन्य समस्त पित्तज रोगोंको नष्ट करता है।

(मात्रा-१ से २ तोले तक ।)

(३०७२) **द्राक्षादिघृतम्** (३)

(च. सं. । चि. अ. २६)

द्राक्षाबलाश्रेयसिशर्कराभिः
खर्जूरवीरर्षभकोत्पलैश्च ।
काकोलिमेदायुगजीवकैश्च
क्षीरे च सिद्धं महिषीघृतं स्यात् ॥

(१) द्राक्षा (मुनक्का), खरैटी, गजपीपल और मिश्री।

(२) खजूर, काकोली (अभावमें असगन्ध), ऋषभक (अभावमें विदारीकन्द), और कमल।

(३) काकोली, मेदा, महामेदा (दोनोंके अभावमें शतावर) और जीवक (अभावमें विदारीकन्द)।

इन तीनों प्रयोगोंमें से किसी के कल्क और गायके दूधके साथ भैंसका घी पका लीजिये। यह घृत पित्तज हृद्रोगको नष्ट करता है।

(घी २ सेर, दूध ८ सेर, कल्क २० तोले ।)

(३०७३) **द्राक्षादिघृतम्** (४)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १०)

मृद्वीका मधुकं विदारि वसुधा नीली समङ्गा फला ।
काकोल्यौ बृहतीयुगं वृषसहामेदा सितं चन्दनम् ॥
जातीपल्लवनिम्बपल्लवशिवा श्यामामृता जीवकौ।
मेदे द्वे भृगु चन्दनं मधुरसा श्यामा समांशास्त्वमी ॥
पक्त्वा गोपयसा दर्वी च तुलितं चाज्यं चतुर्थांशकं ।
मत्स्यण्डीमधुरं च सिद्धमिति चेत् पानं प्रशस्तं नृणाम् ॥
स्त्रीणां चापि हितं निहन्ति रुधिरं पित्तं गुदे वा भगे ।
मेढ्रे चापि च रोमकूपकपथे वृत्तं निहन्त्यस्त्रजम् ॥
एतद् द्राक्षाभिधानं घृतमपि विहितं रक्तपित्ते ज्वरे वा ।
वातासृग्योनिशूले भ्रमदशिरसोऽस्माद्रक्तप्रमेहे ॥
पित्तासृग्जातकुष्ठे क्षयक्षतरुधिरे राजयक्ष्मादिपाण्डौ ।
पाने वस्तौ च नस्ये हितमपि मधुरं [illegible] ॥

मुनक्का, मुलैठी, बिदारीकन्द, खजूर, नील, मजीठ, इन्द्रायन, काकोली, क्षीरकाकोली, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, बासा, पियाबांसा, मेदा, सफेद चन्दन, चमेलीके पत्ते, नीमके पत्ते, हर्र, काला निसोत, गिलोय, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, भरंगी, लाल चन्दन, मुनक्का और नील-दूर्वा; सब चीजें समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर पानीके साथ पीसकर कल्क बनावें । फिर यह कल्क, २ सेर गायका घी, ८ सेर गायका दूध और ८ सेर गायका दही लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब दूध इत्यादि जल जाय तो घृतको छानलें ।

इसे मिसरीसे मीठा करके पीना चाहिये । यह घृत स्त्री और पुरुष दोनोंकेलिये हितकारी है ।

इसके सेवनसे गुदा, भग, मेढ़ और रोमकूपोंसे निकलने वाला रक्तपित्त भी नष्ट हो जाता है।

इसके अतिरिक्त यह घृत ज्वर, वातरक्त, योनिशूल, भ्रम, मद, उन्माद, रक्तप्रमेह, पित्तज और रक्तज कुष्ठ, क्षय, क्षत, राजयक्ष्मा और पाण्डु को भी नष्ट करता है ।

यह घृत रोगीको पिलानेके अतिरिक्त बस्ती और नस्य में भी प्रयुक्त करना चाहिये ।

(पाककी उत्तमताके लिये इसमें ८ सेर पानी भी डालना चाहिये ।)

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(३०७४) द्राक्षादिघृतम् (५)

(च. सं. । चि. स्था. अ. २९; वा. भ. । चि.. अ. २२

द्राक्षा मधूकतोयाभ्यां सिद्धं वा ससितोपलम् ।
घृतं पिबेत्तथा क्षीरं गुडूचीस्वरसे शृतम् ॥

दाख और मुलैठी (या महुवेके फूलों) के काथके साथ घृत पकाकर उसमें मिश्री मिलाकर सेवन करनेसे या गिलोयके स्वरसके साथ दूध पकाकर सेवन करनेसे वातरक्त नष्ट होता है ।

(३०७५) द्राक्षाद्यं घृतम्

(वं. से. । नेत्र.; ग. नि.[१] । परिशिष्ट घृता. ।

द्राक्षाचन्दनमञ्जिष्ठाकाकोलीद्वयजीरकैः ।
सिताशतावरीमेदापुण्ड्राक्षमधुकोत्पलैः ॥
पचेज्जीर्णं घृतप्रस्थं समक्षीरं विचूर्णितैः ।
हन्ति तच्छुक्रतिमिरं रक्तराजीं शिरोरुजम् ॥

दाख, सफेद चन्दन, मजीठ, काकोली, क्षीरकाकोली, जीरा, मिश्री शतावर, मेदा (अभावमें शतावर), कमलगट्टा, मुलैठी और कमल के कल्क तथा समान भाग दूधके साथ पुराना घृत पकाकर सेवन करनेसे आँखोंका फूला, तिमिर, लाल रेखाएं और शिर पीड़ा नष्ट होती है ।

(विधि—कल्ककी सब चीजें समान भाग मिली हुई २० तोले, दूध २ सेर, पानी ८ सेर, घी २ सेर । सबको एकत्र मिलाकर पकावें ।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक ।)

---

१ गदनिग्रहमें श्लोक भिन्न है तथा चन्दन, शतावर और मेदा नहीं लिखी तथा राजादन (खिरनी) अधिक लिखी है एवं पुण्ड्राक्ष की जगह पुण्डरीक और जीरककी जगह जीवक पाठ है ।

(३०७६) **द्विपञ्चमूल्यादिघृतम्**

(च. सं. । चि. स्था. अ. १९; वं. से. । ग्र.)

द्वे पञ्चमूले सरलं देवदारु सनागरम् ।
पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रकं हस्तिपिप्पलीम् ॥
शणबीजं यवान्कोलान् कुलत्थान् सुरभी तथा ।
पाचयेदारनालेन दध्ना सौवीरकेण वा ॥
चतुर्भागावशेषेण पचेत्तेन घृताढकम् ।
स्वर्जिकायावशूकाख्यौ क्षारौ दत्त्वा च युक्तितः॥
सैन्धवोद्भिदसामुद्रविडानां रोमकस्य च ।
ससौवर्चलपाक्यानां भागान् द्विपलिकान् पृथक्॥
विनीय चूर्णितान् सिद्धो तत्तो द्वे द्वे पले पिबेत् ।
करोत्यग्निं बलं वर्ण्यं वातघ्नभुक्तपाचनम् ॥

दशमूल, चीर, देवदारु, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चीता, गजपीपल, सनके बीज, जौ, बेर, कुलथ, और शल्लकी वृक्ष (शाल विशेष) की छाल समान भाग मिलाकर १६ सेर लें और सबको अधकुटा करके १२८ सेर आरनाल, सौवीरक या दही में पकावें जब ३२ सेर शेष रह जाय तो छानलें और उसमें ८ सेर घी तथा १०-१० तोले सज्जी खार, यवक्षार, सेंधा, उद्भिद् लवण, समुद्रलवण, विडनमक, रोमकलवण, सञ्चलनमक और शोरा का कल्क मिलाकर काथ जलने तक पकावें ।

इसे १० तोलेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे अग्नि तीव्र होती है । यह बल वर्ण वर्द्धक और पाचक है ।

(व्यवहारिक मात्रा १ से २ तोले तक ।)

(३०७७) **द्विपञ्चमूलाद्यं घृतम् (१)**

(वं. से. । कास.)

द्विपञ्चमूलीत्रिफलाभार्गीशुण्ठीसचित्रकैः ।
कुलित्थपिप्पलीमूलपाठाकोलयवैर्जले ॥
शृते नागरदुःस्पर्शशठीपिप्पलीपौष्करैः ।
कल्कैः कर्कटशृङ्ग्या च समैः सर्पिर्विपाचयेत् ॥
सिद्धेऽस्मिंश्चूर्णितौ क्षारौ द्वौ पञ्चलवणानि च ।
दत्त्वा युक्त्या पिबेन्मात्रां क्षयकासनिपीडितः ॥

क्वाथ—दशमूलकी हरेक चीज, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), भारंगी, सोंठ, चीता, कुलथ, पीपलामूल, पाठा, बेर और जौ; सब चीजें समान भाग मिलाकर ४ सेर लें और ३२ सेर पानीमें पकाकर ८ सेर शेष रक्खें ।

कल्क—सोंठ, धमासा, कचूर, पीपल, पोखरमूल, और काकड़ासिंगी; सब चीजें समान भाग मिली हुई १३ तोले ४ माशे लेकर पत्थर पर पानीके साथ पीसलें ।

विधि—क्वाथ, कल्क और २ सेर घी एकत्र मिलाकर पकावें जब क्वाथ जल जाय तो घीको छानलें और ठण्डा करके उसमें जवाखार, सज्जी खार और पांचों नमक का चूर्ण (२॥ तोले) मिला दें ।

यह घृत क्षयकी खांसीको नष्ट करता है ।
(मात्रा—६ माशेसे १ तोले तक ।)

(३०७८) **द्विपञ्चमूलाद्यं घृतम् (२)**

(ग. नि. । घृता.)

द्वे पञ्चमूल्यौ त्रिवृत्त्रिकुम्भे
ससप्तपलं चित्रकशिग्रुमूलम् ।
कुरण्टबीजं त्रिफलां गुडूची-
मेरण्डमूलं मदयन्तिका च ॥
पाठां सभार्गीं सुषवीं सनीलां
सरोहिषां पापकुचेलिकाञ्च ।

पृथक् पृथक् पञ्चपलं जलस्य
द्रोणे पचेत्तच्चतुरंशशेषम् ॥
घृतं विपक्वं सकषायकल्कं
निहन्ति पीतं सकलोदराणि ॥

दशमूल, निसोत और दन्तीमूल ७-७ पल (हरेक ३५ तोले); चीता, सहंजनेकी जड़की छाल, इन्द्रजौ, हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, अरण्डकी जड़, सेवती, पाठा, भारंगी, कलौंजी, नीलवृक्ष, मिर्चियागन्ध, और पाठा; हरेक २५ तोले लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब चौथा भाग शेष रहे तो छानलें। तत्पश्चात् २ सेर घीमें यह क्वाथ और इन्हीं चीजोंका १३ तोले ४ माशे कल्क. मिलाकर पकावें।

यह घृत समस्त उदर रोगोंको नष्ट करता है।

नोट—१—पाठा दो जगह आया है इसलिये दूना लेना चाहिये।

२—दशमूलकी हरेक चीज अलग अलग ७ पल लेनेसे क्वाथ्य द्रव्योंका परिमाण बहुत अधिक हो जाता है इसलिये दशों चीजें मिलाकर ७ पल लेनी चाहियें।

इति दकारादिघृतप्रकरणम् ।

अथ दकारादितैलप्रकरणम्

सूचना—प्रयोगमें जहां केवल 'तैल' शब्द लिखा हो वहां तिलतैल लेना चाहिये।

(३०७९) दध्यादितैलम्

(ग. नि. । उदर.)

दध्यारनालकोलाम्बुकुलत्थयवजैः रसैः ।
प्रत्येकमाढकमितैस्तिलतैलाढकं पचेत् ॥
बलापुनर्नवायष्टीरास्नानागरदारुभिः ।
साश्वगन्धैः पलार्धांशैस्तत्पिबेत्पवनोदरी ॥

दही, काञ्जी, बेरका क्वाथ, कुलथका क्वाथ और जौ का क्वाथ ८-८ सेर, तिलका तैल ८ सेर तथा खरैटी, पुनर्नवा, मुलैठी, रास्ना, सोंठ, देवदार और असगन्धका २॥-२॥ तोले कल्क एकत्र मिलाकर पकावें। जब तैलमात्र शेष रह जाय तो छानलें।

यह तैल वातोदरको नष्ट करता है।

(३०८०) दन्त्याद्यं तैलम्

(वं. से. । अर्शो.)

दन्त्यश्वमारकासीसविडङ्गैलाग्निसैन्धवैः ।
सार्कक्षीरैः पचेत्तैलमभ्यङ्गात्पायुकीलनुत् ॥

दन्तीमूल, कनेरकी जड़, कसीस, बायबिडंग, इलायची, चीता और सेंधा नमक समान भाग मिलाकर २० तोले लें और पत्थरपर पानीके साथ पीसकर कल्क बनालें। फिर इस कल्क, २ सेर आकके दूध और ८ सेर पानी को २ सेर सरसोंके

तैलमें मिलाकर पकावें । जब सब पानी जल जाय तो तैलको छानलें ।

इस तैलकी मालिशसे गुदाके मस्से नष्ट हो जाते हैं ।

(नोट—कोई कोई वैद्य आकका दूध भी दन्तीमूलादिके बराबर लेते हैं ।)

(३०८१) दशनफलादितैलम्

(वै. म. र. । प. ११)

दशनफलमवन्तिसोमके किञ्चिदुत्कथितशोधिते शृतम् ।
तीक्ष्णकल्कसहितं विनाशयेत्तैलमर्भककपालजान् गदान् ॥

अनारके फलोंको जरा देर काञ्जीमें पकाकर निकाल लीजिये और फिर उन्हें ८ गुने पानी में पकाकर छान लें । तत्पश्चात् उसमें उससे चौथाई भाग तिलका तैल और तैलका चौथा भाग यवक्षार मिलाकर पकाइये ।

इस तैलकी मालिशसे बच्चोंके शिरके रोग नष्ट होते हैं ।

(३०८२) दशपाकबलातैलम्

(वं. से.; वृ. मा.; वृ. नि. र.; च. द.; ग. नि । वातरक्ता.)

बलाकषायकल्काभ्यां तैलं क्षीरचतुर्गुणम् ।
दशपाकं भवेत्तेन वातासृग्वातपित्तनुत् ॥
धन्यं पुंसवनञ्चैव नराणां शुक्रवर्द्धनम् ।
रेतोयोनिविकारघ्नमेतद्वातविकारनुत् ॥

खरैंटी का काथ ८ सेर, तैल २ सेर और दूध ८ सेर तथा खरैंटीका कल्क २० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब तैल मात्र शेष रह जाय तो उसको छान लें और फिर उसमें दुबारा उपरोक्त क्काथ, कल्क तथा दूध मिलाकर पकावें । इसी प्रकार इन्हीं चीजोंसे दश बार पकावें।

यह तैल वातरक्त, वातपित्त, शुक्रदोष और योनिदोष नाशक तथा शुक्रवर्द्धक है ।

(३०८३) दशमूलतैलम् (बृहद्) १.

(धन्व.; भै. र. । शिरो.)

दशमूलीशतं ग्राह्यं तथा धत्तूरकस्य च ।
शतं पुनर्नवायाश्च निर्गुण्ड्याश्च शतं तथा ॥
एतैः कषायैर्विपचेत् कटुतैलाढकं भिषक् ।
वासा वचा देवदारु शठी रास्ना सयष्टिका ॥
मरिचं पिप्पली शुण्ठी कारवी कट्फलं तथा ।
करञ्जशिग्रुकुष्ठं[१] च चिश्वा च वनशिम्बिका ॥
चित्रकं च पृथग्भागान् दत्त्वा चैषां पलोन्मितान् ।
श्लैष्मिकं सन्निपातोत्थं वातश्लेष्मभवं तथा ॥
कर्णशूलं शिरःशूलं नेत्रशूलं च दारुणम् ।
निहन्ति दशमूलाख्यं तैलमेतन्न संशयः ॥

क्काथ—(१) दशमूल १०० पल (हरेक १० पल—५० तोले), पानी ३२ सेर, शेष क्काथ ८ सेर । (२) धतूरेका पञ्चाङ्ग १०० पल, पानी ३२ सेर, शेष क्काथ ८ सेर । (३) पुनर्नवा (साठी) १०० पल, पानी ३२ सेर, शेष क्काथ ८ सेर । (४) संभालु १०० पल, पानी ३२ सेर, शेष क्काथ ८ सेर ।

कल्क—बासा, बच, देवदारु, सठी (कचूर), रास्ना, मुलैठी, काली मिर्च, पीपल, सोंठ, कलौंजी, कायफल, करञ्जबीज, संहजनेकी

१ लवलीति पाठान्तरम् ।

छाल, कूठ, इमलीकी छाल, बनसेम और चीता; हरेक ५-५ तोले ।

विधि—८ सेर सरसोंके तैलमें उपरोक्त चारों क्वाथ और यह कल्क मिलाकर क्वाथ जलने तक पकावें ।

यह तैल, कफज, सन्निपातज, और वात-कफज भयङ्कर शिरशूल, नेत्रशूल, और कर्णशूलको अवश्य नष्ट कर देता है ।

(३०८४) **दशमूलतैलम्** (महा) (२)
(धन्व.; भै. र. । शिरो.)

दशमूलपलशतं जलद्रोणे विपाचयेत् ।
तेन पादावशेषेण कटुतैलाढकं पचेत् ॥
जम्बीरार्द्रकधत्तूरस्वरसं तैलतुल्यतः ।
कल्कः कणामृता दार्वी शतपुष्पा पुनर्नवा ॥
शिग्रु पिप्पलिका तिक्ता करञ्जं कृष्णजीरकम् ।
सिद्धार्थकं वचा शुण्ठी पिप्पली चित्रकं शठी ॥
देवदारु बला रास्ना सूर्यावर्त्तककट्फलम् ।
निर्गुण्डी चविका गैरी ग्रन्थिकं शुष्कमूलकम् ॥
यवानी जीरकं कुष्ठमजमोदा च ताडकम् ।
एतेषां पलिकैर्भागैर्विपचेन्मतिमान् भिषक् ॥
हन्ति श्लेष्माणमभ्यङ्गात् पानात्कासं व्यपोहति
निहन्ति विविधान् व्याधीन् कफवातसमुद्भवान्॥
शिरोमध्यगतान् रोगान् शोथान् हन्ति व्रणानपि ॥

क्वाथ—१०० पल (६। सेर) दशमूलको ३२ सेर पानीमें पकाकर ८ सेर पानी शेष रक्खें ।

अन्य द्रव पदार्थ—जम्भीरी नीबूका रस ८ सेर, अदरकका रस ८ सेर तथा धतूरेका स्वरस ८ सेर ।

कल्क—पीपल, गिलोय, दारुहल्दी, सौंफ, पुनर्नवा (बिसखपरा), संहजनेकी छाल, पीपल, कुटकी, करञ्जबीज, कालाजीरा, सफेदसरसों, बच, सोंठ, पीपल, चीता, सठी (कचूर), देवदारु, खरैटी, रास्ना, हुलहुल, कायफल, निर्गुण्डी (संभालु), चव, कलियारी (लांगली), पीपलामूल, सूखी मूली, अजवायन, जीरा, कूठ, अजमोद और बिधारेके बीज; सब चीज़ें ५-५ तोले लेकर पानीके साथ पत्थर पर पिसवा लीजिये ।

विधि—क्वाथ, कल्क, समस्त द्रव पदार्थ और ८ सेर सरसोंका तैल एकत्र मिलाकर पकावें जब तैल मात्र शेष रह जाय तो छान लें । इसकी मालिशसे कफ और इसे पीनेसे खांसी नष्ट होतीहै । इसके अतिरिक्त यह कफवातज अनेकों रोग, शोथ, व्रण और शिर तथा मध्य शरीरके रोगोंको भी नष्ट करता है ।

(३०८५) **दशमूलतैलम्** (स्वल्प) (३)
(धन्वन्तरि; भै. र । शिरो.)

दशमूलक्वाथकल्काभ्यां कटुतैलं विपाचयेत् ।
सन्निपातज्वरश्वासकासं हन्ति सुदारुणम् ॥

दशमूलका क्वाथ ८ सेर, दशमूलका कल्क १३ तोले ४ माशे और सरसोंका तैल २ सेर लेकर एकत्र मिलाकर क्वाथ जलने तक पकावें ।

यह तैल सन्निपात ज्वर, श्वास और भयङ्कर खांसीको नष्ट करता है ।

सूचना—क्वाथ बनानेके लिए ४ सेर दशमूलको ३२ सेर पानीमें पकाकर ८ सेर शेष रक्खें ।

(३०८६) **दशमूलतैलम्** (४)
(भै. र. । शिरो.)

दशमूलकाथकल्काभ्यां तैलप्रस्थं विपाचयेत् ।
चतुर्गुणं पयो दत्त्वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥
दशमूलमिति ख्यातं शोथं हन्ति सुदारुणम् ॥

४ सेर दशमूलको ३२ सेर पानीमें पकाकर ८ सेर शेष रहने पर छान लें । फिर २ सेर तैलमें यह क्वाथ और ८ सेर दूध तथा २० तोले दशमूलका कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब तैल मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

यह 'दशमूल तैल' भयङ्कर शोथको भी नष्ट कर देता है ।

(३०८७) **दशमूलतैलम्** (५)
(भै. र. । शिरो.)

दशमूलकाथकल्काभ्यां निर्गुण्डीरससंयुतम् ।
कटुतैलं समादाय पचेत्प्रस्थं भिषग्वरः ॥
सन्निपातं हरेदेवच्छिरोरोगं न संशयः ॥

२ सेर दशमूलको १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें । तत्पश्चात् उसमें २० तोले दशमूलका कल्क तथा ४ सेर संभालुका रस और २ सेर सरसोंका तैल मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

यह तैल सन्निपातज शिरोरोगको अवश्य नष्ट करता है ॥

(३०८८) **दशमूलतैलम्** (६) (मध्यम)
(धन्व.; भै. र. । शिरो.)

दशमूली करञ्जश्च निर्गुण्डी च जयन्तिका ।
धत्तूरः षट्पलान् भागान् जलद्रोणे विपाचयेत्॥
पादशेषे रसे तैलं कटुप्रस्थं विपाचयेत् ।
तत्कल्कान् दापयेत्तत्र भागान् षट्तोलकान् पृथक् ॥
वातश्लेष्मसमुद्भूतं शिरोरोगं व्यपोहति ।
कासं पञ्चविधं शोथं जीर्णज्वरमपोहति ॥
दशमूलमिदं तैलं शिरकर्णाक्षिरोगनुत् ।
मन्यास्तम्भमन्त्रवृद्धिं श्लीपदं च विनाशयेत् ॥
दशमूलमिदं तैलमश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥

क्वाथ—दशमूल, करञ्ज-बीज, संभालु, जयन्ती और धतूरा ६-६ पल (३०-३० तोले) लेकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—दशमूल, करञ्जबीज, संभालु, जयन्ती और धतूरा । हरेक ६-६ तोले लेकर पानीके साथ पिसवा लें ।

विधि—क्वाथ, कल्क और २ सेर सरसोंके तेलको एकत्र मिलाकर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो तैलको छान लें ।

यह तैल वातकफज शिरोरोग, पांच प्रकारकी खांसी, शोथ, जीर्णज्वर, मन्यास्तम्भ, अन्त्र वृद्धि, श्लीपद और कान, आंख तथा शिरके रोगोंको नष्ट करता है ।

(३०८९) **दशमूलतैलम्** (७)
(धन्व.; भै. र.; र. र. । शिरो.)

दशमूलीकषायेण अष्टाङ्गकल्कसंयुतम् ।
क्षीरं च द्विगुणं दत्त्वा तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
शिरोर्त्तिं नाशयेदेतद्भास्करस्तिमिरं यथा ।
वातशूलं पित्तशूलं कफशूलं त्रिदोषजम् ॥

दशमूलमिदं तैलं शिरोरोगनिषूदनम् ।
सूर्यावर्त्तमभिष्यन्दं जलदोषं च नाशयेत् ॥

सरसोंका तैल २ सेर, दशमूलका क्वाथ ८ सेर, दूध ४ सेर तथा अष्टवर्ग (काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, ऋद्धि वृद्धि, जीवक और ऋषभक) का कल्क २० तोले (हरेक २॥ तोले) लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें ।

यह तैल वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज शिरोशूल, सूर्यावर्त अभिष्यन्द और जलदोष से उत्पन्न शिरोरोगोंको नष्ट करता है।

(३०९०) **दशमूलादितैलम्** (१)

(वृ. मा.; यो. र.; ग. नि.; धन्व.; र. र.; च. द; भै. र. । कर्ण.)

दशमूलीकषायेण तैलप्रस्थं विपाचयेत् ।
एतत्कर्णे प्रदातव्यं बाधिर्ये परमौषधम् ॥

२ सेर दशमूलको १६ सेर पानीमें पकावें; जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें १ सेर तैल मिलाकर क्वाथ जलने तक पकावें ।

इसे कानमें डालनेसे बधिरता जाती रहती है। इस रोगके लिये यह एक महौषध है ।

(३०९१) **दशमूलादितैलम्** (२)

(वृ. नि. र. । गुल्म.)

दशमूलकणा द्राक्षा श्यामा धात्री पलं पलम् ।
प्रस्थमेरण्डतैलस्य प्रस्थषट्कं गवां पयः ॥
पचेत्तैलावशेषन्तु तत्तैलं कफगुल्मनुत् ॥

दशमूल, पीपल, मुनक्का, काली निसोत और आमला ५-५ तोले लेकर सबको पिसवा कर कल्क बनावें फिर २ सेर अरण्डके तेलमें यह कल्क और १२ सेर गायका दूध (तथा ८ सेर पानी) मिलाकर पकावें । जब दूध और पानी जल जाय तो तैलको छान लें ।

यह तैल कफगुल्म को नष्ट करता है । (मात्रा—२ से ४ तोले तक गरम दूध या दशमूलके अर्क में डालकर पियें ।)

(३०९२) **दशमूलादितैलम्** (३)

(यो. र. । दन्त; वृ. यो. त. । त. १२८)

दशमूली कषायेण तैलं वा घृतमेव वा ।
विपक्वं केवलं शस्तं सक्षौद्रं दन्तचालने ॥
कराले दन्तहर्षे च कापाल्यां सौषिरद्वये ।
गण्डूषधारणाल्लेपात्पानानस्याच्च शस्यते ॥

८ सेर दशमूलके क्वाथके साथ २ सेर तैल या घी मिलाकर पकावें । इसमें आधासेर शहद मिलाकर, कुल्ले करने, नस्य लेने, पीने और लगानेसे दांतोका हिलना, कराल, दन्त हर्ष, कपाली, सौषिर आदि दन्त रोग नष्ट होते हैं ।

(३०९३) **दशमूलादि तैलम्** (४)

(यो. र. । वात.; वृ. यो. त. । त. ९०)

दशमूलकषायविपक्वमथो
पयसा च समेन बलाद्धनलैः ।
त्रुटिचन्दनदारुलतानलदै-
ररुणाजतुकुष्ठवचाकुटिलैः ॥
इति पक्वमिदं तिलजं जयति
प्रसभं पवनामयमाशु नृणाम् ।
बलशुक्रविभारुचिवृद्धिकरं
नृपवृद्धशिशुप्रमदासु हितम् ॥

दशमूलका क्वाथ ८ सेर, दूध २ सेर, तिलका तेल २ सेर और खरैंटी, नागरमोथा, तालीसपत्र

छोटी इलायची, सफेद चन्दन, देवदारु, ज्योतिष्मती लता (मालकंगनी), खस, अतीस, लाख, कूठ, बच और तगरके २० तोले कल्कको एकत्र मिलाकर पकावें । काथ और दूध जलने पर छान लें।

यह तैल वात व्याधिको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता और बल, वीर्य, सौन्दर्य, रुचि तथा जठराग्निकी वृद्धि करता है । यह राजा, वृद्ध, बालक और स्त्रियोंके लिए हितकारी है ।

(३०९४) दशमूलाद्यं तैलम् (१)

(ग. नि. । तैला.)

दशाङ्घ्रिकेशरारिष्टब्राह्मीपाठाकटुत्रिकैः ।
शठीपुनर्नवाभार्गीसुरसाम्बुफलत्रिकैः ॥
शङ्खपुष्पीत्वगेलार्कमुनिपादपपल्लवैः ।
अङ्कोटवरुणास्फोतशिरीषकटभीफलैः ॥
कृमिघ्नमूलशम्पाकसर्षपामरदारुभिः ।
प्रियङ्गुहिङ्गुमञ्जिष्ठासुमुखातन्दुलीयकैः ॥
गिरिकर्णीवचाकुष्ठकङ्कुष्ठरजनीद्वयैः ।
मधूकसारसिन्धूत्थसितनीलोत्पलाम्बुदैः ॥
कटुतैलं समैरेभिः पक्वं क्षीरे चतुर्गुणे ।
सोन्मादं हन्त्यपस्मारं पानाभ्यञ्जननावनैः ॥
डाकिनीभूतवेतालनैगमेषादिकान् ग्रहान् ।
कृत्याभिचाररक्षांसि नाशयत्यखिलान्यपि ॥
तैलमेतत्सुरेन्द्रेण नन्दस्य कथितं पुरा ।
बालस्य किल रक्षार्थं विष्णोरमिततेजसः ॥
अभ्यज्य सर्वगात्राणि भोक्तव्यं रिपुवेश्मनि ।
तैलमभ्यञ्जनं श्रेष्ठं वसतोऽरातिसङ्कटे ॥
अथ विलिप्तभगा भगशालिनी
यदि रमेत नरं दिवसे शुभे ।
मदनसायकजर्जरितो रसो
भवति तस्य तयापहृतं मनः ॥
ताम्बूलमुखवासेषु व्यञ्जनाहारयोगतः ।
अनामिकाग्रसंयुक्तं वशीकरणमुत्तमम् ॥

दशमूल, नागकेसर, नीमकी छाल, ब्राह्मी, पाठा, सोंठ, मिर्च, पीपल, कचूर, पुनर्नवा (बिसखपरा), भारंगी, तुलसी, सुगन्धबाला, हर्र, बहेड़ा, आमला, शंखपुष्पी, दालचीनी, इलायची, आक और अगथिया के पत्ते, अङ्कोटके फल, बरनेकी छाल, आस्फोता, सिरसकी छाल, मालकंगनी, बायबिडंगकी जड़, अमलतास, सरसों, देवदारु, फूलप्रियङ्गु, हींग, मजीठ, सुमुखा (काली तुलसी), चौलाई की जड़, अपराजिता, बच, कूठ, कंकुष्ठ, हल्दी, दारुहल्दी, महुवेके वृक्षका सार, सेंधानमक, सफेद कमल और नागरमोथा । सब चीजें समान भाग मिलाकर २० तोले लें और सबको पानीके साथ पिसवा कर कल्क बनावें; फिर २ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ८ सेर दूध (तथा ८ सेर पानी) मिलाकर पकावें । जब दूध और पानी जल जाय तो तैलको छान लें ।

इसे पीने और इसकी मालिश करने तथा नस्य लेनेसे उन्माद, अपस्मार और बालकोंके भूत, डाकिनी, बेताल, नैगमेषादि ग्रह शान्त होते हैं । बालकोंके शरीरपर इसकी मालिश करते रहनेसे उन्हें राक्षस और अभिचार जनित व्याधियोंका भय नहीं रहता ।

इस तैल में अनामिका उंगली भिगोकर उससे १ बूंद पान या आहारादिके किसी पदार्थ पर

गिरा कर खाना अत्युत्तम वशीकरण है । यदि स्त्री इसे अपने गुह्याङ्ग में लगाकर पुरुष-सहवास करती है तो पुरुषका मन मुग्ध हो जाता है ।

(३०९५) **दशमूलाद्यं तैलम्** (२)

(वं. से. । वात व्या.)

दशमूलीरसक्षीरजीवनीयविपाचितम् ।
तैलं हन्त्यर्दितं नस्यपानाभ्यङ्गानुवासनैः ॥

दशमूलका क्वाथ ८ सेर, दूध २ सेर, तिलका तेल २ सेर तथा जीवनीय गण (जीवन्ती, मुलैठी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि) का कल्क २० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें ।

इसकी अनुवासन बस्ति लेने और मालिश करने तथा पीने और नस्य लेनेसे अर्दित (लकवा) नष्ट होता है ।

(३०९६) **दशमूलाद्यं तैलम्** (३)

(वं. से. । वात व्या.)

दशमूलं बला रास्ना चाश्वगन्धा पुनर्नवा ।
गुडूच्यैरण्डपूतीकभार्ङ्गीवृषकरोहिषम् ॥
शतावरी सहचरकाकनासा पलोन्मिता ।
यवमाषातसीकोलकुलत्थाः प्रसृतोन्मिताः ॥
चतुर्द्रोणेऽम्भसः पक्त्वा द्रोणशेषेण तेन तु ।
तैलाढकं समं क्षीरं जीवनीयैः पचेच्छनैः ॥
अनुवासनमेतद्धि सर्ववातविकारनुत् ॥

दशमूलकी हरेक वस्तु, खरैटी, रास्ना, असगन्ध, पुनर्नवा (साठी), गिलोय, अरण्डकी जड़, खट्टाशी (जुन्दबेदस्तर), भरंगी, बासा, मिरचियागन्ध, (गन्धतृण), शतावर, पियाबांसा, और काकनासा । हरेक ५-५ तोले । जौ, उड़द, अलसी, बेर और कुलथ १०-१० तोले । सबको अधकुट करके ४ द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें और ३२ सेर पानी शेष रहने पर छानलें, फिर यह क्वाथ, ८ सेर तिलका तैल, ८ सेर दूध और १ सेर जीवनीय गण (जीवन्ती, मुलैठी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, काकोली, क्षीर काकोली, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि और वृद्धि; हरेक ६ तोले ८ माशे) के कल्कको एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें ।

इस तैलकी अनुवासन बस्ति देनेसे समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(३०९७) **दशाङ्गतैलम्** (१)

(ग. नि । तैला.)

तर्कारीभृङ्गशिग्रूणां निर्गुण्डीशणयोस्तथा ।
वातघ्नवासाजातीनां निम्बभास्करयोरपि ॥
स्वरसं तु समादाय प्रत्येकं प्रस्थमानतः ।
प्रस्थं तु तिलतैलस्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥
एरण्डमूलवर्षाभूहयगन्धाशतावरी ।
रास्नागोक्षुरकाश्चैव शतपुष्पा च सैन्धवम् ॥
प्रत्येकं कर्षमादाय कर्षार्धं त्रिकटोस्तथा ।
एलात्वक्पत्रमांसीनां कर्षार्द्धं च विनिक्षिपेत् ॥
तैलेनानेन नश्यन्ति वातरोगाः सुदारुणाः ।
आक्षेपकं हनुस्तम्भमपतन्त्रकमर्दितम् ॥
अपबाहुकं विश्वाची पक्षाघातापतानकम् ।
स्नायुसन्धिगतं वातं सप्तधातुगतं तथा ॥
ऊरुस्तम्भं वातरक्तमामवातं सुदारुणम् ।
दशाङ्गसंज्ञकं तैलं हन्यादन्यांश्च वातजान् ॥

अरनी, भंगरा, सहंजना, संभालु, सन, अरण्ड बासा, चमेली, नीम और आक का स्वरस २–२ सेर और तिलका तेल २ सेर लें तथा अरण्डकी जड़, पुनर्नवा (साठी), असगन्ध, शतावरी, रास्ना, गोखरु, सोया, और सेंधा नमक १।–१। तोला एवं सोंठ, मिर्च, पीपल, इलायची, दालचीनी, तेजपात और जटामांसी हरेक ७॥ माशे लेकर पानीके साथ पिसवा लें और फिर सब चीजोंको एकत्र मिलाकर पकावें ।

यह तैल आक्षेपक, हनुस्तम्भ, अपतन्त्रक, अर्दित, अपबाहुक, विश्वाची, पक्षाघात, अपतानक, स्नायु और सन्धिगतवायु, सप्तधातुगत वात, ऊरुस्तम्भ, वातरक्त और आमवातादि भयङ्कर वात–व्याधियोंको नष्ट करता है ।

(आधेसे १ तोले तककी मात्रानुसार दूधमें डालकर पिलाना और शरीर पर इसकी मालिश करानी चाहिए ।)

(३०९८) **दशाङ्गतैलम्** (२)
(ग. नि. । तैला.)

शैरेयकोऽमृतलता वाजिगन्धा शतावरी ।
प्रसारणी नागबला श्वदंष्ट्रा सपुनर्नवा ॥
बला चेति समान् भागान् रास्नारससमन्वितान् ।
विज्ञाय दोषप्रकृतिं कषायमुपकल्पयेत् ॥
तेन पादावशेषेण तिलतैलाढकं पचेत् ।
दधिमस्त्विक्षुनिर्यासशुक्तलाक्षोदकैः समैः ॥
चतुर्गुणेन पयसा कल्कैरेभिर्पलोन्मितैः ।
मांसीशताह्वामधुकमञ्जिष्ठारक्तचन्दनैः ॥
शतावरीदेवदारुकौन्तीत्वक्पत्रवारिजैः ।
कुष्ठागुरुवचायुक्तैस्तैलं सिद्धं प्रदापयेत् ॥
बस्तौ पाने तथाऽभ्यङ्गे नस्ये च परिषेचने ।
सर्वरोगान् जयत्येतत्संसृष्टान् मातरिश्वना ॥
विशेषतो ह्यपस्मारमुन्मादं वातशोणितम् ।
स्त्रीणामपत्यजननं पुंसां चातिबलप्रदम् ॥
नराणां गद्गदानां च मूकानां वाक्प्रवर्त्तनम् ।
मेधाजननमायुष्यं बलवर्णाग्निवर्धनम् ॥
सर्वग्रहघ्नं विषजित् सान्निपातहरं परम् ।
दशाङ्गमिति विख्यातमश्विभ्यां परिकीर्त्तितम् ॥

पियाबासा, गिलोय, असगन्ध, शतावर, प्रसारणी (खीप), नागबला (गंगेरन), गोखरु, पुनर्नवा (बिसखपरा), और खरैटी समान भाग मिलाकर ४ सेर लें और सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छानलें । इसी प्रकार ४ सेर रास्ना को ३२ सेर पानीमें पकाकर ८ सेर शेष रहने पर छान लें । तत्पश्चात् यह दोनों काथ, निम्न लिखित चीजोंका कल्क, ८ सेर तिलका तैल, तथा ८–८ सेर दहीका पानी, ईखका रस, शुक्त और लाखका रस[1] तथा ३२ सेर दूधको एकत्र मिला कर तैल मात्र शेष रहने तक पकावें ।

कल्क—जटामांसी, सोया, मुलैठी, मजीठ, लालचन्दन, शतावर, देवदारु, रेणुका, दालचीनी, तेजपात, कमल, कूठ, अगर और बच । हरेक ५–५ तोले लेकर सबको पानीके साथ पिसवा लें ।

इस तैलको पिलाने तथा बस्ति, नस्य, परि-

१—लाखको कपड़ेमें बांधकर ६ गुने पानीमें दोलायन्त्र विधिसे पकाकर २१ बार छान लें । यही " लाक्षा रस " है । ' शुक्त ' बनाने की विधि भारत भै. र. प्रथम भाग पृष्ट ३५४ पर देखिये.

षेचन, और अभ्यङ्गादि द्वारा प्रयुक्त करने से समस्त वातज रोग विशेषतः अपस्मार, उन्माद, वातरक्त, गद्गदता (हकलाना), गूंगापन, सर्व ग्रह, विष और सन्निपात ज्वर आदि नष्ट होते और स्त्रियों में पुत्रोत्पादनकी शक्ति तथा पुरुषों में बल, वीर्य, मेधा, आयुष्य वर्ण और जठराग्निकी वृद्धि होती है।

(३०९९) **दाडिमाद्यं तैलम्** (१)

(भै. र. । संग्र.)

दाडिमत्वग्जलं धान्यं वत्सकस्य त्वचस्तथा ।
प्रत्येकमाढकं ग्राह्यं जलद्रोणे पचेत्पृथक् ॥
चतुर्भागावशिष्टन्तु तक्रमाढकसम्मितम् ।
पचेत्तैलाढकं धीमान् गर्भे दत्वा भिषग्वरः ॥
त्रिकटुं त्रिफला मुस्तं चव्यजीरकसैन्धवम् ।
चातुर्जातं मधुरिका मांसी च देवपुष्पकम् ॥
जातीकोषफले धान्यं यमान्यौ बालकन्तथा ।
कञ्चटातिविषा भेकी शृङ्गाटं बृहतीद्वयम् ॥
आम्रजम्बुत्वचः पर्णौ समङ्गेन्द्रयवं वरी ।
धातकी बिल्वमोचश्च मुषली वत्सकम्बला ॥
श्वदंष्ट्रा लोध्रपाठाश्च काष्ठं खादिरमेव च ।
अमृता शाल्मली त्वक् च सर्वमर्द्धपलोन्मितम् ॥
पिष्ट्वा तण्डुलतोयेन साधयेन्मृदुनाग्निना ।
ग्रहणीं हन्ति दुर्वारां प्रमेहानपि विंशतिम् ॥
अर्शांसि षड्विधान्येव नाशयेन्नात्र संशयः ॥

अनारकी छाल, सुगन्धबाला, धनिया और कुड़ेकी छाल । हरेक ४–४ सेर लेकर हरेकको अलग अलग ३२–३२ सेर पानीमें पकावें और ८–८ सेर पानी शेष रहने पर छानकर सब काथोंको एकत्र मिलालें । तत्पश्चात् यह काथ, ८ सेर तक्र, ८ सेर तेल और नीचे लिखी चीजोंका कल्क एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । और तेल मात्र शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, मोथा, चव, जीरा, सेंधा, तेजपात, इलायची, दालचीनी, नागकेसर, सौंफ, जटामांसी, लौंग, जावित्री, जायफल, धनिया, अजवायन, अजमोद, सुगन्धबाला, कञ्चटा (जल चौलाई), अतीस, मण्डूकपर्णी, सिंघाड़ेके पत्ते, कटेली, कटेला, आम और जामनके पत्ते तथा छाल, मजीठ (या लज्जालु), इन्द्रजौ, शतावर, धायकी जड़, बेलगिरि, मोचरस, मूसली, कुड़ेकी छाल, खरैटी, गोखरु, लोध, पाठा, खैरकी लकड़ी, गिलोय और सेंभलकी छाल; हरेक २।।—२।। तोले लेकर सबको चावलोंके पानी (तण्डुलोदक) के साथ पीस लें।

यह तैल भयङ्कर संग्रहणी, बीस प्रकारके प्रमेह और ६ प्रकारकी बवासीरको नष्ट करता है ।

(३१००) **दाडिमाद्यं तैलम्** (२)

(रा. मा. । स्तनरो.)

विपाचितं दाडिमकल्कयुक्तं
तैलं भवेत्सर्षपसम्भवं यत् ।
अभ्यञ्जनात्तत्कुरुते नितान्त-
मुच्चैः स्तनौ वृद्धियुतौ च कर्णौ ॥

अनारकी छालका कल्क १३ तोले ४ माशे, सरसोंका तेल २ सेर और पानी ८ सेर। सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी मालिशसे स्तन अत्यन्त उन्नत और कान बड़े हो जाते हैं ।

(३१०१) **दाडिमाद्यं तैलम्** (३)

(रा. मा. । कर्ण.)

संसाधितं दाडिमवल्कलैर्यत्
क्षुद्राफलारुष्करचूर्णयुक्तैः ।
अभ्यञ्जनात्सर्षपसम्भवं तत्
तैलं नृणां लिङ्गविवर्धनं स्यात् ॥

क्वाथ—अनारकी छाल २ सेर, पानी १६ सेर । शेष क्वाथ ४ सेर ।

कल्क—कटेलीके फल और शुद्ध भिलावा । हरेक ३ तोले ४ माशे । क्वाथ और कल्कको १ सेर सरसोंके तेलमें मिलाकर पकावें । इसकी मालिशसे लिङ्गवृद्धि होती है ।

(३१०२) **दार्व्यादितैलम्**

(वै. म. र. । पट. ११)

तैलं दारुरुजासर्जयष्टीपाठावचूर्णितम् ।
शीतपित्तेऽमृताराजीकल्कं चाभ्यङ्गलेपनम् ॥

(सरसोंके) तेलमें देवदारु, कूठ, राल, मुलैठी, और पाठाका चूर्ण मिला कर या इनके कल्क तथा क्वाथ से तेल पकाकर उसकी मालिश करनेसे अथवा गिलोय, और लाल सरसों (या बावची) को पानीके साथ खूब महीन पीसकर लेप करने और शरीरपर मलने से शीतपित्त (पित्ती) रोग नष्ट होता है ।

(३१०३) **दार्व्यादितैलम्**

(धन्व.; भै. र.; वं. से. । शूकदो.; ग. नि. । उपदंश.;)

दार्वीस्वरसयष्ट्याह्वैर्गृहधूमनिशान्वितैः ।
तैलमभ्यञ्जनात्पक्वं मेढ्ररोगं निवारयेत् ॥

दारुहल्दी के स्वरस (अभावमें क्वाथ) और मुलैठी, घरका धुंवा तथा हल्दीके कल्क के साथ पका हुवा तैल लगानेसे उपदंश (आतशक) नष्ट हो जाता है ।

(दारुहल्दीका रस या क्वाथ ८ सेर, तैल २ सेर ।)

कल्क—स्वरसके साथ पकाना हो तो सब समान भाग मिला कर १० तोले, और क्वाथके साथ पकाना हो तो १३ तोले ४ माशे लें ।)

(३१०४) **दार्व्याद्यं सूर्यपाकतैलम्**

(ग. नि. । तैला.)

दार्वीगण्डीरसंयुक्तैः कासमर्दकसम्भवैः ।
मूलैर्भद्रोटिकायास्तु स्वरसेन समन्वितैः ॥
स्नुहीक्षीरनिशामूर्वागृहधूमफणिज्जकैः ।
रालाविडङ्गमगधागौरसर्षपनागरैः ॥
चक्रमर्दकनाडीकावाकुचीनक्तमालकैः ।
मूलकस्य तु बीजैस्तु सुरसारग्वधच्छदैः ॥
सक्षारलवणोपेतैर्गोमूत्रैः परिपेषितैः ।
कटुतैलस्थितैः पक्वैः सम्यग्रविगभस्तिभिः ॥
कृतमाशु नराणान्तु हन्यादेभिः प्रलेपनम् ।
दद्रूं विचर्चिकां कण्डूं पामां दुर्भक्तकं तथा ॥

दारुहल्दी और मजीठका काथ तथा कसौंदी और बन भद्देकी जड़का रस १—१ सेर, सरसोंका तैल १ सेर और निम्न लिखित चीजोंका कल्क एकत्र मिलाकर धूपमें रक्खें, और रोज दो चार बार लकड़ी आदिसे हिला दिया करें । जब सब पानी जलजाय तो तैलको छान लें ।

कल्क—सेहुंड (सेंड) का दूध, हल्दी, मूर्वा, घरका धुवां, मरुवा, राल, बायबिड़ंग, पीपल, सफेद सरसों, सोंठ, पंवाड़, नाड़िका (नालीका

शाक), बावची, करञ्जबीज, मूलीके बीज, तुलसी और अमलतासके पत्ते, यवक्षार और सेंधानमक । सब चीजें समान भाग मिली हुई ६ तोले ८ माशे लेकर गोमूत्रमें महीन पिसवालें ।

इसे लगानेसे दाद, खुजली, विचर्चिका और पामा अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाती है ।

(३१०५) **दीपतैलाभ्यङ्गः**

(रा. मा. । विषा.)

अभ्यङ्गं दीपतैलेन दंशे खर्जूरकस्य यः ।
करोति न करोत्यर्तिं तस्य तत्सम्भवं विषम्॥

यदि कनखजूरेके काटे हुवे स्थान पर दीपकके तैलकी मालिश की जाय तो विष नहीं चढ़ता।

(३१०६) **दीपिकातैलम्**

(च. द.; यो. र.; वं. से.; भै. र.; वृं. मा.; धन्व.; वृ. नि. र.; ग. नि.; सु. सं. । कर्णरो.; वृ. यो. त. । त. १२९)

महतः पञ्चमूलस्य काण्डान्यष्टाङ्गुलानि च ।
क्षौमेणावेष्ट्य संसिच्य तैलेनादीपयेत्ततः ॥
यत्तैलं च्यवते तेभ्यः सुखोष्णं तत्प्रयोजयेत् ।
ज्ञेयं तद्दीपिकातैलं सद्यो गृह्णाति वेदनाम् ॥
एवं कुर्याद् भद्रकाष्ठे कुष्ठे काष्ठे च सारले ।
मतिमान्दीपिकातैलं कर्णशूलनिवारणम् ॥

बेल, सोनापाठा (अरलु), कुम्हार (खम्भारी), पाढल और अरणी की टहनियेंके ८-८ अंगुल लम्बे टुकड़े करके सबको एकत्र बांधकर या अलग अलग रेशमी कपड़े में लपेट दें और फिर तैलमें अच्छी तरह तर करके उनके एक सिरेमें आग लगादें और दूसरे सिरेको चिमटे आदि से पकड़कर उल्टा लटकाये रहें । इससे जो तैल टपके उसे कांच या चीनी आदिके पात्रमें जमा करते रहें ।

इस तैलको ज़रा गरम करके कानमें डालनेसे कर्णपीड़ा नष्ट होती है ।

इसी विधिसे देवदार, कूठ और चीरकी लकड़ियोंसे बनाया हुवा तैल भी कर्ण शूलको नष्ट करता है ।

(३१०७) **दूर्वातैलम्**

(भै. र.; वृं. मा.; ग. नि.; च. द.; यो. र. । कुष्ठ.)

स्वरसे चैव दूर्वायाः पचेत्तैलं चतुर्गुणे ।
कच्छूविचर्चिकापामा अभ्यङ्गादेव नाशयेत् ॥

८ सेर दूबके स्वरसमें २ सेर सरसोंका तेल मिलाकर पकावें । इसकी मालिशसे कच्छू, विचर्चिका, और पामा (खुजली) नष्ट हो जाती है ।

(३१०८) **दूर्वादितैलम्**

(च. द. । व्रणशोथ.; वृ. यो. त. । त. ११२; भै. र.; वृं. मा.; वं. से. । आगन्तुकव्रण)

दूर्वास्वरससंसिद्धं तैलं कम्पिल्लकेन च ।
दार्वीत्वचश्च कल्केन प्रधानं व्रणरोपणम् ॥
येनैव विधिना तैलं घृतं तेनैव साधयेत् ।
रक्तपित्तोत्तरं ज्ञात्वा सर्पिरेवावपाचयेत् ॥

दूबके स्वरस और कबीले तथा दारुहल्दीके कल्कके साथ पका हुवा तैल लगानेसे घाव भर जाते हैं ।

तैलके समान ही इन्हीं चीज़ोंसे घृत भी पका सकते हैं । यदि रक्त पित्तकी प्रधानता हो तो घृतही प्रयुक्त करना चाहिये ।

(३१०९) **दूर्वाद्यं तैलम्**

(वृ. नि. र.; वं. से. । रक्तपि.)

दूर्वामधुकमञ्जिष्ठाद्राक्षेक्षुरसचन्दनैः ।
शारिवाद्वयनक्ताह्वैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
क्षीरं चतुर्गुणं दत्त्वा सिद्धमभ्यञ्जने हितम् ।
रक्तपित्तहरं ह्येतद्बल्यं वातघ्नमुत्तमम् ॥
दूर्वातैलमिति ख्यातं शशिवर्णकरं महत् ॥

दूब घास, मुलैठी, मजीठ, दाख (मुनक्का), सफेद चन्दन, दोनों प्रकार की सारिवा और करञ्ज के कल्क तथा ईखके रस और चार गुने दूधके साथ तैल पकाकर मालिश करनेसे रक्तपित्त तथा वायु नष्ट होता और बल तथा सौन्दर्यकी वृद्धि होती है ।

(तिलका तैल २ सेर, कल्ककी हरेक वस्तु २॥ तोले, ईखका रस २ सेर और दूध ८ सेर ।)

देवदारुतैलम् (१)

(रा. मा. । कर्णरो.)

दीपिका तैल देखिये

यद्यपि राजमार्तण्ड के इस प्रयोगका पाठ दीपिका तैलके पाठसे सर्वथा भिन्न है परन्तु यह प्रयोग उसके अन्तर्गत आ जाता है ।

(३११०) **देवदारुतैलम्** (२)

(रा. मा. । मुखरो.)

अग्नौ सिद्धं देवदारोः फलानां
मिश्रीभूतं वाजिनो वर्चसा यत् ।
तैलं तत्स्याच्छीर्षकण्ठामयानां
नाशायालं नस्यकर्मप्रयोगात् ॥

देवदारुके फलोंके तैलमें ४ गुना घोड़ेकी लीद (मल) का रस मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इसकी नस्य लेनेसे शिर और गलेके समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(३१११) **देवदार्वादितैलम्**

(च. सं. । चि. अ. २६; वं. से. । कर्ण.)

देवदारुवचाशुण्ठीशताह्वाकुष्ठसैन्धवैः ।
तैलं सिद्धं बस्तमूत्रे कर्णशूलनिवारणम् ॥

देवदार, बच, सोंठ, सोया, कूठ और सेंधा । सब चीजें समान भाग मिली हुई २० तोले लेकर पानीके साथ पिसवा लें; फिर २ सेर तैल में यह कल्क और ८ सेर बकरेका मूत्र मिलाकर पकावें ।

यह तैल कर्णशूलको नष्ट करता है ।

(३११२) **द्रवन्त्यादितैलम्**

(सु. सं. । चि. अ. २)

द्रवन्ती चिरबिल्वश्च दन्ती चित्रकमेव च ।
पृथ्वीका निम्बपत्राणि कासीसं तुत्थमेव च ॥
त्रिवृत्तेजोवती नीली हरिद्रे सैन्धवं तिलाः ।
भूमीकदम्बः सुवहा शुकाख्या लाङ्गलाह्वया ॥
नैपाली जालिनी चैव मदयन्ती मृगादनी ।
सुधामूर्वार्ककीटारिहरितालकरञ्जिकाः ॥
यथोपपत्तिकर्त्तव्यं तैलमेतस्तु शोधनम् ॥

द्रवन्ती (वृहद्दन्ती), करञ्जबीज, दन्ती, चीता, बड़ी इलायची, नीमके पत्ते, कसीस, नीलाथोथा, निसोत, बच, नीलकापञ्चाङ्ग, हल्दी, दारुहल्दी, सेंधा, तिल, भूमिकदम्ब या (गोरखमुण्डी), काला संभालु, सिरसकी छाल, कलियारी, मनसिल, देवदाली (बिंडाल डोढा), मदयन्ती, इन्द्रायन,

सेंड (सेहुंड), मूर्वा, आक, दादमारि (दादमर्दन), हरताल और कांटे वाले करञ्जके फल। इनके कल्क के साथ तैल पकाकर लगानेसे घाव शुद्ध होते हैं।

(सब चीजें समान भाग मिली हुई २० तोले, सरसोंका तेल २ सेर, पानी ८ सेर।)

(३११३) **द्विजीरकाद्यं तैलम्**

(ग. नि. । वृद्ध्य.)

अजाजीद्वयसिन्धूत्थहिङ्गुतोऽर्धपलानि च।
तैलं च षोडशपलं पक्वं वृद्धिं व्यपोहति ॥

सफेद और काला जीरा, सेंधा नमक, और हींग २॥-२॥ तोले लेकर पानीके साथ पिसवा लीजिये फिर २ सेर तिलके तैलमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर पानी जलने तक पकाइये। यह तैल अण्डवृद्धि रोगको नष्ट करता है।

(३११४) **द्विपञ्चमूलाद्यं तैलम्**

(भा. प्र. । आ. वा.; वं. से. । आमवा.)

द्विपञ्चमूलीनिर्यासफलदध्यम्लकाञ्जिकैः।
तैलं कट्यूरुपार्श्वार्तिकफवाताभयान्गदान् ॥
हन्ति बस्तिप्रदानेन करोत्यग्निबलं महत् ॥

दशमूलके क्वाथ, जायफलके कल्क और दही तथा काञ्जीके साथ पकाए हुवे तैलकी बस्ती लेनेसे कमर, जंघा और पार्श्व की पीड़ा तथा कफवातज रोग नष्ट होते हैं। एवं अग्निकी वृद्धि होती है।

(३११५) **द्विपञ्चमूलीतैलम्**

(वं. से. । विद्र.)

द्विपञ्चमूलीत्रिफलाकुलित्थ
त्रिवृच्छनैर्मूलकशिग्रुयुक्तैः।
तैलं तिलैरण्डजमेतदेभिः
सिद्धं हितं विद्रधिगुल्मशूले ॥

दशमूल, त्रिफला, कुलथ, निसोत, मूली और सहंजनेकी छालका कल्क १३ तोले ४ माशे तथा तिल और अरण्डीका तैल १-१ सेर और उक्त चीजोंका क्वाथ ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें।

यह तैल विद्रधि, गुल्म और शूलको नष्ट करता है।

(३११६) **द्विपञ्चमूल्याद्यं तैलम्**

(ग. नि. । परिशि. तैला.; भा. प्र. ख. २ । ऊरु.)

द्वे पञ्चमूल्यौ त्रिफला चित्रको देवदारु च।
एकाष्ठीला त्वपामार्गः श्रेयसी वायसी सुधा ॥
काला भार्गी पृथक्पर्णी सुवहा मदयन्तिका।
विशल्योशीरकाश्मर्य हिंस्रा दार्व्यस्तथाऽम्लिका॥
चिरबिल्वो विशोकश्च बला चांशुमती तथा।
पयस्या पीलुपर्णी च सगुडूची शतावरी ॥
एषां पञ्चपलान् भागान् जलद्रोणेषु सप्तसु।
अष्टभागावशेषेण पचेत्तैलं शनैःशनैः ॥
कुष्ठं च सतपुष्पा च चित्रकस्त्र्यूषणं वचा।
देवदार्वगरु श्रेष्ठं विडङ्गं मुस्तमेव च ॥
अश्वगन्धा स्थिरा पाठा मूर्वा श्योनाकमेव च।
पिप्पली शृङ्गवेरश्च दन्ती हिङ्ग्वम्लवेतसौ ॥
गर्भेणानेन भिषक्कषायेण च साधयेत्।
सिद्धं शीतं च पूतञ्च क्षौद्रेण सह संसृजेत्।
तदस्य दद्यात्पानार्थं तदेवाभ्यञ्जने भवेत् ॥
ऊरुस्तम्भश्चिरोत्पन्नस्तैलेनानेन शाम्यति।
आढ्यवातं श्लीपदानि खुडवातांश्च नाशयेत् ॥

क्वाथ—दशमूलकी हरेक वस्तु, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, देवदार, पाठा, अपामार्ग (चिरचिटा), रास्ना, सफेद चौंटली, सेहुण्ड (सेंड)

की जड़, निसोत, भरंगी, पृष्ठपर्णी, संभालु, मदयन्तिका, कलियारी, खस, खम्भारी, कटेली, दारुहल्दी, इमलीकी छाल, करञ्जबीज, अशोकछाल, खरैंटी, शालपर्णी, स्वर्णक्षीरी (सत्यानासी), मूर्वा, गिलोय और शतावर। हरेक चीज़ ५—५ पल (२५-२५ तोले) लेकर सबको अधकुटा करके २२४ सेर पानीमें पकावें और २८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—कूठ, सोया, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, देवदार, अगर, बायविडंग, मोथा, असगन्ध, शालपर्णी, पाठा, मूर्वा, अरलु (श्योनाक), पीपल, सोंठ, दन्तीमूल, हींग और अमलबेत; सब चीजें समान भाग मिलाकर ४६ तोले ८ माशे लें और सबको पानीके साथ पिसवा लें।

विधि—७ सेर तेल में यह क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें, और क्वाथके जल जाने पर तैलको छानकर ठण्डा करके उसमें उसका सोलहवां भाग शहद मिला दें।

इसे पीने और इसकी मालिश करनेसे पुराना ऊरुस्तम्भ, श्लीपद, वातरक्त और खुडवातादि वात व्याधियां नष्ट होती हैं।

(३११७) **द्विहरिद्राद्यं तैलम्**

(आ. वे. वि. । उत्तरा. अ. ८१; भै. र. । क्षुद्र.)

हरिद्राद्वयभूनिम्बत्रिफलारिष्टचन्दनैः ।
एतत्तैलमरूंषीणां सिद्धमभ्यञ्जने हितम् ॥

हल्दी, दारु हल्दी, चिरायता, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, और सफेद चन्दन के क्वाथ तथा कल्कसे बनाया हुवा तैल लगानेसे अरूंषि (शिरकी छोटी छोटी फुंसियां) नष्ट होती हैं। (क्वाथके लिए सब चीजें समान भाग मिली हुई २ सेर, पानी १६ सेर, शेष क्वाथ ४ सेर। सरसोंका तेल १ सेर। कल्कके लिए सब चीजें समान भाग मिश्रित ६ तोले ८ माशे।)

इति दकारादितैलप्रकरणम् ।

अथ दकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

(३११८) **दन्त्यरिष्टः** (१)

(वं. से.; वृं. मा. । अर्शो.)

त्रिफला दशमूलानि निकुम्भानां पलं पलम् ।
वारिद्रोणे शृतं पादशेषे गुडतुलायुतम् ॥
आज्यभाण्डे स्थितं मासं दन्त्यरिष्टो निषेवितः ।
गुदजकृम्युदावर्त्तग्रहणीपाण्डुरोगनुत् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, दशमूल, और दन्तीमूल १—१ पल (५—५ तोले। कुल मिलाकर ७० तोले) लेकर सबको १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसमें १०० पल गुड़ मिलाकर घृतसे चिकने किये हुवे मटकेमें भरकर उसका मुख अच्छी तरह

बन्द करके रखदें, और १ मास पश्चात् निकालकर छानलें।

यह 'दन्त्यरिष्ट' बवासीर, कृमि, उदावर्त, ग्रहणी रोग और पाण्डुको नष्ट करता है। (मात्रा २ तोले)

(३११९) **दन्त्यरिष्टः** (२)

(च. सं. । चि. अ. ९; ग. नि. । आसवा.; च. द. । अर्शो.)

दन्तीचित्रकमूलानामुभयोः पञ्चमूलयोः।
भागान् पलांशानापोथ्य जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
त्रिपलं त्रिफलायाश्च दलानां तत्र दापयेत्।
रसे चतुर्थशेषे तु पूते शीते समावपेत् ॥
तुलां गुडस्य सन्तिष्ठेत् मासार्द्धं घृतभाजने।
तन्मात्रया पिबेन्नित्यमर्शोभ्योऽपि प्रमुच्यते ॥
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं वातवर्चोऽनुलोमनम्।
दीपनश्चारुचिघ्नश्च दन्त्यारिष्टमिदं विदुः ॥

दन्तीमूल, चीतामूल, दशमूलकी हरेक वस्तु, हर्र, बहेड़ा और आमला १-१ पल (५-५ तोले) लेकर सबको अधकुटी करके १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी रह जाय तो छानकर और ठण्डा करके उसमें १ तुला (६। सेर) गुड़ मिलाकर मिट्टीके चिकने बर्तनमें भरकर, उसका मुंह बन्द करके रख दें; और १५ दिन पश्चात् निकालकर छानलें।

इसके सेवनसे बवासीर, ग्रहणी, पाण्डु, और अरुचि नष्ट होती है। इसके अतिरिक्त यह मल और वायुकी गतिको अनुलोम (यथोचितमार्गगामी) और अग्निको दीप्त करता है।

(३१२०) **दशमूलारिष्टः** (१)

(नपुं. । त. ९; भै. र. । वाजी.; ग. नि.; शा. ध. । आसवा.)

दशमूलानि कुर्वीत भागैः पञ्चपलैः पृथक्।
पञ्चविंशत्पलं कुर्याच्चित्रकं पौष्करं तथा ॥
कुर्याद्विंशत्पलं लोध्रं गुडूची तत्समा भवेत्।
पलैःषोडशभिर्धात्री रविसंख्यैर्दुरालभाः ॥
खदिरो बीजसारश्च पथ्या चेति पृथक् पलैः
अष्टाभिर्गुणितैः कुष्ठं मञ्जिष्ठा देवदारु च ॥
विडङ्गं मधुकं भार्ङ्गी कपित्थोक्षः पुनर्नवा।
चव्यं मांसी प्रियङ्गुश्च सारिवा कृष्णजीरकम् ॥
त्रिवृता रेणुका रास्ना पिप्पली क्रमुकः सटी।
हरिद्रा शतपुष्पा च पद्मकं नागकेशरम् ॥
मुस्तमिन्द्रयवाः शृङ्गी जीवकर्षभकौ तथा।
मेदा चान्या महामेदा काकोल्यौ ऋद्धिवृद्धिके ॥
कुर्यात्पृथक् द्विपलिकान्पचेदष्टगुणे जले।
चतुर्थांशं भृतं नीत्वा मृद्भाण्डे सन्निधापयेत् ॥
चतुःषष्टिपलां द्राक्षां पचेन्नीरे चतुर्गुणे।
त्रिपादशेषं शीतञ्च पूर्वक्काथे भृतं क्षिपेत् ॥
द्वात्रिंशत्पलिकं क्षौद्रं गुडं दद्याच्चतुः शतम्।
त्रिंशत्पलानि धातक्याः कङ्कोलं जलचन्दने ॥
जातीफलं लवङ्गं च त्वगेलापत्रकेशरम्।
पिप्पली चेति संचूर्ण्य भागैर्द्विपलिकैः पृथक् ॥
शाणमात्रां च कस्तूरीं सर्वमेकत्र निक्षिपेत्।
भूमौ निखनयेद्भाण्डं ततो जाते रसे पिबेत् ॥
कतकस्य फलं क्षिप्त्वा रसं निर्मलतां नयेत्।
ग्रहणीमरुचिं शूलं श्वासकासभगन्दरान् ॥
वातव्याधिं क्षयं छर्दिं पाण्डुरोगं सकामलम्।
कुष्ठान्यर्शांसि मेहांश्च मन्दाग्निमौदराणि च ॥

शर्करामश्मरीं चैव मूत्रकृच्छ्रं क्षयं जयेत् ।
कृशानां पुष्टिजननो वन्ध्यानां पुत्रदः परः ॥
अरिष्टो दशमूलाख्यस्तेजः शुक्रबलप्रदः ॥

दशमूलकी हरेक वस्तु ५–५ पल, चीता तथा पोखरमूल २५–२५ पल, लोध और गिलोय २०–२० पल, आमला १६ पल, धमासा १२ पल, खैरसार, बिजयसार, और हर्र ८–८ पल, कूठ, मजीठ, देवदार, बायबिडंग, मुलैठी, भारंगी, कैथका गूदा, बहेड़ा, पुनर्नवा (साठी), चव्य, जटामांसी, फूल प्रियंगु, सारिवा, कालाजीरा, निसोत, रेणुका, रास्ना, पीपल, सुपारी, सटी (कचूर) हल्दी, सोया, पद्माक, नागकेसर, नागरमोथा, इन्द्रजौ, काकड़ासिंगी, जीवक, ऋषभक (अभावमें विदारीकन्द), मेदा, महामेदा (अभावमें शतावर), काकोली, क्षीरकाकोली (अभावमें असगन्ध) और ऋद्धि, वृद्धि (अभावमें बाराहीकन्द); इनमें से हरेक चीज़ २–२ पल (१०–१० तोले) लेकर सबको आठगुने (१६ गुने) पानीमें पकावें । जब चौथा भाग बाकी रह जाय तो उतारकर छानलें ।

इसके पश्चात् ६४ पल (४ सेर) मुनक्का को ४ गुने (८ गुने) पानीमें पकाकर तीन चौथाइ पानी शेष रहने पर छानलें और इसे तथा उपरोक्त काथको मिट्टीके अच्छे बड़े और घृतसे चिकने किये हुवे बरतनमें भर दें; साथ ही उसमें ३२ पल (६४ पल) शहद, ४०० पल गुड़, ३० पल धायके फूलोंका चूर्ण और २–२ पल (१०–१० तोले) कंकोल, सुगन्धबाला, सफेद चन्दन, जायफल, लौंग, दारचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, और पीपलका चूर्ण और ४ माशे (वर्तमान तोलसे ५ माशे) कस्तूरी मिलाकर बरतनका मुख अच्छी तरह बन्द करके भूमिमें गाढ़ दें ।

एक मास पश्चात् बरतनको निकालकर अरिष्टको छानलें और उसमें निर्मलीके फलोंका चूर्ण मिलाकर रख दें एवं ४–५ दिन बाद जब अरिष्ट स्वच्छ हो जाय तो पुनः छानकर बोतलोंमें भरकर मजबूत डाट लगा दें ।

यह अरिष्ट ग्रहणी, अरुचि, शूल, श्वास, खांसी, भगन्दर, वातव्याधि, क्षय, छर्दी, पाण्डु, कामला, कुष्ठ, बवासीर, प्रमेह, मन्दाग्नि, उदररोग, अश्मरी, शर्करा, और मूत्रकृच्छ्रको नष्ट करता तथा तेज, बल और वीर्यकी वृद्धि करता है । दुबले मनुष्योंको पुष्टि और बन्ध्या स्त्रीको पुत्र देता है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(नोट—कस्तूरी आसव छाननेके बाद कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर या सुरा (रेक्टी फाइड स्प्रिट) में घोलकर डालनी चाहिए ।)

(३१२१) दशमूलारिष्टः (२)

(सु. सं. । चि. अ. ६)

द्विपञ्चमूलीदन्तीचित्रकपथ्यानां तुलामाहृत्य जलचतुर्द्रोणे विपाचयेत् । ततःपादावशिष्टं कषायमादाय सुशीतं गुडतुलया सहोन्मिश्रय घृतभाजने निक्षिप्य मासमुपेक्षेत यवपल्ले ततः प्रातः प्रातर्मात्रां पाययेत, तेनार्शोग्रहणीदोषपाण्डुरोगोदावर्तारोचका न भवन्ति दीप्तोऽग्निश्च भवति ।

दशमूल, दन्तीमूल, चीतामूल और हर्र १००–१०० पल (६। सेर) लें और सबको अधकुटा करके ४ द्रोण (१२८ सेर) पानी में पकावें जब १ द्रोण पानी शेष रहे तो उसे छानकर, ठण्डा

करके उसमें १ तुला (६। सेर) गुड़ मिलाकर घृत से चिकने किए हुवे मिट्टीके पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करदें और उसे जौके ढेरमें दबा दें। फिर एक मास पश्चात् निकालकर छानलें।

इसे प्रातःकाल यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अर्श, ग्रहणी, पाण्डु, उदावर्त और अरुचि नहीं रहती तथा अग्नि दीप्त हो जाती है।

(मात्रा—२ तोला ।)

(३१२२) **दशमूलासवः** (१)

(वृ. नि. र. । क्षय; यो. चि. । अ. ७)

दशमूलं तुलार्द्धं च पौष्करञ्च तदर्धकम् ।
हरीतकीनां प्रस्थार्द्धं धात्री प्रस्थद्वयं तथा ॥
चित्रकं पुष्करमितं चित्रकार्धं दुरालभा ।
गुडूच्या वै शतपलं विशाला पलपञ्चकम् ॥
खदिरस्य पलान्यष्टौ तदर्धं बीजकं तथा ।
मञ्जिष्ठा मधुकं कुष्ठं कपित्थं देवदारु च ॥
विडङ्गं चविकं लोध्रं भार्ङ्गी चाष्टकवर्गकम् ।
कृष्णाजाजी पिप्पली च क्रमुकं पद्मकं सठी ॥
प्रियङ्गु सारिवा मांसी रेणुका नागकेशरम् ।
त्रिवृता रजनी रास्ना मेषशृङ्गी पुनर्नवा ॥
शतावरी चेन्द्रयवा मुस्ता द्विपलिकाञ्जले ।
चतुर्गुणे पादशेषे द्राक्षा षष्टिपलं क्षिपेत् ॥
त्रिंशत्पलानि धातक्या गुड पलचतुः शतम् ।
मधु द्वात्रिंशत्पलं चैव सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
भाण्डे पुराणे स्निग्धे च मांसीमरिचधूपिते ।
पृथक् द्विपलिकानेतान् पिप्पली चन्दनं जलम् ।
जातीफलं लवङ्गं च त्वगेलापत्रकेशरान् ।
कर्षमात्रां च कस्तूरीं दत्त्वा पक्षं निधापयेत् ॥
कनकद्रुपलं चूर्णं क्षिपेन्निर्मलता भवेत् ।
पश्चादूर्ध्वं पिबेद्यस्तु मात्रया च यथाबलम् ॥
धातुक्षयं जयत्येव कासं पञ्चविधं तथा ।
अर्शांसि षट्प्रकाराणि तथाष्टावुदराणि च ॥
प्रमेहश्च महाव्याधिमरुचिं पाण्डुरुक् तथा ।
सर्वं वातांस्तथा शूलं श्वासं छर्दिमसृग्दरम् ॥
अष्टादशैव कुष्ठानि शोफं शूलं भगन्दरम् ।
शर्कराद्यं मूत्रकृच्छ्रमश्मरीञ्च विनाशयेत् ॥
कृशस्य पुष्टिं कुरुते पुष्टस्य च महाबलम् ।
महावेगो महातेजो महावीर्यो विलोक्यते ॥
कामपुष्टिकरो ह्येष वन्ध्यानां पुत्रदो भवेत् ॥

दशमूल ५० पल (हर एक चीज ५ पल), पोखरमूल २५ पल, हर्रे ८ पल, आमला ३२ पल, चीता २५ पल, धमासा १२॥ पल, गिलोय १०० पल, इन्द्रायन ५ पल, खैरसार ८ पल, बिजयसार ४ पल, मजीठ, मुलैठी, कूठ, कैथ, देवदारु, बायबिडंग, चव, लोध, भार्गी, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, जीवक, ऋषभक, काकोली क्षीरकाकोली, कालाजीरा, पीपल, सुपारी, पद्माक, सटी (कचूर), फूल प्रियंगु, सारिवा, जटामांसी, रेणुका, नागकेसर, निसोत, हल्दी, रास्ना, मेढासिंगी, पुनर्नवा (साठी), शतावर, इन्द्रजौ और नागरमोथा । हरेक चीज़ २–२ पल (१०–१० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके चार गुने पानीमें पकावें; जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर घृतसे चिकने किये हुवे पुराने और स्याहमिर्च तथा जटामांसीसे धूपित मिट्टीके मटके में भरदें; साथ ही उसमें ६० पल मुनक्का, ३२ पल शहद, ३० पल धायके फूलोंका चूर्ण, ४०० पल गुड़

एवं २–२ पल पीपल, सफेद चन्दन, सुगन्ध बाला, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, तेजपात, और नागकेसर का चूर्ण तथा १। तोला कस्तूरी मिलाकर उसका मुख बन्द कर दें; और १५ दिन पश्चात् निकालकर छानलें तथा उसमें ५ तोले धतूरेके फलोंका चूर्ण मिलादें। जब स्वच्छ हो जाय तो बोतलोंमें भरकर रख दें।

इसे निकालनेके १५ दिन बाद यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे धातुक्षय, खांसी, श्वास, ६ प्रकारकी बवासीर, आठ प्रकारके उदररोग, प्रमेह, अरुचि, पाण्डु, सर्व प्रकारकी वात व्याधियां, शूल, श्वास, वमन, रक्तप्रदर, १८ प्रकारके कुष्ट, शोथ, भगन्दर, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी आदि रोग नष्ट होते हैं। इसके सेवनसे कृश मनुष्य पुष्ट; पुष्ट मनुष्य अत्यन्त बलवान् वेगवान् तेजयुक्त और वीर्ययुक्त हो जाता है तथा वन्ध्या स्त्री पुत्र उत्पन्न कर सकती है। (मात्रा १ तो.)

नोट–कस्तूरी आसव छाननेके बाद कपड़ेकी पोटलीमें बांध कर या मद्यसार (रेक्टीफाइडस्प्रिट) में मिलाकर डालनी चाहिये।

(३१२३) दशमूलासवः (२)

(वं. से. । ग्रह.)

द्विपञ्चमूलरजनीजीवकर्षभकचित्रकान् ।
पृथक् पञ्चपलैर्भागैश्चतुर्द्रोणेऽम्भसःपचेत् ॥
द्रोणशेषे रसे पूते गुडस्य कुडवं क्षिपेत् ।
चूर्णितान्पलिकान्सर्वान्दद्याचात्र समाक्षिकान् ॥
प्रियङ्गुपुष्पं मञ्जिष्ठा विडङ्गं मधुकं कणाम् ।
लोध्रं सावरकं चैव मासार्द्धं स्थापयेत्क्षितौ ॥
दशमूलासवः सिद्धो दीपनो रक्तपित्तनुत् ।
आनाहकफहृद्रोगपाण्डुरोगाङ्गसादनुत् ॥

दशमूल, हल्दी, जीवक, ऋषभक (दोनोंके अभावमें विदारी कन्द) और चीता ५–५ पल लेकर अधकुटा करके ४ द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें। जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें ४ पल गुड़, १ पल (५ तोले) शहद, तथा १–१ पल फूलप्रियंगु, मजीठ, बायबिड़ंग, मुलैठी, पीपल, लोध और पठानी लोध का चूर्ण मिलाकर चिकने मटकेमें भरकर उसका मुंह बन्द करके भूमिमें दबादें; और १५ दिन पश्चात् निकाल कर छान लें।

यह 'दशमूलासव' अग्निदीपक, रक्तपित्त नाशक तथा अफारा, कफ, हृद्रोग, पाण्डु और शरीरकी पीड़ाको नष्ट करने वाला है।

(मात्रा—२ तोले। भोजनोपरान्त पानीमें डालकर पियें।)

(३१२४) दुरालभारिष्टः (१)

(च. सं. । चि. अ. ९; ग. नि.; यो. र.)

दुरालभायाः प्रस्थः स्याच्चित्रकस्य वृषस्य च ।
पथ्यामलकयोश्चैव पाठाया नागरस्य च ॥
दन्त्याश्च द्विपलान् भागान् जलद्रोणे विपाचयेत् ।
पादावशेषे पूते च सुशीते शर्कराशतम् ॥
प्रक्षिप्य स्थापयेत् कुम्भे मासार्द्धं घृतभाजने ।
प्रलिप्ते पिप्पलीचव्यप्रियङ्गुक्षौद्रसर्पिषा ॥
तस्य मात्रां पिबेत्काले शार्करस्य यथाबलम् ।
अर्शांसि ग्रहणीदोषमुदावर्त्तमरोचकम् ॥

प्रयोग सं. ३१२० में और ३१२२ में औषधियां तो लगभग एक ही हैं परन्तु उनके परिमाणमें बहुत अन्तर है, निर्माण विधिमें भी थोड़ा अन्तर है इसी लिए इसे पृथक् लिखा गया है।

शकृन्मूत्रानिलोद्गारविबन्धानग्निमार्दवम् ।
हृद्रोगं पाण्डुरोगञ्च सर्वमेतेन साधयेत् ॥

धमासा १ प्रस्थ (८० तोले) और चीता, बासा, हर्र, आमला, पाठा, सोंठ, और दन्तीमूल २-२ पल (१०-१० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें; जब ८ सेर पानी बाकी रह जाय तो काथको छान लें और ठण्डा करके उसमें १०० पल (६। सेर) खांड मिलाकर उसे घृतसे चिकने किये हुवे मटकेमें पीपल, चव और फूल प्रियंगुके चूर्णको घी और शहदमें मिलाकर लेप करके उसमें भर दें और उसका मुंह बन्द करके १५ दिन तक रक्खा रहने दें ।

यह अरिष्ट अर्श, ग्रहणी दोष, उदावर्त, अरुचि, मलमूत्र अपान वायु और डकारका रुकना, अग्निमांद्य, हृद्रोग और पाण्डु रोगको नष्ट करता है।

(मात्रा—२ तोले ।)

नोट—गदनिग्रह और योग रत्नाकरमें इसका नाम 'शर्करासव' है ।

(३१२५) दुरालभारिष्टः (२)

(वा. भ. । चि. अ. ८)

पचेद्दुरालभाप्रस्थं द्रोणेऽपां पादशैः सह ।
दन्तीपाठाग्निविजयावासामलकनागरैः ॥
तस्मिन्सिता शतं दद्यात्पादस्थेऽन्यच्च पूर्ववत् ।
लिम्पेत्कुम्भं तु फलिनीकृष्णाचव्याज्यमाक्षिकैः ॥
दत्वा प्रस्थं च धातक्या स्थापयेद् घृतभाजने ।
पक्षात्स शीलितोऽरिष्टः करोत्यग्निं निहन्ति च ॥
गुदजग्रहणीपाण्डुकुष्ठोदरगरज्वरान् ।
श्वयथुप्लीहहृद्रोगगुल्मयक्ष्मक्रमीकृमीन् ॥

धमासा १ प्रस्थ (१ सेर) और दन्तीमूल, पाठा, चीता, भंग, बासा, आमला और सोंठ १०-१० तोले लेकर सबको अधकुटा करके १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें १०० पल (६। सेर) खांड और १ सेर धायके फूलोंका चूर्ण मिलादें और एक मटकेके भीतर फूलप्रियंगु, पीपल तथा चवके चूर्णको घी और शहदमें मिलाकर उसका लेप करदें और फिर उसमें उपरोक्त काथादि डालकर उसका मुख बन्द करके रखदें । १५ दिन पश्चात् आसवको निकालकर छानकर बोतलोंमें भरकर सुरक्षित रक्खें ।

यह आसव अग्नि वर्द्धक, तथा अर्श, ग्रहणी, पाण्डु, कुष्ठ, उदररोग, विष, ज्वर, सूजन, तिल्ली, हृद्रोग और गुल्म नाशक है ।

(मात्रा—२ तोले । पानीमें डालकर भोजनके बाद पियें ।)

(३१२६) दुरालभासवः

(च. सं. । चि. अ. १९; ग. नि. । आस.)

प्रस्थौ दुरालभाया द्वौ प्रस्थमामलकस्य च ।
मुष्टीचित्रकदन्त्योर्द्वे प्रत्यग्रं चाभया शतम् ॥
चतुर्द्रोणेऽम्भसः पक्त्वा शीतं द्रोणावशेषितम् ।
गुडस्य द्विशतं पूतं मधुनः कुडवान्वितम् ॥
तद्वत्प्रियङ्गोः पिप्पल्या विडङ्गानाञ्च चूर्णितैः ।
कुडवैर्घृतकुम्भस्थं पक्षाज्जातं ततः पिबेत् ॥
ग्रहणीपाण्डुरोगार्शः कुष्ठवीसर्पमेहनुत् ।
स्वरवर्णकरश्चैव रक्तपित्तकफापहः ॥

धमासा २ प्रस्थ (२ सेर=१६० तोले), आमला १ सेर, चीता और दन्तीमूल २-२ पल

(१०–१० तोले) और ६। सेर हर्र लेकर सबको अधकुटा करके ४ द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें। जब १ द्रोण पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर ठण्डा करलें और उसमें २०० पल (१२॥ सेर) गुड़ और २०–२० तोले शहद, तथा फूल प्रियंगु, पीपल और वायविडंगका चूर्ण मिलाकर चिकने मटकेमें भरदें और उसका मुंह बन्द करके १५ दिन तक रक्खा रहने दें, पश्चात् निकालकर छानलें और बोतलेंामें भरकर रख दें।

यह आसव ग्रहणीविकार, पाण्डु, बवासीर, कुष्ठ, वीसर्प, प्रमेह, रक्तपित्त और कफ नाशक तथा स्वर और वर्णको ठीक करने वाला है।

(मात्रा २ तोले। भोजनके बाद पानीमें डालकर पीना चाहिए।)

(३१२७) **देवदार्वासवः**

(ग. नि.; शा. ध.। आसवा.; भै. र.। प्रमे.)

देवदारु तुलार्धं तु वासायाः पलविंशतिः।
शक्राह्वदन्तीमञ्जिष्ठास्तगरं रजनीद्वयम् ॥
रास्ना मुस्तं शिरीषं च कृमिघ्नं खदिरार्जुनौ।
भागान्दशपलान्कृत्वा गुडूच्यश्चित्रकस्य च ॥
चन्दनस्य यवान्याश्च रोहिण्या वत्सकस्य च।
भागान्पञ्चपलानेतानष्टद्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥
द्रोणशेषे कषाये तु पूते शीते प्रदापयेत्।
धातक्या षोडशपलं माक्षिकस्य तुलात्रयम् ॥
चतुःपलं त्रिजाताच्च व्योषस्य च पलद्वयम्।
पलद्वयं केशरस्य प्रियङ्गोश्च पलद्वयम् ॥
घृतभाण्डे निदध्याच्च मासमेकं प्रयत्नतः।
प्रमेहान्मूत्रकृच्छ्रांश्च वातरोगान्सुदारुणान् ॥
ग्रहण्यर्शोविकारांश्च देवदार्वासवो जयेत् ॥

देवदार ५० पल, बासा २० पल, इन्द्रजौ, दन्तीमूल, मजीठ, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, रास्ना, मोथा, सिरसकी छाल, वायविडंग, खैरसार और अर्जुनकी छाल, १०–१० पल; गिलोय, चीता, सफेद चन्दन, अजवायन, मांसरोहिणी और कुड़ेकी छाल ५–५ पल (२५–२५ तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ८ द्रोण (२५६ सेर) पानीमें पकावें; जब १ द्रोण (३२ सेर) पानी शेष रह जाय तो उसे छान कर ठण्डा करलें और फिर उसमें १६ पल (१ सेर–८० तोले) धायके फूलोंका चूर्ण, १८॥ सेर शहद तथा ४ पल त्रिजातक (दालचीनी, तेजपात, इलायची), २ पल त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), और २-२ पल (१०–१० तोले) नागकेशर तथा फूल-प्रियंगु का चूर्ण मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके १ मास तक रक्खा रहने दें। तत्पश्चात् निकालकर छान लें।

यह "देवदार्वासव" प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, वातव्याधि, ग्रहणीविकार, और अर्श को नष्ट करता है।

(मात्रा–२ तोले। पानीमें डालकर प्रातःकाल पीना चाहिये।)

(३१२८) **द्राक्षारिष्टः (द्राक्षासवः)** (१)

(वृ. यो. त.। त. ७६; यो. त.। त. २७; शा. ध.। आसव.; भै. र.[१]; यो. र.। यक्ष्मा. यो. चिं.। मिश्रा.)

१—शा. ध.; भै. र.; यो. चिं. म.; तथा यो. त. में धायके फूल नहीं लिखे। यह योग भिन्न भिन्न ग्रन्थोंमें मृद्वीकासव, द्राक्षासव, मृद्वीकारिष्ट और द्राक्षारिष्टादि भिन्न भिन्न नामोंसे लिखा है।

मृद्वीकायास्तुलार्धन्तु द्विद्रोणेऽपां विपाचयेत् ।
पादशेषे कषाये च पूते शीते प्रदापयेत् ॥
गुडस्य द्वितुलां मानीं धातक्या घृतभाजने ।
विडङ्गं फलिनी कृष्णा त्वगेलापत्रकेशरम् ॥
मरीचं च भिषक् चूर्णं सम्यक् कृत्वा विचक्षणः।
क्षिपेच्च पालिकैर्भागैः स्थापयेच्च कियद्दिनम् ॥
ततो यथाबलं पीत्वा कासश्वासात्प्रमुच्यते ।
हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रमुरःसन्धिं करोति च ॥

५० पल (३ सेर १० तोले) मुनक्काको २ द्रोण (६४ सेर) पानीमें पकाइये । जब १६ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छान कर ठण्डा कर लीजिए और फिर उसमें २ तुला (१२॥ सेर) गुड़ तथा ४० तोले धायके फूल एवं १-१ पल (५-५ तोले) बायबिड़ंग, फूलप्रियंगु, पीपल, दारचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, और कालीमिर्चका चूर्ण मिलाकर घृतसे चिकने किये हुवे मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दीजिए। और थोड़े दिनों (१५ दिन) पश्चात् निकालकर छान लीजिये ।

इसके सेवनसे खांसी, श्वास, राजयक्ष्मा और उरःक्षतका नाश होता है ।

नोट-जिन ग्रन्थों में धायके फूल नहीं लिखे उनमें प्रयोगके अन्तमें यह श्लोक अधिक मिलता है-
चतुर्थभागं द्राक्षाया धातकीमत्र केचन ।
प्रयच्छन्ति ततो वीर्यमेतस्योच्चैः प्रजायते ॥

(३१२९) **द्राक्षासवः** (२)

(वै. र. । वाजी.; नपुं. । त. २)

द्राक्षा तुलामुपादाय जलद्रोणचतुष्टये ।
पक्त्वा चतुर्थशेषन्तु तं कषायमुपाहरेत् ॥
दत्त्वा गुडतुलां तत्र धातकीमस्थमेव च ।
निखात्य स्थापयेद्भूमौ यावतासौ वरो भवेत् ॥
ततस्तत्सारमादद्याद्वारुणीयन्त्रतः शनैः ।
पुनस्तं वारुणीयन्त्रे समारोप्य तदाहरेत् ॥
एवं तु दशधा सारं पौनः पुन्येन संहरेत् ।
ततस्तस्मिंश्चतुर्जातं जातिकोशं लवङ्गकम् ॥
कर्पूरं कुङ्कुमं चापि यथालाभं नियोजयेत् ।
तं यथाग्निबलं मर्त्यः पिबेत्सर्वक्षयापहम् ॥
स्निग्धेन भोजनेनैव आसवं विधिना पिबेत्
नरो नवतिवर्षीयोप्यनेन दशकामिनीः ।
प्रत्यहं रमयत्येव पौरुषेण न हीयते ॥

१ तुला (६। सेर) मुनक्का को ४ द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें; जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें १०० पल (६। सेर) गुड़ और १ सेर (८० तोले) धायके फूलोंका चूर्ण मिलाकर मिट्टीके चिकने मटकेमें भरदें और उसका मुख बन्द करके भूमि में दबा दें । जब आसव तैयार हो जाय (१५-२० दिन बाद) उसको निकालकर भबके से खींच लें और फिर उस खिंचे हुवे अर्कको दुबारा खींचें, इसी प्रकार दश बार भबकेसे खींच कर उसमें यथोचित परिमाणमें दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, जावित्री, लौंग, कपूर, और केसरका चूर्ण मिलाकर रक्खें ।

इसे अग्निबलोचित मात्रानुसार पीने और स्निग्ध भोजन करनेसे क्षय रोग नष्ट होता है । तथा इसके सेवनसे ९० वर्षका वृद्ध भी युवाके समान स्त्री समागम कर सकता है ।

(३१३०) द्राक्षासवः (मृद्वीकासवः) (३)

(शा. ध.; ग. नि. । आसवा.; यो. र.; वृ. नि. र. । संग्र.)

मृद्वीकायाः पलशतं चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ।
द्रोणशेषे सुशीते च पूते तस्मिन्प्रदापयेत् ॥
द्वे शते क्षौद्रखण्डाभ्यां धातक्याः प्रस्थमेव च ।
कङ्कोलकलवङ्गे च जातीफलमथैव च ॥
पलांशकानि मरिचत्वगेलापत्रकेसरम् ।
पिप्पली चित्रकं चव्यं पिप्पलीमूलं रेणुकम् ॥
घृतभाण्डे स्थितं चेदं चन्दनागुरुधूपिते ।
कर्पूरवासितो ह्येष ग्रहण्यां दीपनः परः ॥
अर्शसां नाशनः श्रेष्ठः उदावर्त्तास्रपित्तनुत् ।
जठरकृमिकुष्ठानि व्रणांश्च विविधांस्तथा ॥
अक्षिरोगशिरोरोगगलरोगविनाशनः ।
ज्वरं हन्ति महाव्याधिं पाण्डुरोगं सकामलम् ॥
नाम्ना द्राक्षासवो ह्येष बृंहणो बलवर्णकृत् ॥

१०० पल मुनक्का को ४ द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें। जब १ द्रोण (३२ सेर) पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर ठण्डा करके उसमें १००–१०० पल (हरेक ६। सेर) खांड और शहद तथा १ प्रस्थ (८० तोले) धायके फूल एवं १–१ पल (५–५ तोले) कंकोल, लौंग, जायफल, कालीमिर्च, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, पीपल, चीता, चव, पीपलामूल और रेणुकाका चूर्ण मिलाकर घृतसे चिकने किये हुवे तथा चन्दन और अगर से धूपित मटके में भर कर उसका मुख बन्द करके १५ दिन तक रक्खा रहने दीजिये। तत्पश्चात् छानकर उसमें सुगन्ध के लिये थोड़सा कर्पूर कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर डाल दीजिये और सुगन्धित हो जाने पर बोतलों में भरकर रखिये।

यह "द्राक्षासव" ग्रहणी, अर्श, उदावर्त, रक्तपित्त, उदरके कृमि, कुष्ठ, अनेक प्रकारके व्रण, नेत्ररोग, शिरोरोग, गलरोग, ज्वर, पाण्डु और कामलाको नष्ट करता तथा बल वर्ण वीर्य और अग्निकी वृद्धि करता है।

(मात्रा—२–३ तोले । पानीमें डालकर भोजनके बाद पीना चाहिये।)

(३१३१) द्राक्षासवः (४)

(ग. नि. । आस.; यो. र. । अर्श.; वृ. नि. र. । संग्र.)

द्राक्षापलशतं दत्त्वा चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ।
द्रोणशेषे रसे तस्मिन्पूते शीते प्रदापयेत् ॥
शर्करायास्तुलां दत्त्वा तत्तुल्यं मधुनस्तथा ।
पलानि सप्तधातक्याः स्थापयेदाज्यभाजने ॥
जातीलवङ्गकङ्कोललवलीफलचन्दनैः ।
कृष्णां त्रिगन्धसंयुक्तां भागैरर्धपलांशकैः ॥
त्रिसप्ताहाद्भवेत्पेयं तत्र मात्रा यथाबलम् ।
नाम्ना द्राक्षासवो ह्येष नाशयेद्गुदकीलकान् ॥
शोफारोचकहृत्पाण्डुरक्तपित्तभगन्दरान् ।
गुल्मोदरकृमिग्रन्थिक्षतशोषज्वरान्तकृत् ॥
वातपित्तप्रशमनः शस्तश्च बलवर्णकृत् ॥

१०० पल (६। सेर) द्राक्षा (मुनक्का) को ४ द्रोण (१२८ सेर) पानी में पकावें जब ३२ सेर पानी शेष रहे तो उसे छानकर और ठण्डा करके उसमें १ तुला (६। सेर) खांड और १ तुला शहद, ७ पल (३५ तोले) धायके फूलोंका चूर्ण, तथा २॥–२॥ तोले जावित्री, लौंग,

कंकोल, लवली फल (हरफारेवरी), सफेद चन्दन, पीपल, दालचीनी, इलायची और तेजपात का चूर्ण मिलाकर चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दीजिये। ३ सप्ताह पश्चात् आसव तैयार हो जायगा तब उसे निकालकर छान लीजिये।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अर्श, शोथ, अरुचि, हृदय रोग, पाण्डु, रक्तपित्त, भगन्दर, गुल्म, उदररोग, कृमि, ग्रन्थि, क्षत, शोष, ज्वर और वातपित्तज रोग नष्ट होते तथा बल वर्णकी वृद्धि होती है।

(मात्रा २-३ तोले। भोजनोपरान्त पानीमें मिलाकर पीना चाहिये।)

(३१३२) **द्राक्षासवः** (महा) (५)

(यो. चिं.। अ. ७)

द्राक्षायाश्च पलशतं सितायास्तच्चतुर्गुणम्।
कर्कन्धुमूलं तस्यार्द्धं मूलार्द्धं पुष्पधातुकी॥
क्रमुकं च लवङ्गञ्च जातिपुष्पफलानि च।
चातुर्जातं त्रिकटुकं मस्तकीकरहाटकम्॥
आकल्लकरभं कुष्ठं पलानि दशमाहरेत्।
एभ्यश्चतुर्गुणं तोयं भाण्डे चैव विनिक्षिपेत्॥
स्थापयेत् भूमिमध्ये तु चतुर्दशदिनानि च।
ततो जातरसं शुद्धं क्षिपेत्कच्छपयन्त्रके॥
मुद्रयित्वा च तस्याधो वह्निं प्रज्वालयेत्सुधी।
तस्यांतश्च्यवितं सीधुं गृह्णीयात् सर्वमेव तत्॥
पुनरेव च तत्सीधुं क्षिपेत्कच्छपयन्त्रके।
धाराधोनिक्षिपेत्तस्य मृगनाभिं सकुङ्कुमम्॥
एतत्सिद्धं क्षिपेद्धीमान् काचभाण्डे निधापयेत्।
त्रिदिनेषु व्यतीतेषु तत्पेयं पलसंख्यया॥
मध्याह्ने द्विपलं ग्राह्यं सन्ध्याकाले चतुःपलम्।
गरिष्ठं स्निग्धमाहारं भक्षयेदस्य सेवकः॥
वीर्याभिवृद्धिःप्रभवेन्नराणां
रामासु वश्यो भवतीह लोके।
त एव धन्या मनुजा नरेन्द्राः
द्राक्षासवं ये किल सेवयन्ति॥

दाख (मुनक्का) १०० पल (६। सेर), खांड ४०० पल, बेरीकी जड़ २०० पल, धायके फूल १०० पल, तथा सुपारी, लौंग, जावित्री, जायफल, दारचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, सोंठ, मिर्च, पीपल, रूमीमस्तगी, पद्मकन्द, अकरकरा और कूठ, १०-१० पल लेकर कूटने योग्य चीजोंको कूटकर मिट्टीके चिकने पात्रमें भरकर उसमें सबसे ४ गुना पानी डाल दें और उसका मुख बन्द करके भूमिमें दबा दें एवं १४ दिन पश्चात् उसमें से आसवको निकाल कर कच्छप यन्त्र (मदिरा खींचनेके यन्त्र) में डालकर उसका अर्क खींचें और फिर उस अर्क को दूसरी बार उसी प्रकार खींचें परन्तु अबकी बार एक पोटली में केसर और कस्तूरी बांधकर यन्त्रके मुंह पर (जहांसे अर्क टपकता है उस जगह) लगा दें। अब इस अर्कको बोतलों में भरकर रख दें और तीन दिन पश्चात् सेवन करें।

इसमेंसे मध्याह्नमें २ पल (१० तोले) और शामको ४ पल अर्क पीना और भारी तथा स्निग्ध आहार करना चाहिये।

इसे सेवन करनेसे अत्यन्त वीर्य वृद्धि होती है। वह लोग, जो इसे सेवन करते हैं धन्य हैं।

(व्यवहारिक मात्रा-२ से ४ तोले तक।)

नोट—आसव किसी इतने बड़े बरतन में बनाना चाहिये कि जिसमें सब चीजें डालने के बाद उसका कमसे कम १ चौथाई भाग खाली रहे । यदि इतना बड़ा मिट्टीका बरतन न मिल सके तो लकड़ी की कोठीमें बनाया जा सकता है ।

इति दकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम् ।

अथ दकारादिलेपप्रकरणम्

(३१३३) **दग्धयवादिलेपः**

(भै. र. । सद्योव्रणा.)

तिलतैलैर्यवान् दग्ध्वा समं कृत्वा तु लेपयेत् ।
तेनैव लेपनादाशु वह्निदग्धः सुखी भवेत् ॥

जौकी राखको तिलके तेलमें घोटकर लेप करनेसे अग्निदग्धव्रण शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(३१३४) **दधित्थादिशिरोलेपः**

(ग. नि. । ज्वरा.; वं. से.; यो. र.; भा. प्र. । तृष्णा.)

दधित्थं दाडिमं रोध्रं विदारीं बीजपूरकम् ।
शिरःप्रदेहः श्रेष्ठोऽयं तृष्णादाहनिवारणः ॥

कैथकी छाल, अनारकी छाल, लोध, बिदारीकन्द और बिजौरा नीबू समान भाग लेकर पानीके साथ पीसकर शिरपर लेप करने से तृष्णा और दाह नष्ट होती है ।

नोट—बंगसेनादिमें **विदारी**की जगह **बदरी** (बेरीके पत्ते) लिखा है ।

(३१३५) **दध्यादिलेपः**

(वृ. नि. र. । सन्नि.)

शमयति दाहमचिराद्दधियुक्कर्कन्धुपल्लवैर्लेपः ।
लेपो हिमकरमलयजनिम्बदलैस्तक्रपिष्टैर्वा ॥

बेरीके पत्तोंको दहीमें पीसकर या कपूर, सफेद चन्दन, और नीमके पत्तोंको तक्रमें पीसकर (शिरपर) लेप करनेसे सन्निपात ज्वरकी दाह शान्त होती है ।

(३१३६) **दन्तीमूलादिलेपः**

(वृ. नि. र.; यो. र । व्रणशोथ; वा. भ. । चि. अ. १८; वृ. नि. र. । कर्णके; वं. से. । ग्रन्थि.)

दन्तीचित्रकमूलत्वक्स्नुह्यर्कपयसी गुडः ।
भल्लातकास्थिकाशीससैन्धवैर्दारणः स्मृतः ॥

दन्तीमूल, चीतेकी जड़की छाल, सेंड (सेहुंड) का दूध, आकका दूध, गुड़, भिलावेकी गिरी, कसीस, और सेंधा नमक । सब चीजें समान भाग लेकर पानीके साथ पीसकर लेप करनेसे ग्रन्थि फट जाती है ।

(३१३७) **दन्त्यादिलेपः** (१)

(वं. से. । विद्र.)

दन्तीचित्रकगोदन्तचिरबिल्वाश्वमारकान् ।
आन्तरे वितरेद्विद्वान् पक्वे शोथविद्रधौ ॥

दन्तीमूल, चीता, गायका दांत, करञ्ज बीज और कनेरकी जड़की छाल समान भाग लेकर

पानीके साथ पीस लें । पक्व और शोथयुक्त अन्तर्विद्रधि में इसका लेप करना हितकारक है ।

(३१३८) **दन्त्यादिलेपः** (२)

(रा. मा. । क्षुद्ररोगा.)

निकुम्भवातारिफलैर्जलेन
संपेषितैर्यः कुरुते प्रलेपम् ।
तस्योपशान्तिं पिटिकाः प्रयान्ति
समस्तदोषप्रभवाः क्षणेन ॥

दन्तीके बीज (जमाल गोटा) और अरण्डके बीजोंको पानीके साथ पीसकर लेप करनेसे सभी दोषोंसे उत्पन्न पिटिकाएं (फुंसियां) अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाती हैं ।

(३१३९) **दन्त्यादिलेपः** (३)

(रा. मा. । अ. १७; ग. नि. । भगन्दरा.)

दन्तीनिशामलकलेपितमाशु नाशं
पुंसां भगन्दरमुपैत्यपि दुर्निवारम् ।

दन्तीमूल, हल्दी और आमलेको पानीके साथ पीसकर लेप करनेसे दुस्साध्य भगन्दर भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(३१४०) **दरदादिलेपः**

(यो. र. । कुष्ठ; वृ. नि. र. । त्वग्दो.)

दरदगन्धकपारदपिप्पली-
विषविडङ्गनिशाग्निमरीचकम् ।
अभयशुण्ठिघनाब्धिकवाकुची
कटुनृपद्रुमभेडगजान्वितम् ॥
सममिदं खलु निम्बरसैर्युतं
हरति दद्रुजकण्डुविसर्पकान् ।
हरति लूतभगन्दरमण्डलं
तनुविलिप्तमहो क्षणतो नृणाम् ॥

हिंगुल (शंगरफ), गन्धक, पारा, पीपल, मीठातेलिया (बछनाग), बायबिडंग, हल्दी, चीता, काली मिर्च, हर्र, सोंठ, नागरमोथा, समुद्रफेन, बावची, कपूर, अमलतासके पत्ते, और पंवाड़के बीज समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर अन्य ओषधियों का महीन चूर्ण मिलाकर घोटें । इसे नीमके रसमें मिलाकर लेप करने से दादकी खाज, विसर्प, लूताविष (मकड़ीका ज़हर), भगन्दर और मण्डल कुष्ठ, अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है ।

(३१४१) **दशाङ्गलेपः**

(वृ. यो. त. । त. २३; शा. स. । उ. अ. ११; वं. से.; वृ. नि. र.; यो. र.; ग. नि. । विसर्प; यो. त. । त. ६५)

शिरीषयष्टीनतचन्दनैला मांसीहरिद्राद्वयकुष्ठवालैः।
लेपो दशाङ्ग सघृतः प्रयोज्यो वीसर्पकुष्ठव्रण-
शोथहारी ॥

सिरसकी छाल, मुलैठी, तगर, लाल चन्दन, इलायची, जटामांसी, हल्दी, दारुहल्दी, कूठ, और सुगन्ध बाला । सब चीज़ोंका समान भाग महीन चूर्ण लेकर एकत्र मिलावें ।

इसे घीमें मिलाकर लगानेसे विसर्प, कुष्ठ, व्रण और शोथ नष्ट होता है ।

(३१४२) **दारुषट्कादिलेपः**

(सु. सं.; वृ. नि. र. । आनाह; भा. प्र. । शूल.; भा. प्र. ख. २ । वात.; वृ. नि. र. । वात.; वृ. यो. त. । त. ९०)

देवदारु वचा कुष्ठं शताह्वा हिङ्गु सैन्धवम् ।
प्रपिष्ट्वा काञ्जिके लेपादानाहं नाशयत्यपि ॥

देवदार, बच, कूठ, सोया, हींग और सेंधा नमकको काञ्जीमें पीसकर लेप करनेसे आनाह नष्ट होता है ।

(३१४३) **दार्व्यादिलेपः** (१)

(यो. र.; वृ. नि. र.; र. र. । उपदंश.)

त्वचो दारुहरिद्रायाः शङ्खनाभी रसाञ्जनम् ।
लाक्षागोमयनिर्यासस्तैलं क्षौद्रं घृतं पयः ॥
एभिः सुपिष्टैर्द्रव्यांशैरुपदंशं प्रलेपयेत् ।
व्रणाश्च तेन शाम्यन्ति श्वयथुर्दाह एव च ॥

दारु हल्दीकी छाल, शंखकी नाभि, रसौत, लाख, गायके गोबरका रस, तैल, शहद, घी और दूध । सब चीजें समान भाग लेकर पीसने योग्य चीजोंको महीन पीसकर सबको एकत्र मिलावें ।

इसे उपदंशके घावों पर लगाने से घाव और उनकी सूजन तथा दाह नष्ट हो जाती है ।

(३१४४) **दार्व्यादिलेपः** (२)

(यो. र.; वृ. नि. र. । शिरो.)

दार्वीहरिद्रा मञ्जिष्ठा सनिम्बोशीरपद्मकम् ।
एतत्प्रलेपनं कुर्याच्छङ्खस्य प्रशान्तये ॥

दारुहल्दी, मजीठ, नीमकी छाल, खस और पद्माक समान भाग लेकर पानीके साथ पीसकर लेप करने से शङ्खक रोग शान्त होता है ।

(३१४५) **दूर्वादिलेपः** (१)

(वृ. मा.; ग. नि । शीतपि.; शा. सं. । लेपा.; र. चं. । शीतपित्ता.; रसें. चिं. । अ. ९)

दूर्वानिशायुतो लेपः कच्छूपामाविनाशनः ।
कृमिदद्रुहरश्चैव शीतपित्तहरः स्मृतः ॥

दूब घास और हल्दी का लेप करनेसे कच्छू, पामा, कृमि, दाद और शीतपित्तका नाश होता है।

(३१४६) **दूर्वादिलेपः** (२)

(ग. नि.; वृं. मा.; यो. र.; वं. से. । व्रणरो.; शा. सं. । लेपा.)

दूर्वा च नलमूलञ्च मधुकं चन्दनं तथा ।
शीतलाश्च गणाः सर्वे प्रलेपः पित्तशोफहा ॥

दूब घास, खस, मुलैठी, लाल चन्दन, और अन्य शीतल गणोंके पदार्थोंका लेप करनेसे घावोंका पित्तज शोथ नष्ट होता है ।

(३१४७) **दूर्वादि लेपः** (३)

(वृं. मा.; वं. से.; ग. नि. । कुष्ठा.; वृ. नि. र. । त्वग्दो.; शा. सं. । लेपा.)

दूर्वाभयासैन्धवचक्रमर्द
कुठेरकाः काञ्जिकतक्रपिष्टाः ।
त्रिभिः प्रलेपैरपि बद्धमूलां
दद्रुं च कण्डुं च विनाशयन्ति ॥

दूब, हर्र, सेंधा, पंवाड़के बीज और तुलसी को काञ्जी या तक्रमें पीसकर केवल तीन बार ही लेप करनेसे पुराना दाद और खुजली नष्ट हो जाती है ।

(३१४८) **दूर्वारसादिलेपः**

(च. द.; वृं. मा. । नेत्ररो.)

कल्किताः सघृता दूर्वायवगैरिकशारिवाः ।
मुखलेपाः प्रयोक्तव्या रुजा रोगोपशान्तये ॥

दूब घास, जौ, गेरु मिट्टी और सारिवाके महीन चूर्णको घीमें मिलाकर लेप करनेसे नेत्रोंकी पीड़ा शान्त होती है ।

(३१४९) **देवदार्वादिलेपः** (१)

(वृ. नि. र.; ग. नि; वृं. मा. । शिरो.)

देवदारु नतं विश्वं नलदं विश्वभेषजम् ।
लेपः काञ्जिकसम्पिष्टस्तैलयुक्तः शिरोर्त्तिनुत् ॥

देवदारु, तगर, बोल, खस और सोंठ को काञ्जीके साथ पीसकर तैलमें मिलाकर लेप करनेसे शिरपीड़ा शान्त होती है ।

(३१५०) **देवदार्वादिलेपः** (२)

(वृं. मा.; वं. से. । गलगण्डा.)

देवदारुविशाले च कफगण्डे प्रलेपनम् ।
छर्दनं शीर्षरेकश्च सर्वो रेचनिको हितः ॥

कफज गलगण्ड रोगमें देवदारु और इन्द्रायणकी जड़का लेप करना तथा वमन विरेचन और शिरो विरेचन कराना चाहिये ।

(३१५१) **देवदार्वादिलेपः** (३)

(वा. भ. । चि. अ. १५; च. सं. । चि. अ. १८; यो. र.; ग. नि. । उदररो.)

देवदारुपलाशार्कहस्तिपिप्पलिशिग्रुभिः ।
साश्वगन्धैः सगोमूत्रैः प्रदिह्यादुदरं शनैः ॥

उदर व्याधिमें देवदार, ढाककी छाल, आककी छाल, गजपीपल, सहंजनेकी छाल, और असगन्धको गोमूत्रमें पीसकर पेटपर लेप करना चाहिये ।

(३१५२) **देवदार्वादिलेपः** (४)

(वं. से. । क्षुद्र.)

सुरदारुशिलाकुष्ठैः स्वेदयित्वा प्रलेपयेत् ।
कफमारुतशोथघ्नो लेपः पाषाणगर्दभे ॥

कफवातज पाषाणगर्दभ रोग (ठोडीकी सन्धिकी सूजन) में पसीना दिलाने के बाद देवदारु, मनसिल और कूठका लेप करना चाहिये ।

(३१५३) **दोषघ्नलेपः**

(शा. सं. । उ. अ. ११; भा. प्र. । प्र. ख.)

पुनर्नवां दारु शुण्ठीं सिद्धार्थं शिग्रुमेव च ।
पिष्ट्वा चैवारनालेन प्रलेपः सर्वशोथजित् ॥

पुनर्नवा (बिसखपरा) देवदारु, सोंठ, सफेद सरसों और सहंजनेकी छालको काञ्जीके साथ पीसकर लेप करनेसे हर प्रकारकी सूजन नष्ट हो जाती है ।

(३१५४) **द्राक्षादिलेपः**

(ग. नि. । मुख.)

द्राक्षा पटोलं मधुकं सनिम्बं
त्रिवृद्धरिद्रा सुमनः प्रवालाः ।
ससैन्धवं क्षौद्रयुतं वदन्ति
सुखोष्णकल्कं व्रणशोधनीयम् ॥

दाख, पटोलपत्र, मुलैठी, नीमकी छाल, निसोत, हल्दी, चमेलीकी कोंपल, और सेंधा नमक के महीन चूर्णको शहदमें मिलाकर मन्दोष्ण करके लेप करने (या व्रणपर बांधने) से व्रण शुद्ध हो जाता है ।

(३१५५) **द्विनिशादियोगः**

(वै. म. र. । प. १८)

द्विनिशातिलरुग्राजीकल्कोद्वर्तितविग्रहः ।
यः स्नाति तस्य देहः स्यात् सुगन्धिर्भास्करच्छविः ॥

हल्दी, दारु हल्दी, तिल, कूठ, और लाल सरसों (या बावची) को पानीमें पीसकर शरीर पर उबटनकी भांति मलनेके पश्चात् स्नान करनेसे शरीर सुगन्धियुक्त और सुन्दर हो जाता है ।

(३१५६) **द्विनिशादिलेपः** (१)

(शा. सं. । उ. अ. ११)

द्वेनिशे चन्दने द्वे च शिवा दूर्वा पुनर्नवा ।
उशीरं पद्मकं लोध्रं गैरिकञ्च रसाञ्जनम् ॥
आगन्तुके रक्तजे च शोथे कुर्यात्प्रलेपनम् ॥

हल्दी, दारु हल्दी, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, हर्र, दूर्वा, पुनर्नवा, खस, पद्माक, लोध,

गेरु और रसौत । सब चीज़ों के समान भाग मिश्रित चूर्णको पानीमें पीसकर लेप करनेसे आगन्तुक और रक्तज शोथ नष्ट होता है ।

(३१५७) **द्विनिशादिलेपः** (२)

(वं. से. । विषरो.)

द्विनिशा गैरिकं लेपो नखदन्तविषापहः ।
गोजिह्वामधुना लेपो नखदन्तविषप्रणुत् ॥

हल्दी, दारु हल्दी और गेरु अथवा गोजिह्वा के चूर्णको शहदमें मिलाकर लेप करनेसे दन्त और नख जनित विष नष्ट होता है ।

इति दकारादिलेपप्रकरणम् ।

अथ दकारादिधूपप्रकरणम्

(३१५८) **दरदादिप्रयोगः**

(वै. रह. । फिरंगवा.)

शाणं हिङ्गुलकं शाणं कुनट्या यवचूर्णकम् ।
शाणद्वादशकं बद्ध्वा वर्टीं बदरसन्निभाम् ॥
बदरीमूलशिखिना प्रक्षिप्यैकां वर्टीं प्रगे ।
सायं धूमं गुदे दद्याद्धन्तिप्राम फिरङ्गकम् ॥
वातं न चात्र सन्देहो नुर्निर्वातस्थितस्य च ।
परित्यक्तपटोः सप्तदिनाद्वा द्विगुणावधेः ॥

हिंगुल (शिंगरफ) ५ माशे, मनसिल ५ माशे और जौका आटा ५ तोले लेकर सबको एकत्र घोटकर पानीकी सहायतासे बेरके बराबर गोलियां बनावें ।

१ गोली प्रातः काल और १ सायंकाल बेरीके कोयलोंकी आग पर डालकर गुदाको उसका धुवां देना चाहिये ।

इस प्रयोगसे फिरंगरोग (आतशक) अवश्य नष्ट हो जाता है ।

इस प्रयोगमें रोगीको वात रहित स्थानमें रहना चाहिये तथा सात दिन अथवा १४ दिन तक नमक न खाना चाहिये ।

(धूनी चारपाई, बेतसे बुनी हुई कुरसी या छिद्र-युक्त मूढे पर बैठकर ऊपरसे चादर ओढ़कर लेनी चाहिये ।)

(पथ्य—बेसनकी रोटी और घृत ।)

(३१५९) **दशाङ्गधूपः** (१)

(वा. भ. । उ. अ. ३)

बचाहिङ्गुविडङ्गानि सैन्धवं गजपिप्पली ।
पाठा प्रतिविषा व्योषं दशाङ्गः कश्यपोदितः ॥

बच, हींग, बायबिडंग, सेंधा, गजपीपल, पाठा, अतीस, सोंठ, मिर्च और पीपल । सबका चूर्ण समान भाग लेकर मिलावें ।

(इसकी धूप देनेसे बालकों के ग्रहदोष नष्ट होते हैं ।)

(३१६०) **दशाङ्गधूपः** (२)

(वं. से; धन्वन्तरि । विषरो.)

बिल्वपुष्पत्वचौ मांसी फलिनी नागकेसरम् ।
शिरीषं तगरं कुष्ठं हरितालं मनःशिला ॥

एतानि समभागानि पेषयेत्सलिलेन तु ।
समभ्यङ्ग्य ततो गात्रं सर्पदष्टार्त्तिदारणः ॥
विषान्वा भक्षयेदुग्रान्गरांश्च विविधान् हरेत् ।
कन्यासंवरणं गच्छेद्युद्धे देवासुरोपमः ॥
राजद्वारेषु सर्वेषु धूपैश्चैवापराजितः ।
बृहस्पतिरिति प्रोक्तो ब्रह्मणा निर्मितः स्वयम् ॥
नाग्निर्दहति तद्वेश्म प्रभवन्ति न राक्षसाः ।
न म्रियन्ते तथा बाला दशाङ्गो यत्र तिष्ठति ॥

बेलके फूल और छाल, बालछड़, फूलप्रियंगु, नागकेसर, सिरसकी छाल, तगर, कूठ, हरताल और मनसिल; सबका समान भाग चूर्ण लेकर पानीके साथ पीसलें ।

इसे शरीरपर लगानेसे सर्प विष अथवा विष भक्षणका असर नहीं होता ।

इति दकारादिधूपप्रकरणम् ।

अथ दकारादिधूम्रप्रकरणम्

(३१६१) **दन्तीधूमः**

(वृ. नि. र. । कास.)

दन्तिमूलस्य धूमं वा निर्गुण्डीं चापि योजयेत् ।
श्लेष्मकासं न सन्देहो धूमपानेन तत्क्षणात् ॥

दन्तीमूल या निर्गुण्डी (संभालु) का धूम्रपान करनेसे कफज खांसी अवश्य तुरन्त ही नष्ट हो जाती है ।

(३१६२) **दरदादिप्रयोगः**

(वै. र. । फिरङ्गवात)

दरदं टङ्कमात्रं स्याद्यावचूर्णं त्रितोलकम् ।
टङ्कणं कर्षमेकं च घृष्ट्वैतत्त्रितयं क्षणात् ॥
आबद्ध्यवटिकां वारा बदरीप्रमितां बुधः ।
तस्या धूमं प्रगे दद्यात्पातुं कोलाग्निनास्य तु ॥
आच्छादिताङ्गिनः सायं गोदुग्धौदनसेविनः ।
चतुर्दशदिनाज्जन्तोस्ताम्बूलखदिराशिनः ॥
सोपि मुक्तो भवेद्रोगात्फिरङ्गानिलतो द्रुतम् ॥

हिंगुल (शंगरफ) ५ माशे, जौका चूर्ण ३ तोला और सुहागा १। तोला लेकर तीनोंको पानीके साथ पीसकर बेरके बराबर गोलियां बनावें ।

इसमें से एक गोली प्रातः काल चिलममें रक्खें और उसपर बेरीकी अग्नि रखकर उसका धूम्र पान करें । शामको गायका दूध और भात खावें । तथा शरीरपर कपड़ा ओढ़े रहें और कत्था लगे पानका सेवन करें । इससे १४ दिनमें फिरंग रोग नष्ट हो जाता है ।

(३१६३) **देवदार्वादिधूम्रप्रयोगः**

(भा. प्र. । ख. २ श्वा.)

देवदारुबलामांसीः पिष्ट्वा वर्त्तिं प्रकल्पयेत् ।
तां घृताक्तां पिबेद्धूमं श्वासं हन्ति सुदारुणम् ॥

देवदारु, खरैटी, और बालछड़ समान भाग लेकर महीन चूर्ण करें और उसे पानीके साथ घोट कर बत्तियां बनालें । इनको घृतमें भिगोकर धूम्र पान करनेसे भयङ्कर श्वास भी नष्ट हो जाता है ।

इति दकारादिधूम्रप्रकरणम् ।

अथ दकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(३१६४) दक्षाण्डत्वकाद्यञ्जनम्

(ग. नि. । नेत्ररो.)

दक्षाण्डत्वग्विशालाशङ्खकाचचन्दनगैरिकैः ।
तुल्यैरञ्जनयोगोऽयं पुष्पार्मादिविलेखनः ॥

मुरगीके अण्डेके छिलके, मनसिल, शंख, काच, लाल चन्दन और गेरु समान भाग लेकर सुरमेकी भांति महीन पीसें ।

इसे आंख में लगानेसे नेत्रफूला और अर्मादि नष्ट होता है ।

(३१६५) दन्तवर्तिः

(भै. र; वं. से; च. द.; ग. नि; धन्व; र. का. धे. । नेत्ररो.; वा. भ. । उ. अ. १०)

दन्तैर्दन्तिवराहोष्ट्रगवाश्वाजखरोद्भवैः ।
सशङ्खमौक्तिकाम्भोधिफेनैर्मरिचपादिकैः ॥
क्षतशुक्रमपि व्याधिं दन्तवर्त्तिर्निवर्त्तयेत् ॥

हाथी, सुवर, ऊंट, गाय, घोड़ा, बकरा और गधेका दांत तथा शंख, मोती और समुद्रफेन १-१ भाग और इन सबके चूर्णसे चतुर्थांश काली मिर्चका चूर्ण लेकर सबको पानीके साथ घोटकर बत्तियां बनावें ।

यह 'दन्तवर्ति' व्रणशुक्र को भी नष्ट कर देती है ।

नोट—सब चीज़ोंको अलग अलग महीन पीसकर तोलना चाहिए ।

(३१६६) दार्वीरसक्रिया

(वं. से. । नेत्ररोगा.)

दार्वीपटोलं मधुकं सनिम्बं पद्मकोत्पलम् ।
प्रपौण्डरीकं चतानि पचेत्तोये चतुर्गुणे ॥
विपाच्य पादशेषन्तु तत्पुनः कुडवं पचेत् ।
शीते तस्मिन्मधुसिते दद्यात्पादांशिके ततः ॥
रसक्रियैषा दाहाश्रुरोगरक्तरुजापहा ॥

दारु हल्दी, पटोल, मुलैठी, नीमकीछाल, पद्माक, कमल, और पुण्डरिया (प्रपौण्डरीक) । सब चीज़ें समान भाग लेकर अधकुटा करके आठ गुने पानीमें पकावें । जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर पुनः पकावें और गाढ़ा होने पर ठण्डा करके उसमें उसका चौथा भाग शहद और मिश्री (हरेक आठवां भाग) मिलादें ।

इसे आंखमें आंजनेसे दाह, आंसु बहना और पित्तज नेत्र रोग नष्ट होते हैं ।

(३१६७) दार्व्याद्यञ्जनम्

(यो. र. । नेत्र.)

दार्वीवरामधुकमम्भसि नारिकेले
पक्त्वाऽष्टभागपरिशिष्टरसं पुनस्तम् ।
सान्द्रं विपाच्य शशिसैन्धवमाक्षिकाढ्यम्
युञ्ज्याद्व्रणार्त्तितिमिरार्तिषु पित्तजेषु ॥

दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला और मुलैठी । सब चीज़ोंका चूर्ण १-१ भाग लेकर आठ गुने नारयलके पानीमें पकावें और जब आठवां भाग

पानी शेष रहे तो उसे छानकर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें १-१ भाग सेंधानमक, कपूर और सोनामक्खी भस्म मिलाकर घोटें।

इसे आंखमें आंजनेसे पित्तज तिमिर और नेत्र व्रण नष्ट होता है।

(३१६८) दिव्यदृष्टिकरो रसः

(र. सं. क. । उल्ला. ४)

रसं नागाञ्जनं चन्द्रमेकैकं द्व्यर्धभागिकम् ।
सूक्ष्मचूर्णीकृतं नेत्रस्याञ्जनाद्दिव्यदृष्टिकृत् ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध सीसा १ भाग, सुरमा २ भाग और कपूर आधा भाग लेकर अत्यन्त महीन पीसकर अञ्जन बनावें।

इसे आंखमें लगानेसे दिव्य दृष्टि हो जाती है।

(विधि—प्रथम सीसेको पिघलाकर उसमें पारेको धार बांध कर डालें और घोटकर एक जीव करें तत्पश्चात् उसमें सुरमा और कपूर मिलावें।)

(३१६९) दृक्प्रसादनी वर्तिः

(च. सं. । चि. अ. २६ त्रिमर्म. चि.)

अमृताह्वा बिसं बिल्वं पटोलं छगलं शकृत् ।
प्रपौण्डरीकं यष्ट्याह्वं दार्वी कालानुसारिवा ॥
सुधौतं जर्जरी कृत्य कृत्वा चार्धपलांशिकान् ।
जले पक्त्वा रसे पूते पुनः पक्के घने रसे ॥
कर्षं च श्वेतमरिचाज्जातीपुष्पान्नवात्पलम् ।
चूर्णं क्षिप्त्वा कृता वर्तिः सर्वघ्नी दृक्प्रसादनी ॥

गिलोय, मृणाल (कमलनाल), बेलछाल, पटोल, बकरीकी मींगन (मल), प्रपौण्डरीक (पुंडरिया), मुलैठी, दारु हल्दी और कृष्ण सारिवा आधा आधा पल (२॥-२॥ तोले) लेकर सबको अच्छी तरह धोकर, कूटकर आठ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग पानी शेष रहने पर छानकर उसे पुनः पकावें। जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें १। तोला श्वेत मरिच (सहंजनेके बीजों) का और ५ तोले चमेलीके नवीन पुष्पोंका चूर्ण मिलाकर वत्तियां बनावें।

इन्हें आंखमें लगानेसे नेत्रोंके समस्त रोग नष्ट होते और दृष्टि स्वच्छ होती है।

(३१७०) दृष्टिप्रदमञ्जनम्

(र. का. धे. । अधि. ५६)

सौवीरं सीसकं ताम्रभस्म वंगं च मौक्तिकम् ।
काचं च रसकं शंखनाभिस्यन्दं कुलित्थिका ॥
मेहदीबीजकस्तूरीकर्पूरं च समं समम् ।
अञ्जनं नेत्ररोगेषु दृष्टिरोगेषु सर्वशः ॥

सौवीराञ्जन, सीसा, ताम्रभस्म, बंग भस्म, मोती, काच, शुद्ध खपरिया, शंखनाभि, कुलथी, मेंहदीके बीज, कस्तूरी और कपूर समान भाग लेकर अञ्जन बनावें।

इसे आंखमें आंजनेसे समस्त नेत्ररोग नष्ट हो जाते हैं।

(३१७१) दृष्टिप्रदा वर्त्तिः (१)

(र. का. धे. । अ. ५५-५६; वं. से.; च. द.; ग. नि; रा. मा.; भै. र. । नेत्र; च. सं. । चि. अ. २६.)

त्रिफला कुक्कुटाण्डत्वक् कासीसमयसोरजः ।
नीलोत्पलं विडङ्गानि फेनश्च सरितां पतेः ॥
आजेन पयसा पिष्ट्वा भावयेत्ताम्रभाजने ।
सप्तरात्रस्थितं भूयः पिष्ट्वा क्षीरेण वर्त्तयेत् ॥
एषा दृष्टिप्रदा वर्त्तिरन्धस्याभिन्नचक्षुषः ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, मुरगीके अण्डेके छिलके, कसीस, लोहभस्म, नील कमल, बायबिडंग और

समुद्रफेन। सबका महीन चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको बकरीके दूधमें घोटकर तांबेके पात्रमें लेप करदें और सातदिन पश्चात् छुड़ा कर फिर बकरीके दूधमें घोटकर बत्तियां बना लें।

यदि अन्धे की आंखका तारा नष्ट न हुवा हो तो इसके लगानेसे उसे भी दीखने लगता है।

(३१७२) **दृष्टिप्रदा वर्त्तिः** (२)

(ग. नि.; वृ. मा; भै. र. । नेत्ररो.)

हरीतकी हरिद्रा च पिप्पल्यो मरिचानि[1] च।
कण्डूतिमिरजिद्वर्त्तिर्न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥

हर्र, हल्दी, पीपल, और काली मिर्चके समान भाग चूर्णको पानीके साथ घोटकर बत्तियां बनावें।

इन्हें आंखों में आंजनेसे आंखोंकी खाज, और तिमिरका नाश होता है।

(३१७३) **दृष्टिप्रदा वर्त्तिः** (३)

(र. का. धे. । अधि. ५६)

कनकं चन्दनं लाक्षा मधुकं चन्दनोत्पलम्।
रुद्राक्षामलकीबीजं मधूकञ्च मनःशिला ॥
विडङ्गोदधिफेनैलां शङ्खनाभिरसाञ्जनम्।
एषा दृष्टिप्रदा वर्त्तिर्नाम्ना वैदेहनिर्मिता ॥
नित्योपयोगात्पटलं तिमिरं शुक्रिकाऽजिका।
शुक्रं शुक्राक्षिरोगांश्च विवर्द्धं चर्म चैव हि ॥
निहन्ति रोगानेतान्हि त्रिदोषानपि दुस्तरान् ॥

सोनेके वर्क, लाल चन्दन, लाख, मुलैठी, सफेद चन्दन, नीलकमल, रुद्राक्ष, आमलेकी गुठली की मज्जा (भीतरकी गिरि), महुवेके फूल, मनसिल, बायबिड़ंग, समुद्रफेन, छोटी इलायची, शंखकी नाभि और रसौतका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलाकर खूब घोटें और पानीकी सहायतासे बत्तियां बना लें।

इस "दृष्टिप्रदा वर्ति" को नित्य प्रति आंखोंमें आंजनेसे पटल, तिमिर, अजकाजात, फूला, और अन्य नेत्र रोग नष्ट होते हैं।

(३१७४) **दृष्टिप्रसादनाञ्जनम्** (१)

(सु. सं. । उत्त. अ. १७)

दृष्टेरतः प्रसादार्थमञ्जने शृणु मे शुभे।
मेषशृङ्गस्य पुष्पाणि शिरीषधवयोरपि ॥
सुमनायाश्च पुष्पाणि मुक्तावैदूर्यमेव च।
अजाक्षीरेण सम्पिष्य ताम्रे सप्ताहमावपेत् ॥
प्रविधाय च तद्वर्त्तिर्योजयेच्चाञ्जने भिषक् ॥

मेढासिंगीके फूल, सिरसके फूल, धवके फूल, चमेलीके फूल, मोती और वैदूर्य मणि का चूर्ण समान भाग लेकर सबको बकरीके दूध में घोटकर ताम्रपात्रमें रखदें और सात दिन बाद उसकी बत्तियां बना लें।

यह वर्ति नेत्रोंको स्वच्छ करती है।

(३१७५) **दृष्टिप्रसादनाञ्जनम्** (२)

(सु. सं. । उ. अ. १७)

स्रोतोजं विद्रुमं फेनं सागरस्य मनःशिला।
मरिचानि च तद्वर्त्तीः कारयेच्चापि पूर्ववत् ॥
दृष्टिस्थैर्यार्थमेतत्तु विदध्यादञ्जने हितम् ॥

सुरमा, मूंगा, समुद्रफेन, मनसिल और काली मिर्चका चूर्ण समान भाग लेकर सबको

[1] लवणानीति पाठान्तरम्.

बकरीके दूधमें घोटकर तांबे के पात्रमें रख दें और सात दिन पश्चात् बत्तियां बना लें।

इन्हें आंखों में आंजनेसे दृष्टि स्थिर होती है।

(३१७६) **देवदारुरसक्रिया**

(वै. म. र. । पट. ६)

दार्वीवल्कलसैन्धवाञ्जनकणा तुत्थाब्धिफेनोषणैः।
यष्टीताम्रसमन्वितैः सुमसृणं क्षौद्रेण पिष्टैः कृता ॥
एषा हन्ति रसक्रिया नयनयोः पिल्लादिवर्त्मामयान्।
क्लेदस्रावनिशान्ध्यशुक्रतिमिराण्यन्यांश्च नेत्रामयान् ॥

दारु हल्दीकी छाल, सेंधा, सुरमा, पीपल, नीलाथोथा, समन्दरझाग, स्याहमिर्च, मुलैठी और ताम्रका चूर्ण; सब चीज़ोंका अत्यन्त महीन चूर्ण समान भाग लेकर सबको शहदमें घोट लें।

यह रसक्रिया आंखों के पिल्लादि रोग, अश्रुस्राव, रतौंधा, फूला और तिमिरादि रोगों को नष्ट करती है।

(३१७७) **देवदार्वञ्जनम्** (१)

(धन्वन्तरि । चक्षु.)

देवदारोश्च वै चूर्णं अजामूत्रेण भावयेत्।
एकविंशति वै वारमक्षिणी तेन चाञ्जयेत् ॥
रात्र्यन्धता पटलता नश्येदिति विनिश्चयः ॥

देवदारके चूर्णको २१ बार बकरीके मूत्रमें घोटकर बारीक सुरमा बनावें। इसे आंखमें आंजनेसे पटल, और रात्र्यन्धता (रतौंधा) अवश्य जाता रहता है।

(३१७८) **द्वादशामृताञ्जनम्**

(रसे. मं. । अ. ३ सर्व नेत्ररोगे)

व्योषं त्रीण्यञ्जनान्येव शुल्वं कुनटि सैन्धवम्।
विमला शीतलं सूतमजाक्षीरेण पेषयेत् ॥
सर्वनेत्रामयहरं द्वादशाख्यामृताञ्जनम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, काला सुरमा, रसौत, स्रोतोऽञ्जन, ताम्रभस्म, मनसिल, सेंधा, विमला भस्म, कपूर और पारा समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर घोटें जब सब चीजें मिल जांय तो एक दिन बकरी के दूधमें घोटकर रक्खें।

यह "द्वादशामृताञ्जन" समस्त नेत्ररोगों को नष्ट करता है।

(३१७९) **द्विनिशादिवर्त्तिः**

(वा. भ. । उ. अ. ९)

द्विनिशारोध्रयष्ट्याह्वरोहिणीनिम्बपल्लवैः।
कुकूणके हिता वर्त्तिः पिष्टैस्ताम्ररजोन्वितैः ॥

हल्दी, दारु हल्दी, लोध, मुलैठी, हर्र, नीमके पत्ते और ताम्रके अत्यन्त महीन चूर्णको पानीके साथ पीसकर बत्तियां बनावें।

इन्हें आंखोंमें आंजने से कुकूणक रोग नष्ट होता है।

इति दकाराद्यञ्जनप्रकरणम्।

अथ दकारादिनस्यप्रकरणम्

(३१८०) **दन्त्यादिनस्यम्**

(च. सं. । चि. अ. ५ कुष्ठ.)

दन्तीमधूकसैन्धवफणिज्झकाः पिप्पली करञ्जफलम् ।
नस्यं स्यात् सविडङ्गं कृमिकुष्ठकफप्रदोषघ्नम् ॥

दन्तीमूल, मुलैठी, सेंधानमक, तुलसी (मरुवा), पीपल, बायबिड़ंग और करञ्ज फलका समान भाग चूर्ण लेकर एकत्र मिलावें ।

इसकी नस्य लेनेसे कृमि, कुष्ठ और कफविकार नष्ट होते हैं ।

(३१८१) **दशमूल्यादिनस्यम्**

(वृ, नि. र.; वं. से. । शिरो.)

दशमूलीकषायन्तु सर्पिःसैन्धवसंयुतम् ।
नस्यमर्धावभेदघ्नं सूर्यावर्त्तशिरोर्त्तिनुत् ॥

दशमूलके क्वाथमें सेंधानमक और घी मिलाकर उसकी नस्य लेनेसे आधासीसी, सूर्यावर्त और शिरशूल नष्ट होता है ।

(३१८२) **दाडिमकुसुमरसप्रयोगः**

(वै. म. र. । पट. १)

दाडिमकुसुमस्वरसः स्तन्यं वा चूतकुसुमसलिलं वा ।
दूर्वाम्भो वा नस्यान्नासारक्तस्रुतिं जयति ॥

अनार (दाड़िम) के फूलों के रस, स्त्रीके दूध, आमके फूल (बौर) के रस और दूर्वा घासके रसमेंसे किसी एकको नस्य लेनेसे नाकसे होनेवाला रक्तस्राव (नकसीर) रुक जाता है ।

(३१८३) **दाडिमादिनस्यम्** (१)

(वं. से. । शिरो.)

संक्षुण्णाः शर्करार्द्धांशा दाडिमीकलिकाः शुभाः ।
नश्यन्ति योजिताः सद्यः शिरःशूलहराः पराः ॥

अनारकी कली २ भाग और खांड एक भाग लेकर दोनोंको पीसकर रक्खें ।

इसकी नस्य लेनेसे शिरशूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(३१८४) **दाडिमादिनस्यम्** (२)

(वं. से.; यो. र. । रक्तपित्त.)

रसो दाडिमपुष्पोत्थो रसोदूर्वाभवोऽथवा ।
आम्रास्थिजपलाण्डोर्वा नासिकास्रुतरक्तजित् ॥

अनारके फूलोंका रस या दूब घास अथवा आमकी गुठली या प्याज (पलाण्डु) का रस नाकमें डालनेसे नकसीर बन्द हो जाती है ।

(३१८५) **दाडिमादिनस्यम्** (३)

(वं. से.; ग. नि. । रक्त पित्त.)

रसो दाडिमपुष्पस्य दूर्वारससमन्वितः ।
सालक्तकरसोपेतः पथ्यारससमन्वितः ॥
योजितो नासयोः क्षिप्रं त्रिदोषमपि दारुणम् ।
नासारक्तं प्रवृत्तन्तु हन्यादिति किमद्भुतम् ॥

अनारके फूलोंका रस, दूब घासका रस, लाखका रस, और हर्रका रस, समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर उसकी नस्य लेनेसे त्रिदोषज नकसीर भी तुरन्त बन्द हो जाती है ।

(३१८६) देवदालीफलरसनस्यम्

(वै. जी. । वि. ३)

देवदालीफलरसो नस्यतो हन्ति कामलाम् ।
सन्देहो नात्र संफुल्लनीलोत्पलविलोचने ॥

देवदालीके फलके रसकी नस्य लेनेसे कामला अवश्य नष्ट हो जाती है ।

(३१८७) देवदालीयोगः

(यो. स. । स. ६)

घुरदालिशुष्कफलचूर्णमथो
चिरकामलागदहरं भवति ।
नस्यतो नयनरोगचयं
सलिलं निपीतमथ नासिकया ॥

देवदालीके सूखे फलोंके चूर्णकी नस्य लेनेसे पुरानी कामला नष्ट हो जाती है और नासिका द्वारा जल पीनेसे आंखोंके बहुतसे रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(३१८८) द्राक्षादिनस्यम्

(वृ. नि. र. । तृष्णा)

गोस्तनीक्षुरसक्षीरयष्टीमधुमधूत्पलैः ।
नियतं नस्यतो पीतैस्तृष्णाशाम्यति तत्क्षणात् ॥

मुनक्का, ईखका रस, दूध, मुलैठी, शहद और नीलोत्पलकी नस्य लेनेसे तृष्णा तुरन्त ही शान्त हो जाती है ।

इति दकारादिनस्यप्रकरणम् ।

अथ दकारादिकल्पप्रकरणम्

नोट—कल्प प्रयोग अनुभवी चिकित्सकके परामर्श के बिना सेवन करनेकी हिम्मत भूलकर भी न करनी चाहिये । वैद्योंको भी बहुत सोच समझ कर मात्रा आदिका निर्णय करना चाहिये ।

(३१८९) देवदालीकल्पः (१)

(र. चि. । स्तब. ३)

देवदालीमहाकल्पं प्रवक्ष्यामि यथा मया ।
श्रुतं दृष्टं कृतं पश्चात्सर्वव्याधिनिकृन्तनम् ॥
अमृता देवदालीति देवी देवैर्विनिर्मिता ।
स्वर्गवल्ली महासोमा श्वेतपुष्पाऽमरी स्मृता ॥
रसायनी देवमाताऽनिमिषा मृतजीविनी ।
गन्धारी सर्वपूज्या सा विधात्री कायबन्धनी ॥
श्वेता पीता कचित्प्राप्ता पुष्पभेदेन गृह्यते ।
गृहीत्वा तत्फलं शुभ्रं सुगाढमथ चूर्ण्यते ॥
क्रियते गुटिका तस्य शोष्यतेऽथ खरातपे ।
भक्ष्यते प्रत्यहं चैकां वेष्टयित्वा गुडेन सा ॥
आतपे च खरे तिष्ठेदतिमात्र महोदिने ।
तैलाक्तस्तावदेवासौ यावत्तापो भवेत्तनौ ॥
याममेकं द्वियामं वा तावत्स्थेयं निरन्तरम् ।
उत्कृष्टं वमनं पश्चात्किञ्चित्कालं भविष्यति ॥
रेचनं च पुनर्भूयो भविष्यति न संशयः ।

एवं द्विसप्तकादूर्ध्वं श्वित्रे स्फोटा भवन्ति च ॥
श्वेतारुणास्तदा ते च विलीयन्ते दिनत्रयात् ।
तन्मध्यात्सकला दोषाः निपतन्ति शरीरतः ॥
पश्चात्त्वचासमं भावमल्पकालेन चाप्नुयात् ।
माषान्नं भुज्यते नित्यं कुलत्थान्नं विशेषतः ॥
तिलतैलेन तच्छाकं वटकानि च भक्षयेत् ।
माषान्नमेव कर्त्तव्यं प्रत्यहं गुरुपूजनम् ॥
रीत्याऽनया सदा स्थेयं यथा शुद्धो भवेन्नरः ।
श्वित्रनाशो भवेन्नूनं सप्तसप्तकवासरैः ॥
नात्र कोऽपि हि संदेहो विपश्चिद्भिर्विधीयते ।
अवश्यं वाप्यवश्यं वा योगः श्वित्रहरोत्ययम् ॥

देवदालीके सर्व व्याधि नाशक जिस कल्पको मैंने सुना, देखा और स्वयं आजमाया है उसका वर्णन करता हूं ।

अमृता, देवदाली, देवी, देवनिर्मिता, स्वर्गवल्ली, महासोमा, श्वेतपुष्पा, अमरी, रसायनी, देवमाता, अनिमिषा, मृतजीविनी, गन्धारी, सर्वपूज्या, विधात्री और कायबन्धनी, यह सब देवदाली के नाम हैं ।

देवदाली कहीं कहीं सफेद फूलकी और कहीं कहीं पीले फूलकी पाई जाती है ।

उसके उत्तम फलोंको पीसकर (१–१ माशेकी) गोलियां बनाकर तेज़ धूपमें सुखा लें । इनमें से १ गोली प्रतिदिन गुड़में लपेटकर रोगी को खिलावें और उसके शरीर पर तेलकी मालिश कराके १ या २ पहर तक तेज़ धूप में बिठाएं, यहां तक कि उसका शरीर तपने लगे । इसके थोड़ी देर बाद उसे खूब अच्छी तरहसे वमन विरेचन होंगे ।

इस प्रकार २ सप्ताह तक औषध सेवन करनेसे श्वेतकुष्ठके स्थान पर छाले पड़ जायंगे, जिनका रंग सफेद या लाल होगा । यह छाले ३ दिन बाद फूट जायंगे और उनसे मवाद निकल कर शरीर शुद्ध हो जायगा । इसके थोड़े दिन बाद ही त्वचाका रंग ठीक हो जाता है ।

इस प्रयोगसे सात सप्ताह में श्वेतकुष्ठ अवश्य ही नष्ट हो जाता है ।

पथ्य—उड़द, कुलत्थ और तिलके तैल में बना हुवा कुलथीका शाक तथा बटक ।

(३१९०) देवदालीकल्पः (२)

(र. र. रसा. । उपदेश. ४)

छायाशुष्कं देवदालीपञ्चाङ्गं चूर्णयेत्ततः ।
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षं वर्षान्मृत्युजरां जयेत् ॥
जीवेत्कल्पसहस्रन्तु रुद्रतुल्यो भवेन्नरः ।
तच्चूर्णं कर्षमात्रन्तु नित्यं पेयं शिवाम्बुना ॥
पूर्ववज्जायते सिद्धिर्वत्सरान्नात्र संशयः ।
तच्चूर्णं बाकुचीवह्निसर्पाक्षीभृङ्गराटसमम् ॥
चूर्णितं कर्षमात्रन्तु नित्यं पेयं शिवाम्बुना ।
वर्षान्मृत्युं जरां हन्ति छिद्रां पश्यति मेदिनीम्॥
पुनर्नवादेवदाल्योर्नीरैर्नित्यं पिबेन्नरः ।
देवदाल्याश्च सर्पाक्ष्याः पलैकं वा शिवाम्बुना॥
पिबेत्स्यात्पूर्ववत्सिद्धिर्वत्सरान्नात्र संशयः ।
देवदालीं च निर्गुण्डीं पिबेत्कर्षां शिवाम्बुना ॥
वर्षैकेन जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥

(१) देवदालीके पञ्चाङ्गको छायामें सुखा कर चूर्ण करलें । इसमें से नित्य प्रति १। तोला चूर्ण शहद और घीमें मिलाकर सेवन करें ।
(२) देवदालीके उपरोक्त चूर्णको हरेंके काथके साथ सेवन करें ।

(३) देवदालीका चूर्ण, बावची, चीता, सर्पाक्षी और भंगरा । सबका समान भाग चूर्ण लेकर एकत्र मिलावें, इसमें से नित्य प्रति १। तोला चूर्ण हर्र के काथके साथ सेवन करें ।

(४) देवदाली और पुनर्नवा के समान भाग चूर्णको एकत्र मिलाकर पानीके साथ सेवन करें ।

(५) देवदाली और सर्पाक्षीका समान भाग मिश्रित चूर्ण ५ तोलेकी मात्रानुसार हर्रके पानीके साथ सेवन करें ।

(६) देवदाली और संभालुके समान भाग मिश्रित चूर्णको हर्र के काथके साथ १। तोलेकी मात्रानुसार सेवन करें ।

उपरोक्त प्रयोगों में से किसीको भी एक वर्ष तक सेवन करने से वृद्धावस्था नहीं आती और दीर्घायु प्राप्त होती है ।

इति दकारादिकल्पप्रकरणम् ।

अथ दकारादिरसप्रकरणम्

दद्रुकुष्ठविद्रावणरसः

(र. र. स. । उ. ख. अ. २०)

नागार्जुन वटी (रस) देखिये ।

(३१९१) दन्तोद्भेदगदान्तकरसः

(भै. र.; र. चं. । बाल.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः ।
अजमोदायमानीभ्यां निशया मधुकेन च ॥
दारुदार्वीविडङ्गैलानागकेशरनीरदैः ।
शटीशृङ्गीविडैर्व्योम्ना शङ्खायोहेममाक्षिकैः ॥
विधाय पयसा पिष्टैर्वटिका बल्लसम्मिता ।
दन्तघर्षेऽभ्यवहृतौ योजयेच्च प्रयोगवित् ॥
प्रयोगादस्य दन्तानां त्वरयोद्गमनं भवेत् ।
ज्वराक्षेपातिसाराद्या निवर्त्तन्ते न संशयः ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, अजमोद, अजवायन, हल्दी, मुलैठी, देवदारु, दारुहल्दी, बायबिडंग, इलायची, नागकेसर, नागरमोथा, कचूर, काकड़ासिंगी, बिड नमक, अभ्रकभस्म, शङ्खभस्म, लोहभस्म और सोनामक्खी भस्म । सबका अत्यन्त महीन चूर्ण समान भाग लेकर सबको दूधमें घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लीजिए।

इन्हें (पानी या दूधमें घिसकर) बालक के मसूढ़ों पर मलनेसे दांत निकलनेके समय होने वाले रोग, ज्वर, आक्षेपक और अतिसारादि नष्ट होते तथा दांत शीघ्र निकल आते हैं ।

(३१९२) दरदगुटिका

(धन्व. । व्रण.)

दरदः पार्वतीपुष्पं कुनटी पुरुषो रसः ।
शोणितं गन्धको दैत्यः सैन्धवातिविषा चवी ॥
शरपुङ्खा विडङ्गश्च यवानी गजपिप्पली ।
मरिचार्कं च वरुणा धूनकं च हरीतकी ॥

मर्दितं कटुतैलेन गुटिकां कारयेदिह ।
नाडीव्रणप्रवाहश्च गण्डमालां विचर्चिकाम् ॥
चिरव्रणं दद्रुकुष्ठं पूतिकं तु शिरोगदम् ।
पादस्फोटं तथा हस्तं विचर्चीबहुकीटकम् ॥

शुद्ध हिंगुल (शंगरफ), धायके फूल, मनसिल, गूगल, शुद्ध पारा, केसर, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, सेंधानमक, अतीस, चव, सरफोंका, बायबिड़ंग, अजवायन, गजपीपल, काली मिर्च, आककी जड़, बरनेकी छाल, राल और हर्र। सब चीजें समान भाग लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य चीजोंका अत्यन्त महीन चूर्ण मिलाकर सरसोंके तैलमें घोटकर गोलियां बना लें।

यह गोलियां नाड़ीव्रण (नासूर), घावसे रक्त या मवादका निकलना, गण्डमाला, विचर्चिका, पुराना घाव, दाद, कुष्ठ, शिरोव्याधि, हाथ पैरोंका फटना आदि रोगोंको नष्ट करती हैं। यदि घावमें कृमि पड़ गए हों तो वह भी इनके सेवनसे नष्ट हो जाते हैं।

(मात्रा १ माशा)

(३१९३) दरदादिपुटपाकः (वटी)

(वृ. नि. र. । ज्वरातिसार)

दरदश्चैकभागो हि सार्धभागोऽहिफेनकः ।
अर्धभागो भवेट्टङ्कः पिष्टिकाश्च प्रपेषयेत् ॥
जातीफले च विन्यस्य सर्वं च पुटपाचितम् ।
मुद्गमात्रं गिलेन्नित्यं पयसा च गवां हितत् ॥
ज्वरातिसारे मान्द्ये च निद्रानाशेऽरुचौ तथा ।
योजयेद्भेषजं नित्यं बलपुष्टिकरं परम् ॥

शुद्धहिंगुल (शिंगरफ़) १ भाग, अफीम १॥ भाग, और सुहागे की खील आधा भाग लेकर सबको पीसकर पिट्ठी बनावें और फिर उसे जायफलके भीतर भरकर उसके ऊपर गेहूंके आटेका अच्छा मोटा लेप करदें और उसे उपलों (कण्डों) की निर्धूम अग्नि में दबा दें। जब आटेका रंग अच्छी तरह लाल हो जाय तो जायफलको निकालकर पीस कर मूंगके बराबर गोलियां बनावें।

इन्हें गायके दूधसे खिलानेसे ज्वरातिसार, अग्निमांद्य, निद्रानाश और अरुचि का नाश होता तथा बल पुष्टिकी वृद्धि होती है।

(मात्रा—२–३ गोली)

(३१९४) दरदादिवटी

(सि. भे. म. मा. । कास.)

दरदं शृङ्गिकं मुस्ता पिप्पली मरिचं सुमम् ।
निम्बुनीरैस्त्र्यहं पिष्ट्वा मुद्गाभाः कारयेद्वटीः ॥
द्विसन्ध्यं द्वे गिलेद्गुट्यौ कासवेगनिवृत्तये ।
कत्रयं वद्धयं तैलं खण्डश्चापि विवर्जयेत् ॥

शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ), शुद्ध मीठा तेलिया (वछनाग), नागरमोथा, पीपल, काली मिर्च और लौंगका चूर्ण समान भाग लेकर सबको ३ दिन तक नीबूके रसमें घोटकर मूंगके बराबर गोलियां बनावें।

इनमें से २–२ गोली प्रातः सायं खानेसे खांसी का वेग शान्त हो जाता है।

करेला, कुष्माण्ड, केला और सेम (दो प्रकारका) तथा तैल और खांड से परहेज़ करें।

(३१९५) दरदादिवटी

(र. रा. सु. । वा. व्या.)

म्लेच्छं सार्द्धपलं प्रोक्तं गुडं स्यात् द्वादशं पलम्।
मृत्पात्रे निम्बदण्डेन ताम्रपत्रयुतेन च ॥
घर्षणं दिवसं प्रकुर्यात्तु प्रयत्नतः।
ततो द्विषाणमानेन वटिकां भक्षयेन्नरः ॥
सर्ववातप्रशान्त्यर्थं दरदादिवटी त्वियम् ॥

शुद्ध शिंगरफ १॥ पल और पुराना गुड़ १२ पल लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर मिट्टीकी खूब पक्की कूंडी में तांबेका पत्र लगे हुवे नीमके सोंठेसे १ दिन तक घोटें।

इसे ८ माशे की मात्रानुसार सेवन करनेसे समस्त वात व्याधियां नष्ट होती हैं।

(व्यवहारिक मात्रा २-३ माशे।)

(३१९६) दरदेश्वरो रसः

(र. का. धे. । अधि. ३२; वृ. यो. त. । त. ४३)

दरदं पञ्चपलिकं पलमेकं बलेस्तथा।
मृदुवह्निगतां कुर्यात्कज्जलीमञ्जनाकृतिम् ॥
वलिमानं शुद्धतालं निक्षिपेत्तत्र बुद्धिमान्।
पश्चात्खल्वे विनिक्षिप्य त्रिदिनं मर्दयेत्तथा॥
नियोज्य काचकूप्यान्तु लिप्तायां मृत्तिकाम्बरैः।
सिकतासु पचेद्दहनैः षडहं
तदनु स्वत एव हिमं दहनात्।
दरदेश इति क्षयकासहरो
भवतीह रसः सकलामयजित् ॥

५ पल शुद्ध शिंगरफ़ (हिंगुल) और १ पल (५ तोले) शुद्ध गन्धक लेकर दोनोंको घोटकर कज्जली बनावें और फिर उसे लोहेके खरल में डालकर मन्दाग्नि पर पिघलावें। तत्पश्चात् अग्निसे नीचे उतारकर अच्छी तरह घोटें, यहां तक कि वह कज्जलके समान हो जाय। अब इसमें ५ तोले शुद्ध हरताल मिलाकर ३ दिन तक घोटें और फिर उसे कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर उसका मुंह बन्द करके ६ दिन तक बालुकायन्त्रमें पकावें। इसके बाद जब शीशी स्वांग शीतल हो जाय तो उसमें से औषधको निकालकर रक्खें।

यह रस क्षय और खांसी आदि बहुतसे रोगोंको नष्ट करता है।

(मात्रा-१-१॥ रत्ती)

(३१९७) दर्दुररसः

(र. र. स. । उ. ख. अ. १६)

सुश्लक्ष्णतीक्ष्णचूर्णन्तु रसेन्द्रसमभागिकम्।
काञ्चनाररसैर्घृष्टं दिनमेकं प्रयत्नतः ॥
पुनस्तदेकं दिवसं जम्बीराम्बुविमर्दितम्।
पुटपक्वोऽतिसारघ्नः सूतोऽयं दर्दुराह्वयः ॥

अत्यन्त बारीक शुद्ध तीक्ष्ण लोह (फौलाद) का चूर्ण और शुद्ध पारा समान भाग लेकर दोनोंको एक दिन कचनारकी छालके रसमें और एक दिन जम्बीरी नीबूके रसमें घोटकर टिकिया बनावें और उन्हें सुखाकर सम्पुटमें बन्द करके गजपुट में फूंक दें।

इसके सेवनसे अतिसार नष्ट होता है।

(मात्रा—१॥—२ रत्ती । अनुपान—जायफलका पानी।)

(३१९८) **दशसारसूतरसः**

(र. र. स. । उ. खं. अ. २०)

पालिकं व्योषसूताग्निगन्धकं सफलत्रयम् ।
काकोदुम्बरिकाक्षीरैर्मर्दितं गुटिकीकृतम् ॥
माषप्रमाणं सक्षौद्रं कुष्ठार्शःश्वासकासजित् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, हर्र, बहेड़ा और आमलेका चूर्ण तथा शुद्ध पारा और गन्धक ५-५ तोले लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको एक दिन काकोदुम्बर (कठूमर) के दूधमें घोटकर १-१ माशेकी गोलियां बनावें।

इन्हें शहदके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ, अर्श, श्वास और खांसी नष्ट हो जाती है।

(३१९९) **दारुभस्म**

(र. सा. सं. । प्ली.; रसें. चि. । अ. ९)

दारुसैन्धवगन्धश्च भस्मीकृत्य प्रयत्नतः ।
प्लीहानमग्रमांसं च याकृतं च विनाशयेत् ॥

देवदारु, सेंधा नमक, और शुद्ध आमलासार गन्धक समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर सम्पुटमें बन्द करके पुट में फूंकें।

इसे यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे तिल्ली, अग्रमांस और यकृत् विकार नष्ट होते हैं।

(मात्रा—२—३ माशा)

(३२००) **दार्व्यादिमण्डूरवटकः**

(वृ. नि. र. । पाण्डु)

दार्वीत्वङ्माक्षिको धातु ग्रन्थिको देवदारु च ।
एषां द्विपलिकान्भागान्कृत्वा चूर्णं पृथक् पृथक् ॥
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णं शुद्धमञ्जनसन्निभम् ।
मूत्रे चाष्टगुणे पक्त्वा तस्मिंस्तत्प्रक्षिपेन्नरः ॥
उदुम्बरसमान्कृत्वा वटकांस्तान्यथाग्नि च ।
उपयुञ्जीत तक्रेण जीर्णे सात्म्यं च भोजनम् ॥
मण्डूरवटका ह्येते प्राणदा पाण्डुरोगिणः ।
कुष्ठानि प्रवरं शोथमूरुस्तम्भं कफामयान् ॥
अर्शांसि कामलां मेहं प्लीहानं शमयन्ति च ॥

दारुहल्दीकी छाल, सोनामक्खी भस्म, पीपला मूल और देवदारुका चूर्ण २-२ पल (१०-१० तोले) तथा शुद्ध अञ्जनके समान काला मण्डूरका चूर्ण सब से दो गुना लेकर प्रथम मण्डूरको उससे आठ गुने गोमूत्रमें पकावें; जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें उपरोक्त चीज़ोंका चूर्ण मिलाकर गूलरके फलके समान मोदक बना लें।

इन्हें यथोचित मात्रानुसार तक्रके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ, शोथ, ऊरुस्तम्भ, कफरोग, बवासीर, कामला, प्रमेह और तिल्लीका नाश हो जाता है। यह वटक पाण्डुरोगी के लिए अत्यन्त ही उपयोगी हैं।

औषधके पच जाने पर सात्म्य (अनुकूल) भोजन करना चाहिए।

(३२०१) **दार्व्यादिलौहम्**

(वृ. नि. र.; र. र.; र. रा. सुं.; च. सं.; च. द.; वृं. मा.; र. सा. सं; यो. र. । कामला; ग. नि. । पाण्डु.)

दार्वीसत्रिफलाव्योषविडङ्गान्ययसो रजः ।
मधुसर्पिर्युतं लिह्यात्कामलापाण्डुरोगवान् ॥

दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च,

पीपल, और बायबिडंग का चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म इन सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर घोटें।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे कामला और पाण्डु रोग नष्ट होता है।

(मात्रा-२-३ माशे। घी ६ माशे, शहद २ तोले।)

(३२०२) दार्व्यादिवटिका

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

दारुनिशा शिखिग्रीवा रसकं च पृथक् पृथक्।
टङ्कत्रयानुमानेन गृहीत्वा कनकद्रवैः॥
मर्दयेत्रिदिनं कार्या वटी चणकमात्रया।
मरीचैरेकविंशत्या सप्तभिस्तुलसीदलैः॥
खादेद्वटीद्वयं पथ्यं दुग्धभक्तं सशर्करम्।
तरुणं विषमं जीर्णं हन्यात्सर्वज्वरं ध्रुवम्॥

दारुहल्दी, शुद्ध तूतिया, और शुद्ध खपरिया (अभावमें यशद भस्म) बराबर बराबर लेकर ३ दिन तक धतूरेके रसमें घोटकर चनेके बराबर गोलियां बनावें।

इनमें से २ गोली २१ काली मिर्च और तुलसीके सात पत्तोंके साथ खानेसे तरुणज्वर, विषमज्वर और जीर्ण ज्वरादि सब प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं। पथ्य-खांड युक्त दूध भात।

(नोट-गोली खानेके बाद काली मिर्च और तुलसीदल पानीके साथ घोट कर पीना चाहिए। समय--ज्वर आनेसे ३-४ घण्टे पहिले।)

(३२०३) दाहज्वरघ्नवटी

(रसायनसार। दाहे)

सेवन्त्युशीरयष्टीनां कषायोद्भावितं ज्वरी।
स्वर्णसिन्दूरमम्भोऽपि तासां सेवेत दाहयुत्॥

दाहज्वरकी गोली

अर्थः-यदि रोगी दाहसे और ज्वरसे अत्यन्त पीडित हो तो गुलाब के फूल, खस, मुलहटी, इनके काढ़े में भावना देकर स्वर्ण सिन्दूर को बताशे, पान, और मधु प्रभृति के साथ सेवन करे और जब प्यास लगे तब उसी काढेको या उनके फाण्ट को पीवे। (रसायनसारसे उद्धृत)

(३२०४) दाहान्तको रसः

(र. रा. सुं; रसचं.; धन्वन्तरि। दाह.)

सूतात्पञ्चार्कतश्चैकं कृत्वा पिण्डं सुशोभनम्।
जम्बीरस्वरसैर्मर्द्यं सूततुल्यं च गन्धकम्॥
नागवल्लीदलैः पिष्ट्वा ताम्रपात्रीं प्रलेपयेत्।
प्रपुटेद्भूधरे यन्त्रे यावद्भस्मत्वमाप्नुयात्॥
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैस्त्र्यूषणेन च योजयेत्।
निहन्ति दाहसन्तापं मूर्च्छां पित्तसमुद्भवाम्॥

शुद्ध पारा ५ भाग और शुद्ध ताम्रका महीन चूर्ण १ भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर नींबूके रसमें घोटें। जब अच्छी तरह मिल जायं तो उसमें पारे के बराबर शुद्ध गन्धक मिलाकर पानके रसमें घोटकर (५ भाग) शुद्ध तांबेकी कटोरी में उसका लेप करदें और उसे सम्पुटमें बन्द करके भूधरयन्त्रमें इतना पकावें कि तांबेकी भस्म हो जाय।

इसमें से ३ रत्ती भस्म अद्रकके रस और

त्रिकुटेके चूर्ण के साथ देनेसे पित्तज दाह, सन्ताप और मूर्च्छाका नाश होता है।

(३२०५) **दिनज्वरप्रशमनीवटी**

(र. का. धे. । अ. १)

सूतः शुद्धबलिः सुतो हुतभुजोनागो द्विभागा मताः।
प्रत्येकं त्रिकभागिकाः समगधाविश्वौषधं वल्लिजम् ॥
कायस्थामलकं सुपक्वकुलकं तज्जीर्णशुद्धं शुभम्।
दन्तीबीजमकल्मषं च सकलं सञ्चूर्ण्य भद्रं कृतम्॥
आर्द्रस्य स्वरसेन मर्दितमिदं पिष्टीसमं सूत्तमम्।
कार्या मुद्गसमारहः सुगुटिका ध्यायन्हरिं शान्तिदम् ॥
सन्तापं च दिनज्वरप्रशमनी शुद्धोधसंदायिनी।
श्रीधन्वन्तरिणा हिताय जगतां ब्रह्माज्ञया निर्मिता ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, स्वर्ण भस्म, और सीसा भस्म, २-२ भाग तथा पीपल, सोंठ, काली मिर्च, हर्र, आमला, पका हुवा पुराना शुद्ध कुचला, और शुद्ध जमालगोटा ३-३ भाग लेकर, प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन अदरकके रसमें घोटकर मूंगके बराबर गोलियां बनावें। यह गोलियां सन्ताप और दिनके समय आने वाले ज्वरको नष्ट करती और क्षुधावृद्धि करती हैं।

(मात्रा-१-२ गोली। अनुपान-शीतल जल।)

(३२०६) **दिव्यखेचरी गुटिका**

(र. र. र. । उपदे. ३.)

हेम्ना यद्वद्वन्द्वितं वज्रं कुर्यात्तत्सूक्ष्मचूर्णितम्।
एतद्देयं गुहसूते मूषायामधरोत्तरम् ॥
पादमात्रं प्रयत्नेन रुद्ध्वा सन्धिं विशोषयेत्।
भूधराख्ये दिनं पच्यात्समुद्धृत्याथ मर्दयेत् ॥
दिव्यौषधफल[1]द्रावैस्तप्तखल्वे दिनावधि।
रुद्ध्वाथ भूधरे पच्याद्दिनं लघुपुटैः पुटेत् ॥
समुद्धृत्य पुनस्तद्वन्मर्द्य रुद्ध्वा दिनत्रयम्।
तुषाग्निना शनैः स्वेद्यमूर्ध्वाधः परिवर्त्तयन् ॥
जायते भस्मसूतोऽयं सर्वयोगेषु योजयेत्।
द्रुतसूतस्य भागैकं भागैकं पूर्वभस्मकम् ॥
शुद्धनागस्य भागैकं सर्वमम्लेन मर्दयेत्।
अन्धमूषागतं ध्मेयं खोटो भवति तद्रसः ॥
धमेत्प्रकटमूषायां यावन्नागक्षयो भवेत्।
द्रुतसूतप्रकारेण द्रावयित्वा त्विमं रसम् ॥
निक्षिपेत्कच्छपे यन्त्रे विडं दत्त्वा दशांशतः।
स्वर्णादिसर्वलोहानि क्रमेणैव च जारयेत् ॥
प्रत्येकं षड्गुणं पश्चाद्वज्रद्वन्द्वञ्च जारयेत्।
त्रिगुणं तु भवेद्यावत्ततो रत्नानि वै क्रमात् ॥
जारयेद्द्रावितान्येव प्रत्येकं त्रिगुणं शनैः।
ततो यन्त्रात्समुद्धृत्य दिव्यौषधद्रवैर्दिनम् ॥
मर्द्यं रुद्ध्वा धमेद्गाढं जायते गुटिका शुभा।
पूजयेदङ्कुशीमन्त्रैर्नाम्नेयं दिव्यखेचरी ॥
यस्य वक्त्रे स्थिता ह्येषा स भवेद्भैरवोपमः।
दिव्यतेजा महाकायः खेचरत्वेन गच्छति ॥

[1] 'दलद्रावै...' इति पाठान्तरम्

यत्रेच्छा तत्र तत्रैव क्रीडते ह्यङ्गनादिभिः ।
महाकल्पान्तपर्यन्तं तिष्ठत्येव न संशयः ॥
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां ताम्रं भवति काञ्चनम् ।
पलाशपुष्पचूर्णन्तु तिलाः कृष्णाः सशर्कराः ॥
सर्वं पलत्रयं खादेन्नित्यं स्यात् क्रामणे हितम् ॥

स्वर्ण पत्र और हीरेका चूर्ण समान भाग लेकर उन्हें अन्धमूषामें इन दोनोंसे चार गुना पारा इनके बीचमें रखकर बन्द करें और मूषाको बन्द करके सुखाकर एक दिन भूधर यन्त्रमें पकावें। जब यन्त्र स्वांगशीतल हो जाय तो औषधको निकालकर दिव्यौ-षधियों के फलोंके रसमें १ दिन पर्यन्त तप्तखल्वमें डालकर घोटें। तत्पश्चात् १ दिन भूधर यन्त्रमें लघुपुट-की अग्नि दें और फिर निकालकर उसी प्रकार दिव्यौ-षधियोंके फलोंके रसमें १ दिन घोटकर मूषामें बन्द करके उसे ३ दिन तक तुषाग्निमें पकावें और पकते समय मूषाको बार बार उलटते पलटते रहें। इस क्रियासे पारद की भस्म बन जायगी।

अब १ भाग द्रुत पारद, १ भाग यह पारद भस्म, और १ भाग शुद्ध सीसा लेकर सबको एक दिन जम्बीरी नीबूके रस या अन्य अम्ल पदार्थ में घोटकर अन्ध मूषामें बन्द करके १ दिन पर्यन्त धमावें। इससे उसका 'खोट' बन जायगा। इस 'खोट' को खुली मूषामें रखकर इतना धमावें कि उसमें मिला हुवा सीसा नष्ट हो जाय।

अब इस रसको द्रुत पारदकी तरह द्रुत करके कच्छप यन्त्रमें रक्खें और उसका दशवां भाग विड देकर उसमें स्वर्णादि समस्त धातुओंका क्रमशः जारण करें। हरेक धातु ६–६ गुनी जारण करनेके पश्चात् ३–३ गुना स्वर्ण और हीरा जारण करें तत्पश्चात् समस्त रत्नोंकी द्रुति बनाकर ३–३ गुनी जारण करें। इसके पश्चात् उसे यन्त्रमें से निकाल-कर १ दिन दिव्यौषधियोंके रसमें घोटकर मूषामें बन्द करके तेज अग्नि में धमावें तो उसकी दिव्य गुटिका तैयार हो जायगी। इसका नाम "दिव्य खेचरी गुटिका" है।

जो मनुष्य अङ्कुशी मन्त्र से इसका पूजन करके इसे मुंहमें रखता है वह भैरव के समान हो जाता है। उसका शरीर विशाल और दिव्य तेजयुक्त हो जाता है। वह जहां चाहे वहीं आकाशमार्गसे जा सकता है। इसके अधिक समयके अभ्याससे महाकल्पान्त तक आयु प्राप्त हो सकती है। इसके अभ्यासीके मूत्र और मलसे तांबेका सोना बन जाता है।

इस गुटिका को मुंह में रखनेका अभ्यास करनेके दिनों में ढाकके फूल, काले तिल और खांडका ५–५ तोले चूर्ण एकत्र मिलाकर नित्य प्रति खाना चाहिये।

(३२०७) दिव्यखेचरी वटिका

(र. र. र. । उप. ३.)

स्वर्णं कृष्णाभ्रसत्वं च तारं ताम्रं सुचूर्णितम् ।
समांशं द्वन्द्वलिप्तायां मूषायां चान्धितं धमेत् ॥
तत्खोटभागाश्चत्वारो भागैकं मृतवज्रकम् ।
माक्षिकं तीक्ष्णकान्तं च भागैकैकं सुचूर्णितम् ॥
समस्तं द्वन्द्वलिप्तायां मूषायां चान्धितं धमेत् ।
तत्खोटं सूक्ष्मचूर्णन्तु चूर्णांशं द्रुतसूतकम् ॥
त्रिदिनं तप्तखल्वे तु मर्द्यं दिव्यौषधिद्रवैः ।
रुद्ध्वाथ भूधरे पच्यादहोरात्रात्समुद्धरेत् ॥

द्रुतसूतं पुनस्तुल्यं दत्त्वा मर्द्यं पुटेत्तथा ।
इत्येवं सप्तवारांस्तु द्रुतं सूतं समं समम् ॥
दत्त्वा मर्द्यं पुटे पच्याज्जायते भस्मसूतकः ।
भस्मसूतसमं गन्धं दत्त्वा रुद्ध्वा धमेद्दृढम् ॥
जायते गुटिका दिव्या विख्याता दिव्यखेचरी ।
वर्षैकं धारयेद्वक्त्रे जीवेत्कल्पसहस्रकम् ॥
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां सर्वलोहस्य लेपनात् ।
जायते कनकं दिव्यं समावर्त्ते न संशयः ॥
पलद्वयं भृङ्गराजद्रवं चानुपिबेत्सदा ।
पूर्वोक्तं भस्मसूतं वा गुञ्जामात्रं सदा लिहेत् ॥
वर्षैकं मधुनाऽऽज्येन लक्षायुर्जायते नरः ।
वलीपलितनिर्मुक्तो महाबलपराक्रमः ॥

शुद्ध स्वर्ण, कृष्णाभ्रक सत्व, शुद्ध चांदी, और शुद्ध ताम्रका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एक ऐसी अन्ध मूषामें बन्द करें कि जिसके भीतर नाग और बंगका लेप किया हुवा हो और उसे १ दिन तक अग्निमें धमावें । इससे उपरोक्त औषधोंका खोट बन जायगा । अब ४ भाग यह खोट, १ भाग हीरा भस्म, तथा १-१ भाग शुद्ध स्वर्ण माक्षिक, शुद्ध तीक्ष्णलोह और शुद्ध कान्त लोहका चूर्ण एकत्र मिलाकर सबको नाग और बंगसे लिप्त मूषामें बन्द करके १ दिन तक धमावें और फिर उसके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकालकर अत्यन्त बारीक पीसकर उसमें उसके बराबर द्रुत पारद मिलाकर सबको ३ दिन तक तप्त खल्वमें दिव्यौषधियों के रसके साथ खरल करें और मूषामें बन्द करके २४ घण्टे तक भूधरयन्त्रमें पकावें । जब यन्त्र स्वांग शीतल हो जाय तो उसमें से औषधको निकालकर उसमें उसके बराबर द्रुत पारद मिलाकर उपरोक्त विधिसे घोटकर उसी प्रकार २४ घण्टे भूधर यन्त्रमें पकावें । इसी प्रकार ७ बार पाक करें । हर बार समान भाग पारद मिलाते रहना चाहिये । इस क्रियासे पारद भस्म तैयार हो जायगी । इस भस्ममें समान भाग शुद्ध गन्धक मिलाकर घोटकर अन्धमूषामें बन्द करके १ दिन अग्निमें धमानेसे उसकी गुटिका तैयार हो जायगी ।

इस " खेचरी गुटिका " को एक वर्ष तक मुखमें धारण किये रहनेसे अत्यन्त दीर्घायु प्राप्त होती है । इसके अभ्यासीके मल मूत्र का लोह, ताम्रादि किसी भी लोह पर लेप करके अग्निमें तपानेसे उसका दिव्य स्वर्ण बन जाता है ।

यदि गुटिका न बनाकर उपरोक्त भस्म ही १ रत्तीकी मात्रानुसार घी और शहदमें मिलाकर १ वर्ष तक निरन्तर २ पल भंगरेके रसके साथ सेवन की जाय तो शरीर बलिपलित रहित और महापराक्रम तथा बलयुक्त होकर १ लाख वर्षकी आयु प्राप्त होती है।

दिव्यदृष्टिकरो रसः

(र. सं. क. । उल्ला. ४)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

(३२०८) दिव्यामृत रसः (१) (महाकल्कः)

(र. र. स. । उ. ख. अ. २७)

धान्याभ्रकं विनिक्षिप्य मुशलीरसमर्दितम् ।
स्थाल्यां क्षिप्त्वा निरुध्याऽथ पिधान्या मध्य-रन्ध्रया ॥

स्थाल्यधो ज्वालयेद्वह्निं यामपर्यन्तमुद्धतम् ।
ततः क्षिपेत्पिधान्यां हि व्योम्नस्त्वष्टगुणं पयः ॥
जीर्णे पयसि पिष्ट्वा तत्तालमूलीरसैः पुनः ।
इत्थं हि साधयेद् व्योम त्रिवारमतियत्नतः ॥
अजादुग्धैः पुटेत्पश्चाद्वाराणि खलु विंशतिम् ।
कम्पिल्लकरसेनापि विष्णुक्रान्तारसेन च ॥
कदलीकन्दतोयेन तालमूलीरसेन च ।
शतवारं पुटेदेवं भवेद्व्योमरसायनम् ॥
तद्व्योमभसितं ताप्यभस्म तारस्य भस्म च ।
शुल्वभस्म च तत्सर्वं समांशं परिकल्पयेत् ॥
भावयेत्सप्तधा निम्बरसैर्लोध्ररसेन च ।
त्रिफलायाः कदल्याश्च केतक्या मार्कवस्य च ॥
केतकस्यापि सारेण तावद्वाराणि यत्नतः ।
इति निष्पन्नकल्केऽस्मिंस्तत्समां त्रिफलां क्षिपेत् ॥
भस्मसूतं सिता व्योषं चित्रकं च पृथक् पृथक् ।
मधुना गुटिकाः कार्याः शाणेन प्रमिताः खलु ॥
महाकल्क इति ख्यातो दस्राभ्यां परिकीर्तितः ।
एकां गोलीं समारभ्य तथैकैकां विवर्धयेत् ॥
चतुर्गोलकपर्यन्तं मण्डले मण्डले खलु ।
सेवितो द्वादशाब्दन्तु जरामृत्युविवर्जितः ॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो दृढदीपनपाचनः ।
भीमतुल्यबलः श्रीमान्पुत्रसंततिसंयुतः ॥
सर्वारोग्यमयो भीमसमानभुजविक्रमः ।
सर्वायाससहिष्णुश्च शीतातपसहस्तथा ॥
अमन्दसंमदोपेतः प्रौढस्त्रीरतिरञ्जनः ।
दृढसर्वेन्द्रियो भूत्वा जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥
श्वासं कासं क्षयं पाण्डुं तथैवाष्टौ महागदान् ।
मण्डलार्धेन शमयेज्ज्वरादीनां तु का कथा ॥
सर्वगोरससंयुक्तं पथ्यं कार्यं रसायने ।
रोगोचितमथान्यच्च ददीत खलु रोगिणे ॥
संसारसुखमिच्छद्भिः सुखं जीवितुमिच्छुभिः ।
नित्यं रसो निषेव्योऽयं दिव्यामृतसमो गुणैः ॥

धान्याभ्रकको मूसलीके रसमें घोटकर कपड़ मिट्टी की हुई हांडीमें भरदें और उसके मुख पर एक ऐसा शराव कि जिसके बीचमें छिद्रहो ढककर सन्धिको अच्छी तरह बन्द करदें और उसे सुखाकर चूल्हे पर चढ़ाकर उसके नीचे १ पहर तक तीव्राग्नि जलावें। इसके पश्चात् ऊपर वाले शराव के छिद्र से हाण्डीमें अभ्रकसे आठ गुना दूध डालदें। जब समस्त दूध जल जाय और हाण्डी स्वांगशीतल हो जाय तो इसमें से अभ्रक को निकालकर पुनः मूसलीके रसमें घोटें और उपरोक्त विधिसे दूध डालकर पकावें। इसी प्रकार ३ बार पाक करनेके पश्चात् बकरीके दूधमें घोटकर टिकिया बनाकर सुखा लें और शराव-सम्पुटमें बन्द करके गज पुटकी अग्निमें फूंकदें। इसी प्रकार बकरी के दूधकी २० पुट दें और २०-२० पुट कबीला, विष्णुक्रान्ता, केलेकी जड़ और मूसली के रसकी दें। इस प्रकार १०० पुट देनेसे अभ्रक रसायन तैयार हो जाता है।

अब यह अभ्रक भस्म, स्वर्ण मक्षिक भस्म, चांदी भस्म, और ताम्र भस्म बराबर बराबर लेकर सबको नीम, लोध, त्रिफला, केलेकी जड़, केतकी, भंगरा और कमलनालके रसकी सात सात भावना दें और फिर उसमें हर्र, बहेड़ा, आमला, पारद-भस्म (अभावमें रससिन्दूर), खांड, सोंठ, मिर्च, पीपल, और चीते में से हरेकका चूर्ण उस तैयार औषधके बराबर मिलाकर शहदमें घोट कर ४-४ माशेकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे पहिले दिन १ गोली, दूसरे दिन

२ गोली, तीसरे दिन ३ गोली और चौथे दिन ४ गोली सेवन करनी चाहियें तथा इसके बाद ४० दिन तक रोज़ ४–४ गोली और फिर ४० दिन तक रोज़ एक एक गोली घटाकर सेवन करनी चाहिये। इसी प्रकार १२ वर्ष तक सेवन करने से मनुष्य जराव्याधि-रहित, भीमके समान बलवान्, सुन्दर, पुत्रादि सन्तति युक्त; शीत, ताप तथा कष्टोंके सहन करनेमें समर्थ, और दृढेन्द्रिय हो जाता है। उसे प्रौढा स्त्रियोंके साथ यथेच्छ समागम करनेकी शक्ति और ३०० वर्ष की आयु प्राप्त होती है।

यह रसायन श्वास, खांसी, क्षय, पाण्डु, अष्ट महाव्याधि, इत्यादि भयङ्कर रोगोंको १ मण्डलमें ही नष्ट कर देता है, फिर ज्वरादिकी तो बात ही क्या है।

यदि इसे रसायनकी विधिसे सेवन किया जाय तो पथ्यमें गोदुग्धादि गोरस युक्त पदार्थ देने चाहियें, और यदि किसी रोगको नष्ट करनेके लिए सेवन किया जाय तो उस रोगके विचारसे यथोचित पथ्य देना चाहिये।

(३२०९) दिव्यामृतरसः (२)

(र. र. स. । उ. ख. अ. २६)

एतत्स्यादपुनर्भवं हि भसितं कान्तस्य दिव्यामृतम् ।
सम्यक्सिद्धरसायनं त्रिकटुकीवेल्लाज्यमध्वन्वितम्
हन्यान्निष्कमितं जरामरणजव्याधींश्च सत्पुत्रदम्।
प्रोक्तं श्रीगिरीशेन कालयवनोद्भूत्यै पुरा तत्पितुः॥

कान्त लोहकी निरुत्थ भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, और बायबिडंगका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलावें। इसे घी और शहदके साथ सेवन करनेसे मनुष्य जरामरण रहित और सत्पुत्रोत्पादनमें समर्थ होता है। प्राचीन कालमें श्रीशिवजीने कालयव के पिताको यही प्रयोग बतलाया था कि जिसके प्रभाव से उसका जन्म हुवा था।

मात्रा—४ माशे। (व्यवहारिक मात्रा १ माशा।)

(३२१०) दीपिकारसः

(र. रा. सु. । ज्वर; र. र. स. । उ. खं. अ. १२)

सन्तप्तसीसभागश्च पारदं गन्धकं कणाम् ।
समभागं पृथक् तत्र मेलयेच्च यथाविधि ॥
जम्बीरस्य रसे सर्वं मर्दयेच्च दिनत्रयम् ।
मेघनादकुमार्योश्च रसे चापि दिनत्रयम् ॥
दिनद्वयमजामूत्रे गवां मूत्रे दिनत्रयम् ।
भावयेच्च यथायोग्यं तस्मिन्नेतानि दापयेत् ॥
सैन्धवं चित्रकं भागं सौवर्चलवणं तथा ।
तेन सम्मेलनं कृत्वा भावयेच्च पुनः क्रमात् ॥
अनेन विधिना सम्यक् सिद्धो भवति स रसः।
शर्कराघृतसंयुक्तं दद्याद्वल्लत्रयं रसम् ॥
गोधूमश्चौदनं पथ्यं माषसूपं सवास्तुकम् ।
धात्रीफलसमायुक्तं सर्वज्वरविनाशनम् ॥
दीपिकारस इत्येषः तंत्रज्ञैः परिकीर्त्तितः ॥

१ भाग सीसेको पिघलाकर उसमें १ भाग शुद्ध पारदको डालकर घोटें जब दोनों एक जीव हो जायं तो उसमें १ भाग शुद्ध गन्धक और १ भाग पीपलका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटें। जब कज्जली तैयार हो जाय तो उसे जम्बीरी

नीबूके रसमें ३ दिन, कांटे वाली चौलाई के रसमें ३ दिन, घी कुमारके रसमें ३ दिन, बकरीके मूत्रमें २ दिन और गोमूत्रमें ३ दिन पर्यन्त निरन्तर घोट कर उसमें १–१ भाग सेंधा नमक चीता, और सञ्चल (काला) नमकका चूर्ण मिला कर पुनः उपरोक्त ओषधियोंके रसोंमें उतने ही उतने दिन घोटें ।

इसमेंसे ९ रत्ती रस खांड और घीके साथ खिलानेसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं ।

पथ्य—गेहूं, चावल, उड़दकी दाल, बथुवे का शाक तथा आमला ।

(व्यवहारिक मात्रा–४ रत्ती ।)

(३२११) **दीप्तामररसः**

(र. र. स. । उ. ख. अ. १८)

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतांशं मृतताम्रकम् ।
शाकवृक्षोत्थपञ्चाङ्गद्रवैर्मर्द्यं दिनत्रयम् ॥
दिनं सर्पाक्षिजैर्द्रावे रुध्वा गजपुटे पचेत् ।
पञ्चधा भूधरे चाथ चूर्णं जेपालतुल्यकम् ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेच्चाज्यैः पित्तगुल्मप्रशान्तये ।
रसो दीप्तामरो नाम पित्तगुल्मं नियच्छति ॥
द्राक्षाहरीतकीक्वाथमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक तथा ताम्र भस्म, समान भाग लेकर तीनोंकी कज्जली करके उसे सागोन वृक्षके पञ्चाङ्ग के रस या क्वाथमें ३ दिन और सर्पाक्षीके रसमें १ दिन घोटकर सम्पुटमें बन्द कर गजपुटमें फूंक दें फिर इन्हीं दोनों चीज़ों के रसमें घोट-घोटकर ५ बार भूधर यन्त्रमें पकावें। तत्पश्चात् उसमें समान भाग शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटकर रक्खें ।

इसे २ रत्तीकी मात्रानुसार घीमें मिलाकर खानेसे पित्तगुल्म नष्ट होता है ।

अनुपान—दाख (मुनक्का) और हर्रका क्वाथ ।

(३२१२) **दुग्धवटी** (१)

(भै. र. । शोथ.)

अमृतं धूर्त्तबीजञ्च हिङ्गुलञ्च समं समम् ।
धूर्त्तपत्ररसेनव मर्दयेद्याममात्रकम् ॥
मुद्गोपमां वटीं कृत्वा दुग्धेन सह पाययेत् ।
दुग्धेन भोजयेदन्नं वर्जयेल्लवणं जलम् ॥
शोथं नाना विधं हन्ति पाण्डुरोगं सकामलम् ।
सेयं दुग्धवटी नाम्ना गोपनीया प्रयत्नतः ॥

शुद्ध मीठा तेलिया (बछनाग), शुद्ध धतूरे के बीज, और शुद्ध शंगरफ (हिंगुल) समान भाग लेकर तीनोंको १ पहर तक धतूरेके पत्तोंके रसमें घोटकर मूंगके बराबर गोलियां बनावें ।

इन्हें दूधके साथ सेवन करानेसे अनेक प्रकारका शोथ, पाण्डु और कामला रोग नष्ट होता है ।

पथ्य—दूध भात अथवा दूधसे बना हुवा अन्य आहार यथा दलिया आदि । परहेज—लवण और जल बिल्कुल छोड़ देना चाहिये । प्यासमें भी दूध ही देना चाहिये ।

(३२१३) **दुग्धवटी** (२)

(भै. र.; धन्व. । शोथ.)

अमृतं सूर्यगुञ्जं स्यादहिफेनं तथैव च ।
पञ्चरत्तिकं लौहं च षष्टिरत्तिकमभ्रकम् ॥
दुग्धगुञ्जाद्वयमिता वटी कार्या भिषग्विदा ।
दुग्धानुपानं दुग्धैश्च भोजनं सर्वथा हितम् ॥

शोथं नानाविधं हन्ति ग्रहणीं विषमज्वरम् ।
मन्दाग्निं पाण्डुरोगञ्च नाम्ना दुग्धवटी परा ॥
वर्जयेल्लवणं वारि व्याधिनिःशेषतावधिः ॥

शुद्ध वछनाग (मीठातेलिया) और अफीम १२-१२ रत्ती, लोहभस्म ५ रत्ती, तथा अभ्रक भस्म ६० रत्ती लेकर सबको दूधमें घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनवावें।

इन्हें दूधके साथ खिलानेसे अनेक प्रकारका शोथ, संग्रहणी, विषमज्वर, मन्दाग्नि और पाण्डुका नाश होता है।

पथ्य--केवल दूध या दूध भात।

परहेज़--रोग नष्ट होने तक लवण और जल बिल्कुल न देना चाहिए। (अगर जल बिना न रहा जा सके तो थोड़ा थोड़ा नारियलका पानी दे सकते हैं।)

(३२१४) दुग्धवटी (३)

(भै. र. । शोथा.)

गृहीत्वा दरदात्कर्षं तदर्द्धं देवपुष्पकम् ।
फणिफेनं विषं जातीफलं धुस्तूरबीजकम् ॥
सम्मर्द्य विजयाद्रावैर्मुद्गमात्रां वटीश्चरेत् ।
अनुपानं प्रदातव्यं शोथे क्षीरं भिषग्वरैः ॥
ग्रहण्यां विजयाक्काथः पथ्यं दुग्धान्नमेव हि ।
जलञ्च लवणञ्चापि वर्जनीयं विशेषतः ॥
प्रबलायामुदन्यायां सलिलं नारिकेलजम् ।
पातव्यं वटिका चैषा शोथं हन्ति न संशयः ॥
ग्रहणीमतिसारञ्च ज्वरं जीर्णं निहन्ति च ॥

शुद्ध शिंगरफ (हिंगुल) १ कर्ष तथा लौंग, शुद्ध अफीम, शुद्ध बछनाग (मीठातेलिया), जायफल, और शुद्ध धतूरे के बीज आधा आधा कर्ष लेकर सबके महीन चूर्णको १ दिन भांगके रसमें घोटकर मूंगके बराबर गोलियां बनावें।

इन्हें शोथमें दूधके और संग्रहणीमें भांगके क्वाथ के साथ देना चाहिये। पथ्यमें केवल दूध या दूधभात देना चाहिये और लवण तथा जल बिल्कुल बन्द करके प्यासमें भी दूध ही देना चाहिये। अगर अत्यधिक पिपासा हो और दूधसे काम न चले तो नारियलका पानी दे सकते हैं।

इनके सेवनसे शोथ, संग्रहणी, अतिसार और जीर्णज्वर नष्ट होता है।

(३२१५) दुर्जलजेतारसः

(वृ. यो. त. । त. ६२; र. चं.; वै. रह.; यो. र.; वृ. नि. र. । ज्वर.)

विषं भागद्वयं दग्धकपर्दः पञ्चभागिकः ।
मरिचं नवभागञ्च चूर्णं वस्त्रेण शोधयेत् ॥
आर्द्रकस्य रसेनास्य कुर्यान्मुद्गनिभां वटीम् ।
वारिणा वटिकायुग्मं प्रातः सायं च भक्षयेत् ॥
अयं रसो ज्वरे योज्यस्तस्मिन्दुर्जलजेऽपि च ।
अजीर्णाध्मानविष्टम्भशूलेषु श्वासकासयोः ॥
भोजनादौ नरैर्भुक्तं शुण्ठीराज्यभयोत्थितम् ।
कल्कं तु सहते नित्यं नाना देशोद्भवं जलम् ॥
महार्द्रकयवक्षारौ पीत्वा चोष्णेन वारिणा ।
नानादेशसमुद्भूतं वारिदोषमपोहति ॥

शुद्ध बछनाग (मीठा तेलिया) २ भाग, कौड़ी भस्म ५ भाग, और काली मिर्चका चूर्ण ९ भाग लेकर सबको अत्यन्त महीन खरल करके कपड़ेसे छान लें फिर उसे अद्रकके रसमें घोटकर मूंगके बराबर गोलियां बनावें।

इनमेंसे २-२ गोली प्रातः सायं पानीके साथ सेवन करनेसे दुष्ट जलके विकारसे उत्पन्न हुवा ज्वर तथा अजीर्ण, अफारा, कब्ज, शूल, श्वास और खांसी आदि रोग नष्ट हो जाते हैं ।

भोजनके पहिले सोंठ, राई और हर्रकी चटनी खानेसे अथवा बन अद्रक और जवाखारका चूर्ण गर्म पानीके साथ खानेसे भिन्न भिन्न देशों के पानीका असर नहीं होता । अर्थात् परदेशका पानी नहीं लगता ।

(३२१६) दुर्लभो रसः

(र. रा. सु. । मसूरि.)

अथ शुद्धस्य सूतस्य मूर्च्छितस्य मृतस्य च ।
द्विवल्लो पिप्पली धात्री रुद्राक्षघृतमाक्षिकैः ॥
पापरोगान्तको योग पृथिव्यामेव दुर्लभः ॥

२ वल्ल (६ रत्ती) पारद भस्म; पीपल, आमला और रुद्राक्षके चूर्णको शहद और घीमें मिलाकर उसके साथ खिलानेसे मसूरिका शान्त हो जाती है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ से २ रत्ती तक ।)

(३२१७) देवकुसुमादिगुटिका

(अनु. त. ।)

कस्तूरिका चन्दनदेवपुष्पै
सकुङ्कुमैरञ्जविलोचने यः ।
कर्पूरकं पारदसम्भवं ना
निषेवयन्संजयते फिरङ्गम् ॥

कस्तूरी, सफेद चन्दन, लौंग, केसर, और शुद्ध रस कपूर समान भाग लेकर एकत्र खरल करें। इसे सेवन करनेसे फिरंग (आतशक) रोग नष्ट होता है ।

(सब औषधोंको गुलाबके अर्कमें खरल करके २-२ रत्ती की गोलियां बनावें और प्रातः-काल १ गोली मुनक्कामें रखकर रोगीको इस तरह निगलवा दें कि दांतों को न लगे । पथ्यमें केवल बेसनकी रोटी और घी दें । लवण, खटाई, मिर्च-आदि बिल्कुल न दें । प्रायः २१ दिनमें रोग जाता रहता है ।)

(३२१८) देवभूतिरसः

(र. चि. । स्त. ४)

तप्ताभ्रं च पुनर्धीमान्भावयेत्त्रिफलाम्बुभिः ।
काकमाच्या रसेनापि भावनीयं त्रयं त्रयम् ॥
धत्तूरस्य रसेनापि भृङ्गराजरसेन च ।
बीजपूररसस्यापि तिस्रो देयाः पृथक् पृथक् ॥
आर्द्रकस्य रसेनाथ नववारं विभाव्य च ।
नववारं पुटेत्पश्चात्क्रमशो बुद्धिमान्नरः ॥
शुद्धलोहं समं तेन तावन्नस्य रसस्य च ।
निक्षिप्य मर्दयेत्खल्वे चतुर्गुञ्जामितं ददेत् ॥
त्रिकटु त्रिफला जातीफलं चैव लवङ्गकम् ।
समभागं कृतं चूर्णं पर्णखण्डेन दापयेत् ॥
मुखशुद्ध्यर्थमप्येव पुनस्ताम्बूलचर्वणम् ।
सन्निपातेऽपि सञ्जाते ज्वरे घोरेऽग्निसादने ॥
कुष्ठे दुष्टे मदात्यये उन्मादे वाप्यपस्मृतौ ।
सामे निरामे क्षयथा कासे श्वासे विशेषतः ॥
पाण्डुरोगे तथा देयश्चोदरे भृशदारुणे ।
वलीपलितकं हन्यात्खालित्यञ्च विशेषतः ॥
वज्रकायो भवत्येव निरपायो विशेषतः ।
दीर्घायुः कामरूपः स्यात्स्त्रीणामत्यन्तवल्लभः ॥

उत्साही स्मृतिमान्मायो मेधावी खेचरः परः ।
ब्रह्मास्त्रं चाप्यसिद्धं स्याद्धरिचक्रं च निष्फलम्॥
शिवशूलं वृथा याति शक्रशक्तिर्निवर्तते ।
स्वयं स्वयम्भूर्भगवान्यदि वेत्ति न वेत्ति वा ॥
नामरो नापरः कश्चित्सूतस्यास्य महन्महः ।
य एनं सेवते नित्यं न स कालवशं व्रजेत् ॥
योगवाही रसः मोक्तो देवभूतिरिति स्मृतः ॥

(भारत भैषज्य रत्नाकर भाग २ प्रयोग सं. २५७४ में कथित विधिसे बनी हुई) ताम्र भस्मको त्रिफला, मकोय, धतूरा, भंगरा और बिजौरे नीबूके रसकी ३–३ भावना दें और फिर उसे अद्रकके रसकी एक भावना देकर सम्पुटमें बन्द करके फूंक दें; एवं इसी प्रकार अद्रकके रस में ९ पुट लगावें । तत्पश्चात् यह ताम्र भस्म, लोह-भस्म और पारद भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर घोटें ।

इसमें से चार रत्ती रस खिलाकर ऊपरसे सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, जायफल और लौंगका समान भाग मिश्रित (१ माशा) चूर्ण पानमें रखकर खिलावें एवं इसके बाद मुखकी शुद्धिके लिए दूसरा पान खिलावें ।

यह रस भयङ्कर सन्निपात ज्वर, मन्दाग्नि, कुष्ठ, उन्माद, अपस्मार, खांसी, श्वास, पाण्डुरोग, दुस्साध्य उदर व्याधि, बलि, पलित और खालित्य आदि अनेकों रोगोंको नष्ट करता है । इसके सेवनसे बल, पौरुष, शरीरकी कान्ति और आयु बढ़ती है तथा मनुष्य उत्साही, मेधावान् और स्त्रियोंका प्रिय हो जाता है ।

यह योगवाही रस है और इसका अभ्यासी कालवश नहीं होता ।

(३२१९) द्रुतिसाररसः

(र. र. स. । उ. ख. अ. २२)

युक्तं हि व्योमजद्रुत्या तुल्यांशं स्वर्णशुल्बसम्[1] ।
पिष्टीकृतं[2] चिरं पिष्ट्वा मल्लसम्पुटके क्षिपेत् ॥
निष्कमात्रं बलिं दत्त्वा शतवारं पुटेत्ततः ।
सम्यङ्निष्पिष्य सञ्चाल्य करण्डान्तर्विनिक्षिपेत्॥
इत्युक्तो द्रुतिसारनामकरसो वन्ध्यामयध्वंसनः ।
पुत्रीयः खलु सूतिकामयहरो वृष्यश्चिरायुः करः॥
सम्यक् सिद्धवलिद्रुतिप्रकलितो गुञ्जामितःसेवितः
कुर्यात्तीव्रतरां क्षुधं त्वब महारोगादिरोगाञ्जयेत्॥
मतः सर्वामयध्वंसी रसोयं नन्दिनोदितः ।
जीवत्पुत्रप्रदः स्त्रीणां यौवनस्थैर्यदायकः ॥
भूतप्रेतपिशाचानां भयेभ्योऽभयदायकः ।
जडानां दोहदार्त्तानां मन्दबुद्धिमतामपि ॥
मण्डूकीरससंयुक्तो दातव्यो वचया सह ।
जन्मवन्ध्या काकवन्ध्या मृतवत्साश्च याः स्त्रियः॥
तासां पुत्रोदयार्थाय शम्भुना सूचितः पुरा ॥

अभ्रकद्रुती, शुद्ध पारा और शुद्ध स्वर्ण १–१ निष्क लेकर प्रथम पारे और स्वर्णको एकत्र मिलाकर घोटें । जब दोनों मिल जाय तो उसमें अभ्रक-द्रुति मिलाकर खूब घोटें । फिर उसे १ निष्क गन्धकके बीचमें रखकर सम्पुटमें बन्द करके लघु-पुटमें फूंकदें । इसी प्रकार गन्धकके साथ १०० पुट दें तत्पश्चात् पीसकर कपड़छन करके रक्खें ।

१–बलिना रसमिति पाठान्तरम् । २...२–"लक्ष्मणारसतः पिष्ट्वा" इति पाठान्तरम् ।

इसका नाम "द्रुतिसार रस" है, और यह बन्ध्यत्वको नष्ट करता है। इसके अतिरिक्त इसके सेवनसे पुत्रकी उत्पत्ति होती है तथा सूतिका रोग नष्ट होते और आयुवृद्धि होती है।

यदि इसे विधिवत् बनी हुई "गन्धक द्रुति"[1] के साथ १ रत्तीकी मात्रासे सेवन किया जाय तो अत्यन्त क्षुधावृद्धि होती है।

यह रस अष्ट महाव्याधि-नाशक, यौवनको स्थिर रखनेवाला, भूतप्रेत और पिशाचोंके भयसे मुक्त करनेवाला, तथा जन्म बन्ध्या, काक बन्ध्या और मृतवत्सा आदि स्त्रियोंको भी पुत्र देनेवाला है।

इसे ब्राह्मीके रस और बचके चूर्णके साथ खिलानेसे बुद्धि तीव्र होती है।

(३२२०) द्वादशायसः

(भै. र. । वातरक्ता.)

गरुत्मान् दरदस्तीक्ष्णं शर्वाख्यो वङ्गशक्तिके।[2]
शुल्वञ्च गगनं फेनं[3] रुधिरञ्च त्रिनेत्रकम् ॥
पातालनृपतिश्चैव वह्निमूलं सरामठम्।
त्रिकटु त्रिफला शिग्रु चाजमोदा यमानिका ॥
पिप्लीमूलं भार्गी च लशुनं जीरकद्वयम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
वातरक्तं महाकुष्ठं गलिताङ्गं त्रिदोषजम्।
शोथं कण्डूञ्च रुधिरं सर्वमेतद्व्यपोहति ॥
मन्दानलामवातञ्च श्लेष्माणञ्च जलोदरम्।
घ्राणाक्षिकर्णजिह्वानां सर्वान् रोगान्विनाशयेत् ॥

सोनामक्खी-भस्म, शुद्ध शंगरफ (हिंगुल), तीक्ष्ण लोह-भस्म, शुद्ध पारद, बंग-भस्म, शुद्ध गन्धक, ताम्र-भस्म, अभ्रकभस्म, अफीम, गेरु, स्वर्णभस्म, सीसाभस्म, चीतेकीजड़, हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सहंजनेके बीज, अजमोद, अजवायन, पीपलामूल, भरंगी, लहसन, कालाज़ीरा और सफेद जीरा। सबके समान भाग चूर्णको एकत्र मिलाकर अदरकके रसमें घोटकर (२-२ रत्तीकी) गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे वातरक्त, गलित्कुष्ठ, सन्निपातज महाकुष्ठ, शोथ, कण्डू, मन्दाग्नि, आमवात कफज जलोदर और नाक, कान तथा जिह्वाके समस्त रोग नष्ट होते हैं।

द्विगुणाख्यो रसः

(र. रा. सुं.; र. चं.; रसे. सा. सं.; धन्वन्त. । वातव्याधि)

"त्रिगुणाख्य रस" अवलोकन कीजिए। वस्तुतः इस रसका नाम उक्त ग्रन्थों में 'द्विगुणाख्य' प्रमादवश लिखा गया प्रतीत होता है।

(३२२१) द्विजरोपिणी वटी

(र. का. धे. । मुखरो.; रसें. चि. । अ. ९)

नागस्य त्रिफलाक्वाथे रसे भृङ्गस्य गोघृते।
अजादुग्धे च गोमूत्रे शुण्ठीक्वाथे मधुन्यपि ॥
पुटान्सप्तपृथग्दत्त्वा तत्समं ग्राहयेद्रसम्।
लोहपात्रे द्रावयित्वा युक्त्या तां गुटिकां चरेत् ॥
सा मुखे धारिता हन्ति दन्तरोगानशेषतः।
दृढीकरोति दशनान्बद्धमूलानशेषतः ॥

सीसेको पिघला पिघलाकर त्रिफलाके क्वाथ, भांगरेके रस, गायके घी, बकरीके दूध, गोमूत्र,

१—प्रयोग सं. १५२३ देखिये। २ शुक्तिके इति पाठान्तरम्। ३ 'हेम' इति पाठान्तरम्।

सोंठके क्काथ और शहदमें क्रमशः सात सात बार बुझावें। फिर उसे लोहपात्रमें पिघलाकर उसमें उसके बराबर पारा मिलाकर गोली बनालें

इसे मुंहमें रखनेसे दांतोंके समस्त रोग नष्ट होते और दांत मज़बूत होते हैं।

(३२२२) द्विभुजो रसः

(र. रा. सु. । ज्वर.)

म्लेच्छाद्द्विगुणजैपालं भाग्वद्रोगं निवारयेत् ॥

शुद्ध हिंगुल (शंगरफ़) १ भाग और शुद्ध जमालगोटा २ भाग लेकर दोनोंको नीबूके रस या अदरकके रसमें घोटकर २—२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे नवीन ज्वर नष्ट होता है।

(अनुपान—अदरकका रस ।)

(३२२३) द्विहरिद्राद्यं लोहम्

(रसें. चिं. । अ. ९; र. का. धे.)

लोहचूर्णं निशायुग्मं त्रिफलां कटुरोहिणीम् ।
प्रलिह्य मधुसर्पिर्भ्यां कामलार्त्तः सुखी भवेत् ॥

लोहभस्म, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, और कुटकीका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर घी और शहदके साथ चाटने से कामला रोग नष्ट होता है।

इति दकारादिरसप्रकरणम् ।

अथ दकारादिमिश्रप्रकरणम्

(३२२४) दन्तधावनयोगः

(ग. नि.; रा. मा. । मुख.)

दौर्गन्ध्यमुखरोगघ्नं कटुतिक्तकषायकम् ।
अभ्यस्यमानं तैलाक्तमन्वहं दन्तधावनम् ॥

कटु (चरपरे), तिक्त (कड़वे) और कसैले वृक्षोंकी दातौनको तैल लगाकर उससे नित्य प्रति दांत साफ़ करनेसे मुखकी दुर्गन्ध और मुखरोग नष्ट होते हैं।

(३२२५) दन्तोद्भेदकः

(यो. त. । त. ७७)

प्राचीगतं पाण्डुरसिन्दुवारमूलं
शिशूनां गलके निबद्धम् ।
[1]करोति दन्तोद्भववेदनायाः
निःसंशयं नाशमकाण्ड एव ॥

पूर्व दिशामें उगे हुवे सफेद संभालुकी जड़को बालकके गले में बांधनेसे दांत निकलनेके समय होने वाले समस्त रोग अवश्य ही नष्ट हो जाते हैं।

(३२२६) दन्तोद्भेदगदान्तकक्रिया

(धन्वन्तरि । बालरोग.)

दन्तपालीं तु मधुना चूर्णेन प्रतिसारयेत् ।
धातकीपुष्पपिप्पलीधात्रीफलरसेन वा ॥
दन्तोत्थानभवा रोगाः पीडयन्ति न बालकम् ।
जाते दन्ते हि शाम्यन्ति यतस्तद्धेतुकागदाः ॥

जब बालकके दांत निकलने वाले हों तो मसूढ़ों पर चूनेको शहदमें मिलाकर मलें या धायके फूल, और पीपलके चूर्णको आमलेके रसमें मिलाकर मलें।

१ " हन्त्याशु दन्तोद्भववेदनां च निःशेषमेकाण्डकुरण्डमेव " इति पाठान्तरम् ।

दांत निकलनेके समय होने वाले रोग बालकोंको कोई विशेष हानि नहीं पहुंचाते क्योंकि वे, दांत निकल आनेके पश्चात् स्वयं ही शान्त हो जाते हैं।

(३२२७) **दन्त्यादिवर्त्ती**

(वृ. नि. र. । आना.)

विपाच्य मूत्राम्लरसेन दन्ती
पिण्डीतकृष्णाविडकुष्ठधूमान् ।
वर्तिं कराङ्गुष्ठनिभां घृताक्तां
गुदे रुजानाहहरी विदध्यात् ॥

दन्तीमूल, तगर, पीपल, विडनमक, कूठ और घरका धुवां समान भाग लेकर चूर्ण करके सबको गोमूत्र और नीबूके रस या काञ्जी आदि किसी अन्य अम्लद्रवमें पकाकर गाढ़ा करें और उसकी हाथके अंगूठे के बराबर बत्तियां बनावें।

इनमेंसे एक बत्ती को घी लगाकर गुदामें रखनेसे उदरशूल और अफारा नष्ट होता है।

(३२२८) **दशमूलबस्तिः**

(सु. सं. । चि.)

दशमूलीनिशाबिल्वपटोलत्रिफलामरैः ।
कथितैः कल्कपिष्टैस्तु मुस्तसैन्धवदारुभिः ॥
पाठामागधिकेन्द्राह्वैस्तैलक्षारमधुप्लुतैः ।
कुर्यादास्थापनं सम्यग्मूत्राम्लफलयोजितम् ॥
कफपाण्डुमदालस्यमूत्रमारुतसंज्ञिनाम् ।
आमाटोपापचीश्लेष्मगुल्मकृमिविकारिणाम् ॥

दशमूल, हल्दी, बेलगिरी, पटोल, त्रिफला और देवदारु के काथमें नागर मोथा, सेंधानमक, देवदारु, पाठा, पीपल और इन्द्रजौका कल्क तथा तैल, यवक्षार, शहद गोमूत्र, कांजी और मैनफल मिलाकर आस्थापन बस्ति करानेसे कफ, पाण्डु, मद, आलस्य, मूत्रावरोध, आम, आटोप, अपची, कफजगुल्म, और कृमि विकार नष्ट होते हैं।

(३२२९) **दशाङ्गागदः**

(आ. वे. वि. । चि. ख. अ. ८२; वं. से. । बाल.)

वचाहिङ्गुविडङ्गानि सैन्धवं गजपिप्पली ।
पाठा प्रतिविषा व्योषं काश्यपेन विनिर्म्मितम् ॥
दशाङ्गमगदं पीत्वा सर्वकीटविषं जयेत् ॥

बच, हींग, बायविडंग, सेंधा, गजपीपल, पाठा, अतीस, सोंठ, मिर्च, और पीपल। सब समान भाग लेकर चूर्ण करें।

इस दशाङ्ग अगदको पीनेसे हर प्रकारका कीटविष नष्ट होता है।

(३२३०) **दार्वीरसक्रिया**

(भा. प्र. । ख. २ मु. रो.)

मुखपाके प्रयोक्तव्यः सक्षौद्रो मुखधावने ।
स्वरसः क्वथितो दार्व्या घनीभूतो रसक्रिया ॥
सक्षौद्रा मुखरोगासृग्दोषनाडीव्रणापहा ॥

मुख पाकमें, दारु हल्दीके स्वरसमें शहद मिलाकर उसके कुल्ले करने चाहियें और दारुहल्दी के काथको पुनः पकाकर गाढ़ा करके उसमें शहद मिला कर उसका लेप करना चाहिये। इससे मुखरोग, रक्तविकार और मुखका नाडीव्रण (नासूर) नष्ट होता है।

(३२३१) **दार्व्यादिगण्डूषः**

(यो. र. । मुख.)

दार्वीयष्ट्यऽभयाजातीपत्रक्षौद्रैस्तु धावनम् ।
अश्वत्थत्वग्दलक्षौद्रैर्मुखपाके प्रलेपनम् ॥

मुख पाकमें दारुहल्दी, मुलैठी, हर्र, और चमेलीके पत्तोंके काथमें शहद मिलाकर उसके कुल्ले करने और पीपलकी छाल तथा पत्तोंके चूर्ण को शहद में मिलाकर उसका लेप करना चाहिये।

(३२३२) दार्व्यादिघनः

(वा. भ. । उ. स्था. अ. २२)

स्वरसः कथितो दार्व्या घनीभूतः सगैरिकः।
आस्यस्थः समधुर्मुखपाकनाडीव्रणापहः ॥

दारुहल्दीके स्वरसको पकाकर गाढ़ा करलें और फिर उसमें गेरुका चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें से ज़रासा शहदमें मिलाकर मुंहमें रखनेसे मुखपाक और मुखका नाड़ीव्रण (नासूर) नष्ट होता है।

(३२३३) देवदाल्याद्या गुटिका

(ग. नि. । अर्श.)

गुटिका कृता गुदे सा सुरदाल्यग्नीन्द्रवारुणीमूलैः
अर्शः शातनमन्तःफलमथवा शक्रवारुण्या ॥

देवदाली (बिंडाल), चीता और इन्द्रायण की जड़ समान भाग लेकर पानीके साथ पीसकर गुटिका (अंगुठे के समान वर्ति) बनावें। या इन्द्रायण के फलोंकी वर्ति बनावें। इसे गुदामें रखनेसे बवासीरके मस्से नष्ट हो जाते हैं।

(३२३४) द्राक्षाद्यगदः

(व. से. । विषा.)

द्राक्षाश्वगन्धानगवृत्तिका च
श्वेता च पिष्टा सदृशैः स्वभागैः ।
देयो विभागः सुरसाछदस्य
कपित्थबिल्वादपि दाडिमाच्च ॥
एषोऽगद क्षौद्रयुतो निहन्ति
विशेषतो मण्डलिनां विषाणि ॥

दाख (मुनक्का), असगन्ध, सल्लकी वृक्षका गोंद, दूधिया वच (या सफेद कोयल), तुलसीके पत्ते, कैथके पत्ते, बेलके पत्ते और अनारके पत्ते समान भाग लेकर चूर्ण करें।

इसे शहदके साथ खिलानेसे समस्त प्रकारके विष विशेषतः मण्डली सर्पका विष नष्ट होता है।

इति दकारादिमिश्रप्रकरणम्।



अथ धकारादिकषायप्रकरणम्



(३२३५) **धत्तूरयोगः**

(रा. मा. । विष.)

उन्मत्तकस्य स्वरसं पयश्च
सर्पिर्गुडश्चेति विमिश्रितानि ।
पिबेत्पलद्वन्द्वमितानि यत्ना-
दुन्मत्तकौलेयकदष्टगात्रः ॥

धतूरेका स्वरस, दूध, घी और गुड़ २-२ पल (१०-१० तोले) लेकर सबको एकत्र मिला कर पिलाने से उन्मत्त कुत्तेका विष नष्ट होता है ।

(३२३६) **धवादिक्काथः** (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४)

धवार्जुनकदम्बानां शिरीषबदरीसह ।
निःक्वाथ्य पानमामघ्नं विषूच्याः शूलवारणम् ॥

धव, अर्जुन, कदम्ब, सिरस और बेरीकी छालका क्वाथ पीनेसे आम और विसूचिका का शूल शान्त होता है ।

(३२३७) **धवादिक्काथः** (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अध्या. १२)

धवार्जुनकदम्बानां जम्ब्वाम्रत्वक् च तत्समम् ।
मनःशिला सकासीसं क्वाथं कृत्वा ससैन्धवम् ॥
गुडेन सर्पिषा युक्तं हन्ति कासं क्षतोद्भवम् ॥

धव, अर्जुन, कदम्ब, जामन और आमकी छाल तथा मनसिल, और कसीसके क्वाथमें सेंधा नमक, गुड़ और घी मिलाकर पीनेसे क्षतज खांसी नष्ट होती है ।

(३२३८) **धवादिक्काथः** (३)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३१)

धवार्जुनकदम्बानां बदरी खदिरशिंशपे ।
पारिभद्रकमेतेषां मेहनस्य प्रधावनम् ॥
अर्जुनस्य कदम्बस्य टिण्डुकी वान्तरत्वचा ।
पाके पूयविशोधार्थे मेहनस्य प्रशस्यते ॥

धव, अर्जुन, कदम्ब, बेरी, खैर, सीसम और पारिभद्र (नीम या फरहद) की छालके क्वाथसे या अर्जुन, कदम्ब और टेंटुकी अन्तर्छालके क्वाथसे धोनेसे लिङ्गका घाव शुद्ध होता है ।

(३२३९) **धातक्यादिक्काथः** (१)

(वै. जी. । वि. १)

विषममपि हरत्यसौ कषायो
मधुमधुरो मदिरामृताशिवानाम् ।
अहमिव सततं तव प्रकोपं
चरणसरोरुहयोर्लुठन्हठेन ॥

धायके फूल, गिलोय और आमलेके क्वाथको शहदसे मीठा करके पीनेसे विषम ज्वर अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(३२४०) **धातक्यादिक्वाथः** (२)

(शा. ध. । म. ख. अ. २.; वृ. नि. र. । अतिसार.)

धातकीबिल्वलोध्राणि बालकं गजपिप्पली ।
एभिःकृतं शृतं शीतं शिशुभ्यः क्षौद्रसंयुतम् ॥
प्रदद्यादवलेहं वा सर्वातीसारशान्तये ॥

धायके फूल, बेलगिरी, लोध, सुगन्धबाला और गजपीपलके क्वाथको शीतल करके उसमें शहद डालकर पिलाने या इनके चूर्णको शहदमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका हर प्रकारका अतिसार नष्ट होता है ।

(३२४१) **धातक्यादिक्वाथः** (३)

(यो. र. । प्रदर.; वृ. नि. र. । स्त्री.)

धातक्याश्च तथा पूगीकुसुमानां पिबेच्छृतम् ।
नाशयेत्प्रदरं सद्यस्त्रिदिनाद्योषितां ध्रुवम् ॥

३ दिन तक, धाय और सुपारीके फूलोंका क्वाथ पीनेसे स्त्रियोंका प्रदर रोग अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(३२४२) **धातक्यादियोगः**

(वृ. नि. र.; वं. से; वृं. मा.; भा. प्र. ख. २ । अतिसार.)

धातकीबदरीपत्रं कपित्थरसमाक्षिकं ।
सलोध्रमेकतो दध्ना पिबेन्निर्वाहिकार्दितः ॥

धायके फूल, बेरीके पत्ते और लोध के कल्क को कैथके स्वरस और शहदमें मिलाकर दहीके साथ पीनेसे प्रवाहिका (पेचिश) नष्ट होती है ।

(३२४३) **धात्रीफलादिसेचनकषायः**

(वृ. नि. र.; ग. नि.; यो. र.; । नेत्ररो.; वृ. यो. त. । त. १३१; यो. त. । त. ७१)

धात्रीफलं निम्बकपित्थपत्रं
यष्ट्याह्वलोध्रं खदिरं तिलाश्च ।
क्वाथः सुशीतो नयनेऽभिषिक्तः
सर्वप्रकारं विनिहन्ति शुक्रम् ॥

आमला (फल), नीम और कैथके पत्ते, मुलैठी, लोध, खैरसार और तिल के क्वाथको ठण्डा करके आंखमें उसकी बूंदें डालनेसे नेत्रशुक्र नष्ट होता है ।

(३२४४) **धात्रीरसप्रयोगः**

(धन्वं. । सोम.)

धात्रीफलस्य स्वरसं मधुना च पिबेत्सदा ।
बहुमूत्रक्षयं कुर्यात् क्षीरेण वासकस्य च ॥

आमलेके फलोंके रसमें शहद मिलाकर पीनेसे या बासेके रसको दूधमें मिलाकर पीनेसे बहुमूत्र रोग नष्ट होता है ।

(३२४५) **धात्रीरसयोगः**

(वृ. मा. । गुल्मा.)

पीतो धात्रीरसो युक्त्या किंशुकक्षारसाधितः ।
क्षारत्र्यूषणसंयुक्ता मदिरा चास्रगुल्मनुत् ॥

पलाश (ढाक) की राख (भस्म) को ६ गुने आमलेके रसमें मिलाकर, २१ बार कपड़ेसे छानकर पिलानेसे या मदिरामें यवक्षार और सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण मिलाकर पिलानेसे रक्तगुल्म नष्ट होता है ।

(३२४६) **धात्रीरसादिप्रयोगः**

(यो. र. । योनिरो.)

धात्रीरसं सितायुक्तं योनिदाहे पिबेत्सदा ।
सूर्यक्रान्ताभवं मूलं पिबेद्वा तण्डुलाम्बुना ॥

आमलेके रसमें मिश्री मिलाकर पीनेसे या सूर्यकान्ताकी जड़को चावलों के पानीके साथ पीसकर पीनेसे योनिकी दाह नष्ट होती है ।

(३२४७) **धात्र्यादिक्वाथः** (लघु) (१)

(भै. र.; धन्वं. । मूत्रकृ.)

धात्री द्राक्षा विदारी च यष्ट्याह्वा गोक्षुरं तथा ।
एभिःकषायं विपचेत् पिबेत् शीतं सशर्करम् ॥
अपि योगशतासाध्यं मूत्रकृच्छ्रं जयेल्लघु ॥

आमला, दाख (मुनक्का), विदारीकन्द, मुलैठी और गोखरु के क्वाथको ठण्डा करके उसमें खांड मिलाकर पीनेसे सैकड़ों योगोंसे आराम न होने वाला मूत्रकृच्छ्र भी नष्ट हो जाता है ।

(खांड क्वाथका ८ वां भाग मिलावें ।)

(३२४८) **धात्र्यादिक्वाथः** (बृहद्) (२)

(भै. र. । मू. कृ.)

धात्री द्राक्षा च यष्ट्याह्वं विदारी सत्रिकण्टका ।
दर्भेक्षुमूलमभया क्वाथयित्वा जलं पिबेत् ॥
ससितं मूत्रकृच्छ्रघ्नं रुजादाहहरं परम् ॥

आमला, दाख (मुनक्का), मुलैठी, विदारीकन्द, गोखरु, दाबकी जड़, ईखकी जड़, और हर्रके क्वाथको ठण्डा करके उसमें खांड मिलाकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र, पेशाबकी जलन और पीड़ा शान्त होती है ।

(खांड क्वाथका ८ वां भाग मिलावें ।)

(३२४९) **धात्र्यादिक्वाथः** (३)

(वृं. मा. । वातर.)

धात्रीमुस्ताहरिद्राणां कषायं वा कफाधिके ।
कोकिलाख्याऽमृताक्वाथे पिबेत्कृष्णां यथा बलम्॥
पथ्यभोजी त्रिसप्ताहान्मुच्यते वातशोणितात् ॥

आमला, नागरमोथा, और हल्दी का क्वाथ पीने या काकोली और गिलोयके क्वाथमें पीपल का चूर्ण मिलाकर बलोचित मात्रानुसार पीने और पथ्य पालन करनेसे २१ दिन में कफ प्रधान वातरक्त रोग नष्ट हो जाता है ।

(३२५०) **धात्र्यादिक्वाथः** (४)

(वृं. मा.; च. द.; ग. नि. । कुष्ठ.)

धात्रीखदिरयोः क्वाथं पीत्वाऽवल्गुजसंयुतम् ।
शङ्खेन्दुधवलं श्वित्रं तूर्णं हन्ति न संशयः ॥

आमला और खैरसारके क्वाथमें बावचीका चूर्ण मिलाकर पीनेसे शंखके समान सफ़ेद श्वेत कुष्ठ भी शीघ्र ही अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(३२५१) **धात्र्यादिक्वाथः** (५)

(वं. से. । शिरोरो.)

धात्र्यक्षपथ्यासनिशागुडूची
भूनिम्बनिम्बैः कथितः षडङ्गः ।
भ्रूशङ्खकर्णाक्षिशिरोर्द्धशूले
सूर्योदये शङ्खकमर्द्धभेदे ॥
नक्तान्ध्यकाचे पटले सशुक्रे
पाकेऽश्रुपाते तिमिरेऽक्षिरोगे ।
पक्ष्मप्रकोपे विनिहन्ति चैष
सद्यो गदं वायुरिवाभ्रवृन्दम् ॥

आमला, बहेड़ा, हर्र, हल्दी, गिलोय, चिरायता और नीमकी छाल । सब समान भाग मिलाकर २॥ तोले लें और ४० तोले पानीमें पकाकर १० तोले शेष रक्खें ।

इसे पीनेसे भौं, शंख (कनपटी) कान, आंख और आधे शिरमें होने वाला शूल; सूर्यावर्त, रात्र्य-

न्धता (रतौंधा), कांच, पटल, नेत्रशुक्र, नेत्रपाक, अश्रुस्राव, तिमिर, और पक्ष्मप्रकोपादि शिर तथा नेत्रोंके रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(३२५२) **धात्र्यादिक्वाथः** (६)

(वैद्यामृत । वि. २७)

धात्र्याः कषायं मधुरात्रियुक्तं
वटाङ्कुराणां समधु कषायम् ।
पाषाणभेदं मधुमिश्रमेतत्
त्रयं प्रमेहापहमामनन्ति ॥

आमले के क्वाथमें शहद और हल्दीका चूर्ण मिला कर, या बड़के अंकुरोंके अथवा पाषाण भेद (पखान भेद) के क्वाथमें शहद डालकर पीनेसे प्रमेह नष्ट होता है ।

(३२५३) **धात्र्यादिक्वाथः** (७)

(वृ. नि. र.; यो. र. । हिक्का.)

धात्री च मागधी शुण्ठी क्वाथश्चैषां सितायुतः ।
हिनस्ति हृदयोद्भूतां हिक्कां प्राणपनोदिनीम् ॥

आमला, पीपल, और सोंठ के क्वाथमें खांड मिलाकर पीनेसे हृदयसे उठने वाली तथा प्राणोंको सङ्कटमें डाल देनेवाली हिचकी भी नष्ट हो जाती है ।

(३२५४) **धात्र्यादिप्रयोगः**

(वृं. मा.; ग. नि. । शूला.)

धात्र्या रसं विदार्या वा त्रायन्तीगोस्तनाम्बुना ।
पिबेत्सशर्करं मद्यं पित्तशूलनिषूदनम् ॥

त्रायमाणा और मुनक्का के क्वाथमें अथवा आमले या बिदारीकन्दके स्वरसमें खांड और शराब मिला कर पिलानेसे पित्तज शूल नष्ट होता है ।

(३२५५) **धात्र्यादियोगः** (१)

(ग. नि. । छर्द्य.)

पिष्ट्वा धात्रीफलं लाक्षाशर्करां च पलोन्मिताम्
दत्त्वा मधुपलं चात्र कुडवं सलिलस्य च ॥
वाससा गालितं पीतं हन्ति छर्दिं त्रिदोषजम् ।

आमला, लाख और खांड एक एक पल लेकर पानीके साथ महीन पीसें फिर उसमें १ पल (५ तोले) शहद और २० तोले पानी मिलाकर कपड़े से छान लें । इसके पीनेसे त्रिदोषज छर्दि नष्ट होती है ।

(३२५६) **धात्र्यादियोगः** (२)

(ग. नि. रसा.; वा. भ. । उ. अ. ३९)

धात्रीरसक्षौद्रसिताघृतानि
हिताशनानां लिहतां नाराणाम् ।
प्राणाशमायान्ति जराविकारा
ग्रन्था विशाला इव दुर्गृहीता ॥

आमलेका रस, शहद, मिश्री और घी समान भाग मिलाकर पथ्य पालन पूर्वक सेवन करनेसे वृद्धावस्थाजनित समस्त विकार नष्ट हो जाते हैं ।

(३२५७) **धात्र्यादिस्वरसः**

(ग. नि.; शा. सं. । कुष्ठ.)

रसं हि धात्र्यक्षहरीतकीनां
पृथक् पृथक् यन्त्रनिपीडितानाम् ।
क्षौद्रान्वितं चैव पिबेत्तु पक्षं
पथ्यान्नभुक्कुष्ठनिवर्हणाय ॥

आमला, हर्र और बहेड़ेमें से किसी एकके स्वरसमें शहद मिलाकर १५ दिन तक पीने और पथ्य पालन करनेसे कुष्ठ रोग नष्ट होता है ।

(३२५८) **धान्यकहिमः**

(वै. जी. । विला. १; ग. नि.; भा. प्र.; यो. र.; वृ. नि. र.; वं. से.; वृं. मा.; यो. र.; भै. र. । ज्वर.)

पर्युषितं धान्यजलं प्रातः पीतं सशर्करं पुंसाम् ।
अन्तर्दाहं शमयति प्रवृद्धमपि तत्क्षणादेव ॥

(२ तोले) धनियेको अधकुटा करके रातको (१२ तोले) पानीमें मिट्टीके बरतनमें भिगो दें; प्रातःकाल छानकर उसमें खांड मिलाकर पीने से अत्यन्त प्रवृद्ध अन्तर्दाह भी तुरन्त शान्त हो जाती है।

(३२५९) **धान्यकादिकषायः**

(ग. नि. । ग्रह.)

धान्यबिल्वबलाशुण्ठीशालिपर्णीभृतं जलम् ।
स्याद्वातग्रहणीदोषे पानाहारपरिग्रहे ॥

धनिया, बेलगिरी, खरैटी, सोंठ और शालपर्णी के काथ से आहार बनाकर देने और प्यास में वह जल पिलानेसे वातज ग्रहणी नष्ट होती है।

(सब चीजें मिली हुई १। तोला, पानी २ सेर, शेष १ सेर।)

(३२६०) **धान्यकादिक्काथः** (१)

(यो. र. । क्षय.)

धान्यकं पिप्पलीविश्वदशमूलीजलं पिबेत् ।
पार्श्वशूलज्वरश्वासपीनसादिनिवृत्तये ॥

धनिया, पीपल, सोंठ और दशमूलका काथ पीनेसे पसलीकी पीड़ा, ज्वर, स्वास और पीनसादि रोग नष्ट होते हैं।

(३२६१) **धान्यकादिक्काथः** (२)

(वृं. मा.; ग. नि. । ज्वरा.; आ. वे. विं. । चि. अ. ४)

दीपनं कफविच्छेदि पित्तवातानुलोमनम् ।
ज्वरघ्नं पाचनं भेदि शृतं धान्यपटोलयोः ॥

धनिया और पटोलपत्रका काथ दीपन, कफ नाशक, पित्त तथा वायुको अनुलोम करने वाला, ज्वरनाशक, पाचन और भेदक है।

(३२६२) **धान्यकादिक्काथः** (३)

(भै. र. । ज्वराति.)

धान्यकं विश्वसंयुक्तमामघ्नं वह्निदीपनम् ।
वातश्लेष्मज्वरहरं शूलातिसारनाशनम् ॥

धनिया और सोंठका काथ पीनेसे आम, वात-कफज्वर, शूल और अतिसार नष्ट होता है।

(३२६३) **धान्यकादिहिमः**

(भा. प्र. । रक्तपित्ता.; वै. र. । रक्तपित्ता.)

धान्याकधात्रीवासानां द्राक्षापर्पटयोर्हिमः ।
रक्तपित्तं ज्वरं दाहं तृष्णां शोषञ्च नाशयेत् ॥

धनिया, आमला, बासा, दाख (मुनक्का) और पित्तपापड़ा समान भाग मिश्रित २ तोले लेकर अधकुटा करके रातको १२ तोले पानी में मिट्टीके बरतनमें भिगो दें और प्रातःकाल छानकर पियें।

इसके सेवनसे रक्तपित्त, पित्तजज्वर, दाह, तृष्णा और शोष रोग नष्ट होता है।

धान्यचतुष्कम्

धान्यपञ्चकम् देखिये

(३२६४) **धान्यपञ्चकम्**

(भै. र.; वं. से.; वै. रह.; ग. नि.; र. र.; च. द.; वृं. नि. र.; वृं. मा.; भा. प्र. । अतिसार; यो. चि. । अधि. ४; वृ. यो. त. । त. ६४; शा. सं. । म. अ. २)

धान्यकं नागरं मुस्तं बालकं बिल्वमेव च ।
आमशूलविबन्धघ्नं पाचनं वह्निदीपनम् ॥
इदं धान्यचतुष्कं स्यात्पैत्ते शुण्ठी विना पुनः ॥

धनिया, सोंठ, नागरमोथा, सुगन्धबाला, और बेलगिरी । इन पांचों के योगको धान्य पञ्चक कहते हैं । यह क्वाथ आम, शूल और विबन्धयुक्त अतिसार नाशक तथा दीपन और पाचन है ।

यदि इसमें से सोंठ कम कर दी जाय तो इसका नाम '**धान्यचतुष्क**' हो जाता है । यह क्वाथ पित्तातिसारको नष्ट करता है ।

(३२६५) **धान्यादिक्वाथः** (१)

(यो. र. । अति.)

धान्यकातिविषामुस्तागुडूचीबिल्वनागरैः ।
दत्तः कषायः शमयेदतिसारं चिरोत्थितम् ॥
अरोचकामशूलास्रज्वरघ्नः पाचनः स्मृतः ॥

धनिया, अतीस, नागरमोथा, गिलोय, बेलगिरि और सोंठका क्वाथ पीनेसे पुराना अतिसार, अरुचि, आम, शूल, रक्तातिसार और ज्वर नष्ट होता है । यह क्वाथ पाचन भी है ।

(३२६६) **धान्यादिक्वाथः** (२)

(वं. से.; वृं. मा.; यो. र.; ग. नि. । ग्रहण्य.; वं. से । अति.)

धान्यकातिविषोदीच्ययवानीमुस्तनागरम् ।
बला द्विपर्णी बिल्वं च दद्याद्दीपनपाचनम् ॥

धनिया, अतीस, सुगन्धबाला, अजवायन, मोथा, सोंठ, खरैंटी, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी और बेलगिरी का क्वाथ दीपन पाचन है । (इसे अतिसार और संग्रहणीमें देना चाहिये ।)

(३२६७) **धान्यादिजलम्**

(वं. से.; यो. र. । अति.)

धान्योदीच्यशृतं तोयं
तृष्णादाहतिसारवान् ।
ताभ्यामेव सपाठाभ्यां
सिद्धमाहारमाचरेत् ॥

तृष्णा और दाह युक्त अतिसारमें धनिये और सुगन्धबालेका पानी पिलाना चाहिये तथा धनिया, सुगन्ध बाला और पाठा के पानीसे आहार बनाकर देना चाहिए ।

(समान भाग मिली हुई औषधें १। तोला पानी २ सेर । शेष क्वाथ १ सेर ।)

(३२६८) **धान्यादियोगः**

(भा. प्र. । म. ख. बाल.)

धान्यं च शर्करायुक्तं तण्डुलोदकसंयुतम् ।
पानमेतत्प्रदातव्यं कासश्वासापहं शिशोः ॥

धनिये को चावलों के पानीमें पीसकर उस में खांड मिलाकर पिलानेसे बालकोंकी खांसी और श्वास नष्ट होते हैं ।

इति धकारादिकषायप्रकरणम् ।

———०———

अथ धकारादिचूर्णप्रकरणम्

(३२६९) **धत्तूरादिचूर्णम्**

(वृं. नि. र. । अर्श.)

धत्तूरस्य फलं पक्वं पिप्पलीनागराभया ।
बालकं गुडसंयुक्तं भक्ष्यं गुञ्जाष्टकं निशि ॥
सिताम्ध्वाज्यकर्षैकं पिबेत्पित्तार्शसाञ्जयेत् ॥

धतूरेका पकाफल, पीपल, सोंठ, हर्र, नेत्रबाला, और गुड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसमें से नित्य प्रति रात्रिको ८ रत्ती चूर्ण १।-१। तोला मिश्री, शहद और घीमें मिलाकर पीनेसे पित्तज अर्श, नष्ट होती है।

(३२७०) **धातकीपुष्पादियोगः**

(ग. नि. । वन्ध्याधि.)

धातकीकुसुमैर्युक्तं नारी नीलोत्पलं पिबेत् ।
ऋतौ मधुयुतं प्रातः क्षिप्रं गर्भेण युज्यते ॥

धायके फूल और नील कमलके समान भाग मिश्रित चूर्णको ऋतुकालमें शहदके साथ मिलाकर पीनेसे स्त्री शीघ्र ही गर्भ धारण कर लेती है।

(३२७१) **धातक्यादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । अति.)

श्रीधातकीमोचरसाब्दलोध्र
कालिङ्गविश्वौषधचूर्णमेतत् ।
पेयं गुणाढ्यं तु गुडतक्रयुक्तं
गाढं त्वतीसारकनाशकञ्च ॥

बेलगिरी, धायके फूल, मोचरस, नागरमोथा, लोध, इन्द्रजौ, और सोंठ । समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे गुड़मिश्रित तक्रके साथ पीनेसे प्रबल अतिसार नष्ट होता है। (मात्रा—१॥-२ माशा)

(३२७२) **धातक्यादिप्रयोगः**

(यो. र. । बाल.)

दन्तपालीं तु मधुना चूर्णेन प्रतिसारयेत् ।
धातकीपुष्पपिप्पल्योर्धात्रीफलरसेन वा ॥

जब बालकके दांत निकल रहे हों, तब धायके फूल और पीपलके समभाग मिश्रित चूर्णको शहद या आमलेके रसमें मिलाकर उसके ससूढ़ों पर मलने से दांत शीघ्र निकल आते हैं।

(३२७३) **धात्रीचूर्णम्**

(ग. नि.; वृ. नि. र.; यो. र । शूला.)

प्रलिह्यात्पित्तशूलघ्नं
धात्रीचूर्णं समाक्षिकम् ।
सगुडं घृतसंयुक्तं
भक्षयेद्वा हरीतकीम् ॥

आमलेके चूर्णको शहदमें मिलाकर या हर्र के चूर्णको गुड़ और घीमें मिलाकर सेवन करनेसे पित्तज शूल नष्ट होता है।

(चूर्णकी मात्रा—१ से ३ माशे तक।)

(३२७४) **धात्रीयोगः**

(वै. म. र. । पट. २)

धात्र्यस्थितण्डुलजलैः पीतं हन्यादसृग्दरम् ।
पीता शीताम्बुना पिष्टा धात्री वोदुम्बराम्बुना ॥

आमलेकी गुठली के भीतरकी मज्जा (गिरी) को चावलों के पानीके साथ पीनेसे या आमलेको

आक, चिरचिटा और मुलैठी में से किसी एकके क्काथके साथ खिलाना चाहिये।

जीमूतकी भांति धामार्गवके पुष्पादि से सिद्ध दुग्ध[1] के भी चार प्रयोग हैं और पांचवां प्रयोग सुराका[2] है।

धामार्गवके पक्के और सूखे फलों के बीज अलग करके रातको उसमें गुड़ मिश्रित मुलैठीका क्काथ भर दें और प्रातःकाल छानकर पिलावें। यह प्रयोग गुल्म और अन्य कफज रोगोंमें हितकारी है।

मुलैठी की भांति ही कोविदारादि आठों द्रव्यों में से किसीका भी क्काथ पर्युषित करके प्रयुक्त किया जा सकता है।

यदि छर्दि और हृद्रोगमें प्रयुक्त करना हो तो धामार्गवसे अन्न सिद्ध करके देना चाहिये।

उत्पलादि पुष्पोंको धामार्गवके चूर्णसे अच्छी तरह बसाकर[3] यवाग्वादि पिलाकर तृप्त किये हुवे रोगीको वह पुष्प सुंघाये जायं तो उसे अच्छी तरेह वमन हो जाती है।

धामार्गवके चूर्णको (उसीके रस या पानी में) घोटकर बेरके समान गुटिका बना लें। इसे गायके गोबर या घोड़ेकी लीदके २० तोले रसके साथ रोगीको खिलावें।

अथवा पृषत् (हरिन भेद), ऋष्य (रोरुमृग), कुरङ्ग (छोटा हरिन) घोड़ा, हाथी, ऊंट, खिच्चर, भेड़, श्वदंष्ट्री, गधा और खङ्ग (घोड़ेका एक भेद) में से किसी एकके मलके रसके साथ उपरोक्त गुटिका खिलावें।

जीवक, ऋषभक, क्षीरकाकोली, कौंचके बीज, शतावर, काकोली, मुण्डी, मेदा, महामेदा और मुलैठी में से किसी एकका चूर्ण धामार्गवके चूर्णके साथ मिलाकर उसे खांड और शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये।

यह प्रयोग हृदयकी दाह और खांसीमें उपयोगी है।

यदि कफके साथ पित्त भी हो तो अनुपान में मन्दोष्ण पानी देना चाहिये।

धनिये और तुम्बुरुके यूषके साथ धामार्गवका कल्क देनेसे विष नष्ट होता है।

चमेलीके फूल, हल्दी, चोरक, पुनर्नवा, कसौंदी, कन्दूरी, बच, महासहा, क्षुद्रसहा, और वृश्चीर (लाल पुनर्नवा) में से किसी एकके क्काथमें धामार्गवके १ या २ फलोंको भिगोकर, मल छानकर पिलाना चाहिये। इससे भलीभांति वमन होकर मनोविकार (उन्मादादि) नष्ट होते हैं।

धामार्गवसे दूध पकाकर उसका दही बनाकर घी निकालें और फिर उस घीको धामार्गवके ही फलादिके कल्कसे सिद्ध करके सेवन करावें।

(दूध पकानेके लिए—धामार्गव १ सेर, दूध १६ सेर, पानी ६४ सेर। मिलाकर पकावें। दूध मात्र शेष रहने पर छान लें।

घृतसिद्ध करनेके लिए—उपरोक्त दूधसे निकाला हुवा घी १ सेर, धामार्गवका कल्क १० तोले; पानी ४ सेर।)

इति धकारादिकल्पप्रकरणम्।

१—पुष्पसिद्ध दुग्ध, फल सिद्ध दुग्ध, धामार्गवसिद्ध दूध की मलाई और धामार्गव सिद्ध दूधका दही।

२—धामार्गवके फलोंको सुरामें भिगोकर मल छानकर प्रयुक्त करें।

३—धामार्गवके चूर्णको फूलोंपर छिड़क कर रात भर रक्खा रहने दें और दूसरे दिन फिर नया चूर्ण छिड़कें इसी प्रकार निरन्तर कई दिन करें, और फिर फूलों को पीस लें।

अथ धकारादिरसप्रकरणम्



(३३२५) **धन्वन्तरिरसः**

(र. र. स. । उ. खं. अ. २.)

सूतगन्धार्कसौभाग्यं कङ्कुष्ठं रक्तचन्दनम् ।
कणा चैतानि तुल्यानि मर्दयेद्भृङ्गवारिणा ॥
एकाहमथ संशोष्य स्थापयेदतियत्नतः ।
रसो निःशेषकुष्ठघ्नो धन्वन्तरिरिति स्मृतः ॥
निर्दिष्टः शम्भुना सर्वरोगभीतिविनाशनः ।
पथ्याघृतयुतो वायुं सिन्धुविश्वान्वितोऽपि वा ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, सुहागेकी खील, कङ्कुष्ठ, लालचन्दन और पीपल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर १ दिन जम्बीरी नीबूके रसमें घोटकर (३-४ रत्तीकी) गोलियां बनालें ।

इसके सेवनसे सब प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं। अनुपान-हर्रका चूर्ण और घी या सोंठ और सेंधा नमक तथा घी ।

(३३२६) **धातुज्वराङ्कुशरसः**

(नि. र.; बृ. नि. र. । ज्वर.)

लोहाभ्रकं ताम्रभस्म पारदं गन्धकं विषम् ।
व्योषं फलत्रिकं कुष्ठं समभागेन मर्दयेत् ॥
भृङ्गनीरेण चार्द्रस्य वारा निर्गुण्डिकारसैः ।
त्रिदिनं मर्दयित्वा तु मुद्गमाना वटी कृता ॥
यथारोगानुपानेन सर्वव्याधिविनाशिनी ।
अजीर्णवातकासघ्नी दीपनी रुचिवर्धनी ॥
सर्वधातुज्वरान्हन्ति सोयं धातुज्वराङ्कुशः ॥

लोह भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनागविष (मीठा तेलिया), सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, और कूठ। सब चीजें समान भाग लेकर प्रथम पारे और गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर ३-३ दिन भंगरा, अदरक और संभालुके रसमें घोटकर मूंगके बराबर गोलियां बनावें ।

इन्हें यथोचित अनुपानके साथ देनेसे अजीर्ण, वातज खांसी, और सर्व धातुगत ज्वर आदि समस्त रोग नष्ट होते तथा जठराग्नि और रुचिकी वृद्धि होती है ।

धातुपाकरसः (वै. र.)

ज्वराङ्कुश रस ९ वां सं. २१६५ देखिये ।

(३३२७) **धातुबद्धरसः**

(र. र.; धन्वं. । रसाय.)

गन्धकेन शिला वापि सीसको माक्षिकेण वा ।
अभ्रं लौहेन वा तद्वत् समभागेन पारदः ॥
सुभृष्टटङ्कणेनापि रसपादेन संयुतः ।
रसेन पारिजातस्य कारवेल्या रसेन वा ॥
द्रवन्त्यास्तण्डुलीयोत्थैरेकाहं मर्दयेद्रसम् ।
अर्धं सञ्चूर्ण्य मण्डूरं दिनान्तं परिमर्दयेत् ॥
तज्जलं भाजने क्षिप्त्वा सूर्यतापे निधापयेत् ।
जलादुत्सृज्य मृत्स्नाश्च पथ्यया सह मर्दयेत् ॥
पूर्वसूतस्य तं कल्कं मृत्स्नया परिलेपयेत् ।
अङ्गुलोत्सेधमानेन ततः सम्वेष्ट्य मृत्पटैः ॥

विशोष्य तं धमेत्गाढं सार्धैकं घटिकावधि ।
तस्मादुद्धृत्य तं भित्वा शीतलाङ्गाञ्च मूषिकाम्॥
धातुबद्धरसस्सोऽयं सर्वरोगनिकृन्तनः ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध मनसिल या सीसाभस्म, सोना मक्खी भस्म या लोह भस्म और अभ्रक भस्म १-१ भाग तथा शुद्ध पारा इन सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और उसमें उपरोक्त औषधें तथा पारेका चौथा भाग सुहागेकी खील मिलाकर १-१ दिन हारसिंगार या करेलेके रस तथा द्रवन्ती और चौलाईके रसमें घोटें । फिर इसमें इसका आधा भाग मण्डूर भस्म मिलाकर एक दिन घोटें । तत्पश्चात् इसमें उपरोक्त ओषधियोंका रस मिलाकर धूपमें रखदें। (रस इतना डालना चाहिये कि औषधके २-३ अंगल ऊपर आ जाय ।) अब इस समस्त औषधका गोला बनाकर सुखालें और (उसे वटादिके पत्तोंमें लपेटकर) उसपर समान भाग मिश्रित हर्र और मिट्टीको पानीमें पीसकर लेप करदें, फिर उसपर एक अंगल मोटी कपर मिट्टी करके सुखालें । इसे मूषामें बन्द करके १॥ घड़ी तक तीव्राग्निमें पकावें और स्वांगशीतल होनेपर रसको निकालकर पीस लें ।

यह रस समस्त रोगोंको नष्ट करता है ।

(मात्रा १ रत्ती ।)

(३३२८) धात्रीफलादिचूर्णम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ७)

धात्रीफलं लोहरजश्च पथ्या
व्योषं समांशेन विभाव्य तन्तु ।
रसेन वा दाडिममातुलुङ्ग्या-
श्चूर्णं सिताढ्यं च सपित्तशूले ॥

आमला, लोह भस्म, हर्र, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण समान भाग लेकर सबको १ दिन अनार या बिजौरेके रसमें घोटें ।

इसे (समान भाग) खांडमें मिलाकर खानेसे पित्तज शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा—१-१॥ माशा । अनुपान जल ।)

(३३२९) धात्रीलोहम् (१)

(र. र. रसा. । उपदे. ६; धन्व.; र. र. । वाजीक.)

धात्रीफलस्य चूर्णन्तु भावयेत्तत्फलद्रवैः[1] ।
एकविंशतिवारान् वै शोष्यं पेष्यं पुनः पुनः ॥
तत्पादांशं मृतं लोहं मध्वाज्यशर्करान्वितम् ।
पलैकं भक्षयेन्नित्यं सिताक्षीरं पिबेदनु ॥
धात्रीलोहप्रभावेण रमयेत्कामिनीशतम् ॥

आमलेके चूर्णको उसीके रसमें घोटकर सुखावें, और इसी प्रकार २१ भावना देकर उसमें उससे चौथाई लोह भस्म मिलालें । इसे शहद, घी और खांड समानभाग मिश्रित ५ तोलेके साथ मिलाकर सेवन करनेसे १०० स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति प्राप्त होती है ।

(मात्रा—आधेसे १ माशे तक ।)

(३३३०) धात्रीलोहम् (२)

(भै. र.; रसे. सा. सं.; र. रा. सु.; धन्वं. । शूल.)

[1]कुडवं शुद्धमण्डूरं यवश्च कुडवन्तथा ।
पाकार्थञ्च जलं प्रस्थं चतुर्भागावशेषितम् ॥

१ "त्रिफलाद्रवैः" इति पाठान्तरम्.

१ षट्पलमिति पाठान्तरम् ।

शतावरीरसस्याष्टावामलक्या रसस्य च ।
तथा दधिपयोभूमिकूष्माण्डस्य चतुः पलम् ॥
चतुःपलमिक्षुरसं दद्यात्तत्र विचक्षणः ।
प्रक्षिपेज्जीरकं धान्यं त्रिजातं करिपिप्पलीम् ॥
मुस्तं हरीतकीश्चैवमभ्रं लौहं कटुत्रयम् ।
रेणुका त्रिफला चैव तालीशं स्वर्णकेशरम् ॥
कटुका मधुकं रास्ना चाश्वगन्धा च चन्दनम् ।
एतेषां कार्षिकं भागं चूर्णयित्वा विनिःक्षिपेत् ॥
भोजनाद्यवसाने च मध्ये चैव समाहितः ।
तोलैकं भक्षयेन्नित्यमनुपानं पयस्तथा ॥
शूलमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ।
वातिकं पैत्तिकश्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
परिणामसमुत्थश्च ह्यन्नद्रवभवन्तथा ।
द्वन्द्वजान्यपि शूलानि ह्यम्लपित्तं सुदारुणम् ॥
सर्वशूलहरं श्रेष्ठं धात्रीलोहमिदं शुभम् ॥

नोट—भैषज्य रत्नावलीमें ४ पल घृत अधिक है तथा प्रक्षेप द्रव्योंमें कुटकी, मुलैठी, रास्ना, असगन्ध और चन्दनका अभाव है।

शुद्ध मण्डूर और जौ ४-४ पल (हरेक २० तोले) लेकर सबको २ सेर (१६० तोले) पानीमें पकावें। जब आधा सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें ८-८ पल शतावर और आमलेका रस, तथा ४-४ पल दही, दूध बिदारीकन्दका रस और ईखका रस मिलाकर पुनः पकावें। जब लेह तैयार हो जाय तो उसमें ज़ीरा, धनिया, दालचीनी, तेजपात, इलायची, गजपीपल, नागरमोथा, हर्र, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, रेणुका, हर्र, बहेड़ा, आमला, तालीसपत्र, नागकेसर, कुटकी, मुलैठी, रास्ना, असगन्ध, और सफेद चन्दन का महीन चूर्ण १।-१। तोला मिलाकर रक्खें।

इसमें से १-१ तोला औषध भोजनके आदि, मध्य और अन्तमें दूधके साथ सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज, सन्निपातज और परिणामशूल तथा अन्नद्रवशूल एवं भयंकर अम्लपित्त का नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा १-१॥ माशा।)

(३३३१) धात्रीलोहम् (३)

(र. का. धे.; वृं. मा.; च. द.; ग. नि.। शूला.; वृ. यो. त.। त. १२२; भै. र.; र. र.। शूल; र. चं.; र. सा. स.; र. रा. सुं.। पित्तरो.)

धात्रीचूर्णस्याष्टौ पलानि चत्वारि लोहचूर्णस्य ।
यष्टीमधुकरजश्च द्विपलं दद्यात्पटे घृष्टम् ॥
अमृताक्वाथेनैतच्चूर्णं भाव्यं तु सप्ताहम् ।
चण्डातपे विशुष्कं भूयः पिष्ट्वा नवे घटे स्थाप्यम् ॥
घृतमधुना संयुक्तं भक्तस्यादौ भक्तमध्येऽन्ते च
त्रीन्वारानपि खादेत्पथ्यं दोषानुबन्धेन ॥
भक्तस्यादौ नाशयति दोषान्पित्तानिलोद्भूतान् ।
मध्येऽन्ने विष्टम्भं जयति च नृणां विदह्यते नान्नम् ॥
पानान्नकृतान्दोषान्भक्तान्ते शीलितो जयति ।
एवं जीर्यति चान्ने शूलं नृणां सुकष्टमपि ॥
हरति च सहसा युक्तो योगश्चायं जरत्पित्तम् ।
चक्षुष्यः पलितघ्नः कफपित्तभवाञ्जयेद्रोगान् ॥
प्रसादयति च रक्तं पाण्डुत्वं कामलां जयति ॥

आमलेका चूर्ण ८ पल, लोह भस्म ४ पल, और मुलैठीका चूर्ण २ पल (१० तोले) लेकर सबको सात दिन तक गिलोयके काथकी भावना देकर तेज़ धूपमें सुखावें।

इसे घी और शहदमें मिलाकर भोजनके आदि, मध्य और अन्तमें सेवन करना तथा दोषानुरूप पथ्य पालन करना चाहिये ।

भोजनके आदिमें सेवन करनेसे पित्तज और वातज रोग, और मध्यमें सेवन करनेसे विष्टम्भ नष्ट होता है तथा आहार विदग्ध होकर दाह नहीं करता। यदि इसे भोजनके अन्तमें सेवन किया जाय तो अन्नपानकृत् विकार नष्ट होते हैं ।

यह '**धात्रीलोह**' कष्टसाध्य शूल, अम्लपित्त और कफपित्तज रोगोंको नष्ट करने वाला, आंखोंके लिये हितकारी, पलित और पाण्डु नाशक तथा रक्त शोधक है ।

(मात्रा १ माशा ।)

(३३३२) **धात्रीलोहम्** (४)

(वं. से. । कामला; र. का. धे.; र. रा. सु.; रसे. सा. स.; वृ. मा.; र. र. । पाण्डु; रसे. चि. । स्त. ९; च. द.; यो. र.; वृ. नि. र. । कामला; यो. त. । त. २५; ग. नि. । पाण्डु)

धात्रीलोहरजोव्योषनिशाक्षौद्राज्यशर्कराः ।
लीढ्वा निवारयत्याशु कामलामुद्धतामपि ॥

आमले का चूर्ण, लोह भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल और हल्दी का चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर रक्खें ।

इसे शहद, घी और खांडके साथ सेवन करने से कष्टसाध्य कामला भी नष्ट हो जाती है ।

(मात्रा १ से १॥ माशे तक ।)

(३३३३) **धात्र्यादिप्रयोगः**

(वा. भ. । उ. स्था. अ. ३९)

धात्रीकृमिघ्नासनसारचूर्णं
सतैलसर्पिर्मधुलोहरेणुः ।
निषेवमाणस्य भवेन्नरस्य
तारुण्यलावण्यमविप्रणष्टम् ॥

आमला, बायबिडंग, असन वृक्षका सार, और लोह चूर्ण (भस्म) समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर तैल, घी और शहदके साथ सेवन करनेसे यौवन और सौन्दर्य स्थिर रहता है ।

(३३३४) **धान्याभ्रकम्**

(यो. र. । धातुशोधन.)

पादांशशालिसंयुक्तमभ्रं बद्ध्वाऽथ कम्बले ।
त्रिरात्रं स्थापयेन्नीरे तत्क्लिन्नं मर्दयेत्करैः ॥
कम्बलाद्गलितं सूक्ष्मं बालुकासदृशं च यत् ।
तद्धान्याभ्रमिति प्रोक्तमथ मारणसिद्धये ॥

वज्राभ्रकके चूर्णमें उससे चौथाई भाग शालि धान मिलाकर कम्बलमें बांधकर ३ दिन तक पानीमें भीगने दें तत्पश्चात् कम्बल को हाथ या पैरोंसे मसलें । इस प्रकार अभ्रकका जो बारीक चूर्ण कम्बल के बाहर निकलेगा उसीका नाम "**धान्याभ्रक**" है । भस्म बनानेमें यही प्रयुक्त होता है ।

(३३३५) **धूम्रकेतुरसः**

(र. रा. सुं. । ज्वर.)

दद्यात्समं सूतसमुद्रफेनं
हिङ्गूलगन्धं परिमर्द्य यामम् ।
नवज्वरे वल्लयुगं त्रिघस्र—
मार्द्राम्बुनायं ज्वरधूमकेतुः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हिंगुल, और समुद्र फेन समान भाग लेकर प्रथम पारे और गन्धक की कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य चीजें मिलाकर १ पहर तक घोटें।

इसमें से ४ रत्ती औषध अदरकके रसके साथ मिलाकर देनेसे नवीन ज्वर नष्ट होता है।

इति धकारादिरसप्रकरणम्।

अथ धकारादिमिश्रप्रकणरम्

(३३३६) **धत्तूरबीजशुद्धिः**

(यो. र.। वृ. यो. त.। त. ४३)

धत्तूरबीजं गोमूत्रे चतुर्यामोषितं पुनः।
कण्डितं निस्तुषं कृत्वा शुद्धं योगेषु योजयेत्॥

धतूरेके बीजोंको ४ पहर तक गोमूत्रमें भिगोकर कूट कर निस्तुष कर लिया जाय तो वह शुद्ध हो जाते हैं।

(३३३७) **धत्तूरमूलयोगः**

(यो. त.। त. ७५; रा. मा.। स्त्रीरो.)

धत्तूरमूलिका पुष्ये गृहीता कटिसंस्थिता।
गर्भनिवारयत्येव रण्डावेश्यादियोषिताम्॥

यदि पुष्य नक्षत्रमें धतूरेकी जड़को उखाड़कर स्त्रीकी कमरमें बांध दिया जाय तो उसके साथ सम्भोग करनेसे गर्भ नहीं रहता।

(३३३८) **धातक्यादिपेया**

(वं. से.; यो. र.। अति.)

धातकीक्वाथसंसिद्धा विश्वभेषजसंस्कृता।
दाडिमाम्लयुता पेया ज्वरातीसारशूलिनाम्॥

शूलयुक्त ज्वरातिसारमें धायके फूलोंके काथ और सोंठके कल्कसे बनी हुई पेयामें अनारका रस मिलाकर पिलाना चाहिये।

(३३३९) **धात्रीपिण्डी**

(यो. र.। नेत्र.)

पित्ताभिष्यन्दनाशाय धात्रीपिण्डीसुखावहा।
महानिम्बदलोद्भूता पिण्डिका पित्तनाशिनी

आमले या महानिम्ब (बकायन) के पत्तोंको पीसकर उसकी पोटली बनाकर आंखपर फेरनेसे आंखकी पित्तज पीड़ा शान्त होती है।

(३३४०) **धात्रीयोगः** (रसायनः)

(ग. नि.; वृ. मा.। रसाय.)

धात्रीचूर्णस्य कंसं स्वरसपरिगतं
क्षौद्रसर्पिःसमांशम्।
कृष्णा मानी सिताष्टप्रसृति
समयुतं स्थापितं धान्यराशौ॥
वर्षान्ते तत्समश्नन् भवति विललितो
रूपवर्णप्रभावै-
र्निर्व्याधिर्बुद्धिमेधास्मृतिवचनबलः
स्थैर्यसत्वैरुपेतः॥

आमलेके ४ सेर चूर्णको आमले ही के रसकी अनेक भावनाएं देकर उसमें ४—४ सेर शहद और घी तथा ४० तोले पीपलका चूर्ण और १ सेर खांड मिलाकर चिकने बरतनमें भरकर उसका मुख बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें और १ वर्ष पूरा होने पर निकालें ।

इसके सेवनसे रूप, वर्ण, बुद्धि, मेधा, स्मृति, वाक्शक्ति और बलादिकी वृद्धि होती तथा समस्त व्याधियां नष्ट हो जाती हैं ।

(३३४१) **धात्रीरसक्रिया** (१)

(यो. र. । नेत्र.)

धात्रीरसाञ्जनक्षौद्रसर्पिर्भिस्तु रसक्रिया ।
पित्तानिलाक्षिरोगघ्नी तैमिर्यपटलापहा ॥

आमलेके स्वरसमें रसौत, शहद, और घी मिलाकर उसे गाढ़ा करके आंखमें डालनेसे आंखोंके पित्तज वातज रोग तथा तिमिर और पटल नष्ट होते हैं ।

(३३४२) **धात्रीरसक्रिया** (२)

(वं. से. । नेत्र.)

धात्रीसैन्धवकृष्णाभिस्तुल्याभिर्मरिचं समम् ।
क्षौद्रयुक्तं निहन्त्याशु पटलञ्च रसक्रिया ॥

आमला, सेंधा और पीपल समान भाग तथा काली मिर्च सबके बराबर लेकर सबको अधकुटा करके आठ गुने पानीमें पकावें । जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर फिर पकावें। जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें शहद मिलाकर रक्खें ।

इसे आंखमें डालनेसे पटल रोग नष्ट होता है ।

(३३४३) **धात्र्यादिगण्डूषः**

(वृ. नि. र. । मसूरि.)

धात्रीफलं समधुकं कथितं मधुसंयुतम् ।
मुखे कण्ठे व्रणे जाते गण्डूषार्थे प्रयोजयेत् ॥

यदि मसूरिकामें मुख और कण्ठमें घाव हो गये हों तो आमले और मुलैठीके क्काथमें शहद मिलाकर उससे कुल्ले कराने चाहियें ।

(३३४४.) **धात्र्यादिप्रयोगः**

(वृ. यो. त. । त. ८३; भा. प्र. । ख. २ छर्दि.)

पिष्ट्वा धात्रीफलं लाजा[१]ञ्छर्कराञ्च पलोन्मिताम् ।
दत्त्वा मधुपलञ्चापि कुडवं सलिलस्य च ॥
वाससा गालितं पीतं हन्ति छर्दिं त्रिदोषजम् ॥

आमला, धानकी खील और खांड सम भाग मिश्रित ५ तोले लेकर सबको पानीके साथ पीसकर २० तोले पानीमें मिलावें और उसमें ५ तोले शहद डालकर कपड़ेसे छानलें । इस पानीको पीनेसे त्रिदोषज छर्दि नष्ट हो जाती है ।

(३३४५) **धान्याम्लसेकः**

(वै. म. र. । पट. ७)

नाभेरधस्ताद्धान्याम्लसेको जयति निश्चितम् ।
मूत्रकृच्छ्रं शरीरेषु सेकस्तेनाङ्गदाहहा ॥

नाभीके नीचे काञ्जीकी धार छोड़नेसे मूत्रकृच्छ्र निस्सन्देह नष्ट होता है । यदि शरीर पर काञ्जीका अवसेचन किया जाय तो अङ्गदाह शान्त हो जाती है ।

इति धकारादिमिश्रप्रकरणम् ।

१ द्राक्षामिति पाठान्तरम्



अथ नकारादिकषायप्रकरणम्

(३३४६) नलदादिक्काथः

(ग. नि. । ज्वर.)

पित्तोद्भवे नलदपर्पटकाम्बुशुण्ठी-
श्रीखण्डनिःकथितमेतदुशन्ति वैद्याः ॥

खस, पित्तपापड़ा, सुगन्ध बाला, सोंठ, और सफेद चन्दनका काथ पित्तज्वरको नष्ट करता है।

(३३४७) नलमूलादिकषायः

(ग. नि.; रा. मा. । ज्वरा.)

नलवेतसयोर्मूलं मूर्वा च सुरदारु च ।
कषायं विधिवत्कृत्वा पेयं सर्वज्वरापहम् ॥

नल और बेतकी जड़, मूर्वा और देवदारु का काथ समस्त ज्वरोंको नष्ट करता है।

(३३४८) नलादिक्काथः

(यो. र.; वं. से. । मूत्रा.; वृ. यो.त. । त. १०१)

नलकुशकाशेक्षुशिफाकथितं
प्रातः सुशीतलं ससितम् ।
पिबतः प्रयाति नियतं
मूत्राघातः सवेदनः पुंसः ॥

नल, कुश, कांस और ईखकी जड़के काथको ठण्डा करके उसमें मिश्री मिलाकर प्रातः काल पिलानेसे वेदनायुक्त मूत्राघात अवश्य नष्ट हो जाता है।

(मिश्री काथका आठवां भाग मिलानी चाहिये।)

(३३४९) नवकार्षिकक्काथः

(र. र.; वृं. मा.; च. द.; वं. से.; यो. र.; भा. प्र.; ग. नि. । वातरक्ता.; यो. त. । त. ४१)

त्रिफलानिम्बमञ्जिष्ठावचाकटुकरोहिणी ।
वत्सादनीदारुनिशाकषायो नवकार्षिकः ॥
वातरक्तं तथा कुष्ठं पामानं रक्तमण्डलम् ।
कुष्ठं कपालिकाकुष्ठं पानादेवापकर्षति ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, मजीठ, बच, कुटकी, गिलोय, और दारु हल्दी। हरेक १-१ कर्ष (१। तोला) लेकर अधकुटा करके सबको ८ गुने पानी में पकावें जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो छानकर रोगीको पिलावें।

यह "नवकार्षिक कषाय" वातरक्त, कुष्ठ, पामा, रक्तमण्डल और कपाल कुष्ठको नष्ट करता है।

नोट—योगरत्नाकर, वृन्दमाधवादि में अन्यत्र इसी काथमें गिलोय के स्थान में पटोलका योग है।

(३३५०) नवाङ्गकषायः

(भै. र.; च. द. । ज्वर.)

विश्वामृताब्दभूनिम्बैः पञ्चमूलीसमन्वितैः ।
कृतः कषायो हन्त्याशु वातपित्तोद्भवं ज्वरम् ॥

सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, चिरायता, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, कटेली, कटेला और गोखरु। इनका काथ वातपित्तज ज्वरको नष्ट करता है।

(३३५१) **नागरक्काथः**

(वृ. नि. र. । हृद्रोगा. ।)

नागरस्य पिबेदुष्णं कषायं चाग्निवर्द्धनम् ।
कासश्वासानिलहरं शूलहृद्रोगनाशनम् ॥

सोंठका उष्ण क्काथ पीनेसे अग्निकी वृद्धि होती और खांसी, श्वास, वायु, शूल तथा हृद्रोगका नाश होता है ।

(३३५२) **नागरसप्तकः** (यो. स. । समु. ४)

नागरमलयजपर्पटघनसलिलोशीरवासकक्कथितम्।
य पिबति शीतलीकृतमस्य न पित्तज्वार्त्तिस्यात्॥

सोंठ, सफेद चन्दन, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, सुगन्धबाला, खस और बासा । इनके क्काथको ठण्डा करके सेवन करनेसे पित्तज्वर नष्ट होता है ।

(३३५३) **नागरादिकल्कः** (१)

(वं. से.; वृं. मा.; यो. र.; च. द.; ग. नि. । शूला.; वृ. यो. त. । त. ९५)

नागरतिलगुडकल्कं पयसा संसाध्य यः पुमानद्यात् ।
उग्रं परिणामशूलं तस्यापैति सप्तरात्रेण[१] ॥

सोंठ, तिल और गुड़के कल्क को दूधके साथ पकाकर सेवन करनेसे सात दिनमें भयङ्कर परिणाम शूल नष्ट हो जाता है ।

(३३५४) **नागरादिकल्कः** (२)

(हा. सं. । स्था ३ अ. ११)

नागरपिप्पलिबिल्वविडङ्गं
दन्ती च सठ्यभया त्रिवृता च ।
कल्कमिदं सगुडं प्रतिपाने
चार्शसां नाशनकारि नराणाम् ॥

सोंठ, पीपल, बेलगिरी, बायबिड़ंग, दन्तीमूल, कचूर, हर्र और निसोत । सब चीज़ें समान भाग लेकर पीसकर कल्क बनायें और उसे सबके बराबर गुड़में मिलावें ।

इसके सेवनसे अर्श नष्ट होती है ।

(मात्रा ६ माशे। अनुपान उष्ण जल।)

(३३५५) **नागरादिक्काथः** (१)

(भा. प्र. । ख. २ बालरो.; यो. र.; वं. से.; वृं. मा. । बालरो.; वृ. यो. त. । त. १४४)

नागरातिविषामुस्ताबालकेन्द्रयवैः शृतम् ।
कुमारं पाययेत्प्रातः सर्वातीसारनाशनम् ॥

सोंठ, अतीस, नागरमोथा, सुगन्धबाला और इन्द्रजौ का क्काथ प्रातःकाल पिलाने से बालकोंका हर प्रकारका अतिसार नष्ट हो जाता है ।

(३३५६) **नागरादिक्काथः** (२)

(वा. भ. । चि. अ. १)

नागरं पौष्करं मूलं गुडूची कण्टकारिका ।
सकासश्वासपार्श्वार्त्तौ वातश्लेष्मोत्तरे ज्वरे ॥

सोंठ, पोखरमूल, गिलोय और कटेलीका क्काथ खांसी, श्वास और पार्श्वशूल युक्त वातकफज ज्वर-को नष्ट करता है ।

(३३५७) **नागरादिक्काथः** (३)

(वं. से.; वृं. मा. । अतिसा.)

नागरातिषामुस्तैरथवा धान्यनागरैः ।
तृष्णाशूलातिसारघ्नं रोचनं दीपनं लघुः ॥

सोंठ, अतीस और मोथेका अथवा धनिये और सोंठका क्काथ रोचक, दीपन, लघु और तृष्णा, शूल तथा अतिसार नाशक है ।

१ त्रिरात्रेणेति पाठान्तरम् ।

(३३५८) नागरादिक्काथः (४)

(ग. नि. । अश्मर्य.)

नागरवरुणकगोक्षुरपाषाणभेद-
कपोतवङ्कजः काथः ।
गुडयावशूकमिश्रः पीतो
हन्त्यश्मरीमुग्राम् ॥

सोंठ, बरनेकी छाल, गोखरु, पखान भेद (पाषाण भेद) और ब्राह्मी के काथमें जवाखार तथा गुड़ मिलाकर पीनेसे दुस्साध्य पथरी भी नष्ट हो जाती है ।

(गुड़ १। तोला, और जवाखार ३ माषा मिलाना चाहिये ।)

(३३५९) नागरादिक्काथः (५)

(वं. से. । अति.)

नागरामृतभूनिम्बबिल्वामलकवत्सकैः ।
समुस्तातिविषोशीरैर्ज्वरातिसारहृज्जलम् ॥

सोंठ, गिलोय, चिरायता, बेलगिरी, आमला, इन्द्रजौ, नागरमोथा, अतीस और खसका काथ ज्वरातिसारको नष्ट करता है ।

(३३६०) नागरादिक्काथः (६)

(वं. से. । अति.)

नागरातिविषामुस्तागुडूचीविश्ववत्सकैः ।
कषायः पाचनः शोथज्वरातीसारवारणः ॥

सोंठ, अतीस, नागरमोथा, गिलोय, बोल गोंद और इन्द्रजौका काथ शोथ ज्वर और अतिसार नाशक तथा पाचक है ।

(३३६१) नागरादिक्काथः (७)

(वै. म. र. । पटल ९)

नागरशोभाञ्जनयोः क्काथः
शूलं विनाशयेत्रिदिनात् ।
मुनितरुवल्ककाथस्तद्वत्
पटुरामठप्रतीवापः ॥

सोंठ और सहंजनेकी छालके या श्योनाक (अरलु) की छालके काथमें हींग और सैंधानमक मिलाकर निरन्तर तीन दिन तक पिलाने से शूल नष्ट हो जाता है ।

(३३६२) नागरादिक्काथः (८)

(वृ. नि. र.; वं. से. । ज्वर.)

नागरेन्द्रयवं मुस्तं चन्दनं कटुरोहिणी ।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं कषायं तु पिबेन्नरः ॥
भ्रममूर्च्छारुचिच्छर्दिपित्तश्लेष्मज्वरापहम् ॥

सोंठ, इन्द्रजौ, नागरमोथा, लाल चन्दन और कुटकीके काथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पिलानेसे भ्रम, मूर्च्छा, अरुचि, छर्दि, और पित्तकफज ज्वर नष्ट होता है ।

(३३६३) नागरादिक्काथः (९)

(वृ. यो. त. । त. १२६; यो. र. । मसू.)

नागरमुस्तगुडूचीधान्यकभार्गीवृषैः कृतः काथः।
वातश्लेष्ममसूरीदूरी कुरुतेऽनुपानतः सत्यम् ॥

सोंठ, नागरमोथा, गिलोय, धनिया, भरंगी और बासेका काथ वातकफज मसूरिका (माता) को शान्त करता है ।

(३३६४) नागरादिक्काथः (१०)

(वै. रह. । ज्वर.; भा. प्र. । ज्वर.)

नागरोशीरबिल्वाब्दधान्यमोचरसाम्बुभिः ।
कृतः काथो भवेद् ग्राही पित्तश्लेष्मज्वरापहः॥

सोंठ, खस, बेलगिरी, नागरमोथा, धनिया, मोचरस और सुगन्धबाला। इनका काथ ग्राही और पित्तकफज्वर नाशक है ।

(३३६५) **नागरादिक्काथः** (११)

(यो. र. । शूला.)

नागरैरण्डयोः क्वाथः क्वाथ इन्द्रयवस्य वा ।
हिङ्गुसौवर्चलोपेतो वातशूलनिवारणः ॥

सोंठ और अरण्ड मूलके या इन्द्रजौके क्वाथ में हींग और सञ्चल (कालानमक) मिलाकर पीनेसे वातज शूल नष्ट होता है ।

(३३६६) **नागरादिक्काथः** (१२)

(ग. नि. । ज्वर.)

सनागरोशीरघनः सधान्यः
सपिप्पलीकश्च सचन्दनश्च ।
तृतीयकं हन्ति कृतः कषायः
समाक्षिकश्चापि सशर्कराश्च ॥

सोंठ, खस, नागरमोथा, धनिया, पीपल और लाल चन्दन । इनके क्वाथमें शहद और खांड मिलाकर पिलानेसे तृतीयक (तिजारी) ज्वर नष्ट होता है ।

(३३६७) **नागरादिक्काथः** (१३)

(वृ. नि. र. । सन्नि.)

नागरं धान्यकं भार्गी पद्मकं रक्तचन्दनम् ।
पटोलपिचुमन्दश्च त्रिफलामधुकं बला ॥
शर्करा कटुका मुस्ता गजाह्वा व्याधिघातकः ।
किराततिक्तममृता दशमूली निदिग्धिका ॥
योगराजो निहन्त्येषः सन्निपातज्वरापहः ।
सन्निपातं समुत्थानं मृत्युमप्यागतं जयेत् ॥

सोंठ, धनिया, भरंगी, पद्माक, लाल चन्दन, पटोल, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, मुलैठी, खरैटी, खांड, कुटकी, नागरमोथा, गजपीपल, अमलतास, चिरायता, गिलोय, दशमूल, और इलायची । इनका क्वाथ भयङ्कर सन्निपात ज्वरको भी नष्ट कर देता है ।

(३३६८) **नागरादिक्काथः** (१४)

(वृ. नि. र.; वृं. मा.; यो. र.; च. द. । ज्वरा.; वं. से. । अति.; धन्व. । ज्वर; भा. प्र. । ख. २ ज्वरा.; यो. चिं. । क्वाथा.; वृ. यो. त. । त. ६५)

नागरातिविषामुस्ताभूनिम्बामृतवत्सकैः ।
सर्वज्वरहरः क्वाथः सर्वातीसारनाशनः ॥

सोंठ, अतीस, नागरमोथा, चिरायता, गिलोय और इन्द्रजौका क्वाथ सर्व प्रकारके ज्वर और अतिसारोंको नष्ट करता है ।

(३३६९) **नागरादिगण्डूषः**

(भा. प्र. खं. २ । दन्त.)

शीतादे हृतरक्ते तु तोये नागरसर्षपान् ।
निष्क्वाथ्य त्रिफलाञ्चापि कुर्याद्गण्डूषधारणम् ॥

शीताद नामक दन्त-रोगमें मसूढ़ोंसे रक्त निकलवानेके पश्चात् सोंठ और सरसोंके या त्रिफलाके क्वाथके गण्डूष धारण करने चाहियें ।

(३३७०) **नागरादिपाचनकषायः**

(वृ. नि. र.; वृं. मा. । ज्वर.)

नागरं देवकाष्ठञ्च धान्यकं बृहतीद्वयम् ।
दद्यात्पाचनकं पूर्वं ज्वरितानां ज्वरापहम् ॥

ज्वरके आरम्भमें सोंठ, देवदारु, धनिया कटेली और कटेला (बड़ी कटेली) का क्वाथ देनेसे दोषोंका पाचन होकर ज्वर उतर जाता है ।

(३३७१) **नागरादिपाचनक्वाथः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

नागरं भद्रमुस्ता वा गुडूच्यामलकाद्वयम् ।
पाठामृणालोदीच्याश्च क्वाथः पित्तज्वरे कफे ॥
पाचनो दीपनीयः स्याद्रक्तशोषनिवारणः ॥

सोंठ, नागरमोथा, गिलोय, आमला, पाठा, कमलनाल और सुगन्धबाला; इनका क्वाथ पित्त-कफज ज्वर, और रक्तशोषको नष्ट और अग्निको दीप्त करता तथा दोषोंको पचाता है ।

(३३७२) **नागराद्याश्च्योतनम्**

(वा. भ. । उ. स्था. अ. १६)

नागरत्रिफलानिम्बवासारोध्ररसं कफे ।
कोष्णमाश्च्योतनं मिश्रैर्भेषजैः सान्निपातिके ॥

कफज नेत्राभिष्यन्द रोगमें सोंठ, त्रिफला, नीमके पत्ते, बासा और लोधके मन्दोष्ण क्वाथसे और सन्निपातज अभिष्यन्दमें तीनों दोषोंको नष्ट करनेवाली ओषधियां मिलाकर उनके क्वाथसे आश्च्योतन करना चाहिये । (क्वाथकी बूंदें आंखोंमें टपकानी चाहियें ।)

(३३७३) **नारिकेलपुष्पादिक्वाथः**

(वै. म. र. । पट. १३)

तरुणैर्नारिकेलस्य पुष्पैरौदुम्बरैः फलैः ।
अब्दैश्च कल्पितः क्वाथो गर्भद्रावं निवर्त्तयेत् ॥

नारयलके नवीन पुष्प और गूलरके फल तथा नागरमोथेका क्वाथ पीनेसे गर्भस्राव रुक जाता है।

(३३७४) **निदिग्धिकादिकषायः**

(ग. नि. । ज्वर.)

निदिग्धकात्रायमाणागुडूचीसारिवाबला ।
मसूरविदलैर्युक्तो वातपित्तज्वरे हितः ॥

कटेली, त्रायमाणा, गिलोय, सारिवा, खरैटी और मसूरकी दालका क्वाथ वातपित्त-ज्वरको नष्ट करता है ।

(३३७५) **निदिग्धिकादिक्वाथः** (१)

(वृ. यो. त. । त ५९; भै. र.; वृं. मा.; धन्वं.; र. र.; ग. नि.; च. द. । ज्वरा.; शा. ध. । म. अ. २; हा. सं. । स्था. ३ अ. २; भा. प्र. । ख. २ ज्व.; वै. र. । ज्व.)

निदिग्धिकानागरकामृतानां
क्वाथं पिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम् ।
जीर्णज्वरारोचककासशूल-
श्वासाग्निमान्द्यार्दितपीनसेषु ॥

कटेली, सोंठ, और गिलोयके क्वाथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे जीर्णज्वर, अरुचि, खांसी, शूल, श्वास, अग्निमांद्य, अर्दित और पीनसका नाश होता है ।

(३३७६) **निदग्धिकादिक्वाथः** (२)

(ग. नि. । शूला.)

निदिग्धिकायुगलपुष्करमातुलुङ्ग-
बिल्वार्द्रमूलसहितोपलभेदयुक्तम् ।
क्वाथं च गोक्षुरयुतं सकलिङ्गमूलं
सेवेत्तथा यवजहिङ्गुमयं मपकम् ॥

छोटी कटेली, बड़ी कटेली, पोखरमूल, बिजौर की जड़, बेलकी जड़की ताजी छाल, पखानबेद (पाषाण भेद), गोखरु, और कुड़ेकी जड़की छाल; इनके क्वाथमें जवाखार और हींग मिलाकर पीनेसे शूल नष्ट होता है ।

(३३७७) **निदिग्धिकादिक्काथः** (३)

(ग. नि.; रा. मा. । ज्वरा.)

निदिग्धिकावारिदवदारु-
शृतं जलं हन्ति रुजो ज्वरोत्थाः ।
मृणालमुस्तासहितं कदाचि-
त्तदेव हन्ति कथितं ज्वरार्त्तिम् ॥

कटेली, नागरमोथा और देवदारुका काथ या कमलनाल और नागरमोथेका काथ ज्वरको नष्ट करता है ।

(३३७८) **निदिग्धिकादिक्काथः** (४)

(ग. नि. । ज्वरा.)

निदिग्धिकामृताशुण्ठीपुष्कराह्वैः कृतं पिबेत् ।
काथं कासारुचिश्वासकफवातज्वरापहम् ॥

कटेली, गिलोय, सोंठ और पोखरमूलका काथ खांसी, अरुचि, श्वास और कफवातज ज्वरको नष्ट करता है ।

(३३७९)**निदिग्धिकादिप्रयोगः**

(ग. नि. । स्वरभङ्ग.)

निदिग्धिकाव्यूषणवालबिल्व-
कल्कं च लिह्यान्मधुना समेतम् ।
फलत्रिकत्र्यूषणयावशूक-
चूर्णञ्च लिह्यात्स्वरभेदहन्तृ ॥

कटेली, सोंठ, मिर्च, पीपल और बेलगिरी को पानीके साथ पत्थर पर पीसकर शहदमें मिलाकर चाटनेसे या हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल और जवाखारका चूर्ण शहदके साथ चाटने से स्वरभङ्ग नष्ट होता है ।

(३३८०) **निदिग्धिकादिस्वरसः**

(वं. से. । मूत्रकृच्छ्र)

निदिग्धिकायाः स्वरसं कुडवं मधुसंयुतम् ।
मूत्रदोषहरं पीत्वा नरः सम्पद्यते सुखम् ॥

कटेलीके २० तोले स्वरसमें शहद मिलाकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा ४—५ तोले ।)

(३३८१) **निदिग्धिकास्वरसप्रयोगः**

(वं. से.; यो. र. । मूत्राघाता.)

निदिग्धिकायाः स्वरसं पिबेद्वा तक्रसंयुतम् ।
जले कुङ्कुमकल्कं वा सक्षौद्रमुषितं निशि ॥
शृतशीतपयोऽन्नाशी चन्दनं तण्डुलाम्बुना ।
पिबेत्सशर्करां श्रेष्ठामुष्णवाते सशोणिते ॥

कटेलीके स्वरसमें समान भाग तक्र मिलाकर पियें अथवा रातको केसर पानीके साथ पीसकर शहदमें मिलाकर रखदें और उसे प्रातः काल चाटें या सफेद चन्दन को तण्डुलोदक (चावलोंके धोवन) के साथ पियें अथवा त्रिफला और खांड समान भाग मिलाकर सेवन करें । यह सब प्रयोग रक्तयुक्त उष्णवात (सोज़ाक) को नष्ट करते हैं ।

(पथ्य—गरम करके ठण्डा किया हुवा दूध और भात)

(३३८२) **निम्बस्वरसपानम्**

(यो. चि. । मिश्र.)

रसोनिम्बस्य मञ्जर्याः पीतश्चैत्रे हितावहः ।
हन्ति रक्तविकारांश्च वातपित्तं कफं तथा ॥

चैतके महीनेमें नीमके फूलोंका स्वरस पीनेसे वातज, पित्तज और कफज रक्तविकार नष्ट होते हैं ।

(३३८३) **निम्बस्वरसप्रयोगः**

(वं. से. । कुष्ठ.)

निम्बस्य स्वरसं वापि सेव्यमानो यथाबलम् ।
जीर्णे घृतान्नं भुञ्जीत स्वल्पयूषोदकेन च ॥
अपि क्षीणशरीरोऽपि दिव्यरूपीभवेन्नरः ॥

बलोचित मात्रानुसार नीमका स्वरस पीकर उसके पचने पर थोड़ेसे यूषके साथ घृतमिश्रित भात खानेसे कुष्ठ नष्ट होकर क्षीण मनुष्यका शरीर भी दिव्यरूप-युक्त हो जाता है ।

(३३८४) **निम्बादिकल्कः**

(यो. र. । कुष्ठ.)

निम्बपत्रशतं पिष्ट्वा निम्बामलकमेव च ।
विडङ्गबाकुचीकल्कं पिबेदाकुष्ठनाशनम् ॥

नीमके १०० पत्तोंका कल्क प्रतिदिन सेवन करने या नीमके पत्ते और आमला अथवा बायविडंग और बाबचीका कल्क सेवन करनेसे कुष्ठ नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—आमला इत्यादि हरेक ६ माशे)

(३३८५) **निम्बादिक्काथः** (१)

(वं. से. । मसूरि.)

निम्बबर्बूरकाशोकं बिम्बीवेतसबल्कलम् ।
शृतशीतं प्रयोक्तव्यम् स्रावप्रक्षालने सदा ॥

यदि मसूरिका में पीप पड़कर बहने लगे तो उसे नीम, बबूल, अशोक, कन्दूरी और बेतकी छालके ठण्डे काथसे धोना चाहिये ।

(३३८६) **निम्बादिक्काथः** (२)

(वृ. नि. र.; वं. से. । ज्वर.)

निम्बामृताविश्वदारुकट्फलं कटुका वचा ।
कषायं पाययेदाशु वातश्लेष्मज्वरापहम् ॥
पर्वभेदशिरःशूलं कासारोचकपीडितम् ॥

नीम, गिलोय, सोंठ, देवदारु, कायफल, कुटकी और बचका काथ वातकफज्वर, पर्वभेद, शिरशूल, खांसी और अरुचिको नष्ट करता है ।

(३३८७) **निम्बादिक्काथः** × (३)

(वृ. यो. त. । त. १२६; च. द.; ग. नि.; वं. से.; भा. प्र.; यो. र.; वृं. मा.; र. र.; वृ. नि. र. । मसू.)

निम्बः पर्पटकः पाठा[१] पटोलं चन्दनद्वयम् ।
वासा दुरालभा धात्री सेव्यं[२] कटुकरोहिणी ॥
एतेषां कथितं शीतं सितया मधुरीकृतम् ।
मसूरिकां पित्तकृतां हन्ति रक्तोत्तरामपि ॥

नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, पाठा, पटोलपत्र, लालचन्दन, सफ़ेद चन्दन, बासा, धमासा, आमला, खस, और, कुटकी । इनके काथको ठण्डा करके मिश्रीसे मीठा करके पीनेसे पित्त तथा रक्त प्रधान मसूरिका नष्ट हो जाती है ।

(३३८८) **निम्बादिक्काथः** (४)

(ग. नि. । ज्वर.)

निम्बशुण्ठीकणामूलपथ्याः कटुकरोहिणी ।
व्याधिघातसमं क्काथः पीतः श्लेष्मज्वरविनाशनः ॥

नीमकी छाल, सोंठ, पीपलामूल, हर्र, कुटकी और अमलतासका काथ कफज ज्वरको नष्ट करता है ।

× ग. नि. में इसे 'निम्बद्वादशकं' नामसे लिखा है ।

१ द्राक्षेति पाठान्तरम् । २ उशीरमिति पाठान्तरम् ।

(३३८९) **निम्बादिक्काथः** (५)

(ग. नि. । ज्वर.)

निम्बनागरपिप्पल्यो देवदारु किरातकः ।
गुडूची पौष्करं मूलं हितः क्काथः कफज्वरे ॥

नीमकी छाल, सोंठ, पीपल, देवदारु, चिरायता, गिलोय और पोखरमूलका काथ कफजज्वरको नष्ट करता है ।

(३३९०) **निम्बादिक्काथः** (६)

(वं. से.; वृ. नि. र.; भै. र. । ज्वरा.)

निम्बविश्वामृताभीरु-
शठी[1] भूनिम्बपौष्करम् ।
पिप्पलीबृहतीचेति
काथो हन्ति कफज्वरम् ॥

नीमकी छाल, सोंठ, गिलोय, शतावर, कचूर, चिरायता, पोखरमूल, पीपल और कटेली; इनका काथ कफ ज्वरको नष्ट करता है ।

(३३९१) **निम्बादिक्काथः** (७)

(ग. नि. । विस्फो.)

निम्बामृताब्दकटुकावृषधन्वयास-
भूनिम्बपर्पटपटोलफलत्रयाणाम् ।
काथो नृणामिह भवेदगतेषु पाकं
विस्फोटकेष्वतिहितः कथितो भिषग्भिः ॥

नीमकी छाल, गिलोय, नागरमोथा, कुटकी, बासा, धमासा, चिरायता, पित्तपापड़ा, पटोल, हर्र, बहेड़ा और आमला । इनका काथ अपक विस्फोटकमें अत्यन्त हितकारी है ।

(३३९२) **निम्बादिक्काथः** (८)

(वृ. नि. र.; यो. र.; । विस्फो.)

निम्बत्वक्खादिरः सारो गुडूची शक्रजोऽथवा।
काथो माक्षिकसंयुक्तो विस्फोटादिज्वरापहः ॥

नीमकी छाल, खदिरसार, गिलोय और इन्द्रजौ के काथमें शहद मिलाकर पीनेसे विस्फोटकज्वर नष्ट होता है ।

(३३९३) **निम्बादिक्काथः** (९)

(यो. त. । त. २०; वृ. यो. त. । त. ५९; ग. नि. । ज्वर.)

निम्बाब्ददारुकटुकात्रिफलाहरिद्रा
क्षुद्रापटोलदलनिःक्कथितः कषायः ।
पेयस्त्रिदोषजनितज्वरनाशनाय
काथः समं मगधया दशमूलजो वा ॥

नीमकी छाल, नागरमोथा, देवदारु, कुटकी, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, कटेली और पटोलपत्र का काथ सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है ।

दशमूलके काथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे भी सन्निपात ज्वर नष्ट हो जाता है ।

(३३९४) **निम्बादिप्रयोगः** (१)

(यो. र. । प्रदर.)

मद्यैर्निम्बगुडूच्योश्च रोहितस्याथ वा रसम् ।
कफप्रदरनाशाय पिबेद्वा मलयूरसम् ॥

नीम और गिलोय का अथवा रोहितक (रुहेड़े) या कठूमरका रस मद्यके साथ पीने से कफज प्रदर नष्ट होता है ।

(मात्रा—रस २ से ४ तोले तक । मद्य समान भाग)

---

१ यासेति पाठभेदः

(३३९५) **निम्बादिप्रयोगः** (२)

(वं. से. । स्त्रीरोगा.)

निम्बवल्कलकल्कस्तु सर्पिषा काञ्जिकेन तु ।
पीतः प्रशान्तयेन्नूनमचिरात्सूतिकागदम् ॥

नीमकी छालको पानीके साथ पीसकर घीमें मिलाकर काञ्जीके साथ पीनेसे सूतिका रोग (प्रसूत) शीघ्र ही अवश्य शान्त हो जाता है ।

(मात्रा—छाल आधा तोला, घी २ तोले ।)

(३३९६) **निम्बादिप्रयोगः** (३)

(वं. से. । छर्दि.)

निम्बाम्रपल्लवगवेधुकधान्यमेव
ह्रीवेरवारि मधुना पिबतोऽल्पमल्पम् ।
छर्दिप्रयाति शमनं त्रिसुगन्धियुक्ता
लीढा निहन्ति मधुना सदुरालभा वा ॥

नीम और आमके पत्ते, नागबला (गंगेरन), धनिया और सुगन्ध बालाके क्वाथमें शहद डालकर थोड़ा थोड़ा पीनेसे या दालचीनी, इलायची, तेजपात और धमासेका चूर्ण शहदमें मिलाकर चाटने से छर्दि नष्ट होती है ।

(३३९७) **निम्बादिमहाकषायः**

(वं. से. । कुष्ठ.)

निम्बैरण्डदुरालभाऽभिकवचामूर्वाहरिद्राद्वयम् ।
त्रायन्तीत्रिफलापटोलदहनद्रेकामृताभार्ङ्गिभिः ॥
काकोदुम्बरिकाकरञ्जखदिरैःशाखोटसप्तच्छदैः ।
व्याघ्रीसिंहिशिरीषवेतसकणाभूनिम्बशक्राह्वयैः॥
प्रपुन्नाटकबाकुचीकुशजटामातङ्गकृष्णानलैः ।
पाठापर्पटकेन्द्रवारुणीवृषादन्तीत्रिवृच्चन्दनैः ॥
मञ्जिष्ठाऽऽमययासवासकटुकाराजद्रुमग्रन्थिकैः ।
तुल्यांशैः सुरभीजलेन पिबतां सिद्धं कषायं नृणाम् ॥
कण्डूदुम्बरपुण्डरीकालसकाः कुष्ठामयाः पापजाः।
नश्यन्ति द्रुतमेव दारुणतराः प्रोद्धूयमानाऽनलः।
ज्वालादग्धप्रतप्तकाञ्चनसमान्यङ्गानि राजन्ति च
क्वाथोऽयं मुनिभिर्दयालु निपुणैरुक्तो नृणां हेतवे॥

नीमकी छाल, अरण्डमूल, धमासा सुगन्धबाला, बच, मूर्वा, हल्दी, दारुहल्दी, त्रायमाणा, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोल, चीता, बकायनकी छाल, गिलोय, भरंगी, काकोदुम्बरिका (कठूमर) की छाल, करञ्ज बीज, खैरसार, शाखोटक (सिहोड़ा) की छाल, सतौना (सप्तच्छद) की छाल, कटेली, कटेला, सिरसकी छाल, बेत, पीपल, चिरायता, इन्द्रजौ, पवांड़के बीज, बावची, कुशकी जड़, गजपीपल, नल, पाठा, पित्तपापड़ा, इन्द्रायण, बासा, दन्ती, निसोत, लालचन्दन, मजीठ, कूठ, जवासा, तेजपात, कुटकी अमलतास, और पीपलामूल । सब चीजें समान भाग लेकर अधकुटा करके रक्खें ।

इनमें से नित्य प्रति २ तोले लेकर ३२ तोले गोमूत्र में पकावें और ८ तोले शेष रहने पर छान कर पियें ।

इसके सेवनसे खुजली, उदम्बर कुष्ठ, पुण्डरीक कुष्ठ, अलसक (खारवा) आदि समस्त कुष्ठ शीघ्र ही नष्ट होकर देह तप्त काञ्चनके समान शुद्ध हो जाती है ।

(३३९८) **निम्बुरसादिप्रयोगः**

(यो. र. । विशू.)

निम्बूरसश्चिञ्चिणिकासमेतो
विषूचिकाशोषहरः प्रदिष्ट ।
दुग्धेन पीतो यदि टङ्कणोऽसौ
प्रशामयेद्वै वमनं निरुन्ध्यात् ॥

नीबूके रसमें तिन्तड़ीक पीसकर पिलानेसे विषूचिका की तृषा शान्त होती है । तथा सुहागेकी खील दूधके साथ देनेसे पिपासा और वमन रुक जाती है ।

(३३९९) **निर्गुण्डीस्वरसप्रयोगः**

(वं. से. । स्नायु.)

गव्यं सर्पिस्त्र्यहं पीत्वा निर्गुण्डीस्वरसं त्र्यहम् ।
पिबेत्स्नायुकमत्युग्रं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥

प्रथम ३ दिन तक गायका घृत पीने के पश्चात् ३ दिन तक संभालुका रस पीनेसे कष्ट साध्य स्नायुक भी अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(३४००) **निर्गुण्ड्यादिकषायः**

(ग. नि. । कृमि.)

निर्गुण्डिशिग्रुयुतकट्फलजः कषायः ।
कृष्णाकृमिघ्नफलकल्कयुतः प्रपीतः ॥
कायात् कृमीनपहरेत् क्रिमिजांश्च रोगान् ।
क्वाथः क्रिमिघ्नसुरसार्जकजोऽथ पीतः ॥

संभालु, सहंजनेकी छाल, और कायफल के क्वाथमें पीपल, बायबिड़ंग तथा मैनफलका कल्क मिलाकर पीनेसे शरीरसे कृमि निकल कर कृमि-जन्य रोग नष्ट हो जाते हैं ।

बायबिड़ंग, बाबई (छोटी तुलसी), और तुलसी का क्वाथ भी कृमिजन्य रोगोंको नष्ट करता है ।

(३४०१) **निर्गुण्ड्यादिक्वाथः**

(यो. र. । सूतिका; वृ. यो. त. । त. १४२; यो. त. । त. ७५)

संयोजितो दलितया कणया कवोष्णो
निर्गुण्डिकाकृशुननागरजः कषायः ।
पीतो निहन्ति कफमारुतकोपजातं
सूत्यामयं सकलमेव सुदुस्तरञ्च ॥

संभालु, ल्हसन और सोंठ के मन्दोष्ण क्वाथ-में पीपलका चूर्ण मिलाकर पिलानेसे कफवातज कष्टसाध्य सूतिका रोग (प्रसूत) नष्ट होता है ।

(३४०२) **निशादि क्वाथः**

(वृ. नि. र. । मसूरिका.)

निशाद्वयोशीरशिरीषमुस्तैः
सलोध्रभद्रश्रियनागकेसरैः ।
पटोलमूलारुणतन्दुलीयकैः
पिबेद्धरिद्रामलकल्कसंयुतम् ॥
मसूरिविस्फोटविसर्पशान्तये
तथा सरोमान्त्यवमिज्वरापहः ॥

हल्दी, दारुहल्दी, खस, सिरसकी छाल, नागरमोथा, लोध, सफेदचन्दन, नागकेसर, पटोल-की जड़, अतीस और चौलाई के क्वाथमें हल्दी तथा आमलेका कल्क मिलाकर पिलानेसे मसूरिका, विस्फोटक, विसर्प और वमन तथा ज्वर युक्त रोमान्तिका नष्ट होती है ।

(३४०३) **नीरदादिक्वाथः**

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

नीरदविश्वदुरालभावासा
साधितमम्बु हि पाचनमेव ।
पेयमिदं ज्वर एव कफाख्ये
श्वासकासघनशूलहरञ्च ॥

नागरमोथा, सोंठ, धमासा और बासा। इनका क्वाथ पाचन तथा कफज्वर, श्वास, खांसी और शूल नाशक है ।

(३४०४) **नीलिनीमूलकल्कः**

(ग. नि; रा. मा. । सर्पविष.)

तन्दुलजलेन पिष्टं नीलिन्या मूलमाशु नाशयति।
पानेन मण्डलिविषं यदि वा लज्जावतीमूलम् ॥

नीलिनी (नीलवृक्ष) या लज्जालुकी जड़को तण्डुलोदक (चावलोंके धोवन) के साथ पीसकर पीनेसे मण्डली सर्पका विष तुरन्त नष्ट हो जाता है।

(३४०५) **नीलोत्पलादिकषायः**

(वृ. नि. र.; वं. से.; ग. नि. । ज्वर.)

नीलोत्पलमुशीराणि पद्मकामलकानि च ।
काश्मीरमधुकद्राक्षामधूकानि परूषकान् ॥
पिबेच्छीतं कषायं च वातपित्तज्वरापहम् ।
सम्प्रलापं च सम्मोहं शमयेत्पैत्तिकं ज्वरम् ॥

नीलकमल, खस, पद्माक, आमला, खम्भारीके फ़ल, मुलैठी, द्राक्षा (मुनक्का), महुवा और फालसे के फल समान भाग मिश्रित २ तोले लेकर रातको १२ तोले पानी में मिट्टी के बरतनमें भिगोकर रख दें और प्रातःकाल मल छानकर रोगीको पिलावें।

यह कषाय वातपित्तज तथा पित्तज ज्वर, प्रलाप और मोहको नष्ट करता है।

(३४०६) **नीलोत्पलादिक्काथः** (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३१)

नीलोत्पलार्जुनकलिङ्गधवाम्लिकानाम् ।
धात्रीफलानि पिचुमन्ददलानि तोये ॥
निःकाथ्य शर्करयुतोमनुजस्य पानात् ।
पित्तप्रमेहशमनाय वदन्ति धीराः ॥

नीलकमल, अर्जुनकी छाल, इन्द्रजौ, धव, इमलीकी छाल, आमला, और नीमके पत्तों के काथमें खांड मिलाकर पीनेसे पित्तप्रमेह नष्ट होता है।

(३४०७) **नीलोत्पलादिक्काथः** (२)

(हा. सं. । स्था ३ अ. ३१)

नीलोत्पलमुशीरं च पथ्यामलकमुस्तकम् ।
पिबेत्पित्तप्रमेहार्तः काथं मधुविमिश्रितम् ॥

नीलकमल, खस, हर्र, आमला और नागरमोथेके काथमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्तप्रमेह नष्ट होता है।

(३४०८) **नीलोत्पलादिहिमः**

(वृ. नि. र. । ज्वर; शा. सं. । म. ख. अ. ४)

नीलोत्पलं बला द्राक्षा मधुकं मधूकं तथा ।
उशीरं पद्मकं चैव काश्मरी च परूषकम् ॥
एतच्छीतकषायश्च वातपित्तज्वरं हरेत् ।
विप्रलापभ्रमच्छर्दीमोहतृष्णानिवारकः ॥

नीलकमल, खरैटी, मुनक्का (दाख), मुलैठी, महुवा, खस, पद्माक, खम्भारी और फालसे के फल समान भाग मिश्रित २ तोले लेकर रातको १२ तोले पानीमें भिगो दें और प्रातःकाल मल छानकर रोगीको पिलावें।

यह कषाय वातपित्तज्वर, प्रलाप, भ्रम, छर्दि, मूर्च्छा और तृष्णाको नष्ट करता है।

(३४०९) **न्यग्रोधादिगणः**

(वा. भ. । सू. अ. ३५; सु. सं. । सूत्र. अ. ३८)

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षमधूककपीतनककुभाम्र-
कोशाम्रचोरकपत्रजम्बूद्वयपियालमधुकरोहिणी-

वञ्जुलकदम्बवदरीतिन्दुकीसल्लकीरोध्रसावररो-
ध्रमल्लातकपलाशानन्दीवृक्षश्चेति ।
न्यग्रोधादिर्गणो व्रण्यः संग्राही भग्नसाधकः ।
रक्तपित्तहरो दाहमेदोघ्नो योनिदोषहृत् ॥

बड़, गूलर, पीपल वृक्ष, पिलखन, महुवा, अम्बाड़ा, अर्जुन, आम, बनआम, चोरकपत्र, दो प्रकारके जामनवृक्ष, प्रियाल (चिरौंजीका वृक्ष), मुलैठी, कायफल, जलवेत, कदम, बेरी, तिन्दुक (तेंदु), सल्लकी, लोध, सावरलोध, भिलावा, ढाक, और तुन वृक्ष । इनके समूहको न्यग्रोधादि गण कहते हैं ।

न्यग्रोधादि गण व्रणनाशक, संग्राही, भग्न सन्धानक, रक्तपित्त नाशक, दाह और मेदको नष्ट करने वाला तथा योनिशोधक है ।

इति नकारादिकषायप्रकरणम् ।

अथ नकारादिचूर्णप्रकरणम्

(३४१०) नवक्षारकं चूर्णम्

(ग. नि. । परिशि. चूर्णा.)

तुवरीटङ्कणव्योषसामुद्रं सैन्धवं विडम् ।
काचं सौवर्चलं चव्यं क्षारश्चेक्षुरकोद्भवः ॥
एतानि समभागानि चूर्णीकृत्य प्रयोजयेत् ।
रक्तवातारुचिप्लीहोदररोगापनुत्तये ॥

फटकी की खील, सुहागेकी खील, त्रिकुटा, समुद्र लवण, सेंधा नमक, विड नमक, कचलौना (काचलवण), सञ्चल (काला नमक), चव्य और ताल मखाने के पौदेका क्षार समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण वातरक्त, अरुचि और प्लीहा (तिल्ली) को नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ माशा । अनुपान उष्णजल)

नोट—इस प्रयोगमें त्रिकुटा और चीते का भी क्षार ही डालना चाहिये, तभी ९ क्षार हो सकते हैं ।

(३४११) नवसादरप्रयोगः

(र. का. धे. । अ. २२)

चूर्णस्य पञ्च भागास्तु हण्डिकायां विनिक्षिपेत् ।
तन्मध्ये नवसारस्य भागैकं दापयेत्ततः ॥
चूर्णस्य पञ्च भागांश्चोपरि तस्य पुनः क्षिपेत् ।
विमुद्याधः कृते छिद्रे तदधस्थितभाजने ॥
मृत्तिका वस्त्रलिप्तेऽस्मिन्कुम्भे गर्ते निधापयेत् ।
वह्निं दद्यात्तदुपरि यामषोडशमानतः ॥
शीतं तद्भस्म गृह्णीयादधः पात्रे द्रुतं द्रवम् ।
भृष्टहिङ्गुत्र्यूषणयुतं माषयुग्मप्रमाणतः ॥
सर्वगुल्मोदरध्वंसि वह्निमान्द्यविनाशनम् ॥

एक हाण्डी की तली में एक छोटासा छिद्र करें और फिर उस पर ३—४ कपडौटी (कपड़-मिट्टी) करके उसमें ५ भाग चूना बिछाकर उसके ऊपर १ भाग नौसादर रक्खें और फिर उसके ऊपर ५ भाग चूना और बिछा दें और हण्डीका

मुख बन्द करके उसपर भी ३—४ कपड़ मिट्टी कर दें । तदनन्तर एक ऐसा गढ़ा खुदवावें कि जो नीचे से तंग और ऊपरसे चौड़ा हो; इस गढ़े में नीचे एक पात्र रखकर उसके ऊपर हाण्डी रख दें। हण्डीका गला गढ़ेके किनारे के लगभग बराबर आ जाना चाहिये । अब इस हाण्डीके ऊपर १६ पहर तक अग्नि जलावें तत्पश्चात् हाण्डी के स्वांग शीतल होने पर उसके भीतरसे नवसादरकी भस्म तथा गढ़े वाले पात्रसे द्रव को निकालकर सुरक्षित रक्खें ।

इस भस्ममें भुना हुवा हींग और सोंठ, मिर्च तथा पीपल का समान भाग मिश्रित चूर्ण इसके बराबर मिलाकर २ माशे की मात्रानुसार सेवन करनेसे गुल्म और अग्निमांद्य का नाश होता है। (नोट—तैल भी ५ से १० बूंद तक पानी में डालकर पीने से यही लाभ पहुचायेगा)

(३४१२) नवसारभस्म

(र. का. धे. । अ. २२)

कन्यारसाञ्जननिशाकम्पिल्लानि च खर्परी ।
क्षारत्रयं सोरकञ्च स्फटिका पटुपञ्चकम् ॥
एतेभ्यः षट्गुणं मूत्रमेतेषां च ततः क्षिपेत् ।
नृगजाश्वखरोष्ट्राणां शूकरस्य पुनस्तथा ॥
गुडस्य काञ्जिकं तत्तु क्षिप्त्वा मुद्रितभाजने ।
वर्षं च स्थापयेद् गर्त्ते तेन सम्मर्दयेद्दृढम् ॥
नवसारं दिवा रात्रौ दाहयेत्क्रौञ्चमुद्रिकम् ।
एवं संमर्दनं दाह ऊनपञ्चाशदेव तु ॥
तद्भस्म नवसारस्य रक्तिकाद्वितयं मतम् ।
सर्वगुल्मोदरध्वंसी सर्वरोगान्विनाशयेत् ॥
तद्भस्मलेपिताः सर्वे धातवस्तु सटङ्कणाः ।
वह्नितापाद् द्रुताः स्युश्च तेऽपि गुल्मादिनाशनाः

घृतकुमारी, रसौत, हल्दी, कबीला, खपरिया, यवक्षार, सज्जीखार, सुहागा, सोरा, फटकी, और पांचों नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसमें उससे छ गुना मनुष्य, हाथी, घोड़ा, गधा, ऊंट और सुवरका मूत्र (हरेकका चूर्णके बराबर अर्थात् सबका मिलाकर चूर्णसे छः गुना) तथा चूर्ण के बराबर गुड़ और काञ्जी मिलाकर मिट्टी के दृढ़ पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके भूमिमें दबा दें और एक वर्ष पश्चात् निकालें । इतने समय में उपरोक्त समस्त चीज़ें द्रव हो कर एकरस हो जायंगी ।

इस रसमें दिन भर नवसादर को घोटें और फिर उसे सम्पुट में बन्द करके रात्रिको गजपुट में फूंक दें । इसी प्रकार ४९ पुट दें और फिर उस नवसादर भस्मको पीसकर सुरक्षित रक्खें ।

यह भस्म हर प्रकारके गुल्म और अन्य समस्त उदर रोगोंको नष्ट करती है । मात्रा २ रत्ती ।

इस भस्म में समान भाग सुहागा मिलाकर पानीके साथ पीसकर उसका लेप करके अग्नि में तपाने से समस्त धातुवें द्रुत (पतली) हो जाती हैं और वह भी गुल्मादिको नष्ट करती हैं ।

नवायसचूर्णम्

रसप्रकरणमें देखिये ।

(३४१३) **नागकेशरयोगः** (१)

(यो. त. । त. ७५; ग. नि. । वन्ध्या; रा. मा. । स्त्रीरा.)

गोघृतेन सह नागकेसरं
श्लक्ष्णचूर्णितमृतौ नितम्बिनी।
गव्यदुग्धनिरता पिबेद्यदा
सा तदा नियतमेव वीरसूः ॥

यदि स्त्री ऋतुकाल में केवल गायके दूध पर ही रहे और गायके घीके साथ नागकेसरके महीन चूर्णको सेवन करे तो वह अवश्य वीर पुत्रको जन्म देती है।

(३४१४) **नागकेशरयोगः** (२)

(वृ. नि. र.; वं. से. । स्त्री; यो. र.; भा. प्र. । सोमरोग)

तक्रौदनाहाररता सम्पिबेन्नागकेशरम्।
त्र्यहन्तक्रेण सम्पिष्टं श्वेतप्रदरनाशनम् ॥

यदि तीन दिन तक नित्य प्रति नागकेशर को तक्रमें पीसकर पिया जाय और तक्र तथा भात खाया जाय तो श्वेत प्रदर नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—३ माशे।)

(३४१५) **नागकेशरादियोगः**

(वं. से. । स्त्रीरो.)

नागकेशरपूगास्थिचूर्णं वा गर्भदं परम् ॥

नागकेशर और सुपारीका समान भाग मिश्रित चूर्ण सेवन करने से गर्भ प्राप्ति होती है।

(मात्रा—२-३ माशे। अनुपान गोघृत। ऋतुकालसे आरम्भ करके २ सप्ताह सेवन करना चाहिये।)

(३४१६) **नागबलाचूर्णम्**

(वृं. मा.; च. द. । हृद्रो.)

मूलं नागबलायास्तु चूर्णं दुग्धेन पाययेत्।
हृद्रोगकासश्वासघ्नं ककुभस्य च वल्कलम् ॥
रसायनं परं वल्यं वातजिन्मासयोजितम्।
संवत्सरप्रयोगेण जीवेद्वर्षशतं ध्रुवम् ॥

नागबला (गंगेरन) की जड़ अथवा अर्जुन की छालका चूर्ण दूधके साथ सेवन करनेसे हृद्रोग खांसी और श्वास नष्ट होता है।

यह योग रसायन और अत्यन्त बल वर्द्धक है; यदि एक मास तक सेवन किया जाय तो समस्त वातज रोग नष्ट हो जाते हैं और एक वर्ष पर्यन्त सेवन किया जाय तो अवश्य ही १०० वर्षकी आयु प्राप्त होती है।

(३४१७) **नागबलायोगः**

(ग. नि.; रा. मा. । राजय.)

चूर्णं नागबलायास्तु घृतमाक्षिकमिश्रितम्।
प्रलिह्यात्प्रातरुत्थाय क्षयव्याधिनिवारणम् ॥
घृतमाक्षिकसंमिश्रो वाट्यालकरसस्तथा ॥

नागबला (गंगेरन) का चूर्ण या बला (खरैटी) का स्वरस घी और शहदमें मिलाकर प्रातःकाल सेवन करनेसे क्षय रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—चूर्ण १॥ से ३ माशे तक। स्वरस १ से ३ तोले तक।)

(३४१८) **नागवल्ल्याद्यं चूर्णम्**

(भै. र. । वीर्यस्त.)

नागवल्ली बला मूर्वा जातीकोषफले मुरा।
अपामार्गस्य बीजञ्च काकोलीयुगलं तथा ॥

कङ्कोलोशीरयष्ट्याह्ववचाभ्येतानि मर्दयेत् ।
वीर्यस्तम्भकरं वृष्यं चूर्णमेतद्रसायनम् ॥

पान, बला (खरैटी) की जड़, मूर्वा, जायफल, जावित्री, मुरामांसी, अपामार्ग (चिरचिटे) के बीज, काकोली, क्षीर काकोली, कङ्कोल, खस, मुलैठी, और बचका चूर्ण समान भाग लेकर एकत्र मिलावें ।

यह चूर्ण वीर्य स्तम्भक, वीर्य वर्द्धक और रसायन है । (मात्रा--१॥ से ३ माशे तक। दूधके साथ खा कर ऊपर से पान खाएं ।)

नोट--अपामार्ग के बीज साफ़ (तुषरहित) करके डालने चाहियें ।

(३४१९) **नागरङ्गफलादिचूर्णम्**

(वं. से. । जलदोषा.)

नागरङ्गफलचोचमातपे शोषितं
तदनु चूर्णितमेकम् ।
कर्षमात्रमुपयुज्य गुडेन वारिकर्म
कुरुते न कदापि ॥

नारंगीका फल और चोचको धूपमें सुखाकर समान भाग लेकर चूर्ण करें ।

इसमें से नित्य प्रति १। तोला चूर्ण गुड़में मिलाकर सेवन करनेसे परदेशका पानी बिकार नही करता ।

(३४२०) **नागरचूर्णम्**

(वं. से.; यो. र. । आमवा.; भा. प्र. । म. ख. आमवाता.)

कर्षं नागरचूर्णस्य काञ्जिकेन पिबेत्सदा ।
आमवातप्रशमनं कफवातहरं परम् ॥

सोंठका १ कर्ष (१। तोला) चूर्ण नित्य प्रति काञ्जीके साथ सेवन करने से आमवात (गठिया) और कफवातज रोग नष्ट होते है ।

(व्यवहारिक मात्रा--३ माशे ।)

(३४२१) **नागरादिचूर्णम्** (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २३)

नागरं च हरिद्रा च कणाजाज्यजमोदिका ।
वचा सैन्धवं रास्ना च मधुकं समभागिकम् ॥
श्लक्ष्णचूर्णं पिबेच्चैव सर्पिषा प्रत्यहं नरः ।
एकविंशदिनैर्वातरोगान् हन्ति न संशयः ॥
भवेच्छ्रुतिधरश्रीमान् मेघदुन्दुभिनिस्वनः ।
हन्ति वातामयान् सर्वान् लेहो यश्च सुखावहः॥

सोंठ, हल्दी, पीपल, जीरा, अजमोद, बच, सेंधा, रास्ना, और मुलैठी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घीके साथ २१ दिन तक सेवन करनेसे समस्त वातज रोग नष्ट हो जाते हैं ।

इसके अभ्याससे मनुष्य श्रुतिधर, सुन्दर और मेघ सदृश गम्भीर स्वर वाला हो जाता है ।

(३४२२) **नागरादिचूर्णम्** (२)

(वृ. मा. । हिक्का.)

सनागराभया तुल्या कासश्वासौ व्यपोहति ॥

सोंठ और हर्रका समान भाग मिश्रित चूर्ण सेवन करनेसे खांसी और श्वास नष्ट होते हैं ।

(मात्रा--३ माशे; अनुपान--शहद)

(३४२३) **नागरादिचूर्णम्** (३)

(रसें. सा. सं. । ज्वराति.)

नागरातिविषा मुस्तं देवदारु कणा वचा ।
यमानी बालकं धान्यं कुटजत्वक् हरीतकी ॥

धातकीन्द्रयवौ बिल्वं पाठा मोचरसं समम् ।
चूर्णितं मधुना लेह्यमनुपानं सुखावहम् ॥

सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पीपल, बच, अजवायन, सुगन्धबाला, धनिया, कुड़ेकी छाल, हर्र, धायकेफूल, इन्द्र जौ, बेलगिरी, पाठा और मोचरस। सबका समान भाग चूर्ण लेकर एकत्र मिलावें।

इसे शहदके साथ चाटनेसे ज्वरातिसार नष्ट होता है।

(मात्रा—२—३ माशे। दिनमें २—३ बार)

(३४२४) **नागरादिचूर्णम्** (४)

(वृ. नि. र.। बाल.)

नागरं मुस्तकं बिल्वं चित्रकं ग्रन्थिकं शिवाम् ।
चूर्णमेतन्मधुयुतं कफजां ग्रहणीं जयेत् ॥

सोंठ, नागरमोथा, बेलगिरी, चीता, पीपला मूल और हर्रके समान भाग मिश्रित चूर्णको शहदके साथ चटानेसे बच्चोंकी कफज ग्रहणी नष्ट होती है।

(मात्रा—आधेसे १ माशे तक।)

(३४२५) **नागरादिचूर्णम्** (५)

(वं. से.। ग्र. अ.)

नागरं कौटजं बीजं पिप्पली बृहतीद्वयम् ।
चित्रकं शारिवा पाठा क्षारं लवणपञ्चकम् ॥
चूर्णयित्वा सुरामण्डं दधिकोष्णाम्बुकाञ्जिकैः ।
पिबेदग्निविवृद्ध्यर्थं कोष्ठवातहरं परम् ॥

सोंठ, इन्द्रजौ, पीपल, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, चीता, सारिवा, पाठा, यवक्षार, सेंधानमक, सञ्चल (काला नमक), काचलवण (कचलौना), समुद्रलवण, और विड़लवण। सबके समान भाग मिश्रित चूर्णको सुरा, मण्ड, दही, मन्दोष्णजल अथवा काञ्जीके साथ पीनेसे अग्नि दीप्त और कोष्टकी वायु नष्ट होती है।

(मात्रा—२ से ३ माशेतक)

(३४२६) **नागरादिचूर्णम्** (६)

(यो. र। पाण्डु.)

नागरं लोहचूर्णं वा कृष्णां पथ्यामथाश्मजम् ।
गुग्गुलं वाऽथ मूत्रेण कफपाण्ड्वामयी पिबेत् ॥

सोंठ, पीपल, हर्र, शिलाजीत, गूगल और लोहभस्म। इनमेंसे किसी एकके चूर्णको गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे कफज पाण्डु नष्ट होता है।

(मात्रा—गूगल—१ माशा। लोह १ से २ रत्ती तक। अन्य औषधोंका चूर्ण १ से ३ माशेतक)

(३४२७) **नागरादिप्रयोगः** (१)

(वं. से.। गुल्मरोगा.; च. सं.। चि. अ. ५)

नागरार्द्धपलं पिष्टं द्वे पले चित्रकस्य च ।
तिलस्यैकं गुडपलं क्षीरेणोष्णेन पाययेत् ॥
वातगुल्ममुदावर्त्तं योनिशूलञ्च नाशयेत् ॥

सोंठका चूर्ण आधापल, चीतेका चूर्ण २ पल, पिसे हुवे तिल १ पल (५ तोले) और गुड़ १ पल लेकर सबको एकत्र मिलाकर कूटें।

इसे उष्ण दूधके साथ सेवन करनेसे वातज गुल्म, उदावर्त, और योनि शूल नष्ट होता है।

(मात्रा—२ से ४ माशेतक।)

(३४२८) **नागरादिप्रयोगः** (२)

(वं. से.। अति.)

एरण्डरससम्पिष्टं पक्वमामञ्च नागरम् ।
आमातिसारशूलघ्नं दीपनं पाचनं तथा ॥

सोंठको तवे पर भून कर पीसलें, फिर उसमें उसके बराबर कच्ची (बिन भुनी) सोंठका चूर्ण मिलाकर अरण्डके रसके साथ पीसकर सेवन करें।

इससे आमातिसार और शूल नष्ट होता है। यह दीपन और पाचन भी है।

(मात्रा—१ से ३ माशेतक।)

(३४२९) नागराद्यं चूर्णम्

(च. सं. । चि. अ. १९; वं. से.; यो. र.; वृ. नि. र.; भै. र.; वृ. मा.; च. द.; धन्व.। ग्रहणी; वृ. यो. त.। त. ६७)

नागरातिविषे मुस्तं धातकीं सरसाञ्जनम्।
वत्सकत्वक्फलं बिल्वं पाठां कटुकरोहिणीम्॥
पिबेत्समांशं तच्चूर्णं सक्षौद्रं तण्डुलाम्बुना।
पैत्तिके ग्रहणीदोषे रक्तं यच्चोपवेश्यते॥
अर्शांसि च गुदे शूलं जयेच्चैव प्रवाहिकाम्।
नागराद्यमिदं चूर्णं कृष्णात्रेयेन पूजितम्॥

सोंठ, अतीस, नागरमोथा धायकेफूल, रसौत, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, बेलगिरी, पाठा, और कुटकी के समान भाग मिश्रित चूर्णको शहदके साथ मिलाकर तण्डुलोदक (चावलोंके धोवन) के साथ सेवन करनेसे पित्तज ग्रहणी, रक्तस्राव, अर्श, गुदशूल और प्रवाहिका का नाश होता है।

(मात्रा—१॥ से ३ माशेतक।)

नागार्जुनचूर्णम्

रसप्रकरणमें देखिये।

(३४३०) नादेयीक्षारः

(यो. त.। त. ४६; ग. नि.; वृं. मा.। गुल्मा.; वृ. यो. त.। त. ९८)

नादेयीकुटजाऽर्कशिग्रुबृहतीस्नुग्बिल्वभल्लातक-
व्याघ्रीकिंशुकपारिभद्रकजटाऽपामार्गनीपाग्निकान्।
वासामुष्ककपाटलान्सलवणान्दग्ध्वा जले पाचिताम्।
हिंग्वादिप्रतिवापमेतदुदितं गुल्मोदराष्ठीलिषु॥

अरण्ड, कुड़ेकी छाल, अर्क, सहंजनेकी छाल, बड़ी कटेली, थोहर (सेंड-सेंहुड), बेलछाल, भिलावा, छोटी कटेली, पलाशकी छाल, पारिभद्र (फरहद) की जड़की छाल, अपामार्ग, कदम, चीता, बासा, मुष्कक, पाटला और पांचों लवण (सेंधा, समुद्र नमक, बिड़नमक, सञ्चल नमक, और काचलवण) समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर जलावें, तत्पश्चात् इनकी राख (भस्म) को ६ गुने पानीमें मिलाकर २१ बार टपकावें और उस नितरे हुवे स्वच्छ पानीको पुनः पकावें, जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें उसका चौथा भाग हिंग्वादि चूर्ण[१] मिलावें। जब जलांश बिल्कुल शुष्क हो जाय तो क्षारको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

यह क्षार गुल्म और अष्ठीला को नष्ट करता है।

(मात्रा—१ माशा)

१—हिंग्वादि चूर्ण-हींग, पोखरमूल, तुम्बरु, हर्र, निसोत, बिडलवण, सेंधा, जवाखार और सोंठ।

नायिकाचूर्णम्

रसप्रकरण में देखिये ।

(३४३१) नारसिंहचूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा., भै. र.; र. र.; च. द. । वाजीकरण.; नपुं. अ. । त. ३)

प्रस्थं शतावरीचूर्णं प्रस्थं गोक्षुरकस्य च ।
वाराह्या विंशतिपलं गडूच्याः पञ्चविंशतिः ॥
भल्लातकानां द्वात्रिंशच्चित्रकस्य दशैव तु ।
तिलानां लुञ्चितानां च प्रस्थं दद्यात्सुचूर्णितम् ॥
त्र्यूषणस्य पलान्यष्टौ शर्करायाश्च सप्ततिः ।
माक्षिकं शर्करार्धेन तदर्धेन च वै घृतम् ॥
शतावरीसमं देयं विदारीकन्दचूर्णकम् ।
एतानि सूक्ष्मचूर्णानि स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥
पलार्धमुपयुञ्जीत यथेष्टं चात्र भोजनम् ।
एष मासोपयोगेन जरां हन्ति रुजामपि ॥
वलीपलितखालित्यप्लीहव्याधींश्च पीनसान् ।
भगन्दरं मूत्रकृच्छ्रमश्मरींश्च भिनत्त्यपि ॥
अष्टादशैव कुष्ठानि तथाष्टावुदराणि च ।
प्रमेहं च महाव्याधिं पञ्चकासान् सुदुस्तरान् ॥
अशीतिर्वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव संसृष्टान् सान्निपातिकान् ।
सर्वानर्शोगदान् हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा
सकाञ्चनाभो मृगराजविक्रम-
स्तुरङ्गवेगो जलदौघनिःस्वनः ।
स्त्रीणां शतं गच्छति सोऽतिरम्यः
सुरूपवान् सत्ववतां वरिष्ठः ॥
पुत्रान् संजनयेद्धीमान् नरसिंहनिभांस्तथा ।
नारसिंहेति विख्यातश्चूर्णो रोगगणापहः ॥

शतावरका चूर्ण १ प्रस्थ (१ सेर–८० तोले), गोखरु का चूर्ण १ प्रस्थ, बाराहीकन्द (अभावमें चर्मकारालु) का चूर्ण २० पल (१०० तोले), गिलोयका चूर्ण २५ पल, शुद्ध भिलावे का चूर्ण ३२ पल (२ सेर), चीतेका चूर्ण १० पल, छिलके रहित (धुले हुवे) तिलोंका चूर्ण १ प्रस्थ, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण ८–८ पल, खांड ७० पल, शहद ३५ पल, घी १७॥ पल, और विदारीकन्दका चूर्ण १ प्रस्थ । इन सबको एकत्र मिलाकर चिकने पात्रमें सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा २॥ तोले (व्यवहारिक मात्रा ३ से ६ माशे तक) । आहारादि इच्छानुसार करना चाहिये ।

इसे १ मास तक सेवन करनेसे जरा, व्याधि, बली, पलित, खालित्य (गञ्ज), प्लीह (तिल्ली) पीनस, भगन्दर मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, १८ प्रकारके कुष्ठ, आठ प्रकारके उदररोग, प्रमेह, कष्टसाध्य पांच प्रकारकी खांसी, ८० प्रकार के वातज रोग, ४० प्रकार के पित्तज रोग, २० प्रकारके कफज रोग, द्वन्द्वज रोग, समस्त सन्निपातज रोग और अर्श इत्यादि समस्त व्याधियां नष्ट हो जाती हैं ।

इसे सेवन करने वाला मनुष्य काञ्चन के समान दीप्तिमान्, सिंहसदृश पराक्रमी, घोड़ेके समान वेगगामी और गम्भीर स्वरवाला हो जाता है । वह अनेकों स्त्रियों से रमण कर सकता है तथा नरसिंह सदृश वीर और बुद्धिमान् पुत्र उत्पन्न करता है ।

(३४३२) **नाराचकं चूर्णम् (१)**

(ग. नि. । चूर्णा.)

हिङ्गु कुष्ठं वचा चैव स्वर्जिका विडमेव च।
एको द्वावथ चत्वारस्तथाष्टौ षोडशैव च॥
यथाक्रमकृतान् भागांश्चूर्णमानाहभेदनम्।
एष नाराचविख्यातो योगो नाराचको मतः॥
उदावर्त्तेषु शूलेषु गुल्मेष्वथ भगन्दरे।
हृद्रोगे च प्रमेहे च योगोऽयं शमनः परः॥

हींग (भुना हुवा) १ भाग, कूठ २ भाग, बच ४ भाग, सज्जीखार ८ भाग और विडलवण १६ भाग लेकर सबका चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण आनाह, उदावर्त, शूल, गुल्म, भगन्दर, हृद्रोग और प्रमेहको नष्ट करता है।

(मात्रा १ से २ माशे तक । अनुपान उष्ण जल)

(३४३३) **नाराचकं चूर्णम् (२)**

(ग. नि. । चूर्णा.)

सिन्धूत्थपथ्याकणादीप्यकानां
चूर्णानितोयैः पिबतां कवोष्णैः।
प्रयाति नाशं कफवातजन्मा
नाराचनिर्भिन्न इवामयौघः॥

सेन्धा नमक, हर्र, पीपल और अजवायन के समान भाग मिश्रित चूर्णको मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करने से कफ वातज समस्त रोग (उदररोग) नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१ से ३ माशे तक।)

(३४३४) **नाराचचूर्णम्**

(वृ. यो. त. । त. ९६; भै. र.; च. द.; वं. से.; यो. र.; ग. नि.; वृं. मा.; धन्व.; र. र. । उदावर्त्त.; यो. त. । त. ४५; भा. प्र. ख. २ । उदा.)

खण्डपलं त्रिवृता समभुपकुल्या कर्षसम्मितं श्लक्ष्णम्।
प्राग्भोजनस्य समधु विडालपदकं लिहेत्प्राज्ञः॥
एतद्गाढपुरीषे पित्ते कफे च विनियोज्यम्।
स्वादुर्नृपयोग्योऽयं चूर्णो नाराचको नाम्ना॥

खांड १ पल (५ तोले), निसोत १ पल और पीपल १। तोला लेकर चूर्ण बनावें।

इसमें से १। तोला चूर्ण शहदमें मिलाकर भोजन के पहिले चाटना चाहिये। इसके सेवन से मलकी कठिनता, पित्तकफज रोग और उदावर्त नष्ट होता है। यह चूर्ण स्वादु और नृपतियोंको सेवन कराने योग्य है।

(३४३५) **नारायणं चूर्णम् (१)**

(वृ. यो. त. । त. १०५; वं. से.; यो. र.; र. र.; वृं. मा; च. द. । उदरा.; आयुर्वे. वि. । अ. १०; भा. प्र. । ख. २ उदरा.; ग. नि. । चूर्णा.; यो. त. । त. ५३; वा. भ. । चि. अ. १५; शा. ध. । म. अ. २)

यवानी हपुषा धान्यं त्रिफला सोपकुश्चिका।
कारवी पिप्पलीमूलमजगन्धा सठी वचा॥
शताह्वा जीरकं व्योषं स्वर्णक्षीरी सचित्रकम्।
द्वौ क्षारौ पौष्करं मूलं कुष्ठं लवणपञ्चकम्॥

विडङ्गश्च समांशानि दन्तीभागत्रयं तथा ।
त्रिवृद्विशाले द्विगुणे सातला स्याच्चतुर्गुणा ॥
एतन्नारायणं नाम चूर्णं रोगगणापहम् ।
एनत्प्राप्य निवर्त्तन्ते रोगा विष्णुमिवासुराः ॥
तक्रेणोदरिभिः पेयो गुल्मिभिर्बदराम्बुना ।
आनद्धवाते सुरया वातरोगे प्रसन्नया ॥
दधिमण्डेन विटसङ्गे दाडिमाम्बुभिरर्शसि ।
परिकर्त्तेषु वृक्षाम्लैरुष्णाम्बुभिरजीर्णके ॥
भगन्दरे पाण्डुरोगे कासे श्वासे गलग्रहे ।
हृद्रोगे ग्रहणीरोगे कुष्ठे मन्दानले ज्वरे ॥
दंष्ट्राविषे मूलविषे सगरे कृत्रिमे विषे ।
यथार्ह स्निग्धकोष्ठेन पेयमेतद्विरेचनम् ॥

अजवायन, हाऊबेर, धनिया, हर्र, बहेड़ा, आमला, कलौंजी, कालाजीरा, पीपलामूल, अजमोद सठी (कचूर), बच, सोया, जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, स्वर्णक्षीरी* (सत्यानाशीकी जड़—चोक), चीता, यवक्षार, सज्जीक्षार, पोखरमूल, कूठ, पांचो नमक और बायबिड़ंग १—१ भाग तथा दन्तीमूल ३ भाग, निसोत+ और इन्द्रायन २—२ भाग और सातला ४ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उदर रोगों में तक्रके साथ, गुल्म में बेरके काथके साथ, वायुके निरोध में सुराके साथ, वातव्याधिमें प्रसन्ना (सुराभेद) के साथ, मलकी कठिनता में दहीके तोड़के साथ, अर्श में अनारके रसके साथ, परिकर्तिका (कैंचीसे काटनेके समान पीड़ा) में इमलीके पानीके साथ, तथा अजीर्णमें उष्ण जलके साथ सेवन करना चाहिये । इनके अतिरिक्त इसे भगन्दर, पाण्डु, खांसी, श्वास, गलग्रह, हृद्रोग, ग्रहणी, कुष्ठ, अग्निमांद्य, ज्वर, दंष्ट्राविष, मूलविष और गरविषादि में भी उचित अनुपानके साथ देना चाहिये ।

प्रथम रोगीको स्निग्ध करके यह चूर्ण सेवन कराया जाय तो भली भांति विरेचन हो जाता है ।

(३४३६) नारायणचूर्णम् (२)

(भै. र.; धन्व. । अति.; वृ. नि. र. । संग्र.)

गुडूची वृद्धदारश्च कुटजस्य फलन्तथा ।
बिल्वश्चातिविषाश्चैव भृङ्गराजश्च नागरम् ॥
शक्राशनस्य चूर्णश्च सर्वमेकत्र मेलयेत् ।
चूर्णमेतत्समं ग्राह्यं कुटजस्य त्वचोपि च ॥
गुडेन मधुना वापि लेहयेद्भिषजां वरः ।
शोथं रक्तमतीसारं चिरजं दुर्जयन्तथा ॥
ज्वरं तृष्णाश्च कासश्च पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
मन्दानलप्रमेहश्च गुदजश्च विनाशयेत् ॥
एतन्नारायणं चूर्णं श्रीनारायणभाषितम् ॥

गिलोय, विधारा, इन्द्रजौ, बेलगिरि, अतीस, भंगरा, सोंठ, और भंगका चूर्ण १—१ भाग तथा कुड़ेकी छालका चूर्ण सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलावें । इसे गुड़ या शहद में मिलाकर सेवन करनेसे शोथ रक्तातिसार, कष्टसाध्य पुराना अतिसार, ज्वर, तृष्णा, खांसी, पाण्डु, हलीमक, अग्निमांद्य, प्रमेह और अर्श का नाश होता है

(मात्रा १ से ३ माशे तक ।)

---

* यो. चि. म. में स्वर्णक्षीरीकी जगह कंकुष्ठ लिखा है ।
\+ शार्ङ्गधर में निसोत ३ भाग लिखा है ।

(३४३७) **निदिग्धिकादियोगः**

(ग. नि. । हिक्का.)

निदिग्धिकां चामलकप्रमाणां ।
हिङ्ग्वर्धयुक्तां मधुना विमिश्राम् ॥
लिहेन्नरःश्वासनिपीडितोऽपि ।
श्वासं जयत्येष बलात्त्र्यहेण ॥

कटेली, और आमला १-१ भाग तथा हींग आधा भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ चाटनेसे ३ दिनमें श्वास नष्ट हो जाता है ।

(३४३८) **निम्बपञ्चकचूर्णम्** (बृहद्)

(ग. नि. । चूर्णा.)

काले त्वक्छदसारबीजकुसुमैर्निम्बस्य तुल्यांशकैः।
कृत्वा चूर्णमदः कटुत्रिकनिशाधात्र्यक्षपथ्यायुतैः॥
पञ्चारिष्टमिदं पयोमधुघृतैरुष्णाम्बुना वा पुमान्।
पीत्वा कासगरप्रमेहपिटिकाकुष्ठादिभिर्मुच्यते॥

यथा समय नीमकी छाल, पत्ते, सार, बीज और फूल १-१ भाग लेकर सुखाकर चूर्ण बनावें, और फिर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हल्दी, आमला, बहेड़ा और हर्र में से हर एकका चूर्ण १-१ भाग मिलावें।

इसे दूध, शहद, घी या उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे खांसी, विष, प्रमेहपिडिका, और कुष्ठादि रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—२ से ३ माशे तक)

(३४३९) **निम्बपल्लवरजः**

(यो. स. । समु. ३)

शारदं ज्वरमपोहति शीघ्रं
निम्बपल्लवरजः समाक्षिकम् ॥

नीमके पत्तोंका चूर्ण शहदमें मिलाकर चाटनेसे शरत्कालीन ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—३ माशेसे आधा तोला तक)

(३४४०) **निम्बयोगः**

(वृ. नि. र.; ग. नि.; वृं. मा.; यो. र. । शीतपि.)

निम्बस्य पत्राणि सदा घृतेन
धात्रीविमिश्राण्यथवा प्रयुञ्ज्यात् ।
विस्फोटकोठक्षतशीतपित्तं
कण्डूस्रपित्तं सकलानि हन्यात् ॥

घृतके साथ नीमके पत्तोंका या नीमके पत्ते और आमले का समभाग मिश्रित चूर्ण सेवन करने से विस्फोटक, कोठ, क्षत, शीतपित्त, कण्डु (खुजली) और रक्तपित्त नष्ट होता है ।

(मात्रा—३ माशेसे आधे तोले तक)

(३४४१) **निम्बादिचूर्णम्** (१)

(भा. प्र. । म. ज्वरा.; वै. रह.; वृ. नि. र. । ज्वर.)

निम्बपत्रवराव्योषयवानीलवणत्रयम् ।
क्षारो दिग्वह्निरामेषुत्रिनेत्रक्रमशोंऽशकान् ॥
सर्वमेकीकृतं चूर्णं प्रत्यूषे भक्षयेन्नरः ।
एकाहिकं द्व्याहिकञ्च तथा त्रिदिवसज्वरम् ॥
चातुर्थिकं महाघोरं सततं सन्ततं दिवा ।
धातुस्थं च त्रिदोषोत्थं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥

नीमके पत्ते १० भाग, हर्र १ भाग, बहेड़ा १ भाग, आमला १ भाग, सोंठ १ भाग, मिर्च १ भाग, पीपल १ भाग, अजवायन ५ भाग, सञ्चल नमक, सैंधव लवण और विडलवण, १-१ भाग और यवक्षार २ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे प्रातःकाल सेवन करनेसे दैनिक, तिजारी,

चौथिया, सन्तत, सतत, धातुगत और सन्निपातज ज्वर नष्ट होते हैं।

(मात्रा—२—३ माशे। अनुपान—उष्ण जल)

(३४४२) **निम्बादिचूर्णम् (२)**

(वा. भ.। चि. अ. १९)

निम्बं हरिद्रे सुरसं पटोलं
कुष्ठाश्वगन्धे सुरदारु शिग्रुः।
ससर्षपं तुम्बरु धान्यवन्यं
चण्डावचूर्णानि समानि कुर्यात् ॥
तैस्तक्रपिष्टैः प्रथमं शरीरं
तैलाक्तमुद्वर्तयितुं यतेत।
तेनास्य कण्डूपिटिकाः सकोठाः
कुष्ठानि शोफाश्च शमं व्रजन्ति ॥

नीमकी छाल, हल्दी, दारुहल्दी, तुलसी, पटोल, कूठ, असगन्ध, देवदारु, सहंजनेकी छाल, सरसों, तुम्बरु, धनिया, केवटीमोथा, और चोरपुष्पी। सबका समान भाग चूर्ण लेकर एकत्र मिलावें।

प्रथम शरीर पर तैलकी मालिश करके पश्चात् इसे तक्रमें मिलाकर मलनेसे कण्डू, पिडिका, कोठ, कुष्ठ, और शोफ नष्ट हो जाता है।

(३४४३) **निम्बादिचूर्णम् (३)**

(भै. र.; धन्व.। वातरक्ता.)

निम्बामृताभयाधात्री प्रत्येकञ्च पलोन्मितम्।
सोमराजी पलं शुण्ठी विडङ्गैडगजाः कणाः ॥
यमानी चोग्रगन्धा च जीरकं कटुकं तथा।
खदिरं सैन्धवं क्षारं द्वे हरिद्रे च मुस्तकम् ॥
देवदारु तथा कुष्ठं कर्षं कर्षं प्रदापयेत्।
सर्वं सञ्चूर्णितं कृत्वा सूक्ष्मवस्त्रेण छानयेत् ॥
शाणमात्रन्तु भोक्तव्यं छिन्नाक्वाथं पिबेदनु।
मासमात्रप्रयोगेण भवेत्काञ्चनसन्निभः ॥
वातशोणितमत्युग्रं श्वित्रमौदुम्बरं तथा।
कोठं चर्मदलाख्यञ्च सिध्मपामा च विप्लुता ॥
कण्डूविचर्चिकाकारुदद्रुमण्डलकिट्टिभम्।
सर्वाण्येव निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
आमवातकृतं शोथमुदरं सर्वरूपिणम्।
प्लीहानं गुल्मरोगञ्च पाण्डुरोगं सकामलम् ॥
सर्वान्कण्डूव्रणांश्चैव हरते नात्र संशयः।
एतन्निम्बादिकं चूर्णं प्राह नागार्जुनो मुनिः ॥

नीमकी छाल, गिलोय, हर्र, आमला, और बाबची १—१ पल (५—५ तोले), सोंठ, बायबिडंग, पवांड़, पीपल, अजवायन, बच, जीरा, काली मिर्च, खैरसार, सेंधा नमक, यवक्षार, हल्दी, दारुहल्दी, नागरमोथा, देवदारु और कूठ। हरेक १—१ कर्ष (१।—१। तोला) लेकर महीन चूर्ण करके बारीक कपड़ेसे छानकर रक्खें।

इसे नित्य प्रति १ मास तक ४ माशेकी मात्रानुसार गिलोयके काथके साथ सेवन करनेसे भयङ्कर वातरक्त, श्वित्र (सफेद कोढ़), उदुम्बर कुष्ठ, कोठ, चर्मदल, सिध्म (छीप), पामा, कण्डू (खुजली) विचर्चिका, दाद, मण्डल, किटिभ कुष्ठ, आमवातजनित शोथ, हर प्रकारकी उदर व्याधि, तिल्ली, गुल्म, पाण्डु, कामला, और व्रणादि नष्ट होकर शरीर काञ्चनके समान कान्तिमान् हो जाता है।

(३४४४) **निर्गुण्ड्याद्यं वमनम्**

(ग. नि.। ग्रन्थ्या.)

निर्गुण्डीजातीदलदेवदारु–
जीमूतकं माक्षिकसैन्धवाढ्यम्।

अद्भिः प्रतप्तं वमनं प्रधानं
कुष्ठापचीषूत्तममादिशन्ति ॥

संभालु, चमेलीके पत्ते, देवदारु और बिडाल-डोडा। समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे गर्म पानीमें मिलाकर उसमें शहद और सेंधा नमक मिलाकर रोगीको पिलावें।

कुष्ठ और अपचीमें इससे वमन कराना हितकर है।

(मात्रा—चूर्ण ३ से ६ माशे तक। शहद ४ तोले। पानी—रोगी अधिकसे अधिक जितना पी सके। नमक—जितनेसे पानी खूब नमकीन हो जाय।)

(३४४५) **निशादिचूर्णम्**

(रा. मा. । प्रमे.)

चूर्णं निशायाः मधुना समेतं
धात्रीफलानां स्वरसेन मिश्रम् ।
प्रलीढमल्पैश्च दिनैर्निहन्ति
प्रमेहसंज्ञानखिलान् विकारान् ॥

हल्दीके चूर्णको आमलेके रस और शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे थोड़े दिनोंमेंही समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

(मात्रा—३ माशे।)

(३४४६) **नीलाब्जकन्दयोगः**

(रा. मा. । स्त्रीरो.)

सशर्करं नीलसरोजकन्द-
चूर्णं निपीतं सह माक्षिकेण ।
गर्भस्य पाते शमनं व्यथायाः
शीतैश्च तोयैः परिषेचनानि ॥

गर्भपात होनेके कारण होने वाली पीड़ामें खांड और नीलकमलकी जड़के चूर्णको शहदमें मिलाकर पिलाना और शीतल ओषधियोंके क्राथसे योनिको धोना चाहिये।

(३४४७) **नीलिन्यादिचूर्णम्**

(च. सं. । चि. अ. १८; वा. भ. । चि. अ. १५)

नीलिनीं निचुलं व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च ।
चित्रकश्च पिबच्चूर्णं सर्पिषोदरगुल्मनुत् ॥

नीली (नीलवृक्ष), हिज्जल, सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा, सञ्चल (काला-नमक), विडनमक, काचलवण (कचलोना), समुद्र लवण और चीता सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घीमें मिलाकर चाटनेसे गुल्म रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—१ से ३ माशे तक।)

(३४४८) **नीलोत्पलादिचूर्णम्**

(वं. से. । स्त्रीरोगा.)

असितोत्पलशालूकं निस्तुषा रक्तशालयः ।
यवानी गैरिकं यासाः समभागेन चूर्णिताः ॥
क्षौद्रेण तांश्च संयोज्य लिह्यात्प्रदरपीडिता ॥

नीलकमलकी जड़, लाल चावल, अजवायन, गेरु और जवासा; सबका समान भाग चूर्ण लेकर एकत्र मिलावें।

इसे शहदके साथ चटानेसे प्रदर रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—३ माशे)

(३४४९) **नीलोत्पलादियोगः**

(ग. नि. । रक्तपित्ता.)

नीलोत्पलं शर्करा च पद्मकं पद्मकेसरम् ।
तण्डुलोदकसंयुक्तं प्रशस्तं रक्तपित्तिनाम् ॥

नीलकमल, खांड, पद्माक और कमलकेसरके समान भाग मिश्रित चूर्णको तण्डुलोदक (चावलों के पानी) के साथ पिलानेसे रक्तपित्त नष्ट होता है।

(मात्रा—३–४ माशे)

(३४५०) **नील्यादिप्रयोगः**

(भा. प्र. । म. ख. दन्त.)

नीलीवायसजङ्घाकटुतुम्बीमूलमेकैकम् ।
सञ्चूर्ण्य दशनं विधृतं दशनकृमिनाशनं प्राहुः ॥

नीली, काकजंघा, और कड़वी तूंबीमेंसे किसी एक की जड़के चूर्ण को दांतमें भरनेसे उसके कृमि नष्ट हो जाते हैं ।

(३४५१) **न्यग्रोधादिचूर्णम्**

(वं. से.; भा. प्र.; वृं. मा.; ग. नि; च. द.; र. र.; यो. र. । प्रमेह; वृ. यो. त. । त. १०३; हा. सं. । स्था. ३ अ. ३१)

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थस्योनाकारग्वधासनम् ।
आम्रं कपित्थं जम्बूश्च प्रियालं ककुभं धवम् ॥
मधूकं मधुकं लोध्रं वरुणं पारिभद्रकम् ।
पटोलं मेषशृङ्गी च दन्ती चित्रकमानकम् ॥
करञ्जं त्रिफला शक्रं भल्लातकफलानि च ।
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
न्यग्रोधाद्यमिदं चूर्णं मधुना सह योजयेत् ।
फलत्रयश्वानुपिबेत्तेन मूत्रं विशुद्ध्यति ॥
एतेन विंशतिर्मेहा मूत्रकृच्छ्राणि यानि च ।
प्रशमं यान्ति योगेन पिडिका न च जायते ॥

बड़, गूलर, अश्वत्थ (पीपल वृक्ष), अरलु, अमलतास, असना, आम, कैथ, जामन, प्रियाल (चिरौंजीका वृक्ष), अर्जुन, धव, और महुवा । इनकी छाल तथा मुलैठी, लोध, बरनेकी छाल, पारिभद्र (फरहद या नीम) की छाल, पटोल, मेढासिंगी, दन्तीमूल, चीता, मानकन्द, करञ्जफल, हर्र, बहेड़ा, आमला, इन्द्रजौ, और शुद्ध भिलावा। सबका समान भाग चूर्ण लेकर एकत्र मिलावें।

इसे शहदके साथ चाटकर ऊपरसे त्रिफलेका काथ पीना चाहिए ।

इसके सेवनसे मूत्रदोष, बीस प्रकारके प्रमेह और मूत्र कृच्छ्रका नाश होता तथा प्रमेह पिडिका नहीं निकलतीं ।

(मात्रा—१ से ३ माशे तक ।)

इति नकारादिचूर्णप्रकरणम् ।

अथ नकारादिगुटिकाप्रकरणम्

नक्तान्ध्यहरीवर्तिः

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

नयनसुखावर्तिः

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

नयनामृतवटी

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

नवज्वरहरीवटी

रसप्रकरणमें देखिये ।

नवनेत्रदावर्तिः

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

नवाङ्गोवर्तिः

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

(३४५२) **नागरादिगुटिका**

(वं. से. । नेत्र.)

भृष्टा घृतेन नागरतिरीटधात्रीमनःशिला गुटिका।
उपर्युपरिमार्जनेन क्षपयति शूलं क्षणेनाक्ष्णोः ॥

सेंठ, लोध, आमला और मनसिलके चूर्णको घीमें भूनकर उसकी गुटिका बनाकर आंखके ऊपर फिराने से नेत्रपीड़ा (खड़क) तुरन्त नष्ट हो जाती है ।

(३४५३) **नागराद्यो मोदकः** (१)

(वं. से. । अति.)

नागरातिविषा मुस्तं यवानी चित्रकं वचा।
शुण्ठी पुष्करमूलञ्च पाठा कटुकरोहिणी ॥
भल्लातकास्थिन्यभया धातकी कौटजं फलम् ।
हिङ्गु सौवर्चलं क्षारं विडङ्गं विडसैन्धवम् ॥
मूत्रपिष्टान्समानेतान्वटकानक्षसम्मितान् ।
छायाशुष्कांस्तु तान् ज्ञात्वा
दद्याच्छ्लेष्मातिसारिणे ॥
कृमिश्वयथुपाण्डुर्तिप्लीहगुल्मोदरापहान् ।
ग्रहण्यर्शोविकारघ्नानग्निसन्दीपनान्भिषेत् ॥

सेंठ, अतीस, नागरमोथा, अजवायन, चीता, बच, सेंठ, पोखरमूल, पाठा, कुटकी, भिलावेकी गिरी, हर्र, धायके फूल, इन्द्रजौ, हींग, सचल (काला नमक), यवक्षार, वायविडंग, बिडनमक, और सेंधा नमक। इन सबके सम भाग मिश्रित चूर्णको गोमूत्रमें घोटकर १-२ कर्ष (१।-१। तोले) के मोदक बनाकर छायामें सुखावें। (व्यवहारिक मात्रा ३-४ माशे)

इनके सेवनसे कफज अतिसार, कृमि, शोथ, पाण्डु, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, ग्रहणीदोष और अर्शका नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती है ।

(३४५४) **नागराद्यो मोदकः** (२)

(भै. र. । अर्शो.; यो. चिं. । अ. ३)

सनागरारुष्करवृद्धदारकं
गुडेन यो मोदकमत्युदारकम् ।
अशेषदुर्नामकरोगदारकं
करोति वृद्धं सहसैव दारकम् ॥
(चूर्णे चूर्णसमो देयो मोदके द्विगुणो गुडः ।)

सेंठ, शुद्ध भिलावा और विधारामूल का चूर्ण १-१ भाग तथा गुड़ ६ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर या गुड़की चाशनी बनाकर मोदक बनावें।

यह मोदक हर प्रकारके अर्श रोगको नष्ट करते हैं। इनके सेवनसे वृद्ध पुरुषमें भी बल आ जाता है।

(मात्रा—आधा तोला। अनुपान—उष्ण जल)

नोट—चूर्ण बनाना हो तो उसमें अन्य सब चीज़ोंके समान गुड़ डालना चाहिये और मोदक बनानेके लिये चूर्णसे दो गुना गुड़ मिलाना चाहिये।

नागादिवटिका

रसप्रकरणमें देखिये।

नागार्जुनयोगः

(च. द.; वै. र. । अर्श.)

(प्र. सं. २४०३ त्रिफलादिगुटिका देखिये)

नागार्जुनवटी

(र. र. सं.)

रसप्रकरणमें देखिये।

नागार्जुनी गुटिका

(र. स. क.; र. का. धे.)

रसप्रकरणमें देखिये।

नागार्जुनी गुटिका

(ग. नि. । नेत्रा.)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये

नागार्जुनी वर्तिः

रसप्रकरणमें देखिये।

नागेन्द्रगुटिका

रसप्रकरणमें देखिये।

नेत्रवर्तिः

अञ्जनप्रकरणमें देखिये।

नेपालादिवर्तिः

अञ्जनप्रकरणमें देखिये।

(३४५५) निकुम्भाद्या गुटिका

(ग. नि. । गुटि.)

निकुम्भरजनीपाठात्रिकटुत्रिफलाग्निकाः।
बाला वृक्षकबीजं च चूर्णं स्यान्नवो गुडः॥
पथ्याभिसहितं चूर्णं गवां मूत्रयुतं पचेत्।
घनीभूतं तु गुटिकां कृत्वा खादेदभुक्तवान्॥
गुल्मप्लीहाग्निसादांस्ता नाशयेयुरशेषतः।
हृद्रोगं ग्रहणीदोषं पाण्डुरोगं च दारुणम्॥

दन्तीमूल, हल्दी, पाठा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, सुगंध बाला, इन्द्रजौ, और हर्रका चूर्ण तथा पुराना गुड़ समान भाग लेकर (चार गुने) गोमूत्रमें पकावें जब गोलियां बनाने योग्य हो जाय तो गोलियां बनाकर सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

इन्हें प्रातःकाल खाली पेट सेवन करनेसे गुल्म, प्लीहा, अग्निमांद्य, हृद्रोग, पाण्डु और ग्रहणी विकार नष्ट होते हैं।

(मात्रा—३ माशे। अनुपान—उष्णजल।)

(३४५६) निम्बादिगुटिका

(र. का. धे. । पाण्डु.)

निम्बं पटोलं कुटजं त्रिफला मुस्तनागरम्।
पचेज्जलाढके शेषे दद्यादेतत्सुशीतले॥
शिलाजतु पलान्यष्टौ मासं च स्थापयेच्च तत्।
उद्धृत्य तं शिलातुल्यमेतांश्चापि पलोन्मितान्॥
मोचा धात्रीफलतुगाकर्कटश्च निदिग्धिका।
त्रिवृता पादसंयुतं क्षौद्रं त्रिपलसम्मितम्॥
पयोऽनुपानां गुटिकां कृत्वा खादेद्यथा बलम्।
कामलापाण्डुरोगेण शोषितो ज्वरपीडितः॥

नीमकी छाल, पटोल, इन्द्रजौ, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा और सोंठ १-१ पल (५-५ तोले) लेकर सबको ८ सेर पानीमें पकावें। जब १ सेर पानी शेष रहे तो उसे छानकर उसमें ८ पल शिलाजीत मिलाकर मिट्टीके पात्रमें भरकर, उसका मुंह बन्द करके रखदें, और १ मास पश्चात् उसमें से औषधको निकालकर उसमें उसके बराबर शुद्ध मनसिल, और १-१ पल मोचरस, आमला, बनसलोचन, काकड़ासिंगी, और कटेली तथा इन सबका चौथा भाग निसोतका चूर्ण और ३ पल शहद मिलाकर गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे कामला, पाण्डु, और ज्वर नष्ट होता है। अनुपान-दूध।

(मात्रा-३-४ रत्ती।)

निम्बादिवर्तिः

मिश्रप्रकरणमें देखिये।

निशादिवटी

रसप्रकरणमें देखिये।

निशादिवर्तिः

मिश्रप्रकरणमें देखिये।

(३४५७) नीलाब्जाद्या गुटिका

(ग. नि. । तृष्णा.; रा. मा. । छर्दितृषा.)

(प्रयोग संख्या २३९३ "तृष्णाघ्नी गुटी" अवलोकन कीजिए।)

इति नकारादिगुटिकाप्रकरणम्।

अथ नकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

(३४५८) नवकगुग्गुलुः

(यो. र.; वृ. नि. र.; ग. नि.; भै. र. । मेदो.; च. द. । स्थौल्या.; वृ. यो. त. । त. १०४)

व्योषाग्निमुस्तात्रिफलाविडङ्गैर्गुग्गुलुं समम्।
खादन्सर्वाञ्जयेद् व्याधीन्मेदःश्लेष्मामवातजान्॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला और बायबिडंगका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर कूटें।

इसके सेवनसे आमवात और कफज तथा मेदज रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा-२ माशे। अनुपान-उष्ण जल)

(३४५९) नवकषायगुग्गुलुः

(च. द. । विसर्प.)

अमृतविषपटोलं निम्बकल्कैरुपेतम्।
त्रिफला खदिरसारं व्याधिघातं च तुल्यम्॥
कथितमिदमशेषं गुग्गुलोर्भागयुक्तं।
जयति विषविसर्पान्कुष्ठमष्टादशाख्यम्॥

गिलोय, शुद्ध मीठा तेलिया (बछनाग), पटोल, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, खैरसार और अमलतास एक एक भाग लेकर कूटकर सबको चार गुने पानी में पकावें। जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें १ भाग शुद्ध गूगल मिला कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो ठण्डा करके चिकने पात्रमें भरकर रक्खें।

यह गुग्गुलु विष, विसर्प, और अठारह प्रकारके कुष्ठोंको नष्ट करता है।

(३४६०) नवकार्षिकगुग्गुलुः

(यो. त. । त. ६१.; वृ. यो. त. । त. ११६; यो. र.; भै. र.; वं. से.; वै. रह.; भा. प्र. ख. २; ग. नि.; वृं. मा.; र. र. । भगन्दर.)

त्रिफलापुरकृष्णानां त्रिपञ्चैकभागयोजितागुटिका।
कुष्ठभगन्दरनाडीदुष्टव्रणविशोधिनी कथिता ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, और पीपलका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल ५ भाग लेकर सबको एकत्र कूटकर गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे कुष्ठ, भगन्दर और दुष्ट नाड़ीव्रण (नासूर) नष्ट होता है।

(मात्रा-१ से २ मासे तक। अनुपान-उष्णजल)

(३४६१) निम्बादिगुग्गुलुः

(वृ. नि. र. । शिरो रोग.)

निम्बत्वक्त्रिफलावासाचूर्णं कटुपटोलिका।
तोयैश्चतुर्गुणे क्वाथे पादांशं वस्त्रगालितम् ॥
आदाय गुग्गुलं तुल्यं क्षिप्त्वा तस्मिन्पुनः पचेत्।
पिण्डितं भक्षयेत्कर्षं स्निग्धमुष्णं च भोजयेत् ॥
वातश्लेष्मोत्थितां पीडां दुःसहां च शिरोरुजम्॥

नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बासा और कड़वा पटोल, १-१ भाग लेकर सबको कूटकर चार गुने पानीमें पकावें। जब चौथा भाग पानी शेष रहे तो उसे छानकर उसमें ६ भाग शुद्ध गूगल मिलाकर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उतारकर गोलियां बना लें।

इसमें से नित्य प्रति १ कर्ष (१। तोला) प्रतिदिन सेवन करनेसे वातकफज भयङ्कर शिरपीड़ा नष्ट होती है। पथ्य-उष्ण और स्निग्ध पदार्थ।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ माशे। अनुपान-उष्णजल)

इति नकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्।

अथ नकाराद्यवलेहप्रकरणम्

(३४६२) **नवनीतावलेहः** (१)

(ग. नि. । राजय.)

शर्करामधुसंयुक्तं नवनीतं लिहन् क्षयी ।
क्षीराशी लभते पुष्टिमतुल्ये चाज्यमाक्षिके ॥

खांड, शहद और नवनी घी (नवनीत—मक्खन) समान भाग मिलाकर या घी और शहद असमान मात्रामें मिलाकर चाटने और आहारमें केवल दूध पीनेसे क्षयका रोगी पुष्ट हो जाता है ।

(३४६३) **नवनीतावलेहः** (२)

(वृ. यो. त. । त. ६४; भा. प्र. म । अति.)

गोदुग्धं नवनीतं च मधुना सितया सह ।
लीढं रक्तातिसारे तु ग्राहकं परमं मतम् ॥

नवनीत (नौनी घी), शहद और खांड समान भाग मिलाकर चाटकर ऊपरसे गायका दूध पीनेसे रक्तातिसार बन्द हो जाता है ।

(मात्रा—नवनीतादि हरेक २ तोले ।)

(३४६४) **नागकेसराद्यवलेहिका**

(वृ. यो. त. । त. ६९)

नागकेसरभल्लातनवनीततिलैः कृतः ।
कल्कः शुक्तिमितो लीढो रक्तार्शःकुलकण्डनः ॥

नागकेसर, शुद्ध भिलावा और तिल । सब चीजें समान भाग लेकर पीसकर नवनीत (नौनी घी) में मिलाकर चाटनेसे अर्श नष्ट होती है । मात्रा-२॥ तोले ।

(व्यवहारिक मात्रा—६ माशे)

नोट—जिन्हें भिलावा अनुकूल न आता हो उन्हें यह प्रयोग सेवन न करना चाहिये ।

(३४६५) **नागरादिलेहः**

(वं. से. । बालरोग.)

नागरं पिप्पली पाठा भार्ङ्गी च मरिचानि च ।
लेहोयं मधुना कासश्लेष्मछर्दिनिसूदनः ॥

सोंठ, पीपल, पाठा, भरंगी और कालीमिर्च का समभाग मिश्रित चूर्ण शहदमें मिलाकर चटाने से बालकों की खांसी और कफज छर्दि नष्ट होती है ।

(३४६६) **नागराद्योऽवलेहः**

(ग. नि. । लेहा.)

नागरस्य पलान्यष्टौ घृतस्य पलविंशतिः ।
क्षीरद्विप्रस्थसंयुक्तं खण्डस्यार्धशतं तथा ॥
व्योषं त्रिजातकं चैव पलांशमुपकल्पयेत् ।
बल्यश्च वर्ण्यमायुष्यं बलीपलितनाशनम् ॥
आमवातप्रशमनं सौभाग्यकरमुत्तमम् ॥

८ पल सोंठ के चूर्णको २ सेर (१२० तोले) दूधमें पकावें । जब मावा तैयार हो जाय तो उसमें २० पल (२॥ सेर) घी डालकर भूनें फिर ५० पल (३ सेर १० तोले) खांड की चाशनी करके उसमें यह मावा तथा १-१ पल (५-५ तोले) सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, तेजपात और इलायचीका चूर्ण मिलाकर चिकने पात्रमें सुरक्षित रक्खें ।

यह अवलेह बलकारक, वर्णशोधक, आयुवर्द्धक तथा बली पलित और आमवात नाशक है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(३४६७) **निदिग्धिकाद्योऽवलेहः**

(ग. नि. । लेहा.; भा. प्र. ख. २.; वृ. नि. र.; वं. से. । स्वरभे.; वृ. यो. त. । त. ८१)

निदिग्धिका पलशतं तदर्धं ग्रन्थिकस्य च ।
चित्रकस्य तदर्धञ्च दशमूलं च तत्समम् ॥
द्रोणद्वये ऽम्भसः काथ्यमष्टभागावशेषितम् ।
पूते क्षिपेत्तदर्धं तु पुराणस्य गुडस्य च ॥
सर्वमेकत्र कृत्वा तु लेहवत्साधु साधयेत् ।
अष्टौ पलानि पिप्पल्यस्त्रिजातत्रिपलं तथा ॥
मरिचानां पलं चैकं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
मधुनः कुडवं दत्त्वा भक्षयेत यथा बलम् ॥
स्वरबुद्धिकरं चैव प्रतिश्यायहरं परम् ।
कासश्वासाग्निमान्द्यार्शोगुल्ममेहगलामयान् ॥
आनाहमूत्रकृच्छ्रांश्च हन्याद् ग्रन्थ्यर्बुदानि च ॥

कटेली १०० पल (६। सेर), पीपलामूल ५० पल, चीता २५ पल, और दशमूल २५ पल लेकर सबको अधकुटा करके ६४ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छानकर उसमें २ सेर पुराना गुड़ मिलाकर पकावें । जब करछी को लगने लगे तो उसमें ८ पल पीपल और १—१ पल (५—५ तोले) दालचीनी, तेजपात इलायची तथा कालीमिर्चका चूर्ण मिलावें और ठण्डा होने पर उसमें ४० तोले शहद डाल कर सुरक्षित रक्खें ।

यह स्वर और बुद्धि वर्द्धक तथा प्रतिश्याय, खांसी, श्वास, अग्निमांद्य, अर्श, गुल्म, प्रमेह, गलरोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, ग्रन्थि और अर्बुद नाशक है ।

(मात्रा १ से २ तोले तक ।)

(३४६८) **निशाद्यवलेहः**

(वं. से. । बाल.)

निशा कृष्णाञ्जनं लाजा शृङ्गीमरिचमाक्षिकैः ।
लेहः शिशोर्विधातव्यश्छर्दिकासरुजापहः ॥

हल्दी, पीपल, सुरमा, धानकी खील, काकड़ासिंगी, और कालीमिर्चके समान भाग मिश्रित चूर्णको शहदमें मिलाकर चटाने से बालकोंकी छर्दि और खांसी नष्ट होती है ।

इति नकाराद्यवलेहप्रकरणम् ।

अथ नकारादिपाकप्रकरणम्

(३४६९) **नारिकेलखण्डः**

(च. द.; भै. र. । परि. शू.: यो. र.; ग. नि. । शूला.; यो. त. । त. ६३; वृ. यो. । त. १२२)

कुडवमितमिह स्यान्नारिकेलं सुपिष्टम्
पलपरिमितसर्पिः पाचितं खण्डतुल्यम् ।
निजपयसि तदेतत्प्रस्थमात्रे विपक्वम्
गुडवदथसुशीते शाणभागान्क्षिपेच्च ॥
धन्याकपिप्पलिपयोदतुगाद्विजीरैः
सार्कं त्रिजातमिभकेशरवह्निचूर्ण्य ।
हन्त्यम्लपित्तमरुचिं क्षयमस्रपित्तम्
शूलं वमिं सकलपौरुषकारि पुंसाम् ॥

४० तोले नारयलकी गिरी (गोले) को पत्थर पर अत्यन्त महीन पीसकर १० तोले घीमें भून लें। फिर २ सेर नारयलके दूध में यह गोला और २० तोले खांड मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गुड़के समान गाढ़ा हो जाय तो ठण्डा करके उसमें ५-५ माशे धनिया, पीपल, नागरमोथा, बंसलोचन, सफेद जीरा, काला जीरा, और चातुर्जात (दालचीनी, इलायची तेजपात, और नागकेसर समान भाग मिश्रित) का चूर्ण मिलावें।

यह अम्लपित्त, अरुचि, रक्तपित्त, क्षय, शूल, और वमनको नष्ट करता तथा पौरुषको बढ़ता है।

(मात्रा–१ से २ तोलेतक । अनुपान—दूध)

(३४७०) **नारिकेलखण्डपाकः**

(वृ. यो. त. । त. १२२; वं. से.; वै. र. । अम्लपित्त.; र. र. । शूला.; भा. प्र. । ख. २ अम्लपि.)

कुडवं नारिकेलस्य सूक्ष्मं दृषदि पेषितम् ।
शुभ्रखण्डस्य कुडवं सर्वमेतच्चतुर्गुणम् ॥
आलोड्य नारिकेलस्य जले मृद्वग्निना पचेत् ।
नारिकेलजलालाभे गव्ये पयसि तत्पचेत् ॥
पलमात्रस्तदर्धोऽपि भक्षितः प्रत्यहं नरैः ।
नारिकेलकखण्डोऽयं पुंस्त्वनिद्राबलप्रदः ॥
अम्लपित्तं रक्तपित्तं शूलञ्च परिणामजम् ।
क्षयं क्षपयति क्षिप्रं शुष्कं दावानलो यथा ॥

(पलमात्रगव्यघृतेन नारिकेलस्य भर्जनं कर्त्तव्यमिति सम्प्रदायः)

४० तोले नारयलकी गिरी (गोले) को पत्थर पर अत्यन्त महीन पीसकर (१० तोले घीमें भूनलें फिर) इसे ६ सेर नारयलके पानी (अभावमें गोदुग्ध) में मिलावें और उसमें २० तोले खांड मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो ठण्डा करके चिकने बरतनमें भरकर रक्खें ।

इसमेंसे नित्यप्रति ५ तोले या २॥ तोले खानेसे पुरुषत्व, निद्रा और बलकी वृद्धि होती तथा अम्लपित्त, रक्तपित्त, परिणाम शूल, और क्षयका शीघ्रही नाश हो जाता है ।

(३४७१) **नारिकेलपाकः**

(नपुं. अ. । त. ४)

गोलकं नारिकेलस्य पाटयेच्च विधानतः ।
पलार्द्धमिक्षुरबीजानिस्तस्मिन्दत्त्वा विभावयेत्॥
वटदुग्धेन सम्पूर्य दुग्धे वसुगुणे पचेत् ।
चतुष्पले घृते भृष्ट्वा सिते प्रस्थे च मेलयेत् ॥
संस्कृत्य विधिवत्पाकं चूर्णानेतान् क्षिपेत्ततः ।
जातिपत्रं लवङ्गञ्च वङ्गं जातिफलं तथा ॥
गोक्षुराकर्भौ शुण्ठीं कपिकच्छुं बलां त्वचम् ।
मधुयष्टीं चोचटां च चूर्णं कृत्वा च प्रक्षिपेत् ॥
शीते मधुप्रदातव्यं कुडवैकप्रमाणतः ।
स्निग्धे भाण्डे निधायाथ मात्रा पलमिता भवेत्॥
अथवाग्निबलं दृष्ट्वा ऽनुपानं पयसश्चरेत् ।
वीर्यवृद्धिकरं चैव षण्ढादिदोषनाशनम् ॥
नारिकेलस्य पाकोऽयं वाजीकरणमुत्तमम् ॥

एक साबित नारयलका गोला लेकर उसमें से एक ओरसे जरासा टुकड़ा इस प्रकार काट लीजिये कि जिससे वह कटा हुवा टुकड़ा पुनः उसी जगह ढकनेकी भांति लगाया जा सके । अब इस गोलेमें २॥ तोले तालमखानेके बीज भरकर उसे बड़के दूधसे मुंह तक भर दीजिये और मुंहको उक्त कटे हुवे टुकड़ेसे बन्द करके रख दीजिये । जब सब दूध सूख जाय तो गोलेको ताल मखाने सहित पीसकर उससे ८ गुने गोदुग्धमें पकाइये और मावा हो जाने पर उसे ४ पल (४० तोले) घीमें भून लीजिये । अब १ प्रस्थ (८० तोले) खांडकी चाशनीमें इस मावे को मिलाकर उसमें २॥–२॥ तोले जावित्री, लौंग, बंग भस्म, जायफल, गोखरु, अकरकरा, सोंठ, कौंचके बीज, खरैटी, दालचीनी, मुलैठी और उटिंगणके बीजोंका चूर्ण मिला दीजिये और ठण्डा होनेपर ४० तोले शहद मिलाकर रखिये ।

इसे दूधके साथ सेवन करनेसे नपुंस्कता दूर होती और वीर्य वृद्धि होती है । यह अत्यन्त बाजीकर है । मात्रा ५ तोले । अथवा अग्निबलानुसार ।

(३४७२) **नारिकेलामृतम्**

(भै. र.; धन्व. । शूला.; वं. से.; र. र. । अम्लपित्ता.)

नारिकेलफलप्रस्थं सुपिष्टं भर्जितं घृते ।
प्रस्थे प्रस्थं समादाय शुण्ठीचूर्णन्तु तत्समम् ॥
द्विपात्रं नारिकेलाम्बु तत्समं क्षीरमेव च ।
धात्र्याश्च स्वरसप्रस्थं खण्डस्यापि तुलां न्यसेत्॥
एकीकृत्य पचेत्सर्वं शनैर्मृद्वग्निना भिषक् ।
सिद्धशीते प्रदातव्यं चूर्णमेषां सुशोभनम् ॥
कटुत्रयञ्चतुर्जातं प्रत्येकञ्च पलोन्मितम् ।
धात्री जीरकयुग्मञ्च धान्यकं ग्रन्थिपर्णकम् ॥
तुगापयोदचूर्णानि त्रिकर्षाणि पृथक् पृथक् ।
चतुःपलानि मधुनः स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥
शिवं प्रणम्य सगणं धन्वन्तरिमथापरम् ।
कर्षप्रमाणं कर्त्तव्यं मुद्गयूषं पिबेदनु ॥
अम्लपित्तं निहन्त्युग्रं शूलञ्चैव सुदारुणम् ।
परिणामभवं शूलं पृष्ठशूलञ्च नाशयेत् ॥
अन्नद्रवभवं शूलं पार्श्वशूलं सुदुस्तरम् ।
अग्निसन्दीपनकरं रसायनमिदं शुभम् ॥
मूत्राघातानशेषांश्च रक्तपित्तं विशेषतः ।
पीनसञ्च प्रतिश्यायं नाशयेन्नित्यसेवनात् ॥
रोगानीकविनाशाय लोकानुग्रहहेतवे ।
अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं नारिकेलामृतं शुभम्॥

नारियलकी गिरी (खोपरा) १ प्रस्थ (८०तो.)

लेकर उसे पत्थर पर पीसकर २ सेर (१६० तोले) घीमें मन्दाग्नि पर भूनें, जब इसका रंग लाल हो जाय तो उसमें १ प्रस्थ सोंठका चूर्ण, १६ सेर नारयलका पानी; १६ सेर दूध और २ सेर आमलेका रस तथा १०० पल (६। सेर) खांड मिलाकर पुनः मन्दाग्नि पर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतारकर ठण्डा करके उसमें १-१ पल (५-५ तोले) सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसर तथा ३-३ कर्ष (३।।। तोले) आमला, जीरा, काला जीरा, धनिया, गठिवन, बंसलोचन और नागरमोथेका अत्यन्त महीन चूर्ण तथा ४ पल (४० तोले) शहद मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रक्खें।

प्रतिदिन शिव, धन्वन्तरि आदिको प्रणाम करके इसमें से १ कर्ष (१। तोला) पाक मूंगके यूषके साथ सेवन करनेसे अम्लपित्त, भयङ्कर शूल, परिणामशूल, अन्नद्रवशूल, भयङ्कर पार्श्वशूल, अग्निमांद्य, मूत्राघात, विशेषतः रक्तपित्त प्रतिश्याय और पीनसादि रोग नष्ट होते हैं।

इसके आविष्कारक श्री अश्विनीकुमार हैं।

इति नकारादिपाकप्रकरणम्।

अथ नकारादिघृतप्रकरणम्

(३४७३) नवनीतादियोगः

(वृ. नि. र.; वृं. मा. । अर्शो.)

नवनीततिलाभ्यासात्केसरनवनीतशर्कराभ्यासात् दधिसरमथिताभ्यासाद् गुदजाः शाम्यन्ति रक्तवहाः॥

नवनीत (नौनीघृत-मक्खन) और तिल; अथवा नागकेसर, नवनीत और खांड को एकत्र मिलाकर या दहीके ऊपरकी मलाई को मथकर सेवन करने से रक्तज अर्श नष्ट होती है।

(३४७४) नागदन्त्याद्यं घृतम्

(वं. से.; धन्व. । विषा.)

नागदन्ती त्रिवृद्दन्ती स्नुक्पयः पलिकैः समैः।
गवां मूत्राढके सिद्धं सर्पिः सर्वविषापहम्॥
सर्पकीटविषार्त्तानां गरार्तानाञ्च शस्यते॥

नागदन्ती, निसोत और दन्ती ५-५ तोले तथा सेहुंड (सेंड-थोहर) का दूध १० तोले, गोमूत्र ८ सेर और घी २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मूत्र जलने तक पकावें। तत्पश्चात् छानकर रक्खें।

यह घी कीटविष, मूलविष, और गरविषादि हर प्रकारके विषोंको नष्ट करता है ।

(३४७५) नागरघृतम् (१)

(वृं. मा. । आमाधिकार)

नागरकाथकल्काभ्यां घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
चतुर्गुणेन तेनाथ केवलेनोदकेन वा ॥
वातश्लेष्मप्रशमनमग्निसन्दीपनं परम् ।
नागरं घृतमित्युक्तं कट्यामशूलनाशनम् ॥

सोंठका कल्क १३ तोले ४ माशे, घी २ सेर, सोंठका काथ या पानी ८ सेर । सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकावें । तत्पश्चात् घृतको छानकर रखलें ।

यह घृत वातकफ, कटिशूल और आमशूल नाशक तथा अग्निवर्द्धक है । (मात्रा १ से २ तोले तक)

नोट—काथके लिये-सोंठ ४ सेर, पानी ३२ सेर, शेष काथ ८ सेर । यदि पानी के साथ घृत पाक करना हो तो कल्क २० तोले डालना चाहिये ।

(३४७६) नागरघृतम् (२)

(वृं. मा. । आमा.)

सर्पिर्नागरकल्केन सौवीरकचतुर्गुणम् ।
सिद्धमग्निकरं श्रेष्ठमामवातहरं परम् ॥

पानीके साथ पिसी हुई सोंठ २० तोले, घी २ सेर, सौवीर काञ्जी (जौ से बनी हुई काञ्जी) ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर काञ्जी जलने तक पकावें । तत्पश्चात् छानकर रक्खें ।

यह घृत आमवात (गठिया) नाशक और अग्निवर्द्धक है । (मात्रा—१ से २ तोले तक)

(३४७७) नागरादिघृतम्

(च. सं. । चि. अ. ८)

नागरं पिप्पलीमूलं चित्रको हस्तिपिप्पली ।
श्वदंष्ट्रा पिप्पली धान्यं बिल्वपाठायमानिकाः॥
चाङ्गेरीस्वरसे सर्पिः कल्कैरेतैर्विपाचयेत् ।
चतुर्गुणेन दध्ना च तद्घृतं कफवातनुत् ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं मूत्रकृच्छ्रं प्रवाहिकाम् ।
गुदभ्रंशार्त्तिमानाहं घृतमेतद् व्यपोहति ॥

सोंठ, पीपलामूल, चीता, गजपीपल, गोखरु, पीपल, धनिया, बेलगिरी, पाठा और अजवायन । सब चीजें समान भाग मिश्रित तथा पानीके साथ पिसी हुई २० तोले, घी २ सेर, चाङ्गेरी (चूके) का स्वरस २ सेर, और दही ८ सेर । सबको एकत्र मिलाकर जलांश जलने तक पकावें । तत्पश्चात् घृतको छानकर सुरक्षित रक्खें ।

यह घृत कफ, वायु, अर्श, ग्रहणीदोष, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका (पेचिश), गुदभ्रंश (कांच निकलना) और आनाह को नष्ट करता है ।

(मात्रा १ से २ तोले तक ।)

(३४७८) नागराद्यं घृतम्

(वं. से. । बालरो.)

नागरं सुवहा भार्ङ्गी नैचुलानि फलानि च ।
कल्कैरक्षसमैरेतैः प्रस्थार्धं सर्पिषः पचेत् ॥
द्विगुणेन जलेनैव जीर्णाहारः पिबेन्नरः ।
घृतमेतन्निहन्त्याशु कासश्वासापतन्त्रकान् ॥

सोंठ, निसोत, भरंगी और हिज्जलके फल १।-१। तोला लेकर पानीके साथ पीस लें फिर यह कल्क; १ सेर घी और २ सेर पानी एकत्र मिला कर पानी जलने तक पकावें ।

इसे भोजन पचने पर खिलानेसे बालकोंकी खांसी, श्वास और अपतन्त्रक रोग नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक ।)

(३४७९) नागराद्यं यमकम्

(वं. से. । उदररोगा.; च. सं. । अ. १८.; वृ. यो. त. । त. १०५)

नागरं त्रिफला प्रस्थं घृततैलं तथाढकम् ।
मस्तुना साधयित्वा तु पिबेत्सर्वोदरापहम् ॥
कफमारुतसम्भूते गुल्मे चैव प्रशस्यते ।

सोंठ और त्रिफलाका समान भाग मिश्रित कल्क १ सेर, घी ४ सेर, और तिलका तेल ४ सेर तथा मस्तु (दहीका तोड़ अर्थात् २ गुना पानी मिलाकर बनाया हुवा तक) ३२ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो स्नेहको छान लें ।

यह यमक कफवातज गुल्म और सर्व प्रकार के उदर रोगोंको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(३४८०) नारसिंहघृतम् (१)

(वा. भ. । उ. अ. ३९)

गायत्रीशिखिशिंशपासनशिवावेल्लाक्षकारुष्करान्
पिष्ट्वाऽष्टादशसंगुणेऽम्भसि धृतान्खण्डैः सहायोमयैः ॥
पात्रे लोहमये त्र्यहं रविकरैरालोडयन्पाचयेत् ।
अग्नौ चानु मृदौ सलोहशकलं पादस्थितं तत्पचेत्॥
पूतस्यांशः क्षीरतोंशस्तथांशो-
भार्गीनिर्यासाद् द्वौ वरायास्त्रयोंशाः।
अंशाश्चत्वारश्चेह हैयंगवीना-
देकीकृत्यै तत्साधयेत्कृष्णलोहैः ॥
विमलखण्डसितामधुभिः पृथक्
युतमयुक्तमिदं यदि वा घृतम् ।
स्वरुचिभोजनपानविचेष्टितो
भवति ना पलशः परिशीलयन् ॥
श्रीमान्निर्धूतपाप्मा वनमहिषबलो वाजिवेगः स्थिराङ्गः ।
केशैर्भृङ्गाङ्गनीलैर्मधुसुरभिमुखो नैकयोषिन्निषेवी॥
वाङ्मेधाधीसमृद्धःसपदुहुतवहो मासमात्रोपयोगात्
धत्तेऽसौ नारसिंहं वपुरनलशिखातप्तचामीकराभम् ॥
अत्तारं नारसिंहस्य व्याधयो न स्पृशन्त्यपि ।
चक्रोज्ज्वलभुजं भीता नारसिंहमिवासुराः ॥

खैरसार, चीता, सीसम, असन, हर्र, बायबिडंग, बहेड़ा, और शुद्ध भिलावा, समान भाग मिलाकर १ सेर लें और सबको पीसकर १८ सेर पानीमें लोह पात्रमें भिगोदें एवं साथ ही उसमें थोड़ेसे लोहेके टुकड़े भी डाल दें । इसे ३ दिन तक धूपमें रक्खा रहने दें और रोज़ २-४ बार अच्छी तरह चला दिया करें । तत्पश्चात् उसे लोहेके टुकड़ों समेत मन्दाग्नि पर पकावें। जब ४॥ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें । तत्पश्चात् इसमें ४॥ सेर दूध, ९ सेर भंगरेका क्काथ, १३॥ सेर त्रिफलेका रस और १८ सेर नवनीत (नौनी)

घी मिलाकर लोहपात्रमें पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो उसमें स्वच्छ खांड, मिश्री या शहद ४॥ सेर मिलाकर अथवा बिना किसी चीज़के मिलाये ही सेवन करें । मात्रा ५ तोले ।

इसके सेवनसे मनुष्य शोभायुक्त, कालुष्य रहित, बनैले भैंसेके समान बलवान्, घोड़ेके समान वेगवान् और स्थिराङ्ग हो जाता है । इसे केवल एक मास तक ही सेवन करने से केश भ्रमरके समान काले, मुख सुगन्धि युक्त सुन्दर, और वाक्शक्ति, मेधा, बुद्धि तथा जठराग्नि तीव्र हो जाती है । इसके अभ्यासी के शरीर पर व्याधियां अपना प्रभाव नहीं जमा सकतीं ।

(३४८१) नारसिंहघृतम् (२)

(ग. नि. । घृता.)

वह्निर्भल्लातकं चैव शिंशपा खदिरं तथा ।
हरीतकीर्विडङ्गानि जीवकश्च तथाऽक्षकम् ॥
एषामाहृत्य भागांस्तु सम्यग्दशपलोन्मितान् ।
जलद्रोणे युतं कृत्वा लोहभाण्डे निधापयेत् ॥
लोहभाण्डे पचेत्तावद्यावत्पादावशेषितम् ।
क्वाथं लोहयुतं कृत्वा स्थापयेद्दिवसत्रयम् ॥
त्रिगुणं तु शतावर्या रसं धात्र्याश्च निक्षिपेत् ।
निक्षिपेत्त्रिगुणं चात्र भृङ्गराजरसं शुभम् ॥
छागक्षीरं च तत्रैव त्रिगुणं च नियोजयेत् ।
पक्त्वा घृताढकं तेन मधुना सितयाऽथवा ॥
गुडेन वा पिबेत्सार्धं केवलं वा पलोन्मितम् ।
न किञ्चित्परिहार्यं स्याद्वातातपनिषेवणम् ॥
अजीर्णे पिबतश्चापि वनितासेविनस्तथा ।
नान्धता नाग्निहानिश्च न वलीपलितं भवेत् ॥
अनेन च भवत्याशु नरः सिंहपराक्रमः ।
भवत्यश्वजवश्चैव हेमवर्णश्च जायते ॥
नारसिंहमिति ख्यातं घृतं बलविवर्धनम् ॥

चीता, शुद्ध भिलावा, शीसमका चूर्ण, खैरसार, हर्र, बायबिड़ंग, जीवक और बहेड़ा १०-१० पल (हरेक ५० तोले) लेकर सबको ३२ सेर पानीमें लोहपात्रमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें थोड़ेसे लोहेके टुकड़े डालकर रखदें और फिर ३ दिन पश्चात् उसमें २४ सेर शतावरका रस, २४ सेर आमले का रस, २४ सेर भंगरेका रस और २४ सेर बकरीका दूध तथा ८ सेर घी मिलाकर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इसमें से नित्य प्रति ५ तोले घी में १। तोला शहद, खांड या गुड़ मिलाकर अथवा बिना कुछ मिलाये ही सेवन करने से स्त्री सम्भोगरत मनुष्योंको अन्धता, अग्निमांद्य, और बलि पलितादि रोग नहीं होते । इसके सेवनसे मनुष्य शीघ्र ही सिंह सदृश पराक्रमी, घोड़ेके समान वेगवान् और स्वर्ण सदृश कान्तिमान् हो जाता है ।

इसके सेवनकालमें वायु, आतप इत्यादि किसी चीज़से परहेज़ करनेकी आवश्यकता नहीं है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ से २ तोले तक)

(३४८२) नाराचकं घृतम्

(ग. नि. । घृता.; वृ. यो. त. । त. १०५; वृ. नि. र.; वं. से.; यो. र.; भै. र.; धन्वं. । गुल्मा.)

चित्रकं त्रिफला दन्ती त्रिवृता कण्टकारिका ।

स्नुहीक्षीरविडङ्गानि घृतं दशममुच्यते ॥
एकैकस्य च कर्षेण घृतस्य कुडवं पचेत् ।
चतुर्गुणेन तोयेन सम्यगेतत्सुखाग्निना ॥
अस्य मात्रां पिबेत्काले पलार्द्धेन च सम्मिताम् ।
उष्णोदकश्चानु पिबेद्विरेकार्थे पिबेन्नरः ॥
पिबेद् यवागूं हविषा पेयां वा क्षीरसाधिताम् ।
वातगुल्ममुदावर्तं प्लीहार्शो ब्रध्नकुण्डलम् ॥
ग्रहणीं दीपयेन्मन्दां कुष्ठदोषांश्च नाशयेत् ।
नाराचकमिदं सर्पिः ख्यातं नाराचसन्निभम् ॥

चीता, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्ती, निसोत, कटेली, और बायबिडंग; हरेक वस्तु १।-१। तोला तथा सेंड (सेहुंड-थोहर) का दूध २॥ तोले लेकर सबको पानीके साथ पीसकर कल्क बनावें। फिर ४० तोले घीमें यह कल्क और २ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घी को छान लें।

इसे २॥ तोलेकी मात्रानुसार पीने से विरेचन हो जाता है। विरेचन होनेके बाद घृत-युक्त यवागु या दूधसे बनी हुई पेया पीनी चाहिये।

इसके सेवन से वात, गुल्म, उदावर्त, प्लीहा, अर्श, ब्रध्न, वातकुण्डलिका, और कुष्ठ नष्ट होता तथा ग्रहणी दीप्त होती है।

अनुपान—उष्ण जल। (व्यवहारिक मात्रा १ तोला तक)

(३४८३) नाराचघृतम् (बृहद्)

(भै. र.; र. र.। उदर.)

लोध्रचित्रकचव्यानि विडङ्गं त्रिफला त्रिवृत् ।
शङ्खिन्यतिविषाव्योषमजमोदा निशाद्वयम् ॥
दन्ती च कार्षिकं सर्वं गोमूत्रस्य पलाष्टकम् ।
चतुःपलं स्नुहीक्षीरं राजवृक्षफलं तथा ॥
एतैश्चतुर्गुणे तोये घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
उदरं चामवातश्च प्लीहगुल्मभगन्दरान् ॥
निहन्त्यचिरयोगेन गृध्रसीं स्तम्भमूरुजम् ।
बृहन्नाराचकन्नाम घृतमेतद्यथामृतम् ॥

लोध, चीता, चव, बायबिडंग, हर्र, बहेड़ा आमला, निसोत, शङ्खिनी, अतीस, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजमोद, हल्दी, दारुहल्दी और दन्तीमूल; प्रत्येक १। तोला। तथा सेंड (सेंहुण्ड, थोहर) का दूध ४० तोले और अमलतासका गूदा २० तोले लेकर पानीके साथ पीस लें। तत्पश्चात् २ सेर घीमें ८ सेर पानी, १ सेर गोमूत्र और यह कल्क मिलाकर घृत मात्र शेष रहने तक पकावें। पश्चात् छानकर सुरक्षित रक्खें।

इससे विरेचन होकर उदररोग, आमवात, प्लीहा, गुल्म, भगन्दर गृध्रसी और ऊरुस्तम्भादि रोग नष्ट होते हैं। (मात्रा—१ तोला तक)

(३४८४) नारायणघृतम्

(भै. र.; यो. र.; वृ. नि. र.;। अम्लपित्त.)

जलैर्दशगुणैः क्वाथ्यं पिप्पलीपलषोडश ।
पादशेषं हरेत्क्वाथं क्वाथतुल्यं घृतं पचेत् ॥
रसप्रस्थं गुडूच्याश्च धात्र्याः षष्टिपलं रसम् ।
द्राक्षाधात्रीपटोलश्च विश्वश्च कटुका वचा ॥
पलप्रमाणं कल्कश्च दत्त्वा सर्पिः समुद्धरेत् ।
अम्लपित्तं हरं खादेद्दाहच्छर्दिनिवारणम् ॥
असाध्यं साधयेत्सद्यो नाम्ना नारायणं घृतम् ॥

१ सेर पीपलको २० सेर पानी में पकावें और ५ सेर पानी शेष रहने पर छान लें। तत्पश्चात् इसमें ५ सेर घी, २ सेर गिलोयका रस, ७॥ सेर आमलेका रस तथा ५-५ तोले दाख (मुनक्का), आमला, पटोल, सोंठ, कुटकी और बचका कल्क मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घी कष्टसाध्य अम्लपित्त, दाह और छर्दि को शीघ्र नष्ट कर देता है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक।)

(३४८५) नारीक्षीराद्यं घृतम्

(वं. से. । हिक्का.)

नारीक्षीरेण वा सिद्धं सर्पिर्मधुरकैरपि ।
नासा निषिक्तं पीतं वा सद्यो हिक्कां नियच्छति॥

स्त्रीके दूध और मधुरादिगण[१] के कल्कके साथ सिद्ध घृत पीने या उसकी नस्य लेनेसे हिचकी शीघ्रही बन्द हो जाती है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक।)

(३४८६) निम्बादिघृतम् (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४२)

निम्बं पटोलं च किरातकश्च
जाती विशाला सपुनर्नवा च ।
पयोदलाक्षारसमेव वासा
त्रायन्तिका बिल्वककुष्ठयष्टिः ॥
संचूर्णितं क्षीरदधिसमेतं
घृतं विपक्कं परिषेचने च ।
हितं च कुष्ठक्षतदद्रुरक्त-
पामाविचर्चिर्विनिहन्ति कण्डूम् ॥

नीम, पटोल, चिरायता, चमेलाके पत्ते, इन्द्रायन, पुनर्नवा और नागरमोथा समान भाग मिश्रित २ सेर लेकर १६ सेर पानीमें पकावें, जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें ४ सेर दूध, ४ सेर दही, ४ सेर घी, ४ सेर लाक्षारस और बासा, त्रायमाणा, बेलछाल, कूठ और मुलैठीका समभाग मिश्रित २० तोले चूर्ण मिलाकर पकावें।

यह घृत लगानेसे कुष्ठ, क्षत, दाद, रक्तदोष, पामा, विचर्चिका और कण्डूका नाश होता है।

नोट—लाक्षा रस बनानेकी विधि भा. भै. र. प्रथम भागके ३५३ पृष्ठ पर देखिये।

(३४८७) निम्बादिघृतम् (२)

(भा. प्र. । ख. २. मसू.)

चतुर्गुणेन निम्बोत्थपत्रकाथेन गोघृतम् ।
पचेत्ततस्तु निम्बस्य कृतमालस्य पत्रजैः ॥
कल्कैर्भूयः पचेत्सिद्धं तत्पिबेत्पलसम्मितम् ।
पद्मिनीकण्टकाद्रोगान्मुक्तो भवति नान्यथा ॥

नीमके पत्तोंका क्वाथ ४ सेर, गोघृत १ सेर, और नीम तथा छोटे अमलतासके पत्तोंका कल्क ६ तोले ८ माशे लेकर एकत्र मिलाकर पकावें। जब समस्त क्वाथ जल जाय तो घीको छानकर उसमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर पुनः पकावें।

इसे ५ तोलेकी मात्रानुसार पीनेसे पद्मिनीकण्टक रोग दूर होता है।

१. मधुरादि गण—काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, गिलोय, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, पद्माक, बंसलोचन, काकड़ासिंगी, पुण्डरिया, जीवन्ती, मुलैठी, और दाख (मुनक्का)।

(३४८८) **निम्बादिघृतम्** (३)

(वा. भ. । चि. अ. २१)

निम्बामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानाम्
भागान्पृथग्दशपलान्विपचेद् घटेऽपाम् ।
अष्टांशशेषितरसेन पुनश्च तेन
प्रस्थं घृतस्य विपचेत्पिचुभागकल्कैः ॥
पाठाविडङ्गसुरदारुगजोपकुल्या-
द्विक्षारनागरनिशामिशिचव्यकुष्ठैः ।
तेजोवतीमरिचवत्सकदीप्यकाग्नि-
रोहिण्यरुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥
मञ्जिष्ठयातिविषया विषया यवान्या
संशुद्धगुग्गुलुपलैरपि पञ्चसंख्यैः ।
तत्सेवितं प्रधमति प्रबलं समीरम्
सन्ध्यस्थिमज्जगतमप्यथकुष्ठमीदृक् ॥
नाडीव्रणार्बुदभगन्दरगण्डमाला-
जत्रूर्ध्वसर्वगदगुल्मगुदोत्थमेहान् ।
यक्ष्मारुचिश्वसनपीनसकासशोफ-
हृत्पाण्डुरोगमदविद्रधिवातरक्तम् ॥

नीमकी छाल, गिलोय, बासा, पटोल और कटेली । १०-१० पल (हरेक ५० तोले) लेकर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें जब ४ सेर पानी शेष रहजाय तो छानकर उसमें २ सेर घी और निम्न लिखित चीजोंका कल्क मिलाकर पकावें।

कल्क द्रव्य—पाठा, बायबिडंग, देवदारु, गजपीपल, यवक्षार, सज्जीखार, सोंठ, हल्दी, सौंफ, चव, कूठ, मालकंगनी, काली मिर्च, इन्द्रजौ, अजमोद, चीता, कुटकी, शुद्धभिलावा, बच, पीपलामूल, मजीठ, अतीस, कलिहारीकी जड़ और अजवायन । हरेकका चूर्ण १। तोला । तथा शुद्ध गूगल २५ तोले ।

सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो घीको छानलें ।

इसके सेवनसे अग्निदीप्त होती; और सन्धि, अस्थि तथा मज्जागत कुष्ठ, नाड़ीव्रण (नासूर), अर्बुद, भगन्दर, गण्डमाला, ऊर्ध्वजत्रुगत (गलेसे ऊपरके) समस्त रोग, गुल्म, अर्श, प्रमेह, यक्ष्मा, अरुचि, श्वास, पीनस खांसी, शोथ, हृद्रोग, पाण्डु, मद, विद्रधि और वातरक्तका नाश होता है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(३४८९) **निर्गुण्डीघृतम्** (१)

(वं. से. । कासा.)

निर्गुण्डीपत्रस्वरसेन सिद्धं सर्पिः
कफोत्थं विनिहन्ति कासम् ॥

संभालुके पत्तोंका स्वरस ४ सेर और घी १ सेर मिलाकर पकावें और घृतमात्र शेष रहने पर छान लें ।

इसके सेवनसे कफज खांसी नष्ट होती है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक)

(३४९०) **निर्गुण्डीघृतम्** (२)

(ग. नि.; च. द. । राजयक्ष्मा.)

समूलपत्रनिर्गुण्डीरसपक्वं घृतं पिबेत् ।
क्षतक्षीणो भवेच्छोषी सर्वातङ्कविवर्जितः ॥

मूल और पत्र सहित संभालुको कूटकर ४

सेर रस निकालें अथवा ४ सेर संभालुको १६ सेर पानीमें पकाकर ४ सेर शेष रहने पर छान लें। तत्पश्चात् इस स्वरस या क्वाथमें १ सेर घी मिलाकर घृतमात्र शेष रहने तक पकाकर छान लें।

इसके सेवनसे क्षत, क्षीण और शोषी रोगमुक्त हो जाता है।

(३४९१) निशादिघृतम्

(वृ. नि. र.; वं. से. । उन्माद.)

निशायुक्त्रिफलाश्यामावचासिद्धार्थहिङ्गुभिः ।
शिरीषकटभिश्वेतामञ्जिष्ठाव्योषदारुभिः ॥
समैं कृतं घृतं मूत्रे सिद्धमुन्मादनाशनम् ॥

हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, निसोत, बच, सफेद सरसों, हींग, सिरसकी छाल, मालकंगनी, श्वेतापराजिता, मजीठ, सोंठ, मिर्च, पीपल, और देवदारु का समान भाग मिश्रित चूर्ण १० तोले तथा १ सेर घी और ४ सेर गोमूत्र लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो घृतको छान लें।

इसके सेवनसे उन्माद नष्ट होता है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक।)

(३४९२) नीलघृतम्

(सु. सं. । चि. कुष्ठा.)

वायसीफल्गुतिक्तानां शतं दत्त्वा पृथक् पृथक् ।
द्वे लोहरजसः प्रस्थे त्रिफला त्र्याढकन्तथा ॥
त्रिद्रोणेऽपां पचेद्यावद्भागौ द्वावसानादपि ।
शिष्टश्च विपचेत्पूय एतैः श्लक्ष्णप्रपेषितैः ॥
कल्कैरिन्द्रयवव्योषत्वग्दारुचतुरङ्गुलैः ।
पारावतपदीदन्तीवाकुचीकेशराह्वयैः ॥
कण्टकार्या च तत्पक्वं घृतं कुष्ठिषु योजयेत् ।
दोषधात्वाश्रितं पानादभ्यङ्गात्त्वग्गतं तथा ॥
अप्यसाध्यं नृणां कुष्ठं नाम्ना नीलं नियच्छति ॥

मकोय, कठूमर, और कुटकी, १००–१०० पल (हरेक ६। सेर), लोह चूर्ण २ सेर तथा त्रिफला १२ सेर (हरेक ४ सेर) लेकर सबको कूटकर ९६ सेर पानी में पकावें; जब ४८ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें १२ सेर घी और निम्न लिखित ओषधियों का कल्क मिलाकर पकावें। जब सब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

कल्क—इन्द्रजौ, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, देवदारु, अमलतास, मालकंगनी, दन्ती, बावची, नागकेसर और कटैली। हरेक ६ तोले ८ माशे लेकर पानीकी सहायतासे खूब बारीक पीसलें।

इसके पीनेसे धातुगत और मालिश करनेसे त्वचागत कुष्ठ नष्ट होता है।

(३४९३) नीलिन्यादिघृतम्

(च. सं. । चि. अ. ५; वा. भ. । चि. अ. १४)

नीलिनीं त्रिवृतां रास्नां बलां कटुकरोहिणीम् ।
पचेद्विडङ्गं व्याघ्रीञ्च पालिकानि जलाढके ॥
तेन पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
दध्नः प्रस्थेन संयोज्य सुधाक्षीरपलेन च ॥
ततो घृतपलं दद्याद्यवागूमण्डमिश्रितम् ।
जीर्णे सम्यग्विरिक्तश्च भोजयेद्रसभोजनम् ॥

गुल्मकुष्ठोदरव्यङ्गशोफपाण्ड्वामयज्वरान् ।
श्वित्रं प्लीहानमुन्मादं घृतमेतद्व्यपोहति ॥

नीलकीजड़, निसोत, रास्ना, खरैंटी, कुटकी, बायबिड़ंग और कटैली ५-५ तोले लेकर सबको ८ सेर पानीमें पकावें। जब २ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें २ सेर घी, २ सेर दही, तथा १० तोले सेंड (सेहुंड-थोहर) का दूध मिलाकर पुनः पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छानलें।

इसमें से ५ तोले घृत यवागू या मण्डमें मिलाकर पिलावें और विरेचन होनेके बाद पथ्य भोजन करावें।

इसके सेवनसे गुल्म, कुष्ठ, उदररोग, व्यङ्ग, शोथ, पाण्डु, ज्वर, श्वेतकुष्ठ, प्लीहा और उन्मादादि रोग नष्ट होते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा—१ तोला)

(३४९४) नीलीघृतम्

(वं. से. । कुष्ठ.; ग. नि. । घृता.)

त्रिफलाढकं तथा प्रस्थावयसोरजसो मतौ ।
वायसीकाकमाचीभ्यां द्वे तुले शङ्खिनी तुला ॥
द्वि द्रोणेऽपां पचेदेतत्पादभागावशेषितम् ।
घृतप्रस्थं तु विपचेद्गर्भे चैतत्समाचरेत् ॥
वरुणं वत्सकफलं त्र्यूषणं देवदारु च ।
निदग्धिकां भृङ्गराजं पारावतपदीमपि ॥
नीलकं नामविख्यातं घृतं कुष्ठविनाशनम् ।
श्वित्राणि रञ्जयेच्चैतत्पानाभ्यञ्जनयोजितम् ॥
पामाविचर्चिकासिध्मकिटभानि च नाशयेत् ॥

त्रिफला ४ सेर, लोहचूर्ण २ सेर, सफेद चौंटली, काकमाची (मकोय) और शङ्खिनी (श्वेत अपराजिता) हरेक ६। सेर लेकर सबको ६४ सेर पानीमें पकावें जब १६ सेर पानी शेष रहे तो छानलें। इसमें २ सेर घी और निम्न लिखित चीज़ोंका कल्क मिलाकर क्वाथ जलने तक पकावें।

कल्कद्रव्य—बरनेकी छाल, इन्द्रजौ, सोंठ, मिर्च, पीपल, देवदारु, कटेली, भंगरा, और माल कंगनी। सब समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे।

इसे पिलाने और इसकी मालिश करानेसे श्वेतकुष्ठ, पामा, विचर्चिका, सिध्म (छीप) और किटिभादि कुष्ठ नष्ट होते हैं।

(३४९५) नीलोत्पलादिघृतम्

(वृं. मा.; च. द. । योनि.)

नीलोत्पलोशीरमधूकयष्टी
द्राक्षाविदारीकुशपञ्चमूलैः ।
स्याज्जीवनीयैश्च घृतं विपक्वं
शतावरीकारसदुग्धमिश्रम् ॥
तच्छर्करापादयुतं प्रशस्त—
मसृग्दरे मारुतरक्तपित्तजे ।
क्षीणे बले रेतसि च प्रणष्टे
कृच्छ्रे च पित्तप्रभवे च गुल्मे ॥

नील कमल, खस, मुलैठी, द्राक्षा (मुनक्का), बिदारीकन्द, कुशकी जड़, काशकी जड़, शरकी जड़, दाभकी जड़ और ईखकी जड़, जीवन्ती, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, जीवक,

ऋषभक, मुदगपर्णी, माषपर्णी और मुलैठी । सब चीजें समान भाग मिश्रित १० तोले लेकर सबको पानीके साथ पीसकर कल्क बनावें । तत्पश्चात् १ सेर घी में यह कल्क, ४ सेर शतावरका रस और १ सेर दूध मिलाकर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो उसमें २० तोले खांड मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे सेवन करनेसे रक्त प्रदर, वात प्रधान रक्त-पित्त, मूत्र कृच्छ्र और पित्तज गुल्म नष्ट होता है ।

जिनका बल वीर्य नष्ट हो गया है उनके लिये यह घृत हितकारी है ।

(३४९६) न्यग्रोधादिघृतम्

(ग. नि. । कासा.)

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षशालप्रियङ्गुभिः ।
तालमस्तकजम्बूत्वक्प्रियालैश्च सपद्मकैः ॥
साश्वगन्धैः शृतात्क्षीराद्दध्याज्ञातेन सर्पिषा ।
शाल्योदनं क्षतोरस्कक्षीणशुक्रश्चमानवः ॥

बड़, गूलर, पीपल वृक्ष, पिलखन, और शाल वृक्ष । इन सबकी छाल तथा फूल प्रियङ्गु, तालमस्तक, जामनकी छाल, प्रियाल (चिरौंजीके वृक्ष) की छाल, पद्माक, और असगन्ध । सब चीजें समान भाग मिश्रित १ सेर लेकर अधकुटा करके सबको १६ सेर दूध और ६४ सेर पानीमें एकत्र मिलाकर पानी जलने तक मन्दाग्नि पर पकावें । तत्पश्चात् दूधको छानकर उसका दही जमादें और उससे घृत निकालें ।

उरःक्षत और शुक्रकी क्षीणता वाले रोगीको शाली चावलोंके भातमें यह घी डालकर खिलाना हितकारक है ।

(३४९७) न्यग्रोधाद्यं घृतम्

(भै. र.; धन्व. । स्त्री.)

न्यग्रोधाश्वत्थपार्थामृतवृष-
कटुकाप्लक्षजम्बूप्रियालाः ।
श्योनाकोदुम्बराख्या मधुक-
तरुबलावेतसं केन्दुनीपौ ॥
रोहीतं पीतसारं विधिविहि-
तहृतं सर्वमेषां तरूणाम् ।
प्रत्येकं बल्कलं तद्युगपल-
मखिलं क्षोदयित्वाभिषग्भिः ॥
क्वाथं द्रोणाम्भसातद्दृढविमल-
कटाहेऽपि पादावशेषम् ।
सर्पिः प्रस्थन्तु पाच्यं पचन-
कुशलिना मन्दमन्दानलेन ॥
प्रस्थं धात्रीरसानां विधिविहि-
तजलप्रस्थमेकञ्च शाले-
र्दत्त्वा त्र्यक्षन्तु कल्कं मधुक-
मपि मधोः पुष्पखर्जूरदार्वी-
जीवन्तीकाश्मरीणां फलमपि
युगलं क्षीरकाकोलियुग्मम् ।
रक्ताख्यं चन्दनं यत्तदपर-
ममलं काञ्चनं[1] शारिवा च
न्यग्रोधाद्यं घृतं वेतदेहं प्राप्यामृतायते ।
दुस्तरं प्रदरं हन्ति नीलं रक्तं सितासितम् ॥
योनिशूलकुक्षिशूलवस्तिशूलं सुदुस्सहम् ।

१—काञ्चनमिति पाठ भेदः

अङ्गदाहं योनिदाहमक्षिकुक्षिभवञ्च यम् ॥
मन्ददृष्टिमश्रुपातं तिमिरं वातसम्भवम् ।
आध्मानानाहशूलघ्नं वातपित्तप्रकोपजित् ॥
अम्लपित्तञ्च पित्तञ्च योनिरोगं विनाशयेत् ।
दृष्टिप्रसादजननं बलवर्णाग्निकारकम् ॥

बड़की छाल, पीपल वृक्षकी छाल, अर्जुनकी छाल, गिलोय, बासेकी जड़की छाल, कुटकी, पिलखनकी छाल, जामनकी छाल, प्रियाल (चिरौंजीके वृक्ष) की छाल, श्योनाक (अरलु) की छाल, गूलरकी छाल, महुवेकी छाल, बला (खरैंटी) की जड़की छाल, बेतस, तेंदूकी छाल, कदम्ब की छाल, रुहेड़े (रोहितक) की छाल, और अङ्कोल की छाल २-२ पल (१०-१० तोले) लेकर सबको कूट कर ३२ सेर पानीमें स्वच्छ कढ़ावमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

तत्पश्चात् यह क्काथ, २ सेर घी, २ सेर आमलेका रस, और २ से तण्डुलोदक[1] (चावलोंका धोवन) तथा निम्न लिखित चीजोंका कल्क एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब समस्त पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

कल्कद्रव्य—मुलैठी, महुवेके फूल, खजूर, दारुहल्दी, जीवन्ती और खम्भारीके फल, काकोली, क्षीरकाकोली, लाल चन्दन, सफेद चन्दन, नागकेसर और सारिवा । हरेक ३ कर्ष (३॥ तोले) लेकर पानीके साथ पीस लें ।

इसके सेवन से नीला, लाल, श्वेत और काला इत्यादि हर प्रकारका कष्टसाध्य प्रदर, योनिशूल, कुक्षिशूल, भयङ्कर बस्तिशूल, अङ्गदाह, योनिदाह, आंखोंकी जलन, कुक्षिदाह, दृष्टिकी मन्दता, अश्रुपात, वातज तिमिर रोग, आध्मान, आनाह, शूल, वातपित्त प्रकोप, अम्लपित्त और योनिरोग नष्ट हो कर बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती तथा दृष्टि स्वच्छ हो जाती है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

इति नकारादिघृतप्रकरणम् ।

अथ नकारादितैलप्रकरणम्

(३४९८) नताद्यं तैलम्

(वं. से. । स्त्रीरो.; वृं. मा.; भा. प्र.; ग. नि. । योनि.)

नतवार्त्ताकिनीकुष्ठसैन्धवामरदारुभिः ।
तैलप्रसाधितो धार्य्यः पिचुर्योनौ रुजापहः ॥

तगर, बनभंटा (बड़ी कटैली), कूठ, सेंधा और देवदारु का समान भाग मिश्रित कल्क १३ तोले ४ माशे । तिलका तैल २ सेर तथा उपरोक्त चीजोंका क्काथ ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और पानी जल जाने पर तैलको छानलें।

[1] —तण्डुलोदक बनानेकी विधि भारत भै. र. भा. १ के पृष्ठ ३५३ पर देखिये ।

इसमें फाया भिगोकर योनिमें रखनेसे योनि-शूल नष्ट होता है ।

(यह योग विप्लुता योनिमें हितकर है ।)

(३४९९) **नागबलातैलम्**

(वृ. नि. र.; भा. प्र.; वं. से.; ग. नि.; वृं. मा.; च. द. । वातरक्ता.)

शुद्धां पचेन्नागबलां तुलान्तु
जलार्मणे पादकषायशेषे ।
विस्राव्य तैलाढकमत्र दद्या-
दजापयस्तैलविमिश्रितन्तु ॥
नतस्य यष्टीमधुकस्य कल्कं
पृथक्पचेत्पञ्चपलं विपक्वम् ।
तद्वातरक्तं शमयत्युदीर्णं
बस्तिप्रदानेन हि सप्तरात्रात् ॥
पीतं दशाहेन करोत्यरोगं
तैलं स्मृतं नागबलाह्वमेतत् ॥

१ तुला (६। सेर) नागबला (गंगेरन) को ३२ सेर पानीमें पकावें जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें ८ सेर तैल, ८ सेर बकरीका दूध और ५-५ पल (२५-२५ तोले) तगर तथा मुलैठीका कल्क मिलाकर पुनः पकावें । जब समस्त पानी जल जाय तो तैलको छान लें ।

इसकी बस्ति देनेसे ७ दिनमें और इसे पिलानेसे १० दिनमें वातरक्त रोग नष्ट होता है ।

(३५००) **नागरादितैलम्**

(वृ. नि. र.; यो. र. । कर्ण.)

नागरसैन्धवमागधिमुस्ता-
हिङ्गुवचालशुनं तिलतैलम् ।
अर्कसुपक्वपलाशरसेन
कर्णरुजं बधिरं विनिहन्ति ॥

सोंठ, सेंधा नमक, पीपल, नागरमोथा, हींग, बच और ल्हसन समान भाग मिश्रित १० तोले लेकर पीसकर कल्क बनावें फिर २ सेर तिलके तैलमें ४-४ सेर आक और ढाक (पलाश) के पत्तोंका रस तथा यह कल्क मिलाकर समस्त रस जलने तक पकावें । तत्पश्चात् छान कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे कानमें डालनेसे कर्णपीड़ा और बधिरता नष्ट होती है ।

नोट--यदि आक और पलाशका स्वरस न मिले तो इनका काथ डालना चाहिये और उस दशामें कल्क १३ तोले ४ माशे लेना चाहिये ।

नागराद्यं यमकम्

(वृं. मा.; वृ. नि. र. । उदर.)

घृतप्रकरणमें देखिये ।

(३५०१) **नारायणतैलम्** (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २३)

स्योनाकः पाटला बिल्वं तर्कारी पारिभद्रकम् ।
अश्वगन्धा कण्टकारी प्रसारिणी पुनर्नवा ॥
श्वदंष्ट्रातिबला चैव बला च समभागिकी ।
पादशेषं जलद्रोणे कथितं परिस्रावयेत् ॥
ततश्चेमानि योज्यानि भेषजानि भिषग्वरैः ।
शतपुष्पा वचा मांसी दारु शैलेयकं बला ॥
पतङ्गं चन्दनं कुष्ठं तथान्यं रक्तचन्दनम् ।

करञ्जबीजांशुमती त्रिसुगन्धिपुनर्नवा ॥
रास्ना तुरङ्गगन्धा च सैन्धवं च दुरालभा ।
मञ्जिष्ठा सुरसा चैतत् प्रत्येकन्तु पलद्वयम् ॥
चूर्णं कृत्वा क्षिपेत्तत्र क्षिपेल्लाक्षारसाढकम् ।
शतावरीरसं चैव अजाक्षीरं चतुर्गुणम् ॥
दधितत्राढकं गव्यं तिलतैलं प्रयोजयेत् ।
सिद्धं तत्र प्रदद्येत ततो मङ्गलवाचनम् ॥
प्रतिष्ठेनं प्रतिष्ठाप्य नारायणमिति स्मृतम् ।
हन्ति वातविकारांश्च अपस्मारं ग्रहांस्तथा ॥
शिरोरोगान् कर्णरोगान् कुष्ठान्यष्टादशान्यपि ।
बन्ध्या च लभते पुत्रं षण्ढोऽपि पुरुषायते ॥
वृद्धो युवायते मूर्खो विद्याराधनतत्परः ।
नारायणमिदं तैलं कृष्णात्रेयेण भाषितम् ॥

अरलु, पाढल, बेलछाल, अरनी, नीमकी छाल, असगन्ध, कटेली, प्रसारणी, पुनर्नवा, गोखरु, कंघी और खरैंटी; सब चीजें समान भाग मिश्रित ६। सेर लेकर अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें। तत्पश्चात् उसमें ८ सेर लाखका रस, ८ सेर शतावरका रस, ३२ सेर बकरीका दूध, ८ सेर गायका दही, ८ सेर तिलका तैल और कल्क मिलाकर पकावें। जब क्वाथादि जल जाय तो तैलको छान लें।

कल्क—सोया, बच, जटामांसी, देवदारु, छरीला, खरैंटी, पतङ्गकाष्ठ, सफेद चन्दन, कूठ, लालचन्दन, करञ्जबीज, शालपर्णी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, पुनर्नवा, रास्ना, असगन्ध, सेंधा, धमासा, मजीठ और तुलसी। हरेक १० तोले लेकर पीस लें।

यह तैल वातव्याधि, अपस्मार, ग्रहदोष, शिरोरोग, कर्णरोग और १८ प्रकारके कुष्ठोंको नष्ट करता है।

इसके सेवनसे वन्ध्या स्त्री को पुत्र प्राप्त होता है, नपुंसक मनुष्य पौरुष युक्त, वृद्ध युवाके समान और मूर्ख विद्याप्राप्ति में तत्पर हो जाता है।

(नोट—लाखका रस बनानेकी विधि भा. भै. र. प्रथम भाग पृष्ठ ३५३ पर देखिये।)

(३५०२) [1]नारायणतैलम् (मध्यम)

(शा. ध. । म. अ. ९; वृ. नि. र.; च. द.; वृ. मा.; धन्व.; र. र.; भा. प्र. । वातव्या.; ग. नि. । तैला.)

अश्वगन्धा बला बिल्वं पाटला बृहतीद्वयम् ।
श्वदंष्ट्रातिबला निम्बः स्योनाकं च पुनर्नवा ॥
प्रसारिणीमग्निमन्थः कुर्याद्दशपलं पृथक् ।
चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत् ॥
तैलाढकेन संयोज्य शतावर्या रसाढकम् ।
क्षिपेत्तत्र च गोक्षीरं तैलात्तस्माच्चतुर्गुणम् ॥
शनैर्विपाचयेदेभिः कल्कैर्द्विपलिकैः पृथक् ।
कुष्ठैला चन्दनं मूर्वा वचामांसिससैन्धवैः ॥
अश्वगन्धा बला रास्ना शतपुष्पेन्द्रदारुभिः ।
पर्णीचतुष्टयेनैव तगरेणैव साधयेत् ॥
तत्तैलं नावनेऽभ्यङ्गे पाने बस्तौ च योजयेत् ।
पक्षघातं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं गलग्रहम् ॥
खञ्जत्वं बधिरत्वं च गतिभङ्गं गलग्रहम् ।

१.—च. द; वृ. मा.; धन्वं.; र. र.; ग. नि. और यो. चि. में कल्क द्रव्यों में खरैंटी और मूर्वाके स्थानमें शैलेय और पुनर्नवा लिखा है।

गात्रशोषेन्द्रियध्वंसे असृक्शुक्रे ज्वरे क्षये ॥
अण्डवृद्धिकुरण्डश्च दन्तरोगं शिरोग्रहम् ।
पार्श्वशूलञ्च पाङ्गुल्यं बुद्धिहानिश्च गृध्रसीम् ॥
अन्यांश्च विषमान्वातान् जयेत्सर्वाङ्गसंश्रयान् ।
अस्य प्रभावाद्वंध्यापि नारी पुत्रं प्रसूयते ॥
मर्त्यो गजो वा तुरगस्तैलाभ्यङ्गात्सुखी भवेत् ।
यथा नारायणो देवो दुष्टदैत्यविनाशनः ॥
तथैवं वातरोगाणां नाशनं तैलमुत्तमम् ॥

असगन्ध, खरैटी, बेलछाल, पाढल, कटेली, बड़ी कटेली, गोखरु, अतिबला (कंघी), नीमकी छाल, सोनापाठा (अरलु), पुनर्नवा, प्रसारिणी, और अरनी । हरेक १०-१० पल (५०-५० तोले) लेकर कूटकर सबको १२८ सेर पानीमें पकावें जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो काथको छान लें । तत्पश्चात् ८ सेर तिलका तैल, ८ सेर शतावरका रस, ३२ सेर गायका दूध, और निम्न लिखित कल्क तथा उपरोक्त काथको एकत्र मिलाकर पकावें । जब तैल मात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर सुरक्षित रक्खें ।

कल्क—कूठ, इलायची, सफेद चन्दन, मूर्वा, बच, जटामांसी, सेंधानमक, असगन्ध, खरैटी, रास्ना, सोया, देवदारु, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी और तगर । हरेक १० तोले लेकर सबको पानीके साथ पीस लें।

इस तैलकी नस्य लेने, मालिश करने, इसे पीने और बस्ति द्वारा प्रयुक्त करने से पक्षाघात, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, गलग्रह, खालित्य (गंज), बधिरता, गतिभङ्ग (चलते समय पैर अव्यवस्थित पड़ना), अंगोंका सूखना, इन्द्रियोंकी शक्तिका नष्ट होना, शुक्रके साथ रक्त आना, ज्वर, क्षय, अण्डवृद्धि, दन्तरोग, शिरोग्रह, पसलीका दर्द, पङ्गुता, बुद्धि की मन्दता, गृध्रसी, तथा अन्य कष्ट-साध्य वातज रोग नष्ट होते हैं । इसके प्रभावसे वन्ध्या स्त्रीके भी पुत्र उत्पन्न होता है । इसकी मालिश न केवल मनुष्योंके लिए अपितु हाथी और घोड़ों के लिये भी हितकारी है ।

(३५०३) **नारायणतैलम्** (मध्यम) (३)

(भै. र. । वा. व्या.)

बिल्वाश्वगन्धाबृहतीश्वदंष्ट्रा
श्योनाकवाट्यालकपारिभद्रम् ।
क्षुद्राकठिल्लातिबलाग्निमन्थं
मूलानि चैषां सरणीयुतानाम् ॥
मूलं विदध्यादथ पाटलीनां
प्रस्थं सपादं विधिनोद्धृतानाम् ।
द्रोणैरपामष्टभिरेव पक्त्वा
पादावशेषेण रसेन तेन ॥
तैलाढकाभ्यां सममेव दुग्ध-
मार्जं निदध्यादथ वापि गव्यम् ।
एकत्र सम्यग्विपचेत्सुबुद्धि-
र्दद्याद्रसञ्चैव शतावरीनाम् ॥
तैलेन तुल्यं पुनरेव तत्र
रास्नाश्वगन्धामिषिदारुकुष्ठम् ।
पर्णीचतुष्कागरुकेसराणि
सिन्धूत्थमांसीरजनीद्वयञ्च ॥
शैलेयकं चन्दनपुष्कराणि
एलास्रयष्टीतगराब्दपत्रम् ।
भृङ्गाष्टवर्गाम्बुवचापलाशं
स्थौणेयवृश्चीरकचोरकाख्यम् ॥

एतैः समस्तैर्द्विपलप्रमाणै-
रालोड्य सर्वं विधिना विपक्वम् ।
कर्पूरकाश्मीरमृगाण्डजानां
चूर्णीकृतानां त्रिपलप्रमाणम् ॥
प्रस्वेददौर्गन्ध्यनिवारणाय
दद्यात् सुगन्धाय वदन्ति केचित् ।
नारायणं नाम महच्च तैलम्
सर्वप्रकारैर्विधिवत्प्रयोज्यम् ॥
आश्वेव पुंसां पवनार्दिताना-
मेकाङ्गहीनार्दितवेपनानाम् ।
ये पङ्गवः पीठविसर्पिणश्च
बाधिर्यशुक्रक्षयपीडिताश्च ॥
मन्याहनुस्तम्भशिरोरुजार्ता
मुक्तामयास्ते बलवर्णयुक्ता ।
संसेव्य तैलं सहसा भवन्ति
वन्ध्या च नारी लभते च पुत्रम् ॥
वीरोपमं सर्वगुणोपपन्नं
सुमेधसं श्रीविनयान्वितञ्च ।
शाखाश्रिते कोष्ठगते च वाते
वृद्धौ विधेयं पवनार्दितानाम् ॥
जिह्वानिले दन्तगते च शूले
उन्मादकौब्ज्यज्वरकर्षितानाम् ।
प्राप्नोति लक्ष्मीं प्रमदाप्रियत्वं
वपुःप्रकर्षं विजयञ्च नित्यम् ॥
तैलोपसेवी जरयाभिमुक्तो
जीवेच्चिरञ्चापि भवेद् युवेव ।
देवासुरे युद्धपरे समीक्ष्य
स्नाय्वस्थिभग्नानसुरैः सुरांश्च ॥
नारायणेनापि सुबृंहणार्थं
स्वनामतैलं विहितञ्च तेषाम् ॥

बेलकी जड़की छाल, असगन्धकी जड़, बड़ी कटेलीकी जड़, गोखरुकी जड़, अरलुकी जड़की छाल, खरैटीकी जड़, फरहद (या नीम) की जड़की छाल, कटेलीकी जड़, पुनर्नवाकी जड़, अतिबला (कंघी) की जड़, अरणीकी जड़की छाल, प्रसारणी, और पाढलकी जड़की छाल १।-१। प्रस्थ (हरेक १। सेर) लेकर कूटकर सबको २५६ सेर पानीमें पकावें। जब ६४ सेर पानी शेष रह जाय तो काथको छान लें और उसमें १६ सेर तिलका तैल, १६ सेर बकरी या गायका दूध, १६ सेर शतावरका रस और निम्न लिखित कल्क मिलाकर पकावें ।

कल्कद्रव्य—रास्ना, असगन्ध, सौंफ, देवदारु, कूठ, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, अगर, नागकेसर, सेंधानमक, जटामांसी, हल्दी, दारुहल्दी, भूरिछरीला, सफेद कन्दन, पोखरमूल, इलायची, मजीठ, तगर, नागरमोथा, तेजपात, भंगरा, जीवक, ऋषभक, (दोनोंके अभावमें विदारीकन्द), मेदा, महामेदा (दोनोंके अभावमें शतावर), काकोली, क्षीरकाकोली, (अभावमें असगन्ध), ऋद्धि, वृद्धि (दोनोंके अभावमें बाराहीकन्द), सुगन्धबाला, बच, पलाश (ढाक)की जड़की छाल, गठीवन, श्वेतपुनर्नवा और चोरक। प्रत्येक १०-१० तोले लेकर चूर्ण करें ।

उपरोक्त काथादि और इस कल्कको एकत्र मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान कर उसमें सुगन्ध के लिये कपूर, केसर और कस्तूरी, हरेक ५-५ तोले मिला दें ।

यह तैल समस्त वातव्याधियोंको नष्ट करता

है । एकाङ्गवात, अर्दित (लकवा), गात्रकम्पन, पङ्गुता, पीठविसर्पिता, (लुलापन), बधिरता, शुक्र-क्षय, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, और शिरोरुजा, इत्यादि रोग इसके सेवन से शीघ्र ही नष्ट होकर बल वर्णादिकी वृद्धि होती है। इसके सेवनसे बन्ध्या स्त्रीको सर्वगुण मेधा और विनय सम्पन्न वीरपुत्र प्राप्त होता है ।

यह तैल शाखा और कोष्ठगत वायु, अण्ड-वृद्धि, जिह्वागतवायु, दन्तशूल, कुब्जता, उन्माद और वातज्वरको भी नष्ट करता है।

इस तैलको सेवन करनेवाला मनुष्य वृद्धा-वस्था रहित और प्रकृष्ट शरीर तथा सौन्दर्य-युक्त एवं कामनी-प्रिय होकर दीर्घ काल तक युवावत् जीवित रहता है ।

(३५०४) **नारायणतैलम्** [१] (महा) (४)

(भै. र; च. द.; वृ. मा । वात.)

शतावरी चांशुमती पृश्निपर्णी शठी वचा ।
एरण्डस्य च मूलानि बृहत्योः पूतिकस्य च ॥
गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च ।
एषां दशपलान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
पादावशेषे पूते च गर्भश्चैनं निधापयेत् ।
पुनर्नवा वचा दारु शताह्वा चन्दनागुरुः ॥
शैलेयं तगरं कुष्ठमेला मांसी स्थिरा बला ।
अश्वाह्वा सैन्धवं रास्ना पलार्द्धानि च योजयेत्॥
गव्याजपयसोः प्रस्थौ द्वौ द्वावत्र प्रदापयेत् ।
शतावरीरसप्रस्थं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥

[१] किसी किसी ग्रन्थमें इसका नाम "मध्यम विष्णुतैल" लिखा है ।

अस्यतैलस्य पक्वस्य शृणु वीर्यमतः परम् ।
अश्वानां वातभग्नानां कुञ्जराणां नृणां तथा ॥
तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातनिवारणम् ।
अपुमांश्च नरः पीत्वा निश्चयेन दृढो भवेत् ॥
गर्भमश्वतरी विन्द्यात्किं पुनर्मानुषी तथा ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च तथैवार्द्धावभेदकम् ॥
अपचीं गण्डमालाञ्च वातरक्तं हनुग्रहम् ।
कामलापाण्डुरोगञ्च अश्मरीञ्चापि नाशयेत् ॥
तैलमेतद्भगवता विष्णुना परिकीर्त्तितम् ।
नारायणमिदं ख्यातं वातान्तकरणं मतम् ॥

शतावर, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, कचूर, बच, अरण्डमूल, कटेली, कटेला, करञ्जकी जड़, अति-बला (कंघी) की जड़ और कटसरैयाकी जड़ । हरेक १०-१० पल (५०-५० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें ४-४ सेर गाय और बकरीका दूध, २ सेर शता-वरका रस, २ सेर दूध, २ सेर तैल और नीचे लिखा कल्क मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो तैलको छान लें ।

कल्क—पुनर्नवा, बच, देवदारु, सोया, सफेद चन्दन, अगर, छरीला, तगर, कूठ, इला-यची, जटामांसी, शालपर्णी, बला (खरैटी), अस-गन्ध, सेंधानमक और रास्ना । हरेक २॥-२॥ तोले लेकर चूर्ण कर लें ।

यह तैल घोड़े, हाथी और मनुष्यों के वात विकारोंको नष्ट करता है । इसे पीने से पुरुषत्व हीन मनुष्य पौरुष युक्त हो जाता है, वन्ध्याको

पुत्रकी प्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त यह हृदय-शूल, पार्श्वशूल, अर्धावभेदक (आधासीसी), अपची, गण्डमाला, वातरक्त, हनुग्रह, कामला, पाण्डु और अश्मरी इत्यादि रोगोंको भी नष्ट करता है।

(३५०५) **निम्बतैलम्** (१)

(वै. म. । पटल ११)

निम्बच्छदस्वरससाधितमर्कदुग्ध-
रक्ताश्वमारमुकुलोषणकल्कसिद्धम् ।
तैलं निहन्ति सहसैव समस्तपामाम् ॥

नीमके पत्तोंका स्वरस ८ सेर, सरसोंका तैल २ सेर, आकका दूध, लाल कनेरकी जड़, दन्ती-मूल और काली मिर्च का कल्क २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर रस जलने तक पकावें।

यह तैल पामा को नष्ट करता है।

(३५०६) **निम्बतैलम्** (२)

(यो. त. । त. ६८)

मनःशिलालभल्लातसूक्ष्मैलागुरुचन्दनैः ।
जातीपल्लवयुक्तैश्च निम्बतैलं विपाचयेत् ॥
वल्मीकं नाशयेच्चाद्धि बहुच्छिद्रं बहुद्रवम् ॥

मनसिल, हरताल, भिलावा, छोटी इलायची, अगर, सफेद चन्दन और चमेलीके पत्ते समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे, नीमका तैल २ सेर और उपरोक्त चीज़ोंका क्वाथ ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और पानी जल जाने पर तैलको छान लें।

यह तैल बहुत छिद्रों वाले तथा अत्यधिक स्राव वाले वल्मीक (क्षुद्ररोगान्तर्गत पिड़िका विशेष) को नष्ट करता है।

(३५०७) **निम्बतैलयोगः**

(वृं. मा.; वृ. नि. र. । क्षुद्र.; ग. नि. । रसाय.)

निम्बस्य तैलं प्रकृतिस्थमेव
नस्यं विधेयं विधिना यथावत् ।
मासेन गोक्षीरभुजो नरस्य
चिरात्मभूतं पलितं निहन्ति ॥

१ मास तक नीमके तैलकी नस्य लेने और केवल गायका दूध पीनेसे बहुत पुराना पलित रोग (बालोंका सफेद होना) भी नष्ट हो जाता है।

(३५०८) **निम्बबीजतैलम्**

(वं. से.; वृं. मा. । क्षुद्र.)

निम्बस्य बीजानि हि भावितानि
भृङ्गस्य तोयेन तथाऽशनस्य ।
तैलञ्च तेषां विनिहन्ति नस्या-
द्दुग्धान्नभोक्तुः पलितं समूलम् ।

नीमके बीजोंको भंगरे के स्वरस और असना वृक्षके क्वाथकी अनेक भावनाएं देकर उनका तैल निकलवा लीजिये। इस तैलकी नस्य लेने और केवल दूध भात पर रहनेसे पलितरोग समूल नष्ट हो जाता है।

निरामिषमहामाषतैलम्

(भै. र.)

महामाषतैलम् (निरामिष) देखिए।

(३५०९) **निर्गुण्डीतैलम्** (१)

(वै. म. र. । प. ३)

निर्गुण्डीस्वरसे भृतं तिलभवं भृङ्गादिचूर्णान्विते । पात्रे निःसृतमन्वहं दिनमुखे तन्मात्रया यः पिबेत्॥ कासश्वासमशेषमग्नितनुतां शीघ्रं जयेन्मासतो । यक्ष्माणञ्च समस्तरोगनिलयं रामो यथा रावणम्॥

निर्गुण्डी (संभालु) का स्वरस ८ सेर, तिलका तेल २ सेर और भंगरेका कल्क १० तो. लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो तैलको छान लें ।

इसे प्रातःकाल यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे खांसी, श्वास, अग्निमांद्य, और यक्ष्मादि रोग एक मासमें ही नष्ट हो जाते हैं ।

(मात्रा—६ माशेसे १ तोला तक । अनुपान—उष्ण जल ।)

(३५१०) **निर्गुण्डीतैलम्** (२)

(वैद्यामृत । अलं. २)

निर्गुण्डीकारसात्प्रस्थं प्रस्थं मार्कवजाद्रसात् । रसाद्धत्तूरजात्प्रस्थं गोमूत्रं प्रस्थसम्मितम् ॥ वचा कुष्ठं हेमबीजं तेजाह्वा कटफलं तथा । पलार्द्धांशानि सर्वैस्तु वत्सनागः समो मतः ॥ तैलप्रस्थं पचेद्युक्त्या वातरोगेषु शस्यते । हेमन्ते हरिणाक्षीणां गाढमालिङ्गनं यथा ॥

संभालुका स्वरस २ सेर, भंगरेका रस २ सेर, धतूरेका रस २ सेर, गोमूत्र २ सेर और तिलका तैल २ सेर तथा निम्न लिखित चीजोंका कल्क लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब रस जल जाय तो तैल को छान लें ।

कल्कद्रव्य—बच, कूठ, धतूरेके बीज, मालकंगनी और कायफल आधा आधा पल (२॥-२॥ तोले) तथा बछनाग इन सबके बराबर ।

यह तैल वातव्याधियों को नष्ट करता है ।

(३५११) **निर्गुण्डीतैलम्** (३)

(र. र.; भै. र.; वं. से. । कर्ण.)

निर्गुण्डीस्वरसैस्तैलं सिन्धुधूमरजोगुडः । पूरणात्पूतिकर्णस्य शमनो मधुसंयुतः ॥

संभालुका स्वरस ४ सेर, सेंधानमक, घरका धुवां और गुड़ समान भाग मिश्रित ५ तोले तथा तिलका तैल १ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो तैलको छान लें ।

इसमें शहद मिलाकर कानमें भरनेसे पूतिकर्ण रोग नष्ट होता है ।

(३५१२) **निर्गुण्डीतैलम्** (४)

(वृ. यो. त. । त. १०८; वृ. नि. र.; भै. र.; वं. से.; यो. र.; च. द.; वृं. मा. । गण्डमा.; ग. नि. । ग्रन्थ्य.)

निर्गुण्डीस्वरसेनाथ लाङ्गलीमूलकल्कितम् । तैलं नस्येन हन्त्याशु गण्डमालां सुदुस्तराम् ॥

संभालुके स्वरस और लाङ्गली (कलिहारी) की जड़के कल्क से सिद्ध तैलकी नस्य लेनेसे कष्ट साध्य गण्डमाला भी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(रस ४ सेर, तैल १ सेर और कल्क ५ तोले लें ।)

(३५१३) **निर्गुण्डीतैलम्** (५)

(र. र.; च. द.; धन्व.; भै. र.; ग. नि.; वृ. मा. । नाडीव्रणा.; यो. त. । त. ६०)

समूलपत्रां निर्गुण्डीं पीडयित्वा रसेन तु ।
तेन सिद्धं समं तैलं नाडीदुष्टव्रणापहम् ॥
हितं पामापचीनाञ्च पानाभ्यञ्जननावनैः ।
विविधेषु च स्फोटेषु तथादुष्टव्रणेषु च ॥

मूल और पत्र सहित संभालूको कूटकर ४ सेर रस निकालें, और इसमें १ सेर तिल का तैल मिलाकर तैलमात्र शेष रहने तक पकावें ।

इसको पीने तथा इसकी नस्य लेने और मालिश करनेसे दुष्ट नाड़ी व्रण (नासूर), पामा, अपची (गण्डमाला भेद) और विस्फोटक नष्ट होते हैं ।

(३५१४) **निर्गुण्ड्यादितैलम्** (१)

(वृ. नि. र.; यो. र. । कर्ण.)

निर्गुण्डिजातिरविभृङ्गरसोनरम्भा–
कार्पासशिग्रुसुरसार्द्रककारवेल्यः ।
एषां रसे तिलभवं सविषं सुकर्ण—
बाधिर्यनादकृमिवेदनपूयमुक्ते ॥

संभालु, चमेली, अर्क, भंगरा, ल्हसन, केला, कपास, सहंजना, तुलसी, अदरक और करेले में से जिनका स्वरस मिल सके उनका स्वरस और शेषका काथ समान भाग मिलाकर ४ सेर लें । अथवा सब चीजें समान भाग मिश्रित २ सेर लेकर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहनेपर छान लें । तत्पश्चात् इस काथ या उपरोक्त स्वरसों में १ सेर तिलका तैल और १० तोले वछनाग (मीठा तेलिया) का चूर्ण मिलाकर पानी जलने तक पकावें ।

इसे कानमें डालनेसे बधिरता, कर्णनाद, कृमि और कर्णपीड़ा तथा कर्णस्राव नष्ट होता है ।

नोट—यदि सब चीज़ोंका काथ ही डालना हो तो वछनाग ६ तोले ८ माशे डालना चाहिये।

(३५१५) **निर्गुण्ड्यादितैलम्** (२)

(रा. मा. । शिरो.)

निर्गुण्डीलाङ्गलिकार्कसाधितं हन्ति तैलमभ्यङ्गात्
शिरसोरुजः समग्रा यदि वाऽपामार्गबीजसंसिद्धम् ॥

संभालु, कलिहारी और आकके कल्क और काथ से पका हुवा तैल मलनेसे या चिरचिटेके बीजोंके कल्कसे सिद्ध तैलकी मालिश करनेसे समस्त प्रकारके शिरशूल नष्ट होते हैं ।

(कल्क १३ तोले ४ माशे । तिलका तैल २ सेर । काथ ८ सेर । एकत्र मिलाकर पकावें । यदि अपामार्ग के बीजोंसे तैल पाक करना हो तो बीजोंका कल्क २० तो. पानी ८ सेर और तेल २ सेर लेना चाहिये ।)

(३५१६) **निशादितैलम्** (१)

(भै. र.; च. द.; वं. से.; ग. नि.; धन्व. । भगन्दर.)

निशार्कक्षीरसिन्धूग्निपुराश्वहनवत्सकैः ।
सिद्धमभ्यञ्जने तैलं भगन्दरविनाशनम् ॥

हल्दी, आकका दूध, सेंधानमक, चीता, गूगल, कनेरकी जड़ और कुड़ेकी छाल के कल्क

और काथसे सिद्ध तैल लगानेसे भगन्दर नष्ट हो जाता है ।

(सब चीजोंका समान भाग मिश्रित कल्क १३ तो. ४ माशे, काथ ८ सेर, तैल २ सेर ।)

(३५१७) **निशादितैलम्** (२)

(वृ. मा. । बाल.)

नाभिपाके निशालोध्रप्रियङ्गुमधुकैः शृतम् ।
तैलमभ्यञ्जने शस्तमेभिर्वाऽप्यवचूर्णितम् ॥

बालककी नाभि पक जाय तो हल्दी, लोध, फूल प्रियंगु और मुलैठी के कल्क और काथसे सिद्ध तैल या इन्हीं चीजोंका चूर्ण लगाना चाहिये।

(तैल पाकके लिये—सब चीजोंका समान भाग मिश्रित कल्क १३ तो. ४ माशे, काथ ८ सेर, तैल २ सेर ।)

(३५१८) **निशाद्यं तैलम्**

(भै. र.; धन्व. । कर्ण.)

निशागन्धपले पक्वं कटुतैलं पलाष्टकम् ।
धुस्तूरपत्रजरसे कर्णनाडीजिदुत्तमम् ॥

हल्दी और गन्धकका कल्क २॥–२॥ तोले, सरसोंका तैल १ सेर तथा धतूरेका रस ४ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर रस जलने तक पकावें।

इसे कानमें डालनेसे कर्णनाड़ी (नासूर) नष्ट होता है ।

(३५१९) **नीलसहचराद्यं तैलम्**

(ग. नि. । तैला.)

तुलां धृतां नीलसहाचरस्य
संक्षुद्य द्रोणे श्रपयेज्जलस्य ।
दत्त्वा चतुर्भागरसेन तेन
तैलं पचेदर्द्धपलप्रयुक्तैः ॥
कल्कैरनन्ताखदिरेरिमेद–
जम्ब्वाम्रयष्टीमधुकोत्पलानाम् ।
तत्तैलमाश्वेव धृतं मुखेन
स्थैर्यं द्विजानां बलतां विदध्यात् ॥

नीले फूलकी कटसरैया ६। सेर लेकर अध-कुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें, जब ८ सेर पानी रह जाय तो छानकर उसमें २ सेर तिलका तैल और २॥–२॥ तोले अनन्तमूल, खैर सार, इरिमेद (दुर्गन्धित खैर), जामन और आमकी छाल, मुलैठी, और नीलकमल का कल्क मिलाकर पकावें ।

इस तैलको मुखमें धारण करनेसे (दांतों पर लगाने या इसके गण्डूष धारण करनेसे) हिलते हुवे दांत स्थिर हो जाते हैं ।

(३५२०) **नीलीतैलम्**

(सु. सं. । चि. अ. २५; र. र. रसा. खं. । उपदे. ५; ग. नि. । तैला.)

नीलीदलं भृङ्गरजोऽर्जुनत्वक्
पिण्डीतकं कृष्णमयोरजश्च ।
बीजोद्भवं साहचरञ्च पुष्पं
पथ्याक्षधात्रीसहितं विचूर्ण्य ॥
एकीकृतं सर्वमिदं प्रमाय
पङ्केन तुल्यं नलिनीभवेन ।
संयोज्य पक्षं कलशे निधाय
लोहे घटे सद्मनि सपिधाने ॥
अनेन तैलं विपचेद्विमिश्रं

रसेन भृङ्गत्रिफलाभवेन ।
आसन्नपाके च परीक्षणार्थं
पक्षं बलाकाभवमाक्षिपेच्च ॥
भवेद् यदा तद् भ्रमराङ्गनीलं
तदा विपक्कं विनिधाय पात्रे ।
कृष्णायसे मासमवस्थितं तद्
अभ्यङ्गयोगात् पलितानि हन्यात् ॥

नीलके पत्ते, भंगरा, अर्जुनकी छाल, तगर (अथवा काला मैनफल), लोहचूर्ण, बिजयसार, कटसरैयाके फूल, हर्र, बहेड़ा और आमला समान भाग लेकर चूर्ण करके उसमें उसके बराबर कमलकी जड़के नीचेकी कीचड़ मिलाकर लोहेके कलसे में भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें, और १५ दिन पश्चात् निकालकर उसके कल्क और भंगरे तथा त्रिफलाके काथके साथ तैल पकावें। जब पाक तैयार होने वाला हो तो उसमें बगलेका पंख डालकर देखें, यदि काला हो जाय तो तैलको तैयार समझें और उसे लोहके पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रखदें। एक मास पश्चात् छानकर काममें लावें। इसे बालों में लगानेसे सफेद बाल काले हो जाते हैं।

(कल्क १३ तो. ४ माशे, तैल २ सेर, भंगरे और त्रिफलेका काथ ४-४ सेर।)

(३५२१) नीलोत्पलादितैलम्

(वृ. नि. र. । शिरो.)

नीलोत्पलकणायष्टिचन्दनं पुण्डरीककम् ।
प्रतिनिष्कचतुष्कं स्यात्तैलं स्यात्षोडशं पलम् ॥
चतुःषष्टिपलं धात्रीफलानां रसमाहरेत् ।
पचेत्तैलावशेषन्तु नस्येनाभ्यञ्जनेन वा ॥
योज्यं हन्ति शिरस्तोदं पलितं च विनाशयेत् ॥

नीलकमल, पीपल, मुलैठी, सफेद चन्दन, और पुण्डरीक (पुण्डरिया) का कल्क ५-५ तोले, तेल २ सेर और आमलेके फलोंका रस ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब समस्त रस जल जाय तो तैलको छानलें।

इसकी मालिश करने और नस्य लेनेसे शिरपीड़ा तथा पलित रोग नष्ट होता है।

(३५२२) नीलोत्पलाद्यं तैलम्

(वं. से. । नेत्र.)

नीलोत्पलं मधुकनागरपुण्डरीक-
द्राक्षासुयष्टिमधुकांशुमतीकणांश्च ।
कण्टारिकामलकशावरचोग्रगन्धा—
कासीसशर्करबलावृषभाश्च रास्ना ॥
मञ्जिष्ठया सह समैरपि सूक्ष्मपिष्टै—
स्तैलं पचेत्तु पयसा च चतुर्गुणेन ।
नस्यं नृणां तिमिरकाचनिशान्ध्ययुक्तान्
पाकात्ययान्सपटलार्जुननीलिकांश्च ॥
पिल्लार्बुदार्मरुधिरस्रुतिवर्त्मकण्डून्
स्पन्दं जयेद्विहितभोजनभङ्गुराणाम् ।
बाधिर्यमर्दितहनुग्रहदन्तचालं
नासास्यपूयगलगण्डकृकाटिकार्त्तान् ॥
कर्णाक्षिशूलदशनामयशीर्षरोगाञ्छि—
द्यामयाञ्जयति कण्ठगतांश्च सर्वान् ।
अभ्यञ्जनेन नियतं शिरसि प्रयत्नात्
सर्वाञ्जिहन्ति वदनाक्षिशिरोविकारान् ॥

नीलकमल, महुवेके फूल, सोंठ, पुण्डरीक (सफेद कमल), दाख (मुनक्का), मुलैठी, शालपर्णी, पीपल, कटेली, आमला, लोध, बच, कसीस, खांड, खरैटी, बासा, रास्ना, और मजीठ; सब समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर पानीके साथ महीन पीसकर कल्क बनावें। फिर २ सेर तिलका तैल, ८ सेर दूध और यह कल्क एकत्र मिलाकर पकावें। जब समस्त दूध जल जाय तो तैलको छानलें।

इसकी नस्य लेने और शिरपर मालिश करने से तिमिर, काच, नक्तान्ध्यता, (रतौंधा) पाकात्यय, पटल, अर्जुन, नीलिका, पिल्ल, अर्बुद, अर्म, रुधिर-स्राव, पलकोंकी खाज, आंख फरकना, बधिरता, अर्दित (लकवा), हनुग्रह, दांतोंका हिलना, नाक या मुखसे पीपजाना, गलगण्ड, गर्दनके पिछले भाग (गुद्दी) की पीड़ा, कर्णशूल, नेत्रशूल, दन्तरोग, शिरोरोग, जिह्वारोग और कण्ठरोगों, का नाश होता है।

(३५२३) नील्यादितैलम्

(वै. म. र. । पट. ११)

नीलीभूमिकदम्बानां मूले सिद्धं तिलोद्भवम् ।
कक्षाविद्रधिवीसर्पहरं स्याल्लेपनेन तत् ॥

नील और भूमिकदम्बकी जड़ के कल्कसे सिद्ध तैल लगानेसे कक्षा, विद्रधि, और विसर्प नष्ट होता है।

(हरेक वस्तु ५ तोले, तिलका तैल १ सेर, पानी ४ सेर। मिलाकर पकावें)

(३५२४) नृपवल्लभतैलम्

(वं. से.; भै. र.; धन्वं.; च. द. । नेत्ररो.)

जीवकर्षभकौ मेदे द्राक्षांशुमतीनिदग्धिकाबृहती।
मधुकं बला विडङ्गं मञ्जिष्ठा शर्करा रास्ना ॥
नीलोत्पलं श्वदंष्ट्रा प्रपौण्डरीकं पुनर्नवा लवणम्।
पिप्पल्यः सर्वेषां भागैरक्षांशिकैः पिष्टैः ॥
तैलं वा यदि सर्पिर्दत्त्वा क्षीरं चतुर्गुणं पक्वम् ।
आत्रेय निर्मितमिदं तैलं नृपवल्लभनाम्ना ॥
तिमिरं पटलं काचं नक्तान्ध्यमर्बुदं तथान्ध्यञ्च।
श्वेतञ्च लिङ्गनाशं नाशयति नीलिकाव्यङ्गम् ॥
मुखनासादौर्गन्ध्यं पलितञ्चाकालजं हनुस्तम्भम्।
श्वासं कासञ्च हिक्कां शोषं स्तम्भं तथान्यांश्च ॥
मुखजैह्म्यमर्द्धभेदं रोगं बाहुग्रहं शिरःस्तम्भम्।
रोगानथोर्ध्वजत्रोः सर्वानचिरेण नाशयति ॥

कल्कद्रव्य—

जीवक[1], ऋषभक[1], मेदा[2], महामेदा[2], दाख (मुनक्का), शालपर्णी, कटेली, बड़ीकटेली (कटेला), मुलैठी, खरैटी, बायबिडंग, मजीठ, खांड, रास्ना, नीलकमल, गोखरु, प्रपौण्डरीक (पुण्डरिया), पुनर्नवा, सेंधानमक, और पीपल। सब १।-१। तोला लेकर पानीके साथ पीस लें। तत्पश्चात् २ सेर तैल या घी और ८ सेर दूध तथा यह कल्क एकत्र मिलाकर पकावें। दूध जल जाने पर स्नेह (घृत या तैल) को छान लें।

यह तैल तिमिर, पटल, काच, नक्तान्ध्य

१ अभावमें शतावर।
२ अभावमें विदारीकन्द।

(रतौंधा) अर्बुद, अन्धता, लिङ्गनाश, इत्यादि नेत्ररोग तथा मुखकी नीलिका, व्यङ्ग (झांई), मुख और नाककी दुर्गन्ध, पलित, हनुस्तम्भ, श्वास, खांसी, हिचकी, शोष, शरीरका स्तम्भ अर्दित (लकवा), अर्द्धावभेद (आधासीसी), भुजाका जकड़ जाना, शिरका स्तम्भ, एवं गलेसे ऊपर के अन्य समस्त रोगोंको नष्ट करता है ।

(इसे नस्य, पान और मर्दन द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये ।)

इति नकारादितैलप्रकरणम् ।

अथ नकाराद्यासवप्रकरणम्

(३५२५) **नारिकेलासवः**

(ग. नि. । आसवा.)

नालिकेरोदकं चैव द्रोणमात्रं प्रदापयेत् ।
इक्षोरसस्य द्रोणार्धं शाल्मल्या रसमस्थकम् ॥
दशमूलरसस्यापि प्रस्थमात्रं तथैव च ।
घृतभाण्डे विनिक्षिप्य मध्ये चूर्णं निवेशयेत् ॥
चातुर्जातकधातक्यो पलान् षोडशसंख्यया ।
शाणमात्रा तु कस्तूरी केशरं तगरं तथा ॥
चन्दनं देवपुष्पं च पलमात्रं पृथक् पृथक् ।
मासादूर्ध्वं पिबेत्प्राज्ञ रूपे कामसमो भवेत् ॥
वृद्धोऽपि तरुणीं गच्छेत् षण्ढोऽपि पुरुषायते ।
बलीपलितसन्त्यक्तः शतायुश्च भवेन्नरः ॥
नारिकेलासवः प्रोक्तः शम्भुना परमेष्ठिना ॥

नारयलका पानी ३२ सेर, ईखका रस १६ सेर, सैंभलका रस २ सेर और दशमूलका क्वाथ २ सेर । तथा चातुर्जात (दाल चीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसर समान भाग मिश्रित) और धायके फूलोंका चूर्ण १-१ सेर, कस्तूरी ५ माशे, केसर, तगर, सफेद चन्दन और लौंग का चूर्ण ५-५ तोले । सबको एकत्र मिलाकर घृतसे चिकने किये हुवे मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और एक मास पश्चात् निकालकर छान लें ।

इसके सेवनसे बलिपलित नष्ट होकर कामदेवसदृश रूप हो जाता है तथा वृद्ध पुरुष भी युवाके समान युवतीसमागम कर सकता है । नपुंसक मनुष्यमें पुनः पुरुषत्व आ जाता है ।

नोट—केसर और कस्तूरी पहिले न डालकर आसव तैयार हो जानेके बाद सुरा (रेक्टीफाइड स्पिरट) में मिलाकर डालनी चाहिये ।

इति नकाराद्यासवप्रकरणम् ।

अथ नकारादिलेपप्रकरणम्

(३५२६) **नरास्थिलेपः**

(वै. म. र. । पट. ६)

नरास्थिचूर्णं स्तन्येन कांस्ये घृष्टं प्रलेपयेत् ।
नयने बहिरन्तश्च कुकूणादिहरं परम् ॥

मनुष्यकी हड्डीको अत्यन्त महीन पीसकर कांसीकी थाली पर स्त्रीके दूधके साथ घिसकर आंखके बाहर पलकोंपर लेप करने और भीतर लगानेसे बालकोंके कुकूणकादि नेत्ररोग नष्ट होते हैं ।

(३५२७) **नलादिलेपः**

(ग. नि. । विसर्प.)

नलवेतसमूलानि गुन्द्रा शैवलशाद्वलम् ।
विसर्पे सघृतं पिष्टमेकैकं लेपनं हितम् ॥

नलकी जड़, बेतकी जड़, पटेर, सिरवाल, और दूब घास । इनमेंसे किसीको भी महीन पीसकर घीमें मिलाकर लेप करनेसे विसर्प में लाभ पहुंचता है ।

(३५२८) **नलिनीयोगः**

(रा. मा. । क्षुद्ररो.)

मूलानि बीजान्यथवा प्रपिष्टा—
न्यम्लारनालेन समं नलिन्याः ।
हरन्ति लेपेन तु बिन्दुकीट—
सम्पर्कजाताः पिटिका क्षणेन ॥

कमलिनीकी जड़ अथवा उसके बीजोंको अम्लकाञ्जीमें पीसकर लेप करनेसे विन्दुल नामक कीटके सम्पर्कसे उत्पन्न हुई पिड़िकाएं शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं ।

(३५२९) **नवनीतादिलेपः**

(वृ. नि. र. । वातर.)

माहिषं नवनीतन्तु गोमूत्रक्षीरसैन्धवैः ।
खल्वेनैकत्र संलोड्य वह्निना तापयेच्छनैः ॥
गात्रमुद्वर्त्तयेत्तेन देहस्फुटनशान्तये ॥

भैंसका नवनीत (नैनी घी), गोमूत्र, दूध और सेंधानमकका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर मंदाग्नि पर पकावें । जब कुछ गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे उतार लें । यदि शरीर फूटता हो तो इसकी मालिश करनी चाहिये ।

(३५३०) **नवसादरादिलेपः**

(वृ. नि. र. । विष रो.)

नवसादरहरिताले पिष्टे तोयेन लेपनाद्दंशे ।
तत्क्षणमेव जयति वृश्चिकविद्धस्य दुर्धरं क्ष्वेडम् ॥

नवसादर (नसादर) और हरताल समान भाग लेकर पानीमें पीसकर लेप करनेसे बिच्छूका विष तुरन्त उतर जाता है ।

(३५३१) **नागरादिलेपः** (१)

(यो. र.; वृ. नि. । सन्निपा.)

सनागरं देवदारुरास्नाचित्रकपेषितम् ।
प्रलेपनमिदं श्रेष्ठं गलशोफनिवारणम् ॥

यदि सन्निपात ज्वरमें गलेमें सूजन हो जाय तो सोंठ, देवदारु, रास्ना और चीता समान भाग लेकर पानीके साथ महीन पीसकर लेप करना चाहिये ।

(३५३२) **नागरादिलेपः** (२)

(नपुंसका. । त. ६)

नागरं देवकुसुममाकारकरभं तथा ।
चूर्णितं मधुयोगेन मासैकं लेपयेद्बुधः ॥
ताम्बूलैर्वेष्टितं कृत्वा पुरुषार्थप्रदायकम् ॥

सोंठ, लैांग, और अकरकरा समान भाग लेकर अत्यन्त महीन पीसकर शहद में मिलाकर मल्हम बना लीजिये ।

रात्रिको सोते समय इन्द्री पर इसका लेप करके ऊपरसे पान बांध दीजिये । इसी प्रकार १ मास तक करनेसे नपुंसकता नष्ट हो जाती है ।

(नोट—पानके ऊपर कपड़ेकी पट्टी लपेट कर कच्चे सूतसे ढीला बांधना चाहिये । यथा सम्भव ठण्डे पानीसे इन्द्रीको बचाना चाहिये)

(३५३३) **नारीपयसादिप्रयोगः**

(वै. म. र. । प. १२)

सीमन्तिनीनां पयसा प्रलिम्पे-
च्छुण्ठीं शताह्वां लिकुचोदकेन ।
ते जानुबाहुप्रभवानिलघ्ने
स्यातां क्रमव्युत्क्रमलेपिते वै ॥

सौंठको स्त्रीके दूधमें पीसकर या सोये को लकुचके रसमें पीसकर लेप करनेसे जानु और बाहुगत वायु नष्ट होता है ।

(३५३४) **निचुलादिलेपः** (१)

(ग. नि. । ग्रन्थ्य.; शा. सं. । उ. अ. ११)

निचुलं शिग्रुमूलानि दशमूलमथापि वा ।
आलेपनं च गण्डेषु सुखोष्णन्तु प्रशस्यते ॥

हिज्जल, और सहंजनेकी जड़की छाल या दशमूल को पानीके साथ पीसकर मन्दोष्ण करके लेप करनेसे गलगण्ड रोग नष्ट हो जाता है ।

(३५३५) **निचुलादिलेपः** (२)

(वा. भ. । उ. अ. २२)

निचुलं कटभी मुस्तं देवदारु महौषधम् ।
वचा दन्ती च मूर्वा च लेपः कोष्णोऽतिशोफहा॥

हिज्जल, अरलुकी छाल, नागरमोथा, देवदारु, सोंठ, बच, दन्तीमूल और मूर्वा । सब चीज़ें समान भाग लेकर पानीके साथ महीन पीसकर मन्दोष्ण करके लेप करनेसे गलेकी अत्यधिक प्रवृद्ध सूजन नष्ट होती है ।

(३५३६) **निम्बजलादिलेपः**

(वं. से. । क्षुद्ररो.)

निम्बोदकेन लवणैःप्रलेपोऽश्वशकृद्रसैः॥

नीमके पत्तोंका रस, सेंधा नमकका चूर्ण और घोड़ेकी लीदका रस एकत्र मिलाकर लेप करनेसे अरुंषिका नष्ट हो जाती है ।

(३५३७) **निम्बदलादिलेपः**

(शा. सं. । म. अ. ५; भा. प्र. । ख. २ व्रणशो.)

लेपान्निम्बदलैः कल्को व्रणशोधनरोपणः ।
भक्षणाच्छर्दिकुष्ठानि पित्तश्लेष्मकृमीञ्जयेत् ॥

नीमके पत्तोंको पीसकर लेप करनेसे घाव शुद्ध होकर भर जाता है और खानेसे वमन, कुष्ठ, पित्त, कफ और कृमिरोग नष्ट होता है ।

(३५३८) **निम्बपत्रप्रयोगः**

(वृ. मा.; यो. र. । व्रणशोथा.)

निम्बपत्रतिलैः कल्को मधुना व्रणशोधनः ।
रोपणः सर्पिषा युक्तो यवकल्केऽप्ययं विधिः ॥

नीमके पत्ते और तिलोंको अथवा केवल जौको पीसकर शहदमें मिलाकर लेप करनेसे व्रण शुद्ध होता है तथा घीमें मिलाकर लेप करने से घाव भर जाता है ।

(३५३९) **निम्बपत्रादियोगः** (१)

(भा. प्र.; वं. से.; वृं. मा.; यो. र. । व्रणरो.)

निम्बपत्रघृतक्षौद्रदार्वीमधुकसंयुता ।
वर्त्तिस्तिलानां कल्को वा शोधयेद्रोपयेद्व्रणान् ॥

नीमके पत्ते, घी, शहद, दारुहल्दी, मुलैठी और तिल। समान भाग लेकर पीसने योग्य चीज़ोंको महीन पीसकर सबको एकत्र मिला लीजिए । इस का लेप करने या इसकी बत्ती बनाकर घावमें भरने-से घाव शुद्ध होकर भर जाता है ।

(३५४०) **निम्बपत्रादियोगः** (२)

(वं. से.; वृं. मा.; यो. र. । व्रण.)

निम्बपत्रमधुभ्यान्तु युक्तः संशोधनः परः ।
पूर्वाभ्यां सर्पिषा वापि युक्तः संरोपणः परः ॥

नीमके पत्तोंको पीसकर शहदमें मिलाकर लगाने से घाव शुद्ध होता है और यदि इन दोनों में घी भी मिला लिया जाय तो उसके लगानेसे घाव भर जाता है ।

(३५४१) **निम्बपत्रादिप्रयोगः**

(वं. से.; यो. र.; वृं. मा. । व्रणरोगा.; शा. ध. । उ. अ. ११)

निम्बपत्रं तिलादन्तीत्रिवृत्सैन्धवमाक्षिकम् ।
दुष्टव्रणप्रशमनो लेपः शोधनकेशरी ॥

नीमके पत्ते, तिल, दन्तीमूल, निसोत और सेंधा नमकके समान भाग मिश्रित चूर्णको शहदमें मिलाकर लगानेसे दुष्ट व्रण भी शुद्ध होकर भरजाते हैं । घावोंको शुद्ध करनेके लिये यह एक अत्युत्तम प्रयोग है ।

(३५४२) **निम्बफेनलेपः**

(वृ. नि. र. । दाहकर्म.)

तृड्दाहमोहाः प्रशमं प्रयान्ति
निम्बप्रवालोत्थितफेनलेपात् ।
यथा नराणां धनिनां धनानि
समागमाद्वारविलासिनीनाम् ॥

जिस प्रकार वेश्या समागमसे धनिक मनुष्यका धन नष्ट हो जाता है उसी प्रकार नीमके पत्तों के झाग (फेन) लगानेसे तृषा, दाह, और मोह जाता रहता है ।

(नीमके पत्तोंको पीसकर उनमें थोड़ासा पानी डालकर हाथसे खूब हिलावें, यहां तक कि उसमें अच्छी तरह झाग उठ आवें । इन्हीं झागोंका आवश्यकतानुसार मस्तक, नाभि अथवा समस्त शरीर पर लेप करें ।)

(३५४३) **निम्बादिलेपः** (१)

(वृं. मा.; यो. र.; वृ. नि. र. । व्रणशोथा.)

निम्बशम्पाकजात्यर्कसप्तपर्णाश्वमारकाः ।
कृमिघ्ना मूत्रसंयुक्ताः सेकालेपनधावनैः ॥

नीम, अमलतास, चमेली, आक, सप्तपर्ण (सतौना) और कनेरकी जड़की छाल समान भाग लेकर सबको गोमूत्रमें पीसकर लेप करने, या इनको गोमूत्रमें पकाकर उस क्वाथसे घावको धोने अथवा घाव पर उस पानीकी धार छोड़ने से घावके कृमि नष्ट हो जाते हैं।

(३५४४) **निम्बादिलेपः** (२)

(वृ. नि. र. । अर्श.)

निम्बाश्वत्थस्य पत्राणां लेपो दुर्नामनाशनः।
आरनालेन वा हन्यात्सगुडा कटुतुम्बिका ॥

नीम और पीपल वृक्षके पत्तोंका लेप करनेसे अथवा गुड़ और कड़वी तुम्बीको काञ्जीमें पीसकर लगानेसे अर्श नष्ट होती है।

(३५४५) **निम्बुफलोद्भवादिप्रयोगः**

(यो. र. । नेत्ररो.)

लोहस्य पात्रे संघृष्टो रसो निम्बुफलोद्भवः ।
किञ्चिद्घनो बहिर्लेपान्नेत्रव्याधिं व्यपोहति ॥

नीबूके रसको लोहेके पात्रमें (लोहेकी मूसलीसे) इतना घिसें कि वह कुछ गाढ़ा हो जाय।

पलकों पर इसका लेप करनेसे (नेत्रपाक, अधिमन्थादि) नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

(३५४६) **निर्गुण्ड्यादिप्रयोगः**

(वं. से. । रसायना.)

निर्गुण्डीकनकवासाश्रीफलामलकासनोत्थपत्राणि।
गन्धर्वहस्तमूलं दूर्वा कुसुमं तथा रजनी ॥
सिद्धार्थैडगजत्वगिति समभागं प्रक्षिप्य नवनीते।
उद्वर्तनं विधेयं सततं वलिनाशनं दृष्टम् ॥

संभालु, धतूरा, बासा, बेल, आमला और असना। इन सबके पत्ते, अरण्डकी जड़, दूर्वा (दूब घास), लौंग, हल्दी, सफेद सरसों, पंवाड़के बीज और दालचीनीके समान भाग मिश्रित चूर्णको नवनीत में मिला कर कुछदिनों तक रोजाना मालिश करनेसे वलि (शरीरकी झुर्री) नष्ट हो जाती हैं।

(३५४७) **निशादिलेपः** (१)

(वै. म. र. । पट. ४)

स्तनयोरपि मूले च रुग्भवेद्यदि वेगिनी ।
निशाशम्बूकसहितचूर्णलेपो जयेद्रुजम् ॥

हल्दी और शंखको पानीमें पीसकर लेप करनेसे स्तनमूलकी तीव्र पीड़ा शान्त हो जाती है।

(३५४८) **निशादिलेपः** (२)

(भा. प्र. । म. ख. ज्वर.)

निशाविशालाभयमाणिमन्थ
दार्वीङ्गुदीमूलकृतः प्रलेपः ।
प्रभाकरक्षीरयुतः प्रभावा-
द्व्यस्तसमस्तोऽप्यथ कर्णिकाघ्नः ॥

हल्दी, इन्द्रायनकी जड़, खस, सेंधानमक, दारुहल्दी, और इंगुदी (हिंगोट)की जड़। इन सबके समान भाग मिश्रित चूर्णको या इनमेंसे किसी एक ओषधिको आकके दूधमें घोटकर लेप करनेसे कर्णिका (सन्निपात ज्वरमें होने वाली कानके पीछे की सूजन) नष्ट होती है।

(३५४९) **निशादिलेपः** (३)

(वृ. नि. र.; यो. र.; वं. से. । अर्श.)

निशाकोशातकीचूर्णं स्नुक्पयः सैन्धवान्वितम् ।
गोमूत्रेण समायुक्तो लेपो दुर्नामनाशनः ॥

हल्दी, कड़वी तोरी और सेंधा नमकके समान भाग मिश्रित चूर्णको थोहर (सेंड—सेहुंड) के दूधमें घोटकर गोमूत्रमें मिलाकर लेप करनेसे अर्श (बवासीर) नष्ट होती है ।

(३५५०) **निशादिलेपः** (४)

(वं. से.; वृ. मा. । मसूरि.)

निशाद्वयोशीरशिरीषमुस्तकैः
सलोध्रभद्रश्रियनागकेशरैः ।
सस्वेदविस्फोटविसर्पकुष्ठ-
दौर्गन्ध्यरोमान्तिहरः प्रदेहः ॥

हल्दी, दारुहल्दी, खस, सिरसकी छाल, नागरमोथा, लोध, सफेद चन्दन और नागकेसर के समभाग मिश्रित चूर्णको पानीके साथ पीसकर लेप करनेसे शरीरकी दुर्गन्ध, पसीना, विस्फोटक, विसर्प, कुष्ठ और रोमान्तिका नष्ट होती है ।

(३५५१) **निशादिलेपः** (५)

(वृं. मा.; वं. से. । कुष्ठा.; वृ. यो. त. । त. १२०)

निशासुधारग्वधकाकमाची-
पत्रैः सदार्वीप्रपुन्नाटबीजैः ।
तक्रेणपिष्टैः कटुतैलमिश्रैः
पामादिषूद्वर्त्तनमेतदिष्टम् ॥

हल्दी, थोहर (सेंड—सेहुंड) अमलतास और मकोयके पत्ते; दारु हल्दी, तथा पमाड़के बीज समान भाग लेकर महीन चूर्ण करके उसे तक्रमें पीसकर सरसोंके तैलमें मिलाकर मालिश करनेसे पामा इत्यादि नष्ट हो जाती है ।

(३५५२) **नीलाब्जकेशरादिलेपः**[1]

(रा. मा. । शिरो.)

नीलाब्जकेशरतिलामलकैः सुपिष्टै-
र्यष्टयान्वितैर्व्रजति दारुणकः प्रणाशम् ॥

नीलकमलकी केसर, तिल, आमला और मुलैठी के समान भाग मिश्रित चूर्णको पानीमें पीसकर लेप करनेसे दारुण नामक शिरो रोग नष्ट होता है ।

(३५५३) **नीलीलेपः**

(वं. से. । क्षुद्ररो.)

नीलीपटोलयोर्मूलं जलपिष्टं घृतेन तम् ।
निहन्ति लेपनान्नूनं जालगर्दभजां रुजाम् ॥

नील और पटोलकी जड़को पानीके साथ महीन पीसकर घीमें मिलाकर लेप करनेसे जालगर्दभ नामक क्षुद्ररोग अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(३५५४) **नीलोत्पलादिलेपः**

(वृ. नि. र.; यो. र. । उपदं.)

नीलोत्पलानि कुमुदं पद्मसौगन्धिकानि च ।
उपदंशे चूर्णयित्वा प्रलेपोऽयं प्रशस्यते ॥

नीलकमल, कुमुद, पद्म (सफेद कमल) और सौगन्धिक (लाल कमल) के चूर्णको पानीमें पीस कर लेप करनेसे उपदंश नष्ट होता है ।

---

[1] यह प्रयोग वं. से. और भा. प्र. में क्षुद्र रोगोंमें लिखा है; उसमें तिल नहीं लिखे, शेष प्रयोग समान है ।

(३५५५) **नीलोत्पलाद्यो लेपः**

(रा. मा. । शिरो.)

नीलोत्पलाक्षफलमज्जतिलाजगन्धाः।
सार्धं प्रियङ्गुकुसुमैः समपूगवल्कैः ॥
सम्पिष्य यः प्रकुरुते बहुशः प्रलेपम्।
खालित्यमस्य न पदं विदधाति मूर्ध्नि ॥

नीलकमल, बहेड़ेकी गुठलीकी मज्जा (गिरी), तिल, अजमोद, फूलप्रियङ्गु और सुपारीके छिल्के समान भाग लेकर पानीके साथ पीसकर बार बार लेप करनेसे खालित्य (गञ्ज) नष्ट हो जाता है और पुनः नहीं होता।

(३५५६) **नील्यादियोगः**

(र. र. रसा. ख. । उपदे. ५)

नीलीपत्राणि कासीसं भृङ्गराजरसं दधि।
लोहचूर्णं समं पिष्ट्वा तल्लेपं केशरञ्जनम् ॥

नीलके पत्ते, कसीस, भंगरेका रस, दही, और लोहचूर्ण समान भाग लेकर पीसकर लेप करनेसे सफेद बाल काले हो जाते हैं।

(यदि लेप गाढ़ा हो तो उसमें भंगरेका रस अधिक मिला लेना चाहिये। बालोंपर लेप करके ऊपरसे अरण्ड या केलेका पत्ता बांध देना चाहिये और दूसरे दिन लेप धोकर तैल लगा देना चाहिये।)

(३५५७) **न्यग्रोधादिलेपः** (१)

(वं. से. । बाल.)

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसजम्बुजैः।
त्वग्भिर्यष्ट्याह्वमञ्जिष्ठाचन्दनोशीरपद्मकैः ॥
श्लक्ष्णपिष्टैर्यथालाभं शिशोः कार्यं प्रलेपनम्।
सदाहरागविस्फोटः वेदनाव्रणशान्तये ॥

बड़, गूलर, अश्वत्थ (पीपल वृक्ष), पिलखन, बेत, और जामन; इनकी छाल तथा मुलैठी, मजीठ, लाल चन्दन, खस और पद्माक। इनमें से जितनी चीजें मिल सकें वह सब समान भाग लेकर महीन पीसकर लेप करनेसे बालकके दाह, सुर्खी, विस्फोटक और वेदना युक्त व्रण नष्ट होते हैं।

(यह योग बालकोंके शिर तथा बस्ति प्रदेशमें होने वाले विसर्पके लिये है।)

(३५५८) **न्यग्रोधादिलेपः** (२)

(वृ. नि. र.; यो. र.; वं. से. । विसर्प.)

न्यग्रोधपादो गुञ्जा[१] च कदलीगर्भ एव च।
एतैर्ग्रन्थिविसर्पघ्नो लेपो धौताज्यसंयुतः ॥

बड़की जड़की छाल (या जटा), चौंटली (मतान्तर में पटेर) और केलेकी मूसलीको महीन पीस कर सौ बार धुले हुये घृतमें मिलाकर लगानेसे ग्रन्थिविसर्प नष्ट होता है।

(३५५९) **न्यग्रोधादिलेपः** (३)

(वृ. नि. र.; वं. से. । मसू.)

न्यग्रोधप्लक्षमञ्जिष्ठाशिरीषोदुम्बरत्वचाम्।
ससर्पिष्कं मसूर्यान्तु वातजायां प्रलेपनम् ॥

बड़की छाल, पिलखन की छाल, मजीठ, सिरसकी छाल, और गूलरकी छालके समभाग मिश्रित चूर्णको घीमें मिलाकर लगानेसे वातज मसूरिका नष्ट होती है।

१—'गुन्द्रा' इति पाठान्तरम्।

(३५६०) **न्यग्रोधादिलेपः** (४)

(वृ. नि. र. । व्रण.; वं. से.; यो. र. । विसर्प.)

न्यग्रोधोदुम्बरोश्वत्थप्लक्षवेतसशेलुभिः ।
चन्दनद्वयमञ्जिष्ठायष्टीसूरणगैरिकैः ॥
शतधौतघृतोन्मिश्रैर्लेपो रक्तप्रसादनः ।
दाहपाकरुजास्रावशोफनिर्वापणं परः ॥
आगन्तुजे रक्तजे च एष लेपोतिपूजितः ॥

बड़की छाल, गूलरकी छाल, पीपलकी छाल, पिलखनकी छाल, बेतकी छाल, लिहसौड़ेकी छाल, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, मजीठ, मुलैठी, सूरण (जिमिकन्द) और गेरुके समान भाग मिश्रित चूर्णको सौ बार धुले हुवे घीमें मिलाकर लेप करनेसे दाह, पाक, पीड़ा, स्राव और शोथ युक्त आगन्तुक तथा रक्तज विसर्प नष्ट होता है ।

(३५६१) **न्यग्रोधादिलेपः** (५)

(यो. र.; वृ. नि. र.; ग. नि.; वृं. मा. । व्रणशो.)

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसकवल्कलैः ।
ससर्पिष्कैः प्रलेपः स्याच्छोफनिवारणः परः ॥

बड़, गूलर, पीपलवृक्ष, पिलखन और बेत की छालके महीन चूर्णको घीमें मिलाकर लेप करनेसे व्रणकी सूजन नष्ट होती है ।

(३५६२) **न्यग्रोधाद्युद्वर्तनम्**

(वै. जी. । वि. ४)

न्यग्रोधाङ्कुरकुष्ठरोध्रविकसाश्यामामसूरारुण ।
श्रीखण्डैः पयसान्वितैर्विरचितं व्यङ्गघ्नमुद्वर्तनम् ॥

बड़के अंकुर (कोंपल), कूठ, लोध, मजीठ, फूलप्रियङ्गु, मसूर, सफेद चन्दन और लाल चन्दनके समान भाग मिश्रित चूर्णको दूधमें मिलाकर उबटन करनेसे मुखकी झाईं नष्ट हो जाती हैं ।

इति नकारादिलेपप्रकरणम् ।



अथ नकारादिधूपप्रकरणम्

(३५६३) **निम्बकाष्ठधूपः**

(यो. त. । त. ७५)

धूपिते योनिरन्ध्रे च निम्बकाष्ठेन युक्तितः ।
ऋत्वन्ते रमते या स्त्री न सा गर्भमवाप्नुयात् ॥

यदि ऋतुकालके अन्तमें योनिको नीमकी लकड़ी की धूनी देकर स्त्री पुरुषसमागम करें तो गर्भ नहीं रहता ।

(३५६४) **निम्बादिधूपः** (१)

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

निम्बपत्रं वचा कुष्ठं पथ्या सिद्धार्थकं घृतम् ।
विषमज्वरनाशाय गुग्गुलुश्चेति धूपनम् ॥

नीमके पत्ते, बच, कूठ, हर्र, सफेद सरसों, और गूगलके चूर्णको घीमें मिलाकर उसकी धूप देनेसे विषम ज्वर नष्ट होता है ।

(३५६५) **निम्बादिधूपः** (२)

(र. र. । ज्वरा.)

निम्बपत्रवचाहिङ्गुसर्पनिर्मोकसर्षपैः ।
डाकिन्यादिहरो धूपो भूतोन्मादविनाशनः ॥

नीमके पत्ते, बच, हींग, सांपकी कांचली और सरसोंकी धूप (धूनी) देने से डाकिनी आदिके उपद्रव और भूतोन्माद नष्ट होते हैं ।

(३५६६) **निम्बादिधूपः** (३)

(भा. प्र.; यो. र. । व्रण.)

निम्बपत्रवचाहिङ्गुसर्पिर्लवणसर्षपैः[1] ।
धूपनं कृमिरक्षोघ्नं व्रणकण्डूरुजापहम् ॥

नीमके पत्ते, बच, हींग, सेंधा नमक, और सरसों के समभाग मिश्रित चूर्णको घीमें मिलाकर उसकी धूप देने से व्रणके कृमि, कण्डू और पीड़ा नष्ट होती है ।

(३५६७) **निम्बादिधूपः** (४)

(वं. से.; यो. र. । नेत्र.)

निम्बार्कपत्रसम्पर्कं लोध्रं भागचतुष्टयम् ।
धूपः[2] सर्पिः पयो भागैः कफे सेकः सुखाम्बुना॥

नीम और आकके पत्तोंकी लुगदी के बीचमें इनसे ४ गुने लोधको रखकर गोलासा बनाकर उसके ऊपर मिट्टीका लेप करके पुटपाक विधिसे पका लीजिए । तत्पश्चात् आंखकी पलकों पर उस लोधकी धूनी दीजिये; अथवा घी, दूध और मन्दोष्ण पानीको एकत्र मिलाकर उसकी बारीक धार बन्द आंख पर छोड़िये ।

यह उपाय कफाभिष्यन्द में हितकर है ।

(नोट—धूप आंख बन्द करके देनी चाहिये और ध्यान रखना चाहिये कि आंखमें धुवां न जाने पावे ।)

[1] —" सैन्धवैः " इति पाठान्तरम् ।
[2] —" धूमः " इति पाठान्तरम् ।

(३५६८) **निर्गुण्ड्यादिधूपः** (१)

(ग. नि.; वृ. नि. र.; यो. र. । ज्वरा.)

निर्गुण्डीपुरसहितः सिद्धार्थनिम्बपत्रसंयुक्तः ।
सर्जरसेन समेतो धूपवरः सन्धिगं हन्ति ॥

संभालुके पत्ते, गूगल, सफेद सरसों, नीमके पत्ते, और राल । सब चीजें समान भाग लेकर कूटकर चूर्ण बनावें ।

रोगीको इसकी धूप देनेसे सन्धिगतज्वर नष्ट होता है ।

(३५६९) **निर्गुण्ड्यादिधूपः** (२)

(ग. नि.; वृ. नि. र. । ज्वर.)

निर्गुण्डीपिचुमन्दकुष्ठविजयाकार्पाससिद्धार्थकैः ।
षड्ग्रन्थातगरामरेन्द्रतरुभिर्मार्तण्डमूलान्वितैः ॥
चण्डीयावकरुद्रमाल्यसहितैर्मध्वाज्यसंयोजितै-
र्धूपोऽयं ग्रहसन्निपातजनितां पीडां पिनष्टि क्षणात्॥

संभालुके पत्ते, नीमके पत्ते, कूठ, भांग, कपास, सफेद सरसों, बच, तगर, देवदारु, आककी जड़, शिवलिङ्गी, कुलथ और बेलछाल के समान भाग मिश्रित चूर्णको शहद और घी में मिलाकर धूप देनेसे ग्रह और सन्निपातजनित ज्वर नष्ट होता है।

(३५७०) **निर्गुण्ड्याद्धूपः (३)**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

निर्गुण्डीदलनिम्बपत्रहरितालं सार्षपं चूर्णकम् ।
देवाह्वं घृतशर्करामधुयुतं धूपं भगन्दारके ॥
दुर्नामे सरुजे व्रणे च विषमे दुष्टे विसर्पेषु च ।
पामापीनसकासनाशनकरो धूपो ग्रहोच्छेदनः ॥

संभालूके पत्ते, नीमके पत्ते, हरताल, सरसों, देवदारु और खांडके समभाग मिश्रित चूर्णको घी और शहद में मिलाकर धूप देनेसे भगन्दर, अर्श, पीड़ायुक्त दुष्ट और विषम व्रण, विसर्प, पामा, पीनस, खांसी और ग्रहदोष नष्ट होते हैं ।

इति नकारादिधूपप्रकरणम् ।

अथ नकारादिधूम्रप्रकरणम्

(३५७१) **नेपालिकादिधूम्रयोगाः**

(ग. नि. । हिक्का.)

नेपाल्या गोविषाणस्य कुष्ठात्सर्जरसस्य च ।
धूमं कुशस्य वा साज्यं पिबेद्धिक्कोपशान्तये ॥

मनसिल, गायका सींग, कूठ, राल, और कुश में से किसी एकके चूर्णको घीमें मिलाकर उसका धूम्रपान करनेसे हिक्का शान्त हो जाती है ।

इति नकारादिधूम्रप्रकरणम् ।

अथ नकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(३५७२) **नक्तमालाद्यञ्जनम्**

(वृ. नि. र.; वं. से.; ग. नि.; वृं. मा. । विषा.)

नक्तमालफलं व्योषं बिल्वमूलं निशाद्वयम् ।
सौरसं पुष्प[१]माजं च मूत्रं बोधनमञ्जनम् ॥

[१] पत्रमिति पाठान्तरम् ।

करञ्ज के फलोंकी गिरी, सोंठ, मिर्च, पीपल, बेलकी जड़की छाल, हल्दी, दारुहल्दी और तुलसीके फूल (वा पत्र) समान भाग लेकर चूर्ण करके सबको बकरीके मूत्रमें घोटकर अत्यन्त महीन अञ्जन बनावें ।

इसे आंखमें लगानेसे विषसे मूर्च्छित हुवे मनुष्यकी मूर्च्छा जाती रहती है।

(३५७३) नक्तान्ध्यकेतुः

(वृ. यो. त. । त. १३०; वै. र. । नेत्र.)

हरेणुकां सैन्धवसम्प्रयुक्तां
स्रोतोजयुक्तामुपकुल्यया च।
पिष्ट्वाजमूत्रेण कृता च वर्त्ति-
र्नक्तान्ध्यविध्वंसकरी नराणाम्॥

रेणुका, सेंधानमक, सौवीराञ्जन और दन्तीमूल के समान भाग मिश्रित चूर्णको बकरेके मूत्रमें घोटकर बत्तियां बनावें।

इन्हें आंखमें लगानेसे नक्तान्ध्य (रतौंधा) नष्ट होता है।

(३५७४) नक्तान्ध्यहरीवर्त्तिः

(र. र. स. । उ. अ. २३)

ताम्राद्र्यलवणशङ्खैस्तुल्या-
मगधोद्भवाऽथ वै धात्री।
जलपिष्टा गुलिकेयं
सायं समयान्ध्यमपहरति॥

शुद्ध नैपाली ताम्रका चूर्ण, सेंधानमक और शंखका चूर्ण १-१ भाग तथा पीपल और आमलेका चूर्ण ३-३ भाग लेकर सबको पानीके साथ पीसकर बत्तियां बना लीजिये।

इन्हें आंखमें आंजनेसे नक्तान्ध्य (रतौंधा) नष्ट होता है।

(३५७५) नयनशाणाञ्जनम्[१]

(भा. प्र. ख. २; यो. र. । नेत्र.)

कणा सलवणोषणा सह रसाञ्जना साञ्जना।
सरित्पतिकफः सिता सितपुनर्नवा सम्भवा॥
रजन्यरुणचन्दनं मधु च तुत्थपथ्या शिला।
अरिष्टदलशावरस्फटिकशङ्खनाभीन्दवः॥
इमानि तु विचूर्णयेन्निबिडवाससा शोधयेत्।
तथायसि विमर्दयेत्समधुताम्रखण्डेन तत्॥
इदं मुनिभिरीरितं नयनशाणनामाञ्जनम्।
करोति तिमिरक्षयं पटलपुष्पनाशं बलात्॥

पीपल, सेंधानमक, काली मिर्च, रसाञ्जन, काला सुरमा, समुद्रफेन, मिश्री, सफेद पुनर्नवामूल, हल्दी, लाल चन्दन, मुलैठी, तुत्थ (नीला थोथा), हर्र, मनसिल, नीमके पत्ते, लोध, फटकी, शंखनाभि, और कपूरके अत्यन्त महीन, गाढ़े कपड़ेसे छने हुवे समान भाग मिश्रित चूर्णको लोहपात्रमें तांबेकी मूसलीसे शहदके साथ घोटें।

यह तिमिर, पटल और पुष्पको नष्ट करता है।

(३५७६) नयनसुखावर्त्तिः

(भै. र.; वृं. मा.; धन्व. । नेत्र.)

एकगुणा मागधिका द्विगुणा
च हरीतकी सलिलपिष्टा।
वर्त्तिरियं नयनसुखा—
तिमिरार्म्मपटलकाचाश्रुहरी॥

एक भाग पीपल और २ भाग हर्रके महीन चूर्णको पानीके साथ पीसकर बत्तियां बना लें।

१. भा. प्र. यह योग 'नयनशोणाञ्जन' नामसे लिखा है।

यह "नयन सुखावर्तिः" तिमिर, अर्म, काच, अश्रुश्राव और पटलको नष्ट करती है।

(नोट—इस योगमें हर्रकी गुठलीके भीतरकी मज्जा डालनी चाहिये।)

(३५७७) नयनामृतवटी

(वै. र. । नेत्र.)

शुण्ठीहरीतकीवन्यकुलत्थं खर्परं तथा ।
स्फटिकं श्वेतखदिरं पृथङ्माजूफलं समम् ॥
कर्पूरं मृगनाभिश्च मौक्तिकं च तदर्द्धकम् ।
प्रत्येकं निम्बुकद्रावैः खल्वे मर्द्यं दिनत्रयम् ॥
पश्चात्तु वटिकां कुर्याज्जलेन तिमिरं हरेत् ।
स्तन्येन पुष्पपटलं मधुना काञ्जिकान्मलम् ॥
नेत्रस्रावं रसोनेन नक्तान्ध्यं भृङ्गयोगतः ।
गोमूत्राच्चिपिटं मांसवृद्धिं रम्भाजलेन तु ॥

सोंठ, हर्र, केवटीमोथा, कुलथ, शुद्ध खपरिया, स्फटिकमणि (अथवा फटकी), सफेद कत्था, और माजू फलका चूर्ण २–२ भाग; कपूर, कस्तूरी और सच्चे मोती १–१ भाग लेकर सबको ३ दिन तक नीबूके रसमें घोटकर गोलियां बनावें।

इन्हें पानीके साथ घिसकर आंखमें लगाने से तिमिर, स्त्रीके दूधके साथ लगाने से पुष्प (फूला), शहदसे पटल, काञ्जीसे मल, रसौन (लहसन) के रसके साथ लगानेसे नेत्रस्राव, भंगरेके रसके साथ लगानेसे रतौंधा, गोमूत्रसे चिपिट और केलेके रसके साथ घिसकर लगाने से मांसवृद्धि नष्ट होती है।

(३५७८) नयनामृताञ्जनम् (१)

(वृ. नि. र.; वं. से; यो. र.; वै. रह.; र. चं. । नेत्र.; भा. प्र. ख. १ । नेत्र प्रसादने; वृ. यो. त. । त. १३१; यो. त. । त. ७१; यो. चि. । अ. ३; वा. भ. । उ. अ. १७; र. मं. । अ. ८; र. र. स. । अ. २३)

रसेन्द्रभुजगौ तुल्यौ तयोर्द्विगुणमञ्जनम् ।
सूततुर्यांशकर्पूरमञ्जनं नयनामृतम् ॥
तिमिरं पटलं काचं शुक्रमर्मार्जुनानि च ।
क्रमात्पथ्याशिनो हन्ति तथान्यानपि दृग्गदान् ॥

पारा और शुद्ध सीसा १–१ भाग, शुद्ध सुरमा ४ भाग, और कपूर पारेसे चौथाई लेकर सबको घोटकर अञ्जन बनावें।

इसके लगाने और पथ्य पालन करनेसे तिमिर, पटल, काच, शुक्र, अर्म, अर्जुन और अन्य नेत्ररोग भी नष्ट होते हैं।

(प्रथम सीसेको पिघलाकर धार बांधकर धीरे धीरे पारदमें छोड़ें और साथ ही साथ घुटवाते जायं जब दोनों मिलजायं तो उसमें अन्य चीजें मिलाकर घोटें।)

(३५७९) नयनामृताञ्जनम् (२)

(यो. चिं. । अ. ३)

शङ्खनाभिकणातुत्थं बोलखर्परसंयुतम् ।
निम्बूकरसतोयेन ह्यञ्जनं नयनामृतम् ॥

शङ्खकी नाभि, पीपल, शुद्ध नीला थोथा, बोल, और शुद्ध खपरियाका चूर्ण समान भाग लेकर सबको १ दिन नीबूके रसमें घोटें।

इसका नाम 'नयनामृताञ्जन' है।

(३५८०) नयनेत्रदात्रीवर्त्तिः

(र. र. स. । उ. खं. अ. २३; र. चं. । नेत्र.)

द्विरष्टौ ताम्ररजसो मधुकस्य चतुर्दश ।
कुष्ठस्य द्वादशांशाः स्युर्वचायास्तु दशैव हि ॥
रजतस्य तु चत्वारो द्वौ भागौ कनकस्य च ।
सैन्धवस्याष्टसङ्ख्याता पिप्पल्याश्च षडेव तु ॥
अजाक्षीरेण संपेष्य ताम्रपात्रे निधापयेत् ।
अभिष्यन्दमधिमन्थं व्रणशुक्रं कुकूणकम् ॥
तिमिरं पटलं काचं कण्डुं हन्ति विशेषतः ॥

ताम्रभस्म (अथवा चूर्ण) १६ भाग, मुलैठीका चूर्ण १४ भाग, कूठका चूर्ण १२ भाग, बचका चूर्ण १० भाग, चांदीके वर्क ४ भाग, सोनेके वर्क २ भाग, सेंधा नमकका चूर्ण आठ भाग, और पीपलका चूर्ण ६ भाग लेकर सबको १ दिन ताम्रपात्रमें बकरीके दूधके साथ घोटें। तत्पश्चात् बत्तियां बनाकर छायामें सुखा लें।

यह वर्ति अभिष्यन्द, अधिमन्थ, सव्रणशुक्र, कुकूणक, तिमिर, पटल, काच, और विशेषतः कण्डु (आंखकी खुजली) को नष्ट करती है।

(पानी या बकरीके दूधमें घिसकर लगाना चाहिये।)

(३५८१) नवाङ्गीवर्त्तिः

(ग. नि. । नेत्ररोगा.)

त्र्यूषणत्रिफलासिन्धुशिलालेन नवाङ्गिका ।
क्लेदोपदेहकण्डूघ्नी वर्त्तिः शस्ता कफापहा ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सेंधानमक, मनसिल और हरताल। इन ९ चीजों के महीन चूर्णको पानीके साथ पीसकर बत्तियां बनावें।

इन्हें आंखमें लगानेसे क्लेद (आंखोंकी चिपचिपाहट), उपदेह, और कण्डू तथा कफज नेत्र रोग नष्ट होते हैं।

(३५८२) नागाद्यञ्जनम्

(वा. भ. । उ. स्था. अ. १३)

त्रिंशद्भागा भुजङ्गस्य गन्धपाषाणपञ्चकम् ।
शुल्वतालकयोर्द्वौ द्वौ वङ्गस्यैकोऽञ्जनात्त्रयम् ॥
अन्धमूषीकृतं ध्मातं पक्वं विमलमञ्जनम् ।
तिमिरान्तकरं लोके द्वितीय इव भास्करः ॥

शुद्ध सीसा ३० भाग, शुद्ध गन्धक ५ भाग, शुद्ध ताम्र और हरताल २-२ भाग, शुद्ध वङ्ग १ भाग तथा अञ्जन (सुरमा) ३ भाग लेकर सबको अन्ध मूषामें बन्द करके तीव्राग्निमें (४ पहर) पकावें। पश्चात् मूषाके स्वांग शीतल होने पर औषधको खरल करके सुरमा बनालें।

यह अञ्जन तिमिरको नष्ट करता है। तथा संसारमें दूसरे सूर्यके समान अन्धताको नष्ट करने वाला है।

(३५८३) नागार्जुनीगुटिका

(ग. नि. । नेत्र.)

हरिद्रा निम्बपत्राणि पिप्पल्यो मरिचानि च ।
भद्रमुस्तं विडङ्गानि सप्तमं विश्वभेषजम् ॥
एतानि समभागानि छागमूत्रेण पेषयेत् ।
कोलास्थिकागुटी छायाशुष्का नागार्जुनीति सा॥
वारिणा तिमिरं हन्ति मधुना पटलं तथा ।
रात्र्यन्धं भृङ्गराजेन नारीदुग्धेन पुष्पकम् ॥

गवां मूत्रेण पिटिकां काञ्जिकेन च कामलाम् ।
उशीररससंयुक्ता विषं वृश्चिकसम्भवम् ॥

हल्दी, नीमके पत्ते, पीपल, काली मिर्च, नागर मोथा, बायबिडंग, और सोंठ का समान भाग चूर्ण लेकर सबको बकरीके मूत्रमें घोटकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलियां बनाकर छायामें सुखावें।

इन्हें पानीके साथ घिसकर आंखमें आंजनेसे तिमिर, शहदसे पटल, भंगरेके रससे रतौंधा, स्त्रीके दूधसे फूला, गोमूत्रसे पिटिका, काञ्जीसे कामला और खसके काथके साथ घिसकर लगानेसे बिच्छूका विष नष्ट होता है।

(३५८४) नागार्जुनीवर्त्तिः

(र. का. धे.; र. र.; धन्व.; वं. से.; भै. र.; वृं. मा.; च. द; ग. नि. । नेत्ररोगा.)

त्रिफलाव्योषसिन्धूत्थयष्टीतुत्थरसाञ्जनम् ।
प्रपौण्डरीकं जन्तुघ्नं लोध्रं ताम्रं चतुर्दश ॥
द्रव्याण्येतानि सञ्चूर्ण्य वर्त्तिः कार्या नभोम्बुना ।
नागार्जुनी तिमिराणां पटलानां तथैव च ॥
नागार्जुनेन लिखिता स्तम्भे पाटलिपुत्रके ।
सद्यः कोपं च दुग्धेन स्त्रिया विजयते ध्रुवम् ॥
किंशुकस्वरसेनाथ पिल्लपुष्पकरक्तताः ।
अञ्जनाल्लोध्रतोयेन आसन्नतिमिरं जयेत् ॥
चिरं संछादिते नेत्रे बस्तमूत्रेण संयुता ।
उन्मीलयत्यकृच्छ्रेण प्रसादश्चाधिगच्छति ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानमक, मुलैठी, नीला थोथा, रसौत, प्रपौण्डरीक (पुण्डरिया), बायबिडंग, लोध और ताम्र भस्म। इन १४ चीज़ोंके महीन चूर्णको समान भाग लेकर एकत्र मिलाकर वर्षा के शुद्ध जलसे घोटकर बर्तियां बनावें।

तिमिर और पटल नाशक यह प्रयोग नागार्जुनने पटने के एक स्तम्भ पर लिखाया था।

इन्हें स्त्रीके दूधमें घिसकर लगानेसे नवीन नेत्रपाक अवश्य नष्ट होजाता है।

केसू (टेसू) के फूलोंके रसके साथ लगानेसे पिल्ल, पुष्प और सुर्खी तथा लोधके पानीके साथ लगानेसे नवीन तिमिर नष्ट होता है। यदि आंखें बहुत समयसे बन्द हों तो इसे बकरेके मूत्रके साथ घिसकर लगानेसे वे आसानी से खुल जाती हैं और साथ ही स्वच्छ भी हो जाती हैं।

(३५८५) नारायणाञ्जनम्

(वृ. यो. त. । त. १३१; वै. र. । नेत्र.)

तुलस्या बिल्वपत्रस्य रसौ ग्राह्यौ समांशकौ ।
ताभ्यां तुल्यं पयो नार्यास्त्रितयं कांस्यभाजने ॥
गजवल्ल्या दृढं मर्द्यं ताम्रेण प्रहरं पुनः ।
कज्जलत्वं समुत्पाद्य तेनाञ्जितविलोचनः ॥
सद्यो नेत्ररुजं हन्ति सशूलां पाकजामपि ॥

तुलसी और बेलके पत्तोंका रस १-१ भाग तथा स्त्रीका दूध दो भाग लेकर तीनोंको कांसीकी थालीमें नागरबेलके पानके साथ तांबेकी मूसली से घोटें। जब कज्जलके समान हो जाय तो निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसके लगानेसे नेत्रपाक और आंखकी पीड़ा नष्ट होती है।

(नीम या किसी अन्य लकड़ीके सोटेमें तांबेका पैसा लगवाकर उससे घोटना चाहिये ।)

(३५८६) निशाद्यञ्जनम्

(वृं. नि. र.; यो. र. । ज्वर.)

ज्वरेऽञ्जनं निशातैलकृष्णामरिचसैन्धवैः ।
वचाहरीतकीसर्पिर्धूपः स्याद्विषमज्वरे ॥

हल्दी, पीपल, कालीमिर्च और सेंधा नमकके समान भाग मिश्रित चूर्णको तैलमें घोटकर आंखमें लगाने से अथवा बच, हर्र और घीकी धूप देनेसे विषम ज्वर नष्ट होता है ।

(३५८७) नीलाञ्जनशोधनम्

(रसे. सा. सं. । पू. ख.; यो. चि. । अ. ७; आ. वे. प्र. । अ. ८)

नीलाञ्जनं चूर्णयित्वा जम्बीररसभावितम् ।
दिनैकमातपे शुद्धं भवेत्कार्येषु योजयेत् ॥

काले सुरमेके चूर्णको १ दिन जम्बीरी नीबूके रसमें घोटकर धूपमें सुखा लेनेसे वह शुद्ध हो जाता है ।

(३५८८) नीलोत्पलादिगुटिकाञ्जनम्

(ग. नि. । नेत्र.)

नीलोत्पलस्य किञ्जल्कं गोशकृद्रससंयुतम् ।
गुटिकाञ्जनमेतत्स्याद्दिनरात्र्यन्धयोर्हितम् ॥

नील कमलकी केसरको गायके गोबरके रसमें घोटकर गोलियां बनावें ।

इन्हें आंखोंमें लगानेसे दिवान्धता और रात्र्यन्धता (रतौंधी) नष्ट होती है ।

(३५८९) नीलोत्पलाद्यञ्जनम्

(च. द.; वृं. मा.; ग. नि. । नेत्ररो.)

नीलोत्पलं विडङ्गानि पिप्पली रक्तचन्दनम् ।
अञ्जनं सैन्धवं चैव सद्यस्तिमिरनाशनम् ॥

नीलकमल, बायबिडंग, पीपल, लाल चन्दन, सुरमा और सेंधा नमकका समान भाग महीन चूर्ण लेकर एकत्र मिलाकर घोटें ।

इसे आंखमें लगानेसे तिमिर रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(३५९०) नेत्रवर्तिः

(आ. वे. वि. । चिकि. अ. ७३)

तुत्थकं तोलकमितं टङ्कनं सर्जिकं तथा ।
द्रावयित्वा मुषामध्ये तत्र माषमितं घनम् ॥
मिश्रयित्वा कृत्वा नेत्रवर्ती नेत्ररुजापहा ।
भाषिता श्रीमहेशेन सद्यः शान्तिप्रदा शुभा ॥

नीलाथोथा १ तोला, सुहागा १ तोला और सज्जीखार १ तोला लेकर तीनोंको खुली मूषा में रखकर पिघलावें तत्पश्चात् उसमें १ माषा कपूर मिलाकर खरलमें घोटकर बर्ति बनावें ।

इसे आंखमें आंजने से नेत्र पीड़ा नष्ट होती है ।

(३५९१) नेपालादिवर्त्तिः

(यो. र. । नेत्र.)

नेपालत्रिफलाशङ्खकान्ताव्योषं च पेषितम् ।
वर्तीकृतं बलासोत्थमञ्जनं तिमिरापहं ॥

नेपाली ताम्रभस्म (अथवा अत्यन्त महीन चूर्ण) हर्र, बहेड़ा, आमला, शंख, रेणुका, सोंठ, मिर्च, और पीपल; सबके समानभाग मिश्रित चूर्णको पानीके साथ पीसकर बत्तियां बनावें ।

इसे आंख में आंजने से कफज तिमिर रोग नष्ट होता है ।

इति नकाराद्यञ्जनप्रकरणम् ।

अथ नकारादिनस्यप्रकरणम्

(३५९२) **नवसादरचूर्णयोगः**

(वृ. नि. र. । शिरो.)

नस्येन कलिकाचूर्ण नवसागरजं रजः ।
वातश्लेष्मभवां पीडां शिरसो हन्ति सर्वथा ॥

कलीचूना और नौसादर समान भाग मिलाकर सूंघनेसे वातकफज शिरशूल नष्ट हो जाता है। (यह तीव्र नस्य है अत एव अधिक न सूंघनी चाहिये । अथवा इन दोनोंको एक शीशीमें भरकर रक्खें जब सूंघना हो तब शीशीमें २–३ बूंद पानी डाल दें और उससे जो वाष्प निकले उसे सूंघें ।

(यह नस्य बिच्छूके विषको भी नष्ट करती है।)

(३५९३) **नस्यभैरवः**

(र. चं.; र. सा. सं.; र. रा. सुं.; र. का.धे. । ज्वर.; रसेन्द्रचिं. । अ. ९)

मृतसूताकेतीक्ष्णाभ्रं टङ्कणं खर्परं समम् ।
सव्योषमर्कदुग्धेन दिनं सम्मर्दयेद्दृढम् ॥
अर्कक्षीरयुतं नस्यं सन्निपातहरं परम् ॥

पारदभस्म, ताम्रभस्म, लोहभस्म, चीतेका चूर्ण, सुहागेकी खील, शुद्ध खपरिया और सोंठ, मिर्च, तथा पीपलका महीन चूर्ण बराबर बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर एकदिन आकके दूधमें घोटें ।

आकके दूधमें मिलाकर इसकी नस्य देनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है ।

नोट—इसे सावधानी पूर्वक रोगीके बलाबलका विचार करके यथोचित मात्रानुसार देनी चाहिये ।

(३५९४) **नागरादिनस्यम्**

(वं. से.; वृ. नि. र.; वृ. मा. । शिरो.)

नागरकल्कविमिश्रं क्षीरं नस्येन योजितं पुंसाम्।
नानादोषोद्भूतां शिरोरुजं हन्ति तीव्रतराम् ॥

सोंठको दूधमें घिसकर नस्य लेनेसे विविध दोषों से उत्पन्न तीव्रतर शिर पीड़ा भी नष्ट हो जाती है ।

निम्बतैलनस्यम्

(ग. नि. । रसाय.)

तैल प्रकरण में "निम्बतैलप्रयोग" देखिये ।

(३५९५) निम्बादिनस्यम्

(भा. प्र. ख. २ । नासा.)

नस्यं हितं निम्बरसाञ्जनाभ्यां
दीप्ते शिरःस्वेदनमल्पशस्तु ।
नस्ये कृते क्षीरजलावसेका-
च्छमन्ति भुञ्जीत च मुद्गयूषैः ॥

दीप्त नामक नासारोगमें नीमके पत्तोंके रस और रसौतकी नस्य लेनी, शिरको थोड़ा स्वेदित करना, तथा नस्यके पश्चात् शिरपर दूध और पानीकी धार डालना एवं मूंगका यूष और भात खाना चाहिये ।

(३५९६) निर्गुण्डीमूलनस्यम्

(ग. नि. । ग्रन्थ्या.; वृं. मा. । गलगं.)

गण्डमालामयार्त्तानां नस्यकर्मणि योजयेत् ।
निर्गुण्ड्यास्तु शिफां सम्यग्वारिणा परिपेषिताम् ॥

गण्डमाला रोगमें संभालुकी जड़को पानीके साथ पीसकर उसकी नस्य देनी चाहिये ।

(३५९७) निर्गुण्ड्यादिनस्यम्

(यो. र.; वृ. नि. र. । अपस्मार)

निर्गुण्डीभववन्दाकनावनस्योपयोगतः ।
उपैति सहसा नाशमपस्मारो न संशयः ॥

संभालुके बन्दे की नस्य देनेसे अपस्मार रोग तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

इति नकारादिनस्यप्रकरणम् ।

अथ नकारादिकल्पप्रकरणम्

(३५९८) निर्गुण्डीकल्पः (१)

(भै. र. । रसायना.)

निर्गुण्डीमूलचूर्णमष्टपलं गृहीत्वा षोडशपलं मधुमिश्रितं मर्दयित्वा घृतभाण्डे कृत्वा शरावेणाच्छाद्य निविडलेपनं दत्त्वा मासमेकं धान्यमध्ये स्थापयेत् । तन्मासमेकं भक्षितमात्रेण नरः कनकवर्णो गृध्रदृष्टिः सर्वरोगविवर्जितः बलीपलितहीनः । सम्वत्सरं खादिते चन्द्रार्के यावज्जीवेत्,बद्धशुक्रः स्त्रीशतं कामयितुं क्षमो भवति । शाकाम्लं विहाय यथेच्छया भोज्यम् । तच्चूर्णं गोमूत्रेण सह यः पिबति हन्त्यष्टादश कुष्ठानि पामाविचर्चिकादीनि नाडीव्रणगुल्मशूलप्लीहोदराणि । तच्चूर्णं तक्रेण यः पिबति स सर्वरोगविवर्जितो गृध्रदृष्टिर्वराहबलो भवति, वलीपलितवर्ज्जितः पवनवेगो दिव्यमूर्त्तिर्भवति मासद्वयप्रयोगेणापण्डितश्च न संशयः ।

संभालूकी जड़के ८ पल चूर्णमें १६ पल

शहद मिलाकर उसे घृतसे चिकने किये हुवे मिट्टीके पात्रमें भरकर उसके मुखपर शराव ढककर सन्धि पर कपड़मिट्टी कर दें। तत्पश्चात् इस पात्रको अनाजके ढेरमें दबा दें और एक मास पश्चात् निकालकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करें।

इसे १ मास तक सेवन करने से मनुष्यका शरीर स्वर्ण के समान कान्तिमान् और उसकी दृष्टि गृध्रके समान तीक्ष्ण हो जाती है तथा वह सर्व रोग और बलिपलित रहित हो जाता है।

१ वर्ष तक खानेसे दीर्घ जीवन और प्रबल कामशक्ति प्राप्त होती है।

इसके सेवन कालमें शाक और अम्ल पदार्थों को छोड़कर यथेच्छ आहार करना चाहिये।

इस चूर्णको गोमूत्रके साथ पीनेसे अठारह प्रकारके कुष्ठ, पामा, विचर्चिका, नाड़ीव्रण, गुल्म, शूल, तिल्ली और उदररोगोंका नाश होता है।

इसे तक्रके साथ सेवन करनेसे मनुष्य समस्त रोगरहित, बलवान, गृध्रदृष्टि, बलि पलितरहित, पवनके समान वेगवाला और दिव्य रूपवान हो जाता है।

दो मासतक सेवन करनेसे पंडित हो जाता है।

(३५९९) निर्गुण्डीकल्पः (२)

(र. र. र. । उपदेश ४)

पुष्यार्के ग्राहयेत्प्रातर्निर्गुण्डीमूलजां त्वचम्।
छायाशुष्कां विचूर्ण्याथ कर्षमेकं पिबेत्सदा॥
अजामूत्रपलैकेन षण्मासादमरो भवेत्।
वर्षमात्रप्रयोगेण शिवतुल्यो भवेन्नरः॥
तच्चूर्णं क्षीरमध्वाज्यैर्लोडितं स्निग्धभाण्डके।
रुद्ध्वा क्षिपेद्धान्यराशौ मासादुद्धृत्य भक्षयेत्॥
द्विपलं वर्षपर्यन्तं जीवेचन्द्रार्कतारकम्।
तच्चूर्णार्धपलं चाज्यैर्लिहेत्स्यात्पूर्ववत्फलम्॥
तच्चूर्णं त्रिफला मुण्डी भृङ्गी निम्बो गुडूचिका।
वचा चैषां समं चूर्णं मध्वाज्याभ्यां लिहेत्पलम्॥
वर्षान्मृत्युं जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम्।
निर्गुण्डीपत्रजं द्रावं भाण्डे मृद्वग्निना पचेत्॥
गुडवत्पाकमापन्नं पीतं वान्तिविरेककृत्।
निर्यान्तिकृमयस्तस्यमुखनासाक्षिकर्णतः॥
राजयक्ष्मादिरोगांश्च सप्ताहेन विनाशयेत्।
मासत्रयाज्जरां हन्ति जीवेद्वर्षशतत्रयम्॥
"ॐनमो माय गणपतये भूपतये कुबेराय स्वाहा"
इति भक्षणमन्त्रः॥

पुष्य नक्षत्रमें प्रातःकाल निर्गुण्डी (संभालु) की जड़की छाल उतारकर उसे छायामें सुखा कर चूर्ण बनावें। इसे १। तोले (१ कर्ष) की मात्रानुसार १ पल (५ तोले) बकरीके मूत्रके साथ ६ मास तक पीनेसे मनुष्य अमर हो जाता है। १ वर्ष तक सेवन करनेसे शिव समान हो जाता है।

इस चूर्णको दूध, शहद और घीमें मिलाकर मिट्टीके चिकने बरतनमें भरकर उसके मुखको शरावसे ढक दें और उस पर कपर मिट्टी कर दें। इस बरतनको अनाजके ढेरमें दबा दें और १ मास पश्चात् निकालकर सेवन करें।

इसमें से नित्य प्रति २ पल दवा १ वर्ष तक सेवन करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है।

उपरोक्त चूर्णमें से आधा पल लेकर घीमें मिलाकर खानेसे भी दीर्घायु प्राप्त होती है।

इस चूर्णमें समान भाग त्रिफला, मुण्डी, भंगरा, नीमकी छाल, गिलोय और बचका चूर्ण मिलाकर उसमें से १ पलकी मात्रानुसार शहद और घीके साथ खाने से १ वर्षमें मनुष्य जरामृत्यु रहित हो जाता है।

निर्गुण्डी (संभालु) के पत्तोंके रसको मन्दाग्निपर पकाकर गुड़के समान गाढ़ा करें। इसे खानेसे वमन और विरेचन होता तथा मुख, नाक, आंख और कानसे कृमि निकल कर सात दिनमें राजयक्ष्मा इत्यादि रोग नष्ट हो जाते हैं।

तीन मास तक सेवन करने से जरा (वृद्धावस्था) दूर होकर तीनसौ वर्षकी आयु प्राप्त होती है।

इसे "ॐ नमो माय....स्वाहा" मन्त्र पढ़कर खाना चाहिये।

इति नकारादिकल्पप्रकरणम्।

अथ नकारादिरसप्रकरणम्

नोट—पारा, गन्धक, वछनाग आदि समस्त रस, उपरस, विष, उपविष आदि शुद्ध ही लेने चाहियें चाहे टीकामें इनके नामके साथ 'शुद्ध' शब्द लिखा हो या न लिखा हो।

(३६००) नयनचन्द्रलोहम्[१]

(भै. र.; धन्वं.; र. रा. सु.; र. सा. स. । नेत्ररो.)

त्रिकटु त्रिफला शृङ्गी शठी रास्ना महौषधम्।
द्राक्षा नीलोत्पलश्चैव काकोली मधुयष्टिका॥
वाट्यालकं केशरश्च कण्टकारीद्वयं तथा।
लौहाभ्रयोः पलं दत्त्वा भावयेदौषधैरिमैः॥
त्रिफलाक्वाथतैलेन भृङ्गराजरसेन च।
भावयित्वा वटी कार्या बदरास्थिमिता शुभा॥
यावन्तो नेत्ररोगांश्च तान्निहन्ति न संशयः।
(अत्र सर्वचूर्णसमं लौहाभ्रं ग्राह्यम्)

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, काकड़ासिंगी कचूर, रास्ना, अतीस, दाख (मुनक्का), नीलकमल, काकोली, मुलैठी, कंघी, नागकेसर, छोटी कटेली और बड़ी कटेली का चूर्ण १-१ भाग, लोहभस्म ९ भाग और अभ्रकभस्म ९ भाग। सबको एकत्र मिलाकर १-१ दिन त्रिफलाके क्वाथ, तिलके तैल और भंगरेके रसमें घोटकर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे समस्त नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१ से २ गोली तक। घीके साथ)

नयनामृतलोहम्

(र. सा. सं., वृं मा. । नेत्र.)

नयनचन्द्रलोह देखिये।

१—रसेन्द्रसार संग्रहमें "नयनामृतलोह" नाम लिखा है।

(३६०१) **नवज्वरमुरारिरसः**

(र. र. स. । उ. खं. अ. १२)

हरश्च गन्धकश्चैव कुनटी च समं समम् ।
मर्द्यं कर्कोटिकायाश्च रसेन विनियोजयेत् ॥
नवज्वरमुरारिः स्याद्वल्लं शर्करया सह ।
तण्डुलीयरसश्चानुपानं शर्करयाऽपि वा ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन ज्वरान्हन्ति नवान्हठात् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और शुद्ध मनसिल, समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके एक दिन ककोड़ेके रसमें घोटें ।

इसे खांडके साथ मिलाकर खिलानेसे नवीन ज्वर नष्ट होता है ।

मात्रा—२ रत्ती । अनुपान–चौलाईकी जड़ का क्वाथ या खांडका शर्बत ।

(३६०२) **नवज्वररिपुरसः**

(र. रा. सुं.; र. का. धे. । ज्वर.; रसें. चि.।अ.९)

ताम्रं पत्रमयं प्रताप्य बहुशो निर्वाप्य पञ्चामृते ।
गोमूत्रेऽग्निजले बलिद्विगुणितं
म्लेच्छेन पिष्टेन च ॥
लिप्त्वा सप्तमृदांशुकैरथ पुनः सामुद्रयामं पचेत् ।
यन्त्रे लावणिके नवज्वररिपुः स्याद्गुञ्जया
सम्मितः ॥

(अत्रआर्द्रकरसानुपानम् ।)

ताम्रके बारीक पत्रोंको बारबार तपाकर पञ्चामृत[1] में बुझावें, फिर गोमूत्र और चीते के क्वाथमें बुझावें । (हरेक पदार्थमें कमसे कम सात बार बुझाना चाहिये) तत्पश्चात् उससे दो गुने गन्धक और शिंगरफको एकत्र मिलाकर पानीके साथ घोटकर उन पत्रों पर लेप करदें और उन्हें शराव सम्पुटमें बन्द करके उसके उपर सात कपर मिट्टी कर दें । तत्पश्चात् इस सम्पुटको सुखाकर ४ पहर तक लवणयन्त्रमें तीव्राग्नि पर पकावें और फिर यन्त्र के स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे औषधको निकालकर पीस लें ।

इसमें से १–१ रत्ती दवा अद्रकके रसके साथ देनेसे नवीन ज्वर नष्ट होता है ।

नवज्वरविनाशनरसः

(वै. क. द्रु. । स्क. २ ज्वर.)

"प्रचण्डरस" देखिये ।

(३६०३) **नवज्वरहरीवटी**

(वृ. यो. त. । त. ५९; भा. प्र. ख. २; र. रा. सुं. । ज्वर.)

रसो गन्धो विषं शुण्ठी पिप्पली मरिचानि च ।
पथ्या विभीतकं धात्री दन्तीबीजं च शोधितम् ॥
चूर्णमेषां समांशानां द्रोणपुष्पीरसैः पुटेत् ।
वटीं माषनिभां कुर्याद्भक्षयेन्नूतने ज्वरे ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध मीठा तेलिया (बछनाग), सोंठ, पीपल, मिर्च, हर्र, बहेड़ा, आमला और शुद्ध जमाल गोटा । सब चीजें समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य चीजोंका कपड़छन महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन गूमाके रससे घोटकर उर्दके बराबर गोलियां बनावें ।

[1]—पञ्चामृत = गिलोय, गोखरु, मूसली, मुण्डी, शतावर ।

इनके सेवनसे नवीन ज्वर नष्ट होता है ।

(३६०४) नवज्वरहरो रसः (१)

(र. का. धे. । ज्वर.)

रसबलिटङ्कणदरदं सशुल्वजैपालकं क्रमतः ।
द्विद्विद्वित्रिद्विकरसतुलितं दन्तीरसैस्त्रिदिनम् ॥
भावितमथ तद्गुञ्जाद्वयमिह देयं सितासहितम् ।
सद्राक्षं वा तक्रं दद्यात् पथ्यं ज्वरहरो यामात् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील और ताम्र भस्म २–२ भाग, शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ) ३ भाग और शुद्ध जमालगोटा ६ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें; तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको ३ दिन तक दन्तीमूलके काथमें घोटें और फिर उसका गोला बनाकर, सुखाकर उसे सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंकदें और फिर निकालकर पीसलें ।

इसे खांड या दाख (मुनक्का) के साथ देनेसे नवीन ज्वर १ पहरमें ही नष्ट हो जाता है ।

पथ्य—छाछ (तक्र) ।

(मात्रा—१ रत्ती ।)

नवज्वरहरो रसः (२)

नवज्वरहरीवटी देखिये ।

(३६०५) नवज्वराङ्कुशरसः

(र. चं.; र. सा. सं.; धन्वं.; र. का. धे.; भै. र.; र. रा. सुं. । ज्वर.)

रसं गन्धं च दरदं जैपालं क्रमवर्धितम् ।
दन्तीरसेन सम्पिष्य वटीगुञ्जामिता कृता ॥
प्रभाते सितया सार्धमशिता शीतवारिणा ।
एकेन दिवसे नैव नवज्वरहरा भवेत् ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ) ३ भाग, और शुद्ध जमालगोटा ४ भाग लेकर प्रथम पारेगन्धककी कज्जली बना लीजिये तत्पश्चात् उसमें अन्य चीजें मिलाकर दन्तीमूलके काथमें घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लीजिये ।

इनमें से एक एक गोली प्रातःकाल खांडमें मिलाकर ठण्डे पानीसे खानेसे नवीन ज्वर एकही दिनमें नष्ट हो जाता है ।

नोट—रसराज सुन्दरमें इसका नाम 'नवज्वर-हरी' है ।

नवज्वरारण्यकृशानुमेघरसः

(र. चं. । ज्वर.)

(भा. भै. र. भाग २ में पृष्ठ ५०४ पर २७७८ संख्यक "**त्रैलोक्य सुन्दर**" (५) देखिये । उसीका नाम रसचण्डांशु में '**नवज्वरारण्यकृशानुमेघरस**' दिया है ।

(३६०६) नवज्वरारिरसः

(र. का. धे. । ज्वर.)

त्रिःसप्तकृत्वो रसकं भावयेन्निम्बुनीरतः ।
तद्वद्वा नवनीतेन भावयेन्मतिमान्भिषक् ॥
वल्लद्वयं सितायुक्तं दापयेत्तु नवज्वरे ।
मुद्गयूषेण पथ्यं स्यान्नवज्वरनिवारणः ॥

शुद्ध खपरिया को नीबूके रस की २१ भावना देकर या उसे नवनीत (नैनी घी) में घोट-कर रक्खें ।

इसमेंसे ६ रत्ती दवा मिश्रीके साथ देनेसे नवीन ज्वर नष्ट होता है।

पथ्य—मूंगका यूष और भात।

नवज्वरारिरसः (पर्पटिकारसः)

(र. र. स. । उ. अ. १२)

"त्रैलोक्य सुन्दररस" (५) के समान ही है। भारत भै. र. भाग २ पृष्ठ ५०४ पर प्रयोग सं. २७७८ देखिये।

(३६०७) **नवज्वरेभसिंहरसः**

(भै. र.; वृं. नि. र.; वै. क. द्रु.; र. चं.; र. सा. सं.; र. रा. सुं.; र. का. धे. । ज्वर.; र. मं. । अ. ७; रसें. चिं. । अ. ९.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं लोहं ताम्रश्च सीसकम् ।
मरिचं पिप्पलीं विश्वं समभागानि कारयेत् ॥
अर्द्धभागं विषं दत्त्वा मर्दयेद्वासरद्वयम् ।
शृङ्गवेराम्बुपानेन दद्याद्गुञ्जाद्वयं भिषक् ॥
नवज्वरे महाघोरे धातुस्थे ग्रहणीगदे ।
नवज्वरेभसिंहोऽयं सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, ताम्र भस्म, सीसाभस्म, कालीमिरच, सोंठ और पीपल १—१ भाग तथा शुद्ध बछनाग, (मीठा तेलिया) आधा भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें, तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर २ दिन तक खरल करें।

इसमें से २ रत्ती औषध अद्रकके रसके साथ देनेसे घोर नवीन ज्वर तथा धातुगत ज्वर और ग्रहणी विकार नष्ट होते हैं।

नवरत्नराजमृगाङ्करसः

(यो. र.; र. रा. सुं. । यक्ष्मा.)

"राजमृगाङ्क" देखिये।

(३६०८) **नवायसचूर्णम्** (१)

(यो. चि. । अ. ३; च. सं. । चि. अ. २०; ग. नि. । चूर्णा.; यो. त. । त. २५; वृ. यो. त. । त. ७४; र. का. धे. । प्रमे.; भै. र.; र. चं.; वं. से.; भा. प्र.; वृ. नि. र.; वै. र.; वृं. मा; च. द.; र. र.; र. रा. सु.; यो. र.; सु. सं.; । पाण्डुचिकि.)

त्र्यूषणं त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा ।
एतानि नव भागानि नवभागं हतायसम् ॥
एतदेकीकृतं चूर्णं नरोऽष्टादशरक्तिकम् ।
प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां पिबेत्तक्रेण वा सह ॥
गोमूत्रेण पिबेद्वापि पाण्डुरोगं स नाशयेत् ।
शोथं हृद्रोगमुदरं कृमिकुष्ठं भगन्दरम् ॥
नाशयेदग्निमान्द्यं च दुर्नामकमरोचकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनापि लिह्यात्कफसमृद्धिमान् ॥
(अत्र नवायसं लोहं नवरक्तिकामितं भक्षणीयम्)

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिडंग और चीता । इनका चूर्ण १—१ भाग तथा लोहभस्म ९ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

इसे शहद और घी के साथ चाटने या छाछ अथवा गोमूत्रके साथ सेवन करने से पाण्डु, शोथ, हृद्रोग, भगन्दर, उदर रोग, कृमि, कुष्ठ, अग्निमांद्य, अर्श और अरुचि आदि रोग नष्ट होते हैं।

यदि कफका प्रकोप हो तो अद्रकके रसके साथ सेवन करना चाहिए।

साधारण मात्रा—९ रत्ती तथा बलवान व्यक्तिके लिये १८ रत्ती।

(३६०९) **नवायसचूर्णम्** (बृहत्) (२)

(ग. नि. । चूर्णा.)

त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवङ्गकैः।
नवभागोन्मितैरेतैः समं तीक्ष्णं मृतं भवेत् ॥
सञ्चूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रे नित्यं यः सेवते नरः।
कासं श्वासं क्षयं मेहं पाण्डुरोगं भगन्दरम् ॥
ज्वरं मन्दानलं शोफं सम्मोहं ग्रहणीं जयेत् ॥

सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, इलायची, जायफल और लौंग। सबका चूर्ण १-१ भाग तथा तीक्ष्णलोह भस्म ९ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे खांसी, श्वास, क्षय, प्रमेह, पाण्डु, भगन्दर, ज्वर, अग्निमांद्य, शोथ, मोह और ग्रहणी विकार नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१ माशा)

(३६१०) **नवायसचूर्णम् (गुटिका)** (३)

(ग. नि. । परि. चूर्णा.)

किराततिक्तं सुरदारु दार्वी
मुस्ता गुडूची कटुका पटोलम्।
दुरालभा पर्पटकं सनिम्बं
कटुत्रिकं वह्निफलत्रिकं च ॥
विडङ्गकं चैव समांशकानि
सर्वैः समं चूर्णमथापि लोहम्।
सर्पिर्मधुभ्यां गुटिका विधेया
सेव्या सदा वै बदरप्रमाणाः ॥
निहन्ति पाण्डुं श्वयथुं प्रमेहं
हलीमकं संग्रहणीमदोषम्।
श्वासञ्च कासं च सरक्तपित्त-
मर्शांसि चोर्वोग्रहमामवातम् ॥

चिरायता, देवदारु, दारुहल्दी, नागरमोथा, गिलोय, कुटकी, पटोलपत्र, धमासा, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, और बायबिड़ंग का चूर्ण १—१ भाग तथा लोहभस्म सबके बराबर लेकर सबको घी और शहदमें घोटकर बेरके समान गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे पाण्डु, शोथ, प्रमेह, हलीमक, संग्रहणी, श्वास, खांसी, रक्तपित्त, अर्श, ऊरुग्रह और आमवात का नाश होता है।

नवायसलोहम्

(ग. नि.; यो. र.; बृ. यो. त.)

भा. भै. रत्नाकर भाग २ पृष्ठ ४७६ पर "त्रिकट्वादि लोहम्" प्रयोग सं. २७०९ देखिये।

(३६११) **नवायसलोहम्**

(हा. सं. । पाण्डु.)

त्र्यूषणं त्रिफला मुस्ता विडङ्गं चित्रकं समम्।
भागमेकं लोहचूर्णं भावयेदिक्षुजै रसैः ॥
अष्टभागञ्च मण्डूरं दत्त्वा भाव्यञ्च पूर्ववत्।
शीलितन्तु मधुनाऽपि घृतेन
पाण्डुरोगहृदयामयापहम्।
सेवितं प्रखरकामलार्शसां
नाशनं खलु हलीमकस्य च ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला,

नागरमोथा बायबिडंग और चीतेका चूर्ण तथा लोहभस्म १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर ईखके रसके साथ घोटें तत्पश्चात् उसमें ८ भाग मण्डूर भस्म मिलाकर १ दिन ईखके रसमें घोटकर रक्खें ।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे पाण्डु, हृद्रोग, प्रवृद्ध, कामला, अर्श और हलीमक रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा-१ माशा ।)

(३६१२) **नव्यचन्द्ररसः**

(र. चिं. । स्त. ११; र. रा. सुं. । ज्वर.)

शम्भोर्बीजं गलगतमथाङ्कोलवीजं च तीक्ष्णम् ।
चेतो धात्री समलवमिदं मार्कवं वेदभागम् ॥
श्लक्ष्णं पिष्ट्वा दहनसलिलैर्याममात्रं त्रियामम्
भृङ्गस्याद्भिर्भवति रसराण्नव्यचन्द्राभिधानः ॥
वल्लं निम्बार्द्रकभवरसैः सेवितो याममात्रा-
च्चित्रं हन्याज्ज्वरमभिनवं तस्य तीव्रत्वशान्त्यै ॥
दद्यादिक्षून्मधुरसयुतं दाडिमं शर्कराश्च ।
द्राक्षाम्लरूयं सदधिवितरेत्पथ्यमन्नं सुतक्रम् ॥

पारद भस्म, शुद्ध बछनाग (मीठातेलिया), अङ्कोटके बीज, फौलादभस्म और चूका १-१ भाग तथा भंगरा ४ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके १ पहर चीतेके काथ और ३ पहर भंगरे के रसमें घोटें ।

इसमें से ३ रत्ती औषध नीम या अद्रकके रसके साथ देनेसे नवीन ज्वर १ पहर में ही उतर जाता है ।

यदि इसके सेवनसे दाह हो तो ईख, मीठा अनार, खाडका शर्बत, दाख और दही देना चाहिए तथा आहारमें तक्रभात खिलाना चाहिये ।

(३६१३) **नष्टपुष्पान्तकरसः**

(र. चं. । स्त्रीरो.)

रसेन्द्रं गन्धकं लौहं वङ्गं सौभाग्यमेव च ।
रजताभ्रं च ताम्रं च प्रत्येकं च पलं पलम् ॥
गुडूचीत्रिफलादन्तीशेफालीकण्टकारिका ।
दारुजीवन्तीकुष्ठञ्च बृहतीकाकमाचिका ॥
नक्तं तालीसवेत्राग्रं श्वदंष्ट्रा वृषकम्बला ।
एतेषां स्वरसैर्भाव्यं त्रिवारं च पृथक् पृथक् ॥
सैन्धवं मधुकं दन्ती लवङ्गं वंशलोचनम् ।
रास्ना गोक्षूरबीजं च शाणमानं विचूर्णयेत् ॥
सर्वमेकी कृतं पेष्यं जयन्तीतुलसीरसैः ।
मर्दयित्वा वटीं कुर्यान्नष्टपुष्पकयोषिताम् ॥
नष्टपुष्पे नष्टशुक्रे योनिशूले च शस्यते ।
योनिदाहे क्लेदयोन्यां नष्टपुष्पान्तको भवेत् ॥

पारा, गन्धक, लोहभस्म, बंगभस्म, सुहागेकी खील, चांदीभस्म, अभ्रक भस्म और ताम्र भस्म । हरेक ५-५ तोले लेकर सबकी कज्जली करके उसे गिलोय, त्रिफला, दन्ती, हारसिंगार, कटेली, मकोय, हल्दी, तालीस पत्र, बेतकी गोभ, गोखरु, वासा और खरैटी में से हरेकके स्वरस (या काथ) की पृथक् पृथक् ३-३ भावना दें । तत्पश्चात् सेंधानमक, मुलैठी, दन्तीमूल, लौंग, बंसलोचन, रास्ना और गोखरु का १-१ शाण (वर्तमान तोलसे हरेकका ५-माशे) चूर्ण उक्त औषधमें मिलाकर उसे १-१ दिन जयन्ती और तुलसीके रसमें घोटकर (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

यह गोलियां नष्टार्तव (मासिक धर्म न होना), नष्टशुक्र, योनिदाह और योनिके क्लेद इत्यादि विकारों में उपयोगी हैं।

(मात्रा—१ से २ गोली तक। अनुपान—उष्ण जल)

नस्यभैरवः

(र. च.; र. सा. सं.; र. रा. सु.)

नस्यप्रकरणमें देखिये।

(३६१४) **नागभक्तयादिः**

(र. रा. सुं.। प्रमेहा.)

तुल्यांशं मारितं सीसं दग्धं हरिणशृङ्गकम्।
कार्पासबीजमज्जा च तुल्यमङ्कोलबीजकम्॥
पेषयेन्माहिषैस्तक्रैर्दिनैकं वटकीकृतम्।
माषद्वयं सदाखादेत्सुरानामप्रमेहजित्॥

सीसाभस्म, हरिनशृङ्गभस्म, कपासके बीज (बिनौले) की मज्जा, और अङ्कोल (हिंगोट) के बीज बराबर बराबर लेकर सबको १ दिन भैंसके तक्रमें घोटकर २—२ माशे की गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे सुरामेह नष्ट होता है।

(३६१५) **नागभस्मयोगः (१)**

(र. का.। कृमि.)

पलाशबीजतैलेन शिलां सम्मर्दयेद् दृढम्।
तनूनि नागपत्राणि तेन शुद्धानि लेपयेत्॥
पादांशं पारदं क्षिप्त्वा सम्पुटे रोधयेच्च तत्।
दाहयेच्च चतुर्यामं शीतं कुर्यात्पुनस्तथा॥
तथा लिप्त्वा दहेत्तावद्यावत्तद्भस्मतामियात्।
तद्भस्मसमाषमानन्तु तस्तोदककणायुतम्॥
सर्वान् कृमींश्च्छ्वासकासौ हृद्रोगादीन्विनाशयेत्॥

५ तोले मनसिल और १। तोला पारेको एकत्र खरल करके १ दिन ढाकके बीजोंके तैलमें घोटें फिर ५ तोले सीसेके शुद्ध, कंटकवेधी पत्रों-पर उसका लेप करके उन्हें सम्पुटमें बन्द करके पुटमें पकावें। उपले इतने डालने चाहियें कि अग्नि ४ पहरमें शान्त हो जाय। तत्पश्चात् सम्पुटके स्वांगशीतल होने पर उसमें से सीसेको निकालकर उसपर उपरोक्त विधिसे मनसिलका लेप करके पुनः पुटमें पकावें। जब तक सीसेकी भस्म न हो जाय इसी प्रकार करते रहें।

इसे समान भाग पीपलके चूर्णमें मिलाकर गर्म पानीके साथ सेवन करनेसे कृमि, श्वास, खांसी और हृद्रोगादि नष्ट होते हैं।

मात्रा १ माशा। (व्यवहारिक मात्रा २—३ रत्ती।)

(३६१६) **नागभस्मयोगः (२)**

(नपुंस.। त. ७; यो. र.। मेह.; वृ. यो. त.। त. १०३)

शुद्धस्य च मृतस्याहेरजो वल्लमितं लिहेत्।
सनिशामलकं क्षौद्रं सर्वमेहप्रशान्तये॥

३ रत्ती सीसाभस्मको हल्दी और आमलेके (१—१ माषा) चूर्ण में मिलाकर शहदके साथ चाटने से सर्व प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं।

(३६१७) **नागभस्मयोगः (३)**

(र. चं.। उपदंशचि.)

ससितामृतनागश्च यो भजेद्धस्तिना मतम्।
तस्य सर्वेन्द्रियोत्पन्नं रोगजालं हरेद्ध्रुवम्॥

खांड, शुद्ध बछनाग (मीठातेलिया) और सीसाभस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें ।

इसके सेवनसे हर प्रकारका उपदंश नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ रत्ती । अनुपान–शहद या त्रिफलाकाथ ।)

(३६१८) नागभस्मविधिः (१)

(आ. वे. प्र. । अ. ११; भा. प्र. । पूर्व.)

ताम्बूलरससम्पिष्टशिलालेपात्पुनः पुनः ।
द्वात्रिंशद्भिः पुटैर्नागो निरुत्थं भस्म जायते ॥

१० तोले मनसिलको पानके रसमें घोटकर १० तोले सीसेके महीन पत्रोंपर लेप करके उन्हें सम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी अग्निमें पकावें । इसी प्रकार ३२ पुट देनेसे सीसेकी निरुत्थ भस्म तैयार हो जाती है ।

(३६१९) नागभस्मविधिः (२)

(भा. प्र. । प्र. खं.)

अश्वत्थचिञ्चात्वक्चूर्णं चतुर्थांशेन निक्षिपेत् ।
मृत्पात्रे विद्रुतो नागो लोहदर्व्या प्रचालितः ॥
यामेकेन भवेद्भस्म तत्तुल्या स्यान्मनःशिला ।
काञ्जिकेन द्वयं पिष्ट्वा पचेद्गजपुटेन च ॥
स्वाङ्गशीतं पुनः पिष्ट्वा शिलया काञ्जिकेन च ।
पुनः पचेच्छरावाभ्यामेवं षष्टिपुटैर्मृतिः ॥

८ भाग शुद्ध सीसेको लोहपात्र में डालकर अग्निपर चढ़ावें और १–१ भाग इमली तथा पीपलकी छालका चूर्ण एकत्र मिलाकर पास रख लें और उसमें से थोड़ा थोड़ा पिघले हुवे सीसेपर छिड़कते तथा उसे लोहेकी करछी से चलाते रहें । इस प्रकार १ पहरमें सीसेकी भस्म बन जायगी । अब इसमें इसके बराबर मनसिल मिलाकर काञ्जी के साथ घोटकर टिकिया बनावें और उन्हें सुखाकर सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें । इसी प्रकार मनसिलके साथ काञ्जीमें घोटकर साठ पुट दें तो सीसेकी भस्म तैयार हो जायगी ।

(३६२०) नागभस्मविधिः (३)

(अनु. त. । को. १)

भागैकमहिफेनस्य नागभागचतुष्टयम् ।
घर्षणान्निम्बकाष्ठेन मन्दवह्निप्रदानतः ॥
नागभूतिर्भवेच्छ्वेता वीर्यदार्ढ्यकरी मता ॥

१ भाग अफीम और ४ भाग सीसेको कढ़ाई में डालकर मन्दाग्नि पर चढ़ावें और उसे भस्म होने तक नीमके सोटे से घोटते रहें ।

इस क्रियासे सीसेकी श्वेत भस्म बनती है जो वीर्यको पुष्ट करती है ।

(३६२१) नागमारणम्

(र. प्र. सु. । अ. ४)

अथापरप्रकारेण नागमारणकं भवेत् ।
लोहपात्रे द्रुते नागे घर्षणं तु प्रकारयेत् ॥
चतुर्यामं प्रयत्नेन मूलैश्चैव पलाशजैः ।
अधस्ताज्ज्वालयेत्सम्यग्घठाग्निं म्रियते ध्रुवम् ॥
रक्ताभं जायते चूर्णं सर्वकार्येषु योजयेत् ॥

शुद्ध सीसेको लोहेकी कढ़ाहीमें डालकर उसे तीव्राग्निपर चढ़ा दें । जब सीसा पिघल जाय

तो उसे पलाशकी जड़से रगड़ना आरम्भ करें और निरन्तर ४ पहर तक इसी प्रकार रगड़ते रहें ।

इस क्रियासे सीसेकी लाल भस्म बन जाती है।

(३६२२) **नागरसः** (१)

(र. चं.; यो. र. । कास.)

लवङ्गजातीफलजातिपत्रिका–
स्तथैव नागोषणग्रन्थिकानि।
कर्षप्रमाणानि तथैकशाणं
कस्तूरिका कुङ्कुमयोः प्रयुञ्ज्यात् ॥
आर्द्राम्बुनाऽथ विहिता वटिका त्रिगुञ्जा–
चार्द्राऽऽम्भसाऽपि विनिहन्ति कफक्षयादीन् ।
किं श्वासकासं जठरस्य शूलं
नानानुपानैः सकलामयघ्नी ॥

लौंग, जायफल, जावित्री, कालीमिर्च, और पीपलामूलका चूर्ण तथा नागभस्म १।–१। तोला तथा कस्तूरी और केसर ५–५ माशे लेकर सबको अदरकके रसमें घोटकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इन्हें अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे कफ, क्षय, श्वास, खांसी और उदरशूल नष्ट होता है । उचित अनुपानके साथ खिलानेसे यह अन्य समस्त रोगोंको भी नाश करता है ।

(३६२३) **नागरसः** (२)

(र. रा. सुं । कास.)

पारदं पलमानं स्याद्गन्धकं द्विपलं स्मृतम् ।
गन्धकेन हतं नागं सार्द्धं द्विपलकं स्मृतम् ॥
अमृतं द्विपलं प्रोक्तं पिप्पलीद्विपला स्मृता ।
मरिचं द्विपलं चोक्तं शङ्खभस्म पलं मतम् ॥
अरण्योपलजं भस्म पलमानं प्रयोजयेत् ।
सर्वमेकत्र कृत्वा तु सुखल्वे मर्दयेद्दिनम् ॥
आर्द्रकस्य रसेनाथ द्विगुञ्जं भक्षयेत्पुमान् ।
शीताङ्गं सन्निपातं च वातरोगं जयेद् ध्रुवम् ॥

पारा १ पल (५ तोले), गन्धक २ पल, गन्धक द्वारा की हुई सीसेकी भस्म २॥ पल, बछनाग (मीठातेलिया) २ पल, पीपलका चूर्ण २ पल, काली मिर्चका चूर्ण २ पल तथा शङ्खभस्म और अरण्य उपलोंकी भस्म १–१ पल लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें, तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन खरल करें ।

इसमेंसे २ रत्ती रस अदरकके रसके साथ देनेसे शीताङ्ग सन्निपात और वातव्याधि नष्ट होती है ।

(३६२४) **नागरसायनम्**

(र. र. स. । उ. ख. अ. ५)

एवं नागोद्भवं भस्म ताप्यभस्मार्धभागिकम् ।
पादं पादं क्षिपेद्भस्म शुल्वस्य विमलस्य च ॥
कान्ताभ्रसत्वयोश्चापि स्फटिकस्य पृथक् पृथक् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पुटेत्त्रिफलवारिणा ॥
त्रिंशद्वनगिरिण्डैश्च त्रिंशद्वारं विचूर्ण्य च ।
व्योषवेल्लकचूर्णैश्च समांशैः सह मेलयेत् ॥
मध्वाज्यसहितं हन्ति मलीढं वल्लमात्रया ।
अशीतिवातजान्रोगान्धनुर्वातं विशेषतः ॥
कफरोगानशेषांश्च मूत्ररोगांश्च सर्वशः ।
श्वासं कासं क्षयं पाण्डुं श्वयथुं शीतकज्वरम् ॥
ग्रहणीमामदोषञ्च वह्निमान्द्यं सुदुर्जयम् ।
सर्वानुदकदोषांश्च तत्तद्रोगानुपानतः ॥

सीसाभस्म ४ भाग, स्वर्णमाक्षिक भस्म २ भाग, ताम्रभस्म, विमलभस्म, कान्तलोहभस्म, अभ्रकसत्व-भस्म, और स्फटिकमणि-भस्म १-१ भाग लेकर सबको १ दिन त्रिफलाके काथ में घोटकर टिकिया बनाकर सुखावें और उन्हें शराव सम्पुटमें बन्द करके ३० अरने उपलोंकी अग्निमें फूंक दें । इसी प्रकार त्रिफलाके काथमें घोट घोट कर ३० पुट दें ।

अब इसमें समान भाग मिश्रित सोंठ, मिर्च, पीपल और बायबिडंगका चूर्ण इसके बराबर मिलाकर खरल करें ।

इसे ३ रत्ती मात्रानुसार घी और शहदके साथ सेवन करनेसे ८० प्रकारके वातरोग और विशेषतः धनुर्वातका नाश होता है तथा यथोचित अनुपान के साथ खानेसे समस्त कफरोग, सर्व मूत्रविकार, श्वास, खांसी, क्षय, पाण्डु, शोथ, शीतज्वर, संग्रहणी, आमदोष, दुस्साध्य अग्निमांद्य, तथा जलविकार नष्ट होते हैं ।

(३६२५) नागराजरसः

(र. चिं. । स्तब. ४; र. का. धे. । अ. ३९)

ताम्रचूर्णं रसं शुद्धं द्वयमेतद्विघृष्य च ।
काकोदुम्बरिकामूलभवैस्तोयैर्विभावयेत् ॥
पूर्ववत्पुटिते तस्मिन्पारदं शुद्धमानयेत् ।
एकैकां रक्तिकां दद्यात्काकोदुम्बरवारिणा ॥
कुष्ठं कष्टयुतं नूनं नाशयेदचिरेण तत् ।
विसूच्यामपि दातव्यः पूर्वोक्तेनानुपानतः ॥
ज्वरे च पिप्पलीभिस्तं श्लेष्मिके मरिचेन च ।
वातोल्वणेषु रोगेषु रास्नाक्वाथानुपानतः ॥
पित्ते पर्पटतोयेन क्षये द्राक्षारसेन च ।
प्रमेहे त्रिफलाक्वाथैर्देयः सर्वजनप्रियः ॥
ग्रहण्यां शाल्मलीसत्त्वानुपानेन प्रदापयेत् ।
आर्द्रकेण समं देयः सर्वरोगेषु पारदः ॥

शुद्ध ताम्रचूर्ण और शुद्ध पारा समान भाग लेकर दोनोंको कठूमर (कठगूलर) के रसमें घोटकर टिकिया बनाकर सुखाकर सम्पुटमें बन्द करके फूंक दें । इसी प्रकार बार बार पारा मिलाकर भस्म होने तक पुट लगाते रहें ।

इसमेंसे १-१ रत्ती भस्म कठूमरके रसके साथ देनेसे कष्टसाध्य कुष्ठ अवश्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता है । इसके अतिरिक्त इसे विसूचिका में भी कठूमरकी छालके रसके साथ और ज्वरमें पीपलके चूर्णके साथ, कफवृद्धिमें काली मिर्चके चूर्णके साथ, वातज रोगोंमें रास्नाके काथके साथ, पित्तज रोगोंमें पितपापड़ाके रसके साथ, क्षयमें दाख (मुनक्का) के पानीके साथ, प्रमेहमें त्रिफला के क्वाथ, संग्रहणीमें सेंभलकी छालके रस या मोचरस और अन्य रोगों में अद्रकके रसके साथ देना चाहिये ।

(३६२६) नागवल्लभरसः

(यो. र. । मेह.)

कर्षमाना मृगमदचोचटङ्कणका अथ ।
काश्मीरजन्मदरदपिप्पल्यः स्युर्द्विकार्षिकाः ॥
आकारकरभो जातीपत्री जातीफलं विषम् ।
प्रत्येकं पलमानानि चत्वार्यथ सुखल्वके ॥
अहिवल्लीदलरसैर्मर्दयेच्च दिनत्रयम् ।
मुद्गप्रमाणा वटिका लीढा मध्वार्द्रकद्रवैः ॥

ताम्बूलचर्विता मेहकासक्षयमरुद्धरा ।
नागवल्लभनामाऽयं रसो विश्वोपकारकः ॥

कस्तूरी, दालचीनी और सुहागेकी खील, १।-१। तोला तथा केशर, शिंगरफ और पीपल २॥-२॥ तोला एवं अकरकरा, जावित्री, जायफल और शुद्ध बछनाग (मीठाविष) ५-५ तोला । सबके चूर्णको ३ दिन पानके रसमें घोटकर मूंगके बराबर गोलियां बनावें ।

इन्हें शहद और अद्रकके रसमें मिलाकर या पानमें रखकर खानेसे प्रमेह, खांसी, क्षय और वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(३६२७) नागशोधनम् (१)

(र. सा. स. । पूर्वख.)

नागवङ्गे च गलिते रविदुग्धेन सेचिते ।
त्रिवाराच्छुद्धिमायातः सच्छिद्रे हण्डिकान्तरे ॥

एक हण्डीमें आकका दूध भरकर उसके ऊपर एक छिद्रयुक्त प्याला ढक दें और सीसे या रांगको पिघलाकर इस छिद्र से उक्त हण्डीमें डालें । इसी प्रकार ३ बार बुझानेसे सीसा और रांग शुद्ध हो जाते हैं ।

नोट—कभी कभी गर्म रांग या सीसा हाण्डीके अन्दर द्रव पदार्थ में गिरकर इतने ज़ोरसे उछलता है कि ऊपरवाले प्यालेको तोड़कर बाहर आ गिरता है, इस लिये इन्हें शोधन करते समय सावधान रहना चाहिये कि सीसा या रांग उछल कर मस्तक आदि पर न आ लगे ।

(३६२८) नागशोधनम् (२)

(अनु. त. । को. १)

तालकस्वरसे वाराश्चत्वारिंशद्विगालयेत् ।
तप्तं तप्तं विशुद्ध्येत नागो नागेन्द्रगामिनी ॥

सीसेको पिघला पिघला कर ४० वार ताड़के रसमें बुझानेसे वह शुद्ध हो जाता है ।

(३६२९) नागशोधनम् (३)

(र. प्र. सु. । अ. ४)

निर्गुण्डीकाहरिद्रयो रसे नागं मढालयेत् ।
एवं नागो विशुद्धः स्यान्मूर्च्छास्फोटादि नाचरेत् ॥

सीसेको पिघला पिघला कर (कमसे कम ७ बार) समान भाग मिश्रित संभालु और हल्दीके रसमें बुझानेसे वह शुद्ध हो जाता है ।

इस प्रकार शुद्ध सीसेकी भस्म से मूर्छा और स्फोटकादि विकार नहीं होते ।

(३६३०) नागसुन्दररसः

(र. रा. सुं. । अति. । र. र. स. । उ. खं. अ. १६)

नागभस्मरसव्योमगन्धैरर्धपलोन्मितैः ।
कुर्वीत कज्जलीं श्लक्ष्णां प्रक्षिपेत्तदनन्तरम् ॥
द्विपलोन्मितरालायां द्रुतायां परिमिश्रिताम् ।
भृङ्गैर्यक्षाक्षसिन्धूत्थवचाव्योषद्विजीरकैः ॥
सपथ्या विजया दिव्यैस्तुल्यांशैरवचूर्णितैः ।
मेलयेत्प्राकृतनं कल्कं भावयेत्तदनन्तरम् ॥
महानिम्बत्वचां सारैः काम्बोजीमूलजद्रवैः ।
रसैर्नागबलायाश्च गुडूच्याश्च त्रिधा त्रिधा ॥
ततश्च गुटिका कार्या बदरास्थिप्रमाणतः ।

इन्यादेव हि नागसुन्दररसो बल्लोन्मितः सेवितो।
नानातीसरणं तथा गुदपरिभ्रंशं तथार्तिविषम्॥

सीसा भस्म, शुद्ध पारा, अभ्रक-भस्म और शुद्ध गन्धक आधा आधा पल (२॥-२॥ तोले) लेकर महीन कज्जली बना लीजिये। तत्पश्चात् २ पल रालको पिघलाकर उसमें यह कज्जली मिलाकर खरल कीजिए और उसमें उसके बराबर करञ्ज बीज, सेंधा, बच, सोंठ, मिर्च, पीपली, सफेद जीरा, काला जीरा, हर्र, भांग, और लोहभस्मका समभागमिश्रित चूर्ण मिलाकर सबको बकायनकी छाल, बाबचीकी जड़, नागबला (गंगेरन) और गिलोयके रसकी ३-३ भावना देकर बेरकी गुठली-के समान गोलियां बना लीजिये।

इनके सेवनसे अनेक प्रकारके अतिसार और गुदभ्रंशादि रोग नष्ट होते हैं।

(३६३१) नागादिवटिका

(र. चं. । विष.)

नागटङ्कणसंयुक्तं लवङ्गं मरीचकम् ।
भृङ्गराजरसेनैव सुचिरं दृढं मर्दयेत् ॥
राजीसमा वटी कृत्वा बालानां दापने क्षमा।
दुग्धेन मधुना वाऽथ देयाऽसाध्यगदेष्वपि ॥
अतिश्वासस्य शमनी भवेद्रोगविनाशिनी ॥

सीसाभस्म, सुहागेकी खील, लौंग और काली मिर्चका चूर्ण समान भाग लेकर सबको भंगरे के रसमें बहुत देर तक खरल करके राईके बराबर गोलियां बना लीजिये।

इन्हें शहद या दूधके साथ देने से बच्चोंका महा श्वास नष्ट होता है।

(३६३२) नागार्जुनचूर्णम्

(र. चं. । बालरो.)

त्रिकटुवचयवानीगन्धपाषाणकुष्ठम्,
सनिशरजनिपुष्पं जीरके काचकञ्च ।
कुलिरकनकबीजं तालसिन्धुं शिलाश्च,
वनजलशुनहिङ्गुमूलमैशञ्च टङ्कम् ॥
समनृपतिविडङ्गं तुल्यभागं गृहीत्वा,
दृशदि मसृणपिष्टं वस्त्रपूतं विधाय ।
ग्रहजनितगदानां क्षीरपाणां शिशूनां,
शमयति जठरोत्थाजीर्णविष्टम्भकार्श्यम् ॥
ज्वरसकलबलासारोचकाक्षिप्रदोषान्,
ग्रहजनितसमस्तातङ्कदोषविहाय ।
विपुलबलसुवर्णं स्थौल्यवृद्धिं प्रकुर्यात्
चिरमपि शिशवः स्युः सर्वरोगैर्विमुक्ताः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, अजवायन, गन्धक, कूठ, हल्दी करञ्जवा, सफेद जीरा, काला जीरा, काचनमक (कचलोना), काकड़ासिंगी, धतूरेके बीज, हरतालभस्म, सेंधा नमक, शुद्ध मनसिल, नागरमोथा, ल्हसन, हींग, शिवलिंगीकी जड़ और सुहागेकी खील १-१ भाग तथा अमलतास और बायबिड़ंग सबके बराबर लेकर सबके महीन कपड़-छन चूर्ण को एकत्र खरल करके रक्खें।

यह चूर्ण दूध पीने वाले बच्चोंके ग्रहदोष, उदर विकार, अजीर्ण, कब्ज, कृशता, ज्वर, कफ विकार, अरुचि और नेत्ररोगोंको नष्ट करता है। इसके सेवनसे बच्चोंका शरीर हृष्ट पुष्ट, बलवान और सुन्दर होता है, पाचन शक्ति बढ़ती है तथा बच्चे रोगरहित दीर्घायु प्राप्त करते हैं।

(३६३३) **नागार्जुनवटी**

(पञ्चाङ्गकृतावटी, दद्रुकुष्ठविद्रावणरसः)

(र. र. स. । उ. ख. अ. २०)

रसगन्धकताप्यालकान्तकृष्णाभ्रभस्मकम् ।
हिङ्गुलं मधुकं कुष्ठं सर्वं समविभागिकम् ॥
अम्लवेतसतोयेन त्रिदिनं परिमर्दयेत् ।
विशोष्याज्यमधुभ्याश्च मृदित्वा त्रिदिनं पुनः ॥
दत्वा जीर्णं गुडं तुल्यं कोलास्थिप्रमिता वटीः ।
छायाशुष्काः प्रकुर्वीत शम्भुमग्रे च पूजयेत् ॥
इयं हि पञ्चाङ्गकृताभिधाना
नागार्जुनोक्ता गुटिका च नूनम् ।
सर्वाणि कुष्ठानि विचर्चिकां च
दद्रूणि विद्रावयति क्षणेन ॥

पारा, गन्धक, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, हरताल, कान्तलोह-भस्म, कृष्णाभ्रक भस्म, शंगरफ (हिंगुल), मुलैठी और कूठका चूर्ण । सब चीज़ें समान भाग लेकर एकत्र मिलाकर ३ दिन अम्लवेतके रस में घोटें । तत्पश्चात् उसे सुखा कर ३–३ दिन घी और शहद में घोटकर उसमें उसके बराबर पुराना गुड़ मिलाकर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना कर छायामें सुखा लें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके कुष्ठ, विचर्चिका, और दादका नाश होता है ।

(३६३४) **नागार्जुनाभ्ररसः**

(र. चं.; र. रा. सुं.; र. सा. सं.; धन्वं. । हृद्रोग; रसे. चि. । अ. ९)

सहस्रपुटनैः शुद्धं वज्राभ्रमर्जुनत्वचः ।
सत्त्वैर्विमर्दितं सप्तदिनं खल्वे विशोषितम् ॥
छायाशुष्का वटी कार्या नाम्नेदमर्जुनाह्वयम् ।
हृद्रोगं सर्वशूलार्शो हृल्लासच्छर्द्यरोचकान् ॥
अतीसारमग्निमान्द्यं रक्तपित्तं क्षतक्षयम् ।
शोथोदराम्लपित्तञ्च विषमज्वरमेव च ॥
हन्त्यन्यानपि रोगान्हि बल्यं वृष्यं रसायनम् ॥

सहस्रपुटी वज्राभ्रकभस्मको ७ दिन अर्जुन की छालके रसमें घोटकर (१–१ रत्तीकी) गोलियां बना कर छायासें सुखा लीजिये ।

इनके सेवनसे हृद्रोग, सर्व प्रकारके शूल, अर्श, हृल्लास, छर्दि, अरुचि, अतिसार, अग्निमांद्य, रक्तपित्त, क्षत, क्षय, शोथ, उदररोग, अम्लपित्त और विषम ज्वरादि अनेकों रोग नष्ट होते तथा बल वीर्यकी वृद्धि होती है । यह रसायन भी है ।

(३६३५) **नागार्जुनी गुटिका**

(र. सं. क. । उल्ला. ५; र. का. धे. । अ. ४८.)

वङ्गं कासीसकं कृष्णा[1] गुञ्जा तुल्याऽऽर्द्रकाम्बुना
कफवातामयं हन्ति गुटी नागार्जुनाभिधा ॥

बङ्ग भस्म, शुद्ध कसीस और पीपलका चूर्ण समान भाग लेकर सबको १ दिन अदरकके रसमें घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे कफवातज रोग नष्ट होते हैं ।

(३६३६) **नागेन्द्रगुटिका**

(र. र.; र. का. धे. । मेह.)

मृतनागस्य भागैकं भागैकं वायसो भवेत् ।
दार्व्यङ्कोलफलं धात्री अक्षबीजं पलं पलम् ॥
कनकस्य फलद्रावैः पिष्ट्वा तद्गुटिका शतम् ।

१—रस काम धेनुमें "रसं त्रिशीसं त्रिः कृष्णं" यह पाठ है ।

नागेन्द्रगुटिका ख्याता तक्रैः पीत्वातिमेहजित् ॥
निशामृताद्विनिष्कश्च मधुना लेहयेदनु ॥

सीसाभस्म, अगर, दारुहल्दी, अङ्कोल-फल, आमला और बहेड़े की मींग एक एक पल लेकर सबको धतूरेके फलके रसमें घोटकर १०० गोलियां बना लीजिये ।

इन्हें तक्रके साथ खाकर हल्दी और गिलोय का ५-५ माशे चूर्ण शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये ।

इसके सेवन से प्रमेह नष्ट होता है । (यह गोलियां सिकतामेह में उपयोगी हैं । व्यवहारिक मात्रा--१ माशा ।)

(३६३७) नागेन्द्ररसः

(र. का. धे. । प्रमेह; र. सा. । पट. २६)

मृतनागसमं सूतं समगन्धेन मर्दयेत् ।
चक्रराजे स्थिरीकृत्वा विषं दद्यात्कलांशकम् ॥
गुटिका भृङ्गराजेन नागेन्द्रोऽयं रसः स्मृतः ।
अशेषव्याधिविध्वंसी क्रामणेन समन्वितः ॥

सीसाभस्म और पारा १-१ भाग तथा गन्धक २ भाग लेकर कज्जली करके उसे चक्रयन्त्र में पकावें; तत्पश्चात् उसमें उसका सोलहवां भाग शुद्ध बछनाग (मीठातेलिया) मिलाकर भंगरेके रसमें घोटकर (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(३६३८) नागेश्वरः

(आयु. वे. प्र. । अ. ११)

पलप्रमितं नागं तिलतैले सप्तवारं विशोध्य, पश्चाद्विस्तीर्णहण्डिकायां द्रवीकृत्य, वर्तुलपाषाणेन मर्दनपूर्वकं कासीसस्योत्तमस्य चूर्णं नागपरिमितं स्वल्पं स्वल्पं दत्त्वा दत्त्वा मारयेत्, मृतं नागं घटीद्वयं वह्नावेव स्थाप्यम् । पश्चाद्भाजने तच्चूर्णं दत्त्वा, उष्णोदकेन सप्तवारं सुधौतं घर्मसंशुष्कं च विधाय, अर्कदुग्धेन प्रहरद्वयं मर्दयेत् । पश्चात्तच्चक्रिकां कृत्वा, संशोष्य, शरावसम्पुटे धृत्वा, पञ्चषट्कपरिमितैर्वनोपलैः पुटेत् । पश्चात्पारदः पलमितः, गन्धक आमलसाराख्यः पल प्रमितः, द्वयोः कज्जलिं कृत्वा, पूर्वसिद्धमृतनागे विमिश्र्य मर्दयित्वा, सहदेव्या रसेन मर्दयेत्प्रहरद्वयं; ततश्चक्रिकां कृत्वा विशोष्यशरावसम्पुटे धृत्वा पूर्णं गजपुटं दद्यात् । ततः स्वाङ्गशीतं गृहीत्वा, कुमारीरसेन मर्दयेत्, तदुपरि अर्कदुग्धेन मर्दयेत् प्रहरैकं, पश्चात्तच्चक्रिकां कृत्वा संशोष्य शरावसम्पुटे धृत्वा पञ्चषट्कपरिमितैर्वनोपलैः पुटेत्, तदुत्तरं तस्य सहदेव्या रसेन पुटैकं दद्यात्, ततः सिद्धो जातः । अथ प्रयोगः-रक्तिकाद्वयमस्य बाकुचीचूर्णेन सह देयं दिनानि चत्वारिंशत्, पथ्यं गोधूमतिलतैलं, औषधं भक्षयित्वा घर्मे प्रहरैकं स्थेयं, ततोऽल्पदिनैर्मण्डलपाकाज्जलस्रावोत्तरं क्रमेण सवर्णता । देवदारुदारुचीनीबाकुचीयुक्तं गलत्कुष्ठे, त्रिकटुदेवदारुयुक्तं वातरक्ते, मूत्रकृच्छ्रे बाकुचीयुक्तं, दुग्धोदनं सर्वत्र पथ्यम् । इति नागेश्वरो रसः ॥

५ तोले सीसेको पिघला पिघलाकर सात बार तिलके तैलमें बुझाकर शुद्ध करें । तत्पश्चात् उसे अच्छी चौड़ी कढ़ाई में पिघलाकर गोल और

चिकने पत्थरसे थोड़ा थोड़ा कसीसका चूर्ण डालते हुवे घोटें। जब सीसेकी बराबर कसीस का चूर्ण डाल चुकें और सीसे की भस्म हो जाय तो उसे २ घड़ी तक अग्निपर ही रहने दें तत्पश्चात् उसे ठण्डा करके गरम पानीसे सात बार धोकर धूपमें सुखा लें और फिर उसे २ पहर आकके दूधमें घोटकर टिकिया बनावें और उन्हें सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके ३० अरण्य उपलों में फूंक दें। जब सम्पुट स्वांग शीतल हो जाय तो उसमेंसे औषधको निकालकर उसमें ५-५ तोले पारे गन्धककी कज्जली मिलाकर सबको २ पहर तक सहदेवीके रसमें घोटकर टिकिया बनावें और उन्हें सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके पूर्ण गजपुटमें फूंक दें। उसके पश्चात् सम्पुटके स्वांग शीतल होनेपर उसमें से सीसेकी भस्मको निकालकर उसे १ पहर घृतकुमारीके रसमें और १ प्रहर आकके दूधमें घोटकर, टिकिया बनाकर, उन्हें सुखाकर शराबसम्पुटमें बन्द करके ३० अरण्य उपलों में फूंक दें। तत्पश्चात् १ पुट सहदेवी के रसमें और लगा दें। बस रस तैयार है।

इसमें से २-२ रत्ती दवा नित्यप्रति ४० दिन तक बाबचीके चूर्णके साथ खिलाएं। दवा खिलाने के पश्चात् रोगीको १ पहर धूपमें बिठलाएं। पथ्यमें-गेहूं और तिलका तैल सेवन कराएं। इस प्रकार थोड़े दिन तक औषध सेवन करनेसे मण्डल कुष्ठसे पानी निकलकर उस स्थानका रंग धीरे धीरे स्वाभाविक त्वचाके रंगके समान हो जायगा।

इसे गलत्कुष्ठमें देवदारु, दारचीनी, और बाबचीके चूर्णके साथ; वातरक्तमें सोंठ, मिर्च, पीपल और देवदारुके चूर्ण के साथ और मूत्रकृच्छ्र में केवल बाबची के चूर्णके साथ खिलाना चाहिए।

इस पर दूध भात सर्वत्र पथ्य है।

(३६३९) नागेश्वरविधः

(रस. चिं. । स्तब. ११; अनु. त. । को. १)

पलद्वयं मृतं नागं हिङ्गुलं च पलद्वयम्।
शिला कर्षमिता ग्राह्या सर्वतुल्यं हि गन्धकम्॥
निम्बुनीरेण सम्मर्द्य ततो गजपुटे पुटेत्।
तदा नागेश्वरोऽयं स्यान्नागराजसुतोपमे॥
निशान्ते नागराजं यो सेवयेल्ललने पुमान्।
नागवल्लीदलैर्माहं यथा नीरुक् प्रकामवान्॥
भवेन्नारीशतं भुक्त्वा तथाप्यम्बुजलोचेन।
तृप्तिं न याति कामस्य नित्यवृद्धिमवाप्नुयात्॥

सीसेकी भस्म और शुद्ध शिंगरफ (हिङ्गुल) १०-१० तोले तथा शुद्ध मनसिल १। तोला और गन्धक इन सबकी बराबर लेकर सबको एक दिन नीबूके रसमें घोटकर टिकिया बनाकर, उन्हें सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें; और सम्पुटके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसे प्रातःकाल पानमें रखकर सेवन करने से अनेक स्त्रियोंके साथ रमण करने पर भी कामशक्तिका ह्रास नहीं होता।

(मात्रा-१-२ रत्ती)

(३६४०) नागेश्वररसः

(भै. र. । गुल्मा.)

शुद्धसूतस्तथागन्धो नागवङ्गौ मनःशिला।

निशादलञ्च त्रिक्षारं लौहं शुल्वं तथाभ्रकम् ॥
एतानि समभागानि स्नुहीक्षीरेण मर्दयेत् ।
चित्रकं वासकं दन्ती क्वाथेनैकेन मर्दयेत् ॥
दिनैकन्तु प्रयत्नेन रसो नागेश्वरो मतः ।
गुल्मप्लीहपाण्डुशोथानाध्मानञ्च विनाशयेत् ॥
भक्षयेन्माषमेकन्तु पर्णखण्डेन गुल्मवान् ॥

पारा, गन्धक, सीसाभस्म, वङ्गभस्म, शुद्ध मनसिल, हल्दीके पत्ते, सज्जीखार, यवक्षार, सुहागा, लोहभस्म, ताम्रभस्म, और अभ्रकभस्म बराबर बराबर लेकर प्रथम पारे और गन्धक की कज्जली बना लीजिये, तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर एकदिन स्नुही (सेंड-सेहुण्ड) के दूधमें और एक दिन चीता, बासा तथा दन्तीमूलमें से किसी एकके क्वाथमें घोट लीजिए।

इसमें से १-१ माषा औषध पानमें रखकर खानेसे गुल्म रोग नष्ट होता है । इसके अतिरिक्त उचित अनुपानके साथ देनेसे यह प्लीहा, पाण्डु, शोथ और आध्मानको भी नष्ट करता है । (व्यवहारिक मात्रा २-३ रत्ती)

नायिकाचूर्णम्

'लाईचूर्णम्' देखिये ।

(३६४१) नाराचरसः (१)

(र. चं.; र. र.; र. का. धे.; वृ. नि. र.; यो. र. । गुल्मा.)

ताम्रं सूतं[1] समं गन्धं जेपालं त्रिफला समम् ।
त्रिकटु पेषयेत्क्षौद्रैर्निष्कं गुल्महरं लिहेत् ॥
गुल्मोदरहरः ख्यातो नाराचोऽयं रसोत्तमः ॥

१—शुद्धसूतमिति पाठान्तरम् ।

ताम्रभस्म, पारा, गन्धक, शुद्ध जमालगोटा, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपल । सब चीज़ें समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बना लीजिये तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर रखिये ।

इसमें से नित्य प्रति ५ माशे औषध शहदमें मिलाकर खानेसे गुल्म रोग नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—३-४ रत्ती ।)

नोट—इस रसको खानेके पश्चात् थोड़ी थोड़ी देर बाद थोड़ा थोड़ा ठण्डा पानी पीनेसे सुखपूर्वक विरेचन हो जाता है

(३६४२) नाराचरसः (२)

(वै. रह. । उदावर्त.; वृ. यो. त. । त. ९६; यो. र. । आनाह)

जैपालेन समैः सूतव्योषटङ्कणगन्धकैः ।
नाराचः स्याद्रसो ह्यस्य माषः सर्पिःसितायुतः ॥
हन्त्युदावर्त्तमानाहमुदराध्मानगुल्मकम् ॥

पारा, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुहागेकी खील और गन्धक १-१ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा इन सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें, तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर खरल करें ।

इसे मिश्री और घीके साथ देनेसे उदावर्त, अफारा, उदररोग, आध्मान और गुल्म नष्ट होता है ।

मात्रा—१। माषा । (व्यवहारिक मात्रा १-२ रत्ती ।)

नोट—इस रसको खानेके बाद थोड़ी थोड़ी देरमें

थोड़ा थोड़ा ठण्डा पानी पीनेसे सुख पूर्वक विरेचन हो जाता है। यदि औषधसे पेटमें दाह हो तो भी ठण्डा पानी ही पीना चाहिये और विरेचन हो जानेके पश्चात् तीसरे पहर मूंगकी खिचड़ी खानी चाहिये।

(३६४३) **नाराचरसः** (३)

(यो. चिं. । अ. ३)

अष्टौ निस्तुषदन्तिबीजकलिका भागत्रयं नागरात् ।
द्वौ गन्धान्मरिचानि टङ्कणरसा एकैकभागाः क्रमात् ॥
गुञ्जामानवटी विरेचनकरी देया सुशीताम्बुना ।
गुल्मप्लीहमहोदरार्त्तिशमनो नाराचनामा रसः॥

शुद्ध जमाल गोटा ८ भाग, सोंठका चूर्ण ३ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, तथा काली मिर्चका चूर्ण, सुहागेकी खील और पारा १-१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर पानीके साथ घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनालें।

इनमें से १-१ गोली ठण्डे पानीके साथ देनेसे विरेचन होकर गुल्म प्लीहा और अन्य उदर रोग नष्ट होते हैं।

(प्रयोग सं. ३६४२ के नीचेका नोट देखिये)

(३६४४) **नाराचरसः** (४)

(भै. र.; धन्वं.; र. का. धे.; यो. र. । उदरा.; र. मं. । अ. ७; रसें. चिं. । अ. ९; वृ. यो. त. । त. १०५; शा. सं. म. ख. । अ. १२; यो. त. । त. ५३)

सूतं टङ्कनतुल्यांशं मरिचं सूततुल्यकम् ।
गन्धकं पिप्पली शुण्ठी द्वौ द्वौ भागौ विचूर्णयेत् ॥
सर्वतुल्यं क्षिपेदन्तीबीजं नस्तुषमेव च ।
द्विगुञ्जो रेचने सिद्धो नाराचोऽयं महारसः ॥
गुल्मप्लीहोदरं हन्ति पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥

पारा, सुहागेकी खील, और कालीमिर्चका चूर्ण १-१ भाग; गन्धक, पीपल और सोंठ २-२ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा इन सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें, तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर खरल करें।

इसे सेवन करनेसे विरेचन होकर गुल्म, प्लीहा और अन्य उदर रोग नष्ट होते हैं।

मात्रा—२ रत्ती। अनुपान चावलोंका पानी (तण्डुलोदक)।

नोट—(प्रयोग सं. ३६४२ के नीचे वाला नोट देखिये।)

(३६४५) **नाराचरसः** (५)

(र. का. धे.; र. रा. सुं. । कुष्ठ.)

लशुनं राजिका नीली भानुचित्रकपल्लवान् ।
समं भल्लातकं चूर्णं क्षिपेत्तैले चतुर्गुणे ॥
तैलतुल्यैर्गवां क्षीरैः पचेत्तैलावशेषकम् ।
पश्चात्पश्चाङ्गमक्षस्य भूशिरीषपलाशयोः ॥
सुवस्त्रगालितं कुर्यात्तत्तुल्यं वा मूर्छितं रसम् ।
घृतक्षौद्रसमायुक्तं पूर्वतैलेन पिण्डितम् ॥
अयं नाराचको भक्ष्यो निष्कैकं जिह्वकान्तकृत्॥

ल्हसन, राई, नीली (नीलका पौदा) तथा आक और चीतेके पत्ते, १-१ भाग, भिलावा इन सबके बराबर एवं इनसबसे ४-४ गुना तिलका

तैल और गायका दूध लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब दूध जल जाय तो तैलको छान लें। तत्पश्चात् बहेड़े, भूशिरीष और पलाशके पञ्चाङ्ग का समभाग मिश्रित चूर्ण या कज्जली को उपरोक्त तैल में घोटकर गोलियां बनावें।

इन्हें शहद और घीके साथ सेवन करनेसे जिह्वक सन्निपात नष्ट होता है।

मात्रा ४ माशे। (व्यवहारिक मात्रा--२ से ४ रत्ती तक।)

(३६४६) नाराचरसः (६)

(वृ. यो. त. । त. ८)

तुल्यं पारदटङ्कणं समरिचं गन्धाश्मतुल्यं त्रिभि-
र्विश्वं च त्रिगुणं ततो नवगुणं जैपालवीजं क्षिपेत्।
खल्वे दण्डयुगं विमर्द्य विधिवत्सन्यस्य पर्णे ततः
स्विन्नं गोमयवह्निना स तु भवेन्नाराचनामा रसः॥
गुञ्जैकममितो रसो हिमजलैः संसेवितो रेचयेत्
यावन्नोष्णजलं भजेत्खलु नरो भोज्यं तु दध्योदनम्॥

पारा, सुहागेकी खील, और कालीमिर्च १-१ भाग, गन्धक और सोंठ ३-३ भाग तथा शुद्ध जमाल गोटा ९ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियों का चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटकर सबका एक गोला बनावें और उसे पानों में लपेट कर एक गढ़ेमें रक्खें एवं उसे मिट्टीसे ढककर उसके ऊपर अरण्य उपलोंकी धीमी अग्नि (१ पहर तक) जलावें। तत्पश्चात् गढ़ेके स्वांग शीतल होने पर उसमें से गोलेको निकालकर पीस लें।

इसमें से १ रत्ती दवा ठण्डे पानीके साथ खाने से उस समय तक विरेचन होता रहता है जब तक कि गरम पानी नहीं पिया जाता।

पथ्य---दहीभात।

(३६४७) नाराचरसः (७)

(र. का. धे. । उदावर्त.)

कृष्णा शुण्ठी त्रिवृच्छ्यामा कम्पिल्लकहरीतकी।
रसगन्धौ समं सर्वं नैपालं सर्वतुल्यकम्॥
मर्दयेद्दन्तिजरसै रसो नाराचसञ्ज्ञितः।
सर्वोदावर्त्तहृद्रोगशूलगुल्मानुरोग्रहम्॥
जीर्णज्वरं निहन्त्येव शर्कराजीरकान्वितः।

पीपल, सोंठ, निसोत, कालीनिसोत, कबीला, हर्र, पारा और गन्धक १-१ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बना लें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको दन्तीमूलके क्वाथमें घोटकर (१-१ रत्तीकी) गोलियां बनावें।

इसके सेवन से उदावर्त, हृद्रोग, शूल, गुल्म, उरोग्रह और जीर्णज्वर नष्ट होता है। से. वि. गोलीको तोड़कर (१-१ माशा) जीरे और खांड के चूर्ण में मिलाकर (ठण्डे पानीके साथ) खाना चाहिये।

(३६४८) नराचरसः (महान्) (८)

(वै. रहस्य। वात व्या.; वृ. यो. त.; भा. प्र. । गुल्म.)

अभयारग्वधो धात्री दन्ती तिक्ता स्नुही त्रिवृत्।

हुत्वा प्रत्येकमेतानि ग्राह्याणि पलमात्रया ॥
तानि संक्षुद्य सर्वाणि जलाढकयुगे पचेत् ।
तत्र तोयेऽष्टमे भागे कषायमवतारयेत् ॥
निस्त्वग्जैपालबीजानि नवानि पलमात्रया ।
वस्त्रबद्धानि धृतान्येव तस्मिन् क्वाथे शनैः पचेत् ॥
क्वाथयेदनले मन्दे यावत्क्वाथो घनो भवेत् ।
ततः खल्वे क्षिपेद्भागानष्टौ जैपालबीजतः ॥
भागांस्त्रीन्नागराद् द्वौ च मरिचाद् द्वौ च पारदात् ।
गन्धकाद् द्वौ च तानीह यामयामं विमर्दयेत् ॥
रसो नाराचनामायं भक्षितो रक्तिका मितः ।
जलेन शीतलेनैव रोगानेतान् विनाशयेत् ॥
आध्मानं शूलमानाहं प्रत्याध्मानं तथैव च ।
उदावर्त्तं तथा गुल्ममुदराणि च नाशयेत् ॥
वेगे शान्ते च भुञ्जीत शर्करासहितं दधि ।
ततस्तत्सैन्धवेनापि ततो दध्योदनं मनाक् ॥

हर्र, अमलतासका गूदा, आमला, दन्तीमूल, कुटकी, सेंड (सेहुंड-थोहर) का दूध, निसोत और नागरमोथा । यह सब चीजें एक एक पल (५-५ तोले) लेकर सबको अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें और २ सेर पानी शेष रहने पर क्वाथको छान लें । तत्पश्चात् ५ तोले जमालगोटेकी शुद्ध गिरीको बारीक वस्त्रमें बांध कर उस क्वाथमें डाल कर पुनः मन्दाग्निपर पकावें । जब क्वाथ गाढ़ा हो जाय तो एक खरल में ८ पल शुद्ध जमालगोटा, ३ पल सोंठका चूर्ण, २ पल काली मिर्चका चूर्ण और २-२ पल पारे गन्धक से बनी हुई कज्जली तथा यह क्वाथ डाल-कर १ पहर तक घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इसे शीतल जलके साथ सेवन करने से आध्मान, शूल, आनाह, प्रत्याध्मान, उदावर्त, गुल्म, और अन्य उदररोग शान्त होते हैं ।

इससे विरेचन हो जानेके पश्चात् दही में खांड या सेंधानमक मिलाकर अथवा दहीभात खाना चाहिये ।

(३६४९) नारायणज्वराङ्कुशरसः

(र. चं.; यो. र. । ज्वर.)

सोमलं वत्सनागश्च सूतगन्धकतालकम् ।
कटुत्रयं कपर्दी च विजया कनकस्य च ॥
टङ्कणं समभागानि शृङ्गवेररसैस्त्र्यहम् ।
शीतज्वरे सन्निपाते विषूच्यां विषमज्वरे ॥
नाशयेदतिवेगेन धान्यमात्रं प्रदापयेत् ।
वस्त्रमाच्छादयेत्तेन प्रस्वेदोऽथ प्रजायते ॥
पथ्यं यदिच्छया देयं दधिशीतोदकादिकम् ।
रसो नारायणो नाम सन्निपातज्वरापहः ॥

शुद्ध सोमल (संखिया), शुद्ध वछनाग (मीठातेलिया), पारा, गन्धक, शुद्ध हरताल, सोंठ, मिर्च, पीपल, कौड़ीभस्म, भांग, धतूरेके शुद्ध बीज, और सुहागा समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य औष-धियोंका चूर्ण मिलाकर ३ दिन तक अदरकके रसमें घोट कर धनियेके दानेके बराबर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे शीतज्वर, सन्निपात, विषूचिका और विषम ज्वर आदि नष्ट होते हैं ।

औषध खिलानेके पश्चात् रोगीके शरीरको वस्त्रसे ढांप देना चाहिये, इससे पसीना आकर ज्वर उतर जाता है ।

पथ्य—दही, ठण्डा पानी आदि ।

(३६५०) नारायणरसः (१)

(र. चं.; भै. र. । भगन्दर.)

दरदं पार्वतीपुष्पं कुनटी पुरुषो रसः ।
शोणितं गन्धकं दैत्यः सैन्धवातिविषा चवी ॥
शरपुङ्खा विडङ्गश्च यमानी गजपिप्पली ।
मरिचार्कौ च वरुणो धूनकं च हरीतकी ॥
सम्मर्द्य कटुतैलेन वटिकां कारयेद्भिषक् ।
नाडीव्रणं प्रवाहञ्च गण्डमालां विचर्चिकाम् ॥
चिरदुष्टव्रणं दद्रु पूतिकर्णं शिरोगदम् ।
हस्तिपादं परिस्फोटं दुःसाध्यं च भगन्दरम् ॥
एतान्रोगान् निहन्त्याशु प्रभिन्नमिव केसरि ॥

शुद्ध हिंगुल, सौराष्ट्रमृत्तिका, रसौत, शुद्ध मनसिल, शुद्ध गूगल, शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, सेंधानमक, अतीस, चव, सरफोंका, वायबिडंग, अजवायन, गजपीपल, कालीमिर्च, आककी जड़, बरनेकी छाल, राल और हर्र । सब चीजें समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको कड़वे तैलमें घोटकर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे नाड़ीव्रण, गण्डमाला, विचर्चिका, पुराना दुष्ट व्रण, दाद, पूयकर्ण, शिरोरोग, फीलपा (श्लीपद) शरीरका फटना, और भगन्दर रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—२-३ रत्ती)

(३६५१) नारायणरसः (२)

(र. र. स. । उ. ख. अ. २०)

रसभस्मसमानेन गन्धकेन समन्वितम् ।
तुल्यभागपुरोपेतं तुल्यत्रिफलयाऽन्वितम् ॥
वातारितैलसंयुक्तं सेव्यं कर्षार्धसम्मितम् ।
मासेन नाशयेत्कुष्ठं दुःसाध्यमपि देहिनाम् ॥
क्षयं भगन्दरं शूलं मूलं गुल्मं च पाण्डुताम् ।
ग्रहणीञ्च महाघोरां मन्दाग्निमपि दुस्तरम् ॥
एवं विविधान्महारोगान्विनिहन्ति न संशयः ।
श्लेष्मरोगान्हरेत्सर्वान् रसो नारायणाभिधः ॥

पारदभस्म (अभावमें रससिन्दूर), गन्धक, गूगल, हर्र, बहेड़ा और आमला; इन सबके समान भाग चूर्णको एकत्र मिलाकर उसमेंसे नित्य प्रति आधा कर्ष औषध अरण्डीके तैलके साथ सेवन करने से १ मासमें दुस्साध्य कुष्ठ भी नष्ट हो जाता है । इसके अतिरिक्त यह क्षय, भगन्दर, शूल, गुल्म, पाण्डु, ग्रहणीविकार, कष्टसाध्य अग्निमांद्य और अन्य कफजरोगोंको नष्ट करता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—४-५ रत्ती ।)

(३६५२) नारीमत्तगजाङ्कुशरसः

(वृ. यो. त. । त. १४७)

पारदं स्वर्णनागाभ्रं वङ्गं तीक्ष्णं सतारकम् ।
मनःशिला माक्षिकं च यथोत्तरविवर्धितम् ॥
सर्वार्धांशं चाहिफेनं शुद्धमेकत्र मर्दयेत् ।
स्वर्णाह्वविजयापत्ररसेन सुरपुष्पतः ॥
करहाटात्काञ्चनारात्पिप्पल्याः श्रावणीद्वयात् ।
नागवल्ल्याः कुङ्कुमाच्च रसेन च पृथक् त्र्यम् ॥
एवं सिद्धो रसो नाम्ना नारीमत्तगजाङ्कुशः ।
काश्मीरकं चानुपानं सुरपुष्पयुतं समम् ॥
प्रत्यूषे बल्लमेकं तु खादेदम्लादिवर्जयेत् ।
पीवरोरुस्तनश्रोणीनारीशतमनुव्रजेत् ॥
रसमेनं सेवयित्वा प्रमेहादिविनाशनम् ॥

पारा (रससिन्दूर या चन्द्रोदय) १ भाग, स्वर्णभस्म २ भाग, सीसाभस्म ३ भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, वङ्गभस्म ५ भाग, तीक्ष्णलोह (फौलाद) भस्म ६ भाग, चांदीभस्म ७ भाग, मनसिल ८ भाग और सोनामक्खीभस्म ९ भाग तथा शुद्ध अफीम सबसे आधी लेकर सबको एकत्र खरल करके धतूरे और भांगके पत्तोंके रस, लैंगके काथ, अकरकरेके काथ, कचनारके स्वरस, पीपलके काथ, दोनों प्रकारकी मुण्डीके रस, नागबला (गंगेरन) के काथ और केसरके पानीमें ३-३ दिन पृथक् पृथक् घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे प्रातःकाल एक एक गोली केसर और लैंगके चूर्णके साथ खाने और अम्ल पदार्थों का त्याग करनेसे प्रमेहादि रोग नष्ट होते तथा अनेकों स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति प्राप्त होती है।

(३६५३) नित्यानन्दरसः

(र. का. धे. । अधि. ६; र. चं.; भै. र.; र. सा. सं.; र. र.; र. रा. सुं. । श्लीपदा.; रसें. चि. । अ. ९)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।
कांस्यं वङ्गं तालकञ्च तुत्थं शंखं वराटकम् ॥
त्रिकटु त्रिफला लोहं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ।
चविका पिप्पलीमूलं हपुषा च वचा तथा ॥
शठी पाठा देवदारुरेला च वृद्धदारकम् ।
त्रिवृता चित्रकं दन्ती गृहीत्वा तु पृथक् पृथक् ॥
एतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु ।
हरीतकीरसं दत्त्वा पञ्चगुञ्जामितां शुभाम् ॥
एकैकां भक्षयेद्रोगी शीतं चानुपयः पिबेद् ।
श्लीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसाश्रयं च यत् ॥
मेदोगतं धातुगतं हन्त्यवश्यं न संशयः ।
अर्बुदं गण्डमालां च ह्यन्त्रवृद्धिं चिरन्तनीम् ॥
वातपित्ते श्लेष्मवाते गुदरोगे कृमौ तथा ।
अग्निवृद्धिं करोत्येव बलवीर्यञ्च सुस्थताम् ॥
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो विश्वसम्पदे ।
नित्यानन्दरसो नाम्ना श्लीपदव्याधिनाशनः ॥
आनन्दयति लोकेशः शिवो बाणासुरं यथा ।
तथैव रोगिणां नित्यं ब्रध्नवृद्धौ च सर्वजे ॥
रक्तजे पित्तजे चापि पथ्यं योग्यं सदा बुधैः ।
अभावे वृद्धदारोश्च त्रिवृतश्च नियोजयेत् ॥

हिङ्गुलोत्थ (शंगरफसे निकाला हुवा) पारा, गन्धक, ताम्रभस्म, कांसीभस्म, वङ्गभस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध तूतिया, शङ्खभस्म, कौड़ीभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमलेका चूर्ण, लोहभस्म, बायबिडंग, पांचो नमक (सेंधा, सञ्चल, बिडनमक, सामुद्रनमक, कांचलवण), चव, पीपलामूल, हाऊबेर, बच, कचूर, पाठा, देवदारु, इलायची, विधारा (अभावमें निसोत), निसोत, चीता, और दन्तीका चूर्ण; सब चीजें समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको हर्र के काथकी १ भावना देकर ५-५ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनमें से १-१ गोली शीतल जलके साथ सेवन करनेसे कफवातज और रक्त, मांस, मेद तथा धातुगत श्लीपद, अर्बुद, गण्डमाला, पुरानी अन्त्रवृद्धि, वातपित्तज और वातकफज रोग, अर्श तथा कृमि

इत्यादि रोग नष्ट होते, और अग्नि तथा बल वीर्य-की वृद्धि होती है।

(३६५४) नित्यारोग्येश्वरो रसः

(र. र. । मेहा.)

सूतं मृताभ्रवङ्गाभ्यां तुल्यभागं प्रकल्पयेत् ।
महानिम्बोत्थबीजस्य चूर्णं योज्यं त्रिभिः समम्॥
मधुना लेहयेन्माषं लालामेहस्य शान्तये ।
सक्षौद्ररजनीं चात्र लिह्यान्निष्कत्रयं सदा ॥
असाध्यं नाशयेन्मेहं नित्यारोग्येश्वरो रसः ॥

अभ्रकभस्म, और बंगभस्म १-१ भाग, पारा (रस सिन्दूर या चन्द्रोदय) २ भाग, और बकायनके बीजोंका चूर्ण ४ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें।

इसमेंसे नित्य प्रति १ माषा औषध शहदके साथ खाकर ऊपरसे १ तोला हल्दी का चूर्ण शहदमें मिलाकर चाटनेसे दुस्साध्य लालामेह भी अवश्य नष्ट हो जाता है।

(व्यवहारिक मात्रा—४ रत्ती । हल्दीका चूर्ण ३ माशे ।)

(३६५५) नित्योदयरसः

(र. रा. सुं.; र. सा. सं.; धन्व. । हिक्काश्वास)

सुशुद्धं पारदं गन्धं प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मर्दयेच्च पृथक् पृथक् ॥
बिल्वाग्निमन्थश्योनाकाः काश्मरी पाटला बला।
मुस्तं पुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम् ॥
विदारी बहुपुत्री च ह्येषां कर्षरसैर्भिषक् ।
सुवर्णं रजतं ताप्यं प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥
पलमात्रन्तु कृष्णाभ्रं तदर्धन्तु शिलाह्वयम् ।
जातीकोषफले मांसी तालीशैलालवङ्गकम् ॥
प्रत्येकं कोलमात्रन्तु वासानीरैर्विमर्दयेत् ।
शोषयित्वातपे पश्चाद्विदार्या पेषयेद्रसैः ॥
द्विगुञ्जा वटिकां कृत्वा पिप्पलीमधुना भजेत् ।
नाम्ना नित्योदयश्चायं रसो विष्णुविनिर्मितः ॥
पञ्चकासान्निहन्त्याशु चिरकालोद्भवानपि ।
राजयक्ष्माणमप्युग्रं जीर्णज्वरमरोचकम् ॥
धातुस्थं विषमाख्यञ्च तृतीयकचतुर्थकम् ।
अर्शांसि कामलां पाण्डुमग्निमान्द्यं प्रमेहकम् ॥
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥

शुद्ध पारा और गन्धक, २॥-२॥ तोले लेकर दोनोंकी कज्जली बनावें और उसे बेल छाल, अरनी, अरलुकी छाल, पाढलछाल, खम्भारीछाल, खरैंटी, नागरमोथा, पुनर्नवा (बिसखपरा), आमला, कटेला (बड़ी कटेली), बांसेके पत्ते, बिदारीकन्द, और शतावरके १।-१। तोले रस या क्वाथ में पृथक् पृथक् घोटकर उसमें ५-५ माशे स्वर्ण, चांदी और सोनामक्खीकी भस्म, ५ तोले कृष्णाभ्रकभस्म, २॥ तोले मनसिल, और जायफल, जावित्री, जटामांसी, तालीसपत्र, इलायची, और लौंगमें से हरेकका ७॥ माशे चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन वासाके रसमें घोटकर धूपमें सुखावें और फिर उसे १ दिन बिदारीकन्दके रसमें घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनालें।

इनमें से १-१ गोली (१ माशा) पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे पांच प्रकार की पुरानी खांसी, भयङ्कर राजयक्ष्मा, जीर्णज्वर, अरुचि, धातुगतज्वर, विषमज्वर, तिजारी, चातुर्थिक

ज्वर, अर्श, कामला, पाण्डु, अग्निमांद्य और प्रमेह नष्ट होता है ।

(३६५६) **नित्योदितरसः** (पञ्चामृतरसः)

(भै. र.; र. का. धे.; वृ. नि. र.; र. रा. सु.; वै. रह.; रं. सा. सं. । अर्श.; रसे. चिं. । अ. ९; र. म. । अ. ७; यो. त. । त. २३)

मृतसूतार्कलोहाभ्रविषं गन्धं समं समम् ।
सर्वतुल्यांशभल्लातफलमेकत्र चूर्णयेत् ॥
द्रवैः शूरणमाणोत्थैर्भाव्यं खल्वे दिनत्रयम् ।
माषमात्रं लिहेदाज्यै रसश्चार्शांसि नाशयेत् ॥
रसो नित्योदितो नाम गुदोद्भवकुलान्तकः ॥

पारदभस्म (अभावमें रससिन्दूर), ताम्र-भस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध बछनाग (मीठा-तेलिया), और शुद्ध गन्धक १-१ भाग तथा सबसे आधा शुद्ध भिलावोंका चूर्ण लेकर सबको ३-३ दिन जिमीकन्द और मानकन्दके रसमें घोटकर रक्खें ।

इसमेंसे १ माशा चूर्ण घीमें मिलाकर चाटने से अर्श रोग नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती)

(३६५७) **निशादिलोहम्**

(र. चं.; र. सा. सं.; र. रा. सुं.; धन्वं. । पाण्डु.)

लोहचूर्णं निशायुग्मं त्रिफलारोहिणीयुतम् ।
प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां कामलापाण्डुशान्तये ॥

लोहभस्म, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला और कुटकीका चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें ।

इसे शहद और घीमें मिलाकर चाटनेसे कामला और पाण्डुरोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ माशा ।)

(३६५८) **निशादिवटी**

(वा. भ. । कुष्ठ.)

निशाकणानागरवेल्लतौवरी
सवह्निताप्यं क्रमशो विवर्धितम् ।
गवाम्बुपीतं वटकीकृतं तथा
निहन्ति कुष्ठानि सुदारुणान्यपि ॥

हल्दी १ भाग, पीपल २ भाग, सोंठ ३ भाग बायबिडंग ४ भाग, तुवरक ५ भाग, चीता ६ भाग, और सोनामक्खी-भस्म ७ भाग लेकर सबके चूर्णको गोमूत्रमें घोटकर (१-१ माशेकी) गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे भयङ्कर कुष्ठ भी नष्ट हो जाते हैं ।

अनुपान—गोमूत्र ।

(३६५९) **नीलकण्ठरसः** (१)

(र. का. धे. । अग्निमां.)

शुद्धं रसं ताम्रभस्म गन्धकं नागकेसरम् ।
अमृतं रेणुकं वह्नितिन्तडीकजलं समम् ॥
सर्वतुल्यं गुडं दत्त्वा वटिकां कोलसम्मिताम् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय वह्निमान्द्यप्रशान्तये ॥
नीलकण्ठो रसो नाम क्षयशूलनिबर्हणः ॥

शुद्धपारा, ताम्रभस्म, गन्धक, नागकेसर, शुद्ध बछनाग (मीठातेलिया), रेणुका, चीता, तिन्त-ड़ीक और सुगन्धवाला समान भाग लेकर प्रथम

पारे और गन्धककी कज्जली बनावें, तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण एवं सबके बराबर गुड़ मिलाकर जंगली बेरके बराबर गोलियां बनावें।

इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल खानेसे अग्निमांद्य, क्षय और शूल नष्ट होता है।

(अनुपान—उष्ण जल ।)

(३६६०) **नीलकण्ठरसः** (२)

(र. र.; वृ. नि. र.; र. रा. सुं.; र. का. धे. । यक्ष्मा.)

विषं क्षुद्रा सेव्यकञ्च हरिद्रा गोक्षुरं मधु ।
कुटजस्य त्वचश्चूर्णं समांशं सर्वचूर्णकम् ॥
राजयक्ष्महरं खादेद्रसोऽयं नीलकण्ठकः ॥

शुद्ध बछनाग (मीठा तेलिया), कटेली, खस, हल्दी, गोखरु, मुलैठी और कुड़ेकी छाल । सबके समान भाग चूर्णको एकत्र खरल करके रक्खें ।

इसे सेवन करनेसे राजयक्ष्मा नष्ट होती है ।

(मात्रा—आधा माशा, अनुपान–घी और शहद ।)

(३६६१) **नीलकण्ठरसः** (३)

(र. का. धे. । छर्दि.)

वेणीफलानां स्वरसैर्विभाव्यं
रसेन्द्रलेलीतकशङ्खतुल्यम् ।
त्रिसप्तधा जम्भरसेन वान्तौ
गुञ्जोन्मितः स्यादिति नीलकण्ठः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शंखभस्म और शुद्ध नीलाथोथा समान भाग लेकर सबकी कज्जली करके उसे बिन्दाल के रसकी २१ भावना देकर १–१ रत्ती की गोलियां बनावें ।

इनमेंसे १–१ गोली जम्बीरी नीबूके रसके साथ देनेसे वमन नष्ट होती है ।

(३६६२) **नीलकण्ठरसः** (४)

(र. चं. । ज्वर.)

रसटङ्कणतुत्थानि मर्दयेद्घटिकात्रयम् ।
जीमूतीफलतोयेन नीलकण्ठो भवेद्रसः ॥
सशर्करं बल्लयुग्मं छर्दनाज्ज्वरनाशनम् ।
पित्तादींश्च ज्वरश्वासहिध्माकासादिदोषजित् ॥

शुद्ध पारा, सुहागा और नीलाथोथा समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके ३ घड़ी तक देवदाली (बिन्दाल) के रसमें घोट कर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनमेंसे १–१ गोली खांडमें मिलाकर देनेसे वमन होकर ज्वर, श्वास, हिचकी और खांसी इत्यादि नष्ट हो जाती है ।

(नोट—इसकी मात्रा रोगीके बलाबलका विचार करके निश्चय करनी चाहिये ।)

(३६६३) **नीलकण्ठरसः** (५)

(वृ. नि. र. । कास.; र. सा. सं. । रसाय.; र. रा. सुं. । श्वास., रसा.)

सूतकं गन्धकं लोहं विषं चित्रकपत्रकम् ।
वराङ्गं रेणुका मुस्ता ग्रन्थिकं नागकेसरम् ॥
फलत्रिकं त्रिकटुकं शुल्वं तुल्यं तथैव च ।
एतानि समभागानि गुडो द्विगुणमुच्यते ॥
सम्मर्द्य गुटिकां कृत्वा भक्षयेच्चणमात्रकम् ।

कासे श्वासे तथा गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥
मूत्रकृच्छ्रे मूढगर्भे वातरोगे च दारुणे।
नीलकण्ठरसो नाम शम्भुना निर्मितः स्वयम् ॥

शुद्ध पारा, गन्धक, लोहभस्म, शुद्ध बछनाग (मीठा तेलिया), चीता, तेजपात, दालचीनी, रेणुका, नागरमोथा, पीपलामूल, नागकेसर, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, और ताम्र भस्म १-१ भाग तथा सबसे २ गुना गुड़ लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बना लीजिये, तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर खरल कीजिये और अन्तमें गुड़ मिलाकर चनेके बराबर गोलियां बना लीजिये।

इसके सेवनसे खांसी, श्वास, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, मूत्रकृच्छ्र, मूढगर्भ और भयङ्कर वात व्याधियां नष्ट होती हैं।

(व्यवहारिक मात्रा—१ माषा)

(३६६४) नृपतिवल्लभरसः

(भै. र.; र. सा. सं.; र. रा. सु.; र. च.; ध. । ग्रहण्य.)

जातीफललवङ्गाब्दःत्वगेलाटङ्करामठम्।
जीरकं तेजपत्रञ्च यमानीविश्वसैन्धवाः ॥
लोहमभ्रं रसो गन्धस्ताम्रं प्रत्येकशः पलम्।
मरिचं द्विपलं दत्त्वा छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥
धात्रीरसेन वा पेष्यं वटिकाः कुरु यत्नतः।
श्रीमद्गहननाथेन विचिन्त्य परिनिर्मितः ॥
सूर्यवत्तेजसा चायं रसो नृपतिवल्लभः।
अष्टादशवटीं खादेत्पवित्रः सूर्यदर्शकः ॥
हन्ति मन्दानलं सर्वमामदोषं विसूचिकाम्।
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलाक्षयकृत्पाण्डुत्वकामलाम् ॥
हृच्छूलं पृष्ठशूलञ्च पार्श्वशूलं तथैव च।
कटीशूलं कुक्षिशूलमानाहमष्टशूलकम् ॥
कासश्वासामवातांश्च श्लीपदं शोथमर्बुदम्।
गलगण्डं गण्डमालामम्लपित्तञ्च गृध्रसीम् ॥
कृमिकुष्ठानि दद्रूणि वातरक्तं भगन्दरम्।
उपदंशमतीसारं ग्रहण्यर्शः प्रमेहकम् ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च मूत्राघातं सुदारुणम्।
ज्वरं जीर्णं तथा पाण्डुं तन्द्रालस्यं भ्रमं क्लमम् ॥
दाहञ्च विद्रधीं हिक्कां जडगद्गदमूकताः।
मौढ्यञ्च स्वरभेदञ्च ब्रध्नवृद्धिं विसर्पकान् ॥
ऊरुस्तम्भं रक्तपित्तं गुदभ्रंशारुची तृषाम्।
कर्णनासामुखोत्थांश्च दन्तरोगांश्च पीनसान् ॥
शैत्यञ्च शीतपित्तञ्च स्थावरादिविषाणि च।
वातपित्तकफोत्थांश्च द्वन्द्वजान् सान्निपातिकान् ॥
सर्वानेव गदान्हन्ति चण्डांशुरिव पापहा।
बलवर्णकरो हृद्य आयुष्यो वीर्यवर्द्धनः ॥
परं वाजीकरः श्रेष्ठः बुद्धिदो मन्त्रसिद्धिदः।
आरोगी दीर्घजीवीस्याद्रोगी रोगाद्विमुच्यते ॥
रसस्यास्य प्रसादेन बुद्धिमाञ्जायते नरः ॥

जायफल, लैांग, नागरमोथा, दारचीनी, इलायची, सुहागेकी खील, शुद्ध हींग, जीरा, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सेंधानमक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, पारा, गन्धक, और ताम्रभस्म १-१ पल (हरेक ५ तोले) और कालीमिर्च २ पल लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन बकरीके दूध या आमलेके रसमें घोटकर (आधी आधी रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनमें से १८ गोली नित्य प्रति यथोचित अनुपानके साथ खानेसे अग्निमांद्य, आमदोष, विसूचिका, प्लीहा, गुल्म, उदर, अष्ठीला, यकृत्, पाण्डु, कामला, हृदयशूल, पृष्ठशूल, पसलीशूल, कटिशूल, कुक्षिशूल, आनाह, आठ प्रकारका उदर-शूल, खांसी, श्वास, आमवात, श्लीपद, शोथ, अर्बुद, गलगण्ड, गण्डमाला, अम्लपित्त, गृध्रसी, कृमिरोग, कुष्ठ, दाद, वातरक्त, भगन्दर, उपदंश, अतिसार, ग्रहणीविकार, अर्श, प्रमेह, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, भयङ्कर मूत्राघात, जीर्णज्वर, तन्द्रा, आलस्य, भ्रम, क्लान्ति, दाह, विद्रधि, हिक्का, जड़ता, गद्गदता (हकलाना), मूकता, मूढता, स्वरभेद, ब्रध्न, अण्डवृद्धि, विसर्प, ऊरुस्तम्भ, रक्तपित्त, गुदभ्रंश, अरुची, तृषा, कर्णरोग, नासारोग, मुखरोग, दन्तरोग, पीनस, शून्यवात, शीतपित्त, स्थावरादि विष, तथा अन्य वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज और सन्निपातज रोग नष्ट होते तथा बल, वर्ण, वीर्य, आयु, कामशक्ति और बुद्धि की वृद्धि होती है ।

इसके सेवनसे रोगी निरोग और स्वस्थ दीर्घजीवी होता है ।

नृपतिवल्लभरसः (२)

(र. सा. सं. । ग्रह.)

" महाराजनृपतिवल्लभरस " देखिये ।

नृपतिवल्लभरसः (३)

(र. सा. सं. । ग्रह.)

" महाराजनृपतिवल्लभरस " देखिये ।

नृपवल्लभरसः

(भै. र.; र. सा. सं.; र. रा. सुं. । ग्रह.)

"राजवल्लभरस" देखिये ।

(३६६५) नृसिंहपोटलीरसः

(र. रा. सुं.; वृं. नि. र. । अति.)

रसश्च गन्धपाषाणः प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ।
श्लक्ष्णचूर्णं द्वयोः सम्यक् प्रकुर्यात्कुशलो भिषक् ॥
तच्चूर्णं पीतवर्णाभाकपर्दाभ्यन्तरे कृतम् ।
शरावपुटके न्यस्य लिप्त्वा सम्भृतगोमयैः ॥
सुतीव्राग्नौ पचेत्तावद्यावद्गच्छति भस्मताम् ।
समुद्धृत्याश्मना सर्वं चूर्णितं सकपर्दकम् ॥
गव्येन सर्पिषा नित्यं भक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ।
ज्वरातिसारकं सर्वं हन्याच्चूर्णं च दुर्जयम् ॥
अतीसारं समग्रं च ग्रहणीं सर्वजां तथा ।
चिरज्वरं च मन्दाग्निं क्षीरज्वरहरं च तत् ॥
रस एष नृसिंहस्य मता पोट्टलिका हिता ।
हिता सर्वज्वरीणान्तु सर्वातीसारिणां शुभा ॥

समान भाग पारे और गन्धककी कज्जलीको पीली कौड़ियोंके भीतर भरकर उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके उसके ऊपर गोबरका लेप कर दीजिये । और फिर उसे तीव्राग्निमें इतना पकाइये कि कौड़ियोंकी भस्म हो जाय। तत्पश्चात् सम्पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमें से औषधको निकालकर कौड़ियों समेत पीस लीजिये ।

इसमें से २–२ रत्ती औषध गायके घीके साथ सेवन करनेसे दुस्साध्य ज्वरातिसार, अतिसार, ग्रहणीविकार, जीर्णज्वर, और अग्निमांद्य, नष्ट होता है ।

(३६६६) नेत्राशनिरसः

(र. चं.; र. सा. सं.; र. रा. सुं. । नेत्रा.)

अभ्रं ताम्रं तथा लौहं माक्षिकं च रसाञ्जनम् ।
पातनायन्त्रशुद्धं गन्धकं नवनीतकम् ॥

पलप्रमाणं प्रत्येकं गृह्णीयाच्च विधानवित् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं वैद्यैः कुशलकर्मभिः ॥
ततस्तु भावना कार्या त्रिफलाभृङ्गराजकैः ।
ततः प्रक्षिपेच्चूर्णञ्च पिप्पलीमूलयष्टिका ॥
एला पुनर्नवा दारु पाठा भृङ्गं शठी वचा ।
नीलोत्पलचन्दनञ्च श्लक्ष्णचूर्णञ्च दापयेत् ॥
माषमेकं प्रदातव्यम् घृतश्रीमधुमर्दितम् ।
मर्दनं लौहदण्डेन पात्रे लोहमये दृढे ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यमुष्णेन वारिणा तथा ।
यावतो नेत्ररोगांश्च पानादेव विनाशयेत् ॥
सरक्ते रक्तपित्ते च रक्ते चक्षुःस्रुतेपि च ।
नक्तान्ध्ये तिमिरे काचे नीलिका पटलार्बुदे ॥
अभिष्यन्देऽधिमन्थे च पिष्टे चैव चिरन्तने ।
नेत्ररोगेषु सर्वेषु वातपित्तकफेषु च ॥
सर्वनेत्रामयं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, लोहभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, रसाञ्जन (रसौत) और शुद्ध आमलासार गन्धक १-१ पल (५-५ तोले) लेकर सबको एकत्र घोटकर त्रिफलाके काथ और भंगरेके रसकी १-१ भावना दें। तत्पश्चात् उसमें पीपलामूल, मुलैठी, इलायची, पुनर्नवा, देवदारु, पाठा, भंगरा, कचूर, बच, नीलोत्पल, और सफेद चन्दनका १-१ माषा चूर्ण मिलाकर खरल करें।

इसमें से १-१ माषा औषधको घी और शहदमें मिलाकर लोहेके खरलमें लोहेकी मूसलीसे घोटकर गरम पानीके साथ खिलानेसे समस्त नेत्ररोग, रक्तपित्त, आंखोंसे रक्तस्राव होना, नक्तान्ध्य (रतौंधा), तिमिर, काच, नीलिका, पटल, नेत्रार्बुद, अभिष्यन्द, अधिमन्थ और पुराना पिष्टक इत्यादि रोग नष्ट होते हैं।

इति नकारादिरसप्रकरणम् ।

अथ नकारादिमिश्रप्रकरणम्

(३६६७) नखद्रव्यशुद्धिः

(र. र.; वं. से. । वातरो.)

चण्डीगोमयतोयेन यदि वा तिन्तिडीजलैः ।
नखं संकाथयेदेभिरभावे मृज्जलेन तु ॥
पुनरुद्धृत्य प्रक्षाल्य भर्जयित्वा निषेचयेत् ।
गुडपथ्याम्बुना ह्येवं शुध्यते नात्र संशयः ॥
सम्मर्द्य चन्दनाद्यैस्तु वासयेत्कुसुमैः शुभैः ॥

नखको भैंस या गायके गोबरके रस में या तिन्तड़ीकके काथमें, और यदि इनमें से कोइ पदार्थ न मिल सके तो काली मिट्टीके पानीमें थोड़ी देर पकाकर धोकर (तवे आदि पर) गरम करके गुड़युक्त हरड़के काथमें बुझावें तत्पश्चात् उसे चन्दनादि सुगन्धित द्रव्योंके पानीके साथ घोटकर मिट्टीके शरावेमें रख कर सुगन्धित फूलोंसे बसावें तो वह शुद्ध हो जाता है।

(३६६८) **नवनीतादियोगः**

(वं. से. । रक्तार्श.)

नवनीततिलाभ्यासात्केसर-
नवनीतशर्कराभ्यासात् ।
दधिसरमथिताभ्यासाद्
गुदजाः शाम्यन्ति रक्तवाहाः ॥

नवनीत (नौनी घी) और तिल; अथवा नागकेसर का चूर्ण नवनीत और खांड मिलाकर; अथवा दहीकी मलाई या तक्र सेवन करनेसे रक्तज अर्श नष्ट होती है।

(३६६९) **नवाङ्गयूषः**

(वं. से.; वृं. मा. । कासा.; वृ. यो. त. । त. ७८)

मुद्गामलाभ्यां यवदाडिमाभ्यां
कर्कन्धुना मूलकशुण्ठकेन ।
शुण्ठीकणाभ्यां सकुलित्थकेन
यूषो नवाङ्गः कफरोगहर्त्ता ॥

मूंग, आमला, जौ, अनारदाना, बेर, सूखी-मूली, सोंठ, पीपल और कुलथी का यूष कफज खांसीको नष्ट करता है ।

(विधि—सब चीजें समान भाग मिलाकर २॥ तोले लें और ४ सेर पानीमें पकाकर २ सेर पानी शेष रक्खें और छानकर उसमें २॥ तोले मूंग डाल कर पकावें, जब वह अच्छी तरह गल जाय तो ठण्डा करके छान लें ।)

(३६७०) **नागरादिपेया**

(वं. से. । अतिसा.)

छागे चार्द्धोदके क्षीरे नागरोत्पलबालकैः ।
पेया रक्तातिसारघ्नी पृष्ठपर्ण्या च साधिता ॥

अर्द्धभाग जलमिश्रित बकरीके दूध तथा सोंठ, नीलोफर और सुगन्धबालाके कल्कसे सिद्ध पेया या पृष्ठपर्णी के क्काथसे बनी हुई पेया रक्तातिसार को नष्ट करती है ।

(३६७१) **नागरादिप्रयोगः**

(यो. र. । प्रदर.)

नागरं मधुकं तैलं सिता दधि च तत्समम् ।
खजेनोन्मथितं प्रीतं वातप्रदरनाशनम् ॥

सोंठ और मुलैठीका चूर्ण तथा तैल, मिश्री और दही समान भाग लेकर सबको मथनीसे अच्छी तरह मथकर सेवन करनेसे वातज प्रदररोग नष्ट होता है ।

(३६७२) **नागादिशलाका**

(वा. भ. । उ. अ. १३; ग. नि. । नेत्र.)

श्रेष्ठाजलं भृङ्गरसं सविषाज्यमजापयः ।
यष्टीरसं च यत्सीसं सप्तकृत्त्वः पृथक् पृथक् ॥
तप्तं तप्तं पायितं तच्छलाका
नेत्रे युक्ता साञ्जनानञ्जना वा ।
तैमिर्य्यार्मस्रावपैच्छिल्यपैल्लं
कण्डूं जाड्यं रक्तराजीश्च हन्ति ॥

सीसेको पिघला पिघलाकर सात सात बार त्रिफला, भंगरा और अतीसके क्काथ, घी, बकरीके दूध और मुलैठीके क्काथमें बुझाकर उसकी सलाई बनवावें ।

इससे अञ्जन लगाने या इसे खाली ही आंखमें फेरनेसे तिमिर, अर्म, स्राव, नेत्रोंकी चिपचिपाहट, पिल्ल, कण्डू, जड़ता और लाल रेखाएं नष्ट होती हैं ।

(३६७३) **नागार्जुनीशलाका**

(नेत्रसञ्जीविनी शलाका)

(वृ. यो. त. । त. १३१; यो. त. । त. ७१; वै. र. । नेत्र.)

निर्वापयेत्त्रैफलके कषाये नागं विधिज्ञः शतधा हुताशे ।
सन्ताप्य सन्ताप्य ततः शलाकां कृत्वास्य शुद्धेन रसेन लिम्पेत् ॥
तयाञ्जिताक्षो मनुजः क्रमेण सुपर्णदृष्टिर्भवति प्रसह्य ।
जयेदभिष्यन्दमथाधिमन्थमर्मार्जुनौ वै तिमिराणि पिल्लान् ॥

सीसेको पिघला पिघला कर १०० बार त्रिफलाके रसमें बुझावें और फिर उसकी सलाई बनवाकर उसपर शुद्ध पारद चढ़ा दें ।

इसे आंखमें आंजने से नेत्रोंकी ज्योति अत्यन्त तीक्ष्ण हो जाती है । तथा इससे अभिष्यन्द, अधिमन्थ, अर्म, अर्जुन, तिमिर और पिल्लादि रोग भी नष्ट हो जाते हैं ।

(३६७४) **नारिकेलजलादिपेयम्**

(यो. र.; वृ. नि. र. । मूत्रकृ.)

रक्तस्य नारिकेलस्य जलं कतकसंयुतम् ।
शर्करैलासमायुक्तं मूत्रकृच्छ्रहरं विदुः ॥

लाल रंगके नारियल के जलमें निर्मलीफल, खांड और इलायचीका चूर्ण मिलाकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ।

(३६७५) **नारिकेलयोगः**

(भा. प्रा. । म. ख. शूला.; वृ. नि. र.; वं. से. । शूला.)

नारिकेलं सतोयञ्च लवणेन सुपूरितम् ।
मृदा च वेष्टितं शुष्कं पक्वगोमयवह्निना ॥
पिप्पल्या भक्षितं हन्ति शूलं हि परिणामजम् ।
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥

जलयुक्त नारयलके भीतर जितना आ सके उतना सैंधानमक भरकर उसके ऊपर मिट्टीका एक अंगुल मोटा लेप कर दें और उसे कण्डोंकी अग्नि में पकावें । जब ऊपर की मिट्टी लाल हो जाय तो नारियलको ठण्डा करके उसके भीतरसे नमक मिश्रित जलको निकाल लें ।

इसमें पीपलका चूर्ण मिलाकर सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज परिणामशूल नष्ट होता है ।

(३६७६) **नारिकेलादिपेयम्**

(यो. र.; वृ. नि. र. । मूत्रकृ.)

नारिकेलजलं योज्यं गुडधान्यसमन्वितम् ।
सदाहं मूत्रकृच्छ्रञ्च रक्तपित्तं निहन्ति च ॥

नारियलके पानीमें गुड़ और धनिया मिलाकर पीनेसे दाहयुक्त मूत्रकृच्छ्र और रक्तपित्त नष्ट होता है ।

(३६७७) **नारिकेलादि योगः**

(वृ. नि. र. । मूर्छा.)

नारिकेलाम्बुना पीताः सक्तवः समशर्कराः ।
पित्तहृत्कफतृण्मूर्छाभ्रमादीन्हन्ति दारुणान् ॥

सत्तूमें समान भाग खांड मिलाकर उसे नारियलके पानीमें घोलकर पीनेसे पित्त, कफ, तृषा, मूर्छा और भ्रमादि नष्ट होते हैं ।

(६६७८) **नारीक्षीरप्रयोगः**

(वै. म. र. । पट. २)

पयोऽङ्गनानां पिबतां नराणां द्रागेव जूर्तिः प्रशमं प्रयाति ॥

स्त्रीका दूध पीनेसे ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(३६७९) **निम्बपत्रादियोगः**

(वं. से. । नेत्ररोगा.)

निम्बपत्रैः कृतं चूर्णं लोध्रचूर्णसमन्वितम् ।
वस्त्रबद्धं जले क्षिप्तं पूरणं नेत्ररोगनुत् ॥

नीमके पत्ते और लोधके समान भाग मिश्रित चूर्णको पोटलीमें बांधकर उस पोटलीको पानीमें भिगोए रक्खें। इस पानीको आंखों में डालनेसे (अक्षिपाकादि) नेत्र रोग नष्ट होते हैं ।

(३६८०) **निम्बादिपिण्डी**

(वं. से.; यो. र; वृ. नि. र. । नेत्ररो.)

निम्बस्य चोदुम्बरवल्कलस्य
एरण्डयष्टीमधुचन्दनस्य ।
पिण्डी विधेया नयने प्रकोपिते
कफेन पित्तेन समीरणेन ॥

नीम और गूलरकी छाल, अरण्डकी जड़, मुलैठी और चन्दन की पिण्डी (पोटली) बनाकर नेत्रोंपर लगानेसे कफज, पित्तज तथा वातज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है ।

(३६८१) **निम्बादिप्रयोगः**

(वृं. मा.; वं. से. । उपदंश)

निम्बार्जुनाश्वत्थकदम्बशाल-
जम्बूवटोदुम्बरवेतसैश्च ।
प्रक्षालनालेपघृतानि कुर्या-
च्चूर्णञ्च पित्तास्रभवोपदंशे ॥

पित्तज तथा रक्तज उपदंश में नीम, अर्जुन, पीपल वृक्ष, कदम्ब, शाल, जामन, बड़, गूलर और वेतकी छाल के काथसे घावोंको धोना, इन्हीं को पीसकर लेप करना, इन्हींका चूर्ण घावों पर छिड़कना और इन्हीं से घृत पकाकर खिलाना चाहिये ।

(३६८२) **निम्बादिवर्त्तिः**

(यो. र. । व्र.)

निम्बपत्रघृतक्षौद्रदार्वीमधुकसंयुता ।
वर्त्तिस्तिलानां कल्को वा शोधयेद्रोपयेद्व्रणम् ॥

नीमके पत्ते, दारुहल्दी, मुलैठी और तिल १-१ भाग लेकर सबको पीसकर उसमें १-१ भाग घी और शहद मिला लीजिये । इस कल्कको लगाने या इसकी बत्ती बनाकर घावमें भरनेसे घाव शुद्ध हो कर भर जाता है ।

(३६८३) **निम्बुपानकः**

(वृ. नि. र. । अरुचि.)

भागैकं निम्बुजं तोयं षड्भागं शर्करोदकम् ।
लवङ्गमरिचोन्मिश्रं पानकं पानकोत्तमम् ॥
निम्बूरसभवं पानमत्यम्लं वातनाशनम् ।
वह्निदीप्तिकरं रुच्यं समस्ताहारपाचकम् ॥

१ भाग नीबूका रस ६ भाग खांडके शरबतमें मिलाकर उसमें यथारुचि लौंग और काली मिर्च का चूर्ण मिला लीजिये ।

यह पानक अत्यम्ल, वातनाशक, अग्निदीपक, रोचक, और सर्व प्रकारके आहारों को पचाने वाला है ।

(३६८४) **निर्गुण्डीप्रयोगः**

(गो. र.; वृ. नि. र. । मुखरो.)

निर्गुण्डीमुसलीकन्दं चर्वयेदुपजिह्वाप्रशान्तये ।

सम्भालूकी जड़ या मूसलीको चबानेसे उपजिह्वा नष्ट होती है ।

(३६८५) निर्गुण्डीमूलचर्वणम्

(रा. मा. । मुखरो.)

शेफालिकामूलमुशन्ति कण्ठ-
शालूकहन्तृ प्रतिचर्वितं सत् ।
रोगं निहन्त्यादुपजिह्विकाख्यं
नासान्तरप्रस्रुतरक्तधाराम् ॥

निर्गुण्डीकी जड़को चबानेसे कण्ठशालूक, उपजिह्वा और नकसीर (नाकसे रक्त स्राव होना) का नाश होता है ।

(३६८६) निर्गुण्डीमूलबन्धनम्

(रा. मा. । बालरो.)

प्राचीगतं पाण्डुरसिन्दुवार-
मूलं शिशूनां गलके निबद्धम् ।
करोति दन्तोद्भववेदनाया
निःसंशयं नाशमकाण्डमेव ॥

पूर्व दिशामें उगे हुवे सफेद संभालुकी जड़को बालकोंके गलेमें बांधनेसे दांत निकलनेके समय होने वाली पीड़ा शान्त हो जाती है ।

(३६८७) निशादिप्रयोगः

(यो. र.; ग. नि. । नेत्र.; वं. से. । शिरो.; वृं. मा. । नेत्ररो.)

निशाब्दत्रिफलादार्वीसितामधुसमन्विता ।
अभिघाताक्षिशूलघ्नं नारीक्षीरेण पूरणम् ॥

हल्दी, नागरमोथा, त्रिफला, दारुहल्दी और मिश्रीका अत्यन्त महीन चूर्ण तथा शहद १—१ भाग लेकर सबको स्त्रीके दूधमें मिलाकर छानकर उसकी बूंदें आंखमें टपकाने से नेत्रशूल नष्ट होता है ।

(३६८८) निशादिवर्त्तिः

(र. र. । भगन्दर.)

निशासैन्धवसिद्धार्थक्षौद्रगुग्गुलुसंयुता ।
वर्त्तिर्भगन्दरे योज्या तथा नाडीव्रणापहा ॥

हल्दी, सेंधा नमक, सरसों और गूगल तथा शहद समान भाग लेकर चूर्ण योग्य चीजोंका चूर्ण करके उसमें शहद और गूगल मिलाकर बत्ती बनावें यह बत्ती भगन्दर और नासूरको नष्ट करती है ।

इति नकारादिमिश्रप्रकरणम् ।



अथ पकारादिकषायप्रकरणम्

(३६८९) **पञ्चकोलकषायः**

(ग. नि. । ज्वर.; वृ. नि. र. । ज्वर.; यो. चि. म. । अ. ४; च. द. । ज्वर.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ।
दीपनीयः स्मृतो वर्गः कफानिलगदापहः ॥
कोलमात्रोपयोगित्वात्पञ्चकोलमिदं स्मृतम् ।
तीक्ष्णोष्णं पाचनं श्रेष्ठं दीपनं कफवातनुत् ॥
गुल्मप्लीहोदरानाहशूलघ्नं पित्तकोपनम् ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ । इन पांच चीजोंके समूहको "**पञ्चकोल**" कहते हैं । इस गणमें पांचों ओषधियां १–१ कोल(कर्ष) ली जाती हैं इसी लिये इसे पञ्चकोल कहते हैं ।

पञ्चकोल दीपन, कफ और वायुके रोगोंको नष्ट करनेवाला, तीक्ष्ण, उष्ण, पाचन तथा गुल्म, प्लीहा, उदर, अफारा और शूलनाशक तथा पित्तको कुपित करनेवाला है ।

(३६९०) **पञ्चतिक्तकगणः**

(यो. र.; वृ. नि. र. । बालरो.)

बिल्वः पटोलः क्षुद्रा च गुडूची वासकस्तथा ।
विसर्पकुष्ठनुत् ख्यातो गणोऽयं "पञ्चतिक्तकः"॥

बेलकी छाल, पटोल, कटेली, गिलोय और बासा (अडूसा) । इन पांच ओषधियोंके समूह को "**पञ्चतिक्त**" कहते हैं ।

पञ्चतिक्तसे विसर्प और कुष्ठ नष्ट होता है ।

(३६९१) **पञ्चतिक्तकाथः**

(वं. से. । ज्वर.; वृ. यो. त. । त. ५९; यो. त. । त. २०; वृ. नि. र. । ज्वर.)

क्षुद्रापुष्करभूनिम्बगुडूचीविश्वभेषजैः ।
"पञ्चतिक्त"नामायं काथो हन्त्यष्टधा ज्वरम् ॥

कटेली, पोखरमूल, चिरायता, गिलोय और सोंठ । इन पांच ओषधियोंके समूहको "**पञ्चतिक्त**" कहते हैं । इसके सेवनसे आठों प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं ।

पञ्चतृणम्

भा. भै. र. भाग २ प्रयोग सं. २२३५ '**तृणपञ्चमूलादिकाथ**' देखिये ।

पञ्चदशाङ्गकाथः

(वृं. मा.; र. र. । ज्वरा.)

प्रयोग सं. २८४४ देखिये ।

(३६९२) **पञ्चपल्लवकाथः**

(भा. प्र.; वृ. यो. त.; वृं. मा.; यो. र. । मुखरो.)

पटोलनिम्बजम्ब्वाम्रमालतीनवपल्लवाः ।
पञ्चपल्लवकः श्रेष्ठः कषायो मुखधावने ॥

पटोल, नीम, जामन, आम और चमेलीके नवीन पत्तों का काथ बनाकर उससे कुल्ले करनेसे मुखरोग (मुंह के छाले आदि) नष्ट होते हैं ।

(३६९३) **पञ्चभद्रकम्**

(वै. र.; वृं. मा.; यो. चि.; वृ. नि. र.; भा. प्र.। ज्वरा.; वै. जी. । विला. १; शा. ध. । म. अ. २; वृ. यो. त. । त. ५९)

गुडूची पर्पटो मुस्ता किरातो विश्वभेषजम् ।
वातपित्ते ज्वरे देयं "पञ्चभद्रमिदं" शुभम्॥

गिलोय, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, चिरायता और सोंठका काथ वातपित्त ज्वरको नष्ट करता है। इसका नाम 'पञ्चभद्र' है ।

(३६९४) **पञ्चमुष्टिकयूषः**

(ग. नि.; च. द.; वृं. मा.; वं. से.; यो. र.; भा. प्र. । ज्वरचिकि.; यो. त. । त. २०)

यवकोलकुलत्थानां मुद्गमूलकशुण्ठयोः ।
एकैकं मुष्टिमादाय पचेदष्टगुणे जले ॥
पञ्चमुष्टिक इत्येष वातपित्तकफापहः ।
शस्यते शूलगुल्मेषु कासे श्वासे क्षये ज्वरे ॥

जौ, बेर, कुलथी, मूंग, और मूलीके टुकड़े १—१ मुट्ठी लेकर सबको ८ गुने पानीमें पकावें ।

इनका यूष वातपित्त और कफज ज्वर, शूल, गुल्म, खांसी, श्वास और क्षयमें हितकर है ।

(३६९५) **पञ्चमूलकषायः**

(वं. से. । मदात्यय.; वृ. नि. र. । मूर्छा.)

पञ्चमूलकषायश्च मधुना सितया पिबेत् ।
यथा स्वञ्च ज्वरघ्नानि कषायानि प्रयोजयेत् ॥

मदात्यय और मूर्च्छा में पञ्चमूलके कषाय में शहद और मिश्री मिलाकर पिलाना चाहिये । तथा दोषोंके अनुसार ज्वरनाशक कषाय सेवन कराने चाहियें ।

(३६९६) **पञ्चमूलकाथः**

(वं. से. । स्त्रीरो.; यो. र. । सूतिका.)

पञ्चमूलस्य वा काथं तप्तलोहेन सङ्गतम् ।
सूतिकारोगनाशाय पिबेद्वा तद्युतां सुराम् ॥

पञ्चमूल (बेलछाल, सोना पाठा (अरलु), खम्भारी, पाढल, अरणी) के काथमें गर्म लोहेको बुझाकर पीनेसे अथवा उसमें सुरा मिलाकर पीनेसे सूतिकारोग नष्ट होता है ।

(३६९७) **पञ्चमूलादिक्काथः** (१)

(वृ. यो. त. । त. १२६; यो. र. । मसूरि.)

बृहतः पञ्चमूलस्य वृषपत्रयुतस्य च ।
कषायः शमयेत्पीतः कफोत्थां तु मसूरिकाम् ॥

बृहत्पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणीकी छाल) और बासे (अडूसे) के पत्तोंका काथ पीनेसे कफज मसूरिका शान्त होती है ।

(३६९८) **पञ्चमूलादिक्काथः** (२)

(वं. से.; वृ. नि. र.; आ. वे. वि. । ज्वर. चि.)

पञ्चमूलीबलारास्नाकुलत्थैः सह पौषकरैः ।
काथो हन्याच्छिरःकम्पं पर्वभेदं मरुज्ज्वरम् ॥

बृहत्पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणीकी छाल) खरैटी, रास्ना, कुलथी और पोखरमूलका काथ पीनेसे शिरका कांपना, जोड़ोंका टूटना, और वातजज्वर नष्ट होता है ।

(३६९९) **पञ्चमूलीकषायः** (१)

(आ. वे. वि. । ज्वरा.)

पञ्चमूलीकषायन्तु पाचनं वातिके ज्वरे ।

पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणीकी छाल) का क्वाथ वातज्वर में दोषोंको पकाता है ।

(३७००) **पञ्चमूलीकषायः** (२)

(वै. जी. । प्रथ. विला.)

पञ्चमूलीकषायस्य सकृष्णस्य निषेवणात् ।
जीर्णज्वरः कफकृतो विदधाति पलायनम् ॥

पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणी की छाल) के क्वाथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे कफज जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है ।

(क्वाथ १० तोले । पीपलका चूर्ण १ माशे से ३ माशे तक)

(३७०१) **पञ्चमूलीकषायः** (३)

(वं. से.; वृं. मा. । वातव्या.)

पञ्चमूलीकषायन्तु रुबुतैलत्रिवृद्युतम् ।
गृध्रसीगुल्मशूलञ्च पीतं सद्यो नियच्छति ॥

पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल, और अरणी की छाल) के क्वाथमें अरण्डका तैल (काष्टायल) और निसोतका चूर्ण मिलाकर पीनेसे गृध्रसी गुल्म और शूल रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(क्वाथ १० तोले, अरण्डका तेल २ तोले, निसोत ३ माशे ।)

(३७०२) **पञ्चमूलीक्वाथः** (१)

(च. सं.। चि. अ. ५ गुल्म.; वृं. मा.। गुल्म.)

पञ्चमूलीशृतं तोयं पुराणं वारुणीरसम् ।
कफगुल्मी पिबेत्काले जीर्णं माध्वीकमेव वा ॥

पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल, और अरणीकी छाल) के क्वाथमें पुरानी वारुणी सुरा या पुरानी माध्वी सुरा मिलाकर पीनेसे कफगुल्म नष्ट होता है ।

(३७०३) **पञ्चमूलीक्वाथः** (२)

(वृ. नि. र.; वं. से.; वृं. मा.; यो. र. । वातव्या.)

पञ्चमूलीकृतः क्वाथो दशमूलीकृतोऽथवा ।
रूक्षस्वेदस्तथा नस्यं मन्यास्तम्भे प्रशस्यते ॥

मन्यास्तम्भ रोगमें पञ्चमूल या दशमूलका क्वाथ और रूक्षस्वेद तथा नस्य हितकारक है ।

(३७०४) **पञ्चमूलीक्षीरम्**

(वृं. मा.; ग. नि. । बालरो.)

पञ्चमूलीकषायेण सघृतेन पयः शृतम् ।
सशृङ्गवेरं सगुडं शीतं हिक्कार्दितः पिबेत् ॥

पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणीकी छाल) और घीके साथ दूध पकाकर ठंडा करके उसमें सोंठका चूर्ण और गुड़ मिलाकर पीनेसे हिचकी नष्ट होती है ।

(पञ्चमूल का क्वाथ ८० तोले, दूध २० तोले, घी १। तोला । सबको मिलाकर पकावें। दूध शेष रहने पर छान लें । सोंठका चूर्ण १ से ३ माशे तक और गुड़ इतना मिलावें कि दूध मीठा हो जाय ।

(३७०५) **पञ्चमूल्यादिक्काथः** (१)

(वै. जी. । विला. १; वृ. नि. र. । वातज्वर.)

पञ्चमूल्यमृतामुस्ताविश्वभूनिम्बसाधितः ।
कषायः शमयत्याशु वायुमायुभवं ज्वरम् ॥

पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणीकी छाल), गिलोय, मोथा, सोंठ और चिरायतेका क्काथ वातज्वरको शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

(३७०६) **पञ्चमूल्यादिक्काथः** (२)

(भा. प्र.; वं. से. । अतिसा.; भै. र.; ग. नि; वृं. मा.; च. द. । ज्वराति.)

पञ्चमूलीबलाबिल्वगुडूचीमुस्तनागरैः ।
पाठाभूनिम्बह्रीबेरकुटजत्वक्फलैः शृतम् ॥
सर्वजं हन्त्यतीसारं ज्वरञ्चापि तथा वमिम् ।
सशूलोपद्रवं श्वासं कासं चापि सुदुस्तरम् ॥
पञ्चमूली च सामान्या पित्ते योज्या कनीयसी ।
वाते पुनर्बलासे च सा योज्या महती मता ॥

पञ्चमूल, खरैटी, बेलगिरी, गिलोय, मोथा, सोंठ, पाठा, चिरायता, नेत्रबाला, कुड़ेकी छाल और इन्द्रजौ का क्काथ सेवन करनेसे वातज, पित्तज और कफज तथा सन्निपातज अतिसार, ज्वर, वमन, शूल, श्वास और भयंकर खांसी आदि उपद्रव नष्ट होते हैं ।

पित्तज रोगमें लघु पञ्चमूल (शालपर्णी, पृष्ठ पर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु) और कफज तथा वातज रोग में वृहत्पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल, अरणीकी छाल) लेना चाहिये ।

(३७०७) **पञ्चमूल्यादिक्काथः** (३)

(वं. से. । ज्वरा.)

समुस्तं पञ्चमूलञ्च दद्याद्वातोत्तरे गदे ।
भृशोष्णं वा सुखोष्णं वा दृष्ट्वा दोषबलाबलम् ॥

वातप्रधान ज्वर में पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणीकी छाल) और मोथेका क्काथ दोषके बलाबलके अनुसार अधिक उष्ण या मन्दोष्ण पिलाना चाहिये ।

(३७०८) **पञ्चमूल्यादिक्काथः** (४)

(वं. से.; वृ. नि. र.; च. द. । ज्वरा.)

पञ्चमूलीकिरातादिर्गणो योज्यस्त्रिदोषजे ।
पित्तोत्कटे च मधुना कणया वा कफोत्कटे ॥

पञ्चमूल, (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणी की छाल) और किरातादि गण (चिरायता, मोथा, गिलोय, सोंठ) के क्काथमें शहद मिलाकर पित्तप्रधान सन्निपात में और पीपलका चूर्ण मिलाकर कफप्रधान सन्निपात में पिलाना चाहिये ।

(क्काथ १० तोले, शहद १। तोला, पीपलका चूर्ण १ से ३ माशे तक ।)

(३७०९) **पञ्चमूल्यादिक्षीरम्** (१)

(ग. नि. । कासा.)

स्थिरादिपञ्चमूलस्य पिप्पलीद्राक्षयोस्तथा ।
कषायेण शृतं क्षीरं पिबेत्समधुशर्करम् ॥

शालपर्णी, पृष्टपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु, पीपल और मुनक्का से दूध पकाकर उसमें शहद और खांड मिलाकर पीनेसे खांसी नष्ट होती है ।

(ओषधियां २॥ तोले, दूध २० तोले, पानी ८० तोले । सबको मिलाकर पानी जलने तक पकावें । मिश्री १। तोला, शहद १। तोला ।)

(३७१०) पञ्चमूल्यादिक्षीरम् (२)

(वं. से. । वातव्या.)

पञ्चमूलीबलासिद्धं
क्षीरं वातामये हितम् ।

पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणी की छाल) और खरैंटीसे सिद्ध दूध वात-व्याधिको नष्ट करता है ।

(ओषधियां २॥ तोले, दूध २० तोले, पानी ८० तोले । सबको मिलाकर पानी जलने तक पकावें और छान लें ।)

(३७११) पञ्चमूलाद्याश्च्योतनम्

(शा. ध. । खं. ३ अ. १३)

बिल्वादिपञ्चमूलेन बृहत्येरण्डशिग्रुभिः ।
क्वाथ आश्च्योतने कोष्णो वाताभिष्यन्दनाशनः ॥

बेलकी छाल, अरलुकी छाल, खम्भारीकी छाल, पाढलकी छाल, अरणीकी छाल, कटेला, अरण्डकी जड़ और सहंजनेकी छाल के क्वाथ को आंखोंमें टपकानेसे वातज अभिष्यन्द नष्ट होता है ।

नोट—क्वाथको अत्यन्त स्वच्छ कपड़ेसे छानकर मन्दोष्ण व्यवहृत करना चाहिये ।

(३७१२) पञ्चवल्कलादिक्वाथः

(वृं. मा.; भा. प्र.; यो. र. । मुख.)

पञ्चवल्कलजः क्वाथस्त्रिफलासम्भवोऽथवा ।
मुखपाके प्रयोक्तव्यः सक्षौद्रो मुखधावने ॥

पञ्चवल्कल (पीपल, पाखर, गूलर, बड़ और बेतकी छाल) या त्रिफलाके क्वाथ में शहद मिलाकर कुल्ले करनेसे मुखरोग (मुख पाकादि) नष्ट होते हैं ।

(३७१३) पञ्चाम्लयोगः

(वृं. मा. । तृष्णा.)

कोलदाडिमवृक्षाम्लचुक्रीकाचुक्रिकारसः ।
पञ्चाम्लको मुखालेपः सद्यस्तृष्णां नियच्छति ॥

बेर, अनार, इमली और चूकाघासका रस तथा कांजी समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला-कर मुखमें लेप करनेसे तृष्णा शीघ्रही शान्त हो जाती है ।

(३७१४) पटीरादिक्वाथः

(भा. प्र. । दाह.; वृ. यो. त. । त. ८७)

पटीरपर्पटोशीरनीरनीरदनीरजैः
मृणालमिशिधान्याकपद्मकामलकैः कृतः ।
अर्द्धशिष्टः सिताशीतः पीतः क्षौद्रसमन्वितः
क्वाथो व्यपोहयेद्दाहं नृणाञ्च परमोल्वणम् ॥

सफेद चन्दन, पित्तपापड़ा, खस, सुगन्ध-बाला, नागरमोथा, कमल, मृणाल, सौंफ, धनिया, पद्माक और आमला । सब चीजें समान भाग मिली हुई २ तोले लेकर २० तोले पानी में पकावें । आधा पानी रहने पर उसमें (१। तोला) मिश्री मिला कर ठंडा करके (१। तोला) शहद मिला कर पिलाने से अत्यन्त बढ़ी हुई दाह भी शान्त हो जाती है ।

(३७१५) **पटोलचतुष्कः**

(यो. स. । स. ३)

पटोलतिक्तापिचुमन्दपथ्या
शृतकषायः कफपित्तजातः ।
ज्वरो विनश्येन्मधुनाटरूष-
शुण्ठीपटोलीत्रिफलाभिरेव ॥

पटोल, कुटकी, नीमकी छाल और हर्र का काथ या बासा (अडूसा), सोंठ, पटोल और त्रिफलेका काथ शहद मिलाकर पीनेसे कफपित्तज ज्वर नष्ट होता है ।

(३७१६) **पटोलमूलादिक्वाथः**

(र. र.; वृं. मा. । मसू.; यो. त. । त. ६७)

पटोलमूलारुणतण्डुलीयकं
तथैव धात्रीखदिरेण संयुतम् ।
पिबेज्जलं सुकथितं सुशीतलं
मसूरिकारोगविनाशनं परम् ॥

पटोल (परवल) की जड़ और लाल चौलाईकी जड़ एवं खैरसार और आमलेका काथ ठण्डा करके पीनेसे मसूरिका रोग शान्त होता है ।

(३७१७) **पटोलमूलादिप्रयोगः**

(वं. से. । बालरो.)

पिष्ट्वा पटोलमूलञ्च शृङ्गवेरं वचामपि ।
विडङ्गान्यजमोदाश्च पिप्पलीतण्डुलान्यपि ॥
एतान्यालोड्य सर्वाणि सुखतप्तेन वारिणा ।
आमप्रवृत्तेऽतीसारे कुमारं योजयेद्भिषक् ॥

पटोलकी जड़, सोंठ, बच, बायबिड़ंग, अजमोद और पीपलके चावल। (पीपलको दूधमें भिगोकर मलनेसे छोटे छोटे दाने से हो जाते हैं वही पीपल के चावल कहलाते हैं) सबको पीसकर मन्दोष्ण पानीमें मिलाकर बालकको पिलाने से आमातिसार नष्ट होता है ।

(३७१८) **पटोलमूलादियोगः**

(च. सं. । चि. अ. ५; ग. नि. । कु.)

मूलं पटोलस्य तथा गवाक्ष्याः
पृथक् पलांशं त्रिफलात्वचश्च ।
स्यात् त्रायमाणा कटुरोहिणी च
भागार्द्धिका नागरपादयुक्ता ॥
पलं त्वथैकं सहचूर्णितानां
जले शृतं दोषहरं पिबेत्तु ।
कुष्ठानि शोफं ग्रहणीप्रदोषं
अर्शांसि कृच्छ्राणि हलीमकञ्च ॥
षड्रात्रयोगेन निहन्ति चैव
हृद्वस्तिशूलं विषमज्वरञ्च ॥

पटोलमूल, इन्द्रायणकी जड़, हर्र, बहेड़ा और आमले की बकली ५–५ तोले, त्रायमाणा और कुटकी २॥–२॥ तोले तथा सोंठ १। तोला लेकर सबको एकत्र मिलाकर अधकुटा कर लें ।

इसमेंसे ५ तोले चूर्णको ४० तोले पानीमें पकाकर १० तोले शेष रहने पर छानकर रोगीको पिला दें ।

इसके सेवन से कुष्ठ, शोथ, ग्रहणी, अर्श, हलीमक, हृदय और वस्तिका शूल तथा ज्वर ६ दिनमें ही नष्ट हो जाता है ।

(३७१९) **पटोलादिकषायः**

(ग. नि. । ज्वरा.)

शृतं पटोलत्रिफलावृषाब्दैः
सरोहिणीकैः पिचुमन्दयुक्तैः ।
सदेवकाष्ठैश्च जलं नराणाम्
सर्वज्वरं हन्ति निपीयमानम् ॥

पटोलपत्र, त्रिफला, बासा (अडूसा), नागरमोथा, कुटकी, नीमकी छाल और देवदारु का क्राथ समस्त प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता है ।

(३७२०) **पटोलादिक्काथः** (१)

(वै. जी. । वि. १)

स्वकान्तिजितरोचने चपललोचने
मालतीप्रसूननिकरस्फुरत्कवरिपश्चवक्त्रोदरि ।
पटोलकटुरोहिणीमधुकचेतकीमुस्तका
प्रकल्पितकषायको विषममाशु जेजीयते ॥

पटोल (पलवल), कुटकी, मुलैठी, हर्र और नागरमोथेका क्राथ विषमज्वरको शीघ्रही नष्ट कर देता है ।

(३७२१) **पटोलादिक्काथः** (२)

(वृ. यो. त. । त. १२८; वं. से.; वृ. नि. र.; ग. नि.; भै. र.; यो. र.; वृं. मा.; वा. भ. । मुखरो.)

पटोलशुण्ठीत्रिफलाविशाला
त्रायन्तितिक्ताद्विनिशामृतानाम् ।
पीतः कषायो मधुना निहन्ति
मुखे स्थितश्चाऽऽस्यगदानशेषान् ॥

पटोल, सोंठ, त्रिफला, इन्द्रायण, त्रायमाणा, कुटकी, हल्दी और गिलोय । इनके क्राथमें शहद मिलाकर पीनेसे समस्त मुखरोग नष्ट हो जाते हैं।

(३७२२) **पटोलादिक्काथः** (३)

(र. र. । विसर्प.; वृ. मा. । विस्फो.)

पटोलत्रिफलारिष्टगुडूचीमुस्तचन्दनैः ।
समूर्वारोहिणीपाठारजनीसदुरालभा ॥
कषायं पाययेदेतत्पित्तश्लेष्मरुजापहम् ।
कण्डूत्वग्दोषविस्फोटविषवीसर्पनाशनम् ॥

पटोल, त्रिफला, नीमकी छाल, गिलोय, नागरमोथा, लालचन्दन, मूर्वा, कुटकी, पाठा, हल्दी, और धमासा ।

इनका क्राथ पित्तकफज पीड़ा, खुजली, त्वग्दोष, विस्फोटक और विषजन्य विसर्पको नष्ट करता है ।

(३७२३) **पटोलादिक्काथः** (४)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

पटोलवासापिचुमन्दकस्य
दलानि यष्टीमधुकं कणा च ।
कषायमेतत् प्रतिसाधितं तु
ज्वरे कफे पित्तयुते प्रशस्तः ॥
सन्दीपनो वातकफात्मके च
तथैव पित्तासृजसम्भवे च ।
ज्वरे मलानां प्रतिभेदनः स्यात्
पटोलधान्यामृतकल्कयुक्तः ॥

पटोल, बासा (अडूसा) और नीमके पत्ते, मुलैठी और पीपल । इनके क्राथमें पटोल, धनिया और गिलोयका कल्क मिलाकर पीनेसे पित्तयुक्त

कफज्वर, वातकफज्वर और रक्तपित्तज ज्वर नष्ट होता है । मल टूट कर निकल जाता है और अग्नि प्रदीप्त होती है ।

(३७२४) **पटोलादिक्वाथः** (५)

(ग. नि.; वृ. मा. । अम्ल.)

पटोलनिम्बामृतरोहिणीकृतं
जलं पिबेत्पित्तकफोच्छ्रये वा ।
शूलभ्रमारोचकवह्निमान्द्य-
दाहज्वरच्छर्दिनिवारणञ्च ॥

पटोल, नीमकी छाल, गिलोय, और कुटकी। इनका क्वाथ पित्तकफप्रधान अम्लपित्त, शूल, भ्रम, अरुचि, अग्निमांद्य, दाह, ज्वर और वमनको नष्ट करता है ।

(३७२५) **पटोलादिक्वाथः** (६)

(वृ. नि. र.; वृं. मा. । उपदं.)

पटोलनिम्बत्रिफलाकिरातैः
क्वाथं पिबेद्वा खदिरासनाभ्याम् ।
सगुग्गुलुं वा त्रिफलायुतं वा
सर्वोपदंशापहरः प्रयोगः ॥

पटोल, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला और चिरायता । इनके अथवा खैरसार और असनाके क्वाथमें गूगल या त्रिफलाका चूर्ण मिलाकर पिलाने से सब प्रकारके उपदंश नष्ट होते हैं ।

(३७२६) **पटोलादिक्वाथः** (७)

(र. र.; ग. नि.; भै. र.; वृं. मा.; च. द.; यो. र.; वं. से. । मसूरिका; वृ. यो. त. । त. १२६)

पटोलकुण्डलीमुस्तवृषधन्वयवासकैः ।
भूनिम्बनिम्बकटुकापर्पटैश्च शृतं जलम् ॥
मसूरीं शमयेदामं पक्वाश्चैव विशोधयेत् ।
नातः परतरं किञ्चिद्विस्फोटज्वरशान्तये ॥

पटोलपत्र, गिलोय, नागरमोथा, बासा, धमासा, चिरायता, नीमकी छाल, कुटकी और पित्तपापड़ा । इनका क्वाथ आम (अपक्व) मसूरिका को शान्त और पक्वको शुद्ध करता है । विस्फोटज्वरके लिये इससे अच्छी अन्य कोई भी औषध नहीं है ।

(३७२७) **पटोलादिक्वाथः** (८)

(वा. भ. । चि. अ. १७)

पटोलमूलत्रायन्तीयष्ट्याह्वकटुकाभयाः ।
दारु दार्वी हिमं दन्ती विशाला निचुलं कणा ॥
तैः क्वाथः सघृतः पीतो हन्त्यन्तस्तापतृड्भ्रमान् ।
ससन्निपातवीसर्प शोफदाहविषमज्वरान् ॥

पलवलकी जड़, त्रायमाणा, मुलहटी, कुटकी, हर्र, देवदार, दारुहल्दी, सफेद चन्दन, दन्ती, (जमालगोटेकी जड़) इन्द्रायण, जलवेत, और पीपल । इनके क्वाथमें घृत मिलाकर पीनेसे अन्तस्ताप, पिपासा, भ्रम, सन्निपात, विसर्प, शोथ, दाह और विषमज्वर नष्ट होता है ।

(३७२८) **पटोलादिक्वाथः** (९)

(वा. भ. । चि. अ. २)

पटोलमालतीनिम्बचन्दनद्वयपद्मकम् ।
रोध्रो वृषस्तन्दुलीयः कृष्णामृन्मदयन्तिका ॥
शतावरी गोपकन्या काकोल्यौ मधुयष्टिका ।
रक्तपित्तहराः क्वाथास्त्रयः समधुशर्कराः ॥

(१) पटोलपत्र, चमेली, नीमकी छाल, सफेद चन्दन, लालचन्दन और कमल ।

(२) लोध, बासा (अडूसा), चौलाईकी जड़, काली मिट्टी, मदयन्तिका ।

(३) शतावर, सफेद सारिवा, काकोली, क्षीरकाकोली और मुलैठी ।

इन तीनों काथोंमेंसे किसी एकमें शहद और मिश्री मिलाकर पीनेसे रक्तपित्त नष्ट होता है ।

)३७२९) पटोलादिक्काथः (१०)

(वं. से. । ज्वरा.)

पटोलं बालकश्चैव मुस्तकं रक्तचन्दनम् ।
पाठा मूर्वामृता शुण्ठी चोशीरं कटुरोहिणी ॥
समभागैः शृतं तोयं सर्वज्वरहरं पिबेत् ॥

पटोलपत्र, सुगन्धबाला, नागरमोथा, लालचन्दन, पाठा, मूर्वा, गिलोय, सोंठ, खस और कुटकी । इनका काथ समस्त प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता है ।

(३७३०) पटोलादिक्काथः (११)

(वं से. । ज्वर.)

तृष्णान्विते वातकफार्त्तिशूले
सश्वासकासारुचिबद्धविट्के ।
हितं जलं दीपनपाचनञ्च
पटोलशुण्ठीयवपिप्पलीनाम् ॥

पटोलपत्र, सोंठ, इन्द्रजौ और पीपलका काथ तृष्णायुक्त वातकफज्वरको नष्ट करता तथा अर्ति (बेचैनी) शूल, श्वास, खांसी, अरुचि, और मलवद्धता (मलका अत्यन्त कठिन होना-अर्थात् सुदे) को नष्ट करता है । यह दीपन पाचन भी है ।

(३७३१) पटोलादिक्काथः (१२)

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

पटोलत्रिफलातिक्तासठीवासामृताभवः ।
काथो मधुयुतःपीतो हन्यात्कफकृतं ज्वरम् ॥

पटोलपत्र, त्रिफला, कुटकी, सठी (कचूर), बासा और गिलोय । इनके काथमें शहद मिलाकर पीनेसे कफज्वर नष्ट होता है ।

(३७३२) पटोलादिक्काथः (१३)

(वं. से.; च. द. । मुख.; यो. त. । त. ६९)

पटोलनिम्बजम्ब्वाम्रमालतीनां च पल्लवैः ।
कृतः काथः प्रयोक्तव्यो मुखपाकस्य धावने ॥

पटोलपत्र, नीम, जामन, आम और चमेली के पत्ते । इनके काथके कुल्ले करनेसे मुखपाक नष्ट हो जाता है ।

(३७३३) पटोलादिक्काथः (१४)

(वृ. नि. र. । ज्वर.; यो. त. । त. २०; यो. चिं. । अ. ४; शा. सं. । म. ख. अ. २)

पटोलत्रिफलानिम्ब-
द्राक्षाशम्पाकवासकैः ।
काथः सितामधुयुतो
जयेदेकाहिकं ज्वरम् ॥

पटोलपत्र, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, मुनक्का, अमलतासका गूदा और बासा । इनके काथमें मिश्री और शहद मिलाकर पीनेसे 'इकतरा' ज्वर नष्ट होता है ।

(३७३४) पटोलादिक्काथः (१५)

(वृ. नि. र.; वं. से. । ज्वर.)

पटोलेन्द्रयवानन्तापथ्यारिष्टामृताजलम् ।
कथितं तज्जलं पीतं ज्वरं सन्ततकं जयेत् ॥

पटोलपत्र, इन्द्रयव, अनन्तमूल, हर्र, नीमकी छाल और गिलोयका काथ 'सन्तत' ज्वरको नष्ट करता है।

(३७३५) **पटोलादिकाथः** (१६)

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

पटोलाब्दवृषातिक्तासारिवाभिः शृतं जलम् ।
सन्तताख्ये ज्वरे देयं वातादीनां निवृत्तये ॥

पटोलपत्र, नागरमोथा, बासा, कुटकी और सारिवा। इनका काथ 'सन्तत' ज्वरको नष्ट करता और वातादि दोषोंको शान्त करता है।

(३७३६) **पटोलादिकाथः** (१७)

(ग. नि.; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

पटोलीन्द्रयवदारुगुडूचीनिम्बपल्लवाः ।
हन्ति काथो निपीतोऽयं सततं विषमज्वरम् ॥

पटोलपत्र, इन्द्रजौ, देवदारु, गिलोय और नीमके पत्तोंका काथ सेवन करनेसे 'सतत' विषम ज्वर नष्ट होता है।

(३७३७) **पटोलादिकाथः** (१८)

(वृ. नि. र. । ज्वर.; वृ. यो. त. । त. ६३)

पटोलमुस्तामृतवल्लिवासकं
सनागरं धान्यं किराततिक्तकम् ।
कषायमेषां मधुना युतं नरो
निवारयेद्दुर्जलदोषमुल्वणम् ॥

पटोलपत्र, मोथा, गिलोय, बासा (अडूसा), सोंठ, धनिया और चिरायता। इनके काथ में शहद मिलाकर पीनेसे खराब पानी पीनेसे उत्पन्न हुवा ज्वर नष्ट होता है।

(३७३८) **पटोलादिकाथः** (१९)

(आ. वे. वि. । अ. ७९)

पटोलं मधुकं द्राक्षां धन्याकं विश्वभेषजम् ।
पीतमूलीं बलां रास्नां मूर्वामिन्द्रयवं विडम् ॥
कणाद्वन्द्वं निशाद्वन्द्वमिन्द्रपुष्पं त्रिजातकम् ।
काथयित्वा पिबेत्तोयमण्डाधारगदे सदा ॥

पटोलपत्र, मुलेठी, मुनक्का, धनिया, सोंठ, रेवन्दचीनी, खरैंटी, रास्ना, मूर्वा, इन्द्रयव, बायबिड़ंग, सफेद और काला जीरा, हल्दी, दारुहल्दी, लौंग, दालचीनी, तेजपात और इलायची। इनका काथ अण्डाधार सम्बन्धी रोगोंको नष्ट करता है।

(३७३९) **पटोलादिकाथः** (२०)

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

पटोलपथ्यापिचुमन्दशक्र-
बीजामृतायासकृतः कषायः ।
निपीतमात्रः शमयत्युदीर्णं
कासादियुक्तं सततं ज्वरं हि ॥

पटोलपत्र, हर्र, नीमकी छाल, इन्द्रजौ गिलोय और धमासेका काथ कासादि उपद्रवयुक्त 'सतत' ज्वरको नष्ट करता है।

(३७४०) **पटोलादिकाथः** (२१)

(वं. से.; वृं. मा.; ग. नि. । ज्वर.)

पटोलं पिचुमन्दश्च त्रिफलां मधुकं बलाम् ।
साधितोऽयं कषायः स्यात्पित्तश्लेष्मोद्भवे ज्वरे॥

परवलके पत्ते, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला मुलैठी और खरैंटी।

इनका काथ पित्तकफज ज्वरको नष्ट करता है ।

(३७४१) पटोलादिक्काथः (२२)

(ग. नि. । विसर्प.)

पीत्वा पटोलनिम्बैस्तु चन्दनोत्पलमुस्तकैः ।
काथं विसर्परोगार्तः क्षिप्रं सुखमवाप्नुयात् ॥

पटोलपत्र, नीमकी छाल, लाल चन्दन, नीलोफर (कमल) और नागरमोथा । इनका काथ विसर्प रोगको शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

(३७४२) पटोलादिक्काथः (२३)

(ग. नि. । विस.)

पटोलारिष्टादार्वीत्वक्तिक्तात्रायन्तिकामृताः ।
सयष्टीमधुकाः सर्वे विसर्पान् घ्नन्ति पानतः ॥

पटोलपत्र, नीमकी छाल, दारुहल्दीकी छाल, कुटकी, त्रायमाणा, गिलोय और मुलैठी ।

इनका काथ पीनेसे समस्त प्रकारके 'वीसर्प' नष्ट हो जाते हैं ।

(३७४३) पटोलादिक्काथः (२४)

(वं. से. । स्त्रीरो.)

पटोलनिम्बासनदारुपाठा
मूर्वां गुडूचीं कटुरोहिणीञ्च ।
सनागरं वा कथितञ्च तोये
धात्री पिबेत्स्तन्यविशुद्धिहेतोः ॥

पटोलपत्र, नीमकी छाल, असना वृक्षकी छाल या सार, देवदारु, पाठा, मूर्वा, गिलोय, कुटकी और सोंठ का काथ धाय(धात्री)को पिलानेसे उसका दूध शुद्ध हो जाता है ।

(३७४४) पटोलादिक्काथः (२५)

(वं. से. । व्रण.)

ततः प्रक्षालनः काथ पटोलनिम्बपत्रजः ।
अविशुद्धे विशुद्धे तु न्यग्रोधादित्वगुद्भवः ॥

अशुद्ध घावको पटोल और नीमके पत्तोंके काथसे तथा शुद्ध घावको न्यग्रोधादि गणकी छालके काथसे धोना चाहिये ।

(३७४५) पटोलादिक्काथः (२६)

(ग. नि.; वृं. मा.; वं. से. । कुष्ठा.)

पटोलखदिरारिष्टत्रिफलाकृष्णाचित्रकैः ।
तिक्तासनैः पिबेत्काथं कुष्ठी कुष्ठं व्यपोहति ॥

पटोलपत्र, खैरसार, नीमकी छाल, त्रिफला, पीपल, चीता, कुटकी और असना । इनका काथ पीनेसे कुष्ठ रोग नष्ट होता है ।

(३७४६) पटोलादिक्काथः (२७)

(यो. चि. । का.)

पटोली च गुडूची च मुस्ता चैव धमासकम् ।
निम्बत्वक्पर्पटं तिक्ता भूनिम्बत्रिफला वृषा ॥
"पटोलादिरयं" काथः वातज्वरहरः स्मृतः ॥

पटोलपत्र, गिलोय, नागरमोथा, धमासा, नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, कुटकी, चिरायता, त्रिफला और बासा ।

यह काथ वातजज्वरको नष्ट करता है ।

(३७४७) पटोलादिक्काथः (२८)

(भा. प्र.; यो. र. । बाल.)

पटोलत्रिफलारिष्टहरिद्राकथितं पिबेत् ।
क्षतवीसर्पविस्फोटज्वराणां शान्तये शिशोः ॥

पटोलपत्र, त्रिफला, नीमकी छाल और हल्दी; इनका क्वाथ पिलानेसे बच्चोंका क्षत, वीसर्प, विस्फोटक और ज्वर शान्त होता है ।

(३७४८) पटोलादिक्काथः (२९)

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

पटोलयवधान्याकमधुकं मधुसंयुतम् ।
हन्ति पित्तज्वरं दाहं तृष्णां चाति प्रमाथिनीम् ॥

पटोलपत्र, इन्द्रजौ, धनिया और मुलैठी के क्वाथमें शहद डालकर पीनेसे पित्तज्वर, दाह और तृषा शान्त होती है ।

(३७४९) पटोलादिक्काथः (३०)

(वं से.; वृं. मा.; ग. नि.; च. द.; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

पटोलयवनिष्क्काथो मधुना मधुरी कृतः ।
तीव्रपित्तज्वरोन्मर्दी पानात्तृड्दाहनाशनः ॥

पटोलपत्र और इन्द्रजौके क्वाथको शहदसे मीठा करके पीनेसे भयङ्कर **पित्तजज्वर** और तृषा तथा दाहका नाश होता है ।

(३७५०) पटोलादिक्काथः (३१)

(ग. नि.; वं. से. । ज्वरा.)

पटोलपत्रं सुषवी बृहती कण्टकारिका ।
मरिचं पिप्पली बिल्वं चिरबिल्वं सचित्रकम् ॥
करञ्जबीजं मञ्जिष्ठा त्रायन्ती विश्वभेषजम् ।
गलप्रबोधनं श्रेष्ठमभिन्यासज्वरापहम् ॥

पटोलपत्र, काला जीरा, कटेला, कटेली, कालीमिर्च, पीपल, बेलकी छाल, डहर करञ्ज, चीता, करञ्जकी गिरी, मजीठ, त्रायमाणा और सोंठ । इनका क्वाथ पीनेसे **अभिन्यास ज्वर** नष्ट होता और कण्ठ खुल जाता है ।

(३७५१) पटोलादिक्काथः (३२)

(यो. र.; वं. से. । विस.)

पटोलं पिचुमन्दश्च दार्वीं कटुकरोहिणीम् ।
यष्ट्याह्वं त्रायमाणाश्च दद्याद्वीसर्पशान्तये ॥

पटोलपत्र, नीमकी छाल, दारुहल्दी, कुटकी, मुलैठी और त्रायमाणा । इनका क्वाथ **विसर्पको** नष्ट करता है ।

(३७५२) पटोलादिक्काथः (३३)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २; वृं. मा.; वं. से.; वृ. नि. र.; ग. नि.; च. द. । ज्वरा.; शा. ध. । म. ख. अ. २; वृ. यो. त. । त. ५९)

पटोली चन्दनं तिक्ता मूर्वा पाठामृता गणः ।
पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहकण्डूनिवारणः ॥

पटोलपत्र, लालचन्दन, कुटकी, मूर्वा, पाठा और गिलोय । इनका क्वाथ पित्तकफज्वर, छर्दि, दाह और खुजलीका नाश करता है ।

(३७५३) पटोलादिक्काथः (३४)

(वृ. नि. र.; वं. से.; र. र. । ज्वरा.)

पटोलयवधान्याकमुस्तामलकचन्दनम् ।
श्लैष्मिकश्लेष्मपित्तोत्थज्वरतृट्छर्दिदाहनुत् ॥

पटोलपत्र, इन्द्रयव, धनिया, नागरमोथा, आमला, और लालचन्दन । इनका क्वाथ कफज और कफपित्तज ज्वर तृषा, छर्दि और दाहका नाश करता है ।

(३७५४) **पटोलादिक्काथः** (३५)

(वृ. नि. र.; यो. र.; वं. से.; वृ. मा.; ग. नि.। शूला.; वृं. मा. । अम्लपि.)

पटोलत्रिफलारिष्टैः शृतं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।
पित्तश्लेष्मोद्भवं शूलं विरेकवमनैर्जयेत् ॥

पटोलपत्र, त्रिफला और नीमकी छाल । इनके क्काथमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्तकफज शूल नष्ट होता है । पित्तकफज शूलमें विरेचन और वमन करानी चाहिये ।

(३७५५) **पटोलादिक्काथः** (३६)

(भा. प्र. । ख. २; भै. र.; वृं. मा.; यो. र. । वातरक्ता.; आ. वे. वि. । चि. अ. ३२)

पटोलं त्रिफला भीरुर्गुडूची कटुरोहिणी ।
क्काथः पित्ताधिके शस्तः शर्करामधुसंयुतः ॥

पटोलपत्र, त्रिफला, शतावर, गिलोय और कुटकी । इनके क्काथमें खांड और शहद मिलाकर पीने से पित्ताधिक वातरक्त नष्ट होता है ।

(३७५६) **पटोलादिक्काथः** (३७)

(वं. से.; वृ. नि. र.; यो. र. । शोथरो.)

पटोलत्रिफलारिष्टदार्वीक्काथः सगुग्गुलुः ।
हन्ति पित्तकृतं शोथं तृष्णाज्वरसमन्वितम् ॥

पटोलपत्र, त्रिफला, नीमकी छाल और दारुहल्दी । इनके क्काथमें गूगल मिलाकर पीने से तृष्णा और ज्वरयुक्त पित्तज शोथ नष्ट होता है ।

(३७५७) **पटोलादिक्काथः** (३८)

(ग. नि.; वृ. मा. । अम्ल.)

पटोलं नागरं धान्यं क्काथयित्वा जलं पिबेत् ।
कण्डूपामार्त्तिशूलघ्नं कफपित्ताग्निमान्द्यजित् ॥

पटोलपत्र, सोंठ और धनिया । इनका क्काथ खुजली, पामा, शूल, कफपित्त और अग्निमांद्यका नाश करता है ।

(३७५८) **पटोलादिक्काथः** (३९)

(वृ. नि. र.; ग. नि.; वृं. मा.; यो. र.; वं. से. । अति.)

पटोलयवधान्याकक्काथः पीतः सुशीतलः ।
शर्करामधुसंयुक्तश्छर्द्यतीसारनाशनः ॥

पटोलपत्र, इन्द्रजौ और धनियेके क्काथको ठंडा करके उसमें खांड और शहद मिलाकर पीनेसे वमन और अतिसार नष्ट होते हैं ।

(३७५९) **पटोलादिक्काथः** (४०)

(ग. नि. । नेत्ररोगा.)

पटोलमुद्गामलकैस्तोयं सिद्धं पिबेन्निशि ।
किञ्चिच्छीतं मधुयुतं हन्ति पिल्लाक्षिजं रुजम् ॥

पटोलपत्र, मूंग और आमला । इनके मन्दोष्ण क्काथमें शहद डालकर रात्रिको पीनेसे आंखोका पिल्ल रोग नष्ट होता है ।

(३७६०) **पटोलादिक्काथः** (४१)

(वृ. नि. र. । ज्वर.; शा. ध. । म. अ. २)

पटोलेन्द्रयवादारुत्रिफलामुस्तगोस्तनैः ।
मधुकामृतावासानां क्काथं क्षौद्रयुतं पिबेत् ॥
सन्तते सतते चैव द्वितीयकतृतीयके ।
एकाहिके वा विषमे दाहपूर्वे नवज्वरे ॥

पटोलपत्र, इन्द्रयव, देवदारु, त्रिफला, नागरमोथा, मुनक्का, मुलैठी, गिलोय और बासा । इनके क्काथमें शहद मिलाकर पीनेसे सन्तत, सतत,

तिजारी, चौथिया, विषमज्वर, दाहपूर्व ज्वर और नवज्वर नष्ट होता है ।

(३७६१) **पटोलादिक्काथः** (४२)

(वृ. नि. र.; यो. र.; ग. नि. । ज्वर.)

पटोलयष्टीमधुतिक्तरोहिणी
घनाभयाभिर्विषमज्वरघ्नम् ।
कृतः कषायस्त्रिफलामृतावृषैः
पृथक्पृथग्वा विषमज्वरापहः ॥

पटोलपत्र, गुलैठी, कुटकी, नागरमोथा और हर्रका काथ विषमज्वरको नष्ट करता है ।

अथवा त्रिफला या गिलोय या बासेका काथ पीनेसे भी विषमज्वर नष्ट होता है ।

(३७६२) **पटोलादिक्काथः** (४३)

(ग. नि. । विस्फो.; यो. र.; वृं. मा. । विस्फो.; यो. त. । त. ६६)

पटोलामृतभूनिम्बवासकारिष्टपर्पटैः ।
खदिराब्दयुतैः काथो विस्फोटार्त्तिज्वरापहः ॥

पटोलपत्र, गिलोय, चिरायता, बासा (अडूसा), नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, खैरसार और नागरमोथेका काथ पीनेसे विस्फोटक और ज्वर शान्त होते हैं ।

(३७६३) **पटोलादिक्काथः** (४४)

(भा. प्र. । ख. २ विस्फो.; वं. से. । व्रणशो.)

पटोलनिम्बासनसारधात्री
पथ्याक्षनिर्यूहमहर्मुखेषु ।
पिबेद्युतं गुग्गुलुना विसर्प-
विस्फोटदुष्टव्रणशान्तिमिच्छन् ॥

पटोलपत्र, नीमकी छाल, असनाका सार, आंमला, हर्र और बहेड़ा । इनके काथमें गूगल मिलाकर प्रातःकाल सेवन करनेसे विसर्प, विस्फोट और दुष्ट व्रण नष्ट होते हैं ।

(गूगल १॥ से ३ माशे तक मिलावें ।)

(३७६४) **पटोलादिगणः** (१)

(वा. भ. । सू. अ. १५)

पटोलं कटुरोहिणी चन्दनं
मधुस्रवगुडूचिपाठान्वितम् ।
निहन्ति कफपित्तकुष्ठज्वरान्
विषं वमिमरोचकं कामलाम् ॥

पटोल, कुटकी, लालचन्दन, महुवा, गिलोय और पाठा । यह द्रव्यसमूह कफ, पित्त, कुष्ठ, ज्वर, विष, वमन, अरुचि और कामलाको नष्ट करता है ।

(३७६५) **पटोलादिगणः** (२)

(यो. त. । त. ५१)

पटोलवासकारिष्टगुडूचीत्रिफलाघनम् ।
पञ्चमूली सयष्टयाह्वा चन्दनं विश्वभेषजम् ॥
पटोलादिर्गणः प्रोक्तः सर्वनेत्रामयापहः ।
वातिकं पैत्तिकं चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
स्रावं रक्तप्रकोपञ्च पटोलादिर्व्यपोहति ॥

पटोल, वासा, नीमकी छाल, गिलोय, त्रिफला, नागर मोथा, पञ्चमूल, मुलैठी, लालचन्दन और सोंठ । इन ओषधियोंके समूहको '**पटोलादि-गण**' कहते हैं ।

पटोलादिगण वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज नेत्ररोग, नेत्रस्राव और रक्तप्रकोपको नष्ट करता है ।

(३७६६) **पटोलादिगणः** (३)

(सु. सं. । सू. स्था. अ. ३८)

पटोलचन्दनकुचन्दनमूर्वागुडूचीपाठाः
कटुरोहिणीचेति ॥
पटोलादिर्गणः पित्तकफारोचकनाशनः ।
ज्वरोपशमनो व्रण्यश्च्छर्दिकण्डूविषापहः ॥

पटोलपत्र, लालचन्दन, पतङ्ग, मूर्वा, गिलोय, पाठा और कुटकी । इन ओषधियोंके समूहको "**पटोलादि गण**" कहते हैं । यह गण पित्त, कफ, अरुचि, ज्वर, छर्दि, खुजली और विषनाशक तथा घावों में लाभदायक है ।

(३७६७) **पटोलादिवमनयोगः**

(ग. नि. । विसर्प.)

पटोलपिचुमन्दाभ्यां पिप्पल्या मदनेन च ।
विसर्पे वमनं शस्तं तथा चेन्द्रयवैः सह ॥

पटोलपत्र, नीमकी छाल, पीपल, मैनफल और इन्द्रजौका काथ पीनेसे वमन होकर विसर्प रोग नष्ट हो जाता है ।

(३७६८) **पटोलादिसेकः**

(ग. नि. । अति.)

गुददाहे प्रपाके वा पटोलमधुकाम्बुना ।
सेकादिकं प्रशंसन्ति छागेन पयसाऽथवा ॥

गुददाह और गुदपाकमें पटोलपत्र और मुलैठी के काथसे अथवा बकरीके दूधसे गुदाको धोना चाहिये ।

(३७६९) **पत्रकादिक्काथः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

पत्रकेसरशुण्ठीसमैला
तुम्बरुधान्यविडङ्गतिलानाम् ।
काथो हरीतकीसर्पिर्गुडेन
पीतो निहन्ति गुदजानि ॥

तेजपात, नागकेसर, सोठ, इलायची, तुम्बरु, धनिया, बायबिडंग, तिल और हर्र । इनके काथमें घी और गुड़ मिलाकर पीनेसे बवासीर (अर्श) नष्ट होती है ।

(३७७०) **पथ्यादिकषायः** (१)

(र. र.; यो. र. । शोथ.; भा. प्र. । म. ख. शोथ; वृ. यो. त. । त. १०६)

पथ्यामृताभार्ङ्गीपुनर्नवाग्नि-
दार्वीनिशादारुमहौषधानाम् ।
काथं प्रपीयोदरपाणिपाद-
रक्ताश्रितं हन्त्यचिरेण शोथम् ॥

हर्र, गिलोय, भारंगी, पुनर्नवा (साठी), चीता, दारुहल्दी, हल्दी, देवदारु और सोंठ । इनका काथ सेवन करने से उदर, हाथ और पैरों का रक्ताश्रित शोथ शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(३७७१) **पथ्यादिकषायः** (२)

(ग. नि. । प्रमे.)

पथ्योशीरशिवामुस्तानिशोत्पलसमुद्भवः ।
काथो मधुयुतः पीतः प्रमेहं हन्ति पित्तजम् ॥

हर्र, खस, आमला, नागरमोथा, हल्दी और नीलकमल (नीलोफर) । इनके काथमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्तजप्रमेह नष्ट होता है ।

(३७७२) **पथ्यादिक्काथः** (१)

(वृ. नि. र.; यो. र. । सन्नि.)

पथ्यापर्पटकटुकामृद्वीकादारुजलदभूनिम्बाः ।
शम्पाकपटोलशिवाकाथश्चित्तभ्रमं हन्ति ॥

हर्र, पित्तपापड़ा, कुटकी, मुनक्का, देवदारु, नागरमोथा, चिरायता, अमलतासका गूदा, पटोलपत्र और आमला।

इनका काथ चित्तभ्रम **सन्निपात**को नष्ट करता है।

(३७७३) **पथ्यादिक्काथः** (२)

(वं. से. । अति.)

पथ्याजाजीदुरालम्भाघोटाफलसमन्वितः।
स्वरसोऽप्यथवा कल्कः पक्कातीसारनाशनः॥

हर्र, जीरा, धमासा और बेर (या सुपारी)। इनके स्वरस या कल्कको सेवन करनेसे **पक्कातीसार** नष्ट होता है।

(३७७४) **पथ्यादिक्काथः** (३)

(वृ. नि. र.; वं. से. । अति.; हा. सं. । स्था. ३ अ. ३; भा. प्र. । ख. २ अति.)

पथ्यादारुवचामुस्तैर्नागरातिविषान्वितैः।
आमातिसारशूलघ्नं दीपनं पाचनं परम्॥

हर्र, देवदारु, वच, मोथा, सोंठ और अतीसका काथ **आमातिसार** और शूलको नष्ट करता है। यह दीपन और पाचन भी है।

(३७७५) **पथ्यादिक्काथः** (४)

(वृ. नि. र.; यो. र. । शूलरो.)

पथ्यासशक्रयवपुष्करमूलयुक्ता
निःक्काथ्य हिङ्गुजटिलातिविषासमेतम्।
पीत्वा सुखोष्णमथ वातकृतं हि शूल-
मामोद्भवं कफकृतं च निहन्ति तूर्णम्॥

हर्र, इन्द्रयव और पोखरमूलके मन्दोष्ण काथमें हींग, पीपल और अतीसका चूर्ण मिलाकर पीनेसे वातज शूल, आमशूल और कफज शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(३७७६) **पथ्यादिक्काथः** (५)

(वै. म. र. । पट. २)

पथ्याकट्फलनागराम्बुदवचा-
भूनिम्बधान्यद्रुमै-
र्भार्ङ्गीपर्पटकान्वितैः मृतमिदं
तोयं सुशीतं पुनः।
मध्वाढ्यं परमाणुरामठयुतं
श्लेष्मज्वरं नाशयेत्
कोष्ठार्तिश्वसनाग्निसादकसना-
रुच्यास्यशोषान्वितम्॥

हर्र, कायफल, सोंठ, नागरमोथा, बच, चिरायता, धनिया, इन्द्रजौ, भारंगी और पित्तपापड़ा; इनके काथको शीतल करके उसमें शहद और जरा सा हींग मिलाकर पीनेसे उदरपीड़ा, श्वास, अग्निमांद्य, खांसी, अरुचि और मुखशोषयुक्त कफज्वर नष्ट होता है।

(३७७७) **पथ्यादिक्काथः** (६)

(वृ. नि. र. । सन्नि.)

पथ्यावृषारग्वधदारुतिक्ता
रास्नागुडूचीगदजः कषायः।
सोपद्रवाच्चान्तकनामधेया-
ज्ज्वरान्नरं मोचयतीति चित्रम्॥

हर्र, बासा, अमलतास, देवदारु, कुटकी, रास्ना, गिलोय और कूट। इनका काथ उपद्रवयुक्त **अन्तकनामकसन्निपात** ज्वरको नष्ट करता है।

(३७७८) **पथ्यादिक्वाथः** (७)

(वृ. नि. र.; यो. र.; ग. नि. । ज्वरा.)

पथ्यास्थिरानागरदेवदारु
धात्रीवृषैरुत्कथितः कषायः।
सितोपलामाक्षिकसम्प्रयुक्त-
श्चातुर्थिकं हन्ति अचिरेण पीतः॥

हर्र, शालपर्णी, सोंठ, देवदारु, आमला और बासा। इनके क्वाथमें मिश्री और शहद मिलाकर पीनेसे **'चातुर्थिक'** (चौथिया) ज्वर शीघ्रही नष्ट हो जाता है।

(३७७९) **पथ्यादिक्वाथः** (८)

(यो. र. । स्त्री.)

पथ्यामलकविभीतकविश्वौषधदारुरजनीनाम्।
सक्षौद्रलोध्रचूर्णः क्वाथो हन्त्येव सर्वजं प्रदरम्॥

हर्र, आमला, बहेड़ा, सोंठ, देवदारु और हल्दीके क्वाथमें लोधका चूर्ण और शहद मिलाकर पीनेसे **सर्वदोषजप्रदर** अवश्य नष्ट हो जाता है।

(३७८०) **पथ्यादिक्वाथः** (९)

(वृ. नि. र.; वं. से.। अतिसार.)

पथ्याग्निकटुकापाठावचामुस्तकवत्सकैः।
सनागरैर्जयेत्क्वाथः कल्को वा श्लैष्मिकीं स्रुतिम्॥

हर्र, चीता, कुटकी, पाठा, बच, नागरमोथा, इन्द्रजौ और सोंठ। इनका क्वाथ या कल्क सेवन करनेसे **कफज अतिसार** नष्ट होता है।

(३७८१) **पथ्यादिपाचनक्वाथः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४)

पथ्यासमङ्गाकलसीसरास्ना
महौषधं चातिविषा सुराह्वम्।
जलेन निःक्वाथ्य ततश्च पानं
गुल्मामयानां प्रतिपाचनञ्च॥

हर्र, मजीठ, पृष्ठपर्णी, रास्ना, सोंठ, अतीस और देवदारु। इनका क्वाथ **गुल्मको पकाता है।**

(३७८२) **पथ्यादियोगः**

(ग. नि. । उदर.)

पथ्यापुनर्नवादारुगुडूचीगुग्गुलुः समम्।
पिष्य गोमूत्रपीतानि नाशयन्ति जलोदरम्॥

हर्र, पुनर्नवा, देवदारु, गिलोय, और गूगल। इनको गोमूत्रमें पीसकर पीनेसे **जलोदर** नष्ट होता है।

(३७८३) **पथ्यायोगः**

(यो त. । त. ५६)

भृष्टश्चैरण्डतैलेन कल्कः पथ्यासमुद्भवः।
कृष्णासैन्धवसंयुक्तो ब्रध्नरोगहरः परः॥

हर्रको अरण्डके तेलमें भूनकर पानीके साथ पीसकर उसमें सेंधानमक और पीपलका चूर्ण मिलाकर सेवन करनेसे **ब्रध्न** रोग नष्ट होता है।

(३७८४) **पद्मकादिक्वाथः** (१)

(ग. नि. । ज्व.)

पद्मकं मधुपुष्पाणि यष्टीमध्वाटरूषकम्।
उशीरद्वितयं द्राक्षा नीलोत्पलदलान्वितम्॥
आबालाच्च निषेव्योऽयं क्वाथः कथितशीतलः।
वातपित्तज्वरं मोहं प्रलापञ्च यतो हरेत्॥

पद्माक, महुवेके फूल, मुलैठी, बासा (अडूसा), खस, सुगन्धबाला, मुनक्का और नीलकमलके पत्ते।

इनके काथको ठंडा करके पिलानेसे बालकों और बड़ोंका वातपित्तज्वर, मोह और प्रलाप नष्ट होता है।

(३७८५) पद्मकादिक्काथः (२)

(ग. नि. । ज्व.)

पद्मकं धान्यकं शुण्ठी पर्पटोशीरकद्वयम् ।
एभिः क्वाथः कृतः सद्यो देयः पित्तज्वरच्छिदे ॥

पद्माक, धनिया, सोंठ, पित्तपापड़ा, खस और सुगन्धबाला; इनका काथ पीनेसे पित्तज्वर शीघ्र ही शान्त हो जाता है।

(३७८६) पद्मकादिक्काथः (३)

(च. सं. । चि. अ. ४)

पद्मकं पद्मकिञ्जल्कं दूर्वां वास्तुकमेव च ।
नागपुष्पञ्च लोध्रञ्च तेनैव विधिना पिबेत् ॥

पद्माक, कमलकी केसर, दूर्वा, बथुवा, नागकेसर और लोध।

इनका काथ पीनेसे रक्तपित्त शान्त होता है।

(३७८७) पद्मकादिक्काथः (४)

(भा. प्र. । म. खं. ज्व.)

पद्मकचन्दनपर्पटमुस्तं
जातीजीवकचन्दनवारि ।
क्लीतकनिम्बयुतं परिपक्वं
वारि भवेदिह शोणितहारि ॥

पद्माक, लाल चन्दन, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, चमेली, जीवक, सफेद चन्दन, सुगन्धबाला, मुलैठी और नीमकी छालका काथ पीनेसे रक्तष्ठीवी सन्निपात में होने वाला रक्तस्राव बन्द होता है।

(३७८८) पद्मकादिगणः

(वा. भ. । सूत्र.)

पद्मकपुण्ड्रौ वृद्धितुगर्द्ध्यः
शृङ्ग्यमृतादशजीवनसंज्ञाः ।
स्तन्यकराघ्नन्तीरणपित्तं
प्रीणनजीवनबृंहणवृष्याः ॥

पद्माक, पुण्डरिया, वृद्धि, बंसलोचन, ऋद्धि, काकड़ासिंगी, गिलोय, जीवनीय गण (जीवन्ती, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, ऋषभक, जीवक और मुलैठी)।

यह "पद्मकादिगण" स्तन्य (दुग्धवर्द्धक), वातपित्तनाशक, जीवन, बृंहण और वृष्य है।

(३७८९) पद्मोत्पलादिक्काथः

(वृ. नि. र. । रक्त. पि.)

पद्मोत्पलानां किञ्जल्कः पृष्ठिपर्णीप्रियङ्गुका ।
वासापत्रसमुद्भूतो रसः समधुशर्करः ॥
क्काथो वा हरते पीतो रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥

पद्म (कमल) की केसर, पृष्ठपर्णी, फूलप्रियंगु, और बासे (अडूसे) के पत्ते। इनके स्वरस या काथमें शहद और मिश्री मिलाकर पीनेसे भयङ्कर रक्तपित्त भी नष्ट हो जाता है।

(३७९०) परूषकादिक्काथः

(ग. नि.; भा. प्र. । ज्वरा.)

परूषकाणि त्रिफला देवदारु सकट्फलम् ।
चन्दनं पद्मकञ्चैव तथा कटुरोहिणी ॥
पृथक्कर्षसमैः सिद्धमुषितं[1] शीतलं पिबेत् ।
पित्तोत्तरे नृणामेतत्सन्निपाते चिकित्सितम् ॥

१ पृश्निपर्णीयुतं सौभिरिति पाठान्तरम् ।

फालसा, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, कायफल, लाल चन्दन, पद्माक और कुटकी । प्रत्येक ओषधि १। तोला लेकर सबको अधकुटा करलें ।

इनका शीत कषाय सेवन करने से **पित्त-प्रधान सन्निपात** नष्ट होता है ।

(३७९१) **परूषकादिगणः**

(सु. सं. । सू. अ. ३८; वा. भ. । सू. अ. १५)

परूषकद्राक्षाकट्फलदाडिमराजादनकतक-
फलशाकफलानि त्रिफला चेति ।
परूषकादिरित्येष गणो वातविनाशनः ।
मूत्रदोषहरो हृद्यः पिपासाघ्नो रुचिप्रदः ॥

फालसा, मुनक्का, कायफल, अनार, खिरनी, निर्मलीके फल, सागोनके फल और त्रिफला ।

इन ओषधियोंके समूहको "**परूषकादि गण**" कहते हैं । यह गण वातनाशक, मूत्र-दोषनाशक, हृद्य, पिपासानाशक और रुचिवर्द्धक है ।

(३७९२) **परूषकादियोगः**

(ग. नि. । छर्द्य.)

परूषकाणि मृद्वीकां मधुकं शर्करां बलाम् ।
मधूकपुष्पं पद्मं च मुस्तामलकानि च ॥
आपोथ्य तानि सर्वाणि प्रक्षिपेत्तण्डुलोदके ।
शर्कराक्षौद्रसंयुक्तं पिबेच्छर्दितृषापहम् ॥

फालसा, मुनक्का, मुलैठी, मिश्री, खरैंटी, महुवेके फूल, कमल, नागरमोथा और आमला । सब चीज़ोंको पीसकर चावलोंके पानीमें मिलावें और उसमें मिश्री तथा शहद मिलाकर सेवन करावें । इसके सेवनसे **छर्दि और तृषा** नष्ट होती है ।

(३७९३) **परूषकादिहिमः**

(ग. नि. । ज्वरा.)

परूषकमधूकानि काश्मर्यामलकानि च ।
बलाखर्जूरमृद्वीकाशीतपाकीनिदिग्धिकाः ॥
मधूकं प्रपौण्डरीकं चन्दनोशीरपद्मकम् ।
एतान्यापोथ्य तुल्यानि वासयेदुत्तमोदके ॥
शर्करामधुसंयुक्तं प्रातरुत्थाय पाययेत् ।
तेनास्य पित्तसम्भूतो ज्वरः क्षिप्रं प्रणश्यति ॥

फालसा, महुवा, खम्भारी, आमला, खरैंटी, खजूर, मुनक्का, काकोली, कटेली, मुलैठी, पुण्डरिया, लाल चन्दन, खस और पद्माक । सबको कूटकर रातको स्वच्छ जलमें भिगो दें और प्रातःकाल मल छान कर उसमें मिश्री और शहद मिलाकर सेवन करें । यह क्वाथ **पित्तज्वरको** शीघ्र नष्ट करता है ।

(३७९४) **पर्पटादिक्वाथः** (१)

(च. द.; वृ. नि. र. । ज्वर.; वं. से.; यो. र. । छर्दि.; वै. जी. । वि. १)

एक एव खलु पैत्तिकज्वरं
हन्ति पर्पटकृतः कषायकः ।
चन्दनोदकमहौषधान्वितं-
श्चेत्तदा किमु पुनर्विचारणा ॥

पित्तज्वर को नष्ट करनेके लिये केवल पित्त-पापड़ेका क्वाथ ही पर्याप्त है, यदि उसके साथ चन्दन, सुगन्धबाला और सोंठ भी मिला दी जाय तब तो कहना ही क्या है ।

(३७९५) **पर्पटादिक्वाथः** (२)

(वृ. नि. र. । ज्व.; शा. सं. । म. ख. अ. २)

पर्पटो वासकस्तिक्ता किरातो धन्वयासकः ।
प्रियङ्गुश्च कृतः क्वाथ एषां शर्करया युतः ॥

पिपासादाहपित्तास्रयुक्तं पित्तज्वरं हरेत् ॥

पित्तपापड़ा, बासा, कुटकी, चिरायता, धमासा और फूलप्रियङ्गु। इनके क्वाथमें मिश्री मिलाकर पीनेसे पिपासा, दाह और **रक्तपित्तयुक्त पित्तज्वर** शान्त होता है।

(३७९६) **पर्पटादिक्वाथः** (३)

(ग. नि. । ज्वर.)

पर्पटश्चन्दनं मुस्ता विश्वोशीरद्वयं समम् ।
एषां क्वाथस्तृषां हन्ति छर्दिं पित्तज्वरं तथा ॥

पित्तपापड़ा, लालचन्दन, नागरमोथा, सोंठ, खस और नेत्रबाला। इनका क्वाथ तृषा, छर्दि और **पित्तज्वरको** नष्ट करता है।

(३७९७) **पर्पटादिक्वाथः** (४)

(भा. प्र. । ज्वरा.)

पर्पटः कट्फलं कुष्ठमुशीरं चन्दनं जलम् ।
नागरं मुस्तकं शृङ्गी पिप्पल्येषां शृतं हृतम् ॥
तृष्णादाहाग्निमान्द्येषु पित्तश्लेष्मोल्बणे ज्वरे ॥

पित्तपापड़ा, कायफल, कूठ, खस, लालचन्दन, सुगन्धबाला, सोंठ, नागरमोथा, काकड़ासिंगी और पीपल। इनका क्वाथ तृष्णा, दाह, अग्निमांद्य और पित्तकफज ज्वरको नष्ट करता है।

(३७९८) **पर्पटादिक्वाथः** (५)

(वृं. मा.; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

पर्पटामृताधात्रीणां क्वाथ पित्तज्वरं जयेत् ।
द्राक्षारग्वधयोश्चापि काश्मर्यस्याथ वा पुनः ॥

पित्तपापड़ा, गिलोय और आमलेका अथवा मुनक्का और अमलतासका या खम्भारीका क्वाथ **पित्तज्वरको** नष्ट करता है।

(३७९९) **पलाशपत्रयोगः**

(भा. प्र.; वं. से.; यो. र. । स्त्री. रो.)

पत्रमेकं पलाशस्य पिष्ट्वा दुग्धेन गर्भिणी ।
पीत्वा पुत्रमवाप्नोति वीर्यवन्तं न संशयः ॥

गर्भिणी स्त्री ढाक (पलास) के एक पत्तेको दूधके साथ पीसकर सेवन करे तो वह निस्सन्देह वीर्यवान पुत्रको जन्म देती है।

(३८००) **पलाशपुष्पक्वाथः**

(यो. र. । प्रमेह.)

पलाशतरुपुष्पाणां क्वाथः शर्करया युतः ।
निषेवितः प्रमेहाणि हन्ति नाना विधान्यपि ॥

पलास (ढाक) के फूलोंके क्वाथमें मिश्री मिलाकर पीनेसे **अनेक प्रकारके प्रमेह** नष्ट होते हैं।

(३८०१) **पलाशमूलस्वरसः**

(वृं. मा.; वृ. नि. र. । श्लीपद.)

पलाशमूलस्वरसं पिबेद्वा
तैलेन तुल्यं सितसर्षपाणाम् ।
मूत्रेणपक्त्वामरदारुविश्वं
श्रीगुग्गुलं श्लीपदिभिर्निषेव्यम् ॥

सफेद सरसोंका तैल मिलाकर पलासकी जड़का स्वरस, या देवदारु और सोंठको गोमूत्रमें पकाकर उसमें गूगल मिलाकर पीनेसे **श्लीपद रोग** नष्ट होता है।

(३८०२) **पलाशबीजयोगः**

(वं. से.; ग. नि. । कृमि.)

पलाशबीजस्वरसं पिबेद्वा क्षौद्रसंयुतम् ।
पिबेत्तद्बीजकल्कं वा तक्रेण क्रिमिनाशनम् ॥

पलासके बीजोंके स्वरसमें शहद मिलाकर पीनेसे या उनके कल्कको तक्रके साथ पीनेसे **कृमि** नष्ट हो जाते हैं ।

(३८०३) पलाशादिक्काथः

(यो. चि. । अ. ४)

पलाशरोहीतकमूलपाठा-
क्वाथं विदध्यात्प्रदरे सपाण्डौ ।
पीते सितेऽयं मधुसंप्रयुक्तं
प्रसिद्धयोगः शतशोऽनुभूतः ॥

पलास (ढाक) की छाल, रुहेड़ेकी जड़की छाल, और पाठा । इनके क्वाथमें शहद मिलाकर पीनेसे पाण्डु और **पीला तथा सफेद प्रदर** नष्ट होता है ।

यह एक प्रसिद्ध और सैंकड़ों बारका अनुभूत प्रयोग है ।

(३८०४) पाठादिक्काथः (१)

(वृं. नि. र. । अतिसा.)

पाठाविषावत्सकमेघदारु-
विडङ्गकामोचरसैः कषायम् ।
कृतं प्रभाते प्रपिबेद्गदार्ति-
शोफातिसारार्णववाडवाग्निः ॥

पाठा, अतीस, इन्द्रजौ, नागरमोथा, देवदारु, बायबिड़ंग, और मोचरस । इनका क्वाथ प्रातःकाल पीनेसे **सूजन और अतिसार** नष्ट होते हैं ।

(३८०५) पाठादिक्काथः (२)

(वृ. नि. र. । अम्लपि.)

पाठानिम्बपटोलत्रिफलासनयासयोजयति ।
अधिककफमम्लपित्तं सहितो गुग्गुलुना क्रमशः॥

पाठा, नीमकी छाल, पटोलपत्र, हर्र, बहेड़ा, आमला, असना और धमासेके क्वाथमें गूगल मिलाकर पीने से **कफप्रधान अम्लपित्त** नष्ट होता है ।

(३८०६) पाठादिक्काथः (३)

(वै. म. । पटल १)

पाठोशीरजलैः सिद्धः क्काथः स्यात् पाचनं ज्वरे ।
नागराम्बुयवासैश्च पृथक् सिद्धः सपर्पटैः ॥

पाठा, खस और सुगन्धबाला अथवा सोंठ, सुगन्धबाला, धमासा और पित्तपापड़ेका क्वाथ ज्वरपाचक है ।

(३८०७) पाठादिक्काथः (४)

(वै. म. र. । पट. ६)

पाठानागरदुःस्पृग्बिल्वाग्निवृषाब्दसंभृतः क्काथः।
आमातिसारमस्येत् स्रावं सकफं सशूलञ्च ॥

पाठा, सोंठ, धमासा, बेलगिरी, चीता, बासा और नागरमोथा । इनका क्वाथ कफ और शूलयुक्त **आमातिसार** को नष्ट करता है ।

(३८०८) पाठादिक्काथः (५)

(वं. से. । अतिसा.)

पाठा वत्सकबीजानि चित्रकं विश्वभेषजम् ।
पिबेन्निःक्काथ्य चूर्णानि कृत्वा चोष्णेन वारिणा॥
पित्तश्लेष्मातिसारघ्नं ग्रहण्यां शूलनुद्धितम् ॥

पाठा, इन्द्रजौ, चीता और सोंठ । गर्म पानीके साथ इनका चूर्ण या इनका क्वाथ पीनेसे पित्तकफज अतिसार, ग्रहणी और शूल नष्ट होते हैं ।

(३८०९) **पाठादिक्वाथः (६)**

(वं. से. । स्त्रीरो.)

पाठा मूर्वा च भूनिम्बदारुशुण्ठिकलिङ्गकाः ।
शारिवामृततिक्ताख्याः क्वाथः स्तन्यविशोधनः ॥

पाठा, मूर्वा, चिरायता, देवदारु, सोंठ, इन्द्रजौ, सारिवा, गिलोय और कुटकी का क्वाथ बालककी माता (या धाय) को पिलानेसे उसका दूध शुद्ध होता है ।

(३८१०) **पाठादिक्वाथः (७)**

(ग. नि.; वृं. मा. । प्रमेह.)

पाठाशिरीषदुस्पर्शामूर्वाकिंशुकतिन्दुक-
कपित्थानां भिषक् क्वाथं हस्तिमेहे प्रयोजयेत् ॥

हस्तिप्रमेहमें पाठा, सिरसकी छाल, धमासा, मूर्वा, केसू (टेसू), तेंदु की छाल और कैथ वृक्षकी छाल का क्वाथ पिलाना चाहिये ।

(३८११) **पाठादिक्वाथः (८)**

(भा. प्र.; वृ. नि. र. । ज्वर.)

पाठामृतापर्पटमुस्तविश्वा
किराततिक्तेन्द्रयवान् विपाच्य ।
पिबन् हरत्येव हठेन सर्वान्
ज्वरातिसारानपि दुर्निवारान् ॥

पाठा, गिलोय, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, सोंठ, चिरायता और इन्द्रजौ इनका क्वाथ भयंकर ज्वरातिसारको भी अवश्य नष्ट कर देता है ।

(३८१२) **पाठासप्तकक्वाथः**

(ग. नि.; र. र.; वृं. मा.; वं. से.; वृ. नि. र. । ज्वराति.; वृ. यो त. । त. ६५)

पाठेन्द्रयवभूनिम्बमुस्तपर्पटकामृताः[१] ।
जयन्त्याममतीसारं [२]ज्वरञ्च समहौषधाः[२] ॥

१—' श्रृताः ' इति पाठान्तरम् ।

२— २ सज्वरं वाऽथ विज्वरमिति पाठान्तरम् ।

पाठा, इन्द्रजौ, चिरायता, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, गिलोय और सोंठ । इनका क्वाथ आमातिसार और ज्वरको नष्ट करता है ।

(३८१३) **पाठाशिफापयः**

(वै. म. र. । पट. १)

पाठाशिफापयः पीतं प्रातरेव दिनैस्त्रिभिः ।
शीतिकां कम्पबहुलां नाशयेल्लशुनं तथा ॥

तीन दिनतक रोजाना प्रातःकाल पाठे की जड़को दूधमें पीसकर पीने अथवा लहसन खाने से कम्पयुक्त शीत नष्ट हो जाता है । (यह योग शीतज्वरमें उपयोगी है ।)

(३८१४) **पारिजातादिक्वाथाष्टकम्**

(वृं. मा. । प्रमेहा.)

पारिजातजयानिम्बवह्निगायत्रिणां पृथक् ।
पाठायाः सागुरोः पीता द्वयस्य शारदस्य च ॥
जलेक्षुमद्यसिकताशनैर्लवणपिष्टकाः ।
सान्द्रमेहान्क्रमाद् घ्नन्ति अष्टौ क्वाथाः समाक्षिकाः ॥

(१) पारिजात (२) जया (३) नीमकी छाल (४) चीता (५) खैरसार (६) पाठा और अगर (७) हल्दी (८) दारुहल्दी । यह आठ क्वाथ शहद डालकर पीनेसे क्रमशः उदकमेह, इक्षुमेह, सुरामेह, सिकतामेह शनैमेह, लवणमेह, पिष्टमेह और सान्द्रमेहको नष्ट करते हैं ।

(३८१५) **पारिभद्ररसादिप्रयोगः**

(वं. से.; वृं. मा. । कृम्यधि.)

पारिभद्रकपत्रोत्थं रसं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।
किंशुकस्य[१] रसं वापि धत्तूरस्यापि[२] वा रसम् ॥

१—कम्बुकस्येति पाठान्तरम् ।

२—पत्तूरस्येति पाठान्तरम् ।

पारिभद्र (फरहद) के पत्तोंके या टेसू अथवा धतूरेके रसमें शहद मिलाकर पीनेसे **कृमि** नष्ट होते हैं ।

(३८१६) पाषाणभेदक्काथः

(वृ. नि. र. । अश्मरी.)

पीत्वापाषाणभित्काथं सशिलाजतुशर्करम् ।
पित्ताश्मरीं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

पखानभेदके काथमें शिलाजीत और खांड मिलाकर पीनेसे **पित्तज अश्मरी** शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(३८१७) पाषाणभेदादिकषायः

(ग. नि. । मूत्रकृच्छ्र.)

पाषाणभेदो मधुयष्टिरेला
कृष्णाशिफैरण्डसिताटरूषाः ।
स्पृक्का स्वदंष्ट्रा च शिवासमेतैः
काथो हरेदुःसहमूत्रकृच्छ्रम् ॥

पखानभेद, मुलैठी, इलायची, पीपलामूल, अरण्डकी जड़, सफेद बासा, स्पृक्का, गोखरु और हर्रका काथ **भयङ्कर मूत्रकृच्छ्रको** भी नष्ट कर देता है ।

(३८१८) पाषाणभेदादिक्काथः (१)

(वं. से. । अश्मरी.)

पाषाणभेदवरुणगोक्षुरकपोतवङ्कजः काथः ।
गिरिजतुगुडमगाढः कर्कटिकात्रपुसबीजयुक्तः ॥
पेयोऽश्मरीमवश्यं दुर्भेदामपि भिनत्ति योगवरः ।
शिखरिणमिव शतकोटिः शतमन्योर्हस्तनिर्मुक्तः ॥

पाषाणभेद (पखान भेद), बरनेकी छाल, गोखरु, और ब्राह्मी । इनके काथमें शिलाजीत और ककड़ी तथा खीरेके बीज मिलाकर उसे गुड़से मीठा करके पीनेसे **दुर्भेद्य अश्मरी** (पथरी) भी अवश्य नष्ट हो जाती है ।

(३८१९) पाषाणभेदादिक्काथः (२)

(वृ. नि. र. । मूत्रकृ.)

पाषाणभेदकृतमालकधन्वयास
पथ्यात्रिकण्टककषायनिषेवणेन ।
मध्वन्वितेन सहसा विरहं प्रयाति
रुग्दाहबन्धसहितं किल मूत्रकृच्छ्रम् ॥

पखानभेद, छोटा अमलतास, धमासा, हर्र और गोखरुके काथमें शहद मिलाकर पीनेसे पीड़ा दाह और मूत्रावरोध युक्त **मूत्रकृच्छ्र** शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(३८२०) पाषाणभेदादिक्काथः (३)

(वं. से.[1] । अश्म.; वृ. यो. त. । त. १०२; यो. र.; वृ. नि. र. । मूत्रकृ.)

पाषाणभिद्वरुणगोक्षुरकोरुबूक
क्षुद्राद्वयक्षुरकमूलकृतः कषायः ।
दध्ना युतो जयति मूत्रविबन्धशुक्र-
मुग्राश्मरीमपि च शर्करया समेताम् ॥

पखानभेद, बरनेकी छाल, गोखरु, अरण्डकी जड़, कटेली, बड़ी कटेली और तालमखानेकी जड़ । इनके काथमें दही मिलाकर पीनेसे मूत्रावरोध, शुक्राश्मरी, और शर्करा का नाश होता है ।

(३८२१) पाषाणभेदादिक्काथः (४)

(यो. र.; वृ. नि. र. । मूत्रकृ.)

पाषाणभेदस्त्रिवृता च पथ्या—
दुरालभापुष्करगोक्षुरश्च ।

१—वं. से. मे वरुणका अभाव है ।

पलाशशृङ्गाटककर्कटीनां
बीजं कषायः सुनिरुद्धमूत्रे ॥

यदि मूत्रकृच्छ्र रोगमें **मूत्र रुक जाय तो** पखानभेद, निसोत, हर्र, धमासा, पोखरमूल, गोखरु, पलाश, (ढाकके फूल) सिंघाड़ा, और ककड़ीके बीजोंका काथ पिलाना चाहिये ।

(३८२२) पिचुमन्दमूलयोगः

(रा. मा. । वातरो.)

जरठपिचुमन्दमूलं पिष्टं शीतेन वारिणा पीतम्
अपहरति वातदोषं सन्धिकसंज्ञं प्रकर्षेण ॥

पुराने नीमकी जड़की छालको शीतल जलके साथ पीसकर पीनेसे **सन्धिकवात (गठिया)** नष्ट होती है ।

(३८२३) पिचुमन्दादिकाथः

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

पिचुमन्दमहौषधान्वितावृहतीपौष्करतिक्तकं शठी ।
वृषकट्फलकं कणा वरी कथितं वारि कफ-ज्वरं जयेत् ॥

नीमकी छाल, सोंठ, कटेली, पोखरमूल, चिरायता, कचूर, बासा, कायफल, पीपल और शतावरका काथ **कफज्वरको** नष्ट करता है ।

(३८२४) पिप्पलीकल्कः

(वं. से.; यो. र.; ग. नि.; वृं. मा. । अतिसा.)

पयसा पिप्पलीकल्कः पीतो वा मरिचोद्भवः ।
त्र्यहाभिर्वाहिकां हन्याच्चिरकालसमुत्थिताम् ॥

पीपल या कालीमिर्चको पीसकर दूधके साथ पीनेसे **पुरानी प्रवाहिका** (पेचिश) भी ३ दिन में ही नष्ट हो जाती है ।

(मात्रा—२–३ माशे ।)

(३८२५) पिप्पलीकाथः

(भै. र.; वृ. नि. र.; ग. नि.; भा. प्र. । ज्वरा.)

पिप्पलीभिः शृतं तोयमनभिष्यन्दि दीपनम् ।
वातश्लेष्मविकारघ्नं प्लीहघ्नं ज्वरनाशनम् ॥

पीपल डालकर पकाया हुवा पानी अनभिष्यन्दि, दीपन, वात और कफ नाशक, तथा तिल्ली और ज्वरको नष्ट करनेवाला है ।

(३८२६) पिप्पलीमूलादिकाथः (१)

(ग. नि. । शोथा.)

कफजे पिप्पलीमूलदारुचित्रकनागरैः ।
पानाहारविधौ शोथे सिद्धं पानीयमाचरेत् ॥

कफज शोथमें पीपलामूल, देवदारु, चीता और सोंठ से पका हुवा पानी पीना और इसी पानीसे बना हुवा आहारादि करना चाहिये ।

(प्रत्येक ओषधि १। तोला, पानी ८ शेर, शेष ४ सेर)

(३८२७) पिप्पलीमूलादिकाथः (२)

(रा. मा. । ज्वर.)

यः पिप्पलीमूलशिवाम्बुवाह-
व्याधिघ्नशुण्ठीकटुरोहिणीनाम् ।
यः पर्पटोशीरविमिश्रितानां
काथं पिबेत्पित्तसमुद्भवोऽस्य ॥
ज्वरः शमं याति सतृट्सम्मूर्च्छ-
स्तिक्तास्यतादाहयुतः क्षणेन ॥

पीपलामूल, हर्र, नागरमोथा, अमलतास, सोंठ, कुटकी, पित्तपापड़ा और खस । इनका काथ तृषा, मूर्च्छा और दाहयुक्त **पित्तज्वर** तथा **मुंहके कड़वेपनको** दूर करता है ।

(३८२८) **पिप्पलीवर्द्धमानम्**

(वृ. यो. त. । त. ५९)

क्षीरेण पञ्चवृद्धया वा सप्तवृद्धयाऽथ वा कणाः।
पिबेत्पिष्ट्वा दशदिनं तास्तथैवापकर्षयेत् ॥
एवं विंशद्दिनैः सिद्धं पिप्पलीवर्द्धमानकम् ।
अनेन पाण्डुवातास्रकासश्वासारुचिज्वराः ॥
उदरार्शः क्षयश्लेष्मवाता नश्यन्त्युरोग्रहाः ।
त्रिभिरथ परिवृद्धं पञ्चभिः सप्तभिर्वा ॥
दशभिरथ विवृद्धं पिप्पलीवर्द्धमानकम् ।
इति पिबति पयो यस्तस्य न श्वासकास-
ज्वरजठरगुदार्शोवातरक्तक्षयाः स्युः ॥

पहिले दिन ३, ५, ७ या १० पीपल दूधके साथ पीसकर दूधके ही साथ सेवन करें और दूसरे दिन से रोज़ ३, ५, ७ या १० (जितनी पहिले दिन सेवन की हों उतनी ही) पीपल बढ़ाते रहें । १० दिन पश्चात् इसी क्रमसे घटाते हुवे सेवन करें । इस प्रकार २० दिन में यह प्रयोग पूरा होता है । इसका नाम **"पिप्पली वर्द्धमान्"** है ।

इस प्रयोगसे **पाण्डु, वातरक्त, खांसी, श्वास, ज्वर, अरुचि, उदररोग, बवासीर, क्षय, कफज तथा वातज रोग और उरोग्रह** आदि रोग नष्ट होते हैं ।

(३८२९) **पिप्पल्यादिकल्कः**

(ग. नि.; वं. से. । कासा.)

तैलभृष्टश्च पिप्पल्याः कल्कस्याक्षं ससितोपलम्।
पिबेद्वा कफकासघ्नं कुलित्थसलिलप्लुतम् ॥

पीपलको तिलके तेलमें भूनकर पीसकर उसमें समान भाग मिश्री मिला लीजिये ।

इसे कुलथीके काढ़ेमें मिलाकर पीने से **कफज कास** नष्ट होती है ।

(३८३०) **पिप्पल्यादिकवलः (१)**

(वं. से.; वृं. मा. । मुखरो.)

पिप्पल्यः सर्षपाः श्वेता नागरं नैचुलं फलम् ।
सुखोदकेन संसृज्य कवलं तस्य योजयेत् ॥

पीपल, सफेदसरसों, सोंठ और हिज्जलका फल । सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण करके मन्दोष्ण पानीमें मिलाकर उसके कवल धारण करनेसे **मुखरोग** (उपकुशादि) नष्ट होते हैं ।

(३८३१) **पिप्पल्यादिकवलः (२)**

(च. सं. । चि. अ. २६)

पिप्पल्यगुरुदार्वीत्वग्यवक्षारो रसाञ्जनम् ।
पाठां तेजोवतीं पथ्यां समभागं सुचूर्णितम् ॥
मुखरोगेषु सर्वेषु सक्षौद्रं तद्विधारयेत् ।
शीधुमाधवमाध्वीकैः श्रेष्ठोयं कवलग्रहः ॥

पीपल, अगर, दारुहल्दीकी छाल, दारचीनी, जवाखार, रसौत, पाठा, मालकंगनी और हर्र । सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण करके उसे शहदमें मिलाकर कवल धारण करनेसे **समस्त मुखरोग** नष्ट होते हैं ।

इस चूर्णको सीधु या माधवी सुरा में मिला-कर कवल धारण करना भी उत्तम है ।

(३८३२) **पिप्पल्यादिकषायः** (१)

(ग. नि. । ज्वर.)

कृष्णाऽग्निपथ्यामलकैः कषायः
कृतः समस्तज्वरहाग्निहेतुः ।
व्याघ्रीगुडूचीवृषजोऽथ कास-
श्वासज्वरघ्नश्च सपिप्पलीकः ॥

पीपल, चीता, हर्र और आमले का काथ सब प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता और अग्नि दीप्त करता है ।

कटेली, गिलोय और बासेके काथमें पीपल मिलाकर पीनेसे खांसी, श्वास, और ज्वर नष्ट होता है ।

(३८३३) **पिप्पल्यादिकषायः** (२)

(ग. नि. । राजयक्ष्मा.)

पिप्पलीविश्वधान्याकदशमूलीजलं पिबेत् ।
पार्श्वशूलज्वरश्वासपीनसादिनिवृत्तये ॥

पीपल, सोंठ, धनिया और दशमूलका काथ पीनेसे पसलीका दर्द, शूल, ज्वर, श्वास और पीनसादि रोग नष्ट होते हैं ।

(३८३४) **पिप्पल्यादिकाथः** (१)

(भा. प्र.; वृ. नि. र. । कासा.)

पिप्पली कट्फलं शुण्ठी भृङ्गी भार्ङ्गी तथोषणम् ।
कारवी कण्टकारी च सिन्दुवारो यवानिका ॥
चित्रको वासकश्चैषां कषायं विधिवत्कृतम् ।
कफकासविनाशाय पिबेत्कृष्णारजोयुतम् ॥

पीपल, कायफल, सोंठ, काकड़ासिंगी, भरंगी, कालीमिर्च, कालाजीरा, कटेली, संभालु, अजवायन, चीता और बासा । इनके काथ में पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे **कफज खांसी** नष्ट होती है ।

(३८३५) **पिप्पल्यादिकाथः** (२)

(वृ. नि. र. । बालरो.)

पिप्पलीरेणुकाकाथः सहिङ्गुः समधुः कृतः ।
हिक्कां बहुविधां हन्यादिदं धन्वन्तरेर्वचः ॥

पीपल और रेणुकाके काथमें जरासा हींग मिलाकर उसमें शहद डालकर पीनेसे अनेक प्रकारका **हिचकी रोग** नष्ट होता है ।

(३८३६) **पिप्पल्यादिकाथः** (३)

(वं. से. । स्त्री.)

पिप्पली देवकाष्ठश्च आर्द्रकं गजपिप्पली ।
चित्रकं सैन्धवश्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥
सुखोष्णं योजयेदेतत्सूतिकारोगशान्तये ।
वातिकं पैत्तिकांश्चैव श्लैष्मिकान्सान्निपाति-
कान् ॥
सूतिकोपद्रवान्हन्ति पीतं ह्येतन्न संशयः ॥

पीपल, देवदारु, अदरक (अभावमें सोंठ), गजपीपल, चीता, सेंधानमक और पीपलामूल का मन्दोष्ण काथ पीनेसे वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज **सूतिकारोग** अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(३८३७) **पिप्पल्यादिकाथः** (४)

(ग. नि.; वृं. मा.; वृ. नि. र.; भै. र. । ज्वर.)

पिप्पलीसारिवाद्राक्षाशतपुष्पाहरेणुभिः ।
कृतः कषायः सगुडो हन्याच्छ्वसनजं ज्वरम् ॥

पीपल, सारिवा, मुनक्का, सौंफ और रेणुकाके काथमें गुड़ मिलाकर पीनेसे **वातज्वर** नष्ट होता है ।

(३८३८) **पिप्पल्यादिक्वाथः** (५)

(यो. र.; वृ. मा; भा. प्र.; वृ. नि. र.; ग. नि । ऊरुस्त.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं भल्लातकफलानि च ।
क्वाथं मधुयुतं पीत्वा ऊरुस्तम्भाद्विमुच्यते ॥

पीपल, पीपलामूल और शुद्ध भिलावा । इनके क्वाथमें शहद मिलाकर पीनेसे ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट होता है ।

(३८३९) **पिप्पल्यादिगणः**

(र. र.; वृ. नि. र.; भा. प्र. । ज्वर.; वृ. नि. र. । स्त्री.; यो. र. । प्रसूत.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम् ।
मरिचैलाजमोदेन्द्रपाठारेणुकजीरकम् ॥
भार्ङ्गीमहानिम्बफलं हिङ्गु रोहिणी सर्षपम् ।
विडङ्गातिविषामूर्वा चेत्ययं कीर्तितो गणः ॥
पिप्पल्यादिः कफहरः प्रतिश्यायानिलापहः ।
निहन्याद्दीपनो गुल्मशूलघ्नस्त्वामपाचनः ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, काली मिरच, इलायची, अजमोद, इन्द्रजौ, पाठा, रेणुका, जीरा, भारंगी, बकायनके फल, हींग, कुटकी, सरसों, बायबिडंग, अतीस और मूर्वा ।

इन ओषधियोंके समूहको **'पिप्पल्यादिगण'** कहते हैं । यह गण कफ, वात, प्रतिश्याय, गुल्म और शूल नाशक, दीपन तथा आमपाचक है ।

(३८४०) **पिप्पल्यादियूषः**

(वं. से.; र. र. । स्त्री.)

पिप्पलीदेवकाष्ठञ्च भद्रमुस्तकमेव च ।
अगुरु पिप्लीमूलं श्लक्ष्णपिष्टञ्च कारयेत् ॥
तक्रेण सह संयुक्तं पचेद्यूषं विचक्षणः ।
अयन्तु घृतसंयुक्तो पीतमात्रो न संशयः ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
सूतिकोपद्रवं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

पीपल, देवदारु, नागरमोथा, अगर और पीपलामूल । इनका महीन चूर्ण करके तक्रमें मिलाकर उसके साथ दालका यूष बनाकर उसमें घी मिलाकर पिलानेसे वातज, पित्तज, कफज तथा सन्निपातज सूतिकारोग अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(३८४१) **पिप्पल्यादियोगः**

(वं. से. । ज्वर.)

पिप्पलीशर्कराक्षौद्रं शृतं क्षीरं घृतं नवम् ।
खजेन मथितं पेयं विषमज्वरनाशनम् ॥

पीपलका चूर्ण, खांड, शहद, पकाहुवा दूध और नवीन घृत । सबको एकत्र मिलाकर मथनी से मथकर पीनेसे विषमज्वर नष्ट होता है ।

(३८४२) **पुत्रकमञ्जरीयोगः**

(भा. प्र. । बन्ध्याचि.)

पुत्रकमञ्जरिमूलं विष्णुक्रान्तेशलिङ्गिनीसहितम् ।
एतद्गर्भेऽष्टदिनं पीत्वा कन्यां न सर्वथा सूते॥

पुत्रकमञ्जरीकी जड़, विष्णुक्रान्ता और शिवलिङ्गीका क्वाथ गर्भवती को ८ दिन तक पिलानेसे पुत्र ही उत्पन्न होता है ।

(३८४३) **पुनर्नवादिकल्कः**

(ग. नि.; वृ. मा.; वं. से.; भै. र. । शोथा.)

पुनर्नवाविश्वत्रिवृद्गुडूची–
शम्पाकपथ्यासुरदारुकल्कम् ।

शोथे कफोत्थेऽक्षसमं[1] समूत्रं
क्वाथं पिबेद्वाप्यथ चैव तेषाम् ॥

पुनर्नवा (साठी)की जड़, सोंठ, निसोथ, गिलोय, अमलतासका गूदा, हर्र और देवदारु। सब चीजें समान भाग लेकर सबको गोमूत्रके साथ पीसकर उसीके साथ १। तोलेकी मात्रानुसार पीनेसे अथवा इन चीजोंका क्वाथ पीनेसे **कफज शोथ** नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा—६ माशे)

(३८४४) पुनर्नवादिकषायः

(ग. नि. । ज्वरा.)

पुनर्नवा गुडूची च त्रायन्त्येरण्डवासकम्।
पञ्चमूल्येकतश्चात्र गोमूत्रेण शृतं शुभम् ॥
नश्यत्यनेनाभिन्यासः संज्ञा चास्योपजायते ॥

पुनर्नवा (साठी) गिलोय, त्रायमाना, अरण्डकी जड़, बासा और पञ्चमूल (बेल, खम्भारी, अरलु, पाठा, अरणी); इनको गोमूत्रमें पकाकर पीनेसे **अभिन्यास सन्निपात** नष्ट होता और रोगी होशमें आ जाता है।

(३८४५) पुनर्नवादिक्काथः (१)

(वृं. मा.; वं. से. । विद्र.)

पुनर्नवादारुविश्वदशमूलाभयाम्भसा।
गुग्गुल्वेरण्डतैलं वा पिबेन्मारुतविद्रधौ ॥

पुनर्नवा (साठी), देवदारु, सोंठ, दशमूल, और हर्र के क्वाथमें गूगल या अरण्डीका तेल मिलाकर पीनेसे **वातज विद्रधि** नष्ट होती है।

[1] शोथे कफोत्थे महिषाक्षयुक्तमिति पाठान्तरम्।

(३८४६) पुनर्नवादिक्काथः (२)

(वृ. नि. र. । उदर.)

पुनर्नवादारुमहौषधाम्बु
गोमूत्रसिद्धः श्वयथुं निहन्ति।
तथा कणाशुण्ठिगुडोत्थचूर्णं
शोफामशूलघ्नमजीर्णहारि ॥

पुनर्नवा (साठी), देवदारु, सोंठ और सुगन्धबाला। इनको गोमूत्रमें पकाकर सेवन करनेसे **शोथ** नष्ट होता है।

पीपल, सोंठ और गुड़। इनका चूर्ण सेवन करनेसे सूजन, आम, शूल और अजीर्णका नाश होता है।

(३८४७) पुनर्नवादिक्काथः (३)

(वृ. नि. र. । उदर.)

पुनर्नवामृतादारुपथ्यानागरसाधितः।
गोमूत्रगुग्गुलुयुतः क्वाथः शोथोदरापहः ॥

साठी, गिलोय, देवदारु, हर्र और सोंठके क्वाथमें गोमूत्र और गूगल मिलाकर सेवन करनेसे **शोथोदर** नष्ट होता है।

(३८४८) पुनर्नवादिक्काथः (४)

(वै. जी. । विला. १; वृ. नि. र. । ग्रहणी.)

पुनर्नवावह्निजवाणपुङ्खा
विश्वाग्निपथ्याचिरबिल्वबिल्वैः।
कृतः कषायः शमयेदशेषान्
दुर्नामगुल्मग्रहणीविकारान् ॥

पुनर्नवा (साठी), काली मिर्च, शरपोखा, सोंठ, चीता, हर्र, करंजुवा और बेलगिरी। इनका क्वाथ **बवासीर, गुल्म और ग्रहणीको** नष्ट करता है।

(३८४९) **पुनर्नवादिक्वाथः** (५)

(वै. म. र. । पटल ११)

पुनर्नवाभयाशुण्ठीकालशाकैः समैः शृतम् ।
जलं शोफं जयेत्पीतं प्रातः सायं च मात्रया ॥

पुनर्नवा, हर्र, सोंठ और नाड़ीका शाक । इनका क्काथ बनाकर प्रातः सायं पीनेसे **शोथ** नष्ट होता है ।

(३८५०) **पुनर्नवादिक्काथः**[1] (६)

(च. द. । उदरा.; । वं. से. । शोथा.; यो. र. । उदर.; वृं. मा. । शोथोदर.; वृ. यो. त. । त. १५०)

पुनर्नवां दार्व्यभयां गुडूचीं
पिबेत्समूत्रां महिषाख्ययुक्ताम् ।
त्वग्दोषशोफोदरपाण्डुरोग–
स्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु ॥

पुनर्नवा (साठी), दारुहल्दी, हर्र और गिलोयके क्काथमें गोमूत्र और गूगल मिलाकर पीनेसे त्वग्दोष, सूजन, उदर, पाण्डु, स्थौल्य, प्रसेक और ऊर्ध्वजत्रुगत कफज रोग नष्ट होते हैं ।

(३८५१) **पुनर्नवादिक्काथः** (७)

(वै. जी. । विला. ४)

पुनर्नवानागरदारुपथ्या
भल्लातकच्छिन्नरुहाकषायः ।
दशाङ्घ्रिमिश्रः परिपेय ऊरु–
स्तम्भेऽथवा मूत्रपुरप्रयोगः ॥

[1]—वृहद्योगतरङ्गिणीमें इसका नाम " लघुपुनर्नवादि " लिखा है ।

पुनर्नवा, सोंठ, देवदारु, हर्र, शुद्ध भिलावा गिलोय और दशमूल का क्काथ अथवा गोमूत्रके साथ गूगल सेवन करनेसे **ऊरुस्तम्भ** नष्ट होता है ।

(३८५२) **पुनर्नवादिक्काथः** (८)

(भा. प्र.; वै. र.; भै. र. । उदर.)

पुनर्नवादारुनिशासतिक्ता
पटोलपथ्यापिचुमर्दमुस्ता ।
सनागरच्छिन्नरुहेति सर्वैः
कृतः कषायो विधिना विधिज्ञैः ॥
गोमूत्रयुग्गुग्गुलुना च युक्तः
पीतः प्रभाते नियतं नराणाम् ।
सर्वाङ्गशोथोदरकासशूल–
श्वासान्वितं पाण्डुगदं निहन्ति ॥

पुनर्नवा (साठी), देवदारु, हल्दी, कुटकी, पटोलपत्र, हर्र, नीमकी छाल, नागरमोथा, सोंठ, और गिलोय । इनके क्काथमें गोमूत्र और गूगल मिलाकर प्रातःकाल पीनेसे सर्वाङ्गशोथ, उदररोग, खांसी, शूल, श्वास, और पाण्डुका नाश होता है ।

(३८५३) **पुनर्नवादिस्वेदः** (१)

(ग. नि.; वृ. नि. र. । शोथा.)

पुनर्नवाग्निनिर्गुण्डीपलितैरण्डजैर्दलैः ।
सहाचरैर्जलं तप्तं तत्स्वेदः शोफहा मतः ॥

पुनर्नवा (साठी), चीता, संभालु, कालीमिर्च, अरण्डके पत्ते और पियाबांसा । इनका पानी पकाकर उसकी भाफ देनेसे **शोथ** नष्ट होता है ।

(३८५४) **पुनर्नवादिस्वेदः** (२)

(वं. से. । शूला.)

पुनर्नवैरण्डयवातसीभिः
कार्पासजैरस्थिभिरारनालैः ।
स्विन्नैरमीभिर्भिषजा च कार्यः
स्वेदः समीरार्तिहरो नराणाम् ॥

पुनर्नवा (साठी), अरण्डकी जड़, जौ, अलसी और कपासके बीजों (बिनौले) की गिरी को कांजीमें पकाकर उसकी भाफ देनेसे **वातज शूल** नष्ट होता है ।

(३८५५) **पुनर्नवायोगः**

(रा. मा. । विषरो.)

यः पिबति पुष्यदिवसे जलपिष्टं सितपुनर्नवा-
मूलम् ।
तत्सन्निधौ न वर्षं वृश्चिकभुजगाः प्रसर्पन्ति ॥

पुष्य नक्षत्रमें सफेद पुनर्नवा (साठी-बिस खपरा) की जड़को उखाड़कर पानीमें पीसकर पीनेसे एक वर्ष तक सांप और बिच्छू पास तक नहीं फटकते ।

(३८५६) **पुनर्नवाष्टकम्**[१]

(वं. से.; भै. र. । शोथ.; ग. नि.; वृ. नि. र.; वं. से. । पाण्डु.; यो. र.; च. द. । उदरा.; र. र. । शोथ.; वृं. मा. । शोथोदर.; वृ. यो. त. । त. १५०; यो. र. पाण्डु.; यो. र. । उदरा.)

पुनर्नवानिम्बपटोलशुण्ठी-
तिक्तामृतादार्व्यभयाकषायः ।
सर्वाङ्गशोथोदरकासशूल-
श्वासान्वितं पाण्डुगदं निहन्ति ॥

पुनर्नवा (साठी), नीमकी छाल, पटोलपत्र, सोंठ, कुटकी, गिलोय, दारुहल्दी और हर्रका काथ सर्वांगशोथ, उदररोग, खांसी, शूल, श्वास और पाण्डुको नष्ट करता है ।

(३८५७) **पुरीषविरजनीयकषायदशकः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

जम्बुशल्लकीत्वकच्छुरामधुकशाल्मलीश्रीवेष्टक-भृष्टमृत्पयस्योत्पलतिलकणा इति दशेमानि पुरीषविरजनीयानि भवन्ति ।

जामनकी छाल, शल्लकीकी छाल, कौंच के बीज, मुलैठी, सेंभलकी छाल, श्रीवेष्ट, दग्ध मृत्तिका, बिदारीकन्द, नीलोत्पल और तुषरहित तिल । इन दश चीजोंके समूहको 'पुरीषविरजनीय कषायदशक' कहते हैं । (इनके सेवन से मल दोष रहित हो जाता है ।)

(३८५८) **पुरीषसंग्रहणीयकषायदशकः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

प्रियङ्ग्वनन्ताम्रास्थिकट्वङ्गलोध्रमोचरस-समङ्गाधातकीपुष्पपद्मापद्मकेशराणीति दशेमानी पुरीषसंग्रहणीयानि भवन्ति ।

फूलप्रियङ्गु, अनन्तमूल, आमकी गुठली, अरलुकी छाल, लोध, मोचरस, मजीठ, धायकेफूल, पद्मा और कमलकेसर । यह दश ओषधियां पुरीष संग्रहणीय अर्थात् **मलको बांधनेवाली हैं** ।

---

१ वृहद्योगतरङ्गिणीमें इसका नाम "वृहत्पुनर्नवादि" लिखा है ।

(३८५९) **पुष्करमूलादिक्काथः**

(ग. नि.; रा. मा. । ज्वर.)

पुष्करमूलगुडूचीनिदिग्धिकानागरैः कृतः क्काथः कासश्वासबलासाश्ज्वरं च हन्ति त्रिदोषसम्भूतम् ॥

पोखरमूल, गिलोय, कटैली और सोंठका क्काथ, खांसी श्वास, कफ और सन्निपातज ज्वरको नष्ट करता है।

(३८६०) **पुष्करादिकल्कः**

(च. सं. । चि. अ. २६; यो. र.; वृ. नि. र.; वं. से. । हृद्रो.; वृ. यो. त. । त. ९९)

सपुष्कराह्वं फलपूरमूलं
महौषधं शठ्यभया च कल्काः ।
क्षाराम्लसर्पिर्लवणैर्विमिश्राः
स्युर्वातहृद्रोगविकर्तिकाघ्नः ॥

पोखरमूल, बिजौरेकी जड़, सोंठ, कचूर और हर्र । सब चीजें समान भाग लेकर पीसकर उसमें यवक्षार, अनारका रस, घी और सेंधानमक मिलाकर सेवन करनेसे **वातज हृद्रोग** दूर होता है।

(३८६१) **पुष्करादिक्काथः** (१)

(च. सं. । चि. अ. २६.; यो. र.; वृ. नि. र.; वं. से. । हृद्रो.)

क्काथः कृतः पौष्करमातुलुङ्ग-
पलाशपूतीक[1]शठीसुराह्वैः ।
सनागराजाजिवचायवानी-
सक्षार उष्णो लवणेन पेयः ॥

पोखरमूल, बिजौरेकी जड़, पलाश (केसू), करंजुवा, कचूर, देवदारु, सोंठ, जीरा, बच और अजवायन । इनके क्काथमें यवक्षार और सेंधानमक मिलाकर गरम गरम पीनेसे **हृद्रोग** नष्ट होता है।

१ भतीकेति पाठान्तरम् ।

(३८६२) **पुष्करादिक्काथः** (२)

(यो. र.; वं. से.; वृं. मा.; च. द.; वृ. नि. र. । कास.; यो. चि. म. । अ. ४)

पौष्करं कट्फलं भार्गीविश्वपिप्पलिसाधितम् ।
पिबेत्क्काथं कफोद्रेके कासे श्वासे च हृद्गदे ॥

कफप्रधान खांसी, श्वास और हृद्रोगमें पोखरमूल, कायफल, भारंगी, सोंठ और पीपलका क्काथ पीना चाहिये ।

(३८६३) **पुष्करादिक्काथः** (३)

(वा. भ. । चि. अ. १४ गुल्मा.)

पुष्करैरण्डयोर्मूलं यवधन्वयवासकम् ।
जलेन क्वथितं पीतं कोष्ठदाहरुजापहम् ॥

पोखरमूल, अरण्डकी जड़, इन्द्रजौ और धमासा । इनका क्काथ **कोष्ठकी दाह और पीड़ाको** नष्ट करता है।

(३८६४) **पूतिकरञ्जरसयोगः** (१)

(वं. से. । मसूरि.)

रसं पूतिकरञ्जस्य चामलक्या रसन्तथा ।
पिबेत्सशर्कराक्षौद्रं शोफनुत्कफपैत्तिके ॥

करञ्जके पत्ते और आमलेका रस बराबर बराबर मिलाकर उसमें मिश्री और शहद मिलाकर पीनेसे **कफपित्तज शोथ** नष्ट होता है।

(३८६५) **पूतिकरञ्जरसयोगः** (२)

(वं. से. । श्लीपद.)

पिबेत्सर्षपतैलेन श्लीपदानां निवृत्तये ।
पूतीकरञ्जछदजं रसं वापि यथाबलम् ॥

पूतीकरञ्ज के पत्तोंके रसमें सरसोंका तैल मिलाकर पीनेसे **श्लीपद रोग** नष्ट होता है।

(३८६६) **पूतिकादिकल्कः**

(वृ. नि. र. । अतिसा.)

पूतिकव्योषबिल्वाग्निपाठादाडिमहिङ्गुभिः।
योजयेत्सत्कृतैः पेष्यैः श्लेष्मातीसारपीडितम् ॥

करञ्ज, सोंठ, मिर्च, पीपल, बेलगिरी, चीता, पाठा, अनारदाना और हींग। इन्हें पानीके साथ पीसकर खिलानेसे **कफातिसार** नष्ट होता है।

(३८६७) **पूतिकादिक्काथः**

(वृ. नि. । अतिसा.)

पूतिकं मागधी शुण्ठी बला धान्यं हरीतकी।
पक्त्वाम्बुना पिबेत्सायं वातातीसारशान्तये ॥

करञ्जुवा, पीपल, सोंठ, खरैंटी, धनिया और हर्र। इनका क्वाथ सायंकालके समय पीनेसे **वातातिसार** नष्ट होता है।

(३८६८) **पूतिदार्वादिकषायः**

(वं. से. । अति.)

पूतिदारुत्वचं रोध्रं कट्वङ्गमथ नागरम्।
दाडिमाम्लयुतं दद्याद्वातश्लेष्मातिसारिणाम् ॥

करञ्जुवा, देवदारुकी छाल, लोध, अरलु और सोंठके क्वाथमें खट्टे अनारका रस मिलाकर पीनेसे **वातकफज अतिसार** नष्ट होता है।

(३८६९) **पृश्निपर्ण्यादिक्काथः**

(वृं. मा.; यो. र.; वृ. नि. र. । अतिसा.)

पृश्निपर्णीबलाबिल्वनागरोत्पलधान्यकैः।
विडङ्गातिविषामुस्तदारुपाठाकलिङ्गकैः ॥
मरिचेन समायुक्तं शोकातिसारनाशनम् ॥

पृश्निपर्णी, खरैंटी, बेलगिरी, सोंठ, नीलोत्पल, धनिया, बायबिडंग, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पाठा और इन्द्रजौके क्वाथमें कालीमिर्चका चूर्ण मिलाकर पिलानेसे **शोकातिसार** नष्ट होता है।

(३८७०) **पृश्निपर्ण्यादिक्षीरम्**

(यो. र. । उदर.)

पृश्निपर्णीबलाव्याघ्रीलाक्षानागरसाधितम्।
क्षीरं पित्तोदरं हन्ति जठरं कतिभिर्दिनैः ॥

पृश्निपर्णी, खरैंटी, कटेली, लाख और सोंठ। सब चीजें समान भाग मिलाकर २॥ तोले लें और उन्हें २० तोले दूधमें डालकर उसमें ८० तोले पानी मिलाकर पानी जलने तक पकाकर छानकर पिलावें। इससे **पित्तोदर रोग** कुछ दिनोंमें ही नष्ट हो जाता है।

(३८७१) **पृश्निपर्ण्यादिनिर्यूहः**

(यो. र. । गर्भिणीरो.)

पृश्निपर्णीबलावासानिर्यूहो रक्तपित्तजित्।
गर्भिण्याः कामलाशोफश्वासकासज्वरापहः ॥

पृश्निपर्णी, खरैंटी और बासाका स्वरस (या क्वाथ) गर्भिणीके रक्तपित्त, कामला, शोफ, श्वास, खांसी और ज्वरको नष्ट करता है।

(३८७२) **पृश्निपर्ण्यादिशृतम्**

(ग. नि.)

पृश्निपर्णीघनोदीच्यशुण्ठिसिद्धं जलं हितम्।
पानाहारविधौ पैत्ते शोथे क्षीराशनं तथा ॥

पित्तज शोथमें पृष्टपर्णी, नागरमोथा, सुगन्धबाला और सोंठ से पकाया हुवा पानी पिलाना और दूधका आहार देना चाहिये।

(३८७३) **प्रजास्थापनकषायदशकः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

ऐन्द्रीब्राह्मीशतवीर्यासहस्रवीर्यामोघाव्यथा-शिवारिष्टावाट्यपुष्पीविष्वक्सेनकान्ता इति दशेमानि प्रजास्थापनानि भवन्ति ।

इन्द्रायन, ब्राह्मी, दूर्वा, सहस्रवीर्या (दूर्वाभेद), पाढल, आमला, हर्र, कुटकी, खरैटी और बाराही-कन्द ।

यह ओषधियां प्रजास्थापक हैं ।

(इनके सेवनसे स्त्री गर्भ धारण करती है ।)

(३८७४) **प्रपौण्डरीकाद्याश्च्योतनम्**

(ग. नि. । नेत्ररो. ३)

प्रपौण्डरीकं मधुकं हरिद्रा
छागं पयो वाऽप्यथवापि नार्याः ।
आश्च्योतनं शर्करया विमिश्रं
पित्तानिलार्तेर्विनिवृत्तये तु ॥

पुण्डरिया, मुलैठी और हल्दी में से किसीका रस अथवा बकरी या स्त्रीका दूध खांड मिलाकर आंखमें डालनेसे पित्तज और वातज नेत्र पीड़ा शान्त होती है ।

(३८७५) **प्रियङ्गुकादिकषायः**

(ग. नि. । रक्तपि.; च. स. । चि. अ. ४ रक्तपि.)

प्रियङ्गुकाचन्दनलोध्रसारिवा-
मधूकमुस्ताभयधातकीजलम् ।
समृत्प्रसादं सह षष्टिकाम्बुना
सशर्करं रक्तनिबर्हणं परम् ॥

फूलप्रियङ्गु, लालचन्दन, लोध, सारिवा, मुलैठी, नागरमोथा, खस और धायके फूल । इनका शीतकषाय, काली मिट्टीका निथरा हुवा पानी और साठी चावलोंका पानी खांड मिलाकर पीनेसे **रक्तपित्त** नष्ट होता है ।

(३८७६) **प्रियङ्ग्वादिकल्कः**

(वृ. मा.; वं. से. । बालरो.; यो. त. । त. ७७)

कल्कः प्रियङ्गुकोलास्थिमध्यमुस्तरसाञ्जनैः ।
क्षौद्रलीढः कुमारस्य छर्दिस्तृष्णातिसारनुत् ॥

फूलप्रियङ्गु, बेरकी गुठलीकी गिरी, नागरमोथा और रसौत । समान भाग लेकर पीसकर शहदमें मिलाकर चटानेसे **बालककी तृषा, छर्दि और अतिसार** नष्ट होते हैं ।

(३८७७) **प्रियङ्ग्वादिगणः**

(वा. भ. । सू. अ. १५)

प्रियङ्गुपुष्पाञ्जनयुग्मपद्मापद्माद्रजोयोजनवल्ल्यनन्ता ।
मानद्रुमो मोचरसः समङ्गा पुन्नागशीतं मदनीयहेतुः ॥
गणौ प्रियङ्ग्वम्बष्ठादी पक्वातिसारनाशनौ ।
सन्धानीयौ हितौ पित्ते व्रणानामपि रोपणौ ॥

फूलप्रियङ्गु, पुष्पाञ्जन, रसाञ्जन, कमलिनी, कमलिनीकी केसर, मजीठ, धमासा, सेंभलकी छाल, मोचरस, लज्जालु, नागकेसर, चन्दन और धाय के फूल । इन ओषधियोंके समूहको प्रियङ्ग्वादि गण कहते हैं ।

प्रियङ्ग्वादि तथा अम्बष्ठादि गण **पक्वातिसार नाशक**, सन्धान कारक, पित्तनाशक और घावोंको भरने वाले हैं ।

इति पकारादिकषायप्रकरणम् ।

अथ पकारादिचूर्णप्रकरणम्

(३८७८) **पञ्चकषायचूर्णयोगः**

(वृं. मा.; वं. से. । कर्णरोगा.)

चूर्णं पञ्चकषायाणां कपित्थरससंयुतम् ।
कर्णस्रावे प्रशंसन्ति पूरणं मधुना सह ॥
तिन्दुकान्यभयालोध्रं समङ्गा चामलक्यपि ।
पञ्चकषायशब्देन ग्राह्यमेतद्भवेदिह ॥

तेन्दु, हर्र, लोध्र, मजीठ और आमलेके चूर्णमें कैथका रस और शहद मिलाकर कानमें डालनेसे कर्णस्राव बन्द हो जाता है ।

(३८७९) **पञ्चकोलचूर्णम्**

(शा. ध. । खं. २ अ. ६; भै. र. । ज्वर.; यो. त. । त. १८)

पिप्पलीचव्यविश्वाहपिप्पलीमूलचित्रकैः ।
पञ्चकोलमिति ख्यातं रुच्यं पाचनदीपनम् ॥
आनाहप्लीहगुल्मघ्नं शूलश्लेष्मोदरापहम् ॥

पीपल, चव, सोंठ, पीपलामूल और चीता । इन पांच ओषधियोंके समूहको ' पञ्चकोल ' कहते हैं । यह योग रोचक, पाचक, दीपक और अफारा, प्लीह, गुल्म, शूल, कफ तथा उदर विकार नाशक है ।

(३८८०) **पञ्चकोलचूर्णयोगः**

(वृ. नि. र.; भा. प्र.; यो. र.; वृं. मा. । आमवात.)

पञ्चकोलकचूर्णन्तु पिबेदुष्णेन वारिणा ।
मन्दाग्निशूलगुल्मामकफारोचकनाशनम् ॥

पञ्चकोलके चूर्णको गर्म पानीके साथ सेवन करनेसे मन्दाग्नि, शूल, गुल्म, आम, कफ और अरुचि नष्ट होती है ।

(३८८१) **पञ्चनिम्बकं चूर्णम्**

(ग. नि. । कुष्ठ.)

खदिरोदकसम्मिश्रं पञ्चाङ्गं निम्बचूर्णकम् ।
सेवेत कुष्ठविनाशाय ब्रह्मचर्येण संयुतः ॥

ब्रह्मचर्य पालन पूर्वक नीमके पञ्चाङ्गका चूर्ण खैरके काथके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

(३८८२) **पञ्चनिम्बचूर्णम्**

(ग. नि.; भै. र.; वृं. मा.; च. द. । अम्लपित्त.)

एकोंशः पञ्चनिम्बानां द्विगुणो वृद्धदारुकः ।
सक्तुर्दशगुणो देयः शर्करामधुरीकृतः ॥
शीतेन वारिणा पीतं शूलं पित्तकफोत्थितम् ।
निहन्ति चूर्णं सक्षौद्रमम्लपित्तं सुदुस्तरम् ॥
सवाते सविबन्धेऽस्मिन् हिता कंसहरीतकी ॥

नीमका पञ्चाङ्ग १ भाग, बिधारा २ भाग, और सत्तू १० भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर ठण्डे पानीमें घोलकर उसे खांडसे मीठा करके पीनेसे पित्तकफज शूल नष्ट होता है तथा इस चूर्णको शहदके साथ चाटनेसे भयंकर अम्लपित्त नष्ट हो जाता है ।

यदि अम्लपित्तमें वायु प्रबल हो और मलावरोध हो तो कंसहरीतकी सेवन करनी चाहिये।

पञ्चनिम्बचूर्णम्

(रसप्रकरणमें देखिये ।)

(३८८३) **पञ्चमूलचूर्णम्**

(वं. से. । आमवात.)

पञ्चमूलकचूर्णन्तु पिबेदुष्णेन वारिणा
मन्दाग्निशूलगुल्मश्च कफारोचकनाशनम् ॥

पञ्चमूलके चूर्णको उष्ण पानीके साथ सेवन करनेसे मन्दाग्नि, शूल, गुल्म और कफज अरुचि नष्ट होती है ।

(३८८४) **पञ्चलवणम्**

(वं. से. । ग्रहण्य.)

सौवर्चलं सैन्धवञ्च विडमौद्भिदमेव च ।
सामुद्रेण समं पञ्च लवणान्यत्र योजयेत् ॥

सञ्चल (काला नमक), सेंधा नमक, विड-नमक, उद्‌भिद नमक और सामुद्र लवण ; इन पांचोंको **पञ्चलवण** कहते हैं ।

(३८८५) **पञ्चवल्कलचूर्णम्**

(भा. प्र. । मसूरि.)

पञ्चवल्कलचूर्णेन क्लेदिनीमवधूलयेत् ।
भस्मना केचिदिच्छन्ति केचिद्गोमयरेणुना ॥

क्लेद (पीप) युक्त मसूरिकाकी फुंसियों पर पञ्चवल्कल (वट, पीपल वृक्ष, गूलर, पिलखन और वेत) की छालका चूर्ण या अरने उपलोंकी राख अथवा सूखे गोबरका चूर्ण लगाना चाहिये ।

(३८८६) **पञ्चवल्कलादिचूर्णम्**

(वृं. मा. । व्रणशोथ.; यो. र. । व्रण.)

पञ्चवल्कलचूर्णैर्वा शुक्तिचूर्णसमायुतैः ।
धातकीलोध्रचूर्णैर्वा तथा रोहन्ति ते व्रणाः ॥

पञ्चवल्कल (वट, पीपल, पिलखन, गूलर और बेत) की छालका चूर्ण और सीपका चूर्ण समान भाग मिलाकर (घीमें घोटकर) लगाने से अथवा धायके फूल और लोधके चूर्णको इसी प्रकार लगाने से **घाव** भर जाता है ।

(३८८७) **पञ्चसमं चूर्णम्**

(ग. नि. । परिशिष्ट चूर्णा.; वै. र. । शूला.; यो. र. । आमवा.; शा. ध. । चूर्णा.)

पथ्यानागरजीरकाख्यरुचकैः श्यामान्वितैः पञ्चभि-
श्चूर्णं पञ्चसमं समस्तरुजहृत्कायाग्निसन्दीपनम् ।
प्राणोत्साहविवर्द्धनं रुचिकरं गुल्मघ्नप्लीहापहम्
मत्याध्मानगरादिशमनं सामानिले पूजितम् ॥

हर्र, सोंठ, जीरा,+ सञ्चल (काला नमक) और निसोत; समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त और उत्साहकी वृद्धि होती है । तथा गुल्म, तिल्ली, आध्मान (अफारा) और गरविषादि नष्ट होते और रुचि उत्पन्न होती है । यह चूर्ण **सामवायुमें** विशेष उपयोगी है ।

(३८८८) **पञ्चाग्निचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । अजी.)

अम्लवेतसधनञ्जयवज्री
मोरटा तदनु सूरण एषः ।
पञ्चवह्निजठरानलवृद्ध्यै
तक्रसाकमिदमाशु हि पेयम् ॥

+ गदनिग्रहके अतिरिक्त अन्य समस्त ग्रन्थोंमें जीरेकी जगह पीपल लिखी है ।

अमलबेत, अर्जुनकी छाल, थोहर, मूर्वा और जिमीकन्द । इनके चूर्णको तक्रके साथ पीनेसे अग्नि दीप्त होती है।

पश्चामृतचूर्णम्

(र. र. । अजी.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(३८८९) पटोलाद्यं चूर्णम्

(वृ. यो. त. । त. १५०; यो. र. । उदर.; च. सं । चि. अ. १८; वं. से.; ग. नि.; वृं. मा; च. द. । उदर.; यो. त. । त. ५३)

पटोलमूलं[1] रजनीं विडङ्गं त्रिफलात्वचः ।
कम्पिल्लकं नीलिनीश्च त्रिवृतां चेति चूर्णयेत् ॥
षडाद्यान्कार्षिकानन्त्यांस्त्रींश्च द्वित्रिचतुर्गुणान् ।
कृत्वा चूर्णं ततो मुष्टिं गवांमूत्रेण ना पिबेत् ॥
हन्ति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जातोदकान्यपि ।
कामलां पाण्डुरोगं च श्वयथुं चापकर्षति ॥

पटोलमूल, हल्दी, बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा और आमला १।-१। तोला, कमीला २॥ तोले, नीलका पञ्चाङ्ग ३॥। तोले और निसोत ५ तोले लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे ५ तोलेकी मात्रानुसार गोमूत्रके साथ पीनेसे जलोदर तथा अन्य उदररोग, कामला, पाण्डु और शोथ का नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा ३ से ६ माशे तक ।)

(३८९०) पत्रलवणम् (१)

(सु. सं. । चि. अ. ५)

गन्धर्वहस्तकमुष्ककनक्तमालाटरूषकपूतीकारग्वधचित्रकादीनां पत्राण्यार्द्राणि लवणेन सहोदूखलेऽवक्षुद्य स्नेहघटे प्रक्षिप्यावलिप्य गोशकृद्भिर्दाहयेदेतत्पत्रलवणमुपदिशन्ति वातरोगेषु ।

अरण्ड, मोखा (छोकर), करञ्जुवा, बासा, नाटाकरञ्ज, अमलतास और चीता इत्यादि (वात नाशक) वृक्षोंके हरे पत्ते लेकर उन्हें (समान भाग) नमक के साथ ओखलीमें कूट लें और फिर चिकने घड़ेमें भरकर उसका मुंह बन्द करके उस पर कपड़मिट्टी करके उसे उपलों (कण्डों) की आग में फूंकें । जब घड़ा स्वांग शीतल हो जाय तो उसमें से औषधको निकालकर पीस लें। यही **पत्रलवण** है । यह **वातव्याधियोंमें** हितकर है । (मात्रा-१ से ३ माशे तक । उष्ण जलके साथ ।)

(३८९१) पत्रलवणम् (२)

(वृं. मा. । गुल्म.; ग. नि. । चूर्णा.; वृ. नि. र. । गुल्म.; वा. भ. । चि. अ. १४)

पूतीकपत्रगजचिर्भटचव्यवह्नि-
व्योषं च संस्तरचितं लवणोपधानम् ।
दग्ध्वा विचूर्ण्य दधिमस्तुयुतं प्रयोज्यं
गुल्मोदरश्वयथुपाण्डुगुदोद्भवेषु ॥

करञ्जुवेके पत्ते, इन्द्रायणके फल, चव, चीता, सोंठ, मिर्च और पीपल १--१ भाग तथा सेंधा नमक सबके बराबर लेकर पत्तोंके सिवाय अन्य सब चीज़ोंका चूर्ण करलें फिर एक मिट्टीकी हाण्डी में नीचे करञ्जके पत्ते बिछाकर उन पर वह चूर्ण फैलादें और उसके ऊपर फिर पत्ते बिछावें । इसी प्रकार चूर्ण और पत्तोंकी तह जमाकर हाण्डीके मुखको बन्द कर दें और फिर उस पर कपड़मिट्टी

[1] पत्रमिति पाठान्तरम् ।

करके सुखा दें । इसे उपलोंकी आगमें फूंकें । जब हाण्डी स्वांगशीतल हो जाय तो उसमें से औषधको निकालकर पीस लें ।

इसे दही या मस्तुके साथ देनेसे गुल्म, पाण्डु, उदररोग, शोथ और अर्शका नाश होता है ।

(मात्रा—३-४ माशे ।)

(३८९२) पत्रादिचूर्णम्

(वं. से.; वृं. मा. । रक्तपि.)

पत्रं त्वगेलानतचन्दनानां
श्यामासशुण्ठीमधुकोत्पलानाम् ।
स्याद्धात्रिवासा[1]द्विगुणोत्तरानां
चूर्णं सिताक्षौद्रसमन्वितानाम् ॥
दाहे ज्वरे लोहितपित्तयुक्ते
कासे क्षये शोणितमूत्रकृच्छ्रे ।
रक्तेऽतिमात्रं पतिते मुखेन
गुदेऽथ नासाश्रुति मेढ्रयोनौ ॥
प्रोक्तं पुरा रक्तविनिग्रहार्थं
चूर्णं वसिष्ठेन महागदघ्नम् ॥

तेजपात १ भाग, दालचीनी २ भाग, इलायची ४ भाग, तगर ८ भाग, लालचन्दन १६ भाग, निसोत ३२ भाग, सोंठ ६४ भाग, मुलैठी १२८ भाग, निलोत्पल २५६ भाग, आमला ५१२ भाग और बासा १०२४ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे (समान भाग) खांडमें मिलाकर शहदके साथ चाटनेसे दाह, ज्वर, रक्तपित्त, खांसी, क्षय, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रके साथ रक्त आना, मुखसे अत्यधिक रक्त आना या गुदा, नासिका, कान, मूत्रमार्ग और योनिसे रक्तस्राव होना इत्यादि विकार शान्त होते हैं ।

इस चूर्णकी योजना प्राचीन कालमें वसिष्ठ जीने की थी ।

(मात्रा—३-४ माशे ।)

[1] सधात्रि वांशीति पाठान्तरम् ।

(३८९३) पथ्याचूर्णयोगः

(वृ. मा. । रक्तपि.)

वासकस्वरसे पथ्या सप्तधा परिभाविता ।
कृष्णा वा मधुना लीढा रक्तपित्तं द्रुतं जयेत् ॥

हर्र या पीपलको बासेके स्वरसकी सात भावना देकर शहदके साथ सेवन करनेसे **रक्तपित्त** शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(३८९४) पथ्यादिचूर्णम् (१)

(भा. प्र. । छर्दि.)

पथ्यात्रिकटुधान्याकजीरकाणां रजो लिहन् ।
मधुना नाशयेच्छर्दिमरुचिश्च त्रिदोषजाम् ॥

हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया और जीरा । समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे **त्रिदोषज छर्दि** और अरुचि नष्ट होती है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(३८९५) पथ्यादिचूर्णम् (२)

(वृ. नि. र. । शूल.)

चूर्णं पथ्या वचा वह्निं कटुरोहिणी रुक् समम् ।
श्लेष्मशूलं हरत्याशु पीतं गोमूत्रसंयुतम् ॥

हर्र, बच, चीता, कुटकी और कूठ । समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे **कफजशूल** शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। (मात्रा ३-४ माशे)

(३८९६) **पथ्यादिचूर्णम्** (३)

(वृं. मा. । छर्दि.)

पथ्याक्षधात्रीमगधोपणानां
चूर्णं सलाजाञ्जनकोलमध्यम्।
छर्दिं निहन्त्याशु समाक्षिकन्तु
सत्र्यूषणं वापि कपित्थमध्यम् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपल, काली मिर्च, धानकी खील, सुरमा और बेरकी गुटलीकी मज्जा, (गिरी) समानभाग-लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ चाटनेसे वमन शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

कैथका गूदा और सोंठ, मिर्च तथा पीपलके समानभाग-मिश्रित चूर्णको भी शहद के साथ सेवन करनेसे **छर्दि (वमन)** रुक जाती है।

(मात्रा—३-४ माशे। थोड़ी थोड़ी देरमें जरा जरा सी दवा बार बार चटानी चाहिये।)

(३८९७) **पथ्यादिचूर्णम्** (४)

(वृ. नि. र. । कफाति.)

पथ्या पाठा वचा कुष्ठं चित्रकः कटुरोहिणी।
चूर्णमुष्णाम्भसा पीतं श्लेष्मातीसारनाशनम् ॥

हर्र, पाठा, बच, कूठ, चीता और कुटकी। सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे **कफज अतिसार** नष्ट होता है।

(मात्रा ३ माशे। दिनमें ३-४ बार दें।)

(३८९८) **पथ्यादिचूर्णम्** (५)

(वृ. नि. र. । कास.)

पथ्या विश्वा कणा मुस्ता देवदारुः समांशकम्।
एतच्चूर्णं मधुपेतं श्लेष्मकासापनुत्तये ॥

हर्र, सोंठ, पीपल, नागरमोथा और देवदारु समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ चाटनेसे **कफज खांसी** नष्ट होती है।

(दिनभरमें १ तोले तक थोड़ा थोड़ा करके कई बारमें चटा देना चाहिये।)

(३८९९) **पथ्यादिचूर्णम्** (बृहत्) (६)

(वृ. नि. र. । अजीर्ण.)

पथ्यावचाहिङ्गुकलिङ्गभृङ्ग
सौवर्चलैः सातिविषैः सुचूर्ण्य।
सुखाम्बुपीतो विनिहन्त्यजीर्ण-
शूलं विषूचीं कसनञ्च सद्यः ॥

हर्र, बच, हींग, इन्द्रजौ, भंगरा, सञ्चल (काला नमक) और अतीस। समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे अजीर्ण, शूल, विषूचिका और खांसी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(३९००) **पथ्यादिचूर्णम्** (७)

(र. र. । बालरोग.)

पथ्याकुष्ठवचाचूर्णं मधुतैलयुतं पिबेत्।
ग्रीवादार्ढ्यकरं श्रेष्ठं तालुकण्टकनाशनम् ॥

हर्र, कूठ और बच समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमें शहद और तेल मिला कर चटानेसे

बालकोंकी गरदन दृढ़ होती और तालुकण्टक रोग (जिसमें बालकका तालु नीचेको बैठ जाता है, शिरमें गढ़ा पड़ जाता है और बालकको दस्त आते हैं वह) नष्ट होता है।

(३९०१) **पथ्यादिचूर्णम्** (८)

(वृ. नि. र. । अर्श.)

पथ्यानागरकृष्णाकरञ्जवेल्लाग्निभिः सितातुल्यैः। बडवामुख इव जरयति बहुगुर्वपि भोजनं चूर्णम् ॥

हर्र, सोंठ, पीपल, करञ्जुवेकी गिरी, बायबिडंग और चीता १-१ भाग तथा मिश्री सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे अग्नि अत्यंत तीव्र हो कर भारीसे भारी पदार्थ भी पच जाते हैं।

(३९०२) **पथ्यादिचूर्णम्** (९)

(वृ. यो. त. । त. ९४)

पथ्यांशशक्रयवपुष्करमूलयुक्तां सञ्चूर्ण्य हिङ्गुजटिलातिविषासमेताम्। चूर्णं कवोष्णसलिलेन निपीय सद्यः शूलानि हन्ति पवनामकफोद्भवानि॥

हर्र, इन्द्रजौ, पोखरमूल, हींग, बालछड़ और अतीस समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे वातज, आमजन्य और कफज **शूल** नष्ट होता है। अनुपान-उष्ण जल।

(मात्रा—१ माशा।)

(३९०३) **पथ्यादिचूर्णम्** (१०)

(वं. से.; ग. नि.; यो. र.; वृ. नि. र. । अतिसा.)

पथ्या सौवर्चलं हिङ्गु सैन्धवातिविषे वचा। आमातिसारं कफजं पीतमुष्णाम्भसा जयेत्॥

हर्र, सञ्चल (काला नमक), हींग, सेंधा नमक, अतीस और बच। समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे **आमातिसार** और **कफातिसार** नष्ट होता है।

(मात्रा—१ माशा।)

(३९०४) **पथ्यादिचूर्णम्** (११)

(वृं. मा. । शूला.)

पथ्या सौवर्चलं क्षारं हिङ्गु सैन्धवदीप्यकम्। चूर्णं मद्यादिभिः पीतं वातशूलनिवारणम्॥

हर्र, सञ्चल नमक, जवाखार, हींग, सेंधानमक और अजवायन। समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे सुरा इत्यादि के साथ सेवन करने से **वातज शूल** नष्ट होता है।

(३९०५) **पथ्यादिचूर्णम्** (१२)

(वृ. मा. । वृद्ध्य.)

भृष्टो रुबूकतैलेन कल्कः पथ्या समुद्भवः। कृष्णासैन्धवसंयुक्तो वृद्धिरोगहरः परः॥

हर्र के कल्कको अरण्डीके तैलमें भून लें फिर उसमें पीपल और सेंधा नमकका चूर्ण १-१ भाग मिलाकर रक्खें।

इसके सेवनसे **वृद्धि** रोग नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—२-३ माशे।)

पथ्यादिचूर्णम् (१३)

रस प्रकरणमें देखिये।

(३९०६) **पथ्यादियोगः**

(वृ. नि. र. । ज्वर)

पथ्यां तैलघृतक्षौद्रैर्लिहेद्दाहज्वरापहम् ।
कासासृक्पित्तवीसर्पश्वासं हन्ति वमिमपि ॥

हर्रके चूर्ण में तेल, घी और शहद मिलाकर चाटनेसे दाह, ज्वर, खांसी, रक्तपित्त, वीसर्प, श्वास और छर्दि (वमन) नष्ट हो जाती है।

(हर्र ३ माशे, घी ३ माशे, तेल ३ माशे, शहद २ तोले।)

(३९०७) **पथ्याद्यं चूर्णम्** (१)

(यो. र.; वृ. मा.; वृ. नि. र.; ग. नि. । अजी.)

पथ्यापिप्पलीसंयुक्तं चूर्णं सौवर्चलं पिबेत् ।
मस्तुनोष्णोदकेनापि बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक् ॥
चतुर्विधमजीर्णञ्च मन्दानलमथारुचिम् ।
आध्मानं वातगुल्मञ्च शूलञ्चाशु विनाशयेत् ॥

हर्र, पीपल और सञ्चल (काला नमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे मस्तु या उष्ण जल इत्यादि रोगोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे चार प्रकारकी अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि, अफारा, वातज गुल्म और शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—१-१॥ माशा।)

(३९०८) **पथ्याद्यं चूर्णम्** (२)

(वृ. मा.; भा. प्र. । आमवाता.)

पथ्याविश्वयवानीभिस्तुल्याभिश्चूर्णितं पिबेत् ।
तक्रेणोष्णोदकेनापि काञ्जिकेनाऽथवा पुनः ॥
आमवातं निहन्त्याशु शोथं मन्दाग्नितामपि ।
पीनसं कासहृद्रोगं स्वरभेदमरोचकम् ॥

हर्र, सोंठ और अजवायन समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे तक्र, उष्णजल या काञ्जीके साथ पीनेसे आमवात, शोथ, मन्दाग्नि, पीनस, खांसी, हृद्रोग, स्वरभेद और अरुचिका नाश होता है।

(मात्रा—२-३ माशे।)

(३९०९) **पथ्यायोगः**

(वृं. मा. । कुष्ठा.)

शोथपाण्ड्वामयहरी गुल्ममेहकफापहा ।
कच्छूपामाहरी चैव पथ्या गोमूत्रसाधिता ॥

हर्रको गोमूत्र में पकाकर सुखा कर चूर्ण करके रक्खें।

इसके सेवनसे शोथ, पाण्डु, गुल्म, प्रमेह, कफ, कच्छू और पामाका नाश होता है।

(मात्रा—३-४ माशे।)

(३९१०) **पद्मबीजयोगः**

(ग. नि. । कासा.)

चूर्णन्तु पद्मबीजानां मधुना संप्रयोजितम् ।
पित्तकासार्दितो लिह्यात्स्वास्थ्यं स लभते क्षणात् ॥

कमलगट्टेके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटनेसे **पित्तज खांसी** शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—३-४ माशे। दिनमें ३-४ बार।)

(३९११) **पद्मबीजादियोगः**

(वृ. नि. र. । स्त्री.)

सपद्मबीजं सितया भक्षितं दुग्धवारिणा ।
दृढं स्त्रीणां स्तनद्वन्द्वं मासेन कुरुते किल ॥

कमलगट्टेका चूर्ण और मिश्री समान भाग मिलाकर दूधके पानी (दूधको फटकी आदिसे फाड़कर निकाले हुवे पानी) के साथ सेवन करने से १ मासमें **स्त्रीके स्तन** अवश्य ही दृढ़ हो जाते हैं।

(३९१२) **पद्मादिचूर्णम्**

(यो. र.; वं. से. । अतिसा.)

पद्मं समङ्गा मधुकं बिल्वजन्तु शलाटु च ।
पिबेत्तण्डुलतोयेन सक्षौद्रमगदं परम् ॥

कमल, लज्जालु (या मजीठ), मुलैठी और बेलगिरी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ चाटकर ऊपरसे चावलोंका पानी पीनेसे **अतिसार** नष्ट होता है।

(यह योग पक्वातिसारमें उपयोगी है।)

(३९१३) **पलाशफलादियोगः**

(वै. म. र.। पट. ३)

पलाशोदुम्बरफलं मरिचैः सह भक्षितम् ।
कासं हरेत्त्रिभिर्वारैः कायक्लेशकरं निशि ॥

पलाश (ढाक) और गूलरके फल तथा काली मिर्च समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके केवल ३ बारके ही सेवनसे रात्रिमें कष्ट देने वाली **खांसी** नष्ट हो जाती है।

(मात्रा--६ माशे । शहदके साथ।)

(३९१४) **पलाशबीजादियोगः**

(रा. मा. । बालरो.)

पलाशबीजानि विडङ्गयुक्ता-
न्युन्मिश्रितान्यामलकीफलानाम् ।
रसेन मध्वाज्ययुतानि पीत्वा
वृद्धोपि मासात्तरुणत्वमेति ॥

पलाश (ढाक) के बीज (पलाश पापड़ा) और बायबिडंग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमें आमलेका रस, शहद और घी मिला-कर पीनेसे १ मासमें वृद्ध पुरुष भी तरुणके समान हो जाता है।

(३९१५) **पलाशादिचूर्णम्**

(वा. भ. । उ. अ. ३४)

पलाशधातुकीजम्बूसमङ्गामोचसर्जजः ।
दुर्गन्धे पिच्छिले क्लेदस्तम्भनश्चूर्णमिष्यते ॥

पलाशकी छाल (या गोंद), धायके फूल, जामनकी छाल, लज्जालु, मोचरस और राल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण योनिकी दुर्गन्ध, पिच्छिलता (चिपचिपाहट) और क्लेद (गीलेपन) को नष्ट करता है।

(३९१६) **पाटलाभस्मयोगः**

(वृ. मा. । मूत्राघा.)

सतैलं पाटलाभस्मक्षारवद्बहुपरिस्रुतम् ।

पाढलकी राखको ६ गुने पानीमें घोलकर क्षार बनानेकी विधिसे २१ बार छान लें। इसमें तेल मिला कर पिलानेसे **मूत्राघात** नष्ट होता है।

(३९१७) **पाठादिचूर्णम्** (१)

(भा. प्र. । अतिसा.)

पाठा पिप्पली च गोदन्ता तथा मध्यत्वगाग्रजा।
अतीसारं व्यथादाहं हन्त्येवाशु न संशयः ॥

पाठा और आमके वृक्षकी अन्तर्छाल समान भाग लेकर गायके दहीके साथ पीसकर पिलानेसे **दाह** और **पीड़ायुक्त अतिसार** शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(३९१८) **पाठादिचूर्णम्** (२)

(च. सं. । चि. अ. १८ कास.)

पाठां शुण्ठीं शठीं मूर्वां गवाक्षीं मुस्तपिप्पलीम्।
पिष्ट्वाघर्माम्बुना हिङ्गुसैन्धवाभ्यां युतां पिबेत् ॥

पाठा, सोंठ, सठी (कचूर), मूर्वा, इन्द्रायणकी जड़, नागरमोथा और पीपर समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसमें थोड़ा सा हींग तथा सेंधानमक मिलाकर उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे **कफज खांसी** नष्ट होती है ।

(३९१९) **पाठादिचूर्णम्** (३)

(र. र. । अतिसार.)

पाठामोचरसं मुस्तं धातकीबिल्वनागरम् ।
गुडतक्रयुतं पाने असाध्यमपि साधयेत् ॥

पाठा, मोचरस, नागरमोथा, धायके फूल, बेलगिरी और सोंठ; इनके चूर्णमें समान भाग गुड़ मिला कर तक्रके साथ सेवन करने से **दुःसाध्य अतिसार** भी नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक ।)

(३९२०) **पाठादिचूर्णम्** (४)

(ग. नि.; वृ. नि. र. । हृद्रोगा.)

पाठां वचां यवक्षारमभयामम्लवेतसम् ।
दुरालभां चित्रकं च त्र्यूषणं लवणत्रयम् ॥
शठीं पुष्करमूलञ्च तिन्तिडीकं सदाडिमम् ।
मातुलुङ्गयाश्च मूलानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्॥
सुखोदकेन मद्यैर्वा चूर्णान्येतानि पाययेत् ।
अर्शः शूलं च हृद्रोगं गुल्मं चापि व्यपोहति ॥

पाठा, बच, जवाखार, हर्र, अमलबेत, धमासा, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानमक, कालानमक, बिडलवण, सटी (कचूर), पोखरमूल, तिन्तड़ीक, अनारदाना और बिजौरे नीबूकी जड़की छाल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे मन्दोष्ण जल या मद्यके साथ सेवन करनेसे अर्श, शूल, हृद्रोग और गुल्म नष्ट होता है ।

(मात्रा—२ से ४ माशे तक ।)

(३९२१) **पाठाद्यं चूर्णम्** (१)

(वं. से. । अतिसा.)

पाठा वचा त्रिकटुकं कुष्ठं कटुकरोहिणी ।
उष्णाम्बुपीतान्येतानि श्लेष्मातीसारनाशनम्॥

पाठा, बच, सोंठ, मिर्च, पीपल, कूट और कुटकी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ पीनेसे **कफातिसार** नष्ट होता है ।

(मात्रा—३-४ माशे ।)

(३९२२) **पाठाद्यं चूर्णम्** (२)

(वं. से.; वृ. नि. र.; भा. प्र; यो. र. । आमातिसा.)

पाठाहिङ्गवजमोदोग्रापञ्चकोलाब्दजं रजः ।
उष्णाम्बुपीतं सरुजं जयत्यामं ससैन्धवम् ॥

पाठा, हींग, अजमोद, बच, पिप्पली, पीपला-

मूल, चव, चीता, सोंठ, नागरमोथा और सेंधा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ पीनेसे **पीड़ायुक्त आमातिसार** नष्ट होता है ।

(मात्रा—३–४ माशे ।)

(३९२३) पाठाद्यं चूर्णम् (३)

(वा. भ. । उ. अ. २२)

पाठादार्वीत्वक्कुष्ठमुस्तासमङ्गा–
तिक्तापीताङ्गारोध्रतेजोवतीनाम् ।
चूर्णः सक्षौद्रो दन्तमांसार्तिकण्डू–
पाकस्रावाणां नाशनो घर्षणेन ॥

पाठा, दारुहल्दीकी छाल, कूठ, नागरमोथा, मजीठ, कुटकी, हल्दी, लोध और मालकंगनी । समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर मसूढों पर मलनेसे उनकी पीड़ा, खुजली, पाक और स्राव (**पाइरिया**) का नाश होता है ।

(३९२४) पाठाद्यं चूर्णम् (४)

(वा. भ. । चि. अ. १९)

पाठादार्वीवह्निघुणेष्टाकटुकाभि–
र्मूत्रं युक्तं शक्रयवैश्चोष्णजलञ्च ।
कुष्ठी पीत्वामासमरुक्स्याद् गुदकीली
मेही शोफी पाण्डुरजीर्णी कृमिमांश्च ॥

पाठा, दारुहल्दी, चीता, अतीस, कुटकी और इन्द्रजौ । समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे गोमूत्र या उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे १ मासमें कुष्ठ, अर्श, प्रमेह, शोथ, पाण्डु, अजीर्ण और कृमिरोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—३–४ माशे ।)

(३९२५) पाठाद्यं चूर्णम् (५)

(ग. नि. । चूर्णा.)

पाठा सकृष्णा गजपिप्पली च
निदग्धिका नागरचित्रकौ च ।
सपिप्पलीमूलमजाजीरात्रि–
मुस्तं च चूर्णं सुखतोयपीतम् ॥
हन्यात्त्रिदोषं चिरजञ्च शोफं
कुष्ठञ्च चूर्णस्य हि सुप्रयोगात् ॥

पाठा, पीपल, गजपीपल, कटेली, सोंठ, चीता, पीपलामूल, जीरा, हल्दी और नागरमोथा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे **त्रिदोषज** और **पुराना शोथ** तथा **कुष्ठ** नष्ट होता है।

(मात्रा—३–४ माशे ।)

(३९२६) पाठाद्यं चूर्णम् (६)

(ग. नि. । चूर्णा.)

पाठा प्रतिविषा मुस्तं व्योषभूनिम्बवत्सकाः ।
तिक्ताचित्रकदुस्पर्शास्तुल्यैस्तैः कुटजः समः ॥
गुडशीताम्बुना पीतो ग्रहणीहाऽग्निकारकः ॥

पाठा, अतीस, नागरमोथा, सोंठ, मिर्च, पीपल, चिरायता, कुड़ेकी छाल, कुटकी, चीता और धमासा १–१ भाग तथा इन्द्रजौ सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें । इसे समान भाग गुड़में मिलाकर शीतल जलके साथ सेवन करनेसे **ग्रहणी रोग** नष्ट होता और अग्नि दीप्त होती है ।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक ।)

(३९२७) **पाठाद्यं चूर्णम्** (७)

(र. र. । गुल्म)

पाठावचाशठीक्षारपथ्याग्निव्योषदाडिमम् ।
महार्द्रकश्च त्रिफला कुष्ठयासाम्लवेतसम् ॥
मातुलुङ्गस्य मूलश्च चूर्णमुष्णाम्बुना पिबेत् ।
मद्येन वा जयेद् गुल्मं हृद्रोगं शूलमाशु तत् ॥

पाठा, बच, सठी (कचूर), जवाखार, हर्र चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, अनारदाना, बनअदरक, हर्र, बहेड़ा, आमला, कूठ, धमासा, अमलबेत और बिजौरे नीबूकी जड़की छाल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जल या मद्यके साथ पीनेसे गुल्म, हृद्रोग और शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(मात्रा---३-४ माशे)

(३९२८) **पाठाद्यं चूर्णम्** (८)

(वं. से.; भै. र.; च. द.; वृ. नि. र. । ग्रहणी.)

पाठाविल्वानलव्योषं जम्बुदाडिमधातकी ।
कटुकातिविषा मुस्ता दार्वीभूनिम्बवत्सकैः ॥
सर्वैरेतैः समं चूर्णं कौटजं तण्डुलाम्बुना ।
सक्षौद्रेण पिबेच्छर्दिज्वरातीसारशूलवान् ॥
हृद्दाहग्रहणीदोषारोचकानलसादजित् ॥

पाठा, बेलगिरी, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, जामनकी छाल, अनारदाना, धायके फूल, कुटकी, अतीस, नागरमोथा, दारुहल्दी, चिरायता और कुड़ेकी छाल १-१ भाग तथा इन्द्रजौ सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ चाटकर ऊपरसे चावलों का पानी (तण्डुलोदक । देखो भा. भै. र. प्रथम भाग पृ. ३५३) पीना चाहिये।

इसके सेवनसे छर्दि (वमन), ज्वर, अतिसार, शूल, हृदयकी दाह, ग्रहणी-विकार, अरुचि और अग्निमांद्यका नाश होता है।

(मात्रा---३-४ माशे ।)

(३९२९) **पाठाद्यं चूर्णम्** (९)

(च. सं. । चि. अ. २६)

पाठा रसाञ्जनं मूर्वा तेजोह्वेति च चूर्णितम् ।
क्षौद्रयुक्तं विधातव्यं गलरोगे भिषग्जितम् ॥

पाठा, रसौत, मूर्वा, और ज्योतिष्मति समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे **गलरोग** नष्ट होते हैं।

(३९३०) **पाठामूलयोगः**

(वं. से.; वृं. मा. । विद्रधि.)

शमयति पाठामूलं क्षौद्रयुतं तण्डुलाम्बुना पीतम् ।
अन्तर्भूतं विद्रधिमुद्धतमाश्वेव मनुजस्य ॥

पाठामूलके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटें और ऊपरसे चावलोंका पानी (तण्डुलोदक । देखो भा. भै. र. प्रथम भाग पृ. ३५३) पियें। इसके सेवनसे भयङ्कर अन्तरविद्रधि भी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(मात्रा---३-४ माशे ।)

पारदादिचूर्णम्

रसप्रकरणमें देखिये।

(३९३१) **पारसीययमानीयोगः**

(ग. नि.; वृं. मा.; र. र.; वं. से. । कृमिचि.)

पारसीययमानी पीता पर्युषितवारिणा प्रातः ।
गुडयुक्ता[1] कृमिजालं कोष्ठगतं पातयत्याशु ॥

[1] "गुडपूर्वा" इति पाठान्तरम्।

खुरासानी अजवायनके चूर्णको गुड़में मिलाकर प्रातःकाल बासी पानीके साथ सेवन करनेसे उदरस्थ कृमि शीघ्र ही निकल जाते हैं।

(३९३२) **पारावतपुरीषयोगः**

(रा. मा. । स्त्रीरो.; वै. म. । पटल १३; ग. नि. । गर्भस्राव.)

योषितः सततं यस्या गर्भवत्याः स्रवत्यसृक् ।
पारावतपुरीषं तां पाययेत्तण्डुलाम्भसा ॥

यदि गर्भवती स्त्रीको रक्तस्राव होता हो तो उसे तण्डुलोदक (चावलोंका पानी । बनानेकी विधि भा. भै. र. भाग १ पृ. ३५३ पर देखिये ।) के साथ कबूतरकी विष्ठाका चूर्ण पिलाना चाहिये।

(३९३३) **पाराशीयादिचूर्णम्**

(भै. र. । क्रिमिरो.; र. र. । बालरो.)

पाराशीययमानिकाघनकणाशृङ्गीविडङ्गारुणा-
चूर्णं श्लक्ष्णतरं विलीढमपि तत् क्षौद्रेण संयोजितम् ।
कासं नाशयति ज्वरश्च जयति प्रौढातिसारं जयेच्छर्दिं मर्दयति क्रिमिन्तु नियतं कोष्ठस्थमुन्मूलयेत् ॥

खुरासानी अजवायन, नागरमोथा, पीपल, काकड़ासिंगी, बायबिडंग और अतीस समान भाग लेकर अत्यन्त महीन चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे खांसी, ज्वर, प्रबल अतिसार और छर्दिका नाश होता है। इसके सेवनसे उदरस्थ क्रिमि तो अवश्य ही निर्मूल हो जाते हैं।

(३९३४) **पारिभद्रादिक्षारः**

(ग. नि. । अर्श.)

पारिभद्रं सुधां दन्तीं ककुभं समयूरकम् ।
गवाश्वमहिषाणां च मूत्राण्यथ समाहरेत् ॥
भस्मीकृत्य च तं क्षारं युक्त्या मद्येन पाययेत् ।
श्लेष्मार्शांसि प्रशमयेच्छ्वयथुं पाण्डुतामपि ॥
रक्तजेष्वपि चार्शस्सु क्षीरेणाजेन शस्यते ।
ऋतुं चाप्ययनं वाऽपि पिबेन्मासमथापि वा ॥

पारिभद्र (नीम या फरहद) की छाल, सेंड (सेहुंड–थोहर), दन्तीमूल, अर्जुनकी छाल और चिरचिटा समान भाग लेकर कूट लें। फिर इस चूर्णके बराबर गोमूत्र, घोड़ीका मूत्र और भैंसका मूत्र लेकर, उस चूर्ण और इन सब मूत्रों को मजबूत हांडीमें भरकर उसका मुंह बंद करके उस पर कपड़ मिट्टी करदें। अब इस हांडीको चूल्हे पर चढ़ाकर इतना पकावें कि सब चीजें जलकर राख हो जायं।

इसके बाद हांडीके स्वांग शीतल होने पर उसमें से औषधको निकालकर पीस लें।

इसे मद्यके साथ सेवन करनेसे कफज बवासीर, शोथ और पाण्डु का नाश होता है। बकरी के दूधके साथ देनेसे रक्तार्श भी नष्ट हो जाती है।

इसे २ मास, ६ मास या १ मास तक (आवश्यकतानुसार) सेवन करना चाहिये।

(३९३५) **पार्श्वपिप्पलादियोगः**

(यो. र.; भा. प्र.; वृ. नि. र. । स्त्रीरो.)

याऽबला पिबति पार्श्वपिप्पलं
जीरकेण सहितं हिताशना ।

श्वेतया विशिखपुङ्खया युतं
सा सुतं जनयतीह नान्यथा ॥

पारसपीपल, जीरा और सफेद सरफोंका समान भाग लेकर चूर्ण बना लीजिये ।

जो (गर्भिणी) स्त्री पथ्य पालन पूर्वक इसे सेवन करती है उसके निश्चय ही पुत्र उत्पन्न होता है ।

(३९३६) **पाषाणभेदाद्यं चूर्णम्**

(च. द. । अश्मरी.; च. सं. । चि. अ. २६)

पाषाणभेदं वृषकं श्वदंष्ट्रा
पाठाभयाव्योषशठीनिकुम्भाः ।
हिंस्राखराश्वाशितिवारकाणा-
मेर्वारुकाच त्रपुषाच्च बीजम् ॥
उत्कुञ्चिका हिङ्गु सवेतसाम्लं
स्याद्वे बृहत्यौ हपुषा वचा च ।
चूर्णं पिबेदश्मरिभेदि पक्वं
सर्पिश्च गोमूत्रचतुर्गुणं तैः ॥

पखानभेद, बासा, गोखरू, पाठा, हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, सठी (कचूर), दन्तीमूल, बालछड़, खुरासानी अजवायन, सुनिषण्णक (चांगेरीभेद), ककड़ी और खीरेके बीज, कलैंजी, हींग, अमलवेत, कटेली, कटैला, हाऊबेर और बच । सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इस चूर्णको सेवन करनेसे अथवा इन्हीं चीजोंके कल्क और क्वाथसे घृत पकाकर सेवन करनेसे पथरी नष्ट हो जाती है ।

(चूर्णकी मात्रा—३–४ माशे । उष्ण जलके साथ ।)

(३९३७) **पिचुमन्दाद्युद्वर्तनम्**

(ग. नि. । वातरो.)

पिचुमन्दस्य मूलानि[१] चित्रको हस्तिपिप्पली ।
त्वक्पत्रफलमूलानि करञ्जात्सर्षपात्तथा ॥
तुल्यानि तानि सर्वाणि वल्मीकस्य च मृत्तिका ।
गवां मूत्रेण पिष्टानि सूक्ष्माण्युद्वर्त्तनं परम् ॥

नीमकी जड़की छाल (पाठभेदके अनुसार पत्र), चीता, गजपीपल, करञ्जुवेकी छाल पत्र फल और मूल; सरसोंका पञ्चाङ्ग और बांबीकी मिट्टी समान भाग लेकर सबका महीन चूर्ण करके उसे गोमूत्रमें घोट लें ।

इसकी मालिशसे ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट होता है ।

(३९३८) **पिण्डारकबन्धूकयोगः**

(वृ. नि. र. । श्लीपद.; यो. त.[२] । त. ५८)

पिण्डारकतरुसम्भवबन्धूकशिफा च सर्पिषा पीता ।
श्लीपदमुग्रं नियतं बद्धा सूत्रेण जङ्घायाम् ॥

पिण्डारक के बन्देकी जड़को घीमें पीसकर पीने तथा उसीको सूतमें बांधकर जंघा में बांधनेसे भयंकर श्लीपद रोग भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(३९३९) **पिप्पलीचूर्णम्**

(वृ. मा.; भा. प्र. । ज्वरा; शा. ध. । ख. २. अ. ६)

मधुना पिप्पलीचूर्णं लिहेत्कासज्वरापहम् ।
हिक्का श्वासहरं कण्ठ्यं प्लीहघ्नं बालकोचितम् ॥

पीपलके चूर्णको शहदके साथ चाटनेसे

१ 'पत्राणि' पाठ भी मिलता है ।

२ योगतरङ्गिणीमें पिण्डारककी जडको ही पीनेके लिए लिखा है, बन्देको नहीं ।

खांसी, ज्वर, हिचकी, श्वास और तिल्ली नष्ट होती है ।

यह चूर्ण कण्ठके लिये हितकारी तथा बालकोंके लिये उपयोगी है ।[1]

(मात्रा—१–१॥ माशा ।)

(३९४०) **पिप्पलीचूर्णयोगः**

(रा. मा. । उदर.)

यः सप्तरात्रित्रितयं सुधायाः
क्षीरेण चूर्णं मृदितं कणायाः ।
लेढि प्रकामं मधुरश्च भुङ्क्ते
तस्योदरव्याधिरुपैति नाशम् ॥

पीपलके चूर्णको सेंड (सेहुंड) के दूधमें घोटकर ३ सप्ताह तक सेवन करने से समस्त उदर व्याधियां नष्ट हो जाती हैं ।

पथ्य—मधुर पदार्थ ।

(मात्रा—४–६ रत्ती ।)

(३९४१) **पिप्पलीमूलादिप्रयोगः**

(ग. नि. । शूला.)

कणामूलमथैरण्डं चित्रकं विश्वभेषजम् ।
हिङ्गुसैन्धवसंयुक्तं सद्यः शूलहरं परम् ॥

पीपलामूल, अरण्डमूल, चीता, सोंठ, भुनी-हुई हींग और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे (उष्ण जलके साथ) सेवन करनेसे शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—४-६ रत्ती ।)

[1] —वृन्दमाधव तथा भावप्रकाशमें श्लोक भिन्न है. योग यही है ।

(३९४२) **पिप्पलीयोगः**

(वृ. मा.; वं. से. । उदररो.)

पलाशक्षारतोयेन पिप्पली परिभाविता ।
गुल्मप्लीहार्तिशमनी वह्निदीप्तिकरी मता ॥

पलाश (ढाक) की भस्मको छःगुने पानीमें घोलकर क्षार बनानेकी विधिसे (रैनी चढ़ाकर) २१ बार छान लें । इस पानी में पीपलके चूर्णको (कई दिन तक) घोटें और फिर सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

यह चूर्ण गुल्म और तिल्ली नाशक तथा अग्नि वर्द्धक है ।

(मात्रा—४–६ रत्ती । अनुपान शहद ।)

(३९४३) **पिप्पल्यादिक्षारम्**

(च. सं. । चि. अ. १५ ग्रह.)

समूलां पिप्पलीं पाठां चव्येन्द्रयवनागरम् ।
चित्रकातिविषे हिङ्गु श्वदंष्ट्रां कटुरोहिणीम् ॥
वचां च कार्षिकान् पञ्चलवणानां पलानि च ।
दध्नः प्रस्थद्वये तैलसर्पिषोः कुडवद्वये ॥
चूर्णीकृतानि निष्क्वाथ्य शनैरन्तर्गते रसे ।
अन्तर्धूमं ततो दग्ध्वा चूर्णं कृत्वा घृताप्लुतम् ॥
पिबेत्पाणितलं तस्मिञ्जीर्णे स्यान्मधुराशनः ।
वातश्लेष्मामयान्सर्वान् हन्याद्विषगरांश्च सः ॥

पीपल, पीपलामूल, पाठा, चव, इन्द्रजौ, सोंठ, चीता, अतीस, हींग, गोखरु, कुटकी और बच १।–१। तोला तथा सेंधा नमक, सञ्चल नमक, विड लवण, काच लवण और सामुद्र लवण ५–५ तोले लेकर सबको कूटकर चूर्ण बनावें और फिर

४ सेर दही और आधा आधा सेर तेल और घी को एकत्र मिलाकर उसमें वह चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश जल जाय तो उसे एक मज़बूत हांडीमें भरकर उसका मुख बन्द करके उसपर ३-४ कपर मिट्टी कर दें और उसे चूल्हे पर चढ़ाकर इतनी देर पकावें कि जिससे समस्त ओषधियोंकी भस्म हो जाय। इसके बाद हांडी के स्वांग शीतल होने पर उसमें से औषधको निकाल कर पीस लें।

इसे १ पल मात्रानुसार घीमें मिलाकर पियें और पच जाने पर मधुर (दूध भात इत्यादि) भोजन करें।

यह क्षार वातकफज रोग और विष विकारों को नष्ट करता है।

(व्यवहारिक मात्रा-१ से ३ माशे तक। अनुपान-उष्ण जल।)

(३९४४) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (१)

(ग. नि. । अरुचि.)

पिप्पल्यामलकं मूर्वा चन्दनं कमलोत्पलम्।
उशीरं पद्मकं रोध्रमेला लामज्जकं तथा ॥
एतानि समभागानि क्षौद्रेण सह संसृजेत्।
द्विगुणां शर्करां दत्त्वा पित्तजायामथारुचौ ॥

पीपल, आमला, मूर्वा, सफेद चन्दन, कमल, नीलोत्पल, खस, पद्माक, लोध, इलायची और लामज्जक (खस भेद-पीला खस) समान भाग लेकर कूट छानकर चूर्ण बनावें और फिर उसमें उस सबसे २ गुनी खांड मिला लें।

इसे शहदमें मिलाकर खानेसे पित्तज अरुचि नष्ट होती है।

(मात्रा-६ माशे से ९ माशे तक।)

(३९४५) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (२)

(वृ. नि. र. । कास.)

पिप्पली तवराजश्च तवक्षीरं त्रयं समम्।
मधुसर्पिर्युतं भुक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥

पीपल, तवराज (यवासशर्करा-तुरञ्जबीन) और बंसलोचन समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहद और घीमें मिलाकर चाटने से पित्तज खांसी नष्ट होती है।

(३९४६) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (३)

(वा. भ. । कल्प. अ. ३)

पिप्पलीदाडिमक्षारहिङ्गुशुण्ठ्यम्लवेतसान्।
ससैन्धवान् पिबेन्मद्यैः सर्पिषोष्णोदकेन वा ॥
प्रवाहिकापरिस्रावे वेदनापरिकर्त्तने ॥

पीपल, अनारदाना, जवाखार, हींग, सोंठ, अमलबेत और सेंधानमक बराबर बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसे मद्य, घी अथवा उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे वमन विरेचनके मिथ्यायोगसे उत्पन्न हुई प्रवाहिका, अतिसार, शूल और कतरनेके समान वेदना नष्ट होती है।

(३९४७) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (४)

(ग. नि.; वृ. नि. र.; वृं. मा. । गुल्मा.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रकाजाजिसैन्धवम्।
पीतं तु सुरया हन्ति गुल्ममाशु सुदुस्तरम् ॥

पीपल, पीपलामूल, चीता, जीरा और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे मद्यके साथ सेवन करने से दुस्साध्य गुल्म भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

(३९४८) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (५)

(शा. ध. । खं. २ अ. ६)

कर्षमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृता स्यात्पलोन्मिता ।
खण्डात् पलं च विज्ञेयं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥
कर्षोन्मितं लिहेदेतत्क्षौद्रेणाध्माननाशनम् ।
गाढविट्कोदरकफान् पित्तशूलञ्च नाशयेत् ॥

पीपल १। तोला, निसोत ५ तोले और खांड ५ तोले लेकर चूर्ण बनावें ।

इसमेंसे १। तोला चूर्ण शहदके साथ चाटनेसे आध्मान (अफारा), गाढविट्कता (मलका कठिन होना), उदररोग और पित्तशूलका नाश होता है ।

(३९४९) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (६)

(वं. से.; वृ. नि. र. । कृमि.; भा. प्र. । आमवात.)

पिप्पली पिप्लीमूलं सैन्धवं कृष्णजीरकम् ।
चव्यचित्रकतालीसपत्रकं नागकेसरम् ॥
एषां द्विपलिकान्भागान् पञ्च सौवर्चलस्य च ।
मरिचाजाजिशुण्ठीनामेकैकस्य पलं पलम् ॥
दाडिमात्कुडवञ्चैव द्वे पले चाम्लवेतसात् ।
सर्वमेकत्र संक्षुद्य योजयेत्कुशलो भिषक् ॥
पिप्पल्याद्यमिदं ख्यातं नष्टवह्नेः प्रदीपनम् ।
अर्शांसि ग्रहणीं गुल्ममुदरं सभगन्दरम् ॥
कृमिकण्ड्वरुचिहरं सुरयोष्णोदकेन वा ।
नातः परतरः किञ्चिदामशोथनिषूदनम् ॥

पीपल, पीपलामूल, सेंधा नमक, कालाजीरा, चव, चीता, तालीसपत्र और नागकेसर; हरेक १०-१० तोले । सञ्चल (काला नमक) २५ तोले; काली मिर्च, जीरा और सोंठ ५-५ तोले, अनारदाना २० तोले तथा अमलबेत १० तोले लेकर सबको कूटकर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त होती तथा अर्श, ग्रहणी, उदररोग, गुल्म, भगन्दर, कृमि, कण्डू और अरुचि नष्ट हो जाती है ।

आमशोथके लिये इससे उत्तम अन्य एक भी प्रयोग नहीं है ।

अनुपान—सुरा या उष्ण जल ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

(३९५०) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (७)

(वृ. नि. र. । बालरोग.)

पिप्पली मधुकं जम्बूरसालतरुपल्लवाः ।
चूर्णोऽयं मधुना चेति तृष्णाप्रशमनः शिशोः ॥

पीपल, मुलैठी तथा आम और जामनके पत्ते समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ चटानेसे बालकोंकी तृषा (प्यास) शान्त होती है ।

(मात्रा—४ रत्तीसे १ माशा तक ।)

(३९५१) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (८)

(वृ. नि. र. । बालरो.)

पिप्पलीविजयाशुण्ठीचूर्णं मधुयुतं भिषक् ।
दत्त्वा निहन्त्युग्रग्रहणीरुजं कीर्तिमवाप्नुयात् ॥

पीपल, भांग और सोंठके समानभाग-मिश्रित चूर्णको शहदके साथ देनेसे भयङ्कर **संग्रहणी** भी नष्ट हो जाती है।

यह प्रयोग वैद्योंको कीर्ति दिलानेवाला है।

(३९५२) पिप्पल्यादिचूर्णम् (९)

(यो. र. । श्लीपद; वृ. यो. त. । त. १०९; र. र.; च. द.; वृ. मा.; वं. से. । श्लीपद.)

पिप्पली त्रिफला दारु नागरं सपुनर्नवम् ।
भागैर्द्विपलिकैस्तेषां तत्समं वृद्धदारकम् ॥
काञ्जिकेन तु तच्चूर्णं पिबेत्कर्षप्रमाणतः ।
जीर्णे चापरिहारं स्याद् भोजनं सर्वकामिकम् ॥
श्लीपदं वातरोगांश्च प्लीहगुल्ममरोचकम् ।
अग्निं च कुरुते घोरं भस्मकञ्च प्रयच्छति ॥

पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, सोंठ, और पुनर्नवा (साठी) १०-१० तोले तथा विधारा इन सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण १। तोलेकी मात्रानुसार काञ्जीके साथ सेवन करें और औषध पच जाने पर इच्छानुसार आहार करें। इसके सेवनकालमें किसी विशेष परहेज़की आवश्यकता नहीं है।

इसके सेवनसे श्लीपद, वातव्याधि, तिल्ली, गुल्म, अरुचि और भस्मक रोग नष्ट होता तथा अग्नि दीप्त होती है।

(व्यवहारिक मात्रा---३-४ माशे)

(३९५३) पिप्पल्यादिचूर्णम् (१०)

(यो. र.; भा. प्र. । बालरो.)

पिप्पलीत्रिफलाचूर्णं घृतक्षौद्रपरिप्लुतम् ।
बालो रोदिति यस्तस्मै लेढुं दद्यात्सुखावहम् ॥

यदि बालक अधिक रोता हो तो उसे पीपल और त्रिफला (हर्र, बहेड़ा और आमला) के समानभाग-मिश्रित चूर्णको घी और शहदमें मिलाकर चटाना चाहिये।

(३९५४) पिप्पल्यादिचूर्णम् (११)

(वं. से.; ग. नि.; वृ. नि. र. । स्वरभङ्ग.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम् ।
पिबेन्मूत्रेण मतिमान् कफजे स्वरसंक्षये ॥

पीपल, पीपलामूल, काली मिर्च और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे कफज स्वरभंग (गलाबैठना) रोग नष्ट होता है।

(मात्रा---२-३ माशे । दिनमें २-३ बार।)

(३९५५) पिप्पल्यादिचूर्णम् (१२)

(यो. र. । योनिरो.)

पिप्पलीविडङ्गटङ्कणसमचूर्णं या पिबेत्पयसा ।
ऋतुसमये न हि तस्या गर्भः संजायते क्वापि ॥

जो स्त्री ऋतुकालमें (मासिक धर्मके समय) पीपल, बायबिडंग और सुहागे के समान भाग मिश्रित चूर्णको दूधके साथ पीती है उसके गर्भ कदापि नहीं रहता।

(३९५६) पिप्पल्यादिचूर्णम् (१३)

(वृ. नि. र. । बालरो.)

पिप्पली ग्रन्थिकं विश्वा त्रायमाणा च दार्विका ।
पथ्येभपिप्पली भार्ङ्गी लवङ्गं टङ्कणस्तथा ॥
कुमारी बालपथ्या च सैन्धवस्त्वजवारिणा ।
घर्षितं पाययेत्प्रातर्द्विटङ्कं फुल्लिकापहम् ॥

पीपल, पीपलामूल, सोंठ, त्रायमाना, दारुहल्दी, हर्र, गजपीपल, भरंगी, लैांग, सुहागेकी खील, घृतकुमारी, छोटी हर्र और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । इसे बकरीके मूत्रके साथ पिलानेसे बालकोंका उत्फुल्लिका[1] रोग नष्ट होता है ।

मात्रा—८ माशे । (व्यवहारिक मात्रा—आधेसे २ माशे तक ।)

(३९५७) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (१४)

(वं. से.; वृ. नि. र. । बालरो.)

पिप्पलीमधुकानाञ्च[2] चूर्णं समधुशर्करम् ।
रसेन मातुलुङ्गस्य हिकाछर्दिनिवारणम् ॥

पीपल और मुलैठीका चूर्ण समान भाग मिलाकर उसमें इन दोनोंके बराबर खांड मिलावें । इसे शहदमें मिलाकर चाटकर ऊपरसे बिजौरे नीबूका रस पीनेसे हिचकी और वमन नष्ट होती है ।

(३९५८) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (१५)

(वृ. नि. र. । बालरो.)

पिप्पली रुचकं पथ्याचूर्णं मस्तुजलं पिबेत् ।
सर्वाजीर्णहरं शूलगुल्मानाहाग्निमान्द्यजित् ॥

पीपल, काला नमक और हर्रके चूर्णको छाछके पानीके साथ पिलानेसे हर प्रकारकी अजीर्ण, शूल, गुल्म, अफारा और अग्निमांद्य नष्ट होता है ।

(३९५९) **पिप्पल्यादिचूर्णम्** (१६)

(र. म. । अ. ९)

पिप्पलीं शृङ्गवेरञ्च मरिचं केसरं तथा ।
घृतेन सह पातव्यं वन्ध्यागर्भप्रदं परम् ॥

पीपल, सोंठ, काली मिर्च और नागकेसरके चूर्णको घीके साथ पीनेसे वन्ध्या स्त्री गर्भ धारण करती है ।

(३९६०) **पिप्पल्याद्यं चूर्णम्** (१)

(वं. से. । ग्रहण्य.; च. सं. । चि. अ. १९; ग. नि. । परिशिष्ट चूर्णा.)

समूलां पिप्पलीं क्षारौ द्वौ पञ्च लवणानि च ।
मातुलुङ्गाभयारास्ना शठीं मरिचनागरम् ॥
कृत्वा समांशं तच्चूर्णं पिबेत् प्रातः सुखाम्बुना ।
श्लैष्मिके ग्रहणीदोषे बलमांसाग्निवर्द्धनम् ॥

पीपल, पीपलामूल, जवाखार, सज्जीखार, पांचों नमक, बिजौरेकी जड़, हर्र, रास्ना, शठी (कचूर), कालीमिर्च और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे प्रातःकाल मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफज संग्रहणी नष्ट होती और बल, मांस तथा जठराग्निकी वृद्धि होती है ।

(मात्रा—२–३ माशे ।)

(३९६१) **पिप्पल्याद्यं चूर्णम्** (२)

(ग. नि. । अरोचक.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचानि हरीतकी ।
शृङ्गवेरं यवक्षारो रोध्रं तेजोवती तथा ॥

[1] उत्फुल्लिका रोगमें बालकके पेटपर अफारा होता है, श्वास तेज चलता है और दाहिनी कोख में सूजन होती है । इसीको डब्बा कहते हैं ।

[2] "पिप्पलीमरिचानान्तु" इति पाठान्तरम् ।

एतानि समभागानि मधुना सह लेहयेत् ।
अरोचके श्लेष्मभवे प्रधानं मुखधावनम् ॥

पीपल, पीपलामूल, काली मिर्च, हर्र, सोंठ, जवाखार, लोध और चव समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे कफज अरुचि नष्ट होती है ।

कफज अरुचिमें बार बार मुख-प्रक्षालन करना लाभदायक है ।

(मात्रा—१ माशा । दिनमें कई बार सेवन करना चाहिये ।)

(३९६२) पिप्पल्याद्यं चूर्णम् (३)

(ग. नि.; वै. जी. । कासा.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं नागरं सविभीतकम् ।
लीढं मधुयुतं चूर्णं कासरोगनिवारणम् ॥

पीपल, पीपलामूल, सोंठ और बहेड़ा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ चाटनेसे खांसी नष्ट होती है ।

(मात्रा—३ माशे । दिनमें ३-४ बार चाटें ।)

(३९६३) पिप्पल्याद्यं चूर्णम् (४)

(ग. नि. । परिशि. चूर्णा.)

चत्वारि पिप्पलीनां तु पञ्च सौवर्चलोद्भवाः ।
जीरकस्य त्रयो भागाः शुण्ठ्या भागत्रयं तथा ॥
सप्त सप्त स्मृता भागास्तीक्ष्णदाडिमसारयोः ।
द्वौ भागौ तिन्तिडीकस्य चत्वारश्चाम्लवेतसात् ॥
षड्भागाः सैन्धवस्योक्तास्तथार्द्धो हिङ्गुतः स्मृतः ।
निस्तुषाणां विडङ्गानामेको भागः प्रकीर्तितः ॥
तत्सर्वमेकतः कृत्वा सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ।
लवणं दीपनमिदं वातश्लेष्मविकारनुत् ॥
रुच्यमन्नेन संयुक्तं केवलं वा हितं तथा ॥

पीपल ४ भाग, सञ्चल (काला नमक) पांच भाग, जीरा और सोंठ ३-३ भाग, काली मिर्च ७ भाग, अनारका रस (शुष्क) अथवा अनारका सत ७ भाग, तिन्तड़ीक २ भाग, अम्लबेत ४ भाग, सैंधा नमक ६ भाग तथा आधा भाग हींग और १ भाग बायबिड़ंगके चावल[१] (गिरी) लेकर सबको कूट छानकर चूर्ण बनावें ।

इसे भोजनके साथ (अन्नमें मिलाकर) या पृथक् (गरम पानीके साथ) खानेसे वातकफज विकार नष्ट होते हैं । यह अग्निदीपक और रोचक है ।

(मात्रा १-१॥ माशा ।)

(३९६४) पिप्पल्याद्यं चूर्णम् (५)

(वं. से.; ग. नि. । ग्रहणी.; शा. ध. । चूर्णा.; वा. भ.[२] । चि. अ. १०)

पिप्पली बृहती व्याघ्री यवक्षारः कलिङ्गकः ।
चित्रकं सारिवा पाठा शठी लवणपञ्चकम् ॥
तच्चूर्णं पाययेद्दध्ना सुरयोष्णाम्भसापि वा ।
मारुतग्रहणीदोषशमनं दीपनं परम् ॥

---

१ बायबिडंगको पानीकी सहायतासे जरा नम (आर्द्र) करके ओखलीमें कूटनेसे उसके चावल निकल आते हैं ।

२ वाग्भटमें श्लोक भिन्न हैं परन्तु प्रयोग यही है । केवल शठीके स्थानमें सोंठ लिखी है ।

पीपल, छोटी और बड़ी कटैली, जवाखार, इन्द्रजौ, चीता, सारिवा, पाठा, सठी (कचूर) और पाचों नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे दही, मद्य या उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे वातज संग्रहणी नष्ट होती और अग्नि दीप्त होती है।

(३९६५) **पिप्पल्याद्यं चूर्णम्** (६)

(ग. नि. । चूर्णा.)

पिप्पली चन्दनं मुस्तामुशीरं कटुरोहिणी ।
पाठा वत्सकबीजञ्च हरीतक्यो महौषधम् ॥
एतदामसमुत्थानमतीसारं सवेदनम् ।
कफात्मकं सपित्तञ्च पुरीषं चाशु रुन्धति ॥

पीपल, सफेद चन्दन, नागरमोथा, खस, कुटकी, पाठा, इन्द्रजौ, हर्र और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे पीड़ायुक्त आमातिसार, कफातिसार और पित्तातिसार शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—२–३ माशे । अनुपान उष्ण जल ।)

(३९६६) **पिप्पल्याद्यं चूर्णम्** (७)

(वं. से.; यो. र.; वृ. नि. र. । शोथरो.)

पिप्पल्यजाजी गजपिप्पली च
निदग्धिका नागरचित्रके च ।
रजन्यथो पिप्पलिमूलपाठा
मुस्तञ्च चूर्णं सुखतोयपीतम् ॥
हन्यात्त्रिदोषं चिरजञ्च शोथं
कल्कोऽथ भूनिम्बमहौषधाभ्याम् ।
रसस्तथैवार्द्रकनागरस्य
पेयोऽथ जीर्णे पयसान्नमद्यात् ॥

पीपल, जीरा, गजपीपल, कटेली, सोंठ, चीता, हल्दी, पीपलामूल, पाठा और नागरमोथा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे पुराना त्रिदोषज शोथ नष्ट हो जाता है।

चिरायता और सोंठ के कल्कको अद्रक के रसमें मिलाकर चटानेसे भी शोथ नष्ट होता है।

औषध पच जाने पर दूध भात खाना चाहिये।

(चूर्णकी मात्रा—२-३ माशे ।)

(३९६७) **पिप्पल्याद्यं चूर्णम्** (८)

(वृ. नि. र. । अरुचि.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः ।
मरिचं दीप्यकञ्चैव वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् ॥
एलालवङ्गशालूकदधित्थं चेति कार्षिकम् ।
प्रदेयं चाति शुद्धायाः शर्करायाश्चतुः पलम् ॥
चूर्णमग्निप्रसादः स्यात्परमं रुचिवर्द्धनम् ।
प्लीहकार्श्यमथार्शांसि श्वासं शूलं ज्वरं वमिम् ॥
निहन्ति दीपयत्यग्निं बलवर्णरुचिप्रदम् ।
वातानुलोमनं हृद्यं जिह्वाकण्ठविशोधनम् ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, काली मिर्च, अजवायन, तिन्तड़ीक, अम्लबेत, इलायची, लौंग, जायफल और कैथका गूदा १।–१। तोला तथा अत्यन्त स्वच्छ खांड २० तोले लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण अग्निदीपक, अत्यन्त रोचक, तथा तिल्ली, कृशता, अर्श, शूल, श्वास, ज्वर और वमन

नाशक बलवर्द्धक, वर्ण-संस्कारक (रंगको ठीक करने वाला), वायुको अनुलोम (यथोचित मार्ग-गामी) करने वाला, हृदयके लिये हितकारक तथा जिह्वा और कण्ठको शुद्ध करने वाला है ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

(३९६८) पिप्पल्याद्यं चूर्णम् (९)

(ग. नि. । उदररोगा.; वा. भ. । चि. अ. १५; च. सं. । चि. अ. १८)

पिप्पली नागरं दन्ती समभागास्त्रयोऽभया ।
त्रिगुणाऽथ[1] विडाद्धं तच्चूर्णं प्लीहनाशनम् ॥
उष्णाम्बुक्षीरगोमूत्रैर्यथावत्संप्रयोजयेत् ॥

पीपल, सोंठ और दन्तीमूल १-१ भाग, हर्र ३ भाग और बायबिड़ंग आधा भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जल, दूध या गोमूत्र के साथ सेवन कराने से प्लीहा (तिल्ली) नष्ट होती है ।

(३९६९) पिप्पल्याद्यं चूर्णम् (१०)

(वं. से. । हृद्रो.; आ. वे. वि. । चि. अ. १६; वृ. यो. त. । त. ९९; वृ. नि. र. । हृद्रो.)

पिप्पल्येला वचा हिङ्गु यवक्षारोऽथ सैन्धवम् ।
सौवर्चलमथो शुण्ठी ह्यजमोदा च चूर्णितम् ॥
दध्ना मद्येनासवेन काञ्जिकेन घृतेन वा ।
पाययेच्छुद्धदेहञ्च वातहृद्रोगशान्तये ॥

पीपल, इलायची, बच, हींग, जवाखार, सेंधा नमक, सञ्चल (काला नमक), सोंठ और अजमोद समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे दही, मद्य, आसव, काञ्जी या घीके साथ सेवन करनेसे वातज हृद्रोग शान्त होता है।

इसे वमन विरेचनादि द्वारा शरीर शुद्धि करनेके पश्चात् सेवन कराना चाहिये ।

(मात्रा—१-१॥ माशा)

(३९७०) पिप्पल्याद्योऽगदः

(वं. से. । विष.)

दूषीविषार्तं सुस्निग्धमूर्ध्वं चाधश्च शोधितम् ।
पाययेदगदं मुख्यमिदं दूषीविषापहम् ॥
पिप्पली ध्यामकं मांसी लोध्रमेला सुवर्चिका ।
वालकं परिपेला च तथा कनकगैरिकम्[1] ॥
क्षौद्रयुक्तोऽगदो ह्येष दूषीविषमपोहति ।
दूषीविषारिनामायं न कैश्चिदपिबाध्यते ॥

पीपल, कत्तृण (अभावमें खस), जटामांसी, लोध, इलायची, सज्जीक्षार (या सञ्चल नमक), सुगन्धबाला, केवटी मोथा और सोनागेरु समान भाग मिलाकर चूर्ण बनावें ।

रोगीको स्निग्ध करनेके पश्चात् वमन विरेचन कराके यह अगद शहदके साथ सेवन करानेसे दूषी विष (अन्नपानादि के दोषसे उत्पन्न हुवा विष) नष्ट होता है ।

(३९७१) पिप्पल्याद्यो योगः

(ग. नि. । हृद्रो.)

पिप्पली बीजपूरश्च नवनीतयुतं द्वयम् ।
हृच्छूलं भक्षितं हन्ति हृद्रोगं चाति दारुणम् ॥

[1] चरक और वाग्भट में त्रिगुणाकी जगह द्विगुणा पाठ है, इसके अतिरिक्त चरकमें इस योगमें चित्रकमी लिखा है तथा विडङ्ग १ भाग लिखी है ।

[1] कुटन्नटं नतं कुष्ठं यष्टीचन्दनगैरिकमिति पाठान्तरम् ।

पीपल और बिजौरे नीबूकी जड़की छालके चूर्णको नवनीत (नैनी घी—मक्खन) में मिलाकर खानेसे हृदय—शूल और दुस्साध्य हृद्रोग नष्ट होता है ।

(३९७२) **पीतकचूर्णम्**

(च. द.; वृं. मा.; वं. से. । मुखरो.; यो. त. । त. ६९; ग. सं. । चि. अ. २६ त्रिमर्मी.; र. र.; भै. र. । मुखरो.; वा. भ. । उ. अ. २०; वृ. यो. त. । त. १२८; ग. नि. । चूर्णा.)

मनःशिला यवक्षारो हरितालं ससैन्धवम् ।
दार्वीत्वक् चेति तच्चूर्णं माक्षिकेण समायुतम् ॥
मूर्च्छितं घृतमण्डेन कण्ठरोगेषु धारयेत् ।
मुखरोगेषु च श्रेष्ठं पीतकं नाम कीर्तितम् ॥

शुद्ध मनसिल, जवाखार, शुद्ध तबकिया हरताल, सेंधानमक और दारु हल्दीकी छाल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीमें मिला कर मुखमें धारण करनेसे कण्ठरोग तथा मुखरोग नष्ट होते हैं ।

(३९७३) **पीतकं चूर्णम्**

(ग. नि. । चूर्णा.).

पटोलदार्वीमधुकं प्रियङ्ग्वतिविषा घनम् ।
सनागपुष्पं त्रायन्ती भूनिम्बं तिक्तरोहिणी ॥
बिभीतकं दाडिमत्वग्घरितालं मनःशिला ।
समांशानि त्रिभागांशं सशैलेयं रसाञ्जनम् ॥
पीतकं चूर्णमेतद्धि मध्वाक्तं प्रतिसारणम् ।
दन्तमूलगलास्योष्ठजिह्वातालुविकारिणाम् ॥

पटोल, दारुहल्दीकी छाल, मुलैठी, फूल-प्रियङ्गु, अतीस, नागरमोथा, नागकेसर, त्रायमाना, चिरायता, कुटकी, बहेड़ा, अनारकी छाल, तबकी हरताल और मनसिल १—१ भाग तथा छारछरीला और रसौत ३—३ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर मलनेसे मसूढ़े, गले, मुंह, होठ, जीभ और तालु के रोग नष्ट होते हैं ।

(३९७४) **पुण्डरीकयोगः**

(वृ. मा. । नेत्ररोगा.)

एकं वा पुण्डरीकं च छागक्षीरेण सेवितम् ।
रागाश्रुवेदना हन्यात्क्षतपाकात्ययाजकाः ॥

केवल पुण्डरिया (या श्वेत कमल) को ही बकरीके दूधमें पीसकर सेवन करने से आंखोंकी लाली, अश्रुस्राव, पीड़ा, क्षत, पाकात्यय और अजकाजात रोग नष्ट होता है ।

(३९७५) **पुत्रजीवमज्जायोगः**

(वृ. नि. र. । विष.)

पुत्रजीवस्य मज्जां च निष्कमात्रां गवांपयः ।
पिष्ट्वा चोग्रतरं हन्यान्नानायोगकृतं विषम् ॥

जियापोतेकी मज्जा (मींगी) ५ माशे लेकर उसे गायके दूधमें पीसकर पिलानेसे अत्यन्त उग्र दूषी विष (अन्न पानादि के दोष या संयोग-विरुद्ध पदार्थोंके योगसे उत्पन्न विष) नष्ट होता है ।

(३९७६) **पुनर्नवादिचूर्णम्** (१)

(वं. से.; भा. प्र.; भै. र. । आमवात.; वृ. यो. त. । त. ९३)

पुनर्नवामृताशुण्ठीशताह्वावृद्धदारकम् ।

शठी शुण्डितिकाचूर्णमारनालेन पाययेत् ॥
आमाशयोत्थवातघ्नं चूर्णं पेयं सुखाम्बुना ।
आमवातं निहन्त्याशु गृध्रसीमुद्धतामपि ॥

पुनर्नवा (साठी–बिसखपरा), गिलोय, सोंठ, सोया, बिधारा, शठी (कचूर) और मुण्डी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे काञ्जीके साथ पीनेसे आमाशयगत वायु, तथा उष्ण जलके साथ पीनेसे आमवात और कष्टसाध्य गृध्रसी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(३९७७) पुनर्नवादिचूर्णम् (२)

(ग. नि.; भै. र.[१]; वं. से.; वृ. नि. र.; यो. र.; वृ. मा. । शोथ.; वृ. यो. त. । त. १०६)

पुनर्नवामृतापाठादारुबिल्वं श्वदंष्ट्रिका ।
बृहत्यौ द्वे रजन्यौ द्वे पिप्पलीमूलचित्रकम् ॥
समभागानि सञ्चूर्ण्य गवांमूत्रेण वै पिबेत् ।
बहुप्रकारं श्वयथुं सर्वगात्रविसारिणम् ॥
हन्ति चाशूदराण्यष्टौ व्रणांश्चैवोद्धतानपि ॥

पुनर्नवा (साठी–बिसखपरा), गिलोय, पाठा, देवदारु, बेलछाल, गोखरु, दोनो कटेली, हल्दी, दारुहल्दी, पीपलामूल और चीता समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे समस्त शरीरपर फैला हुवा अनेक प्रकारका शोथ, आठों प्रकारके उदररोग और भयङ्कर व्रण (घाव) शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ।

---

१ भैषज्यरत्नावली में गिलोयकी जगह हर्र और पीपलामूलकी जगह पीपल तथा गजपीपल लिखा है एवं वासा अधिक है ।

(३९७८) पुनर्नवादिचूर्णम् (३)

(ग. नि. । उदर.)

पुनर्नवाशृङ्गवेरं देवदारु च भागिकाः ।
यवानी स्याद्विडङ्गं च चित्रकश्चार्द्धभागिकाः ॥
त्रिवृत्त्रिगुणितं चूर्णमुष्णेन पयसा पिबेत् ।
गोमूत्रेणाथवा प्लीहशोफार्शः पाण्डुरोगजित् ॥

पुनर्नवा (साठी–बिसखपरा), सोंठ और देवदारु १–१ भाग; अजवायन, बायबिड़ंग और चीता आधा आधा भाग; और निसोत ३ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जल या गोमूत्रके साथ पीनेसे तिल्ली, शोथ, अर्श, और पाण्डुरोग नष्ट होता है ।

पुनर्नवादिचूर्णम् (४)

(च. सं. । चि. अ. २६)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(३९७९) पुनर्नवादियोगः (१)

(वृ. नि. र. । गुल्म.)

श्वेतं पुनर्नवामूलं तुल्यं सैन्धवचूर्णितम् ।
सघृतं लेहयेद्गुल्मी क्षौद्रैर्वाथ जलोदरी ॥

सफेद पुनर्नवा (साठी–बिसखपरा) की जड़ और सेंधा नमक समान भाग मिलाकर चूर्ण बनावें ।

इसे घृतके साथ सेवन करनेसे गुल्म, और शहदके साथ सेवन करनेसे जलोदर नष्ट होता है ।

(मात्रा—१–१॥ माशा)

(३९८०) **पुनर्नवादियोगः** (२)

(ग. नि. । कासा.)

चूर्णं पुनर्नवारक्तशालितण्डुलशर्करम् ।
रक्तष्ठीवी पिबेत्सिद्धं द्राक्षारसपयोघृतैः ॥

पुनर्नवा (बिसखपरा–साठी) लाल चावल (साठीचावल) और खांड समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे द्राक्षा (अंगूर) के रस, घी और दूधके साथ सेवन करनेसे रक्तयुक्त (जिसमें खांसते समय मुंहसे रक्त निकलता हो वह) खांसी नष्ट होती है ।

(मात्रा—चूर्ण ६ माशे । घी १ तो. अंगूरका रस २ तोले और दूध १० तोले)

(३९८१) **पुनर्नवायोगः**

(वृ. मा.; वं. से.; ग. नि. । रसायन.)

पुनर्नवस्यार्द्धपलं नवस्य
पिष्टापिबेद्यः पयसार्द्धमासम् ।
मासद्वयं तत्रिगुणं समां वा
जीर्णोऽपि भूयः स पुनर्नवः स्यात् ॥

१५ दिन, २ महीने, ६ महीने या १ वर्ष तक पुनर्नवा (बिसखपरा–साठी) की २॥ तोले नवीन जड़को दूधके साथ पीसकर पीनेसे वृद्ध पुरुष का शरीर भी नवीन हो जाता है ।

(३९८२) **पुष्करमूलचूर्णम्** (१)

(वं. से.; ग. नि.; वृ. मा.; भै. र.; यो. र. । हृद्रोग.; वृ. यो. त. । त. ९९)

चूर्णं पुष्करजं लिह्यान्माक्षिकेण समायुतम् ।
हृच्छूलश्वासकासघ्नं क्षयहिक्कानिवारणम् ॥

पोखरमूलके चूर्णको शहदके साथ चाटनेसे हृदयका शूल, श्वास, खांसी, क्षय और हिक्का (हिचकी) नष्ट होती है ।

(मात्रा—१–१॥ माशा)

(३९८३) **पुष्करमूलचूर्णम्** (२)

(वै. म. र. । पटल १८)

क्षौद्रेण पौष्करं रेणुमेकविंशतिवासरान् ।
लिह्याच्च देहदौर्गन्ध्यं नश्येन्निःशेषमङ्गिनाम् ॥

२१ दिन तक पोखर मूलके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटने से शरीरकी दुर्गन्ध नष्ट हो जाती है ।

(३९८४) **पुष्करादिचूर्णम्**

(ग. नि.; भै. र.; वृ. मा. । बालरो.)

पुष्करातिविषाशृङ्गीमागधीधन्वयासकैः ।
तच्चूर्णं मधुना लीढं शिशूनां पञ्चकासनुत् ॥

पोखरमूल, अतीस, काकड़ासिंगी, पीपल और धमासा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी पांच प्रकारकी खांसी नष्ट होती है ।

(३९८५) **पुष्यानुगचूर्णम्**

(भै. र. । स्त्रीरो.; ग. नि. । चूर्णा.; र. र.; वृं. मा. । प्रदरा.; च. द.; असृग्द.; वा. भ. । उ. अ. ३४; च. सं. । चि. अ. ३० योनिरो.; वं. से.; यो. र.; वृ. नि. र. । स्त्रीरो.)

पाठाजम्ब्वाम्रयोर्मध्यं शिलाभेदं रसाञ्जनम् ।
अम्बष्ठकी मोचरसः समङ्गा पद्मकेशरम् ॥
वाह्लीकातिविषा मुस्तं विल्वं लोध्रं सगैरिकम् ।

कट्फलं मरिचं शुण्ठी मृद्वीका रक्तचन्दनम् ॥
कट्वङ्गवत्सकानन्ता धातकी मधुकार्जुनम् ।
पुष्येणोद्धृत्य तुल्यानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्॥
तानि क्षौद्रेण संयोज्य पाययेत्तण्डुलाम्बुना ।
असृग्दरातिसारेषु रक्तं यच्चोपवेश्यते ॥
दोषागन्तुकृता ये च बालानां तांश्च नाशयेत्।
योनिदोषं रजोदोषं श्वेतं नीलं सपीतकम् ॥
स्त्रीणां श्यावारुणं यच्च तत्प्रसह्य निवर्तयेत् ।
चूर्णं पुष्यानुगं नाम हितमात्रेयपूजितम् ॥
(अम्बष्ठा दक्षिणे ख्याता गृह्णन्त्यन्ये तु लक्ष-मणाम्)

पाठा, जामनकी गुठलीकी गिरी, आमकी गुठलीकी गिरी, पखानभेद, रसौत, अम्बष्ठकी, मोचरस, मजीठ, कमलकेसर, केसर, अतीस, नागरमोथा, बेलगिरी, लोध, गेरुमिट्टी, कायफल, कालीमिर्च, सोंठ, मुनक्का, लालचन्दन, सोनापाठा (श्योनाक—अरलु) की छाल, इन्द्रजौ, अनन्तमूल, धायके फूल, मुलैठी और अर्जुनकी छाल। सब चीजें पुष्य नक्षत्रमें एकत्रित करें और सबके समान भाग चूर्णको एकत्र मिला लें।

इसे शहदमें मिलाकर चाटकर ऊपर से तण्डुलोदक (चावलोंका पानी) पीनेसे स्त्रियोंका रक्तप्रदर, रक्तातिसार, योनिदोष, रजोदोष योनिमार्गसे सफेद, नीला, पीला, काला और लाल स्राव होना और प्रसूत रोग आदि नष्ट होते हैं।

नोट—इस योगमें अम्बष्ठा शब्दसे कुछ विद्वान तो दक्षिण देशमें इसी नामसे प्रसिद्ध ओषधि डालते हैं और कोई कोई आचार्य लक्ष्मणा लेते हैं।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

पूतीकरञ्जाद्यं चूर्णम्

(वं. से. । उदरा.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(३९८६) पूतीकाद्यं चूर्णम्

(वृ. नि. र. । अर्श.)

पूतिकं मुशली पथ्या भूनिम्बासितवत्सकम् ।
मसूराग्निकसिन्धूत्थदेवदालीसुचूर्णितम् ॥
तक्रेण पिबतस्तस्य तक्रश्चैव समश्नतः ।
मासात्पक्वफलानीव पतन्त्यर्शांसि वेगतः ॥

करञ्जफल, मूसली, हर्र, चिरायता, काले कुड़ेकी छाल, मसूर, चीता, सेंधा नमक और बिंडाल डोढा। समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे तक्रके साथ सेवन करने तथा आहार में भी तक्र ही लेनेसे १ मास में बवासीरके मस्से पके फलोंके समान गिर जाते हैं।

(३९८७) पृथ्वीकायोगः

(ग. नि.; च. द. । रक्तपि.)

लोहगन्धिनि निःश्वासे उद्गारे धूमगन्धिनि ।
पृथ्वीकां शाणमात्रां तु खादेद्द्विगुणशर्कराम्॥

यदि रक्तपित्त वाले रोगी के श्वासमें लोह की और उसकी उद्गार (डकार)में धुंवे की सी गन्ध आती हो तो उसे नित्य प्रति ५ माशे इलायचीके चूर्णमें १० माशे खांड मिलाकर खाना चाहिये।

(३९८८) **प्रसारिणीचूर्णम्**

(वै. म. र. । पटल ७)

जलेन नालिकेरस्य पिबेत्प्रातः प्रसारणीम् ।
मूत्रकृच्छ्रविनाशाय शर्करापातनाय च ॥

प्रातःकाल नारियलके पानीके साथ प्रसारणीका चूर्ण सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता और पथरी निकल जाती है ।

(३९८९) **प्रियङ्ग्वादिचूर्णम्** (१)

(वं. से. । बालरो.)

प्रियङ्गुस्वर्जिकासिन्धुमधुना लेहयेच्छिशुम् ।
क्षीरामयं निहन्त्याशु विडङ्गेन युतं कृमीन् ॥

फूलप्रियङ्गु, सज्जीखार और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ मिलाकर बालकको चटाने से दूधके दोषसे उत्पन्न हुवे विकार नष्ट हो जाते हैं ।

यदि इसमें १ भाग बायबिडंगका चूर्ण भी मिला लिया जाय तो उस के सेवनसे कृमि नष्ट हो जाते हैं ।

(३९९०) **प्रियङ्ग्वादिचूर्णम्** (२)

(ग. नि.; वृं. मा. । रक्तपि.; वृ. यो. त. । त. ७५)

वृषस्य स्वरसं कृत्वा द्रव्यैरेभिश्च योजयेत् ।
प्रियङ्गुमृत्तिकारोध्रमञ्जनं चावचूर्णयेत् ॥
तच्चूर्णं योजयेत्तत्र रसक्षौद्रसमन्वितम् ।
नासिकामुखपायुभ्यो योनिमेढ्राच्च वेगितम् ॥
प्रस्रवद्रक्तपित्तञ्च स्थापयत्येष योगराट् ।
यच्च शस्त्रक्षते रक्तं न तिष्ठेद्धितं पुनः ॥
तदप्यनेन योगेन तिष्ठत्याश्ववचूर्णितम् ॥

फूलप्रियङ्गु, काली मिट्टी, लोध और सुरमा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे १ दिन बासेके रसमें घोटें ।

इसे बासेके रस और शहदके साथ चाटने से नाक, मुंह, गुदा, योनि और मूत्रमार्ग से निकलने वाले रक्तपित्तका रक्त रुक जाता है ।

यदि शस्त्रादिके घावका रक्त बन्द न हो तो घावमें यह चूर्ण भरने से वह भी शीघ्र ही रुक जाता है ।

(३९९१) **प्रियङ्ग्वादिचूर्णम्** (३)

(भा. प्र. । व्रणचि.)

प्रियङ्गुधातकीपुष्पं यष्टीमधुजतूनि च ।
सूक्ष्मचूर्णीकृतानि स्यू रोपणान्यवधूलनात् ॥

फूलप्रियङ्गु, धायकेफूल, मुलैठी और लाख समान भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें ।

इसे लगाने से घाव भर जाते हैं ।

(३९९२) **प्रियङ्ग्वाद्यं चूर्णम्**

(वं से. । छर्दि.; वृ. नि. र.; वं. से.; ग. नि.; यो. र.; वृं. मा. । अतिसा.)

प्रियङ्ग्वञ्जनमुस्तानि पाययेत्तु यथाबलम् ।
तृष्णातिसारछर्दिघ्नं सक्षौद्रतण्डुलाम्बुना ॥

फूलप्रियंगु, सुरमा और नागरमोथा समान भाग लेकर चूर्ण करें ।

इसे शहदमें मिलाकर चाटकर ऊपरसे चावलोंका पानी पीने से तृष्णा, अतिसार और छर्दि नष्ट होती है ।

इति पकारादिचूर्णप्रकरणम् ।

अथ पकारादिगुटिकाप्रकरणम्

(३९९३) पञ्चकोलाद्या गुटिका

(ग. नि.; वृ. मा. । मुखरो.)

पञ्चकोलकतालीसपत्रैलामरिचत्वचः ।
पलाशमुष्ककक्षारौ यवक्षारश्च चूर्णितम् ॥
द्विगुणेन गुडेनैता गुटिकाः कोलमात्रकाः ।
सप्ताहं संस्थिता भव्ये तप्ते मुष्ककभस्मनि ॥
कण्ठरोगेषु सर्वेषु धार्याः स्युरमृतोपमाः ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, तालीसपत्र, तेजपात, इलायची, कालीमिर्च, दालचीनी, पलाशका क्षार, मुष्कक (मोखावृक्ष) का क्षार और यवक्षार बराबर बराबर लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे सबसे दो गुने गुड़ में मिलाकर बेरके बराबर गोलियां बनावें और उन्हें मुष्ककको गर्म राखमें दबा दें । सात दिन तक गरम राखमें रखनेके पश्चात् निकाल लें ।

इन्हें मुंहमें रखनेसे कण्ठरोग नष्ट होते हैं ।

पञ्चाननगुटी
पञ्चाननवटी
पञ्चानना वटी
पञ्चामृतवटी
} रसप्रकरणमें देखिये ।

(३९९४) पथ्यादिगुटिका (१)

(वा. भ. । चि. अ. ३०; वृ. यो. त. । त. ७८; वं. से. । कासा.)

पथ्याशुण्ठीघनगुडैर्गुटिकां धारयेन्मुखे ।
सर्वेषु श्वासकासेषु केवलं वा विभीतकम् ॥

हर्र, सोंठ और नागरमोथा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । इसे सबसे दो गुने गुड़में मिलाकर गोलियां बनालें ।

इन्हें अथवा केवल बहेड़ेको मुंह में रखनेसे समस्त प्रकारका श्वास और खांसी रोग नष्ट होता है ।

(३९९५) पथ्यादिगुटिका (२)

(वै. जी. । विला. ४)

पथ्यातिलारुष्करकैःसमांशै-
र्गुडेन युक्तैः खलुमोदकः स्यात् ।
दुर्नामपाण्डुज्वरकुष्ठकास-
श्वासं जयेत् प्लीहरुजं च तद्वत् ॥

हर्र, तिल और शुद्ध भिलावा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे सबसे दो गुने गुड़में मिलाकर गोलियां बना लें ।

ये गोलियां अर्श, पाण्डु, ज्वर, कुष्ठ, खांसी, श्वास और तिल्लीका नाश करती हैं ।

(मात्रा—१ तोले तक ।)

(३९९६) पथ्यादिमोदकः

(वृ. नि. र. । अर्श.)

पथ्याशुण्ठीकणावह्निप्रत्येकं चूर्णयेत्पलम् ।
त्वगेलापत्रकं चाथ प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ॥
गुडं दशपलं योज्यं कर्षं भुक्त्वाऽर्शसां जयेत् ॥

हर्र, सोंठ, पीपल और चीता ५-५ तोले

तथा दालचीनी, इलायची और तेजपात १।-१। तोला लेकर चूर्ण बनावें और उसे ५० तोले गुड़में मिलाकर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अर्श नष्ट होती है ।

(मात्रा--१। तोला ।)

(३९९७) **पथ्यावटकः**

(ग. नि. । परिशिष्ट गुटिका.; वं. से. । कुष्ठ.)

पथ्यां सेन्द्रयवां सकिंशुक
फलां सार्कां तथावर्तकीं ।
व्याधिघ्नेन तु योजितां हुत-
भुजासारुष्करां बाकुचीम् ॥
तद्वच्च क्रिमिशत्रुणाप्युपगतामेकैकवृद्धानिमान्।
गोमूत्रेण विमृद्य तुल्यतुबरान्कुष्ठी वटान् भक्षयेत्॥
निहन्ति हतनासिकाकरजकर्णपादाङ्गुलि-
क्षरद्रुधिरपूतिपूयपरिजग्धजन्तुव्रणान् ।
प्रभिन्नाचिरलक्षितस्वरमशेषकुष्ठं मह-
न्निहन्ति कुरुतेऽरुणार्कवपुषं नरं योगतः॥

हर्र १ भाग, इन्द्रजौ २ भाग, ढाक (पलाश) की छाल ३ भाग, त्रिफला ४ भाग, आक ५ भाग, मरोड़फली ६ भाग, अमलतास ७ भाग, चीता ८ भाग, शुद्ध भिलावा ९ भाग, बावची १० भाग और बायबिड़ंग ११ भाग लेकर सबका महीन चूर्ण करके उसे गोमूत्रमें घोटकर गोलियां बनालें ।

जिस कुष्ठीकी नाक, उंगली, कान और पैरोंकी उंगली आदि गिर गई हों तथा कोढ़ से दुर्गन्धित राध और रक्त निकलता हो और जिसके घावोंमें कृमि पड़ गये हों उसे इसके सेवनसे शीघ्र ही आराम हो कर शरीर बालसूर्यके समान दीप्तिमान हो जाता है ।

पलाशादिवटी
पानीयवटिका
पानीयवटिका
(सिद्ध फल)
पानीयभक्तवटिका
पानीयभक्तवटी
पारदगुटिका
पारदादिगुटिका
पारदादिगुटी
पारदादिवटी

} रसप्रकरणमें देखिये ।

पालङ्क्यादिगुटिका

(वै. म. र. । पट. १६)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

(३९९८) **पारावतपुरीषयोगः** (गुटिका)

(र. चं. । विसर्पाद्यधि.; यो. र. । स्नायु.)

पारावतपुरीषस्य मधुना कल्कितस्य च ।
गिलिता गुटिका हन्ति स्नायुकामयमुद्धतम् ॥

कबूतरकी बीटको शहदमें घोटकर (आधे आधे माशे की) गोलियां बनालें ।

इनके सेवनसे स्नायुक (नहरवा) रोग नष्ट होता है ।

(३९९९) **पिण्याकादिगुटिका**

(वै. म. र. । पटल ९)

पिण्याकसैन्धवपुनर्नवचूर्णभास्व-
त्साराजमूत्रपयसां समभागभाजाम् ।
हिङ्गूषणाज्यसहिता गुटिकाऽग्नितप्ता
गुल्मोदराग्निसदनारुचिशूलहन्त्री ॥

तिलकी खल, सेंधानमक, बिसखपरा (साठी-पुनर्नवा), हींग और कालीमिर्चका चूर्ण तथा आकका दूध, एवं बकरीका मूत्र और दूध तथा घी समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर गोलियां बनावें; और उन्हें अग्निपर सेकलें ।

इनके सेवनसे गुल्म, उदररोग, अग्निमांद्य, अरुचि और शूलका नाश होता है ।

(मात्रा—१ माशा ।)

(४०००) **पिप्पलीमोदकः**

(शा. ध. । ख. २ अ. ७; वै. र. । ज्वर.)

क्षौद्राद्द्विगुणितं सर्पिर्घृताद्द्विगुणपिप्पली ।
सिता द्विगुणिता तस्याः क्षीरं देयं चतुर्गुणम् ॥
चातुर्जातं क्षौद्रतुल्यं पक्त्वा कुर्याच्च मोदकान् ।
धातुस्थांश्च ज्वरान् सर्वान् श्वासं कासञ्च पाण्डुताम् ।
धातुक्षयं वह्निमान्द्यं पिप्पलीमोदको जयेत् ॥

शहद १ भाग, घी २ भाग, पीपलका चूर्ण ४ भाग, खांड ८ भाग, दूध १६ भाग और चातुर्जात (दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर) का चूर्ण १ भाग लेकर प्रथम पीपलको दूधमें पकावें जब खोया हो जाय तो उसमें घी डालकर उसे भूनें और फिर खांडकी चाशनी बनाकर उसमें यह खोया तथा चातुर्जातका चूर्ण मिला दें और उसके ठंडा होने पर उसमें शहद मिलाकर (१-१ तोलेके) मोदक बनालें ।

इनके सेवनसे धातुगत ज्वर, श्वास, खांसी, पाण्डु, धातुक्षय और अग्निमांद्य नष्ट होता है ।

(४००१) **पिप्पल्यादिक्षारगुटिका**

(ग. नि. । गुटि.)

पिप्पलीनामेककर्षं मरिचानां तथैव च ।
दाडिमस्य पलार्द्धं च गुडस्य च पलद्वयम् ॥
यवक्षारार्द्धकर्षञ्च गुटिकां कारयेद्भिषक् ।
मुखेन धारिता हन्ति कासश्वासगलामयान् ॥

पीपल १। तोला, काली मिर्च १। तोला, अनारदाना २॥ तोले, गुड़ १० तोले और जवाखार ७॥ माशे लेकर सब चीज़ोंके चूर्णको गुड़में मिलाकर गोलियां बनावें ।

इनमें से १-१ गोली मुंहमें रखकर उसका रस चूसनेसे खांसी, श्वास और गलेके रोग नष्ट होते हैं ।

(४००२) **पिप्पल्यादिगुटिका**

(वै. र.; यो. र.; वं. से.; वृ. नि. र.; । कासा.)

सपिप्पलीपुष्करमूलपथ्या
शुण्ठीशठीमुस्तकसूक्ष्मचूर्णैः ।
गुडेन युक्ता गुडिकाः प्रयोज्याः
श्वासेषु कासेषु च वर्द्धितेषु ॥

पीपल, पोखरमूल, हर्र, सोंठ, शठी (कचूर) और मोथे के समान भाग मिश्रित चूर्णको उससे दो गुने गुड़में मिलाकर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे प्रबल श्वास और खांसीका नाश होता है ।

(मात्रा—६ माशे । अनुपान—उष्णजल ।)

पिप्पल्यादिगुटिका

(यो. र.; वं. से.; यो. त. । नेत्र.)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

(४००३) **पियालादिमोदकः**

(ग. नि. । बालरो.)

पियालमज्जामधुकमधुलाजासितोपलैः ।
अपस्तन्यस्य संयोज्यः प्रीणनो मोदकः शिशोः ॥

चिरौंजी, मुलैठी, शहद, धानकी खील और मिश्री समान भाग लेकर शहदके अतिरिक्त अन्य सब चीजोंका चूर्ण करके उसे शहदमें मिलाकर गोलियां बनालें ।

इनके सेवनसे बालक पुष्ट होते हैं ।

प्रकाशिका गुटिका

(ग. नि. । नेत्ररो.)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

प्रचेतानामगुटिका

(यो. चि. म. । अ. ३)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

प्रभाकरः
प्रभावतीगुटिका } रसप्रकरणमें देखिये ।

प्रभावतीगुटिका

(ग. नि. । नेत्ररो.)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये ।

(४००४) **प्रभावती वटिका**

(ग. नि. । परिशिष्ट गुटिका.)

हरिद्रा निम्बपत्राणि पिप्पल्यो मरिचानि च ।
भद्रमुस्ता विडङ्गानि सप्तमं विश्वभेषजम् ॥
सैन्धवं चित्रकश्चैव कुष्ठं पाठा हरीतकी ।
एतानि समभागानि छागमूत्रेण पेषयेत् ॥
कोलास्थिका गुटी छायाशुष्का नाम्ना प्रभावती ॥

हल्दी, नीमके पत्ते, पीपल, काली मिर्च, नागरमोथा, बायबिडंग, सोंठ, सेंधा नमक, चीता, कूठ, पाठा और हर्रका चूर्ण समान भाग लेकर सबको बकरीके मूत्रमें पीसकर जंगली बेरके समान गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें ।

टिप्पणी योग चिन्तामणिमें—बाबची, पित्त-पापड़ा, और बच । यह द्रव्य अधिक लिखे हैं तथा बकरीके मूत्रमें पीसते हुवे १—१ करके १०८ चमेलीके फूल डालनेके लिये लिखा है । तथा गुटिका बनानेके लिए सबसे २ गुना गुड़ डालना भी लिखा है ।

गुण इस प्रकार लिखे हैं—इनके सेवनसे वात व्याधि, हर्षवात, १८ प्रकारके गुल्म, २० प्रकार के प्रमेह, हृद्रोग, कुष्ठ, शूल, गलग्रह, श्वास, ग्रहणी, पाण्डु, अग्निमांद्य और अरुचिका नाश होता है ।

प्रभावतीवटी

रसप्रकरणमें देखिये ।

(४००५) **प्राणदागुटिका**

(भै. र.; वं. से.; वृं. मा.; च. द. । अर्श.; ग. नि. । गुटिका.)

त्रिपलं शृङ्गवेरस्य चतुष्कं मरिचस्य च ।
पिप्पल्याः कुडवार्द्धश्च चव्यश्च पलमेव च ॥
तालीसपत्रस्य पलं पलार्द्धं केसरस्य च ।
द्वे पले पिप्पलीमूलादर्द्धं कर्षश्च पत्रकात् ॥
सूक्ष्मैला कर्षमेकञ्च कर्षं त्वक्मृणालयोः ।
गुडात्पलानि त्रिंशच्च चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥

**तोलार्द्धमाना गुटिका प्राणदेति प्रकीर्तिता ।
पूर्वं भक्ष्या च पश्चाच्च भोजनस्य यथाबलम् ॥
हन्यादर्शांसि सर्वाणि सहजान्यस्रजान्यपि ।
वातपित्तकफोत्थानि सन्निपातोद्भवानि च ॥
पानात्यये मूत्रकृच्छ्रे वातरोगे गलग्रहे ।
विषमज्वरे च मन्देऽग्नौ पाण्डुरोगे तथैव च ॥
कृमिहृद्रोगिणाञ्चैव गुल्मशूलार्तिनां तथा ।
श्वासकासपरीतानामेषा स्यादमृतोपमा ॥
शुण्ठ्याः स्थानेऽभया देया विड्ग्रहे पित्तपायुजे।
प्राणदेयं सिता देया चूर्णमानाच्चतुर्गुणा ॥
अम्लपित्ताग्निमान्द्यादौ प्रयोज्या गुदजातुरे ।
पक्त्वैनं गुडिकाः कार्या गुडेन सितयाऽथवा ॥
परं हि वह्निसंसर्गाल्लघिमानं भजन्ति ताः ॥**

सोंठ ३ पल, कालीमिर्च ४ पल, पीपल, २ पल, चव १ पल, तालीसपत्र १ पल, नागकेसर आधा पल, पिप्पलीमूल २ पल (१० तोले) तेजपात आधाकर्ष, छोटी इलायची १ कर्ष (१। तोला), दालचीनी आधाकर्ष और गुड़ ३० पल (१५० तोले) लेकर गुड़की चाशनीमें अन्य समस्त ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर ६-६ माशे की गोलियां बनालें ।

इन्हें भोजनके पूर्व तथा पश्चात् खाना चाहिये ।

इनके सेवनसे वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज अर्श तथा रक्तार्श और सहजार्श नष्ट होती है।

यह वटी पानात्यय, मूत्रकृच्छ्र, वातरोग, गलग्रह, विषमज्वर, मन्दाग्नि, पाण्डु, कृमि, हृद्रोग, गुल्म, शूल, श्वास और खांसी से पीड़ित रोगियोंके लिये अमृतके समान गुणकारी है ।

यदि अर्शके साथ मलावरोध भी हो तो इस योगमें सोंठ के स्थान में हर्र डालनी चाहिये और यदि पित्तार्श में सेवन करना हो तो गुड़के स्थान में समस्त चूर्णसे ४ गुनी खांड डालनी चाहिये । गोलियां गुड़ या खांडकी चाशनी बनाकर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर बनानी चाहियें क्यों कि अग्निके संयोगसे ये लघु हो जाती हैं ।

यह गुटिका अम्लपित्त और अग्निमांद्यादिमें भी उपयोगी हैं ।

(४००६) प्राणप्रदो मोदकः

(वृ. यो. त.। त. ६९; वृ. नि. र.; यो. र.। अर्श.)

**तालीसज्वलनोषणाः सचविकास्तुल्या द्विभागा भवे-
त्कृष्णा मूलसमन्विता त्रिपलिका शुण्ठी चतुर्जातकम् ॥
स्यान्मुष्टिप्रमितं गुडस्त्रिगुणितैरेभिः कृता मोदकाः
कासश्वासमदाग्निमान्द्यगुदजप्लीहप्रमेहापहाः॥**

तालीसपत्र, चीता, कालीमिर्च, और चव एक एक भाग, पीपल और पीपलामूल २-२ भाग, सोंठ ३ भाग और चातुर्जात (दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर) १ भाग लेकर सबके चूर्णको उससे ३ गुने गुड़में मिलाकर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे खांसी, श्वास, मद, अग्निमांद्य, अर्श, तिल्ली और प्रमेह नष्ट होता है ।

(मात्रा-६ माशे । अनुपान उष्ण जल ।)

(४००७) **प्लीहारिवटिका**

(आ. वे. वि. । चि. अ. ६)

कासीसञ्च सहासारं रसोनञ्चाप्यकञ्चुकम् ।
सर्वं सम्मर्द्य वटिकामर्द्धमाषप्रमाणिकाम् ॥
रचयित्वाऽथ संशोष्य योजयेत् प्लीहरोगिणे ।
प्लीहानं नाशयेदेषा गुल्मञ्चापि सुदारुणम् ॥

कसीस, एलवा (मुसब्बर) और छिला हुवा लहसन समान भाग लेकर सबको एकत्र कूटकर आधे आधे माशे की गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे तिल्ली और कष्टसाध्य गुल्म नष्ट हो जाता है ।

(अनुपान—उष्ण जल ।)

प्लीहारिवटिका

(भै. र.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

इति पकारादिगुटिकाप्रकरणम् ।

अथ पकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

(४००८) **पक्षाघातारिगुग्गुलुः**

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

कृष्णाजटानागरचव्यवह्नि--
पाठाविडङ्गेन्द्रयवैः समांशै ।
हिङ्गूग्रगन्धाद्विजयष्टिकौन्ती
मातङ्गकृष्णातिविषान्वितश्च ॥
ससर्षपाजाजियुगाजमोदा--
न्वितैः समस्तैस्त्रिफला द्विभागा ।
एभिः समो गुग्गुलुराजमिश्रो
भुक्तो हरेत्पक्षभवानिलार्तिम् ॥

पीपलामूल, सोंठ, चव, चीता, पाठा, बायबिडंग, इन्द्रजौ, हींग, बच, भरंगी, रेणुका, गजपीपल, अतीस, सरसों, दोनो जीरे और अजमोद एक एक भाग तथा त्रिफला इन सबसे दो गुना लेकर चूर्ण बनावें और फिर इसमें सबके बराबर शुद्ध गूगल मिलाकर थोड़ा थोड़ा घी डालकर खूब कूटें ।

इसके सेवनसे पक्षाघात नष्ट होता है ।

(मात्रा—१॥ माशा । अनुपान उष्ण जल ।)

(४००९) **पञ्चतिक्तघृतगुग्गुलुः**

(भै. र.; च. द. । कुष्ठा.)

निम्बामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानाम्
भागान् पृथक् दशपलान् पचेद्घटेऽपाम् ।
अष्टांशशेषितरसेन सुनिश्चितेन
प्रस्थं घृतस्य विपचेत्पिचुभागकल्कैः ॥
पाठाविडङ्गसुरदारुगजोपकुल्या--
द्विक्षारनागरनिशामिशिचव्यकुष्ठैः ।

तेजोवतीमरिचवत्सकदीप्यकाग्नि-
रोहिण्यरुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥
मञ्जिष्ठयातिविषया वरया यमान्या
संशुद्धगुग्गुलुपलैरपि पञ्चसंख्यैः ।
तत्सेवितं विषमातिप्रबलं समीरम्
सन्ध्यस्थिमज्जगतमप्यथ कुष्ठमीदृक् ॥
नाडीव्रणार्बुदभगन्दरगण्डमाला-
जत्रूर्द्ध्वसर्वगदगुल्मगुदोत्थमेहान् ।
यक्ष्मारुचिश्वसनपीनसकासशोष-
हृत्पाण्डुरोगगलविद्रधिवातरक्तम् ॥

नीमकी छाल, गिलोय, बासा, पटोल और कटेली १०-१० पल (हरेक ५० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छान लें और एक पोटलीमें २५ तोले शुद्ध गूगल बांधकर इस क्वाथमें डाल दें और फिर इसमें २ सेर घी और निम्न लिखित ओषधियोंका कल्क मिलाकर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो घृतको छान लें और उसमें उपरोक्त पोटलीवाला गूगल मिला दें ।

कल्क—पाठा, बायबिडंग, देवदारु, गजपीपल, जवाखार, सज्जीखार, सोंठ, हल्दी, सोया, चव, कूठ, मालकंगनी, कालीमिर्च, इन्द्रजौ, जीरा, चीता, कुटकी, शुद्ध भिलावा, बच, पीपलामूल, मजीठ, अतीस, हर्र, बहेड़ा, आमला और अजवायन । प्रत्येक १।-१। तोला ।

इसके सेवनसे सन्धि अस्थि और मज्जागत कष्टसाध्य प्रबल वायु, कुष्ठ, नाड़ीव्रण (नासूर), अर्बुद, भगन्दर, गण्डमाला, ऊर्ध्वजत्रुगत समस्त रोग, गुल्म, अर्श, प्रमेह, यक्ष्मा, अरुचि, श्वास, खांसी, पीनस, शोष, हृद्रोग, पाण्डु, गलविद्रधि और वातरक्तका नाश होता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४०१०) पथ्यादिगुग्गुलुः (१)

(वृ. मा. । श्लीपदा.)

मूत्रेण पथ्या सुरदारु विश्वं
सगुग्गुलु श्लीपदिभिर्निषेव्यम् ॥

हर्र, देवदारु और सोंठके चूर्णको सबके बराबर शुद्ध गूगलमें मिलाकर कूटें ।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे श्लीपद रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—१-१॥ माशा ।)

(४०११) पथ्यादिगुग्गुलुः (२)

(वं. से.; वै. र.; भा. प्र.; वृ. नि. र. । वातव्याधि.)

पथ्याविभीतामलकीफलानां
शतं क्रमेण द्विगुणाभिवृद्धम् ।
प्रस्थेन युक्तश्च पलङ्कषाणां
द्रोणे जले संस्थितमेकरात्रम् ॥
अर्द्धावशेषं क्वथितं कषायं
भाण्डे पचेत्तत्पुनरेव लोहे ।
अमूनि पश्चादवतार्य दद्याद्
द्रव्याणि सञ्चूर्ण्य पलार्द्धकानि ॥
विडङ्गदन्तीत्रिफलागुडूची-
कृष्णात्रिवृन्नागरसोषणानि ।

यथेष्टचेष्टस्य नरस्य शीघ्रं
हिमाम्बु पानान्न च भोजनानि ॥
निषेव्यमानो विनिहन्ति रोगान्
सगृध्रसीं नूतनखञ्जताञ्च ।
प्लीहानमुग्रं जठराणि गुल्मं
पाण्डुत्वकण्डूवमिवातरक्तम् ॥
पथ्यादिगुग्गुलुरेष नाम्ना
ख्यातः क्षितौ चाप्रमितप्रभावः ।
बलेन नागेन समं मनुष्यं
जवेन कुर्यात्तुरगेन तुल्यम् ॥
आयुःप्रकर्षं विदधाति सद्यः
चक्षुर्बलं पुष्टिकरो विषघ्नः ।
क्षतस्य सन्धानकरो विशेषात्
रोगेषु शस्तः सकलेषु चैव ॥

हर्र १००, बहेड़े २००, और आमले ४०० नग तथा गूगल १ सेर (८० तोले) लेकर गूगलके सिवाय बाकी सब चीज़ोंको अधकुटी करके ३२ सेर पानीमें भिगो दें और २४ घण्टे बाद उसे पकाकर आधा पानी शेष रहने पर छान लें । इस छने हुवे क्वाथको दुबारा लोहेकी कढ़ाई में पकावें और इस बार इसमें वह गूगल भी डाल दें । जब पानी गाढ़ा हो जाय तो उसे आगसे नीचे उतारकर उसमें बायबिड़ंग, दन्ती, हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, पीपल, निसोत, सोंठ और काली मिर्चका २॥-२॥ तोले चूर्ण मिलावें ।

इसके सेवनसे गृध्रसी, नवीन खञ्जवात, कष्टसाध्य प्लीहा, उदर-रोग, गुल्म, पाण्डु, खुजली, छर्दि और वातरक्त आदि रोग नष्ट होते हैं; शरीर में हाथीके समान बल आ जाता है; और चाल घोड़ेके समान तीव्र हो जाती है ।

यह आयुष्य-वर्द्धक, पौष्टिक, और विषघ्न है। आंखोंके बलको बढ़ाता है । एवं घावोंको भरनेमें विशेष उपयोगी है । (मात्रा ३ माशे ।)

इसके सेवनकालमें शीतल जल पीना और शीतल आहार खाना चाहिये ।

(४०१२) **पुनर्नवागुग्गुलुः**

(भै. र.; वं. से.; भा. प्र. । वातरक्त.; वृ. यो. त. । त. ९१)

पुनर्नवामूलशतं विशुद्धं
रुबूकमूलञ्च तथा प्रयोज्यम् ।
दत्वा पलं षोडशकञ्च शुण्ठ्याः
सङ्कुट्य सम्यग्विपचेद् घटेऽपाम् ॥
पलानि चाष्टादश कौशिकस्य
तेनाष्टशेषेण पुनः पचेत्तु ।
एरण्डतैलं कुडवञ्च दद्यात्
तथा त्रिवृच्चूर्णपलानि पञ्च ॥
निकुम्भचूर्णस्य पलं गुडूच्याः
पलद्वयं च द्विपलं प्रतिह ।
फलत्रयं त्र्यूषणचित्रकाणि
सिन्धूत्थभल्लातविडङ्गकानि ॥
कर्षं तथा माक्षिकधातु चूर्णं
पुनर्नवायाः पलमेव चूर्णम् ।
चूर्णानि दत्त्वा ह्यवतार्य शीते
खादेन्नरो माषत्रयप्रमाणम् ॥
वातासृजं वृद्धिगदञ्च सप्त
जयत्यवश्यं त्वथ गृध्रसीञ्च ।
जङ्घोरुपृष्ठत्रिकवस्तिजञ्च
तथामवातं प्रबलञ्च शीघ्रम् ॥

पुनर्नवा और अरण्डकी जड़ १००-१०० पल तथा सोंठ १६ पल (८० तोले) लेकर सबको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो उसको छानकर उसमें १८ पल (९० तोले) शुद्ध गूगल मिलाकर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें ४० तोले अरण्डका तैल एवं २५ तोले निसोत, ५ तोले दन्तीमूल, १० तोले गिलोय, और ५-५ तोले हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, सेंधानमक, शुद्ध भिलावा और बायबिडंग एवं १। तोला सोनामक्खी-भस्म और ५ तोले पुनर्नवाका चूर्ण मिलावें।

इसके सेवनसे वातरक्त, वृद्धिरोग, गृध्रसी, जंघा ऊरु पृष्ठ त्रिकस्थान और बस्तिगत शूल तथा प्रबल आमवातका अवश्य नाश हो जाता है। मात्रा-३ माशे।

(४०१३) पुनर्नवादिगुग्गुलुः

(भै. र. शोथा.)

पुनर्नवादार्वभयागुडूचीं
पिबेत्समूत्रां महिषाक्षयुक्ताम्।
त्वग्दोषशोथोदरपाण्डुरोग-
स्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु ॥

पुनर्नवा (साठी), देवदारु, हर्र और गिलोय का चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर लेकर सबको (थोड़ासा अरण्डका तेल डालकर) कूटें।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करने से त्वग्दोष, शोथोदर, पाण्डु, स्थौल्य, कफप्रसेक तथा ऊर्ध्वजत्रुगत कफज रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा—३ माशे।)

इति पकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्।

अथ पकाराद्यवलेहप्रकरणम्

(४०१४) पञ्चजीरकगुडः

(र. र. । सूतिका.; ग. नि. । लेहा.; भै. र.; च. द. । स्त्रीरो.)

जीरकं हपुषा धान्यं शताह्वा बदराणि+ च।
यमानी राजिका[1] हिङ्गुपत्रिका कासमर्दकम्[2] ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलमजमोदाऽथ वाष्पिका।
चित्रकश्च पलांशानि तथा धान्यं[3] चतुष्पलम् ॥
कशेरुकं नागरं च कुष्ठं[4] दीप्यकमेव[5] च।
गुडस्य च शतं[6] दद्याद् घृतप्रस्थं तथैव च ॥
क्षीरद्विप्रस्थसंयुक्तं शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।

+ सुरदारुच १—मेथिका २...कामवृक्षकम् ३—तथा चैव ४—कृष्णा।४—यष्टी ५—जीरकमेव ६—गुडस्यार्द्धशतं } पाठान्तराणि।

पञ्चजीरक इत्येष सूतिकानां प्रशस्यते ॥
गर्भार्थिनीनां नारीणां प्रदुष्टे चैव मारुते ।
विंशतिर्व्यापदो योनेः कासं श्वासं स्वरक्षयम् ॥
हलीमकं पाण्डुरोगं दौर्गन्ध्यं कृच्छ्रमूत्रताम् ।
हन्ति पीनोन्नतकुचाः पद्मपत्रायतेक्षणाः ॥
उपयोगात्स्त्रियो नित्यमलक्ष्मीकलिवर्जिताः ॥

जीरा, हाऊबेर, धनिया, सोया, बेर, अजवायन, राई, हिङ्गपत्री, कसौंदी, पीपल, पीपलामूल, अजमोद, कालाजीरा और चीता ५–५ तोले तथा धनिया, कसेरु, सोंठ, कूठ और अजमोद २०–२० तोले लेकर चूर्ण बनावें । तत्पश्चात् १०० पल (६। सेर) गुड़को ४ सेर दूधमें घोलकर उसमें २ सेर घी डालकर पकावें । जब चाशनी तैयार हो जाय तो उसमें उपरोक्त चूर्ण मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रक्खें ।

यह गुड़ प्रसूता तथा गर्भार्थिनी स्त्रियोंके लिये हितकारी है ।

इसके सेवनसे वातव्याधि, २० प्रकारके योनिरोग, खांसी, श्वास, स्वरक्षय, हलीमक, पाण्डुरोग, शरीरकी दुर्गन्धि और मूत्रकृच्छ्र आदि रोग नष्ट होते तथा कान्तिकी वृद्धि होती है ।

(मात्रा—१॥ तोला ।)

(४०१५) **पञ्चजीरकपाकः**

(यो. र.; भा. प्र.; वृ. नि. र. । सूतिका.)

जीरकं स्थूलजीरश्च शतपुष्पा द्वयं तथा ।
यवानी चाजमोदा च धान्यकं मेथिकापि च ॥
शुण्ठी कृष्णा कणामूलं चित्रकं हपुषाऽपि च ।
विदारीफलचूर्णन्तु कुष्ठं कम्पिल्लकं तथा ॥
एतानि पलमात्राणि गुडं पलशतं मतम् ।
क्षीरं प्रस्थद्वयं दद्यात्सर्पिषः कुडवं तथा ॥
पञ्चजीरकपाकोऽयं प्रसूतानां प्रशस्यते ।
युज्यते सूतिकारोगे योनिरोगे ज्वरे क्षये ॥
कासे श्वासे पाण्डुरोगे कार्श्ये वातामयेषु च ॥

जीरा, कलौंजी, सोया, सैांफ, अजवायन, अजमोद, धनिया, मेथी, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चीता, हाऊबेर, बिदारीकन्द, त्रिफला, कूठ और कमीला ५–५ तोले लेकर चूर्ण बनावें । तत्पश्चात् १०० पल (६। सेर) गुड़को ४ सेर दूधमें घोलकर उसमें ४० तोले घी मिलाकर पकावें । जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें उपरोक्त चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

यह 'पञ्चजीरक पाक' प्रसूता स्त्रियोंके लिये हितकारी है । इसके सेवनसे प्रसूतरोग, योनिरोग, ज्वर, क्षय, खांसी, श्वास, पाण्डुरोग, कृशता और वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—१॥ तोला ।)

(४०१६) **पटोलाद्यवलेहः**

(वं. से. । अर्श.; ग. नि. । लेहा.)

पटोलमूलं त्रिफलां विशालां[1] चतुरङ्गुलम् ।
नीलिनीं त्रिवृतां दन्तीं कृमिघ्नं सपुनर्नवाम् ॥
कटुकां सातलां लोध्रं भागान्दशपलोन्मितान् ।
दत्त्वा द्रोणचतुष्कन्तु सलिलं पादशेषितम् ॥
तैलस्य कुडवं तत्र गुडस्य तु तुलां पचेत् ।
त्रिवृच्चूर्णं पलान्यष्टौ लेहवत्साधुसाधयेत् ॥
शीतीभूते न्यसेत्तत्र व्योषं पञ्चपलोन्मितम् ।
पलत्रयं त्रिजातस्य दत्त्वा सङ्घट्टयेत्पुनः ॥

१—गदनिग्रहमें विशालाके स्थानमें रजनी पाठ है ।

ततो यथाबलं खादेत्पलार्द्धं पिचुमेव वा ।
नाहारे यन्त्रणा काचिन्न विहारे तथैव च ॥
विबन्धाध्मानगुल्मार्शः पाण्डुरोगकफक्रमीन् ।
कुष्ठमेहारुचिं हन्ति ह्यन्त्रवृद्धिषु शस्यते ॥

पटोलकी जड़, त्रिफला, इन्द्रायन--मूल, (पाठभेदके अनुसार हल्दी), बड़ा अमलतास (धनबहेड़ा), नीलवृक्ष, निसोत, दन्ती-मूल, बायबिड़ंग, पुनर्नवा (साठी---बिसखपरा), कुटकी, सातला और लोध १० १० पल (हरेक ५० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके १२८ सेर पानी में पकावें । जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें ४० तोले तिलका तैल और १०० पल (६। सेर) गुड़ मिलाकर पुनः पकावें । जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें निसोतका चूर्ण ४० तोले मिला दें और फिर अग्निसे नीचे उतार लें । जब ठण्डा हो जाय तो उसमें त्रिकुटाका चूर्ण २५ तोले तथा दालचीनी, इलायची और तेजपातका चूर्ण ५--५ तोले मिला दें ।

इसे १। तोले से २॥ तोले तककी मात्रानुसार सेवन करनेसे विबन्ध, अफारा, गुल्म, अर्श, पाण्डुरोग, कफजकृमि, प्रमेह, अरुचि और अन्त्र-वृद्धि आदि रोग नष्ट होते हैं ।

(४०१७) **पथ्यादिगुडः**

(वृ. नि. र. । अर्शो.)

द्वात्रिंशत्पलपथ्यानां तदर्धामलकीफलम् ।
कपित्थं स्याद्दशपलं विशाला पलपञ्चकम् ॥
विडङ्गं पिप्पली लोध्रं मरिचं सैन्धवालुकम् ।
द्विपलांशं तु प्रत्येकं जलं द्रोणचतुष्टयम् ॥
क्वाथं पादावशेषन्तु शीतीभूते क्षिपेद् गुडम् ।
पलानां द्विशतञ्चैव धातुकी पलपञ्चकम् ॥
घृतभाण्डे स्थिते तस्मिन्यथाशक्तिपिबेत्ततः ।
अर्शांसि ग्रहणीपाण्डुहृद्रोगप्लीहगुल्मनुत् ॥
मन्दाग्निं चोदरं शोथं कुष्ठघ्नं परमौषधम् ॥

हर्र ३२ पल, आमला १६ पल, कैथका गूदा १० पल, इन्द्रायणमूल ५ पल, बायबिड़ंग, पीपल, लोध, कालीमिर्च, सेंधानमक और आलु २--२ पल (१०--१० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके चार द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें । जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे उतारकर छान लें एवं ठण्डा होनेपर उसमें २०० पल (१२॥ सेर) गुड़ और ५ पल (२५ तोले) धायके फूलोंका चूर्ण मिलाकर चिकने बर-तनमें भरकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अर्श, संग्रहणी, पाण्डु, हृद्रोग, प्लीहा (तिल्ली), गुल्म, अग्निमांद्य, उदररोग, शोथ और कुष्ठ नष्ट होता है।

(नोट--उपरोक्त विधिसे बने हुवे अवलेहके शीघ्र ही बिगड़ जानेकी अधिक सम्भावना है अत एव यदि गुड़ मिलाकर पुनः गाढ़ा करनेके बाद धायके फूल मिलाए जाएं तो अच्छा है ।)

(४०१८) **पथ्याद्यवलेहः**

(भा. प्र. । ज्वर.)

पथ्यां तैलघृतक्षौद्रैर्लिहन्दाहज्वरापहाम् ।
कासासृक्पित्तवीसर्पश्वासान्हन्ति वमीमपि ॥

हर्रको पीसकर तेल, घी, और शहदमें मिलाकर चाटनेसे दाह, ज्वर, खांसी, रक्तपित्त, वीसर्प, श्वास और वमनका नाश होता है ।

(हर्रका चूर्ण ३ माशे, घी ३ माशे, तैल ३ माशे, शहद १ तोला)

(४०१९) **पथ्यावलेहः**

(ग. नि. । लेहा.; वृं. मा. । अर्शो.)

श्यामागुडूच्यामलकचित्रकाणां
भागान् पलानां शतसम्मितांश्च ।
सर्वान् पृथक् सम्परिकल्प्य युक्त्या
द्रोणद्वयेऽपां तु विपाच्य पात्रे ॥
लौहे दृढे मन्दहुताशने च
पादावशिष्टं विधिवद्विधिज्ञः ।
भूयः पचेत्तं तुलया गुडस्य
शुक्लेन वस्त्रेण विशोधितस्य ॥
चूर्णीकृतैर्जीरकयुग्मदन्ती
पाठात्रिवृत्त्र्यूषणग्रन्थिकाद्यैः ।
धान्याजमोदेभकणायवानी
भल्लातकाख्यैश्च पलप्रमाणैः ॥
प्रस्थत्रयेणाथ हरीतकीना–
मैकध्यमालोड्य शनैस्तु दर्व्या ।
ज्ञात्वा सुपक्वं रसगन्धवर्णैः
कुम्भे निदध्यात्त्रिसुगन्धियुक्तम् ॥
प्रस्थार्द्धयुक्तं मधुनोऽत्र शीते
भल्लातकास्थिप्रभवाच्च तैलात् ।
दत्त्वा पलार्द्धं यावशूकजस्य
चाष्टौ पलान्येव सितोपलायाः ॥
एनं लिहेदक्षफलप्रमाण–
मर्शोविकारी प्रसमीक्ष्य वह्निम् ।
कुष्ठानि सर्वाणि निहन्ति हिक्कां
श्वासञ्च कासारुचिपाण्डुरोगान् ॥
मन्दानलत्वं ग्रहणीविकारान्
गुल्मान्सशोफानुदरामयांश्च ।
शूलानि यक्ष्माणमसृक्प्रवृत्तिं
पथ्याऽवलेहोऽयमिति प्रदिष्टः ॥

निसोत, गिलोय, आमला और चीता १००, १०० पल (हरेक ६। सेर) लेकर सबको पृथक् पृथक् कूटकर २--२ द्रोण (६४–६४ सेर) पानीमें पृथक् पृथक् लोहपात्रमें मन्दाग्नि पर पकावें । जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो छानकर सब क्वाथों को एक जगह मिला लें और फिर उसमें १०० पल (६। सेर) गुड़ मिलाकर सफेद वस्त्रमें छानकर उसे पुनः पकावें । जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें जीरा, कालाजीरा, दन्तीमूल, पाठा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, धनिया, अजमोद, गजपीपल, अजवायन और शुद्ध भिलावेका चूर्ण ५, ५ तोले तथा ३ प्रस्थ (३ सेर) हर्रका चूर्ण मिलाएं । एवं शीतल होने पर उसमें दालचीनी, तेजपात और इलायचीका समभाग मिश्रित (५ तोले) चूर्ण तथा १ सेर शहद और २॥ तोले भिलावे के बीजोंका तैल एवं २॥ तोले जवाखार और ४० तोले खांड मिलाकर रक्खें ।

इसमें से नित्य प्रति बहेड़ेके फलके बराबर (१ तोला) या अग्निबलानुसार न्यूनाधिक मात्रामें सेवन करनेसे अर्श, कुष्ठ, हिचकी, श्वास, खांसी, अरुचि, पाण्डु, अग्निमांद्य, ग्रहणी, गुल्म, शोथ, उदररोग, शूल, यक्ष्मा और रक्तस्रावका नाश होता है ।

(४०२०) **पद्मकादिलेहः**

(ग. नि.। कासा.; च. सं.। चि. अ. २२ कासा.)

पद्मकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं सुरदारु च।
बला रास्ना च तुल्यानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्॥
सर्वैरेभिः समैर्भागैः पृथक् क्षौद्रं घृतं सिता।
लिह्याल्लेहं विमथ्यैतत्सर्वकासहरं शिवम्॥

पद्माक, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, देवदारु, खरैटी और रास्ना समान भाग लेकर चूर्ण बनावें फिर इस सब चूर्णके बराबर शहद तथा इतना इतना ही घी और खांड लेकर सबको एकत्र मिलाकर मथलें।

इसके सेवन से हर प्रकारकी खांसी नष्ट होती है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०२१) **पद्मकेसरयोगः**

(वृ. नि. र.। अर्श.)

सपद्मकेसरक्षौद्रनवनीतं नवं लिहन्।
सिताकेसरसंयुक्तं रक्तार्शी सुसुखी भवेत्॥

कमलकेसर, मधु, नवनीत (नौनी घी), मिश्री और नागकेसर के चूर्णको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे रक्तार्श नष्ट होती है।

(४०२२) **पलाशवृन्तयोगः**

(ग. नि.। रक्तपि.)

पलाशवृन्तस्वरसं प्रपीड्य विधिवच्छृतम्।
तल्लिह्यान्मधुसंयुक्तं रक्तपित्तनिवारणम्॥

पलाशके डण्ठलोंके स्वरस को अग्निपर गाढ़ा करके उसमें शहद मिलाकर पीनेसे रक्तपित्त नष्ट होता है।

(४०२३) **पाचकावलेहः**

(रसायनसार। ज्वरा.)

सेटोन्मिते निम्बुरसे मदद्यात्
तदर्धशम्पाकमहर्द्वयं द्रः।
पटेन शुद्धेन ततः प्रगाल्य
ददीत चूर्णं दशकस्य चास्य॥
तनुत्वचानागरवेल्लकृष्णा—
वाह्नी वयःस्था द्वयकर्षभागाः।
सिन्धूद्भवं शूलह कृष्णवीजं
श्वेतं नवं जीरकमक्षकर्षाः॥
आज्येन भृष्टे ननु हिङ्गुजीरे
नदीरजः स्वेव च कृष्णवीजम्।
सङ्कुट्य सर्वं पटगालितञ्च
विनीय लेहं निदधीत पात्रे।
मन्दाग्निमालस्यमपाकरोति
करोति शुद्धिं जठरस्य पुंसाम्
स्वादिष्टवर्यो ननु लेहराजो
रुचिप्रदो भोजनसन्निधाने॥
पञ्चकर्षा यदि द्राक्षा तावानेव रसो भवेत्।
पक्वदाडिमवीजानां स्वादुः सौम्यश्च जायते॥

अर्थ—नीबूके १ सेर रसमें आधसेर अमलतासकी फलियोंको कूटकर डाल दें, दो दिन तक भीगने के बाद धुले हुवे वस्त्रमें डाल कर हिला हिलाकर छान लें। यह उत्तम खटाइ बन गइ। इसमें आगे लिखी हुइ दश चीजोंके कपड़छन चूर्णको डाल दें। दालचीनी, सोंठ, कालीमिरच, छोटी पीपल, हींग, छोटी अथवा बड़ी इलायचीके दाने। यह छः चीजें २-२ तोले लें। और सेंधा-

नोन, कालानोन, कालादाना (जिसको जुलाबके लिये जमालगोटेकी जगह वैद्य तथा डाक्टर लिया करते हैं । यह सभी शहरोंमें पंसारीकी दूकान पर मिल जाता है ।), नवीन सफेदजीरा (जिसका दाल शाकमें छौंक लगता है) । यह चारों चीजें ५–५ तोले लें । हींग और जीरेको मन्दी मन्दी आंचसे घीमें भून लें और काले दानेको लोहेके तसलेमें, चलनीसे छानी हुइ रेतमें डालकर चूल्हे पर रखकर मन्द मन्द आंच दें और जब दाने खिलने लगें और "पटपट" शब्द करने लगें तब तुरन्त तसलेको उतारकर उसमें की रेत और काले दानेको चलनीमें डालकर हिलावें । ऐसा करनेसे बालू छनकर सब निकल जायगी और कालादाना चलनीमें रह जायगा । हींग, जीरा और काला दाना इनको शिलपर खूब पीस डालें बाकी ऊपर लिखी सात चीज़ोंको लोहेके खरल में कूटकर कपरछन कर लें । सब चूर्णको ऊपर कही हुई खटाईमें मिलानेसे बहुत स्वादु पाचकावलेह (पाचक चटपटी चटनी) बन जाता है। इसकी खूराक ३ माशेसे १ तोले तककी है।

इसके चाटनेसे मन्दाग्नि और आलस्य दूर हो जाते हैं । रात्रिको चाटकर सोनेसे प्रातःकाल दस्त साफ़ हो जाता है । चित्त खूब प्रसन्न रहता है । भोजनमें यदि रुचि नहीं होय तो दो घण्टे पहिले चाटनेसे भोजनमें रुचि हो आती है । प्रायः बुखारमें मुखका स्वाद बिगड़ा रहता है, इसके चाटनेसे वह दोष दूर हो जाता है । आजकल सभी लोगोंको नमक सुलेमानी, भास्करलवण आदि पाचक चूर्णकी आवश्यक्ता पड़ती है, परन्तु यह चटनी जिसकी जिह्वापर लग जायगी उसको किसी चूर्णकी आवश्यक्ता नहीं पड़ेगी ।

यह अवलेह कुछ गरम होता है इस लिये ५ तोले दाखको नीबूके रसके साथ शिलपर पीसकर कपरछन करके अवलेहमें डाल दें । ओर पके हुवे अनारके दानोंका रस भी डाल दें तो वे सब गरमी को शान्त करके स्वाद बढ़ा देंगे । (यह स्मरण रहे कि इस अवलेहको मिट्टी, पत्थर, चीनी, कांच, काष्ठ आदिके पात्रमें बनावें । अर्थात् पीतल, कांसी आदि किसी धातुका संपर्क न होने दें, नहीं तो अवलेहका स्वाद बिगड़ जायगा और चाटते ही चित्त खराब हो जायगा । जिसको नोनका जियादे अभ्यास है वह अधिक भी डाल ले ।) (रसायनसारसे उद्धृत)

(४०२४) **पाषाणभेदपाकः**

(यो. र.; वृ. नि. र. । अश्मरी.)

अश्मभेदात्प्रस्थमेकं चूर्णितं वस्त्रगालितम् ।
गव्ये दुग्धाढके क्षिप्त्वा पाचयेन्मृदुवह्निना ॥
दर्व्या सम्मर्दयेत्तावद्यावद्घनतरं भवेत् ।
एला लवङ्गमगधा यष्टीमध्वमृताऽभया ॥
कौन्ती श्वदंष्ट्रा वृषकं शरपुङ्खा पुनर्नवा ।
यावशूकोऽनिलघ्नश्च मांसी सप्ताङ्गुलात्पलम् ॥
वङ्गं लोहं तथाऽभ्रं च कर्पूरं पर्पटं शटी ।
पत्रेभकेसरं त्वक् च संशुद्धं च शिलाजतु ॥
पृथगर्द्धपलं चूर्णं चूर्णिता सितशर्करा ।
सार्द्धप्रस्थमिता ग्राह्या दुग्धे वै लेह्यतां नयेत् ॥
सर्वं तन्निक्षिपेत्तत्र स्वाङ्गशीतलतां नयेत् ।
मधुनः प्रस्थमेकं दद्यात्स्निग्धभाण्डे विनिक्षिपेत्॥

**कर्षार्द्धं भक्षयेत्प्रातस्तीक्ष्णं तैलादिकं त्यजेत् ।
पञ्चाश्मरीभेदनः स्यान्मूत्रकृच्छ्रं खुडं तथा ॥
मूत्राघातान्प्रमेहांश्च नाशयेन्मधुमेहताम् ।
अधोगं रक्तपित्तञ्च वस्तिकुक्षिगदं तथा ॥
तीव्राश्मरीपरीतानां विशेषेण हितं हि तत् ।
प्रथमात्रिणा विरचितं च्यवनाय निवेदितम् ॥**

पखानभेदका कपड़छन महीन चूर्ण १ सेर लेकर उसे ८ सेर गोदुग्धमें मन्दाग्निपर पकावें और जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न लिखित चीजोंका महीन चूर्ण मिला दें।

इलायची, लैांग, पीपल, मुलैठी, गिलोय, हर्र, रेणुका, गोखरु, बासा, सरफोंका, पुनर्नवा, जवाखार, बहेड़ा, जटामांसी और सहाङ्कुलका चूर्ण ५-५ तोले तथा बंगभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, कपूर, पित्तपापड़ा, शटी (कचूर), तेजपात, नागकेसर, दालचीनी और शुद्ध शिलाजीत का चूर्ण आधा आधा पल (२॥-२॥ तोले) तथा सफेद खांड १॥ सेर।

इन सब चीजोंके मिलानेके पश्चात् जब वह पाक बिल्कुल ठण्डा हो जाय तो उसमें २ सेर शहद मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे पांच प्रकारकी अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, वातरक्त, मूत्राघात, प्रमेह, मधुमेह, अधोगत रक्तपित्त, बस्तिरोग और कुक्षिगत रोग नष्ट होते हैं। यह पाक अश्मरीके लिये विशेष उपयोगी है।

मात्रा—६-७ माशे।

परहेज़—तेल और तीक्ष्ण पदार्थ न खाने चाहियें।

पिप्पलीखण्डः

(भै. र. । अम्लपित्ता.)

खण्डपिप्पली (प्रयोग सं. १०८०) देखिये।

(४०२५) पिप्पलीखण्डः (बृहत्)

(भै. र. । अम्लपित्त.)

**पिप्पल्याः कुडवं चूर्णं घृतस्य कुडवद्वयम् ।
पलषोडशिकं खण्डाद्रसे वर्य्याः पलाष्टके ॥
पलषोडशिके चैव आमलक्या रसस्य च ।
क्षीरप्रस्थद्वये साध्यं लेहीभूते ततः क्षिपेत् ॥
त्रिजातकाभयाजाजी धन्याकं मुस्तकं शुभा ।
धात्री च कार्षिकं चूर्णं कर्षार्द्धश्चापि जीरकम् ॥
कुष्ठनागरकं नागं सिद्धशीते स्वचूर्णितम् ।
जातीफलं समरिचं मधुनश्च पलत्रयम् ॥
उपयुञ्ज्यात्ततो धीमानम्लपित्तनिवृत्तये ।
हृल्लासारोचकच्छर्दिश्वासकासक्षयापहम् ॥
अग्निसन्दीपनं हृद्यं पिप्पलीखण्डसंज्ञितम् ॥**

पीपलका चूर्ण २० तोले, शतावरका रस १ सेर, आमलेका रस २ सेर और दूध ४ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें और जब खोया तैयार हो जाय तो उसे १ सेर घीमें भूनकर १ सेर खांडकी चाशनी में मिला दें और फिर उसमें निम्न लिखित चीजोंका बारीक चूर्ण मिलाएं।

दालचीनी, तेजपात, इलायची, हर्र, कालाजीरा, धनिया, नागरमोथा, बंसलोचन और आमलेका चूर्ण १।-१। तोला तथा जीरा, कूठ, सोंठ और नागकेसर मेंसे हरेकका चूर्ण ७॥ माशे।

इसके पश्चात् जब वह शीतल हो जाय तो उसमें जायफल और पीपलका चूर्ण तथा शहद १५-१५ तोले मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे अम्लपित्त, जी मिचलाना, अरुची, वमन, श्वास, खांसी और क्षयका नाश होता है। यह अग्निदीपक तथा हृदयके लिये हितकारी है। (मात्रा ६ माशे ।)

(४०२६) **पिप्पलीमूलाद्यवलेहः**

(वृ. नि. र. । हिक्का.)

पिप्पलीमूलमधुकं गुडगोश्वसकृद्रसान् ।
हिध्माभिष्यन्दकासघ्नान् लिहेन्मधुघृतान्वितान् ॥

पीपलामूल, और मुलैठीका चूर्ण तथा गुड़ और गाय तथा घोड़ेके मलका रस समान भाग लेकर सबको शहद और घी में मिलाकर चाटनेसे हिचकी, आंखें दुखना और खांसीका नाश होता है ।

(४०२७) **पिप्पल्यादिलेहः** (१)

(ग. नि. । कासा. १०)

पिप्पल्यामलकं द्राक्षा तुगाक्षीर्यथ शर्करा ।
लाक्षाघृतं माक्षिकं च लेहः कासविनाशनः ॥

पीपल, आमला, मुनक्का, वंसलोचन, मिसरी और लाख समान भाग लेकर सबको पीसकर घी और शहदमें मिलाकर चाटनेसे खांसी नष्ट होती है।

(४०२८) **पिप्पल्यादिलेहः** (२)

(ग. नि. । कासा. १०)

पिप्पल्यामलकं द्राक्षा खर्जूरं शर्करा मधु ।
लेहोऽयं सघृतो लीढः पित्तक्षतजकासनुत् ॥

पीपल, आमला, मुनक्का, खजूर और मिसरी समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर घी और शहदमें मिलाकर चाटनेसे पित्तज क्षतज खांसी नष्ट होती है ।

(४०२९) **पिप्पल्यादिलेहः** (३)

(रा. मा. । कासाधि. १०)

कृष्णामयूरच्छदभस्मयुक्ता
क्षौद्रेण लीढा विनिहन्ति हिक्काम् ।
श्वासं च सापूरमपि प्रवृद्धं
सुसूत्रतामानयति प्रसह्य ॥

पीपल और मोरके पंखकी भस्म समान भाग लेकर दोनोंको शहदमें मिलाकर चटानेसे हिचकी नष्ट होती है तथा अत्यन्त बढ़ा हुवा श्वास सुव्यवस्थित हो जाता है ।

(मात्रा-१ माशा ।)

पिप्पल्याद्यवलेहः (१)

(वं. से. । अम्लपित्त.)

प्र. सं. १०८१ खण्डपिप्पली देखिए

(४०३०) **पिप्पल्याद्यवलेहः** (२)

(यो. र. । क्षयकास.; वृ. यो. त. । त. ७८; च. सं. । चि. अ. ३२)

पिप्पली मधुकं पिष्टं कार्षिकंससितोपलम् ।
प्रस्थैकं गव्यमाज्यं च क्षीरमिक्षुरसस्तथा ॥
यवगोधूममृद्वीकाचूर्णमामलकीरसम् ।
तैलं च प्रसृतांशानि तत्सर्वं मृदुवह्निना ॥

पचेल्लेहं घृतक्षौद्रयुक्तं स श्वासकासजित् ।
क्षयहृद्रोगकासघ्नो हितो वृद्धाल्परेतसाम् ॥

पीपल, मुलैठी और मिश्री १।-१। तोला, गायका घी, दूध और ईखका रस २-२ सेर तथा जौ, गेहूं, मुनक्का, आमलेका रस और तेल १०-१० तोले लेकर चूर्ण योग्य चीज़ों का चूर्ण करके सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब लेह तैयार हो जाय तो ठण्डा करके उसमें घी और शहद मिलाकर रक्खें ।

इसके सेवन से श्वास, खांसी, क्षय और हृद्रोग नष्ट होता है ।

यह वृद्ध और अल्पवीर्य पुरुषोंके लिये हितकारी है ।

(४०३१) **पिप्पल्याद्यवलेहः** (३)

(वृं. मा.; वं. से. । यो. र.; ग. नि.; वृ. नि. र. । कासा.; वृ. यो. त. । त. ७८)

पिप्पली पद्मकं लाक्षा[१] सुपक्वं बृहतीफलम् ।
घृतक्षौद्रयुतो लेहः क्षत[२]कासनिबर्हणः ॥

पीपल, पद्माक, लाख और कटेलीके पक्के फल समान भाग लेकर सबको पीसकर घी और शहदमें मिलाकर सेवन करने से क्षतज खांसी नष्ट होती है ।

१—द्राक्षेति पाठान्तरम् ।
२—क्षयेति पाठान्तरम् ।

(४०३२) **पिप्पल्याद्यवलेहः** (४)

(पिप्पलीपाक)

(ग. नि. । परिशि. अवले. ५; वृ. नि. र.; यो. र. । ज्वरा.; यो. चिं. म. । पाका.)

प्रस्थं पिप्पलीमादाय क्षीरश्चैव चतुर्गुणम् ।
अर्द्धाढकं घृतं गव्यं शुद्धखण्डात्तथाऽऽढकम् ॥
पचेन्मृद्वग्निना तावद्यावत्पाकमुपागतम् ।
शीतीभूते क्षिपेत्तस्मिंश्चातुर्जातपलत्रयम्[१] ॥
योजयेन्मात्रया दोषधात्वग्निबलसात्म्यतः ।
बल्यो वृष्यस्तथा हृद्यो धातुपुष्टिकरः परः ॥
जीर्णज्वरहरश्चैव श्रियं चैव तु बृंहयेत् ।
छर्दितृषारुचिश्वासशोषहिध्माः सकामलाः ॥
हृद्रोगं पाण्डुगुल्मश्च प्रदरं च त्रिदोषजम् ।
शोणितानिलकार्श्यं च रक्तपित्तं नियच्छति ॥
सतताभ्यासयोगेन वलीपलितवर्जितः ॥

पीपलका चूर्ण १ सेर, गोदुग्ध ८ सेर, गोघृत ४ सेर और शुद्ध खांड ४ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे ठंडा करके उसमें दालचीनी, तेजपात, इलायची और नागकेसरका समान भाग मिश्रित चूर्ण १५ तोले मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे दोष, धातु, अग्निबल और सात्म्यादि के विचारसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे

१—योग चिन्तामणिमें इससे आगे यह पाठ अधिक है—
षोडशपलप्रमाणं खादिरं गुन्दमेव च ।
पाचितं गव्यहव्येन निक्षिपेत्तस्य मध्यतम् ॥

जीर्णज्वर, छर्दि (वमन), तृषा, अरुचि, श्वास, शोष, हिचकी, कामला, हृद्रोग, पाण्डु, गुल्म, त्रिदोषज प्रदर, वातरक्त, कृशता और रक्तपित्तका नाश होता है ।

यह बल वीर्य वर्द्धक, हृदयके लिये हितकारी, धातुपुष्टिकर और स्त्रियोंके लिये बृंहण है ।

इसके निरन्तर अभ्याससे मनुष्य बलीपलित रहित हो जाता है ।

(मात्रा—२ तोले । अनुपान—दूध ।)

(४०३३) **पिष्टिपाकः**

(नपुं. मृता. । त. ४)

प्रस्थैकं माषजां पिष्टिं प्रस्थार्द्धं मुद्गजां तथा।
गोधूमानां च वै चूर्णमर्द्धप्रस्थप्रमाणतः ॥
घृते समे विभज्याथ सर्वांश्चैव पृथक् पृथक् ।
पाकं चैव विधायाथ शर्कराप्रस्थकत्रयम् ॥
पाकं कृत्वा विधानेन पश्चाच्चूर्णांश्च मेलयेत्।
मुशलीद्वयमिक्षुं च अश्वगन्धां शतावरीम् ॥
वृद्धदारुं कपीकच्छुं पलैकांश्चूर्णयेत्पृथक् ।
जातीफलं जातिकोशं आकारकरभं त्वचम् ॥
लवङ्गं चैव काश्मीरं तथैव नागकेशरम् ।
वङ्गमभ्रं च सम्मेल्य कर्षकर्षप्रमाणतः ॥
कारयित्वा विधानेन द्विपलिकांश्च मोदकान् ।
प्रातर्नित्यं भक्षणीयं पाकोयं पिष्टिसम्भवः ॥
कटीशूलं च कार्श्यं च नाशयेन्नात्र संशयः ।
बलवृद्धिकरं शश्वद्वाजीकरणमुत्तमम् ॥

उर्दकी छिलके रहित दालकी बारीक पिट्ठी १ सेर, मूंगकी दालकी पिट्ठी आधासेर तथा गेहूंका आटा आधा सेर लेकर सबको पृथक् पृथक् समान भाग घीमें भूनें । तत्पश्चात् ३ सेर खांडकी चाशनी बनाकर उसमें ये तीनों भुनी हुई चीजें अच्छी तरह मिलाकर निम्न लिखित ओषधियोंका चूर्ण मिला दें ।

दोनों मूसली, तालमखाना, असगंध, शतावर, विधारा और कौंचके बीज ५—५ तोले । जायफल, जावत्री, अकरकरा, दारचीनी, लौंग, केसर, नागकेसर, बंगभस्म तथा अभ्रकभस्म १।, १। तोला ।

समस्त चीजें अच्छी तरह मिलाकर १०—१० तोलेके लड्डू बनाकर रक्खें ।

इन्हें नित्य प्रति प्रातःकाल सेवन करनेसे कमरका दर्द और कृशता नष्ट होकर बलवृद्धि होती है ।

यह उत्तम वाजीकरण भी है ।

(४०३४) **पुनर्नवहरीतक्यवलेहः**

(ग. नि. । लेहा. ५)

पुनर्नवायाः प्रस्थं तु चित्रकस्य तथैव च ।
पाठानागरदन्तीनां भागान्दशपलोन्मितान् ॥
दशमूलतुलार्द्धन्तु पथ्यानां शतमेव च ।
चतुर्गुणेऽम्भसः पक्त्वा पूतं पादावशेषितम्॥
गुडस्यैकां तुलां क्षिप्त्वा लेहवत्साधु साधयेत् ।
क्षिपेच्चूर्णीकृतं तत्र त्रिजातं त्रिकटुं तथा ॥
नागकेसरसंयुक्तं पलांशमुपकल्पितम् ।
शीते भूते ततो दद्यात्कुडवं माक्षिकस्य च ॥

अतो लेहपलं लीढ्वा पथ्यां चैकां च भोजयेत् ।
शोफगुल्मोदरार्शोघ्नी पुनर्नवहरीतकी ॥

पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी) १ सेर, चीता १ सेर; पाठा, सोंठ और दन्तीमूल १०—१० पल (हरेक ५० तोले), दशमूलकी हरेक चीज ५ पल (२५ तोले) और हर्र १०० नग लेकर हर्रोंको कपड़े की पोटलीमें बांध लें और बाकी सब चीजोंको अधकुटा करलें । तत्पश्चात् सबको ८ गुने पानीमें पकावें और जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो क्वाथको छान लें और हर्रों को अलग रख दें । इस क्वाथमें ६। सेर गुड़ और वे हर्रें डालकर फिर पकावें । जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसमें ५—५ तोले दालचीनी, तेजपात, इलायची, सोंठ, मिर्च, पीपल और नागकेसरका चूर्ण मिलावें । और जब वह ठण्डा हो जाय तो उसमें ४० तोले शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसमें से नित्य प्रति ५ तोले अवलेह चाटने और १ हर्र खानेसे शोथ, गुल्म, उदररोग और अर्शका नाश होता है ।

(४०३५) पुनर्नवादिलेहः

(वं. से.; भै. र.; च. द.; यो. र.; ग. नि.; वृं. मा. । शोथा.; वृ. यो. त. । त. १०६)

पुनर्नवामृतादारुदशमूलरसाढके ।
आर्द्रकस्वरसे प्रस्थे गुडस्य च तुलां पचेत् ॥
तत्सिद्धं व्योषचव्यैलात्वक्पत्रैः कार्षिकैः पृथक् ।
चूर्णीकृतैर्लिहेच्छीते मधुनः कुडवं क्षिपेत् ॥
लेहः पौनर्नवो नाम्ना श्लेष्मशोथनिषूदनः ।
श्वासकासारुचिहरो बलपुष्ट्यग्निवर्द्धनः ॥

पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), गिलोय, देवदारु और दशमूलका क्वाथ ८ सेर (सब चीजें समान भाग मिश्रित ४ सेर लेकर ३२ सेर पानी में पकाकर ८ सेर शेष रक्खें ।), अदरकका रस २ सेर और गुड़ ६। सेर लेकर सबको एकत्र पकाकर लेह बनावें और फिर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, चव, इलायची, दालचीनी और तेजपातका चूर्ण १।—१। तोला मिलावें । जब शीतल हो जाय तो उसमें ४० तोले शहद मिलावें ।

यह लेह कफज शोथ, श्वास, खांसी और अरुचि नाशक तथा बल पुष्टि और अग्निवर्द्धक है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(४०३६) पुष्करमूलादि लेहः

(भा. प्र. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । ज्वरोपद्रव.)

पुष्करमूलकटुत्रिकशृङ्गी
कट्फलयासककारविकाभिः ।
मधुललिताभिरयं खलु लेहः
कासरिपुः कफरोगहरश्च ॥

पोखरमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, काकड़ासिंगी, कायफल, धमासा और कलैांजी के समानभाग-मिश्रित चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटनेसे खांसी और कफज रोग नष्ट होते हैं ।

(४०३७) पुष्करलेहः

(रसें. सा. सं.; र. रा. सुं. । प्रदर.; रसें. चि.म. । अ. ९)

रसाञ्जनं शुभा भृङ्गी चित्रकं मधुयष्टिकम् ।
धान्यतालीशगायत्रीद्विजीरं त्रिवृता बला ॥

दन्तीत्र्यूषणकञ्चापि पलार्द्धञ्च पृथक् पृथक् ।
चतुः पलं माक्षिकस्यामलकस्य च क्षिपेत्ततः ॥
जातीकोषलवङ्गं च कङ्कोलं मृद्विकापि च ।
चातुर्जातकखर्जूरं कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥
प्रक्षिप्य मर्दयित्वा च स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ।
एष लेहवरः श्रीदः सर्वरोगकुलान्तकः ॥
यत्र यत्र प्रयोज्यः स्यात्तदामयविनाशनः ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं देशकालानुसारतः ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तं प्रदरं सर्वसम्भवम् ।
द्वन्द्वजं चिरजञ्चैव रक्तपित्तं विनाशयेत् ॥
कासश्वासाम्लपित्तञ्च क्षयरोगमथापि वा ।
सर्वरोगप्रशमनो बलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥
पुष्कराख्यो लेहवरः सर्वत्रैवोपयुज्यते ॥

रसौत, बंसलोचन, काकड़ासिंगी, चीता, मुलैठी, धनिया, तालीसपत्र, खैरसार, दोनों जीरे, निसोत, खैरैटी, दन्तीमूल, सोंठ, काली मिर्च और पीपल २॥–२॥ तोले; शहद ४० तोले, आमला २० तोले, तथा जावित्री, लैांग, कंकोल, मुनक्का, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर और खजूर १।–१। तोला लेकर कूटने योग्य चीजोंको कूट छानकर चूर्ण बनावें और पीसने योग्य चीजों को पीसलें, तदनन्तर सबको एकत्र मिलाकर चिकने पात्र में भरकर सुरक्षित रक्खें ।

यह अवलेह कान्तिवर्द्धक और सर्वरोग नाशक है । जहां कहीं भी दिया जाता है, रोग-को नष्ट कर देता है ।

इसके सेवनसे सर्व दोषज पुराना और सर्व उपद्रव युक्त प्रदर, रक्तपित्त, खांसी, श्वास, अम्लपित्त और क्षयका नाश होता तथा बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है ।

(मात्रा–६ माशे ।)

(४०३८) **पूगखण्डः** (१)

(भै. र. । शूला.)

छित्वा पूगफलं दृढं परिणतं पक्त्वा च दुग्धाम्बुभिः
प्रक्षाल्यातपशोषितं वसुपलं ग्राह्यं ततश्चूर्णितात् ।
तत्सर्पिः कुडवे विपाच्य हि वरीधात्रीरसौ द्व्यञ्जली
द्वे प्रस्थे पयसः प्रदाय विपचेन्मन्दं तुलार्द्धां सिताम् ॥
हेमाम्भोधरचन्दनं त्रिकटुकं धात्रीपियालास्थिजौ
मज्जानौ त्रिसुगन्धि जीरकयुगं शृङ्गाटकं वंशजा
जातीकोषफले लवङ्गमपरं धान्याककक्कोलकम्
नाकूली तगराम्बु वीरणशिफा भृङ्गाश्वगन्धे तथा ॥
सर्वं द्व्यक्षमितं विचूर्ण्य विधिना पाके तु मन्दे ततः
प्रक्षिप्याथ विघट्टयन् मुहुरिदं दर्व्यावतार्य क्षणात् ।
सिद्धं वीक्ष्य विधारयेदवहितः स्निग्धेऽथ मृद्भाजने
खादेत्प्रातरिदं जरामयहरं वृष्यं बुधस्तोलकम् ॥
शूलाजीर्णगुदप्रवाहरुधिरं दुष्टाम्लपित्तं जयेत्
यक्ष्मक्षीणहितं महाग्निजननं तृट्छर्दिमूर्च्छापहम् ।

पाण्डुघ्नं बलवर्णदृष्टिकरणं गर्भप्रदं योषिता-
मेतत् पूगरसायनं प्रदरनुद् विण्मूत्रसङ्गापहम् ॥

सुपक्व उत्तम सुपारीके छोटे छोटे टुकड़े करके उन्हें जलमिश्रित दूधमें पकावें और फिर उन्हें पानीसे धोकर धूपमें सुखा कर चूर्ण करलें।

तत्पश्चात् आठ पल (४० तोले) इस चूर्णको ४० तोले घीमें भूनें और फिर उसमें ४०-४० तोले सतावर और आमलेका रस, ४ सेर दूध और ३ सेर १० तोले खांड मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसमें निम्न लिखित चीजोंका चूर्ण मिलावें:—नागकेसर, नागरमोथा, सफेदचन्दन, सोंठ, मिर्च, पीपल, आमला, चिरौंजी, दालचीनी, तेजपात, इलायची, दोनों जीरे सिंघाड़ा, बंसलोचन, जावित्री, जायफल, लौंग, धनिया, कंकोल, रास्ना, तगर, सुगन्धबाला, खस, भंगरा और असगन्ध २॥—२॥ तोले ।

इन सब चीजोंका चूर्ण मिलाकर थोड़ी देर करछीसे चलावें और फिर चिकने पात्रमें भरकर रख दें ।

इसके सेवन से शूल, अजीर्ण, गुदासे रक्त आना, कष्ट साध्य अम्लपित्त, तृष्णा, छर्दि, मूर्च्छा, पाण्डु और मल तथा मूत्रका अवरोध आदि रोग नष्ट होते हैं ।

यह जराहर, वृष्य, अग्निवर्द्धक, बलवर्णको बढ़ानेवाला, दृष्टिको तीक्ष्ण करनेवाला और गर्भप्रद तथा यक्ष्माके रोगी और क्षीण पुरुषों के लिये हितकारी है ।

(४०३९) **पूगखण्डः** (अपर) (२)

(भै. र. । शूला.)

प्रस्थैकं पूगचूर्णस्य पयसश्चाढकं क्षिपेत् ।
शर्करायाः पलशतं घृतस्य कुडवद्वयम् ॥
चातुर्जातं त्रिकटुकं देवपुष्पं सचन्दनम् ।
मांसी तालीसपत्रञ्च बीजं कमलसम्भवम् ॥
नीलोत्पलं तथा वांशी शृङ्गाटं जीरकं तथा ।
विदारीकन्दजश्चैव रजो गोक्षुरसम्भवम् ॥
शतमूलीरजश्चैव मालतीकुसुमं तथा ।
धात्रीचूर्णं समं कर्षं कर्पूरं शुक्तिमानतः ॥
मन्देऽग्नौ विपचेद् वैद्यः स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ।
खादेच्च प्रातरुत्थाय कोलमेकं प्रमाणतः ॥
छर्द्यम्लपित्तहृद्दाहभ्रममूर्च्छापहं नृणाम् ।
सर्वशूलहरं श्रेष्ठमामवातविनाशनम् ॥
मेहमेदोविकारघ्नं प्लीहपाण्डुगदापहम् ।
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च गुदजं रुधिरं जयेत् ॥
रेतोवृद्धिकरं हृद्यं पुष्टिदं कामदं तथा ।
वन्ध्यापि लभते पुत्रं वृद्धोपि तरुणायते ॥
नातः परतरं श्रेष्ठं विद्यते वाजिकर्मसु ॥

१ सेर सुपारीके चूर्णको ८ सेर दूध में पकावें । जब खोवा (मावा) हो जाय तो उसे १ सेर घी में भूनें और फिर ६। सेर खांड की चाशनी करके उसमें यह खोवा (मावा) और निम्न लिखित चीजोंका चूर्ण मिलावें:—

दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, लौंग, सफेद चन्दन,

जटामांसी, तालीसपत्र, कमल गट्टेकी गिरी, नीलोत्पल, बंसलोचन, सिंघाड़ा, जीरा, बिदारीकन्द, गोखरु, शतावर, मालतीपुष्प और आमला । प्रत्येक १।-१। तोला ।

इन सब चीजोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह आलोडन करें । जब पाक ठंडा हो जाय तो उसमें २।। तोले कपूर मिला कर चिकने पात्रमें भरकर रखदें ।

इसे नित्य प्रति प्रातःकाल ६ माशेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे छर्दि, अम्लपित्त, हृदयकी दाह, भ्रम, मूर्छा, सर्व प्रकारके शूल, आमवात, प्रमेह, मेद, प्लीहा, पाण्डु, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और गुदमार्गसे रक्त जाना इत्यादि रोग नष्ट होते हैं ।

यह वीर्यवर्धक, हृदयके लिये हितकारी पौष्टिक और कामशक्तिवर्द्धक है ।

इसके सेवनसे वन्ध्या स्त्रीको पुत्र प्राप्ति होती है और वृद्ध पुरुष पुनः युवाके समान हो जाता है ।

इससे उत्तम वाजीकरण औषध अन्य कोई भी नहीं है ।

(नोट—कपूरेको थोड़ेसे घीमें मिलाकर डालना चाहिये ।)

(४०४०) **पूगपाकः** (बृहत्)

(वृ. यो. त. । त. १०३)

पच्यात्पूगरजो दशाम्रममलं मार्दे कटाहेऽग्निना भेदेनाष्टगुणे पयस्यापि घृतमस्थार्धकेऽस्मिन्घने ।
जातीकोषफले च षट्कटुसटीद्राक्षावरावानरी-चातुर्जाततुगाब्दधान्यमुसलीदीप्याजयष्टीक्षुरम् ॥
अश्माशीतबलात्रयं करिकणामांसीवरीमेथिका-शृङ्गाटं मिशिजीरवारिविजयागोक्षुरखर्जूरकम् ।
धात्री शाल्मलि कोलचोरकनकं कुम्भत्रिनेत्राभ्रकं पृथ्वीकाभयवङ्गदेवकुसुमं दद्यात्पृथक् कार्षिकम् ॥
पञ्चाशत्पलखण्डपाकललितः स्यात्पूगपाकःपृथुर्वृष्यः पाण्ड्यहरः प्रमेहदलनो रेतोविवृद्धिप्रदः ।
पित्तास्रे प्रदरे क्षये करपदे दाहेऽम्लपित्ते वपुर्दाहे पाण्डुगदे हुताशनहतावेतेषु शस्तो मतः ॥

दश पल (५० तोले) सुपारीके चूर्णको १० सेर दूधमें मिट्टीके पात्रमें पकावें । जब खोवा (मावा) हो जाय तो उसे १ सेर (८० तोले) घीमें भून लें । और फिर ५० पल (३ सेर १० तोले) खांड की चाशनी बनाकर उसमें यह खोवा तथा निम्न लिखित औषधियोंका चूर्ण मिलावें ।

जावित्री, जायफल, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, काली मिर्च, सटी (कचूर), दाख (मुनक्का), हर्र, बहेड़ा, आमला, कौंचके बीज, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, बंसलोचन, नागरमोथा, धनिया, मूसली, कालाजीरा, मेढासिंगी, मुलैठी, तालमखाना, अश्मा (शिलाजीत), कपूर, बला (खरैटी), अतिबला (कंघी), नागबला (गंगेरन), गजपीपल, जटामांसी, शतावर, मेथी, सिंघाड़ा, सौंफ, सफेदजीरा, सुगन्धबाला, भांग, गोखरु, खजूर, आमला, सेंभलका गोंद (या मूसली), बेर, चोरक, धतूरेके बीज

निसोत, बाराहीकन्द, अभ्रकभस्म, इलायची, खस, बंगभस्म और लौंग । प्रत्येकका चूर्ण १।-१। तोला ।

सबको अच्छी तरह मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रक्खें ।

यह पाक वृष्य, नपुसकतानाशक, प्रमेह-नाशक, वीर्यवर्द्धक तथा रक्तपित्त, प्रदर, क्षय, हाथ पैरोंकी जलन, अम्लपित्त, शरीरकी दाह, पाण्डु और अग्निमांद्य में हितकर है ।

(मात्रा—१ तोला)

पूगपाकः (रतिवल्लभः)

रकारमें देखिये ।

(४०४१) **पूगपांसुयोगः** (पूगपाकः)

(वृ. यो. त. । त. १०३; यो. र.; वै. र. । प्रमेह.; यो. त. । त. ५१; वृ. नि. र. । प्रमेह; यो. चि. म. । अ. १)

हेमाम्भोधरचन्दनं त्रिकटुकं धात्री प्रियालाकुहू-
र्लज्जालुस्त्रिसुगन्धिजीरकयुगं शृङ्गाटकं वंश-
जम् ।
जातीकोशलवङ्गधान्यबहुलाप्रत्येकमक्षोन्मिताः
पूगस्याष्टपलं विचूर्ण्य च पयः प्रस्थत्रये संप-
चेत् ॥
गोसर्पिः कुडवं सितार्धकतुलां धात्रीवरीं द्व्यञ्जलिं
मन्दाग्नौ विपचेद् भिषक् शुभदिने सुस्निग्ध
भाण्डे क्षिपेत् ।
तं खादेत्तु यथाग्नि वासरमुखे मेहांश्च जीर्णज्वरं
पित्तं साम्लमसृक्स्रुतिं च गुदजां वक्त्राक्षिना-
सासु च ॥
मन्दाग्निं च विजित्य पुष्टिमतुलां कुर्याच्च शुक्रमदो
योगो गर्भकरः परो गदहरः स्त्रीणामसृग्दोष-
जित् ॥

सुपारीके ८ पल (४० तोले) चूर्णको ६ सेर दूधमें पकावें । जब खोवा (मावा) हो जाय तो उसे ४० तोले घीमें भूनें और फिर ५० पल (३ सेर १० तोले) खांडकी चाशनीमें यह मावा तथा निम्न लिखित चीज़ोंका चूर्ण मिलावें ।

आमला और शतावर २०-२० तोले, तथा नागकेसर, नागरमोथा, सफेदचन्दन, सोंठ, मिर्च, पीपल, आमला, चिरौंजी, बेरकी मींगी, लज्जालु, दालचीनी, तेजपात, इलायची, दोनोंजीरे, सिंघाड़ा, बंसलोचन, जावित्री, लौंग और धनिया। प्रत्येकका चूर्ण १।-१। तोला । सबको अच्छी तरह मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रक्खें ।

इसे नित्य प्रति प्रातःकाल सेवन करनेसे प्रमेह, जीर्णज्वर, अम्लपित्त, गुदमार्ग आंख नाक और मुंहसे रक्तस्राव होना और रक्तप्रदर आदि रोग नष्ट होते तथा बल, अग्नि और वीर्यकी वृद्धि होती है । इसके सेवनसे स्त्रियोंको गर्भप्राप्ति होती है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(४०४२) **पूगीपाकः**

(यो. त. । त. ५१)

श्रीखण्डं त्रिसुगन्धिकेसरकणाशुण्ठीवरीचाम्बुदं
शृङ्गाटं जलजं प्रियालबदरीधात्र्यब्जबीजं तुगा ।
द्राक्षा जीरकधान्यकं ससुमनः पुष्पं च जातीदलं
शुद्धारं दरदं पलार्द्धकमिदं सन्नारिकेलात्रमत् ॥

पूगं चाष्टपलं च सौरभपयः प्रस्थत्रये सम्पचेत्
पश्चादामलकीवरीजलशरावार्द्धेऽथ पिष्टीकृतम्।
शुष्कीकृत्य कटाहके च सघृते मन्दाग्निना चूर्णयुग्
वङ्गव्योमपलार्द्धकन्तु तुलया खण्डेन पाकीकृतम् ॥
भुक्तं प्रातरिदं प्रमेहपवनाध्मानानि शूलानि च
क्षैण्यं दैन्यमसृक्स्रुतिं मुखगुदश्रोत्राक्षिलोमोद्भवाम्।
हन्याद्रोगजराविपत्तिशमनं मन्दाग्निहृद्बृंहणं
बल्यं वृद्धिकरं प्रमोदजनकं पूगं न किं सेव्यते ॥

प्रक्षेपद्रव्य—सफेदचन्दन, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेशर, पीपल, सोंठ, शतावर, नागरमोथा, सिंघाड़ा, कमल चिरौंजी, बेरकीमींगी, आमला, कमलगट्टा, बंसलोचन, मुनक्का, जीरा, धनिया, चमेलीके फूल तथा पत्ते, मुण्डलौहभस्म, शुद्ध हिंगुल और गोला (नारियल), बंगभस्म तथा अभ्रकभस्म २।-२॥ तोले।

विधि—प्रथम ८ पल (४० तोले) सुपारीके चूर्णको १-१ सेर आमले और शतावरके रसमें पीसें और फिर उसे सुखाकर ६ सेर गायके दूधमें पकावें। जब खोवा (मावा) हो जाय तो उसे (१ सेर) घीमें भून लें। तदनन्तर ६। सेर खांडकी चाशनी करके उसमें यह खोवा और उपरोक्त प्रक्षेप द्रव्योंका चूर्ण मिला कर चिकने पात्रमें भरकर रक्खें।

इसे प्रातःकाल सेवन करने से प्रमेह, वायु, अफारा, शूल, क्षीणता, दैन्य, मुख गुद कान नाक और रोमकूपों से रक्तस्राव होना, वृद्धावस्थाके विकार, अग्निमांद्य और हृद्रोग नष्ट होते तथा बलवीर्यकी वृद्धि होती है।

(मात्रा—६ माशे से १ तोले तक।)

पेठापाकः

(भा. भै. र. प्रथम भागमें कुष्माण्डखण्ड तथा खण्डकुष्माण्ड देखिये।)

(४०४३) प्रसारणीलेहः

(भा. प्र.। आमवा.)

प्रसारण्याढके क्वाथे प्रस्थो गुडरसो मतः।
पक्वः पञ्चोषणरजोयुक्तः स्यादामवातहा ॥

४ सेर प्रसारणीको ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी रह जाय तो उसे छानकर उसमें १ सेर गुड़ मिलाकर पुनः पकावें। जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसमें पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ का (१० तोले) चूर्ण मिलावें।

इसके सेवनसे आमवात का नाश होता है।

(मात्रा—१ तोला तक)

इति पकाराद्यवलेहप्रकरणम्।



अथ पकारदिघृतप्रकरणम्

(४०४४) **पञ्चकोलघृतम्** (१)

(वृ. नि. र. । पाण्डु; हा. सं. । स्था. ३ अ. ९)

पञ्चकोलं यवाग्रं च क्षीरं दध्ना घृतं पुनः।
समांशानि तु योज्यानि भार्ङ्गी कुष्ठं च पौष्करम्॥
शतं तत्र हरीतक्या जले चैव चतुर्गुणे।
क्वाथं चैकत्र योज्यान्ते क्वाथयेन्मृदुवह्निना॥
मृदुपाकघृतं सिद्धं पाने नस्ये च बस्तिषु।
गुणाधिक्यं भवेन्नृणां पाण्डुरोगे हलीमके॥
क्षये च राजयक्ष्मणि च शस्तमुक्तं भिषग्वरैः॥

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और जवाखार (सब समानभाग-मिश्रित २० तोले) लेकर पीसलें।

क्वाथ—भरंगी, कूठ और पोखरमूल तथा १०० हर्र। सब मिलित २ सेर। क्वाथार्थ जल १६ सेर। शेष क्वाथ ४ सेर

अन्य पदार्थ—दूध २ सेर, दही ४ सेर, घी २ सेर।

विधि—क्वाथ कल्क और अन्य समस्त पदार्थोंको एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इसे पिलाने अथवा बस्ति या नस्य द्वारा प्रयुक्त करनेसे पाण्डु, हलीमक क्षय और राजयक्ष्माका नाश होता है।

(४०४५) **पञ्चकोलघृतम्** (२)

(च. सं. । चि. अ. १३ उदर.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः।
सक्षारैरर्द्धपलिकैर्द्विप्रस्थं सर्पिषः पचेत्॥
कल्कैर्द्विपञ्चमूलस्य तुलार्धस्वरसेन च।
दधिमण्डाढकोपेतं तत्सर्पिर्जठरापहम्॥
श्वयथुं वातविष्टम्भं गुल्मार्शांसि च नाशयेत्॥

कल्क—पिप्पली, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और यवक्षार २॥-२॥ तोले।

क्वाथ—२५ पल (१ सेर ४५ तोले) दशमूलको २०० पल (१२॥ सेर) पानीमें पकावें और जब ५० पल पानी शेष रह जाय तो छानलें।

विधि ४ सेर घी, ८ सेर मस्तु (दहीका पानी) उपरोक्त क्वाथ और कल्क एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसको छान लें।

यह घृत उदरव्याधि, शोथ, वायु, विष्टम्भ, गुल्म और अर्श को नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०४६) **पञ्चकोलाद्यं घृतम्**[1] (१)

(च. सं. । चि. अ. ५ गुल्म.; वृ. नि. र. । गुल्म.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः।
पलिकैः सयवक्षारैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥

१—शार्ङ्गधर में यवक्षारके स्थानमें सैन्धव, और दूध चार गुना लिखा है।

क्षीरमस्थेन तत्सर्पिर्हन्ति गुल्मं कफात्मकम् ।
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं प्लीहकासज्वरापहम् ॥

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और यवक्षार ५–५ तोले ।

२ सेर घीमें यह कल्क; २ सेर दूध और ८ सेर पानी मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

यह घृत कफजगुल्म, संग्रहणी, पाण्डु, प्लीहा, खांसी और ज्वरका नाश करता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४०४७) **पञ्चकोलाद्यं घृतम्** (२)

(वृं. मा.; वं. से.; च. द. । शोथा.)

रसे विपाचयेत्सर्पिः पञ्चकोलकुलत्थयोः ।
पुनर्नवायाः कल्केन घृतं शोथविनाशनम् ॥

क्वाथ—पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और कुलथ समान–भाग–मिश्रित २ सेर लेकर अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें । जब ४ सेर पानी शेष रहे तो छानकर उसमें १ सेर घी और ६ तोले ८ माशे पुनर्नवा (बिसखपरा) का कल्क मिलाकर पुनः पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे शोथ नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४०४८) **पञ्चगव्यं घृतम्** (१) (स्वल्प)

(र. र. । अपस्मारा.; च. सं. । चि. अ. १५ अपस्मा.)

गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैः समैर्घृतम् ।
सिद्धं चातुर्थिकोन्मादसर्वापस्मारनाशनम् ॥

गायके गोबरका रस, गायका खट्टा दही, गायका दूध, गोमूत्र और गायका घी बराबर बराबर लेकर एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसके सेवनसे चातुर्थिक (चौथिया) ज्वर, उन्माद और अपस्मार नष्ट होता है ।

(४०४९) **पञ्चगव्यं घृतम्** (२)

(सु. सं. । उ. त. अ. ३९)

गव्यं दधि च मूत्रश्च क्षीरं सर्पिः शकृद्रसः ।
समभागानि पाच्यानि कल्कांश्चैतान्समावपेत् ॥
त्रिफलां चित्रकं मुस्तं हरिद्रे द्वे विषां वचाम् ।
विडङ्गं त्र्यूषणं चव्यं सुरदारु तथैव च ॥
पञ्चगव्यमिदं पानाद्विषमज्वरनाशनम् ॥

गायका दही, मूत्र, दूध, घी और गोबरका रस २–२ सेर तथा निम्न लिखित ओषधियोंका कल्क २० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, नागरमोथा, हल्दी, दारुहल्दी, अतीस, बच, बायबिडंग, सोंठ, मिर्च, पीपल, चव और देवदारु ।

यह घृत विषमज्वरको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ तोला)

(४०५०) **पञ्चगव्यं घृतम्** (३)

(ग. नि. । घृता.[1]; सु. सं. । उ. त. अ. ६१)

दशमूलेन्द्रवृक्षत्वङ्मूर्वाभार्गीफलत्रयैः ।
शम्पाकश्रेयसीसप्तपर्णापामार्गफल्गुभिः[1] ॥

१—पीलुभिरिति पाठान्तरम् ।

शृतैः कल्कैश्च भूनिम्बत्रिफला[२]व्योषचित्रकैः ।
त्रिवृत्पाठानिशायुग्मसारिवाद्वयपौष्करैः ॥
कटुकायासदन्त्युग्रा[३]नीलिनीक्रिमिशत्रुभिः ।
सर्पिरेभिश्च गोक्षीरदधिमूत्रशकृद्रसैः ॥
साधितं पञ्चगव्याख्यं सर्वापस्मारभूतनुत् ।
चतुश्चतुः क्षयश्वासानुन्मादांश्च नियच्छति ॥

क्वाथ—दशमूल, कुड़ेकी छाल, मूर्वा, भरंगी, त्रिफला, अमलतास, गजपीपल, सतौना, चिरचिटा और कठूमर (कठगूलर) की छाल समान भाग मिश्रित १ सेर लेकर अधकुटा करके ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर पानी शेष रहने पर छानलें ।

कल्क—चिरायता, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला,) त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), चीता, निसोत, पाठा, हल्दी, दारुहल्दी, दो प्रकारकी सारिवा, पोखरमूल, कुटकी, धमासा, दन्तीमूल, बच, नीलका पञ्चाङ्ग और बायबिड़ंग । सब समान-भागमिश्रित २० तोले लेकर पानीके साथ पीस लें ।

विधि—क्वाथ, कल्क, २ सेर गायका घी, २ सेर गायका दही, २ सेर गायका दूध, और २ सेर गायके गोबरका रस एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसके सेवनसे अपस्मार, भूतोन्माद, क्षय, श्वास और उन्माद रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

२—पूतीकेति पाठान्तरम् ।
३—कटकामदयन्त्युग्रेति पाठभेदः

(४०५१) पञ्चगव्यं घृतम् (४) (वृहत्)

(र. र. । अपस्मार.; च. सं. । चि. अ. १५ अपस्मा.; ग. नि. । घृता. १.)

द्वे पञ्चमूल्यौ त्रिफलां रजन्यौ कुटजत्वचम् ।
सप्तपर्णमपामार्गनीलिनीकटुरोहिणीम् ॥
सम्पाकं फल्गुमूलञ्च पौष्करं सदुरालभम् ।
द्विपलांशं जलद्रोणे पक्त्वा पादावशेषितम् ॥
भार्ङ्गीपाठात्रिकटुकत्रिवृतानि[१] चूर्णानि च ।
श्रेयसी [२]मागधी मूर्वा दन्ती भूनिम्बचित्रकौ ॥
द्वे सारिवे रोहिषञ्च भूतिकं मदयन्तिकाम् ।
क्षिपेत्पिष्ट्वाक्षमानानि तैः प्रस्थं सर्पिषः पचेत् ॥
गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैश्च तत्समैः ।
पञ्चगव्यमिति ख्यातं महत्तदमृतोपमम् ॥
अपस्मारे ज्वरे कासे श्वयथावुदरेषु च ।
गुल्मार्शःपाण्डुरोगेषु कामलायां हलीमके ॥
अलक्ष्मीग्रहरक्षोघ्नं चातुर्थिकनिवारणम् ॥
(श्रेयसीगजपिप्पली, रोहिषं गन्धतृणभेदः, भूतिकं गन्धतृणं रोहिषाभावे भागद्वयं ग्राह्यम् ।)

क्वाथ—दशमूलकी हरेक चीज़, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, दारुहल्दी, कुड़ेकी छाल, सतौना, चिरायता, नीलका पञ्चाङ्ग, कुटकी, अमलतास और कठूमर (कठगूलर) की जड़की छाल, पोखर मूल और धमासा । प्रत्येक १० तोले लेकर अधकुटा करके सबको ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—भरंगी, पाठा, सोंठ, मिर्च, पीपल, निसोत, गजपीपल, पीपल, मूर्वा, दन्तीमूल, चिरायता,

१—" निचुलानि च " इति पाठान्तरम् ।
२—" माडकी " इति पाठान्तरम् ।

चीता, दो प्रकारकी सारिवा, रोहिष (गन्ध-तृण भेद। इसके अभावमें गन्ध तृण), भूतिक (गन्ध तृण) और मल्लिका पुष्प (मोगरा या चमेली)। प्रत्येक १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पीस लें।

विधि—क्वाथ, कल्क, २ सेर गायका घी, २ सेर गायके गोबरका रस, २ सेर गायके दही का पानी, २ सेर गायका दूध और २ सेर गोमूत्र एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह घृत अमृतके समान गुणकारी है। इसके सेवनसे अपस्मार, ज्वर, खांसी, शोथ, उदररोग, गुल्म, अर्श, पाण्डु, कामला हलीमक और चातुर्थिक (चौथिया) ज्वर का नाश होता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०५२) **पञ्चतिक्तकं घृतम्** (१)

(यो. र.; वृ. नि. र. । ज्वरा.; यो. चिं. म. । अ. ५)

वृषनिम्बामृताव्याघ्रीपटोलानां शृतेन च।
कल्केन पक्वं सर्पिस्तु निहन्याद्विषमज्वरान् ॥
पाण्डुं कुष्ठं विसर्पं च कृमीनर्शांसि नाशयेत् ॥

क्वाथ—बासा, नीमकी छाल, गिलोय, कटेली और पटोल समानभागमिश्रित ४ सेर लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें।

कल्क—उपरोक्त पांचों ओषधियां समानभागमिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें।

विधि—क्वाथ, कल्क और २ सेर घीको एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसके सेवनसे विषमज्वर, पाण्डु, कुष्ठ, विसर्प, कृमि और अर्शका नाश होता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०५३) **पञ्चतिक्तकं घृतम्** (२)

(यो. र. । वातव्या.)

निम्बामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानां
भागान्पृथक्दशपलान् विपचेद् घटेऽपाम्।
अष्टावशेषितरसेन पुनश्च तेन
प्रस्थं घृतस्य विपचेत्पिचुभागकल्कैः ॥
रास्नाविडङ्गसुरदारुगजोपकुल्या
द्विक्षारनागरनिशामिशिचव्यकुष्ठैः।
तेजोवतीमरिचवत्सकदीप्यकाग्नि-
रोहिण्यपुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥
मञ्जिष्ठयाऽतिविषया त्रिवृतायमान्या
संशुद्धगुग्गुलुपलैरपि पञ्चसंख्यैः।
तत्सेवितं घृतमतिप्रबलं समीरं
सन्ध्यस्थिमज्जगतमप्यपहन्ति कुष्ठम् ॥
नाडीव्रणार्बुदभगन्दरगण्डमाला
जत्रूर्ध्वंवातगदगुल्मगुदोत्थमेहान्।
यक्ष्मारुजं श्वसनपीनसकासशोफ-
हृत्पाण्डुरोगमथ विद्रधिवातरक्तम् ॥

क्वाथ—नीमकी छाल, गिलोय, बासा, पटोल और कटेली। दस दस पल (हरेक ५० तोले) लेकर सबको ३२ सेर पानी में पकावें। जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—रास्ना, बायबिडंग, देवदारु, गजपीपल, जवाखार, सज्जीखार, सोंठ, हल्दी, सौंफ, चव, कूठ, मालकंगनी, कालीमिर्च, इन्द्रजौ, अजमोद, चीता, कुटकी, पोखरमूल, बच, पीपलामूल, मजीठ, अतीस, निसोत और अजवायन । प्रत्येक ओषधि १।-१। तोला लेकर पानीके साथ पीस लें । शुद्ध गूगल २५ तोले ।

विधि—काथ, कल्क, २ सेर घी (और ४ सेर पानी) एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसके सेवनसे सन्धि, अस्थि, और मज्जागत प्रबल वायु, कुष्ठ, नाड़ीव्रण (नासूर), अर्बुद, भगन्दर, गण्डमाला, ऊर्ध्वजत्रुगत वातज रोग, गुल्म, अर्श, प्रमेह, राजयक्ष्मा, श्वास, पीनस, खांसी, शोथ, हृद्रोग, पाण्डु, विद्रधि और वातरक्त का नाश होता है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(४०५४) **पञ्चतिक्तकं घृतम्** (३)

(च. द.; भै. र.; यो. र.; वं. से.; वृं. मा. । कुष्ठ.; ग. नि. । घृताधि. १; वृ. यो. त. । त. १२०)

निम्बं पटोलं व्याघ्रीं च गुडूचीं वासकं तथा ।
कुर्याद्दशपलान्भागानेकैकस्य सुकुट्टितान् ॥
जलद्रोणे विपक्तव्यं यावत्पादावशेषितम् ।
घृतप्रस्थं पचेत्तेन त्रिफलागर्भसंयुतम् ॥
पञ्चतिक्तमिदं ख्यातं सर्पिः कुष्ठविनाशनम् ।
अशीतिं वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव पानादेवापकर्षति ।
दुष्टव्रणक्रिमीनर्शः पञ्चकासांश्च नाशयेत् ॥

काथ—नीमकी छाल, पटोल, कटेली, गिलोय और बासा १०-१० पल (हरेक ५० तोले) लेकर कूटकर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें। तत्पश्चात् यह काथ, २ सेर घी और १३ तोले ८ माशे त्रिफलेका कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । काथके जल जाने पर घृतको छान लें ।

इसके सेवनसे कुष्ठ, ८० प्रकारके वातज रोग, ४० प्रकारके पित्तज रोग, २० प्रकारके कफज रोग, दुष्ट व्रण, कृमि, अर्श और पांच प्रकारकी खांसी नष्ट होती है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४०५५) **पञ्चतिक्तं घृतम्** (४)

(वृ. नि. र.; ग. नि.; वृं. मा. । विस्फोटा.; वृ. यो. त. । त. १२५.; वं. से.; र. र.; यो. र.; च. द. । विस्फोटा.; यो. त. । त. ६६)

पटोलसप्तच्छदनिम्बवासा
फलत्रिकच्छिन्नरुहाविपकम् ।
तत्पञ्चतिक्तं घृतमाशु हन्ति
त्रिदोषविस्फोटविसर्पकण्डूः ॥

पटोल, सतौना, नीमकी छाल, बासा, हर्र, बहेड़ा, आमला और गिलोय के काथ तथा कल्कसे सिद्ध घृतसे त्रिदोषज विस्फोटक, विसर्प और खुजली नष्ट होती है ।

(**काथ**के लिये सब चीजें मिलाकर ४ सेर लें । ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें ।

कल्कके लिये सब चीजें समान-भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे । घी २ सेर ।)

(४०५६) **पञ्चपलं घृतम्**

(भै. र.; च. द. । गुल्मा.; च. सं. । चि. अ. ५ गुल्म.)

पिप्पल्याः पिचुरध्यर्द्धो दाडिमाद्द्विपलं पलम्।
धान्यात् पञ्च१घृताच्छुण्ठयाः कर्षः क्षीरं चतुर्गुणम् ॥
सिद्धमेतद् घृतं सद्यो वातगुल्मं चिकित्सति ।
योनिशूलं शिरःशूलमर्शांसि विषमज्वरम् ॥

पीपल १ तोला १०॥ माशे, अनारदाना १० तोले, धनिया ५ तोले और सोंठ १। तोला लेकर सब को पानीके साथ पीस लें । तत्पश्चात् यह कल्क, ५० तोले घी और २०० तोले दूध एकत्र मिलाकर पकावें । और दूध जल जाने पर घृतको छान लें ।

इसके सेवनसे वातज गुल्म, योनिशूल, शिर-पीड़ा, अर्श और विषमज्वर नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४०५७) **पञ्चपल्लवाद्यं घृतम्**

(च. द. । योनिव्याप.)

पञ्चपल्लवयष्ट्याह्वमालतीकुसुमैर्घृतम् ।
रविपक्वमन्यथा वा योनिगन्धार्तवनाशनम् ॥

पञ्चपल्लव (आमकेपत्ते, जामनके पत्ते, बिजौरे नीबूके पत्ते, कैथके पत्ते और बेलके पत्ते), मुलैठी और चमेली के फूलों के कल्क तथा काथसे सूर्यपाक द्वारा अथवा अग्निपर पकाकर सिद्ध किया हुवा घृत योनिकी गन्ध और आर्तव--विकारों को नष्ट करता है ।

१—प्रस्थमिति पाठान्तरम् ।

(सब चीजें समान भाग मिलाकर १ सेर लें और कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें । २ सेर पानी शेष रहने पर छान कर उसमें आधा सेर घी तथा उपरोक्त चीजोंका समानभाग-मिश्रित ६ तोले ८ माशे कल्क मिलाकर धूप में रक्खें और पानी खुश्क हो जाने पर छान लें । अथवा आगपर पकाकर पानी जला दें ।)

इस तेलका फाया योनिमें रखना चाहिये ।

(४०५८) **पञ्चमूलाद्यं घृतम्**

(यो. र.; वं. से. । ग्रहणी.; वृ. यो. त. । त. ६७; वा. भ. । चि. अ. १०)

पञ्चमूल्यभयाव्योषपिप्पलीमूलसैन्धवैः ।
रास्नाक्षारद्वयाजाजीविडङ्गशटिभिर्घृतम् ॥
पक्केन मातुलुङ्गस्य स्वरसेनाऽऽर्द्रकस्य च ।
शुष्कमूलककोलाम्बुचुक्रिकादाडिमस्य च ॥
तक्रमस्तुसुरामण्डसौवीरकतुषोदकैः ।
काञ्जिकेन च तत्पक्त्वा पीतमग्निकरं परम् ॥
शूलगुल्मोदरानाहकार्श्यानिलगदापहम् ॥

कल्क—बेलछाल, अरलुकी छाल, खम्भारीकी छाल, पाढल, अरणी, हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, सेंधा नमक, रास्ना, जवाखार, सज्जीखार, जीरा, बायबिड़ंग और शटी (कचूर) सब चीजें समानभाग-मिश्रित २० तोले ।

द्रव पदार्थ—पके हुवे बिजौरे नीबूका रस २ सेर, अदरकका रस २ सेर, सूखी मूलीका काढ़ा २ सेर, बेरका काढ़ा २ सेर, चूकेका रस २ सेर, अनारका रस २ सेर, तक्र २ सेर, दहीका पानी २ सेर, सुराका मण्ड (स्वच्छ भाग)

२ सेर, सौवीरक २ सेर, तुषोदक २ सेर और कांजी २ सेर।

२ सेर घी, कल्क और ये समस्त द्रव पदार्थ मिलाकर पकावें।

इसके सेवनसे अग्निकी वृद्धि होती तथा शूल, गुल्म, उदररोग, अफारा, कृशता और वातज रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०५९) **पञ्चारविन्दघृतम्**

(र. र. । उपदंशा.)

मृणालं पद्मबीजानि नालं पद्मश्च केसरम्।
सर्वं सप्तपलं कुर्यात् त्रिंशत्पलञ्च गोघृतम्॥
घृताच्चतुर्गुणं क्षीरं घृतशेषं विपाचयेत्।
पाकान्ते चूर्णमेषाञ्च क्षिप्त्वा तदवतारयेत्॥
भक्षयेल्लिङ्गरोगघ्नं घृतं पञ्चारविन्दकम्॥

कमलनाल, कमलगट्टा, कमलकी जड़, कमल-पुष्प और कमलकेसर। सबका समानभाग-मिश्रित चूर्ण ३५ तोले।

३० पल (१५० तोले) घी में यह चूर्ण और चार गुना दूध मिलाकर पकावें। जब घृत—मात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें उपरोक्त पांचों ओषधियों का ७ पल (३५ तोले) चूर्ण मिलावें।

इसके सेवनसे उपदंश (आतशक) नष्ट होती है।

(मात्रा—२ तोले तक।)

(४०६०) **पटोलघृतम्**

(वं. से.; वृ. मा.; वृ. नि. र. । क्षुद्ररोगा.; वृ. यो. त. । त. १२७)

पटोलपत्रत्रिफलारसाञ्जनविपाचितम्।
पीतं घृतं नाशयति कृच्छ्रमप्यहिपूतनम्॥

पटोलपत्र, हर्र, बहेड़ा, आमला और रसौतके कल्क तथा काथसे सिद्ध घृत पीनेसे कष्टसाध्य अहिपूतना रोग भी नष्ट हो जाता है।

(काथ ४ सेर, कल्क ६ तोले ८ माशे, घृत १ सेर। काथ जलने तक पकावें।)

(४०६१) **पटोलमूलादि घृतम्**

(च. सं. । चि. अ. १२ श्वयथु.)

पटोलमूलामरदारुदन्ती
त्रायन्तिपिप्पल्यभयाविशालाः।
यष्ट्याह्वयं तिक्तकरोहिणी च
सचन्दना स्यान्निचुलानि दार्वी॥
कर्षोन्मितैस्तैः कथितः कषायो
घृतेन पेयः कुडवेन युक्तः।
विसर्पदाहज्वरसन्निपातां-
स्तृष्णां विषाणि श्वयथुं निहन्ति॥

पटोलकी जड़, देवदारु, दन्तीमूल, त्रायमाणा, पीपल, हर्र, इन्द्रायणमूल, मुलैठी, कुटकी, लालचन्दन, हिज्जलफल और दारुहल्दी १।–१। तोला लेकर कूटकर उसे ८ गुने पानीमें पकावें। जब चौथा भाग पानी शेष रहे तो छान लें।

इस काथमें आधासेर घी मिलाकर पकावें। जब काथ जल जाय तो घी को छान लें।

यह घी विसर्प, दाह, ज्वर, सन्निपात, तृष्णा, विष और शोथका नाश करता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(नोट—पाककी उत्तमताके लिये चार गुना पानी भी डालना चाहिये ।)

(४०६२) पटोलशुण्ठिघृतम्

(च. द.; वृं. मा.; यो. र. । अम्लपित्त.)

पटोलशुण्ठयोः कल्काभ्यां केवलं कुलकेन वा ।
घृतप्रस्थं विपक्तव्यं कफपित्तहरं परम् ॥

पटोल और सोंठके अथवा केवल पटोल के कल्कसे सिद्ध घृत कफ और पित्तका नाश करता है ।

(कल्क २० तोले । घी २ सेर । पानी ८ सेर ।)

(४०६३) पटोलाद्यं घृतम्

(यो. त.; वं. से.; यो. र.; भै. र.; वृं. मा.; च. द. । नेत्ररो.; ग. नि. । नेत्र.; वा. भ. । उत्त. अ. १३)

पटोलं कटुकां दार्वीं निम्बं वासां फलत्रिकम् ।
दुरालभां पर्पटकं त्रायन्तीश्च पलोन्मिताम् ॥
प्रस्थमामलकानान्तु क्वाथयेन्नल्वणेऽम्भसि ।
तेन पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
कल्कै[1]र्भूनिम्बकुटजमुस्तयष्ट्याह्वचन्दनैः ।
सपिप्पलीकैस्तत्सिद्धं चक्षुष्यं शुक्रयोर्हितम् ॥
घ्राणकर्णाक्षिवर्त्मत्वङ्मुखरोगव्रणापहम् ।
कामलाज्वरवीसर्पगण्डमालापहं परम् ॥

क्वाथ—पटोल, कुटकी, दारुहल्दी, नीमकी छाल, बासा, हर्र, बहेड़ा, आमला, धमासा, पित्तपापड़ा और त्रायमाणा ५-५ तोले तथा आमला १ सेर लेकर कूट कर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—चिरायता, इन्द्रजौ, नागरमोथा, मुलैठी, सफेद चन्दन आर पीपल । सब समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें ।

विधि—२ सेर घी, क्वाथ और कल्क को एकत्र मिलाकर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें ।

यह घृत आंखोंके लिये हितकारी और शुक्र वर्द्धक है तथा नाक कान आंख त्वचा और मुखके रोग, व्रण, कामला, ज्वर, विसर्प और गण्डमालाका नाश करता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४०६४) पथ्याघृतम्

(च. सं. । चि. अ. १६ पाण्डु)

पथ्याशतरसे पथ्यावृन्तार्द्धशतकल्कवान् ।
प्रस्थः सिद्धो घृतात्पेयः सपाण्ड्वामयगुल्मनुत् ॥

क्वाथ—१०० पल (६। सेर) हर्र को कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—५० पल हर्रके डण्ठलों को पानीके साथ पीस लें ।

विधि—२ सेर घीमें यह कल्क तथा क्वाथ मिलाकर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें ।

[1] वाग्भटमें कल्क द्रव्योंमें नेत्रबाला अधिक है ।

इसके सेवनसे पाण्डु और गुल्म नष्ट होता है।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४०६५) **पथ्याद्यं घृतम्** (१)

(वृ. मा. । मदात्यया.)

पथ्याक्काथेन वा सिद्धं घृतं धात्रीरसेन वा ।
सर्पिः कल्याणकं वापि मदमूर्च्छापहं पिबेत् ॥

हर्रके क्काथ या आमलेके रससे सिद्ध घृत या '**कल्याणकघृत**' पिलानेसे मद और मूर्च्छा का नाश होता है ।

(क्काथ ४ सेर, घी १ सेर । मन्दाग्नि पर पकावें ।)

(४०६६) **पथ्याद्यं घृतम्** (२)

(ग. नि. । बालरो.)

पथ्यासौवर्चलक्षारवेल्लव्योषाग्निहिङ्गुभिः ।
तिक्तया च घृतं सिद्धं समक्षीरं व्यपोहति ॥
गुल्मानाहगुदभ्रंशश्वासकासविलम्बिकाः ॥

हर्र, सञ्चल, जवाखार, बायबिडंग, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, हींग और कुटकी के कल्क तथा समान भाग दूधके साथ पकाया हुवा घृत पीनेसे गुल्म, अफारा, गुदभ्रंश, श्वास, खांसी और विलम्बिका का नाश होता है ।

(कल्ककी सब चीज़ें समान भाग मिश्रित २० तोले । घी २ सेर । दूध २ सेर । पानी ८ सेर । सबको एकत्र मिलाकर पकावें ।)

(४०६७) **पथ्याद्यं घृतम्** (३)

(वृ. नि. र. । क्षय.)

पथ्याह्वनागबलयोः क्काथे क्षीरसमे घृतम् ।
पयसापिप्पलीवासाकल्कसिद्धं क्षते हितम् ॥

हर्र और नागबला (गंगेरन) के क्काथ तथा पीपल और बासे के कल्क और दूधके साथ घृत सिद्ध करके सेवन करानेसे क्षत-जन्य क्षयका नाश होता है ।

(क्काथ ८ सेर, घी २ सेर, दूध २ सेर और कल्क २० तोले ।)

(४०६८) **पद्मकाद्यं घृतम्** (१)

(यो. र.; वं. से.; वृ. नि. र.; वृं. मा.; च. द. । छर्दि.; वृ. यो. त. । त. ८३)

पद्मकामृतनिम्बानां धान्यचन्दनयोः पचेत् ।
कल्के क्काथे च हविषः प्रस्थं छर्दिनिवारणम् ॥
तृष्णारुचिप्रशमनं दाहज्वरहरं परम् ॥

क्काथ—पद्माख, गिलोय, नीमकी छाल, धनिया और चन्दन । सब समानभाग-मिश्रित ४ सेर लेकर कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—उपरोक्त चीज़ें समानभाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें ।

विधि—२ सेर घी तथा क्काथ और कल्क को एकत्र मिलाकर पकावें । जब क्काथ जल जाय तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे छर्दि; तृष्णा, अरुचि, दाह और ज्वरका नाश होता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

नोट—क्काथमें लालचन्दन तथा कल्क में सफेद चन्दन डालना चाहिये ।

(४०६९) **पद्मकाद्यं घृतम्** (२)

(वं. से.; यो. र. । विस्फोटा.)

पद्मकं मधुकं लोध्रं नागपुष्पश्च केशरम् ।
द्वे हरिद्रे विडङ्गानि सूक्ष्मैला तगरं तथा ॥
कुष्ठं लाक्षा पत्रकश्च सिन्धूत्थं[1] तुत्थमेव च ।
तोयेनालोड्य तत्सर्वं घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
यांश्च रोगान्निहन्त्येतत्तान्निबोध महामुने ।
सर्पकीटादिदष्टेषु लूतामूत्रकृतेषु च ॥
विविधेषु च स्फोटेषु तथा कुष्ठविसर्पिषु ।
नाडीषु गण्डमालासु प्रभिन्नासु विशेषतः ॥
अगस्तिविहितं धन्यं पद्मकं तु महाघृतम् ॥

पद्माक, मुलैठी, लोध, नागकेसर, केसर, हल्दी, दारुहल्दी, बायबिडंग, छोटी इलायची, तगर, कूठ, लाख, तेजपात, सेंधानमक और नीला-थोथा समान-भाग-मिलित २० तोले लेकर सबको पीसकर ८ सेर पानीमें मिलावें और उसे २ सेर घीमें डालकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसे सर्प इत्यादि विषैले जन्तुओं के काट-नेके स्थान पर तथा मकड़ी आदि के विष पर और विविध प्रकारके स्फोट, कुष्ठ, विसर्प, नाड़ी-व्रण (नासूर), गण्डमाला और विशेषतः जिस गण्डमाला में घाव हो गये हों उसमें लगानेसे लाभ होता है ।

(४०७०) **पलाशक्षारघृतम्**

(वृ. यो. त. । त. ९८ गुल्म; वं. से. । गुल्म.)

पलाशक्षारतोयेन सर्पिः सिद्धं पिबेद्वधूः ।
(यस्मिन्नवसरे क्षारतोयसाध्यघृतादिषु ।

[1] सिक्थकमिति पाठान्तरम् ।

फेनोद्गमस्य निष्पत्तिर्नष्टदुग्धसमाकृतिः ॥
स एव तस्य पाकस्य कालो नेतर लक्षणः ॥)

पलाश के क्षार के पानीसे पका हुवा घृत पिला-नेसे स्त्रियोंका रक्त गुल्म नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(ढाक (पलाश) की भस्मको ६ गुने पानीमें घोलकर २१ बार छानकर स्वच्छ पानी निकालें । यह पानी ४ सेर और घी १ सेर मिलाकर पकावें ।)

क्षारके पानीसे घृत पकाते समय जब फेन आने लगें और घृत फटे हुवे दूधके समान दीखने लगे तो उसे सिद्ध समझना चाहिये ।

(४०७१) **पलाशघृतम्**

(च. सं. । चि. अ. ५ रक्तपि.; वा. भ. । चि. अ. २)

पलाशवृन्तस्य रसेन सिद्धं
तस्यैव कल्केन मधुद्रवं हि ।
लिह्याद् घृतं वत्सककल्कसिद्धं
तद्वत्समङ्गोत्पललोध्रसिद्धम् ॥

पलाश (ढाक) के डण्ठलोंका रस ४ सेर, इन्हींका कल्क १० तोले और घी १ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब रस जल जाय तो घीको छान लें ।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे रक्तपित्त नष्ट होता है ।

(मात्रा—घी १ तोला । शहद २ तोले ।)

इसी प्रकार कुड़ेकी छालके कल्क या मजीठ,

मुलैठी और लोधके कल्कसे सिद्ध घृत भी रक्तपित्तको नष्ट करता है।

(४०७२) पलाशादिघृतम्

(रा. मा. । अर्शो. १८; वं. से. । अर्श.)

त्रिगुणेन पलाशभस्मनः सलिलेनोषणकत्रयेन वा परिपाचितमाज्यमश्नुते ध्रुवमाशु प्रशमोऽर्शसां भवेत् ॥

ढाक (पलाश) की राखका पानी ६ सेर, सोंठ, काली मिर्च और पीपलका समान-भाग-मिश्रित कल्क २० तोले तथा घी २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकावें।

इसे सेवन करने से अर्श शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। (मात्रा—६ माशे।)

(ढाक की राख को ६ गुने पानीमें घोल कर २१ बार छानकर स्वच्छ पानी निकालें। यही पानी उपरोक्त घीमें डालना चाहिये।)

(४०७३) पाठाद्यं घृतम् (१)

(ग. नि. । बाल रो. ११)

पाठा वचा सैन्धव शिग्रु पथ्या
कटुत्रयं गोनवनीतपक्वम्।
एतद्घृतं पानत एव कुर्यात्–
मतिं स्मृतिं रूपबलं शिशूनाम् ॥

क्काथ—पाठा, बच, सेंधानमक, सहंजनेकी छाल, हर्र, सोंठ, मिर्च और पीपल। सब समान-भाग-मिश्रित २ सेर लेकर कूटकर १६ सेर पानीमें पकावें जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—उपरोक्त चीजें समान-भाग-मिश्रित ६ तोले ८ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें।

विधि—१ सेर गायका नवनीत (मक्खन) और उपरोक्त क्काथ तथा कल्क एकत्र मिलाकर क्काथ जलने तक पकावें। तदनन्तर घृतको छान लें।

इसे बच्चोंको पिलानेसे उनकी बुद्धि, स्मरण-शक्ति, रूप और बलकी वृद्धि होती है।

(४०७४) पाठाद्यं घृतम् (२)

(वं. से. । बालरो.)

पाठामतिविषां कुष्ठं सरलं देवदारु च।
द्विपिप्पल्यौ तेजवती चित्रकं विश्वभेषजम् ॥
उभे हरिद्रे सरलं फलानि कुटजस्य च।
गण्डीरीमजमोदाश्च विडङ्गं कटुरोहिणीम् ॥
वचां सर्पसुगन्धाश्च श्रेयसीं मरिचानि च।
मातुलुङ्गस्य मूलानि दाडिमस्य रसेन तु ॥
श्लक्ष्णपिष्टानि संयोज्य क्षीरे सर्पिर्विपाचयेत्।
गृहग्रियैः कुमारः स्यात्क्रिमिकोष्ठश्च यो भवेत्॥
अरोचकगृहीतश्च तथा यश्चातिसार्य्यते।
एतत्सर्पिः प्रयोक्तव्यं कुमारो बलवान् भवेत् ॥
पाण्डुरोगाच्च गुल्माच्च तथा श्वयथुसञ्चयात्।
कृशभावाच्च दैन्याच्च स्वरभेदात्तथैव च ॥
मज्जालावर्णभेदाच्च क्षिप्रमेव विमुच्यते ॥

कल्क—पाठा, अतीस, कूठ, देवदारु, धूप-सरल, पीपल, गजपीपल, चव, चीता, सोंठ, हल्दी, दारुहल्दी, सरल (धूप सरल), इन्द्रजौ, मजीठ, अजमोद, बायबिड़ंग, कुटकी, बच, सर्पगन्धा (गन्ध रास्ना), हर्र, कालीमिर्च और बिजौरेकी

जड़। सब चीजें समान-भाग-मिश्रित २० तोले लेकर पानीके साथ पीस लें।

यह कल्क, २ सेर घी, २ सेर दूध और ८ सेर अनारका रस लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें और दूधमात्र शेष रहने पर छान लें।

इसे पिलानेसे बालकोंके अग्निमांद्य, कोष्ठके कृमि, अरुचि, अतिसार, पाण्डु, गुल्म, शोथ, कृशता, दीनता और स्वरभेद इत्यादि रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं तथा उनके बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है।

(४०७५) **पाठाद्यं घृतम्** (३)

(वा. भ. । चि. अ. ८)

पाठाजमोदधनिकाश्वदंष्ट्रापञ्चकोलकैः ।
सबिल्वैर्दधिचाङ्गेरीस्वरसे च चतुर्गुणे ॥
हन्त्याज्यं सिद्धमानाहं मूत्रकृच्छ्रं प्रवाहिकाम् ।
गुदभ्रंशार्तीगुदजग्रहणीगदमारुतान् ॥

पाठा, अजमोद, धनिया, गोखरु, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और बेलगिरि का समान-भाग-मिश्रित कल्क २० तोले तथा दही ४ सेर और चांगेरी (चूके) का स्वरस ४ सेर एवं घी २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इसके पीनेसे अफारा, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका, गुदभ्रंश, अर्श, संग्रहणी और वायुका नाश होता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०७६) **पाठाद्यं घृतम्** (४)

(वा. भ. । उ. अ. २ बालरो.)

पाठाबेल्लद्विरजनीमुस्तभार्ङ्गीपुनर्नवैः ।
सबिल्वत्र्यूषणैः सर्पिर्वृश्चिकालीयुतैः शृतम् ॥
लिहानो मात्रया रोगैर्मुच्यते मृत्तिकोद्भवैः ॥

क्राथ—पाठा, बायबिडंग, हल्दी, दारुहल्दी, नागरमोथा, भरंगी, पुनर्नवा (बिसखपरा), बेलकी छाल, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और वृश्चिकाली। सब चीजें समान-भाग-मिलित ४ सेर लेकर कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें। जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—उपरोक्त समस्त चीजें समान-भाग-मिलित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें।

विधि—क्राथ, कल्क और २ सेर घृतको एकत्र मिलाकर पकावें। जब क्राथ जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत बालकोंको खिलाने से उनके मिट्टी खानेसे उत्पन्न हुवे रोग नष्ट होते हैं।

(४०७७) **पाठाद्यं घृतम्** (५)

(वं. से. । अतिसा.)

पाठामतिविषां निम्बं समङ्गां चन्दनं जलम् ।
धातकीं मुस्तभूनिम्बं जटामांसीं सनागराम् ॥
दार्वीं च समभागानि घृतप्रस्थे विपाचयेत् ।
सज्वरोऽस्मिन्नतीसारे ग्रहण्यां पाण्डुरोगिणि ॥
मूत्रकृच्छ्रे गुदस्रावे विषूच्यामलसे हितः ॥

क्राथ—पाठा, अतीस, नीमकी छाल, मजीठ, चन्दन, सुगन्धबाला, धायके फूल, नागरमोथा,

चिरायता, जटामांसी (बालछड़), सोंठ, और दारुहल्दी । समान-भाग-मिश्रित ४ सेर लेकर कूटकर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—उपरोक्त सब चीजें समान-भाग-मिलित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें ।

विधि—२ सेर घी तथा यह क्वाथ और कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । क्वाथ जलने पर घी को छान लें ।

यह घृत ज्वरातिसार, संग्रहणी, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, अतिसार, विषूचिका और अलसकमें हितकारी है। (मात्रा १ तोला।) **नोट**—क्वाथमें लाल चन्दन और कल्क में सफेद चन्दन डालना चाहिये ।

(४०७८) पानीयकल्याणकं घृतम्

(वृ. मा.; भै. र.; च. द. । ज्वरा.; शा. ध. । ख. २ अ. २; वृ. यो. त. । त. ८८)

विशाला[1] त्रिफला कौन्ती देवदार्वेलवालुकम् ।
स्थिरा नतं हरिद्रे द्वे सारिवे द्वे प्रियङ्गुका ॥
नीलोत्पलैलामञ्जिष्ठादन्तीदाडिमकेसरम् ।
विडङ्गं पृश्निपर्णी च कुष्ठचन्दनपद्मकैः ॥
तालीसपत्रं बृहती मालत्याः कुसुमं नवम् ।
अष्टाविंशतिभिः कल्कैरेतैरक्षसमन्वितैः ॥
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
अपस्मारे ज्वरे कासे शोषे मन्देऽनले क्षये ॥
वातरक्ते प्रतिश्याये तृतीयकचतुर्थके ।
छर्द्यर्शोमूत्रकृच्छ्रे च विसर्पोपद्रवेषु च ॥
कण्डूपाण्ड्वामयोन्मादविषमेहगरेषु च ।
भूतोपहतचित्तानां गद्गदानामरेतसाम् ॥
शस्तं स्त्रीणां च वन्ध्यानामायुर्वर्णबलप्रदम् ।
अलक्ष्मीपापरक्षोघ्नं सर्वग्रहनिवारणम् ॥
कल्याणकमिदं सर्पिः श्रेष्ठं पुंसवनेषु च ॥

इन्द्रायण की जड़, हर्र, बहेड़ा, आमला, रेणुका, देवदारु, एलवालुक, शालपर्णी, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, दोनों प्रकारकी सारिवा, फूलप्रियङ्गु, नीलोत्पल, इलायची, मजीठ, दन्तीमूल, अनारदाना, नागकेसर, बायबिड़ंग, पृष्टपर्णी, कूठ, सफेदचन्दन, पद्माक, तालीसपत्र, कटेली और चमेली के नवीन पुष्प । प्रत्येक ओषधि १।-१। तोला लेकर पीसकर कल्क बनावें । तत्पश्चात् २ सेर घी में यह कल्क और ८ सेर पानी डालकर पकावें । जब पानी जल जाय तो घृत को छान लें ।

यह घृत अपस्मार, ज्वर, खांसी, शोष, अग्निमांद्य, क्षय, वातरक्त, प्रतिश्याय, तृतीयक ज्वर, चातुर्थिक (चौथिया) ज्वर, छर्दि (वमन), अर्श, मूत्रकृच्छ्र, विसर्प, कण्डु, पाण्डु, उन्माद, विष, प्रमेह, गरविष, भूतोन्माद, गद्गदता (हकलाना),

---

[1] वङ्गसेनमें इससे पूर्व इतना पाठ अधिक है:—

दशमूली तथा रास्ना वानरी त्रिवृता बला ।
मूर्वा शतावरी चेति क्वाथ्यैस्तु कुडवैः पृथक् ॥
कृत्क्वाथं पृथक् प्रस्थद्वयं मृद्वग्निना पचेत् ॥
(वं. से. । उन्मादा०)

दशमूल, रास्ना, कौंचके बीज, निसोत, खरैटी, मूर्वा, और शतावर पृथक् पृथक् २०-२० तोले लेकर कूटकर हरेकको अलग अलग ४-४ सेर पानीमें पकावें । जब १-१ सेर पानी रह जाय तो सब क्वाथों को एकत्र मिला लें।

वीर्यकी कमी और बन्ध्यत्व आदि रोगोंको नष्ट करता है। तथा इसके सेवन से आयु, वर्ण और बलकी वृद्धि होती है।

यह अलक्ष्मी, और ग्रहदोषों को भी शान्त करता है।

(मात्रा—१ तोला ।)

पारदादिसर्पिः

(वै. र. । उपदंश.; वृ. यो. त. । त. ११७)

लेपप्रकरणमें देखिये ।

(४०७९) पाराशरं घृतम् (१)

(च. द.; वं. से; वृ. मा. । राजय.)

यष्टीबलागुडूच्यल्पपञ्चमूलीतुलां पचेत् ।
शूर्पेऽपामष्टभागस्थे तत्र पात्रं पचेद् घृतम् ॥
धात्रीविदारीस्वरसे त्रिपात्रे पयसोर्मणे ।
सुपिष्टैर्जीवनीयैश्च पाराशरमिदं घृतम् ॥
ससैन्यं राजयक्ष्माणमुन्मूलयति शीलितम् ॥

क्काथ—मुलैठी, खरैटी, गिलोय, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला और गोखरु । सब समान-भाग-मिश्रित ६ । सेर लेकर, कूटकर सबको ६४ सेर पानी में पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—जीवनीय गणकी ओषधियां समान-भाग-मिश्रित १ सेर लेकर पानी के साथ पीस लें।

अन्य द्रव पदार्थ—आमलेका रस १२ सेर, विदारीकन्दका रस १२ सेर और दूध ३२ सेर।

विधि—उपरोक्त समस्त चीज़ें तथा ८ सेर घृत को एकत्र मिलाकर पकावें ।

यह घृत उपद्रव-सहित राजयक्ष्मा को नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ तोला)

(४०८०) पाराशरं घृतम् (२)

(वृ. नि. र. । क्षय.)

यष्टी बला गुडूची च पञ्चमूलं समांशकम् ।
क्काथेन सदृशं धात्रीरसं चेक्षुरसं तथा ॥
विदार्याया रसं चैव घृतं च समभागिकम् ।
क्षीरं दधिसमं चात्र नवनीतं तु तत्समम् ॥
द्राक्षातालीससंयुक्तं पथ्या लाभेन योजयेत् ।
सिद्धं घृतं च पानीये नस्ये बस्तौ प्रदापयेत् ॥
हरते राजयक्ष्माणं पाण्डुरोगं च दारुणम् ।
हलीमकार्शसी नित्यं रक्तपित्तनिवारणम् ॥
लेपनं दुष्टवीसर्पपित्तदग्धव्रणापहम् ॥

क्काथ—मुलैठी, खरैटी, गिलोय, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला और गोखरु । समान-भाग-मिश्रित ४ सेर लेकर कूटकर ३२ सेर पानी में पकावें जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

अन्य द्रव पदार्थ—आमलेका रस ८ सेर, ईखका रस ८ सेर, बिदारीकन्दका रस ८ सेर, दूध ८ सेर और दही ८ सेर।

कल्क—दाख (मुनक्का), तालीसपत्र और हर्र । समान-भाग-मिश्रित २ सेर लेकर पानी के साथ पीस लें ।

विधि—८ सेर घी, ८ सेर नवनीत (मक्खन) और उपरोक्त समस्त पदार्थों को एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसे नस्य और बस्तिद्वारा प्रयुक्त करना तथा पिलाना चाहिये ।

इसके सेवनसे राजयक्ष्मा, पाण्डु, हलीमक, अर्श और रक्तपित्तका नाश होता है। (मात्रा—१ तोला।)

इसका लेप करनेसे दुष्ट वीसर्प और अग्निदग्ध व्रण नष्ट होता है।

(४०८१) **पारूषकं घृतम्**

(च. सं। चि. अ. २९ वातर.; भा. प्र.। वा. र.)

त्रायन्तिका तामलकी द्विकाकोली शतावरी।
कशेरुका कषायेण कल्कैरेभिः पचेद्घृतम् ॥
दत्त्वा परूषकद्राक्षाकाश्मर्येक्षुरसान् समान्।
पृथग्विदार्याः स्वरसं तथा क्षीरं चतुर्गुणम् ॥
एतत्प्रायोगिकं सर्पिः पारूषकमिति स्मृतम्।
वातरक्ते क्षते क्षीणे वीसर्पे पैत्तिके ज्वरे ॥

क्वाथ—त्रायमाना, भुईआमला, काकोली, क्षीर काकोली, शतावर और कसेरु। समान भाग मिश्रित १ सेर लेकर, कूटकर सबको ८ सेर पानीमें पकावें। जब २ सेर पानी रह जाय तो छान लें।

कल्क—उपरोक्त चीजें समान-भाग-मिश्रित २० तोले लेकर पानी के साथ पीस लें।

अन्य द्रव पदार्थ—फालसेका रस २ सेर, दाख (अंगूर) का रस २ सेर, खम्भारीके फलोंका रस २ सेर, ईखका रस २ सेर और बिदारीकन्द का रस २ सेर तथा दूध ८ सेर।

विधि—२ सेर घी और उपरोक्त समस्त पदार्थोंको एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह घृत वातरक्त, क्षत, क्षीणता, वीसर्प और पैत्तिक ज्वरमें उपयोगी है।

(४०८२) **पाषाणभेदाद्यं घृतम्**

(च. द.; भा. प्र.; वं. से.; वृ. मा.; ग. नि.। अश्मर्य.; वा. भ.। चि. अ. ११)

पाषाणभेदो वसुको वशिरोऽश्मन्तकं तथा।
शतावरी श्वदंष्ट्रा च बृहती कण्टकारिका ॥
कपोतवक्त्रार्तगलकाञ्चनोशीरगुन्द्रकाः।
वृक्षादनी भल्लुकश्च वरुणः शाकजं फलम् ॥
यवाः कुलत्थाः कोलानि कतकस्य फलानि च।
ऊषकादिप्रतिवापमेषां क्वाथे शृतं घृतम् ॥
भिनत्ति वातसम्भूतामश्मरीं क्षिप्रमेव तु।

क्वाथ-पखानभेद, लाल आक, चिरचिटा, पत्थरचटा, शतावर, गोखरु, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, मकोय, नीले फूलकी कटसरैया, कचनारकी छाल, खस, गुन्द्पटेर, बन्दा, अरलुकी छाल, बरनेकी छाल, सागोनके फल, जौ, कुलथी, बेर और निर्मलीके फल। समान भाग मिश्रित ४ सेर लेकर सबको एकत्र कूटकर ३२ सेर पानी में पकावें जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

इस क्वाथ और 'ऊषकादि गण[1]' के कल्कके साथ २ सेर घृत सिद्ध करें।

इसके सेवन से वातज पथरी शीघ्र ही टूट कर निकल जाती है।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक।)

---

[1]. रेह, सेंधानमक, शिलाजीत, दो प्रकारका कसीस, हींग और नीला थोथा (शुद्ध)। समान भाग मिश्रित १३ तोले चार माशे।

(४०८३) **पिप्पलीघृतम्** (१)

(वृ. मा. । उदरा.)

पिप्पलीकल्कसंयुक्तं घृतं क्षीरचतुर्गुणम् ।
पचेत्प्लीहाग्निसादादियकृद्रोगहरं परम् ॥

पानीके साथ पिसी हुई पीपल २० तोले, घी २ सेर और दूध ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर दूध जलने तक पकावें। तदनन्तर छान लें।

यह घृत तिल्ली, अग्निमांद्य, और यकृद्रोगोंको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०८४) **पिप्पलीघृतम्** (२)

(र. र.; च. द. । शूला.; यो. र.; वं. से.; वृ. मा.; वृ. यो. त. । अम्लपि.)

क्वाथेन कल्केन च पिप्पलीनां
सिद्धं घृतं माक्षिकसंप्रयुक्तम् ।
क्षीरान्नपस्यैव निहन्त्यवश्यं
शूलं प्रवृद्धं परिणामसंज्ञम् ॥

पीपलका क्वाथ ८ सेर, पीपलका कल्क १३ तोले ४ माशे और घी २ सेर। सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें।

इसे शहदमें मिलाकर सेवन करने से प्रवृद्ध परिणाम शूल अवश्य नष्ट हो जाता है।

पथ्य—दूधभात।

(मात्रा—घी १ तोला। शहद २ तोले।)

(४०८५) **पिप्पलीचित्रकघृतम्**

(च. द.; वं. से.; भै. र. । प्लीहा.)

पिप्पलीचित्रकान्मूलं पिष्ट्वा सम्यग्विपाचयेत् ।
घृतं चतुर्गुणक्षीरं यकृत्प्लीहोदरापहम् ॥

पीपल १० तोले तथा चीतेकी जड़ १० तोले लेकर दोनों को पानी के साथ पीस लें। तदनन्तर यह कल्क, २ सेर घी और आठ सेर दूध एकत्र मिलाकर पकावें। जब दूध जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे यकृत्, प्लीहा और उदररोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१ तोला)

(४०८६) **पिप्पल्यादिघृतम्**

(च. सं. । चि. अ. १८ कास.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ।
धान्यपाठावचारास्नायष्ट्याह्वक्षारहिङ्गुभिः ॥
कोलमात्रैर्घृतप्रस्थाद्दशमूलीरसाढके ।
सिद्धाच्चतुर्थिकां पीत्वा पेयामण्डं पिबेदनु ॥
तच्छ्वासकासहृत्पार्श्वग्रहणीदोषगुल्मनुत् ।
पिप्पल्याद्यं घृतं चैतदात्रेयेण प्रकीर्तितम् ॥

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, धनिया, पाठा, बच, रास्ना, मुलैठी, जवाखार और हींग। प्रत्येक ७॥ माशे लेकर सबको पानीके साथ पीस लें।

क्वाथ—दशमूल ४ सेर। पाकार्थ जल ३२ सेर। शेष क्वाथ ८ सेर।

विधि—२ सेर घी, कल्क और क्वाथ एकत्र

मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इसे ५ तोलेकी मात्रानुसार पीकर ऊपरसे पेया या मण्ड पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे श्वास, खांसी संग्रहणी और गुल्मका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ तोला ।)

(४०८७) पिप्पल्याद्यं घृतम् (१)

(च. सं. । चि. अ. ३; वृं. मा.; वृ. नि. र.; वं. से.; र. र.; भै. र. । ज्वरा.)

पिप्पल्यश्चन्दनं मुस्तमुशीरं कटुरोहिणी ।
कलिङ्गकस्तामलकी[1] सारिवाऽतिविषास्थिरा ॥
द्राक्षामलकबिल्वानि[2] त्रायमाणा निदिग्धिका ।
सिद्धमेतैर्घृतं सद्यो जीर्णज्वरमपोहति ॥
क्षयं कासं शिरःशूलं पार्श्वशूलं हलीमकम् ।
अंसाभितापमग्निं च विषमं सन्नियच्छति ॥

क्काथ—पीपल, चन्दन, नागरमोथा, खस, कुटकी, इन्द्रजौ, भुईआमला, सारिवा, अतीस, शालपर्णी, दाख (मुनक्का), आमला, बेलछाल, त्रायमाना और कटेली । सब चीजें समान-भाग-मिश्रित ४ सेर लेकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—उपरोक्त समस्त चीजें सम-भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

विधि—यह क्काथ, कल्क और २ सेर घी एकत्र मिलाकर पकावें । जब क्काथ जल जाय तो घीको छान लें ।

यह घृत जीर्णज्वर, क्षय, खांसी, शिरशूल, पसलीका दर्द, हलीमक और अंसाभिताप (कन्धोंकी तपन) को शीघ्र ही नष्ट कर देता है । तथा इसके सेवनसे विषमाग्नि ठीक हो जाती है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

नोट—क्काथमें लाल चन्दन तथा कल्क में सफेद चन्दन डालना चाहिये ।

(४०८८) पिप्पल्याद्यं घृतम् (२)

(वृ. मा.; वं. से.; च. द. । राजयक्ष्मा.; वृ. नि. र.; वं. से. । कास.; वृ. यो. त. । त. ७८)

पिप्पलीगुडसंसिद्धं छागक्षीरयुतं घृतम् ।
एतदग्निविवृद्ध्यर्थं सर्पिश्च क्षयकासिनाम् ॥

पीपलका कल्क १० तोले तथा गुड़ १० तोले, घी २ सेर और बकरीका दूध ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसके सेवनसे क्षय और खांसी नष्ट होती तथा अग्नि तीव्र होती है ।

(मात्रा—१ तोला)

(४०८९) पिप्पल्याद्यं घृतम् (३)

(ग. नि. । बाल.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलकटुकादेवदारुभिः ।
क्षारद्वयविडाजाजीबिल्वमध्याग्निदीप्यकैः ॥
दधिसौवीरकसुरामण्डैश्च विपचेद् घृतम् ।
हन्ति प्रयुक्तं तत्काले रोगान् परिभवाश्रयान् ॥

---

[1] कलिङ्गकस्त्वामलकीति पाठान्तरम् ।

[2] द्राक्षामलकबीजानीति पाठान्तरम् ।

पीतं पीतं च यः स्तन्यं सवातमतिसार्यते ।
तस्याप्येतत्परं पथ्यं दीपनं बलवर्णकृत् ॥

पीपल, पीपलामूल, कुटकी, देवदारु, जवाखार, सज्जीखार, बिडलवण, जीरा, बेलगिरी, चीता और अजवायन समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर सबको पानीके साथ पीस लें। तत्पश्चात् यह कल्क, २ सेर घी, २ सेर दही, २ सेर सौवीरक, २ सेर सुरामण्ड और २ सेर उपरोक्त कल्कवाली ओषधियोंका काथ लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

जो बालक दूध पीकर तुरन्त वमन कर देता हो या जिसे अपान वायुके साथ दस्त आता हो उसके लिये यह घृत अत्यन्त उपयोगी है।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त और बलवर्णकी वृद्धि होती है।

(काथ बनाने के लिये समस्त ओषधियां समान-भाग-मिश्रित १ सेर। पाकार्थ जल ८ सेर। शेष काथ २ सेर।)

(४०९०) **पिप्पल्याद्यं घृतम्** (४)

(वृ. यो. त. । त. ८१)

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम् ।
पचेन्मूत्रेण मतिमान्कफजे स्वरसंक्षये ॥

पीपल, पीपलामूल, कालीमिरच और सोंठके कल्क तथा चार गुने गोमूत्रके साथ सिद्ध घृत कफज स्वरभंगको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला)

(कल्कके लिये सब चीजें समान-भागमिश्रित २० तोले। घी २ सेर। गोमूत्र ८ सेर।)

(४०९१) **पिप्पल्याद्यं घृतम्** (५)

(वै. म. र. । पटल ३)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रको हस्तिपिप्पली ।
सैन्धवं सयवक्षारं हिङ्गुसौवर्चलं तथा ॥
मरिचं नागरं चैव पलांशैस्तैर्विपाचयेत् ।
क्षीरे चतुर्गुणे सम्यक् सर्पिः सिद्धं पिबेन्नरः ॥
शूलगुल्मोदरार्तिघ्नं हृद्रोगोरःक्षतापहम् ।
आनाहपाण्डुताप्लीहकासश्वासविकारनुत् ॥
पिप्पल्याद्यमिदं सर्पिः पित्तगुल्महरं परम् ॥

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चीता, गजपीपल, सेंधानमक, जवाखार, हींग, सञ्चल (काला नमक), काली मिर्च और सोंठ। प्रत्येक ५-५ तोले लेकर पानी के साथ पीस लें।

काथ—उपरोक्त चीजें सम-भाग-मिश्रित ५ सेर। पाकार्थ जल ८० सेर। शेष काथ २० सेर।

विधि—कल्क, काथ, ५ सेर घी और २० सेर दूध लेकर सबको एकत्र मिला कर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह घृत शूल, गुल्म, उदररोग, हृद्रोग, उरःक्षत, अफारा, पाण्डु, तिल्ली, खांसी, श्वास और पित्तगुल्मको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०९२) **पिप्पल्याद्यं घृतम्** (६)

(ग. नि. । परिशि. घृता.)

पिप्पलीमरिचहिङ्गुनागरं
मातुलुङ्गमथ बिल्वशुण्ठिका ।
कुष्ठधान्यकमथाम्लवेतसं
क्षारवन्ति लवणानि पञ्च च ॥
तिन्तिडीकमथ कारवी वचा
दाडिमं च चविका तथैव च ।
चित्रकं च सपुनर्नवं भवेद्
हस्तिपिप्पलियुता ह्यजाजिका ॥
शुक्तिकाबदरमूलपौष्करं
पत्रकेण सह तुम्बरु स्मृतम् ।
कर्षभागसहितांस्तथा हरेत्
श्लक्ष्णपिष्टमथ सञ्चयेत्ततः ॥
प्रस्थमत्र तु घृतस्य दापयेत्
दध्न एव च भवेत्तदाढकम् ।
सर्वमेतदभिमृश्य शास्त्रतः
पाचयेत मृदुनाऽग्निना सुखम् ॥
मारुतोपहतगात्रचेतसां
पार्श्वपृष्ठहनुजत्रुरोगिणाम् ।
क्षयगरविषदूषितान् मनुष्यान्
गतवयसो बलवर्णविप्रयुक्तान् ॥
घृतमिदमगदान्करोति सद्यः
पवनकृतान् शमयेच्च सर्वरोगान् ॥

कल्क—पीपल, कालीमिर्च, हींग, सोंठ, बिजौरे नीबूकी जड़, बेलगिरी, कूठ, धनिया, अम्लबेत, यवक्षार, पांचों नमक, तिन्तड़ीक, कलौंजी, बच, अनारदाना, चव, चीता, पुनर्नवा (साठी—बिसखपरा), गजपीपल, जीरा, चूका, बेरीकी जड़की छाल, पोखरमूल, तेजपात और कुस्तुम्बरु । प्रत्येक वस्तु १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

तदनन्तर यह कल्क, २ सेर घी और ८ सेर दूध एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध जल जाय तो घृतको छान लें ।

यह घृत शारीरिक और मानसिक वात-व्याधि, पार्श्वपीड़ा, कमरका दर्द, ठोडीका रह जाना, जत्रुरोग, क्षय और समस्त वात-व्याधियों तथा गरविषको नष्ट करता है । एवं वृद्धों में बल वर्णकी वृद्धि करता है ।

(४०९३) **पिप्पल्याद्यं घृतम्** (७)

(भै. र. । बालरोग.)

पिप्पलीधातकीपुष्पधात्रीफलकशेरुभिः ।
वचामूर्वामृतापाठाकटुकातिविषाघनैः ॥
जीवनीयैर्घृतं सिद्धं शस्तं दशनजन्मनि ।
सुखोष्णेन यथामात्रं पयसैतत्प्रयोजयेत् ॥

क्वाथ—पीपल, धायके फूल, आमला, कसेरु, बच, मूर्वा, गिलोय, पाठा, कुटकी, अतीस, नागरमोथा और जीवनीय गणकी[1] ओषधियां; सब समान-भाग-मिलित ४ सेर लेकर कूटकर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—उपरोक्त ओषधियां समान-भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

१ जीवनीय गण-प्रयोग संख्या १९८२ देखिये ।

विधि—काथ, कल्क और २ सेर घीको एकत्र मिलाकर पकावें ।

जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसे मन्दोष्ण दूधमें डालकर पिलानेसे बालकों-के दांत निकलनेके समय होने वाले समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(४०९४) **पिप्पल्याद्यं घृतम्** (८)

(वं. से.; र. र. । सूतिका.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रको हस्तिपिप्पली ।
चव्यश्च रजनी देया भद्रमुस्तवचाभयाः ॥
धान्यकमजमोदा च सपञ्चलवणानि च ।
भद्रदारुयवानी च भार्ङ्गीकुटजतण्डुलाः ॥
कण्टकार्याश्च मूलं वै बृहती बिल्वपेशिका ।
मरिचानि विडङ्गानि कल्कैरेतैश्च पादिकैः ॥
यवकोलकुलित्थानां निर्यूहे च चतुर्गुणे ।
दधिप्रस्थं पयः प्रस्थं दत्त्वा प्रस्थं घृतं पचेत् ॥
वातिकान्पैत्तिकांश्चैव श्लैष्मिकान्सान्निपातिकान् ।
सूतिकोपद्रवान्सर्वानभ्यङ्गादेव नाशयेत् ॥

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चीता, गज-पीपल, चव, हल्दी, नागरमोथा, बच, हर्र, धनिया, अजमोद, पांचों नमक, देवदारु, अजवायन, भरंगी, इन्द्रजौ, कटेलीकी जड़, बड़ीकटेली, बेलगिरी, कालीमिर्च और बायबिड़ंग समान-भाग-मिश्रित २० तोले लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

काथ—जौ, बेर और कुलथी समान-भाग-मिलित ४ सेर लेकर कूटकर सबको ३२ सेर पानी में पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

विधि—काथ, कल्क, २ सेर घी, २ सेर दही और २ सेर दूध एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह घृत पीने तथा मर्दन करनेसे वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज सूतिका-रोगको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४०९५) **पिप्पल्याद्यं घृतम्** (९)

(च. सं. । चि. अ. १४ अर्श.)

पिप्पलीं नागरं पाठां श्वदंष्ट्रां च पृथक् पृथक् ।
भागांस्त्रिपलिकान् कृत्वा कषायमुपकल्पयेत् ॥
गण्डीरं पिप्पलीमूलं व्योषं चव्यं च चित्रकम् ।
पिष्ट्वा कषाये विनयेत्पूते द्विपलिकं पृथक् ॥
पलानि सर्पिषस्तस्मिंश्चत्वारिंशत्प्रदापयेत् ।
चाङ्गेरी स्वरसं तुल्यं सर्पिषा दधिषड्गुणम् ॥
मृद्वग्निना ततः साध्यं सिद्धं सर्पिर्निधापयेत् ।
तदाहारे विधातव्यं पाने प्रायोगिके विधौ ॥
ग्रहण्यर्शोविकारघ्नं गुल्महृद्रोगनाशनम् ।
शोथप्लीहोदरानाहमूत्रकृच्छ्रज्वरापहम् ॥
कासहिकारुचिश्वासस्रूदनं पार्श्वशूलनुत् ।
बलपुष्टिकरं वर्ण्यमग्निसन्दीपनं परम् ॥

काथ—पीपल, सोंठ, पाठा और गोखरु ३-३ पल (प्रत्येक १५ तोले) लेकर सबको ८ गुने पानीमें पकावें ।

जब चौथा भाग पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—मजीठ, पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, चव और चीता । प्रत्येक ओषधि १०-१० तोले लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

विधि—४० पल (५ सेर) घी, काथ, कल्क और ४० पल चूकेका रस तथा ३० सेर दही एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसे पिलाना और आहारके साथ खिलाना चाहिये।

यह घृत ग्रहणी, अर्श, गुल्म, हृद्रोग, शोथ, प्लीहा, उदररोग, अफारा, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, खांसी, हिचकी, अरुचि, श्वास और पार्श्वशूलको नष्ट करता तथा बल, वर्ण, पुष्टि और अग्निकी वृद्धि करता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०९६) पुनर्णवाघृतम्

(भै. र. । शोथा.; च. द. । शोथा.)

पुनर्नवाक्वाथकल्कसिद्धं शोथहरं घृतम्।

२ सेर पुनर्नवाको १६ सेर पानीमें पकावें। जब ४ सेर पानी शेष रहे तो छानकर उसमें १ सेर घी और ६ तोले ८ माशे पुनर्नवाका कल्क मिलाकर पकावें। जब काथ जल जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत शोथको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०९७) पुनर्नवादिघृतम् (१)

(ग. नि. । मदात्य. अ. १७; र. र.; च. द.; वृं. मा. । मदात्य.)

पयः पुनर्नवाक्वाथयष्टीकल्कप्रसाधितम्।
घृतं पुष्टिकरं पानान्मद्यपानाद्धतौजसाम्॥

४ सेर पुनर्नवा (बिसखपरे) को ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छानकर उसमें २ सेर घी, २ सेर दूध और २० तोले मुलैठीका कल्क मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

मद्यपानके कारण जिन व्यक्तियोंका ओज क्षीण हो गया हो उनके लिये यह घृत पौष्टिक है।

(मात्रा १ तोला।)

(४०९८) पुनर्नवादिघृतम् (२)

(ग. नि.; वृ. मा.; च. द.; वं. से. । शोथा.)

पुनर्नवाचित्रकदेवदारुपञ्चोषणक्षारहरीतकीनाम्
कल्केन पक्वं दशमूलतोये घृतोत्तमं शोथनिषूदनं हि॥

कल्क—पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), चीता, देवदारु, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, यवक्षार और हर्र। समान भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें।

काथ—४ सेर दशमूलको ३२ सेर पानी में पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

विधि—२ सेर घी, कल्क और काथको एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह घृत शोथको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४०९९) पुनर्नवादिघृतम् (३)

(ग. नि. । श्वय. अ. १३)

पुनर्नवादेवदारुपथ्यानागरसाधितम्।
शुष्कमूलकनिर्यूहे वातशोफी घृतं पिबेत्॥

कल्क—पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), देवदारु, हर्र और सोंठ समान भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें।

क्वाथ—४ सेर सूखी मूलीको ३२ सेर पानी में पकाकर ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

विधि—क्वाथ, कल्क और २ सेर घीको एकत्र मिलाकर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे वातज शोथ नष्ट होता है।

(४१००) **पुनर्नवाद्यं घृतम्** (१)

(भै. र. । शोथा.)

पुनर्णवा तुला ग्राह्या जलद्रोणे विपाचयेत् ।
चतुर्भागावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
भूनिम्बविजया शुण्ठी शोथघ्नामरदारु च ।
कासं श्वासं ज्वरं हन्ति शोथश्चापि सुदारुणम् ॥

क्वाथ—६। सेर पुनर्नवा (बिसखपरा-साठी) को ३२ सेर पानी में पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

कल्क—चिरायता, भांग, सोंठ, पुनर्नवा और-देवदारु समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर सबको पानीके साथ पीस लें।

विधि—क्वाथ, कल्क और २ सेर घृतको एक साथ मिलाकर पकावें जब क्वाथ जल जाय तो घृतको छान लें।

इसके सेवनसे खांसी, श्वास, ज्वर और कष्ट-साध्य शोथ नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४१०१) **पुनर्नवाद्यं घृतम्** (२)

(ग. नि. । राजय. अ. ९)

पुनर्नवाबलारास्नास्थिरापिप्पलिगोक्षुरैः ।
जीवन्त्या च घृतं सिद्धं पयसा शोषजित्परम् ॥

क्वाथ—पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), खरैटी, रास्ना, शालपर्णी, पीपल, गोखरु और जीवन्ती समान भाग मिश्रित ४ सेर लेकर, कूट कर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—उपरोक्त समस्त ओषधियां समान-भाग-मिलित २० तोले लेकर पानी के साथ पीस लें।

विधि—क्वाथ, कल्क, २ सेर घी और २ सेर दूध एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसके सेवन से शोथ नष्ट होता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(४१०२) **पुनर्नवाद्यं घृतम्** (३)

(वा. भ. । चि. अ. ३)

पुनर्नवशिवाटिकासरलकासमर्दामृता
पटोलबृहतीफणिज्झकरसैः पयः संयुतैः ।
घृतं त्रिकटुना च सिद्धमुपयुज्य सञ्जायते
न कासविषमज्वरक्षयगुदाङ्कुरेभ्यो भयम् ॥

क्वाथ—लाल और सफेद पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), सरल (धूप सरल), कसौंदी, गिलोय, पटोल, कटेली और तुलसी समान-भाग-मिश्रित ४ सेर लेकर, कूटकर सबको ३२ सेर

पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—२० तोले त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) को पानीमें पीस लें।

विधि—२ सेर घी, २ सेर दूध और काथ तथा कल्कको एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृत-मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह घृत खांसी, विषम-ज्वर, क्षय और अर्शको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४१०३) पुनर्नवाद्यं घृतम् (४)

(वं. से.; वृ. नि. र.; यो. र.; वृ. यो. त. । शोथा.)

पुनर्नवापत्ररसालमूलं संक्षुद्य तोयार्मणशेषसिद्धम्।
चतुर्थभागेन घृतं विपक्वं प्रस्थं तु तत्कल्कपलाष्टकेन ॥
संसेवितं वातबलासरोगान्सर्वांश्च शोथानपि दुस्तरांश्च।
गुल्मोदरप्लीहगुदोद्भवांश्च निहन्ति वह्निं कुरुते हि पुंसाम् ॥

काथ—पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी) के पत्ते और आमकी जड़की छाल समान-भाग-मिश्रित ६। सेर लेकर, कूटकर सबको ३२ सेर पानी में पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—उपरोक्त सब चीजें समान-भाग-मिश्रित ४० तोले लेकर सबको पानी के साथ पीस लें।

विधि—काथ, कल्क और २ सेर घीको एकत्र मिलाकर पकावें । जब काथ जल जाय तो घृतको छान लें।

इसके सेवनसे वातकफज रोग, भयंकर शोथ, गुल्म, उदररोग, प्लीहा और अर्शका नाश तथा अग्निकी वृद्धि होती है।

(मात्रा—१ तोला ।)

(४१०४) पुराणघृतप्रयोगः

(ग. नि. । उन्माद. अ. ३)

पुरानं पाययेच्चैनं सर्पिरुन्माद नाशनम् ।
स्थितं वर्षशतं श्रेष्ठं कौम्भं सर्पिस्तदुच्यते ॥
पानाभ्यञ्जननस्येषु हितमुन्मादिनां सदा ॥

सौ वर्षका पुराना घी "कौम्भं" कहलाता है । इस घीको पिलाने, इसकी मालिश करने और नस्य देनेसे उन्माद नष्ट होता है।

(४१०५) पैशाचकं घृतम् (महा)

(वा. भ. । चि. अ. ६)

जटिला पूतना केशी चोरटी मर्कटी वचा ।
त्रायमाणा जया वीरा चोरकः कटुरोहिणी ॥
कायस्था शूकरी छत्रा सातिच्छत्रा पलङ्कषा ।
महापुरुषदन्ती च वयस्था लाङ्गलीद्वयम् ॥
कटम्भरावृश्चिकाली शालिपर्णी च तैर्घृतम् ।
सिद्धं चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥
महापैशाचकं नाम घृतमेतद्यथामृतम् ।
बुद्धिमेधास्मृतिकरं बालानां चाङ्गवर्द्धनम् ॥

बालछड़, हर्र, भूतकेश, स्थल कमल, कौंचके बीज, बच, त्रायमाना, जया, क्षीरकाकोली (अथवा

पृश्निपर्णी), चोरहोली, कुटकी, संभालु, बाराही-कन्द, सौंफ, सोया, गूगल, सतावर, गिलोय (या ब्राह्मी), दोनों प्रकारकी रास्ना, प्रसारणी, बिछाती और शालपर्णी ।

इनके कल्क और काथके साथ घृत सिद्ध करें ।

काथके लिये—सब चीजें समान-भाग-मिश्रित ६। सेर । पानी ३२ सेर । शेष काथ ८ सेर ।

कल्कके लिये—सब चीजें समान-भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें ।

काथ, कल्क और २ सेर घृतको एकत्र मिलाकर पकावें ।

यह घृत चातुर्थिक ज्वर, उन्माद और महा-पस्मार नाशक तथा बुद्धि, मेधा और स्मृति-वर्द्धक एवं बालकोंकी शरीरवृद्धि करने वाला है ।

(४१०६) **प्रपौण्डरीकाद्यं घृतम्** (१)

(वृ. मा.; च. द. । व्रण.)

प्रपौण्डरीकमञ्जिष्ठामधुकोशीरपद्मकैः ।
सहरिद्रैः कृतं सर्पिः सक्षीरं व्रणरोपणम् ॥

काथ—पुण्डरिया, मजीठ, मुलैठी, खस, पद्माक और हल्दी समान-भाग-मिश्रित ४ सेर लेकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—उपरोक्त समस्त चीजें समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

विधि—काथ, कल्क और २ सेर दूध तथा २ सेर घृतको एकत्र मिलाकर पकावें जब घृत-मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह घी (लगाने और खानेसे) व्रण भर जाते हैं ।

(४१०७) **प्रपौण्डरीकाद्यं घृतम्** (२)

(वं. से. । मुखरो.)

प्रपौण्डरीकमधुकत्रिफलोत्पलसाधितम् ।
तैलं घृतं वा वातघ्नं शीतादेः संप्रशस्यते ॥

पुण्डरिया, मुलैठी, हर्र, बहेड़ा, आमला और नीलोत्पल के काथ तथा कल्कसे सिद्ध तैल या घृत शीताद आदि मसूड़ों के रोगोंमें हितकर है । यह वायुको नष्ट करता है ।

काथके लिये—सब चीजें समान-भागमिश्रित ४ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष काथ ८ सेर ।

कल्क के लिये—सब चीजें समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे ।

सबको २ सेर घीमें मिलाकर पकावें ।

इति पकारादिघृतप्रकरणम् ।



अथ पकारादितैलप्रकरणम्

(४१०८) **पञ्चमूलाद्यं तैलम्** (१)

(च. सं. । चि. वातव्या.)

पञ्चमूलकषायेण पिण्याकं बहुवार्षिकम् ।
पक्त्वा तस्य रसं पूत्वा तेन तैलं विपाचयेत् ॥
पयसाष्टगुणेनैतत्सर्ववातविकारनुत् ।
संसृष्टे श्लेष्मणा चैतद्वाते शस्तं विशेषतः ॥

बेलछाल, श्योनाक (अरलु) की छाल, खम्भारीकी छाल, पाढलकी छाल और अरणी समान-भाग-मिश्रित ४ सेर लेकर सबको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें । तत्पश्चात् इसमें १ सेर तिलकी बहुत पुरानी खल डाल कर पुनः पकावें । जब वह अच्छी तरह मिल जाय तो छान लें ।

इस क्वाथ में २ सेर तिलका तेल और १६ सेर दूध मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह तैल समस्त वातरोगोंको नष्ट करता है । विशेषतः कफान्वित वातमें अत्यन्त उपयोगी है ।

(४१०९) **पञ्चमूलाद्यं तैलम्** (२)

(वृ. यो. त. । त. १०६; वं. से.; यो. र. । शोथा.)

पञ्चमूलं सलवणं सरलं देवदारु च ।
हस्तिकर्णपलाशस्य फलानि निचुलस्य च ॥
पलाशं काकनासा च गुडूची देवपुष्पकम् ।
अहिंस्रा श्रेयसी हिंस्रा कृष्णगन्धा पुनर्नवा ॥
कायस्था च वयस्था च दारुको जटिला जटा ।
अलम्बुषो रुबूकं च मधुस्राटं सनागरम् ॥
शिग्रुगोधावती भार्गी तर्कारी पौष्करीजटा ।
एतैः सिद्धं यथालाभं तैलमभ्यञ्जनैस्त्रिभिः ॥
निहन्त्युदीर्णं श्वयथुं जन्तोर्वातकफात्मकम् ॥

क्वाथ—बेलछाल, श्योनाक (अरलु) छाल, खम्भारीकी छाल, पाढलछाल, अरणी, सेंधानमक, सरल (धूप सरल), देवदारु, हस्तीकर्णपलाश के फल, समन्दरफल, काकनासा (कौवाडोडी), गिलोय, लौंग, काकादनी, गजपीपल, बालछड़, सहंजनेकी छाल, पुनर्नवा (बिसखपरा), हर्र, आमला, देवदारु, पीपलामूल, मुण्डी, अरण्डकी जड़, पंवाड़, सोंठ, सहंजनेकी छाल, हंसपादी, भरंगी, अरणी और पोखरमूल । सब चीजें समान-भाग-मिश्रित ४ सेर लेकर, कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—उपरोक्त ओषधियां समान-भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे । पानीके साथ पीस-कर कल्क बनावें ।

विधि—क्वाथ, कल्क और २ सेर तेलको एकत्र मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसकी मालिश करनेसे भयङ्कर वातकफज शोथ भी ३ दिन में ही नष्ट हो जाता है ।

(४११०) **पञ्चवल्कलतैलम्**

(वं. से. । कर्ण.)

**विल्वोदुम्बरजम्बूदधित्थचूतानां वल्कलैः सिद्धम् ।
श्रुतिरोधश्च निहन्ति तैलं प्रपाकपूतिस्रुतं जयति ॥**

क्वाथ—बेलकी छाल, गूलरकी छाल, जामनकी छाल, कैथकी छाल और आमकी छाल समान भाग मिश्रित ४ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

कल्क—उपरोक्त चीजें समान-भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे ।

क्वाथ, कल्क और २ सेर तेलको एकत्र मिलाकर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो तेलको छान लें ।

कानोका बन्द होना, कर्णपाक और मवाद निकलना आदि कर्णरोग इस को कान में डालनेसे नष्ट हो जाते हैं ।

(४१११) **पटोलादितैलम्**

(वं. से. । ज्वरा.)

**पटोलमदनारिष्टगुडूचीमधुकैः शृतम् ।
श्वदंष्ट्रामदनशृङ्गीमधुकारिष्टवासकैः ॥
अश्वगन्धेति तैलस्य कार्षिकैराढकं पचेत् ।
अनुवासनकं तैलं सर्वज्वरविनाशनम् ॥
कसनान्वातविकारांश्च नाशयेदपि चोत्थितान् ॥**

(१) पटोल, मैनफल, नीमकी छाल, गिलोय और मुलैठी । अथवा (२) गोखरु, मैनफल, काकड़ासिंगी, मुलैठी, नीमकी छाल, वासा और असगन्ध, इन दोनें योगों में से किसी एक की ओषधियां १।-१। तोला लेकर सब को पानी के साथ पीस लें । तदनन्तर यह कल्क, ८ सेर तेल और ३२ सेर पानी एकत्र मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इस तैलकी अनुवासन बस्ति लेने से समस्त प्रकारके ज्वर, खांसी और वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(४११२) **पटोलादिस्नेहः**

(वं. से. । ज्वरा.)

**पटोलपिचुमन्दाभ्यां गुडूच्यामलकेन च ।
मदनैश्च शृतं स्नेहं ज्वरघ्नमनुवासनम् ॥**

क्वाथ—पटोल, नीमकी छाल, गिलोय, आमला और मैनफल समान-भाग-मिश्रित ४ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

कल्क—उपरोक्त चीजें समभाग मिश्रित १३ तोले ४ मासे लेकर पानी के साथ पीस लें ।

विधि—क्वाथ, कल्क, और २ सेर तेल को एकत्र मिलाकर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो तैल को छान लें ।

इसको अनुवासन बस्ति लेने से ज्वर नष्ट होता है ।

(४११३) **पटोलीतैलम्**

(वं. से.; भा. प्र. म. खं.; यो. र.; वृ. नि. र. । अग्निदग्ध.)

**सिद्धं कषायकल्काभ्यां पटोल्याः[1] कटुतैलकम् ।
दग्धव्रणरुजास्रावदाहविस्फोटनाशनम् ॥**

[1] ग. नि.; भै. र.; च. द.; र. र. और वृन्द माधव में पटोल के स्थान में पाटली (पाढल या लाल लोध) लिखा है ।

क्वाथ—पटोल ४ सेर। पाकार्थ जल ३२ सेर। शेष क्वाथ ८ सेर।

कल्क—१३ तोले ४ माशे पटोल को पानी के साथ पीस लें।

विधि—क्वाथ, कल्क, और २ सेर सरसों के तेल को एकत्र मिलाकर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो तेल को छान लें।

इसे लगाने से अग्निदग्धव्रणकी पीड़ा, स्राव, और दाह तथा विस्फोटकका नाश होता है।

(४११४) **पद्मकतैलम्** (१)

(वं. से.; भा. प्र.। ज्वरा.)

पद्मकोत्पलकह्लारमृणालबिसपौष्करैः।
कुमुदोशीरमञ्जिष्ठापद्मगैरिककट्फलैः॥
शारिवाद्वयलोध्राब्दक्षीरीखर्जूरमुस्तकैः।
धात्रीशतावरीयुक्तैः क्वाथे कल्के प्रयोजितैः॥
सलाक्षाम्भः पयः शुक्तस्वच्छकाञ्जिकमस्तुभिः।
पक्वं तैलमिदं त्वच्यं तृष्णादाहज्वरापहम्॥

क्वाथ—पद्माक, नीलोत्पल, लाल कमल, कमलनाल, कमलकन्द, पोखरमूल, कुमुद, खस, मजीठ, सफेद कमल, गेरु, कायफल, दो प्रकारकी सारिवा, लोध, नागरमोथा, दुद्धी, खजूर, केवटीमोथा, आमला और शतावर। सब चीजें समान भाग मिश्रित १ सेर लेकर सब को कूटकर ८ सेर पानी में पकावें। जब २ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—उपरोक्त समस्त चीजें मिलित १३ तोले ४ माशे लेकर सब को पानी के साथ पीस लें।

विधि—क्वाथ, कल्क, २ सेर लाखका रस, २ सेर दूध, २ सेर शुक्त, २ सेर स्वच्छ काञ्जी और २ सेर दही का पानी तथा २ सेर तेल एकत्र मिलाकर पकावें। जब तेलमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह तैल त्वचा के लिये हितकारी तथा तृष्णा, दाह ओर ज्वरनाशक है।

(४११५) **पद्मकतैलम्** (२) (**खुड्डाकपद्मकम्**)

(भा. प्र.; यो. र. ; वृ. नि. र.। वा. र.)

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वरजनीक्वाथसाधितम्।
स्यात्पिष्टैः सर्जमञ्जिष्ठावीराकाकोलिचन्दनैः॥
खुड्डाकपद्मकमिदं तैलं वातास्रपित्तनुत्॥

क्वाथ—पद्माक, खस, मुलैठी और हल्दी समान भाग मिलित २ सेर। पाकार्थ जल १६ सेर। शेष क्वाथ ४ सेर।

कल्क—राल, मजीठ, बड़ी शतावर, काकोली और सफेद चन्दन। सब चीजें समान-भाग-मिश्रित ६ तोले ८ माशे लेकर पानी के साथ पीस लें।

विधि—क्वाथ, कल्क और १ सेर तिल के तैल को एकत्र मिलाकर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो तैल को छान लें।

यह तैल वातरक्त और पित्त का नाश करता है।

(४११६) **पद्मकतैलम्** (३) (**महा**)

(भा. प्र.। वा. र.)

पद्मकेसरयष्ट्याह्वफेनिलापद्मकोत्पलैः।
पृथक् पञ्चपलैर्दत्तं बलाकिंशुकचन्दनैः॥

जले भृतं पचेत्तैलं प्रस्थं सौवीरसम्मितम् ।
लोध्रकाकोलिकोशीरजीवकर्षभककेशरैः ॥
मदयन्तिलतापत्रपद्मकेशरपद्मकैः ।
प्रपौण्डरीककालीयमेदामांसीप्रियङ्गुभिः ॥
कुङ्कुमैर्द्विगुणैः कर्षैर्मञ्जिष्ठायाः पलेन च ।
महापद्मकमिदं तैलं वातासृग्ज्वरनाशनम् ॥

क्वाथ—कमलकेसर, मुलैठी, रीठा, पद्माक, नीलोत्पल, खरैटी, टेसूके फूल और लाल चन्दन। प्रत्येक वस्तु २५-२५ तोले । पाकार्थ जल २० सेर । शेष क्वाथ ५ सेर ।

कल्क—लोध, काकोली, खस, जीवक, ऋषभक, नागकेसर, मदयन्तिका (मोतिया), तेजपात, कमलकेसर, पद्माक, पुण्डरिया, दारुहल्दी, मेदा, बालछड़ और फूलप्रियङ्गु। प्रत्येक १।-१। तोला। केसर २॥ तोले और मजीठ ५ तोले लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

विधि—क्वाथ, कल्क, १ सेर पानी, २ सेर सौवीरक और २ सेर तैल को एकत्र मिलाकर पकावें। जब तेलमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह तैल वातरक्त और ज्वर को नष्ट करता है।

(नोट – सौवीरक—भा. भै. रत्नाकर भाग १ पृष्ठ ३५४ पर तुषोदक बनाने की विधि देखिये ।)

(४११७) **पयस्यादितैलम्**

(वृ. नि. र. । बालरो.)

नवा पयस्या गोलोमी हरितालं मनःशिला ।
कुष्ठं सर्जरसश्चैव तैलार्थे कल्क इष्यते ॥

नवीन काकोली, सफेद बच, हरताल, मनसिल, कूठ और राल समान-भाग-मिश्रित २० तोले लेकर कल्क बनावें फिर यह कल्क, २ सेर तैल और ८ सेर पानी एकत्र मिलाकर पकावें जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

पूतनाग्रह-जुष्ट बालक के शरीर पर इस तैल की मालिश करना हितकारी है ।

(४११८) **पलङ्कषाद्यं तैलम्**

(च. द. । वा. व्या; वृ. नि. र. । अपस्मा.)

पलङ्कषावचापथ्यावृश्चिकाल्यर्कसर्षपैः ।
जटिलापूतनाकेशीलाङ्गलीहिङ्गुचोरकैः ॥
लशुनातिरसाचित्राकुष्ठैर्विड्भिश्च पक्षिणाम् ।
मांसाशिनां यथालाभं बस्तमूत्रे चतुर्गुणे ॥
सिद्धमभ्यञ्जने तैलमपस्मारविनाशनम् ॥

कल्क—गूगल, बच, हर्र, बिछाती, आक, सरसों, बच, बालछड़, भूतकेश, कलियारी, हींग, चोरहोली, ल्हसन, मूर्वा, चीता, कूठ और (चील इत्यादि) मांस खानेवाले पक्षियों की विष्ठा । सब चीजें समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर पानी के साथ पीस लें फिर यह कल्क, २ सेर तैल और आठ सेर बकरे का मूत्र एकत्र मिलाकर पकावें ।

जब तैल मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।
इस की मालिशसे अपस्मार नष्ट होता है ।

(४११९) **पलाशबीजतैलम्** (नपुं. मृ.)

पलाशसम्भवान्बीजान् किम्पाकं कनकप्रभाम् ।
कपोतारण्यजं विष्टं प्रत्येकं षट् च कर्षकम् ॥
लवङ्गाकारकरभौ चोलं च कर्षसम्मितम् ।
अजादुग्धे पेषयित्वा शोष्य तैलञ्च पातयेत् ।

पूर्वोक्तेन विधानेन शिश्नपृष्ठेविलेपयेत् ।
विंशैकदिवसै रोगान्मुच्यते हस्तसम्भवात् ॥

ढाक के बीज, कुचला, मालकंगनी और जंगली कबूतर की बींट; प्रत्येक ७॥ तोले तथा लौंग, अकरकरा और दालचीनी १।-१। तोला। सबको बकरी के दूधमें घोटकर सुखाकर पाताल यन्त्र से तैल निकालें।

इसे सीवन और सुपारी छोड़कर इन्द्री पर मलकर ऊपर से बंगला पान बांध देना चाहिये।

इस प्रकार २१ दिन करने से हस्त-क्रिया से उत्पन्न हुवे दोष नष्ट हो जाते हैं।

(नोट--इसके प्रयोगकाल में इन्द्री को ठंडे पानी से बचाना चाहिये।)

(४१२०) **पल्लवसारतैलम्**

(भै. र.। वाजीक.)

त्रिफलाया रसप्रस्थं भृङ्गराजरसं तथा ।
शतावरीरसं क्षीरं कूष्माण्डस्य रसं पृथक् ॥
प्रस्थैकं तिलतैलस्य पचेन्मृद्वग्निना भिषक् ।
लाक्षारनालसिद्धाम्बु प्रस्थं प्रस्थं विपाचयेत् ॥
कल्कं कणा शिवा द्राक्षा त्रिफला नीलमुत्पलम् ।
मधुकं क्षीरकाकोली प्रत्येकञ्च पलं पलम् ॥
कर्पूरञ्च नखं गन्धमण्डजं विरजासमम् ।
जातीकोषं लवङ्गञ्च प्रतिकर्षद्वयं पचेत् ॥
महावातहरं तैलं महापित्तविनाशनम् ।
नेत्ररोगेषु सर्वेषु अपस्मारेऽनिलामये ॥
विद्रधिव्रणशोथघ्नं मेहदोषहरं परम् ।
शूलरोगप्रशमनमानाहकृच्छ्रनाशनम् ॥
गुल्मघ्नं हृदिशूलघ्नं मूत्राघातविनाशनम् ।
प्रशस्तं ग्रहणीरोगे प्रमेहज्वरनाशनम् ॥
नाम्ना पल्लवसाराख्यं तैलं विधात्रिषग्वरः ॥

द्रव पदार्थ--त्रिफला का क्वाथ (१ सेर त्रिफला को ८ सेर पानीमें पकाकर चौथाई शेष रहा हुवा) २ सेर, भंगरे का रस २ सेर, शतावर का रस २ सेर, दूध २ सेर, पेठे का रस २ सेर, लाख का रस २ सेर और काञ्जी २ सेर।

कल्क--पीपल, हर्र, द्राक्षा (मुनक्का), हर्र, बहेड़ा, आमला, नीलोत्पल, मुलैठी और क्षीरकाकोली प्रत्येक ५-५ तोले।

गन्धद्रव्य--कपूर, नखी, कस्तूरी, गन्धाबिरोजा, जावत्री और लौंग। प्रत्येक २॥-२॥ तोले।

विधि--द्रव पदार्थ, कल्क और २ सेर तिल का तेल मिलाकर पकावें। जब तेलमात्र शेष रह जाय तो उसमें गन्ध द्रव्य पीसकर मिला दें और २४ घण्टे बाद छान लें।

(नोट--कस्तूरी और कपूर को रेक्टीफाइड स्प्रिट में मिलाकर डालना अच्छा है।)

इसकी मालिश से महावात और महापित्तका नाश होता है। यह समस्त नेत्र-रोग, अपस्मार, वातव्याधि, विद्रधि, व्रण, शोथ, प्रमेह, शूल, अफारा, मूत्रकृच्छ्र, गुल्म, हृच्छूल, मूत्राघात, संग्रहणी और ज्वर को नष्ट करता है।

(लाक्षारस और कांजी बनानेकी विधि भा. भै. रत्नाकर प्रथम भाग पृष्ट ३५३ और ३५४ पर देखिये।)

(४१२१) पाठादितैलम्

(च. द.; यो. र.; भै. र.; ग. नि.; वृं. मा.; र. र. । नासा.; वृ. यो. त. । त. १३०; शा. ध. । खं. २ अ. ९)

पाठाद्विरजनीमूर्वापिप्पलीजातिपल्लवैः ।
दन्त्या च तैलं संसिद्धं नस्यं सम्पक्वपीनसे ॥

काथ—पाठा, हल्दी, दारुहल्दी, मूर्वा, पीपल, चमेली के पत्ते और दन्तीमूल । सब समान-भाग-मिश्रित ४ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष काथ ८ सेर ।

कल्क—उपरोक्त समस्त पदार्थ समान-भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे ।

विधि—२ सेर तिलका तैल, काथ और कल्क को एकत्र मिलाकर पकावें । जब काथ जल जाय तो तैल को छान लें ।

इसकी नस्य लेने से पक्व पीनस नष्ट होती है।

(४१२२) पानीनाशकतैलम्

(नपुंसकामृ. । त. ६)

ज्योतिष्मती तु कुडवमजेपालं पलद्वयम् ।
जातीफलं जातिपत्रीं चोलश्च देवपुष्पकम् ॥
सर्वान्सम्मेल्य विधिना तैलं संकर्षयेत्ततः ।
अग्रभागं च सीमानौ त्यक्त्वा लेपं प्रलेपयेत् ॥
पिडिकादर्शनात्त्यक्त्वा लेपने तैलसम्भवम् ।
रोपणीं च क्रियां कुर्याद्यावदारोग्यतां व्रजेत् ॥
अनेनैव विधानेन शिश्ननाडीभवं जलम् ।
नश्यति नात्र सन्देहो योगोयं परमोत्तमः ॥

मालकंगनी २० तोले, जैपाल (जमालगोटा) १० तोले, जायफल, जावत्री, दालचीनी और लौंग ५–५ तोले लेकर सब का पाताल यन्त्र से तैल निकाले ।

इसे अग्रभाग और सीवन को बचाकर इन्द्री पर लगाना चाहिये । जब फुंसियां निकल आवें तो तैल लगाना बन्द कर के रोपणी क्रिया करनी चाहिये । (चमेलीका तैल आदि लगाना चाहिये ।) इस प्रकार इस तैलके प्रयोगसे इन्द्रीकी नसोंका पानी निकल कर नपुंसकता दूर हो जाती है । यह अत्युत्तम प्रयोग है ।

(४१२३) पिण्डतैलम् (१) (महा)

(भा. प्र. । वा. र.)

सारिवारिष्टकुष्माण्डपोतकीभस्मजाम्बुना ।
गुडूचीगव्यदुग्धाभ्यां कर्मरङ्गरसेन च ॥
विपचेत्तिलजं तैलं दत्त्वैतानि भिषग्वरः ।
काकोल्यौ जीवकं मेदे शताह्वा क्षीरिणीयुतैः ॥
जिङ्गी सिक्थामृतानन्ता सर्जसैन्धवचन्दनैः ।
हन्याद्वातास्रजं घोरं स्फुटितं गलितं तथा ॥
चर्मदलाख्यं पामादींस्त्वग्दोषश्च विपादिकाम् ।
कुष्ठान्यर्शांसि वीसर्पं व्रणशोथं भगन्दरम् ॥
न सोऽस्ति वातरक्तस्य विकारो योऽभिवर्द्धितः।
यश्च हन्यात्प्रसह्यैतत् पिण्डतैलं महत्स्मृतम् ॥

सारिवा, नीम, पेठा और पोई की समान भाग मिश्रित भस्मोंको ६ गुने पानीमें घोल कर क्षार बनाने की विधिसे २१ बार छान कर स्वच्छ पानी निकालें ।

यह पानी २ सेर, गिलोयका काथ (आठ गुने पानी में पकाकर चौथा भाग शेष रहा हुवा) २ सेर, गायका दूध २ सेर और कमरखका रस

२ सेर तथा निम्न लिखित चीज़ोंका कल्क २० तोले लेकर सबको २ सेर तिलके तेलमें मिलाकर पकावें । जब तैल मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

कल्कद्रव्य—काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, मेदा, महामेदा, सोया, ऋद्धि, मजीठ, मोम, गिलोय, अनन्त मूल, राल, सेंधा नमक और सफेद चन्दन । सब समान भाग मिश्रित २० तोले ।

यह तैल गलित और स्फुटित भयंकर वातरक्त, चर्मदल नामक कुष्ठ, पामा, विपादिका, कुष्ठ, अर्श, वीसर्प, व्रणशोथ और भगन्दरको नष्ट करता है । वातरक्तका कोई भी ऐसा उपद्रव नहीं जिसे यह तेल नष्ट न कर सकता हो ।

(४१२४) पिण्डतैलम् (२)

(र. र.; वृं. मा.; यो. र.; भा. प्र.; वं. से.; ग. नि. । वा. र.; च. स. । चि. अ. २९ वातर.; वा. भ. । चि. अ. २२; च. द. । वातर.)

सारिवासर्जयष्ट्याह्वमधूच्छिष्टैः पयोन्वितैः ।
सिद्धमैरण्डजं तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥
अपूतमथितस्यास्य पिण्डतैलस्य योगतः ॥

सारिवा, राल, मुलैठी और मोम ५–५ तोले लेकर पहिली ३ चीज़ोंको खूब महीन पीस लें फिर २ सेर अरण्डी के तेलमें यह चारों चीज़ें तथा ८ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध जल जाय तो तेलको ठण्डा करके बिना छाने ही बोतलों में भर दें ।*

इसकी मालिश से वातरक्त का नाश होता है।

*कुछ ग्रन्थों में दूधका अभाव है तथा एरण्ड तैल लिखकर केवल तैल शब्द लिखा है ।

(४१२५) पिप्पलीतैलम्

(वं. से. । नासा.)

सपिप्पलीकुष्ठमहौषधानां
विडङ्गमृद्वीककषायकल्कैः ।
तैलं विपक्वं क्षवथौ च नस्यं
वसां पचेत्तैलमथोघृतश्च ॥

कषाय—पीपल, कूठ, सोंठ, बायबिडंग और मुनक्का समान भाग मिश्रित ४ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष पानी ८ सेर ।

कल्क—उपरोक्त समस्त चीज़ें समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

विधि—२ सेर तिलका तैल अथवा घी या बसा और उपरोक्त कल्क तथा क्वाथ एकत्र मिलाकर पकावें ।

जब पानी जल जाय तो छान लें ।

इसकी नस्य लेनेसे क्षवथु (छींक आना) रोग नष्ट होता है ।

(४१२६) पिप्पल्याद्यं तैलम् (१)

(भै. र.; वं. से.; वृं. मा.; च. द. । अर्श.)

पिप्पली मधुकं बिल्वं शताह्वां मदनं वचाम् ।
कुष्ठं शुण्ठीं पुष्कराख्यं चित्रकं देवदारु च ॥
पिष्ट्वा तैलं विपक्तव्यं द्विगुणक्षीरसंयुतम् ।
अर्शसां मूढवातानां तच्छ्रेष्ठमनुवासनम् ॥
गुदनिःसरणं शूलं मूत्रकृच्छ्रं प्रवाहिकाम् ।
कट्यूरुपृष्ठदौर्बल्यमानाहं वङ्क्षणे रुजम् ॥
पिच्छास्रावं गुदे शोथं वातवर्चोविनिग्रहम् ।
उत्थानं बहुशो यच्च जयेच्चैवानुवासनम् ॥

कल्क—पीपल, मुलैठी, बेलगिरी, सोया, मैनफल, बच, कूठ, सोंठ, पोखरमूल, चीता और देवदारु । समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर सबको पानीके साथ पीस लें और फिर २ सेर तिलके तैलमें यह क्काथ और ४ सेर दूध तथा ४ सेर पानी मिला कर पकावें । जब दूध और पानी जल जाय तो तैलको छान लें

इसकी अनुवासन बस्ति लेनेसे अर्श, मूढ-वात, कांच निकलना, शूल, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका (पेचिश), कमर, जंघा और पीठकी दुर्बलता, अफारा, वाङ्क्षणशूल, पिच्छल (चिपचिपाहटवाला) दस्त होना, गुदशोथ और मलमूत्रका रुकना इत्यादि रोग नष्ट होते हैं ।

(४१२७) **पिप्पल्याद्यं तैलम्** (२)

(वं. से. । कर्ण.)

पिप्पल्यो बिल्वमूलं च कुष्ठं मधुकमेव च ।
सूक्ष्मैलादेवदारूणि मांसीव्याघ्रीनखीगुरु ॥
गर्भेणानेन तैलस्य प्रस्थं मृद्वग्निना पचेत् ।
केयूरमूलकरसौ दद्यात्स्नेहेन संयुतौ ॥
तेन कर्णे पिचुं दद्याद्बस्तिकर्म च कारयेत् ।
तेनोपशाम्यते क्षिप्रं कर्णशूलं सुदारुणम् ॥

कल्क—पीपल, बेलकी जड़की छाल, कूठ, मुलैठी, छोटी इलायची, देवदारु, जटामांसी (बाल-छड़), कटेली, नख और अगर । सब चीज़ें समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर पानीके साथ पीस लें ।

विधि—२ सेर तिलका तेल, ४ सेर केमुआ का रस, ४ सेर मूलीका रस और यह कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । जब तेलमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इस तेलमें रुई भिगोकर उसे कान में रखने और इसकी बस्ति लेनेसे दारुण कर्णशूल भी तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(४१२८) **पीलुपर्ण्याद्यं तैलम्**

(च. स. । चि. अ. ऊरुस्त.)

पीलुपर्णी पयस्या च रास्ना गोक्षुरको वचा ।
सरलागुरुपाठाश्च तैलमेभिर्विपाचयेत् ॥
सक्षौद्रं प्रसृतं तस्मादञ्जलिं वापि ना पिबेत् ॥

क्काथ—पीलुपर्णी (मूर्वा), क्षीरकाकोली, रास्ना, गोखरु, बच, सरल (धूप सरल), अगर और पाठा समान भाग मिश्रित ४ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्काथ ८ सेर ।

कल्क—उपरोक्त समस्त चीज़ें समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर पानीके साथ पीस लें ।

विधि—क्काथ, कल्क और २ सेर तिलके तेलको एकत्र मिलाकर पकावें । जब तेलमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसमेंसे १० तोले या २० तोले तेल शहद में मिलाकर पीनेसे ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—६ माशे से १ तोले तक)

(४१२९) **पुनर्णवादितैलम्**

(भै. र. । शोथा.)

पुनर्णवा पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत् ।
तेन पादावशेषेण तैलप्रस्थं पचेद् भिषक् ॥

त्रिकटु त्रिफला शृङ्गी धान्यकं कट्फलं तथा ।
शटी दार्वी प्रियङ्गुश्च पद्मकाष्ठं हरेणुकम् ॥
कुष्ठं पुनर्णवा चैव यमानी कारवी तथा ।
एला त्वचं सलोध्रश्च पत्रकं नागकेशरम् ॥
वचा ग्रन्थिकमूलश्च चव्यं चित्रकमूलकम् ।
शतपुष्पाम्बु मञ्जिष्ठा रास्ना यासस्तथैव च ॥
एतेषां कार्षिकैर्भागैः पेषयित्वा विनिःक्षिपेत् ।
कामलां पाण्डुरोगश्च हलीमकमथारुचिम् ॥
रक्तपित्तं महाशोथं कासं श्वासं भगन्दरम् ।
प्लीहानमुदरश्चैव जीर्णज्वरमपोहति ॥
कुरुते परमां कान्तिं प्रदीप्तं जठरानलम् ।
तैलं पुनर्णवाख्यातं सर्वान् व्याधीन् व्यपोहति ॥

क्राथ—६। सेर पुनर्नवा (साठी) को ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, काकड़ासिंगी, धनिया, कायफल, शठी (कचूर), दारुहल्दी, फूलप्रियङ्गु, पद्माख, रेणुका (संभालुके बीज), कूठ, पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), अजवायन, काला जीरा, इलायची, दालचीनी, लोध, तेजपात, नागकेसर, बच, पीपलामूल, चव, चीतामूल, सोया, सुगन्धबाला, मजीठ, रास्ना और धमासा । प्रत्येक ओषधि १।—१। तोला लेकर पानीके साथ पीस लें ।

विधि—२ सेर तिलका तैल तथा उपरोक्त क्राथ और कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । जब क्राथ जल जाय तो तैलको छान लें ।

यह तैल कामला, पाण्डु, हलीमक, अरुचि, रक्तपित्त, महाशोथ, खांसी, श्वास, भगन्दर, तिल्ली, उदर रोग और जीर्णज्वर को नष्ट और अग्निको दीप्त करता तथा कान्ति बढ़ाता है ।

(४१३०) पुनर्णवाद्यं तैलम्

(वं से. । अश्मरि.; यो. र. । अण्डवृद्धि.)

पुनर्नवामृताभीरुसक्षारलवणत्रयैः ।
शठीकुष्ठवचामुस्तरास्नाकट्फलपौष्करैः ॥
यवानीहपुषाहिङ्गुशताह्वासाजमोदकैः ।
विडङ्गातिविषायष्टीपश्चकोलकसंयुतैः ॥
एतैरक्षसमैः कल्कैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ।
गोमूत्रं द्विगुणं देयं काञ्जिकं तद्वदेव तु ॥
पुनर्नवाद्यमित्येतत्तैलं पानेन बस्तिना ।
शर्कराश्मरिशूलघ्नं मूत्रकृच्छ्रप्रमोचनम् ॥
कट्यूरुबस्तिमेढ्रस्थं कुक्षिशूलविनाशनम् ।
कफवातामशूलघ्नमन्त्रवृद्धेश्च नाशनम् ॥

कल्क-पुनर्नवा (साठी), गिलोय, शतावर, जवाखार, सेंधा नमक, सञ्चल नमक, विड नमक, सठी (कचूर), कूठ, बच, नागरमोथा, रास्ना, कायफल, पोखरमूल, अजवायन, हाऊबेर, हींग, सोया, अजमोद, बायबिड़ंग, अतीस, मुलैठी, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ १।—१। तोला लेकर पानी के साथ पीस लें । तत्पश्चात् २ सेर तेल में यह कल्क, ४ सेर गोमूत्र और ४ सेर काञ्जी मिलाकर पकावें ।

इसे पीने तथा इसकी बस्ती लेने से शर्करा, अश्मरी, शूल, मूत्रकृच्छ्र, कमरका दर्द, ऊरु की पीड़ा, बस्ति और लिङ्गकी पीड़ा, कोखका शूल, कफज शूल, आमशूल, वातज शूल और अन्त्रवृद्धि का नाश होता है ।

(४१३१) **पुनर्नवाद्यं तैलम्**

(वं. से.; वृ. नि. र. । हृद्रो.)

पुनर्नवां दारु सपञ्चमूलं
रास्नां यवान्कोलकपित्थबिल्वम् ।
पक्त्वा जले तेन पचेत्तु तैल-
मभ्यङ्गपानेऽनिलहृद्गदघ्नम् ॥

पुनर्नवा (साठी—बिसखपरा), देवदारु, बेलछाल, अरलुकी छाल, खम्भारीकी छाल, पाढल की छाल, अरणी, रास्ना, जौ, बेर, कैथ और बेल गिरी । सब चीज़ें समान भाग मिश्रित ४ सेर लेकर, कूटकर सब को ३२ सेर पानी में पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान कर उस में २ सेर तिल का तेल मिलाकर पुनः पकावें । जब क्राथ जल जाय तो तेल को छान लें ।

इसे मर्दन करने और पीने से वातज हृद्रोग नष्ट होता है ।

(४१३२) **पुष्पराजप्रसारणीतैलम्**

(धन्व. । वा. व्या.)

प्रसारणीपलशतं मूलञ्चैवाश्वगन्धजम् ।
पञ्चाशतपलमानन्तु जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
पादशेषे हरेत्क्वाथं क्वाथांशं तिलतैलकम् ।
तैलाच्चतुर्गुणं क्षीरं गव्यं वा माहिषं तथा ॥
पुण्डरीकरसस्तत्र शतावर्यारसस्तथा ।
तैलसमः प्रदातव्यः पाचयेन्मृदुवह्निना ॥
शतपुष्पा कणा चैला कुष्ठश्च कण्टकारिका ।
शुण्ठी यष्टी देवदारु शालपर्णी पुनर्नवा ॥
मञ्जिष्ठा पत्रकं रास्ना वचा पुष्करमूलकम् ।
यवानी भूतिकं मांसी निर्गुण्डी च तथा बला ॥
वह्निर्गोक्षुरकश्चैव मृणालं बहुपुत्रिका ।
प्रतिकर्षमिदं योज्यं सर्वमेकत्र पाचयेत् ॥
तैलशेषं समुद्धृत्य पुष्पराजप्रसारणीम् ।
अभ्यङ्गे योजयेत्पाने नस्यकर्मणि सर्वदा ॥
भग्नानां खञ्जपङ्गूनां शिरोरोगे हनुग्रहे ।
समस्तान् वातजान् रोगांस्तूर्णं नाशयति ध्रुवम् ॥

क्वाथ—प्रसारणी १०० पल (६। सेर), असगन्ध ५० पल (३ सेर १० तोले) । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

अन्य द्रव पदार्थ—गाय या भैंस का दूध ८ सेर, सफेद कमल का रस २ सेर और शतावर का रस २ सेर ।

कल्क—सोया, पीपल, इलायची, कूठ, कटेली, सोंठ, मुलैठी, देवदारु, शालपर्णी, पुनर्नवा (साठी—बिसखपरा), मजीठ, तेजपात, रास्ना, बच, पोखरमूल, अजवायन, गन्धतृण, बालछड़, संभालु, खैरेटी, चीता, गोखरु, कमलनाल और शतावर । सब चीज़ें १।—१। तोला लेकर बारीक पिसवा लें ।

विधि—२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त समस्त पदार्थ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब तेलमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसे पीना तथा इस की नस्य लेनी और मालिश करनी चाहिये ।

यह तैल भग्न (टूटी हुई) हड्डी को जोड़ता है । खञ्ज और पङ्गुत्व रोग तथा शिरोरोग, हनुग्रह और अन्य समस्त वातज रोगों को नष्ट करता है ।

(४१३३) **पृथ्वीसारतैलम्**

(भै. र.; च. द. । कुष्ठा.)

चित्रकस्याथ निर्गुण्ड्या हयमारस्य मूलतः ।
नाडीच बीजाद् विषतः काञ्जिपिष्टं पलं पलम्॥
करञ्जतैलाष्टपलं काञ्जिकस्य पलं पुनः ।
मिश्रितं सूर्यसम्पक्वं तैलं कुष्ठव्रणास्रजित् ॥

चीतामूल, संभालू की जड़, कनेर की जड़, नाडीच बीज और मीठातेलिया (बछनाग) ५-५ तोले लेकर सब को काञ्जी के साथ पीस लें। फिर ४० तोले करञ्जतैल में ५ तोले काञ्जी और उपरोक्त कल्क मिलाकर उसे धूप में रख दें। जब जलांश सूख जाय तो तेल को छान लें।

इस की मालिश से कुष्ठ, व्रण, और रक्तदोष दूर होते हैं।

(४१३४) **प्रपौण्डरीकाद्यं तैलम्** (१)

(च. द. । व्र. शो.)

प्रपौण्डरीकं मधुकं काकोल्यौ द्वे सचन्दने ।
सिद्धमेभिः समं तैलं तत्परं व्रणरोपणम् ॥

क्वाथ—पुण्डरिया, मुलैठी, काकोली, क्षीरकाकोली, लाल चन्दन और सफेद चन्दन। सब चीजें समान भाग मिश्रित ४ सेर लेकर, कूटकर सब को ३२ सेर पानी में पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

कल्क—उपरोक्त ओषधियां समान भाग मिश्रित १३ तोले ४ माशे लेकर सब को पानीके साथ पीस लें।

विधि—२ सेर तिल के तेल में यह क्वाथ और कल्क मिलाकर क्वाथ जलने तक पकावें।

यह तैल लगाने से व्रण भर जाते हैं।

(४१३५) **प्रपौण्डरीकाद्यं तैलम्** (२)

(भै. र.; आ. वे. वि.; वृं. मा.; वं. से. । क्षुद्र रो.)

प्रपौण्डरीकमधुकपिप्पलीचन्दनोत्पलैः ।
कार्षिकैस्तैलकुडवस्तैर्द्विरामलकीरसः ॥
साध्यः स प्रतिमर्शः स्यात् सर्वशीर्षगदापहः ॥

कल्क—पुण्डरिया, मुलैठी, पीपल, सफेद-चन्दन और नीलोत्पल १।-१। तोला लेकर पानी के साथ महीन पीस लें।

४० तोले तिल के तेल में यह कल्क, ८० तोले आमले का रस (और ८० तोले पानी) मिलाकर पकावें। जब तेलमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इस की नस्य लेने से समस्त शिरोरोग नष्ट होते हैं।

(४१३६) **प्रमेहमिहिरतैलम्**

(भै. र. । प्रमेह.)

शतपुष्पा देवकाष्ठं मुस्तकञ्च निशाद्वयम् ।
मूर्वा कुष्ठं वाजिगन्धा चन्दनद्वयरेणुकम् ॥
कटुकी मधुकं रास्ना त्वगेला ब्रह्मयष्टिका ।
चविका धान्यकं वत्सं पूतिकागुरुपत्रकम् ॥
त्रिफला नालिका बाला बला चातिबला तथा ।
मञ्जिष्ठा सरलं पद्मं लोध्रं मधुरिका वचा ॥
अजाजी चोशीरजाती वासा तगरपादुका ।
एतेषां कार्षिकैर्भागैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
शतावर्या रसं तुल्यं लाक्षायाश्च चतुर्गुणम् ।
मस्तु लाक्षारसैस्तुल्यं क्षीरं तुल्यं प्रदापयेत् ॥
द्रवैरेतैः पचेत्तैलं गन्धं दत्त्वा यथाक्रमम् ।
एतत्तैलवरं श्रेष्ठमभ्यङ्गान्मारुतापहम् ॥

विषमाख्यान् ज्वरान् सर्वान् मेदोमज्जगतानपि।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
क्षीणेन्द्रिये तथा शस्तं ध्वजभङ्गे विशेषतः ।
दद्यात्तैलं विशेषेण फलमस्य च कथ्यते ॥
दाहं पित्तं पिपासाञ्च छर्दिञ्च मुखशोषणम् ।
प्रमेहान् विंशतिश्चैव नाशयेदविकल्पतः ॥
प्रमेहमिहिरं नाम्ना रतिनाथेन भाषितम् ॥

कल्क—सोया, देवदारु, नागरमोथा, हल्दी, दारुहल्दी, मूर्वा, कूठ, असगन्ध, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, रेणुका, कुटकी, मुलैठी, रास्ना, दालचीनी, इलायची, भरंगी, चव, धनिया, इन्द्रजौ, करञ्जबीज, अगर, तेजपात, हर्र, बहेड़ा, आमला, नलिका (नाडीका शाक), सुगन्धबाला, खरैटी, कंघी, मजीठ, सरलकाष्ठ, कमल, लोध, सौंफ, बच, जीरा, खस, जायफल, बासा और तगर । प्रत्येक ओषधि १।–१। तोला ।

द्रव पदार्थ—शतावर का रस २ सेर, लाखका रस[1] ८ सेर, दहीका पानी (मस्तु) ८ सेर और दूध २ सेर ।

विधि—२ सेर तिलतैल में उपरोक्त समस्त पदार्थ मिलाकर पकावें। जब तैलमात्र शेष रह जाय तो छान लें । तदनन्तर इस में गन्धद्रव्य[2] मिलाकर पुनः पाक करें।

इसकी मालिश से वात-विकार तथा वातज पित्तज कफज सन्निपातज मेदोगत और मांसगत विषमज्वर नष्ट होते हैं । यह क्षीणेन्द्रिय व्यक्तियों के लिये और विशेषतः ध्वजभंग में उपयोगी है ।

यह तैल दाह, पिपासा, पित्त, छर्दि, मुखशोष और २० प्रकार के प्रमेहों को निस्सन्देह नष्ट करता है ।

१ लाक्षारस बनाने की विधि भा. भै. र. भाग १ पृष्ठ ३५३ पर देखिये ।

२ गन्ध द्रव्य गकारादि कषाय प्रकरण में देखिये ।

(४१३७) प्रसारणीतैलम् (१)
(वा. भ. । चि. अ. २१)

प्रसारणीतुलाक्काथे तैलप्रस्थं पयः समम् ।
द्विमेदामिशिमञ्जिष्ठाकुष्ठरास्नाकुचन्दनैः ॥
जीवकर्षभकाकोलीयुगलामरदारुभिः ।
कल्कितैर्विपचेत्सर्वमारुतामयनाशनम् ॥

क्काथ—प्रसारणी ६। सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्काथ ८ सेर ।

कल्क—मेदा, महामेदा, सौंफ, मजीठ, कूठ, रास्ना, लाल चन्दन, जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली और देवदार। सब समान भाग-मिश्रित १३ तोले ४ माशे ।

२ सेर तिल के तेल में उपरोक्त क्काथ, कल्क और २ सेर दूध मिलाकर पकावें । जब तैल मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह तेल समस्त वातज रोगों को नष्ट करता है।

(४१३८) प्रसारणीतैलम् (२)
(वं. से. । वा व्या.; भा. प्र. । म. खं. वा. व्या.)

प्रसारिण्या रसे सिद्धं तैलमैरण्डजं पिबेत् ।
सर्वदोषहरञ्चैव कफरोगहरं परम् ॥

४ सेर प्रसारणी को ३२ सेर पानी में पकाकर ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें । इस में

२ सेर अण्डी का तैल (कास्ट्रायल) मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो तैल को छान लें।

यह तेल कफरोग और समस्त दोषोंको नष्ट करता है।

(४१३९) **प्रसारिणीतैलम्** (३)

(यो. र.; वृ. नि. र. । वातरो.; । यो. त. । त. ४०; ग. नि. । तैला. २)

समूलपत्रामुत्पाट्य जातसारां प्रसारिणीम् ।
कुट्टयित्वा पलशतं कटाहे समधिश्रयेत् ॥ १
वारिद्रोणसमायुक्तं चतुर्भागावशेषितम् ।
कषायसममात्रं तु तैलमत्र प्रदापयेत् ॥ २
दध्नस्तत्राढकं दद्यात् द्विगुणश्चाम्लकाञ्जिकम् ।
भेषजानि तु पेश्याणि तत्रेमानि समावपेत् ॥ ३
यवक्षारपले द्वे च सैन्धवस्य पलद्वयम् ।
द्वे पले पिप्पलीमूलाच्चित्रकस्य पलद्वयम् ॥ ४
शुण्ठी पलानि पञ्चैव रास्नायाश्च पलद्वयम् ।
प्रसारिणी पले द्वे च द्वे पले मधुकस्य च ॥ ५
एतत्सर्वं समालोड्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
एतत्प्रभञ्जने श्रेष्ठं नस्यकर्मणि शस्यते ॥
एकाङ्गग्रहणं वापि सर्वाङ्गग्रहणं तथा ।
अपस्मारं तथोन्मादं विद्रधिं मन्दवह्निताम् ॥
त्वग्गताश्चापि ये वाताः शिरासन्धिगताश्च ये ।
अस्थिसन्धिगता ये च ये च शुक्रार्तवे स्थिताः
सर्वान्वातामयान्नूनं नाशयत्येव सर्वथा ।
हयं नरं गजं वापि वातजर्जरितं भृशम् ॥
सद्यः प्रशमयेत्तैलमेतन्नात्र विचारणा ।
इन्द्रियस्य प्रजननं वन्ध्यानाञ्च प्रजाकरम् ॥
वृद्धानां बालकानाञ्च स्त्रीणां राज्ञां हितं परम् ।
पङ्गुर्वा पीठसर्पिर्वा पीत्वैतत्संप्रधावति ॥

यो. र. और वृ. नि. र. में श्लोक संख्या ४ तथा गदनिग्रहमें श्लोक सं. ५ में कथित औषधें नहीं हैं।

क्काथ—मूल और पत्रयुक्त सुपक्क सारयुक्त ६। सेर प्रसारणी को कूटकर ३२ सेर पानी में पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छान लें।

अन्य द्रव पदार्थ—दही ८ सेर और खट्टी काञ्जी १६ सेर।

कल्क—जवाखार, सेंधा नमक, पीपला मूल और चीतामूल १०–१० तोले। सोंठ २५ तोले, रास्ना १० तोले, प्रसारणी १० तोले और मुलैठी १० तोले।

विधि—८ सेर तिल के तेल में उपरोक्त समस्त पदार्थ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब तेल मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इस की नस्य लेने से वायु नष्ट होता है।

एकाङ्ग और सर्वांग ग्रह, अपस्मार, उन्माद, अग्निमांद्य, त्वचागत वायु, शिरा और सन्धि तथा अस्थिगत वायु, वातज शुक्रविकार और वातज रजोदोष, इसके उपयोग से नष्ट हो जाते हैं।

इसे सेवन करनेसे पङ्गु को दौड़ने की शक्ति प्राप्त होती है।

यह तैल वात व्याधि से पीड़ित मनुष्यों, घोड़ों और हाथियों के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

इस के सेवन से इन्द्रिय बलवान होती हैं और बन्ध्या स्त्री गर्भ धारण करती है।

यह तैल वृद्ध, बालक, स्त्री और राजाओं के लिये परमोपयोगी है ।

(इसे दूध में डालकर पीना चाहिये तथा इस की नस्य, बस्ती और मालिश करनी चाहिये। पीने के लिये मात्रा—६ माशे ।)

(४१४०) **प्रसारणीतैलम्** (४)

(भा. प्र. । म. ख. वा. व्या.)

समूलपत्रशाखायाः प्रसारण्याः शतं पलम् ।
सम्यक्संक्षुद्य सलिले द्रोणमात्रे पचेद्भिषक् ॥
सलिलस्य चतुर्थांशं क्वाथं समवशेषयेत् ।
ततः पलशते तैले तं कषायं पुनः पचेत् ॥
पचेत्पलशतं मस्तु काञ्जिकं मस्तुनः समम् ।
ततः शुद्धं पचेद्दुग्धं गव्यं तैलाच्चतुर्गुणम् ॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं मधुकं सैन्धवं वचा ।
शतपुष्पा देवदारु रास्ना च गजपिप्पली ॥
प्रसारणीभवं मूलं मांसी रक्तश्च चन्दनम् ।
तथावातारिमूलञ्च बलामूलञ्च नागरम् ॥
तैलस्य चाष्टमांशेन सर्वकल्कानि साधयेत् ।
नाम्ना प्रसारणीतैलं विख्यातं तत्प्रयुज्यते ॥
पाने नस्ये शिरोबस्तौ मर्दने स्वेदने तथा ।
प्रयुक्तं वातजान् रोगान् सर्वानपि विनाशयेत् ॥
विशेषतो हनुस्तम्भं जिह्वास्तम्भं तथार्दितम् ।
गद्गदत्वञ्च विश्वाचीं मन्यास्तम्भापबाहुकौ ॥
त्रिकशूलं गृध्रसीञ्च खञ्जतां पङ्गुतां तथा ।
कलायखञ्जतां खञ्जं स्तम्भं सङ्कोचमेव च ॥
आन्तरं बाह्यमायामं तथा दण्डापतानकम् ।
धनुर्वातञ्च कुब्जत्वं व्यपोहति न संशयः ॥
क्षीणानां स्थविराणाञ्च वातसङ्कोचितात्मनाम् ।
प्रसारयेद्यतोऽङ्गानि तदुक्तैषा प्रसारणी ॥

क्वाथ—मूल पत्र और शाखायुक्त प्रसारणी ६। सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

अन्य द्रव पदार्थ—मस्तु १२॥ सेर, काञ्जी १२॥ सेर तथा गायका दूध ५० सेर ।

कल्क—चीता, पीपलामूल, मुलैठी, सेंधा नमक, बच, सोया, देवदारु, रास्ना, गजपीपल, प्रसारणीकी जड़, जटामांसी (बालछड़), लाल चन्दन, अरण्डमूल, खरैटीकी जड़ और सोंठ । सब समान भाग मिश्रित ६२॥ तोले ।

विधि—१२॥ सेर तेलमें उपरोक्त समस्त पदार्थ मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसे रोगीको पिलाना तथा नस्य, शिरोबस्ति, मर्दन और स्वेदन कर्म में प्रयुक्त करना चाहिये ।

यह समस्त वातज रोगोंको और विशेषतः हनुस्तम्भ, जिह्वास्तम्भ, अर्दित, गद्‌गदत्व, विश्वाची, मन्यास्तम्भ, अपबाहुक, त्रिकशूल, गृध्रसी, खञ्जता, पङ्गुता, कलायखञ्जता, अंगोंका स्तम्भ और संकोच, अन्तरायाम, बाह्यायाम, दण्डापतानक, धनुर्वात और कुब्जता को नष्ट करता है ।

यह तैल क्षीण, वृद्ध और वातव्याधिसे पीड़ित मनुष्योंके सङ्कुचित अंगोंका प्रसारण कर देता है इसी लिये इसे **प्रसारणी** तैल कहते हैं ।

(पीनेके लिये मात्रा—६ माशे ।)

नोट—तैल पकाते समय समस्त द्रव-पदार्थ एक साथ न डालकर क्रमशः एक एक डालना चाहिये ।

(४१४१) **प्रसारणीतैलम्** (५)

(यो. चि. म. । अ. ६; वृ. नि. र. । वा. व्या.)

प्रसारणीक्वाथपयोम्बुतक्रं
मस्त्वारनालं दधिमिस्तु तैलम् ।
कल्कीकृतं विश्वघनाम्बुकुष्ठं
मांसीशताह्वामरदारुसेव्यैः ॥
शैलेयरास्नागुरुसारिवाभिः
सिन्धूत्थबिल्वानलमन्थमोचैः ।
सासृग्लताम्भोजपुनर्नवाख्य-
स्योनाकयष्ट्याह्वकुटन्नटैश्च ॥
छिन्नोद्भवादार्व्यभयाकरञ्ज-
मेदा निशाद्वे सफलत्रियैश्च ।
एरण्डगोकण्टजीवकैश्च
तत्साधितं हन्त्यनिलोत्थरोगान् ॥
सर्वांश्च दीप्तानपि पक्षघातान्
वाताश्रितानाह हनुग्रहादीन् ।
सगृध्रसीविश्वविबाहुशोषं
हृन्मूर्धसंस्थांश्च गदांश्च तांस्तान् ॥
संशुष्कभग्नं प्रबलाङ्गयष्टिं
यो साध्यतामुल्वणमारुतेन ।
मीतः पुमांस्तस्यभवेदवश्यं
प्रसारिणीतैलमिदं हिताय ॥

क्वाथ—प्रसारणी ६। सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

अन्य द्रव पदार्थ—दूध ८ सेर, पानी ८ सेर, तक्र ८ सेर, मस्तु (दहीका पानी) ८ सेर, आरनाल ८ सेर और दही ८ सेर ।

कल्क—सोंठ, नागरमोथा, सुगन्धबाला, कूठ जटामांसी (बालछड़), सोया, देवदारु, खस, भूरिछरीला, रास्ना, अगर, सारिवा, सेंधानमक, बेल-छाल, अरणी, मोचरस, मजीठ, कमल, पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), अरलुकी छाल, मुलैठी, केवटीमोथा, गिलोय, दारुहल्दी, हर्र, करञ्जबीज, मेदा, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, अर-ण्डमूल, गोखरु और जीवक । सब समान भाग मिश्रित १ सेर ।

विधि—८ सेर तेल में उपरोक्त समस्त पदार्थ मिलाकर पकावें । जब तेल मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

यह तैल पक्षाघात, आनाह, हनुस्तम्भ, गृध्रसी, विश्वाची और बाहुशोष इत्यादि समस्त वातरोगों को नष्ट करता है ।

यह हृदय और शिरके रोगों में उपयोगी है। सूखे और टूटे हुवे अंगोंको पुनः ठीक कर देता है ।

(इसे पीना चाहिये तथा नस्य, बस्ति और मर्दन आदि द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये ।

पीनेके लिये मात्रा—६ माशे ।)

(४१४२) **प्रसारणीतैलम्** (६)

(ग. नि. । तैला. २)

प्रसारण्याः पलशतं बलामूलार्द्धभागिकम् ।
शतावर्यश्वगन्धा च शतपुष्पा पुनर्नवा ॥
गुडूची दशमूलं च चित्रको मदनं शठी ।
पलांशकान् समापोथ्य जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
चतुर्भागावशेषन्तु कषायमवतारयेत् ।
रास्नां शताह्वां मधुकं पिप्पलीं नागरं वचाम् ॥

कुष्ठं हरेणुकां मांसीं प्रियङ्गविन्द्रयवान् विडम् ।
सैन्धवं शृङ्गवेरञ्च यवक्षारं सचित्रकम् ॥
मधूलिकां व्याघ्रनखं पालिकान् श्लक्ष्णपेषितान् ।
पचेत्तैलाढकं पूतमारनारपयोयुतम् ॥
एतदभ्यञ्जनं श्रेष्ठं नस्यकर्मानुवासने ।
गृध्रसीमस्थिभङ्गं च ये च मन्दाग्नयो नराः ॥
अपस्मारं तथोन्मादं विद्रधिं मन्दगामिताम् ।
त्वग्गताश्चापि ये वाताः शिरासन्धिगताश्च ये ॥
अश्वं वा वातसम्भग्नं नरं वा जर्जरीकृतम् ।
सर्वान् प्रशामयत्येतत्तैलमात्रेयपूजितम् ॥
स्थिरीकरणमेतद्धि बलीपलितनाशनम् ।
इन्द्रियाणां बलकरं वर्णौदार्यकरं तथा ॥
बल्यं प्रजाकरं श्रेष्ठं वृद्धकालेऽपिसेवितम् ।
पङ्गुर्वाप्यथवा खञ्जः पीत्वा तैलं प्रधावति ॥

क्वाथ—प्रसारणी ६। सेर, बलामूल ३ सेर १० तोले तथा शतावर, असगन्ध, सोया, पुनर्नवा (साठी—बिसखपरा), गिलोय, दशमूल, चीता, मैनफल और सटी (कचूर) ५-५ तोले। पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

कल्क—रास्ना, सोया, मुलैठी, पीपल, सोंठ, बच, कूठ, रेणुका, जटामांसी (बालछड़), फूलप्रियङ्गु, इन्द्रजौ, बायबिड़ंग, सेंधा नमक,सोंठ, जवाखार, चीता, मूर्वा और नख । प्रत्येक वस्तु ५-५ तोले लेकर महीन पीस लें ।

विधि—८ सेर तिलके तैलमें उपरोक्त काथ, कल्क, ८ सेर दूध और ८ सेर आरनाल (कांजी) मिलाकर पकावें । जब तैल मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसकी मालिश करनी और नस्य तथा अनुवासन बस्ती लेनी चाहिये ।

यह तैल गृध्रसी, अस्थिभंग, अग्निमांद्य, अपस्मार, उन्माद और विद्रधि का नाश करता है। जो व्यक्ति तेज नहीं चल सकते उनकी चालको तेज़ कर देता है । त्वचा और शिरा तथा सन्धि गत वायुको नष्ट करता है । वायुसे पीड़ित मनुष्योंही के लिये नहीं अपितु घोड़ोंके लिये भी यह तैल हितकारी है ।

यह तैल स्थैर्य करनेवाला, बलीपलित नाशक, इन्द्रियबल-वर्द्धक और शरीरके रंगको सुधारने वाला है । इसके सेवन से बल और वृद्धों में भी सन्तानोत्पादन की शक्ति प्राप्त होती है । इसे पीनेसे पङ्गु मनुष्यको दौड़ने की शक्ति प्राप्त होती है ।

(पीनेके लिये मात्रा—६ माशे ।)

(४१४३) प्रसारणीतैलम् (७)

(ग. नि. । तैला. २)

प्रसारणीशतं क्षुण्णं पचेत्तोयार्मणे शुभे ।
पादशेषे पचेत्तैलं दधिमस्त्वम्लकाञ्जिकम् ॥
द्विगुणं श्लक्ष्णपिष्टानि द्रव्याणीमानि योजयेत्।
द्विपलान्यग्निमधुककणामूलं पटुं वचाम् ॥
मूलं तथा प्रसारण्याः क्षारं च यावशूकजम् ।
त्रिंशद्भल्लातकास्थीनि नागरात्पलपञ्चकम् ॥
सिद्धं मृद्वग्निना तैलं वातश्लेष्मामयाञ्जयेत् ।
अशीतिर्नरनारीणां वातरोगान्निषूदति ॥
कुब्जवामनपङ्गुत्वं खञ्जत्वं गृध्रसीं खुडम् ।
हन्यात्पृष्ठकटिग्रीवास्तम्भं चाशु व्यपोहति ॥

पीठसर्पी विभग्नश्च पीत्वा तैलं सुखी भवेत् ।
प्रसारणीतैलमिदं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥

क्वाथ—प्रसारणी १०० पल (६। सेर)। पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

अन्य द्रव पदार्थ—दही ४ सेर, मस्तु ४ सेर, कांजी ४ सेर ।

कल्क—चीता, मुलैठी, पीपलामूल, सेंधा-नमक, बच, प्रसारणीकी जड़ और जवाखार १०—१० तोले । भिलावें की गिरी ३० पल (१५० तोले) अथवा ३० नग और सोंठ २५ तोले ।

विधि—२ सेर तिलके तैलमें क्वाथादि उपरोक्त समस्त पदार्थ मिलाकर मन्दाग्नि पर तैल-पाक सिद्ध करें ।

यह तैल वातकफज रोग, ८० प्रकार के वातरोग, कुब्जता, अंगोंका छोटा होना, पङ्गुता, गृध्रसी, खुडवात, पीठ कमर और ग्रीवाका जकड़-जाना और अस्थि-भंग आदि रोगों को नष्ट करता है ।

इसके सेवन से बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है ।

प्रसारणीतैलम्

(शा. ध. । खं. २ अ. ९; वृ. नि. र. । वा. व्या.;)

कुब्जप्रसारणीतैल सं. ८७३ देखिये ।

(४१४४) प्रसारणीतैलम् (८) (मध्यम)

(वृं. मा. । वा. व्या.)

प्रसारण्यास्तुलामश्वगन्धाया दशमूलतः ।
तुला तुला पृथग्वारिद्रोणे पक्त्वांशशेषिते ॥
तैलाढकं चतुः क्षीरं दधितुल्यं द्विकाञ्जिकम् ।
द्विपलैर्ग्रन्थिकक्षारप्रसारण्यक्षसैन्धवैः ॥
समञ्जिष्ठाग्नियष्ट्याह्वैः पलिकैर्जीवनीयकैः ।
शुण्ठयाः पञ्चपलं दत्त्वा त्रिंशद्भल्लातकानि च ॥
पचेद्वस्त्यादिना वातं हन्ति सन्धिशिरास्थितम् ।
पुंस्त्वोत्साहस्मृतिप्रज्ञाबलवर्णाग्निवृद्धये ॥

क्वाथ—(१) प्रसारणी १२॥ सेर पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

(२) असगन्ध १२॥ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

(३) दशमूल १२॥ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

अन्य द्रव पदार्थ—दूध ३२ सेर, दही ८ सेर और काञ्जी १६ सेर ।

कल्क—पीपलामूल, जवाखार, प्रसारणी, बहेड़ा, सेंधानमक, मजीठ, चीता और मुलैठी १०—१० तोले । जीवक, ऋषभक, मेदा, महा-मेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती और मुलैठी ५—५ तोले । सोंठ २५ तोले और ३० नग भिलावे ।

विधि—८ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त समस्त पदार्थ मिलाकर पकावें । जब तैल मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसे बस्ति इत्यादि द्वारा प्रयुक्त करनेसे सन्धि और शिरागत वायु नष्ट होता तथा पौरुष उत्साह स्मृति बुद्धि बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है।

(४१४५) **प्रियङ्ग्वाद्यं तैलम्**

(वृ. यो. त. । त. ११०; ग. नि. । विद्र. अ. ३५; र. र. । विद्र.; वृं. मा. । व्रणा.; वं. से. । विद्र.)

प्रियङ्गुधातकीलोध्रं कट्फलं तिनिसत्वचा[1] ।
एतैस्तैलं विपक्तव्यं विद्रधौ व्रणरोपणम् ॥

फूलप्रियङ्गु, धायके फूल, लोध, कायफल, और तिरच्छ (सांदन) वृक्षकी छाल । समान भाग मिश्रित ४ सेर लेकर ३२ सेर पानी में पकावें जब आठ सेर पानी शेष रहे तो छान लें। तदनन्तर २ सेर तिल के तेलमें यह क्वाथ तथा इन्हीं चीजोंका समान भाग मिश्रित कल्क १३ तोले ४ माशे मिलाकर पकावें । जब तेल मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह तैल विद्रधि और घावको नष्ट करता है।

(४१४६) **प्रह्लादनतैलम्**

(ग. नि. । ज्वरा. १)

यवार्द्धकुडवं पिष्ट्वा मञ्जिष्ठार्द्धपलं तथा ।
अम्लप्रस्थरसोन्मिश्रं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
एतत्प्रह्लादनं तैलं ज्वरदाहविनाशनम् ॥

१० तो. जौ और २॥ तोले मजीठ को पीसकर २ सेर तेलमें मिलावें और उसमें २ सेर काञ्जी मिलाकर पकावें । जब तेल मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इस तैलकी मालिश से ज्वर और दाह नष्ट होते हैं।

इति पकारादितैलप्रकरणम् ।

अथ पकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

(४१४७) **पञ्चमूत्रासवः**

(ग. नि. । आसवा. ६)

अजागोसुरभीणां च चतुःकर्षं खरोष्ट्रयोः ।
मूत्रं संग्राहय कुम्भे च स्थाप्य चूर्णं प्रदापयेत् ॥
वचाया वातकुम्भस्य लशुनस्यैलया सह ।
लवङ्गस्यापि प्रत्येकं पलार्द्धं कृमिनाशनः ॥
व्योषस्यापि पलं सार्द्धमभयैकपला मता ।
चुल्यग्रे वासरान् सप्त निक्षिप्याशु समुद्धरेत् ॥
प्लीहोदरहरं दिव्यं मूढवातकफापहम् ।
अशीतिवातशमनं पञ्चमूत्रासवं विदुः ॥

बकरी, साधारण गाय, सुरा गाय, गधी और ऊंटनी का मूत्र ५–५ तोले । वच, अरण्डखरबूजा,

१ कट्फलं मि... सैन्धवमिति पाठान्तरम् । तिलसैन्धवमिति च।

ल्हसन, इलायची और लौंगका चूर्ण २॥-२॥ तोले। बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा और आमलेका चूर्ण प्रत्येक ७॥ तोले तथा हर्रका चूर्ण ५ तोले। सबको एकत्र मिलाकर चिकने घड़े में भरकर उसका मुख बन्द करके उसे चूल्हे के पास जमीन में दबा दें और ७ दिन पश्चात् निकाल कर काम में लावें।

यह आसव प्लीहा (तिल्ली), विकृतवायु, कफ और ८० प्रकारके वातरोगों का नाश करता है।

नोट--यह आसव पिण्डासवके समान गाढ़ा बनेगा। मात्रा-६ माशे। २ तोले पानी में डालकर पीना चाहिये।

(४१४८) **पञ्चसायकः**

(वृ. यो. त. । त. १४७)

द्राक्षातुलामुपादाय जलद्रोणचतुष्टये।
पक्त्वा चतुर्थशेषं तु तं कषायमुपाहरेत् ॥
दत्त्वा गुडतुलां तत्र धातकीप्रस्थमेव च।
निखाय स्थापयेद् भूमौ यावत्पाशो वरो भवेत्॥
ततस्तत्सारमादाय वारुणीयन्त्रतः शनैः।
पुनस्तं वारुणीयन्त्रे समारोप्य तमाहरेत् ॥
एवं तु दशधा सारं पौनः पुन्येन संहरेत्।
ततस्तस्मिंश्चतुर्जातजातीकोशलवङ्गकम् ॥
कर्पूरकुङ्कुमं चापि यथालाभं नियोजितम्।
तं यथाग्निबलं मर्त्यः पिबेत्सर्वक्षयापहम् ॥

६। सेर द्राक्षा (मुनक्का) को १२८ सेर पानी में पकावें। जब ३२ सेर पानी शेष रहे तो क्वाथको छान लें।

इसमें ६। सेर गुड़ और १ सेर धाय के फूलोंका चूर्ण मिलाकर चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करदें और उसे भूमि में दबा दें। (१ मास) पश्चात् निकालकर वारुणीयन्त्र द्वारा उसका अर्क खींचें। उस अर्कको पुनः खींचें। इसी प्रकार दस बार अर्क खींच कर उसमें यथोचित प्रमाणमें दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, जायफल, लौंग, कपूर और केसरका चूर्ण मिलावें।

यह आसव हर प्रकारके क्षय को नष्ट करता है।

(४१४९) **पत्राङ्गासवः**

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

पत्राङ्गं खदिरं वासा शाल्मलीकुसुमं बला।
भल्लातकं शारिवे द्वे जवाकुसुममस्फुटम् ॥
आम्रास्थिदार्वीभूनिम्ब आफूकफलजीरकम्।
लौहं रसाञ्जनं बिल्वं केशराजस्त्वचं तथा ॥
कुङ्कुमं देवकुसुमं प्रत्येकं पलसम्मितम्।
सर्वं सुचूर्णितं कृत्वा द्राक्षायाः पलविंशतिम् ॥
धातकीं षोडशपलां जलद्रोणद्वये क्षिपेत्।
शर्करायास्तुलां दत्त्वा क्षौद्रस्यार्द्धतुलां तथा ॥
एकीकृत्य क्षिपेद् भाण्डे निदध्यान्मासमात्रकम्।
हन्त्युग्रं प्रदरं सर्वं श्वेतारुणं सवेदनम् ॥
ज्वरं पाण्डुं तथा शोफं मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥

पतंग, खैरसार, बासा, सैंभलके फूल, खरैटी, शुद्ध भिलावा, दो प्रकारकी सारिवा, गुडहलकी कलियां, आमकी गुठली, दारुहल्दी, चिरायता, पोस्तके फल, जीरा, अगर, रसौत, बेलगिरी, भंगरा,

दालचीनी, केसर और लौंग ५-५ तोले लेकर चूर्ण बनावें। तदनन्तर ६४ सेर पानी में १। सेर मुनक्का, १ सेर धायके फूलोंका चूर्ण, ६। सेर खांड, ३ सेर १० तोले शहद और उपरोक्त चूर्ण अच्छी तरह घोलकर उसे चिकने मटके में भरकर उसका मुख बन्द कर दें। और एक मास पश्चात् आसवको छान लें।

यह आसव पीड़ायुक्त सफेद, लाल इत्यादि हर प्रकारके प्रदरको एवं ज्वर, पाण्डु, शोथ, मन्दाग्नि और अरुचिको नष्ट करता है

(४१५०) पार्थाद्यरिष्टः

(भै. र. । हृद्रो.)

पार्थत्वचन्तुलामेकां मृद्वीकार्द्धतुलां तथा ।
भागं मधूकपुष्पस्य पलविंशति सम्मितम् ॥
चतुर्द्रोणेऽम्भसः पक्त्वा द्रोणमेवावशेषयेत् ।
धातक्या विंशतिपलं गुडस्य च तुलां क्षिपेत् ॥
मासमात्रं स्थितो भाण्डे भवेत्पार्थाद्यरिष्टकः ।
हृत्फुप्फुसगदान्सर्वान् हन्त्ययं बलवीर्यकृत् ॥

अर्जुनकी छाल ६। सेर, मुनक्का ३ सेर १० तोले तथा महुवेके फूल १। सेर लेकर सबको १२८ सेर पानीमें पकावें। जब ३२ सेर पानी शेष रहे तो छानकर उसमें २० पल (१। सेर) धायके फूलोंका चूर्ण और ६। सेर गुड़ मिलाकर उसे मिट्टीके चिकने मटके में भरकर उसका मुख बन्द कर दें, और एक मास पश्चात् निकालकर छान लें।

यह आसव हृदय और फुप्फुस के समस्त रोगोंको नष्ट करता और बल वीर्यको बढ़ाता है।

(४१५१) पिप्पल्यासवः

(च. स. । चि. अ. १९; वं. से. । ग्रहण्य.)

प्रास्थिकी पिप्पली प्रस्थं गुडं प्रस्थं विभीतकम् ।
उदकप्रस्थसंयुक्तं यवपल्ले निधापयेत् ॥
तस्मात्सुजातात्तु पलं सलिलाञ्जलिसंयुतम् ।
पिबेत्पिप्पल्यासवो ह्येष रोगानीकविनाशनः ॥
स्वस्थोऽपि यः पिबेन्मासं नरः स्निग्धरसाशनः।
तस्याग्निं दीपयत्येष आरोग्याय प्रकीर्तितः ॥

पीपलका चूर्ण १ सेर, गुड़ १ सेर, बहेड़ेका चूर्ण १ सेर। सबको १ सेर पानी में मिलाकर मिट्टीके चिकने पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके उसे जौके ढेरमें दबा दें। और (१ मास) पश्चात् निकाल लें।

इसमें से ५ तोले आसवको २० तोले पानीमें मिलाकर पीना चाहिये।

यह समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

यदि स्वस्थ मनुष्य भी इसे १ मास तक सेवन करे और स्निग्ध आहार करता रहे तो उसकी अग्नि दीप्त होती और उसका स्वास्थ्य स्थिर रहता है।

(व्यवहारिक मात्रा ६ माशे।)

नोट—यह आसव गाढ़ा कीचड़ सा बनता है।

(४१५२) पिप्पलीमूलाद्योरिष्टः

(ग. नि. । राजय.)

समूला पिप्पली शृङ्गी बृहती ह्यश्मभेदकः ।
पाटला देवकाष्ठश्च श्वदंष्ट्रा ह्यभया तथा ॥

एकैकात्षोडशपलं कोलानामाढकं तथा।
दन्तीचित्रकमूलानां पञ्चविंशपलं पृथक् ॥
चतुर्गुणे जलद्रोणे पचेदर्धावशेषितम्।
शीतं समावपेद्भाण्डे प्रलिप्ते मधुसर्पिषा ॥
खण्डस्य द्वे शते शुद्धे तद्वल्लोहं समावपेत्।
पत्रीकृतं तिलोत्सेधं सूक्ष्मचूर्णान्यमूनि च ॥
प्रियङ्गुं पिप्पलीं रोध्रं मृद्वीकां सैलवालुकम्।
क्रमुकं शतपुष्पां च निम्बं तेजोवतीमपि ॥
पालिकान् देवदारुं च खदिरस्य चतुः पलम्।
क्षौद्रप्रस्थद्वयं चापि समासिच्य घटे शुभे ॥
सौम्ये पुष्ये तथा हस्ते रोहिण्यामुत्तरासु च।
दशरात्रस्थितः पेयोऽरिष्ट आत्रेयपूजितः ॥
अश्विभ्यां कथितं पूर्वं रसायनमिदं शुभम्।
यथाग्निबलमात्रां तु पिबेदस्य हिताशनः ॥
धन्यं पुष्टिकरं मेध्यं बलीपलितनाशनम्।
क्षयकासज्वरप्लीहकुष्ठगुल्माग्निमार्दवे ॥
श्वित्रेऽश्मर्यां तथोदर्दे विद्रध्यामन्त्रवृद्धिषु।
पाण्डुरोगोदरस्तन्यरेतोदोषे च शस्यते ॥
नाडीपिडिकयोर्दोषे भूतापस्मारसङ्करे ॥

पीपल, पीपलामूल, काकड़ासिंगी, कटेली, पाषाणभेद (पखानभेद), पाढल, देवदारु, गोखरु और हर्र १-१ सेर, बेर ४ सेर तथा दन्तीमूल और चीतामूल २५-२५ पल (हरेक १ सेर ४५ तोले) लेकर कूटकर सबको १२८ सेर पानीमें पकावें। जब ६४ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें १२॥ सेर शुद्ध खांड मिलावें और फिर एक मटके के भीतर घी और शहदका लेप करके उसमें यह क्वाथ और निम्न लिखित ओषधियां डालकर मटके का मुख बन्द करके रख दें और १० दिन पश्चात् निकालकर छान लें।

फूलप्रियङ्गु, पीपल, लोध, मुनक्का, एलवालुक, सुपारी, सोया, नीमकी छाल, गज पीपल और देवदारु ५-५ तोले तथा खैरसार २० तोले। इन सबका महीन चूर्ण। लोहेके तिलके समान बारीक टुकड़े १२॥ सेर। शहद ४ सेर।

यह आसव पुष्य, रोहिणी या उत्तरा नक्षत्र में बनाना चाहिये।

यह आसव रसायन, पौष्टिक, मेधा वर्द्धक और बलीपलित नाशक है।

इसके सेवन से क्षय, खांसी, ज्वर, तिल्ली, कुष्ठ, गुल्म, अग्निमांद्य, श्वित्र, अश्मरी, उदर्द, विद्रधि, अन्त्रवृद्धि, पाण्डु, उदररोग, स्तन्यविकार, वीर्यविकार, नाडीव्रण, पिडिका और भूतापस्मार नष्ट होता है।

(४१५३) **पिप्पल्यरिष्टः**

(ग. नि. । आसवा. ६; वृ. यो. त. । त. ७६; यो. र. । क्षय.; यो. त. । त. २७)

पिप्पलीरोध्रमरिचपाठाधात्र्येलवालुकम्।
चव्यचित्रकजन्तुघ्नक्रमुकोशीरचन्दनम् ॥
मुस्ताप्रियङ्गुलवलीहरिद्रामिशिपेलवम्।
पत्रत्वक्कुष्ठतगरं नागकेसरसंयुतम् ॥
एषामर्द्धपलान्भागान् द्राक्षां षष्टिपलां क्षिपेत्।
पलानि दश धातक्या गुडस्य च शतत्रयम् ॥
तोयद्रोणद्वये सिद्धो भवत्येष सुखावहः।
ग्रहणीपाण्डुरोगार्शः कासगुल्मोदरापहः ॥
पिप्पल्यादिररिष्टोऽयं ज्वरारुचिविनाशनः ॥

पीपल, लोध, काली मिर्च, पाठा, आमला, एलवालुक, चव, चीता, बायविड़ंग, सुपारी, खस, सफेदचन्दन, नागरमोथा, फूलप्रियङ्गु, लवलीफल (हरफारेवड़ी), हल्दी, सौंफ, केवटी मोथा, तेजपात, दालचीनी, कूठ, तगर और नागकेसर २॥-२॥ तोले । मुनक्का ६० पल (३॥। सेर)। धायके फूल १० पल (५० तोले) और गुड़ १८॥। सेर लेकर कूटने योग्य चीज़ोंको कूटकर सबको ६४ सेर पानी में मिलाकर चिकने मटके में भरकर यथाविधि आसव तैयार करें ।

यह पिप्पल्यरिष्ट (आसव) संग्रहणी, पाण्डु, अर्श, खांसी, गुल्म, उदररोग, ज्वर और अरुचिको नष्ट करता है ।*

पिप्पल्यासवः

(भै. र.; शा. ध.)

(पिप्पल्यरिष्ट देखिये)

(४१५४) पील्वासवः (१)

(ग. नि. । आसवा. ६; वा. भ. । चि. अ. ८)

द्रोणं पीलुरसस्य वस्त्रगलितं न्यस्तं हविर्भाजने।
युञ्जीत द्विपलैर्मदामधुफलाखर्जूरधात्रीफलैः ॥
पाठामाद्रिदुरालभाम्लविदुलव्योषत्वगेलोल्लकैः ।
स्पृक्काकोलवङ्गवेल्लचपलामूलाग्निकैःपालिकैः॥
गुडशतविनियोजितं निवाते
निहितमिदं प्रपिबेच्च पक्षमात्रात् ।
निशमयति गुदाङ्कुरान्सगुल्मा-
ननलबलं प्रबलं संविधत्ते ॥

*शार्ङ्गधर तथा भै. र. व. में लवली, मिशी, पेलव की जगह लवंग, मांसी और एला लिखा है तथा नाम पिप्पल्यासव लिखा है। शेषयोग समान है।

कपड़ेसे छना हुवा पीलुका रस ३२ सेर, धायके फूल, मुनक्का, खजूर, आमला, पाठा, काला अतीस, धमासा, अमलबेत, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, कंकोल, स्पृक्का (असवरण), बेर, लौंग, बायबिड़ंग, पीपलामूल और चीता ५-५ तोले । गुड़ ६। सेर ।

कूटने योग्य चीज़ोंको कूट लें । फिर सबको एकत्र मिलाकर स्निग्ध मटके में भरकर उसका मुख बन्द करके निर्वात स्थान में रखदें । और १५ दिन पश्चात् निकालकर छान लें ।

इसके सेवनसे अर्श और गुल्म नष्ट होते तथा अग्नि दीप्त होती है ।

(४१५५) पील्वासवः (२)

(ग. नि. । आस. ६)

मूर्वाखर्जूरपाठानिलरिपुमधुकं कच्छुरा हारहूरा
कोलत्वग्वेतसाम्लं दहनमिशिकणाकृष्णाविश्वा लवङ्गम् ।
त्वग्लोध्राद्दाडिमाच्च पलमितमिति पृथक् दन्तिमूलेन युक्तं ।
पीलुद्रोणे द्विपक्षं गुडपलशतयुक् धान्यराशौ निदध्यात् ॥
अर्शः प्लीहं च गुल्मं जठरगदमथो नाशयेच्चाग्निमान्द्यम् ।
कुर्याच्चाग्निं प्रदीप्तं प्रबलबलयुतं पीलुसंज्ञासवोऽयम् ॥

मूर्वा, खजूर, पाठा, अरण्डकी जड़, मुलैठी, धमासा, मुनक्का, बेरीकी छाल, अमलबेत, चीता, सैांफ, पीपल, कालीमिर्च, सोंठ, लौंग, दारचीनी,

लोध, अनारदाना और दन्तीमूल ५-५ तोले। पीलुका रस ३२ सेर और गुड़ ६। सेर लेकर कूटने योग्य चीज़ोंको कूट लें और फिर सबको एकत्र मिलाकर चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें और १५ दिन पश्चात् निकालकर छान लें।

इसके सेवनसे अर्श, प्लीहा, गुल्म, उदररोग और अग्निमांद्यका नाश होता तथा अग्नि और बलकी वृद्धि होती है।

(४१५६) पुनर्नवासवः (१)

(भै. र. । शोथा.; ग. नि. । आसवा. ६; यो. र. । शोथ.; च. सं. । चि. अ. १७; वृ. नि. र. । शोथ.)

पुनर्नवे द्वे च पले सपाठे
दन्ती गुडूची सहचित्रकेण ।
निदिग्धिका च त्रिपलानि पक्त्वा
द्रोणावशेषे सलिले ततस्तु ॥
पूत्वा रसं द्वे च तुले पुराणाद्
गुडान्मधुप्रस्थयुतं सुशीतम् ।
मासं निदध्याद्घृतभाजनस्थं
पल्ले यवानां परतश्च मासात् ॥
चूर्णीकृतैरर्द्धपलांशकैस्तं
हेमत्वगेलामरिचाम्बुपत्रैः ।
गन्धान्वितं क्षौद्रघृतप्रदिग्धं
जीर्णे पिबेद् व्याधिबलं समीक्ष्य ॥
हृत्पाण्डुरोगं श्वयथुं प्रवृद्धं
प्लीहभ्रमारोचकमेहगुल्मान् ।
भगन्दरार्शोजठराणि कासं
श्वासग्रहण्यामयकुष्ठकण्डूः ॥
शाखानिलं बद्धपुरीषतां च
हिक्कां किलासं च हलीमकं च ॥

सफेद और लाल पुनर्नवा, दोनों पाठा, दन्तीमूल, गिलोय और चीतामूल १०-१० तोले तथा कटैली १५ तोले लेकर सब को कूटकर १२८ सेर पानी में पकावें। जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें। तदनन्तर उस में १२॥ सेर गुड़ और २ सेर शहद मिलावें। फिर इसे घृत रखने के मटके में शहद और घी पोतकर उस में भर दें और उस का मुख बन्द कर के अनाज के ढेर में दबा दें एवं एक मास पश्चात् निकाल कर उस में २॥-२॥ तोले नागकेसर, दालचीनी, इलायची, कालीमिर्च, सुगन्ध बाला, और तेजपात का चूर्ण मिला दें।

इसे पुराना हो जाने पर छानकर सेवन करने से हृद्रोग, पाण्डु, प्रवृद्ध शोथ, प्लीहा, भ्रम, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, अर्श, उदररोग, खांसी, श्वास, संग्रहणी, कोढ, खुजली, शाखागत वायु, मलबन्ध, हिचकी, किलास कुष्ठ और हलीमक नष्ट होता है।

(४१५७) पुनर्नवासवः (२)

(भै. र. । शोथा.)

त्रिकटु त्रिफलां दार्वीं श्वदंष्ट्रां बृहतीद्वयम् ।
वासामेरण्डमूलञ्च कटुकीं गजपिप्पलीम् ॥
शोथघ्नीं पिचुमर्दञ्च गुडूचीं शुष्कमूलकम् ।
दुरालभां पटोलञ्च पलांशेन विचूर्णयेत् ॥

धातकीं षोडशपलां द्राक्षायाः पलविंशतिम् ।
तुलामानां सितां दत्त्वा माक्षिकार्द्धतुलां तथा ॥
जलद्रोणद्वये क्षिप्त्वा मासं भाण्डे निधापयेत् ।
पुनर्नवासवो ह्येष शोथोदरविनाशनः ॥
प्लीहानमम्लपित्तं च यकृद्गुल्मज्वरादिकान् ।
कृच्छ्रसाध्यामयान् सर्वान् नाशयेन्नात्र संशयः॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दारुहल्दी, गोखरु, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, बासा, अरण्डमूल, कुटकी, गजपीपल, पुनर्नवा (साठी--बिसखपरा), नीमकी छाल, गिलोय, सूखी मूली, धमासा और पटोल ५–५ तोले तथा धाय के फूल १ सेर लेकर सब को कूटकर चूर्ण बनावें।

तदनन्तर एक चिकने मटके में १२८ सेर पानी भरकर उस में उपरोक्त चूर्ण और २० पल (१। सेर) मुनक्का, ६। सेर खांड और ६। सेर शहद मिलाकर उस का मुख बन्द कर दें। और एक मास पश्चात् आसवको निकालकर छान लें।

यह, आसव, शोथोदर, प्लीहा, अम्लपित्त, यकृत्, गुल्म और ज्वर आदि कष्ट साध्य रोगों को नष्ट करता है।

(४१५८) पुष्करमूलासवः

(ग. नि. । आसवा. ६)

तुलां पुष्करमूलस्य तदर्द्धं तु दुरालभा ।
तदर्द्धेन तु धान्याकं व्योषाच्च पलविंशतिः ॥
मञ्जिष्ठाकुष्ठमरिचं कपित्थं देवदारु च ।
रोध्रं कृमिघ्नं चविका पिप्पलीमूलमेव च ॥
उशीरकाश्मरिफलं रास्ना भार्ङ्गी च नागरम् ।
एषां द्विपलिकान्भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत्॥
द्रोणशेषे कषाये तु पूते शीते प्रदापयेत् ।
गुडस्य त्रिशतं तत्र धातक्याः पलविंशतिः ॥
मरिचं केशरं श्यामामेलात्वक्पत्रकं पलम् ।
पिप्पलीनां तु कुडवं चूर्णीकृत्य प्रदापयेत् ॥
घृतभाण्डे स्थितं मासं पिबेन्मात्रां यथाबलम् ।
क्षयापस्मारकासास्रक्शोफगुल्मभगन्दरान् ॥
पुष्करासव इत्येष प्रयोगादेव नाशयेत् ॥

पोखरमूल ६। सेर, धमासा ३ सेर १० तोले, धनिया १ सेर ४५ तोले, त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) १। सेर, मजीठ, कूठ, काली मिर्च, कैथ, देवदारु, लोध, बायबिडंग, चव, पीपलामूल, खस, खम्भारी के फल, रास्ना, भरंगी और सोंठ १०–१० तोले लेकर सब को कूटकर १२८ सेर पानी में पकावें। जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर ठंडा होने पर उस में १८॥ सेर गुड़, १। सेर धाय के फूलों का चूर्ण तथा काली मिर्च, नागकेसर, निसोत, इलायची, दालचीनी और तेजपात का चूर्ण ५–५ तोले एवं पीपल का चूर्ण २० तोले मिलाकर सब को चिकने मटके में भरकर उस का मुख बन्द कर दें और एक मास पश्चात् आसव को निकालकर छान लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करने से क्षय, अपस्मार, खांसी, शोथ, गुल्म और भगन्दर नष्ट होता है।

इति पकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम् ।

अथ पकारादिलेपप्रकरणम्

(४१५९) **पङ्कलेपः**

(वै. म. र. । पटल ७)

चिरजलधरभाण्डोद्भूतपङ्कं गृहीत्वा
जठरवृषणनाभौ निक्षिपेन्मूत्रकृच्छ्री ।

पानी रखनेके पुराने घड़ेके टुकड़ेको पानीके साथ पीसकर उसकी कीचड़सी बना लें ।

इसे पेट, अण्डकोष और नाभिपर लेप करनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ।

(४१६०) **पञ्चकोलादिलेपः**

(च. सं. । चि. अ. ३० योनिव्या.)

पञ्चकोलकुलत्थैश्च पिष्टैरालेपयेत्स्तनौ ।
शुष्कौ प्रक्षाल्य निर्दुह्यात्तथास्तन्यं विशुद्ध्यति ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और कुलथी समान भाग लेकर सबको पानीके साथ पीसकर स्तनोंपर लेप कर दें । जब वह सूख जाय तो उसे धो डालें । इस प्रयोग से दूध शुद्ध हो जाता है ।

(४१६१) **पञ्चवल्कलादिलेपः**

(वं. से.; वृ. नि. र.; वृं. मा.; भा. प्र. । विद्रधि.)

पञ्चवल्कलकल्केन घृतमिश्रेण लेपनम् ।
सर्पिषा शतधौतेन नवनीतेन वा गवाम् ॥

सिरस, पीपल, पिलखन, बड़ और बेतकी छाल के महीन चूर्णको सौ बार धुले हुवे गायके घीमें या गायके मक्खनमें मिलाकर लगानेसे पित्तज अण्डवृद्धि रोग नष्ट होता है ।

(४१६२) **पञ्चवल्कलादिलेपः**

(यो. र. । वीस.)

शतधौतघृतविमिश्रः कल्कस्त्वक्पञ्चकस्य लेपेन।
बहुदाहकरमुच्चैरग्निविसर्पं विनाशयति ॥

पीपल, पिलखन, बेत, बड़ और सिरसकी छालके चूर्णको सौ बार धोये हुवे घीमें मिला कर लगाने से अत्यन्त दाह करनेवाला अग्निवीसर्प नष्ट होता है ।

(४१६३) **पञ्चशिरीषलेपः**

(च. सं. । चि. अ. २५)

शिरीषफलमूलत्वक्पुष्पपत्रैः समैर्घृतैः ।
श्रेष्ठः पञ्चशिरीषोऽयं विषाणां प्रवरो वधे ॥

सिरसके फल, जड़, छाल, पुष्प और पत्र समान भाग लेकर पीसकर सबको घृतमें मिलाकर लेप करनेसे विष नष्ट होता है ।

(४१६४) **पञ्चाम्लको लेपः**

(वं. से. । तृषा.; ग. नि. । तृषा. १६)

कोलदाडिमवृक्षाम्लचुक्रिकाचुक्रिकारसः ।
पञ्चाम्लको मुखे लेपः सद्यस्तृष्णां नियच्छति॥

बेर, अनारदाना, इमली, चुक्र (शुक्त) और चूकेका रस समान भाग लेकर पहिली तीनों चीजोंको महीन पीस लें और फिर सबको एकत्र मिलाकर उसका मुखमें लेप करें । इससे तृष्णा शीघ्र ही शान्त हो जाती है ।

(४१६५) **पटोलादिलेपः**

(ग. नि. । श्वयथ्वधि. ३३)

पटोलो मधुकं निम्बो दार्वी सप्तच्छदो वृषः ।
सारिवा चेति सघृतं पित्तशोथप्रलेपनम् ॥

पटोल, मुलैठी, नीमकी छाल, दारुहल्दी, सतौना, बासा और सारिवा । सबके समान भाग मिश्रित महीन चूर्णको घीमें मिलाकर लेप करनेसे पित्तज शोथ नष्ट होता है ।

(४१६६) **पत्रकादिलेपः**

(यो. र. । कुष्टा.; ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

पत्रकोपणकासीसतैलताप्यमनःशिलाः ।
सप्ताहमुषिताः कांस्ये सिध्मश्वित्रविनाशनाः ॥

तेजपात, कालीमिर्च, कसीस, सोनामक्खी भस्म (या चूर्ण) और मनसिल समान भाग लेकर सबको महीन पीसकर तेलमें मिलाकर कांसीके बरतनमें रख दें और सातदिन पश्चात् काममें लावें ।

इसका लेप करनेसे सिध्म और श्वित्र (सफेद कुष्ठ) नष्ट होता है ।

(४१६७) **पत्राङ्गादिलेपः**

(रा. मा. । मु. रो. ५)

यः पत्राङ्गमृणालपद्मक
गदैः कोलास्थिमज्जान्वितैः ।
स्वर्णत्वग्मलयोत्थकुङ्कुम
निशायुग्मैः सकालीयकैः ॥
श्यामासावररोचनामधु
जपायुक्तैर्मसूरैरपि ।
श्लक्ष्णैः साम्बुभिराहितः
प्रकुरुते लेपो मुखे गौरताम् ॥

लालचन्दन, कमलनाल, पद्माक, कूठ, बेर की गुठलीकी गिरी, नागकेसर, दालचीनी, सफेद-चन्दन, केसर, हल्दी, दारुहल्दी, अगर, काली निसोत, सावरलोध, गोरोचन, मुलैठी, गुडहलके फूल और मसूर समान भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें । इसे पानीमें मिलाकर लेप करनेसे मुखका रंग गोरा हो जाता है ।

(४१६८) **पथ्यादिलेपः** (१)

(रा. मा. । शिरोरो. १)

पथ्याक्षधात्रीफललोहचूर्णै-
स्तुरङ्गमारासनमार्कवैश्च ।
तुल्यैर्गुडेन प्रतिधूपितैश्च
लिप्तानि कार्ष्ण्यं पलितानि यान्ति ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, लोहचूर्ण, कनेरकी जड़की छाल, असन वृक्षकी छाल और भंगरा समान भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें । इसे गुड़की धूनी देकर सफेद बालोंपर लेप करनेसे वे काले हो जाते हैं ।

(४१६९) **पथ्यादिलेपः** (२)

(यो. र. । कुष्ठा.; वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.; भा. प्र.; वं. से. । कुष्ठा.)

पथ्याकरञ्जसिद्धार्थनिशावल्गुजसैन्धवैः ।
विडङ्गसहितैः पिष्टैर्लेपमात्रेण कुष्ठजित् ॥

हर्र, करञ्जबीज, सफेद सरसों, हल्दी, बाबची, सेंधा नमक और बायबिडंगको महीन पीसकर लेप करनेसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

(४१७०) **पथ्यादिलेपः** (३)

(वृ. मा. । नेत्र.; ग. नि.; वं. से.; यो. र.; वृ. नि. र. । नेत्र.)

पथ्यागैरिकसिन्धूत्थदार्वीतार्क्ष्यैः समांशकैः।
जलपिष्टैर्बहिर्लेपःसर्वनेत्रामयापहः ॥

समान भाग हर्र, गेरु, सेंधा नमक, दारुहल्दी और रसौत को पानीमें पीसकर आंखोंके बाहर लेप करनेसे आंखोंके समस्त रोग नष्ट होते हैं। (दुखती आंखों में उपयोगी है ।)

(४१७१) **पथ्यादियोगः**

(वै. म. र. । पटल १६)

प्रस्थे पयसि सम्पक्वं गवां पथ्याचतुष्टयम्।
आपनं तेन सम्पिष्टं बहिर्लिप्तं दगार्तिनुत् ॥

चार नग हर्र गाय के १ सेर दूध में पकावें। इस दूध में काली मिर्च पीसकर आंखों के बाहर (पेवटों पर) लेप करने से नेत्र पीड़ा (आंख की खड़क) नष्ट होती है।

(४१७२) **पद्मकादिलेपः** (१)

(ग. नि. । विसर्पा ३९.)

पद्मकोशीरमधुकचन्दनैश्च प्रशस्यते ।
लेपो विसर्पपित्तास्रदाहरागनिवारणः ॥

पद्माक, खस, मुलैठी और लाल चन्दन को पीसकर लेप करने से विसर्प, रक्तपित्त, दाह और लालिमा नष्ट होती है।

(४१७३) **पद्मकादिलेपः** (२)

(वं. से. । स्त्री)

पद्मकोत्पलबीजानि त्रापुसानि शतावरी ।
विदारी चेक्षुमूलञ्च पिष्ट्वा धौतघृतायुतम् ॥
योन्यां शिरसि गात्रे च प्रदेहोऽसृग्दरापहः ॥

पद्माक, कमलगट्टा, खीरे के बीज, शतावर, बिदारीकन्द और ईख की जड़। सब चीजें समान भाग लेकर सब को महीन पीसकर धुले हुवे घीमें मिलाकर योनि, शिर और शरीर में लेप करने से रक्तप्रदर और दाह का नाश होता है।

नोट--रक्तप्रदर में योनि में और दाह में शरीर तथा शिरपर लेप करना चाहिये।

(४१७४) **पद्मिनीपङ्कादिलेपः**

(वृ. मा. । विसर्पा.)

पैत्ते तु पद्मिनीपङ्कपिष्टं वा शङ्खशैवलम् ।
गुन्द्रामूलन्तु शुक्तिर्वा गैरिकं वा घृतान्वितम् ॥

पैत्तिक विसर्प में कमलिनी की जड़ के नीचे की कीचड़ (अथवा कमलिनी का कल्क) अथवा शंख और शैवाल या नागरमोथे की जड़ अथवा सीप या गेरु को पीसकर घीमें मिलाकर लेप करना चाहिये।

(४१७५) **पद्मोत्पलादिलेपः**

(वं. से. । उपदंश.)

पद्मोत्पलमृणालैश्च ससर्जार्जुनवेतसैः ।
सर्पिःस्निग्धैः समधुकैः पैत्तिकं संप्रलेपयेत् ॥

कमल, नील कमल, कमलनाल, राल, अर्जुन की छाल, बेत और मुलैठी के समान-भाग-मिश्रित महीन चूर्ण को घीमें मिलाकर लेप करने से पैत्तिक उपदंश नष्ट होता है।

(४१७६) **पयस्यादिलेपः**

(वृ. मा. । नेत्ररोग.)

पयस्यासारिवापत्रमञ्जिष्ठामधुकैरपि ।
अजाक्षीरान्वितैर्लेपः सुखोष्णः पथ्य उच्यते ॥

क्षीरकाकोली, सारिवा, तेजपात, मजीठ और मुलैठी के समान-भाग-मिश्रित महीन चूर्ण को बकरी के दूध में मिलाकर जरा गर्म कर के लेप करने से आंखों की पीड़ा और लाली नष्ट होती है।

(४१७७) परूषकादिलेपः

(वृ. मा. । स्त्रीरो.)

परूषकशिफालेपः स्थिरामूलकृतोऽथवा ।
नाभिवस्तिभगाद्येषु मूढगर्भापकर्षणः ॥

फालसे या शालपर्णी की जड़ को पीसकर नाभि, बस्ति और भग आदि में लेप करने से मूढ-गर्भ निकल आता है ।

(४१७८) पलाशफलादिलेपः

(वं. से.; यो. र. । स्त्री.)

पलाशोदुम्बरफलं तिलतैलसमन्वितम् ।
मधुना योनिमालिप्य गाढीकरणमुत्तमम् ॥

ढाक (पलास) और गूलर के फलों को पीस कर तिल के तैल से चिकना करके शहद में मिला-कर लेप करने से योनि की शिथिलता नष्ट हो जाती है ।

(४१७९) पलाशबीजलेपः

(रा. मा. । स्त्री रो. ३०; यो त. । त. ७५)

ऋतौ घृतक्षौद्रयुतैः पलाश-
बीजैः प्रलेपं मसृणप्रपिष्टैः ।
करोति या स्त्री भगरन्ध्रमध्ये
न सा भवेद् गर्भवती कदाचित् ॥

ऋतुकाल (मासिक धर्म होने के दिनों) में पलाश (ढाक) के बीजों को खूब महीन पीस कर घी और शहद में मिलाकर योनि में लेप करने से स्त्री कभी गर्भवती नहीं होती ।

(४१८०) पलाशबीजादिलेपः

(वं. से. । विषरोगा.)

अर्कक्षीरेण सम्पिष्टं लेपाद्बीजं पलाशजम् ।
वृश्चिकार्तिं हरेत् कृष्णा सशिरीषफला तथा ॥

ढाक (पलाश) के बीजों को आक के दूध में पीसकर या पीपल और सिरस के बीजों को (पानी के साथ) पीसकर लेप करने से बिच्छू के दंश की पीड़ा नष्ट हो जाती है ।

(४१८१) पलाशादिलेपः (१)

(यो. र.; च. द. । ज्वरा.)

अम्लपिष्टैः सुशीतैर्वा पलाशतरुजैर्दिहेत् ।
बदरीपल्लवोत्थेन फेनेनारिष्टकस्य च ॥
कालेयचन्दनानन्तायष्टीबदरकाञ्जिकैः ।
सघृतैःस्याच्छिरोलेपस्तृष्णादाहार्तिशान्तये ॥

पित्तज्वर में तृष्णा, दाह और बेचैनी हो तो निम्न लिखित प्रयोगों में से किसी एक का शिर-पर लेप करना चाहिये ।

(१) ढाक के फूलों को कांजी में पीसकर लेप करें ।

(२) बेरी या नीम के पत्तों को काञ्जी में पीसकर उन्हें हाथों से मलकर और थोड़ी सी काञ्जी में खूब आलोडन कर के झाग उठावें और इन झागों का लेप करें ।

(३) दारुहल्दी, चन्दन, अनन्त मूल, मुलैठी, और बेर ; समान भाग लेकर सब को कांजी के

साथ पीस लें और फिर उसे घी में मिलाकर लेप करें।

(४१८२) **पलाशादिलेपः** (२)

(यो. र. । गलगण्डा.)

तण्डुलोदकपिष्टेन मूलेन परिलेपितः।
हितः कर्णे पलाशस्य गलगण्डः प्रशाम्यति ॥

पलाश की जड़ की छाल को तण्डुलोदक[२] (चावलों के पानी) के साथ पीस कर कान के नीचे लेप करने से गलगण्ड नष्ट होता है।

(४१८३) **पाठादिलेपः**

(वृं. मा. । स्त्रीरो.)

पाठासुरससिंहास्यमयूरकुटजैःपृथक्।
नाभिबस्तिभगालेपात्सुखं नारीप्रसूयते ॥

पाठा, संभालु, बासा, चिरचिटा और इन्द्र जौ। इन में से किसी एक को पीसकर नाभि, बस्ति और योनि में लेप करने से सुखपूर्वक प्रसव हो जाता है।

(४१८४) **पामादद्रुकुष्ठहरो लेपः**

(रसें. म.)

पामां विचर्चिकां दद्रुं लेपाद् गन्धकपिष्टिका।
कटुतैलेन पक्वा सा लेपनादेव नाशयेत् ॥

गन्धक को पीसकर सरसों के तेल में पका कर मल्हम बना लें।

इसे लगाने से पामा, विचर्चिका और दाद का नाश होता है।

---

१ हस्तिकर्णपलाशस्येति समुचित पाठः

२ तण्डुलोदक बनाने की विधि भा. भै. रत्नाकर प्रथम भाग के ३५३ पृष्ठ पर देखिये।

(४१८५) **पारदलेपः**

(यो. र. । कृमि.; रा. मा. । शिरो.)

पारदं मर्दयेन्निष्कं कृष्णधत्तूरकद्रवैः।
नागवल्लीद्रवैर्वाऽथ वस्त्रखण्डं प्रलेपयेत् ॥
तद्वस्त्रं मस्तके बद्ध्वा धार्यं यामत्रयं ततः।
यूकाः पतन्ति निश्चेष्टाः सलिक्षा नात्र संशयः॥

५ माशे पारद को काले धतूरे या नागरबेल के पान के रस में अच्छी तरह घोटें और फिर उसे एक कपड़े के टुकड़े पर लेप कर दें। यह कपड़ा शिर पर बांध लें और ३ पहर पश्चात् खोल डालें।

इस प्रयोग से शिर की जुवें (यूका) और लीख (लिक्षा) मरकर गिर पड़ती हैं।

(४१८६) **पारदादिमलहरम्** (१)

(यो. र. । व्रणशोथा.; वृ. यो. त. । त. १११)

रसगन्धकसिन्दूररालकम्पिल्लमुर्दकम्।
तुत्थं खादिरकं चूर्णं सर्वं घृतचतुर्गुणम् ॥
युक्त्या सम्मेल्य पिचुना व्रणे देयं विजानता।
सर्वव्रणप्रशमनं घृतमेतन्न संशयः ॥

पारा, गन्धक, सिन्दूर, राल, कमीला, मुर्दासिंग, नीलाथोथा और कत्था समान-भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें तत्पश्चात् उस में अन्य ओषधियों का चूर्ण मिलाकर खूब घोटें और फिर उसे चार गुने घी में मिला लें।

इस का फाया लगाने से हर तरह का घाव भर जाता है।

(४१८७) **पारदादिमलहरम्** (२)

(यो. र. । व्रणशोथ.; वृ. यो. त. । त. १११)

रसगन्धकयोश्चूर्णं तत्समं मुर्दशङ्खकम्।
सर्वतुल्यन्तु कम्पिल्लं किञ्चिन्तुत्थसमन्वितम् ॥

सर्वं सम्मेलयेद्दत्वा घृतं सर्वाच्चतुर्गुणम् ।
पिचुप्लुतं प्रदातव्यं दुष्टव्रणविशोधनम् ॥
नाडीव्रणहरं चैव सर्वव्रणनिषूदनम् ।
ये व्रणा न प्रशाम्यन्ति भेषजानां शतेन च ॥
अनेन ते प्रशाम्यन्ति सर्पिषा स्वल्पकालतः ॥

पारा और गन्धक १-१ भाग लेकर दोनों की कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें २ भाग मुर्दासिंग, ४ भाग कमीला और ज़रा सा नीलेथोथे का चूर्ण मिलाकर घोटें और इसे सबसे ४ गुने घीमें मिला लें।

इसका फाया लगाने से दुष्ट व्रण और नासूर शुद्ध होकर भर जाते हैं। जो व्रण अन्य सैकड़ों औषधों से नहीं भरते वे इस प्रयोगसे स्वल्प कालमें ही नष्ट हो जाते हैं।

(४१८८) पारदादिलेपः

(यो. र.; वृ. नि. र. । उपदंशा.)

पारदं गन्धकं तालं दरदं च मनःशिलाम् ।
पृथक्कर्षं द्विकर्षं च मुडदारं सङ्गजीरकम् ॥
विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णां मर्दयेत्सुरसारसैः ।
छायाशुष्कां ततः कृत्वा पुनरुन्मत्तजद्रवैः ॥
विमर्द्याऽथ वटी कार्या उपदंशे प्रयोजयेत् ।
गोघृतेन प्रलेपोऽयं व्रणानां रोपणे हितः ॥

पारा, गन्धक, हरताल, शंगरफ (हिंगुल) और मनसिल १-१ भाग तथा मुर्दासिंग और शंखजीरा २-२ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको १ दिन तुलसीके रसमें घोटकर छाया में सुखा लें। तदनन्तर उसे १ दिन धतूरे के रसमें घोटकर गोलियां बना लें।

इन्हें गायके घृतमें मिलाकर लेप करनेसे उपदंशके घाव नष्ट होते हैं।

(४१८९) पारदादिसर्पिः

(वै. र. । उपदंश.; बृ. यो. त. । त. ११७)

पारदं गन्धकं तालं सिन्दूरं च मनःशिलाम् ।
ताम्रपात्रे तु सघृते ताम्रेणैव विमर्दयेत् ॥
घर्मे दिनैकं मृदितमेतत्कण्डूपदंशजित् ॥

पारा, गन्धक, हरताल, सिन्दूर और मनसिल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें। तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको तांबेके पात्रमें तांबा लगे हुवे सोटेसे १ दिन घी के साथ धूपमें घोटें।

यह लेप खुजली और उपदंशको नष्ट करता है।

(४१९०) पारिजातादिकल्कः

(वृं. मा; यो. र. । नेत्ररो.)

वल्कलं पारिजातस्य तैलसैन्धवकाञ्जिकम् ।
कफजाताक्षिजशूलघ्नं तरुघ्नं कुलिशं यथा ॥

पारिजात (हारसिंहार) की छालको पीसकर उसमें तैल, कांजी और सेंधा नमक मिलाकर लेप करने से कफज नेत्रशूल इस प्रकार नष्ट हो जाता है जैसे वज्रपातसे वृक्ष।

(४१९१) पिण्डीतगरमूलयोगः

(ग. नि. । विषचि.)

पिण्डीतगरकमूलं पुष्येणोत्पाटय योजितं दंशे ।
मृतमपि दष्टकपुरुषं चालयतीति नो चित्रम् ॥

पुष्य नक्षत्र में पिण्डीतगरकी जड़को उखाड़

लें । इसे पीसकर सर्पके दंश स्थान पर लगानेसे मृतप्रायः रोगीभी सचेत हो जाता है ।

(४१९२) **पिण्याकादिलेपः**

(वृ. मा. । क्षुद्ररोग; शा. ध. । ख. ३ अ. ११)

पुराणमथ पिण्याकं पुरीषं कुक्कुटस्य च ।
मूत्रपिष्टः प्रलेपोऽयं शीघ्रं हन्यादरूंषिकाम् ॥

तिलकी पुरानी खल और मुरगेकी विष्टाको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे अरूंषिका (शिरकी छोटी छोटी फुंसियां) शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं।

(४१९३) **पिप्पल्यादिलेपः** (१)

(भा. प्र. । अर्श.)

पिप्पलीं सैन्धवं कुष्ठं शिरीषस्य फलं तथा ।
सुधादुग्धार्कदुग्धं वा लेपोऽयं गुदजान् हरेत् ॥

पीपल, सेंधानमक, कूठ और सिरसके बीज समान भाग लेकर सबका महीन चूर्ण बनाकर उसे सेंड (सेहुंड-थोहर) या आकके दूधमें घोटकर लेप करने से अर्शके मस्से नष्ट हो जाते हैं ।

(४१९४) **पिप्पल्यादिलेपः** (२)

(ग. नि. । वृद्धयधि. ३५)

पिप्पली जीरकं कुष्ठं बदरं शुष्कगोमयम् ।
काञ्जिकेन प्रलेपोऽयमन्त्रवृद्धिविनाशनः ॥

पीपल, जीरा, कूठ, बेर और सूखा हुवा गायका गोबर समान भाग लेकर सबको काञ्जीके साथ खूब महीन पीस कर लेप करने से अन्त्र वृद्धि नष्ट होती है ।

(४१९५) **पिप्पल्यादिलेपः** (३)

(च. सं. । चि. अ. १४ अर्श.)

पिप्पल्यश्चित्रकः श्यामा किण्वं मदनतण्डुलाः ।
प्रलेपःकुक्कुटशकृद्धरिद्रागुडसंयुतः ॥

पीपल, चीता, निसोत, किण्व (सुराबीज), मैनफलके बीज, मुरगेकी विष्ठा, हल्दी और गुड़ समान भाग लेकर खूब महीन पीसकर लेप करनेसे अर्शके मस्से नष्ट हो जाते हैं ।

(४१९६) **पुत्रजीवकादिलेपः**

(भा. प्र. । म. ख. विस्फोटका.)

पुत्रजीवस्य मज्जानं जले पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ।
कालस्फोटं विषस्फोटं सद्यो हन्यात्सवेदनम् ॥
कक्षाग्रन्थिं कर्णग्रन्थिं गलग्रन्थिं च नाशयेत् ॥

पुत्रजीवक (पितोजिया) की मींगीको जलमें पीसकर लेप करनेसे वेदनायुक्त कालेफोड़े, विषैले फोड़े, कक्षाग्रन्थि, कर्णमूल और गलेकी गांठ शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(४१९७) **पुनर्नवादिलेपः** (१)

(वं. से. । व्रण.; वृं. मा. । व्रणशोथा.)

पुनर्नवादारुशिग्रुदशमूलमहौषधैः ।
कफवातकृते शोथे लेपः कोष्णो विधीयते ॥

पुनर्नवा (बिसखपरा--साठी), देवदारु, सहंजनेकी छाल, दशमूल और सोंठको महीन पीसकर मन्दोष्ण लेप करनेसे कफवातज शोथ नष्ट होता है ।

(४१९८) **पुनर्नवादिलेपः** (२)

(ग. नि. । वृद्धयधि. ३५)

मूलं पुनर्नवायाश्च शुष्कैरण्डफलं तिलाः ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य यवचूर्णेन योजयेत् ॥

काञ्जिकेन पिष्टं तु सुखोष्णेनैव कारयेत् ।
लेपो वृद्धिहरः प्रोक्तः सद्य शूलनिवारणः ॥

पुनर्नवा (साठी) की जड़, अण्डीके सूखे फल, तिल और जौका चूर्ण । सब चीजें समान भाग लेकर सबको कांजीके साथ अच्छी तरह पीसकर मन्दोष्ण लेप करनेसे वृद्धि और शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ।

(४१९९) **पुनर्नवादिलेपः** (३)

(यो. र. । श्वयथु.)

पुनर्नवा दारु शुण्ठीसिद्धार्थे शिग्रुमेव च ।
पिष्ट्वा चैवाऽऽरनालेन प्रलेपः सर्वशोथजित् ॥

पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), देवदारु, सोंठ, सफेद सरसों और सहंजनेकी छाल । सब समान भाग लेकर सबको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे समस्त प्रकारके शोथ नष्ट होते हैं ।

(४२००) **पूगादिलेपः**

(यो. र. । उपदंश.)

पूगं सुदग्धमेकन्तु रसगन्धकहिङ्गुलम् ।
खदिरं तुत्थकं चैव मर्दयेन्निम्बुनीरकैः ॥
समभागानि सर्वाणि गुटिकां कारयेद्बुधः ।
उपदंशे घृतैर्लेपस्त्रिदिनाद् व्रणरोपणः ॥

जली हुई सुपारी, पारा, गन्धक, शंगरफ़ (हिंगुल), खैरसार और नीलाथोथा समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको नीबूके रसमें घोटकर गोलियां बनालें ।

इन्हें घीमें मिलाकर लेप करनेसे ३ दिनमें उपदंशके घाव भर जाते हैं ।

(४२०१) **पूतिकादिलेपः**

(वृ. मा. । कुष्ठ.)

पूतीकार्कस्नुङ्नरेन्द्रद्रुमाणां
मूत्रैः पिष्टाः पल्लवाः सौमनाश्च ।
लेपाच्छ्वित्रं घ्नन्ति दद्रुव्रणांश्च
कुष्ठान्यर्शो दुष्टनाडीव्रणांश्च ॥

करञ्ज, अर्क, (आक), स्नुही (सेंड—सेहुंड), और अमलतास के पत्ते तथा फूलोंको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे सफेद कुष्ठ, दाद, घाव, कुष्ठ, अर्श और नाड़ीव्रण (नासूर) नष्ट होता है ।

(४२०२) **पूर्णचन्द्रलेपः**

(र. चं. । कुष्ठ.)

करञ्जैडगजानिम्बगुडाबाकुचिकुष्ठकाः ।
तालकं मरिचं मुस्तं गोमूत्रकर्दमैः सह ॥
सर्वकुष्ठहरो लेपो गहनानन्दनिर्मितः ।
दहेद्दावानलं यद्वन्निदाघतृणसङ्कुलम् ॥
पूर्णचन्द्रकनामाऽयं कुष्ठनाशाय च तथा ।
यथा चन्द्रो निशां मन्दां तमसः परिवर्जयेत् ॥

करञ्जके बीज, पंवाड़के बीज, नीमकी छाल, गिलोय, बाबची, कूठ, हरताल, कालीमिर्चे, नागरमोथा और गोमूत्रकी कीचड़ (जिस स्थान पर गाय पेशाब किया करती हो उस स्थानकी कीचड़) समान भाग लेकर सबको महीन पीसकर लेप बनावें ।

जिस प्रकार दावानल सूखे तृणसमूहको और चन्द्रमा रात्रिके अंधकारको नष्ट करता है इसी प्रकार यह लेप समस्त कुष्ठोंको नष्ट कर देता है ।

(४२०३) प्रपुन्नाटादिलेपः (१)

(र. का. धे. । अ. ४०)

प्रपुन्नाटवरागुञ्जा शुष्काम्रं कल्कितम् स्थितम् ।
रवितोऽष्टदिनं गर्त्ते तल्लेपो दद्रुजित्परः ॥

पंवाड़के बीज, हर्र, बहेड़ा, आमला, चैांटली और सूखा हुवा आम (अमचूर) समान भाग लेकर सबको पानीके साथ महीन पीसकर ताम्रके पात्रमें भरकर भूमिमें दबा दें; और आठ दिन पश्चात् निकाल कर काममें लावें ।

इसका लेप करनेसे दाद नष्ट हो जाता है ।

(४२०४) प्रपुन्नाटादिलेपः (२)

(वं. से. । कुष्ठ.; वृ. नि. र. । त्वग्दोष.)

प्रपुन्नाटस्य बीजानि धात्रीसर्जरसस्नुही ।
सौवीरपिष्टं दद्रुणामेतदुद्वर्तनं परम् ॥

पवांड़के बीज, आमला, राल और सेंड (सेहुंड) का दूध समान भाग लेकर सबको कांजीके साथ पीसकर मलनेसे दाद नष्ट हो जाता है ।

(४२०५) प्रपुन्नाटादिलेपः (३)

(वं से. । कुष्ठा.)

प्रपुन्नाटार्कदुग्धाग्निदन्तीजन्तुघ्नसैन्धवैः ।
गृहधूमनिशायुग्मसिंहीफलयुतैः समैः ॥
लेपः समस्तकुष्ठघ्नः सुप्तिवैवर्ण्यनाशनः ॥

पंवाड़के बीज, आकका दूध, चीता, दन्तीमूल, बायबिड़ंग, सेंधानमक, घरका धुवां, हल्दी, दारुहल्दी और कटेलीके फल समान भाग लेकर सबको महीन पीसकर लेप करनेसे समस्त कुष्ट, सुप्ति (स्पर्श ज्ञानका नाश) और विवर्णता का नाश होता है ।

(४२०६) प्रपौण्डरीकादिलेपः (१)

(ग. नि. । विसर्पा. ३९)

प्रपौण्डरीकोत्पलगैरिकञ्च
मञ्जिष्ठयष्टीमधुकं विदारी ।
द्वे चन्दने पद्मकपद्मपत्रं
सौगन्धिकं स्यात्कुमुदं च तुल्यम् ॥
लेपः प्रशस्तः पयसा सुपिष्टः
कुमारकाणां सविसर्पकाणाम् ॥

पुण्डरिया, नीलोत्पल, गेरु, मजीठ, मुलैठी, विदारीकन्द, लाल चन्दन, सफेद चन्दन, पद्माक, कमल, तेजपात, लाल कमल और कुमुद । सब चीज़ें समान भाग लेकर सबको दूधके साथ पीसकर लेप करनेसे बच्चोंका विसर्प नष्ट होता है ।

(४२०७) प्रपौण्डरीकादिलेपः (२)

(यो. र.; ग. नि. । विसर्पा. ३९)

प्रपौण्डरीकयष्ट्याह्वदार्वीरोध्राब्दचन्दनैः ।
सितोपलैरकासक्तुमसूरोशीरपद्मकैः ॥
लेपो रुग्दाहवीसर्पस्फोटशोफनिवारणः ॥

पुण्डरिया, मुलैठी, दारुहल्दी, लोध, नागरमोथा, लालचन्दन, मिश्री, एरका (मोथी तृण), जौका सत्तू, मसूर, खस और पद्माक को पीसकर लेप करनेसे पीड़ा और दाह युक्त विसर्प, स्फोटक और शोथ नष्ट होता है ।

(४२०८) प्रपौण्डरीकादिलेपः (३)

(वं. से.; वृ. नि. र. । उपदंशा.)

प्रपौण्डरीकयष्ट्याह्वसरलागुरुदारुभिः ।
सरास्नाकुष्ठपृथ्वीकैर्वातिके लेपसेचने ॥

पुण्डरिया, मुलैठी, सरल (धूपसरल), अगर देवदारु, रास्ना, कूठ और इलायची । इनका लेप करने और इनके काथसे घाव धोनेसे वातज उपदंश नष्ट होता है ।

(४२०९) **प्रपौण्डरीकादिलेपः** (४)

(ग. नि. । विसर्पा. ३९.; च. द. । विसर्पा.)

प्रपौण्डरीकमञ्जिष्ठापद्मकोशीरचन्दनैः ।
सयष्टीन्दीवरैः पिष्टैः क्षीरयुक्तैःप्रलेपनम् ॥

पुण्डरिया, मजीठ, पद्माक, खस, लाल चन्दन, मुलैठी और कमलको दूधके साथ पीसकर लेप करनेसे पित्तज विसर्प नष्ट होता है ।

(४२१०) **प्रपौण्डरीकादिलेपः** (५)

(ग. नि. । विसर्पा. ३९)

प्रपौण्डरीकं मधुकं पयस्या
मञ्जिष्ठिका पद्मकचन्दने च ।
सुगन्धिका चेति सुखोपलेपः
पैत्ते विसर्पे भिषजा प्रयोज्यः ॥

पुण्डरिया, मुलैठी, क्षीरकाकोली, मजीठ, पद्माक, लाल चन्दन और श्वेतापराजिता (सफेद कोयल) को पानीके साथ पीसकर लेप करनेसे पित्तज विसर्प नष्ट होता है ।

(४२११) **प्रियङ्ग्वादिलेपः**

(रा. मा. । मुखरो. ५)

प्रियङ्गुकाश्मीरजकोलमज्जा-
ह्रीबेरकैश्चन्दनभागयुक्तैः ।
पिष्टैः प्रलेपो विहितो मुखस्य
द्युतिं शशाङ्कादधिकां विधत्ते ॥

फूलप्रियङ्गु, केसर, बेरकी गुठलीकी गिरी, सुगन्धबाला और लाल चन्दन को पानी में पीस कर लेप करनेसे मुख चन्द्रमासे भी अधिक दीप्तिमान हो जाता है ।

(४२१२) **प्रियालादिलेपः**

(वृ. मा । क्षुद्ररोग.; शा. ध. । ख. ३ अ. ११)

प्रियालबीजमधुककुष्ठमिश्रैः[१] ससैन्धवैः ।
कार्यो दारुणके मूर्ध्नि प्रलेपो मधुसंयुतः ॥

चिरौंजी, मुलैठी, कूठ और सेंधा नमक को पीसकर शहद में मिलाकर लेप करने से दारुण (शिरो रोग विशेष) नष्ट होता है ।

(४२१३) **प्लक्षाद्यो लेपः**

(ग. नि. । बालग्रहा. १२)

प्लक्षाश्वत्थोदुम्बरमधूकवटगर्दभाण्डतरुणानाम् ।
आदाय मुष्टिमात्रं विपाच्य सलिलार्द्धशेषेण ॥
तेन जलेन शिशूनां स्नानं कुर्वीत पूतशीतेन ।
त्वग्रक्तकोठमण्डलविस्फोटकशमनमायुष्यम् ॥
सर्वग्रहापनोदनमुपचयकरमाशु सर्वसन्धीनाम् ।
एषामेव च कल्कैः सरक्तकोठापहो लेपः ॥

पिलखन, पीपल, गूलर, महुवा, बड़ और पारसपीपल की समान भाग मिश्रित छालें ५ तोले लेकर कूट कर पानी में पकावें और आधा पानी जल जाने पर उसे छानकर ठंडा करें । इस पानी से बालक को स्नान करानेसे उसके त्वग्दोष, रक्तविकार, चकते, विस्फोटक आदि और समस्त ग्रहदोष शान्त होते तथा शीघ्र ही उस की सन्धियां मज़बूत हो जाती हैं ।

उपरोक्त ओषधियों को पानीमें पीसकर लेप करनेसे त्वचा के लाल चकते नष्ट होते हैं ।

१ मार्षैरिति पाठान्तरम् ।

इति पकारादिलेपप्रकरणम् ।

अथ पकारादिधूपप्रकरणम्

(४२१४) **पलङ्कषादिधूपः**

(वृ. नि. र. । विषम ज्वर.; वं. से.; यो. र. । ज्वरा; वा. भ. । चि. अ. १)

पलङ्कषा निम्बपत्रं वचा कुष्ठं हरीतकी ।
सर्षपाः सयवा सर्पिर्धूपनं ज्वरनाशनम् ॥

गूगल, नीमके पत्त, बच, कूठ, हर्र, सरसों और जौ के समान-भाग-मिश्रित चूर्ण को घीमें मिलाकर उसकी धूप देनेसे ज्वर नष्ट हो जाता है ।

(४२१५) **पलङ्कषादिधूपः**

(वृ. यो. त. । त. १४४; वं. से.; वृ. नि. र. । बालरोग.)

पलङ्कषा वचा कुष्ठं गजचर्माविचर्म च ।
निम्बस्य पत्रं माक्षीकं सर्पिर्युक्तं च धूपनम् ॥
ज्वरवेगं निहन्त्याशु बालकानां विशेषतः ॥

गूगल, बच, कूठ, हाथी का चर्म, भेड़ का चर्म और नीमके पत्ते । सब के समान भाग चूर्ण को शहद और घीमें मिलाकर उसकी धूप देने से ज्वरका वेग कम हो जाता है ।

यह योग बालकों के लिये विशेष उपयोगी है ।

पारदादिधूपः

(भै. र. । उपदंशे)

रसप्रकरण में देखिये ।

(४२१६) **पारिभद्रादिधूपः**

(ग. नि. । बालग्रहा. १२)

पारिभद्रककट्वङ्गजम्बूवरुणकट्तृणैः ।
कपोतवङ्कापामार्गपाटलामधुशिग्रुभिः ॥
काकजङ्घामहाश्वेताकपित्थक्षीरिपादपैः ।
सकरञ्जकदम्बैश्च धूपं स्नातस्य चाचरेत् ॥

देवदार, अरलुकी छाल, जामनवृक्षकी छाल, बरने की छाल, सुगन्धतृण, ब्राह्मी, चिरचिटा, पाढल की छाल, मुलैठी, सहंजने की छाल, काकजंघा, श्वेत अपराजिता (कोयल), कैथ की छाल, क्षीरी वृक्ष (पीपल, बड़, गूलर आदि) की छाल, करञ्ज की छाल और कदम्ब की छाल । सब चीजें समान-भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

बालक को स्नान कराने के पश्चात् इस की धूप देनेसे समस्त ग्रहदोष नष्ट होते हैं ।

(४२१७) **पुरीषादिधूपः**

(वृ. नि. र. । बालरो.)

पुरीषं कौक्कुटं केशाश्चर्मसर्पभवं तथा ।
जीर्णेन सर्पिषा चैतद्धूपनायोपकल्पयेत् ॥

मुरगे की विष्ठा, बाल, सांप की कांचली और पुराने घी को एकत्र मिलाकर उस से बालकको धूप देनी चाहिये ।

(यह योग पूतनाग्रहनाशक है ।)

(४२१८) **पूतीकरञ्जादिधूपः**

(वा. भ. । उ. स्था. अ. ३)

पूतीदशाङ्घ्रीसिद्धार्थवचाभल्लातदीप्यकैः ।
सकुष्ठैः सघृतैर्धूपः सर्वग्रहविमोक्षणः ॥

करञ्ज, दशमूल, सफेद सरसों, बच, भिलावा, अजवायन और कूठ के समभाग-मिश्रित चूर्ण को घी में मिलाकर उस की धूप देने से बालकों के समस्त ग्रहदोष नष्ट होते हैं ।

इति पकारादिधूपप्रकरणम् ।

अथ पकारादिधूम्रप्रकरणम्

(४२१९) प्रपौण्डरीकादिधूमः

(च. स. । चि. अ. १८ कास.)

प्रपौण्डरीकं मधुकं शार्ङ्गेष्टां समनःशिलाम् ।
मरिचं पिप्पलीं द्राक्षामेलां सुरसमञ्जरीम् ॥
कृत्वा वर्तिं पिबेद्धूमं क्षौमचेलानुवर्तिताम् ।
घृताक्तामनु च क्षीरं गुडोदकमथापि वा ॥

पुण्डरिया, मुलैठी, मकोय, मनसिल, काली मिर्च, पीपल, मुनक्का, इलायची और तुलसी की मञ्जरी समान भाग लेकर सब को पीसकर यथाविधि बत्ती बनावें और उस पर रेशमी कपड़ा लपेट दें।

इसे घृतसे स्निग्ध कर के इसका धूम्रपान करने से खांसी नष्ट होती है।

धूम्रपान करने के पश्चात् दूध या गुड़ का शर्बत पीना चाहिये।

इति पकारादिधूम्रप्रकरणम्।

अथ पकाराद्यञ्जनप्रकरणम्।

(४२२०) पञ्चशतावर्तिः

(ग. नि. । नेत्र. ३)

नीलोत्पलपत्रशतं मुद्गशतं यवशतं च निस्तुषकम् ।
मालत्याः कुसुमशतं पिप्पल्यास्तन्दुलशतं च ॥
पञ्चशतैषा वर्तिर्लिखिता यवनैः शिलास्तम्भे ।
अन्धमनन्धं कुरुते यस्य च नोत्पाटिते नयने ॥

नीलोत्पल की पंखड़ियां १०० नग, छिलके रहित मूंग १०० दाने, छिलके रहित जौ १०० नग, चमेली के फूल १०० नग और पीपल के चावल १०० दाने* लेकर सब को अत्यन्त महीन पीसकर पानी की सहायता से बत्तियां बनावें।

यह पञ्चशतावर्ति यवनोंने शिलास्तम्भ पर लिखाई थी।

इसे आंखों में डालने से तिमिररोग नष्ट होता है।

(४२२१) पटलहराञ्जनम्

(र. र. स. । अ. २३)

कारवेल्लद्रवैः सार्धं सम्यग्भर्ज्या कपर्दिका ।
सूतकं टङ्कणं लाक्षा तुल्यं जम्बीरजद्रवैः ॥

* पीपल को दूध में भिगोकर हाथों से मलने से उन के चावल निकल आते हैं।

मर्दयेत्ताम्रपात्रे तु तस्मिन् रुध्वा विनिक्षिपेत् ।
धान्यराशौ स्थितं मासमञ्जनम् पटलं हरेत् ॥

कौड़ी के चूर्ण को करेले के रस में अच्छी तरह भूनें । तत्पश्चात् पारा, सुहागा और लाख तथा वह कौड़ी का चूर्ण समान-भाग लेकर सब को जम्बीरी नीबू के रस में तांबे के पात्र में घोटकर तांबे के पात्र में भरकर उस के मुख को अच्छी तरह बन्द कर दें और उसे अनाज के ढेरमें दबा दें । फिर १ मास पश्चात् औषध को निकालकर महीन पीस लें ।

इसे आंख में आंजने से पटलरोग नष्ट होता है ।

(४२२२) **पत्राद्यञ्जनम्**

(वृ. मा. । नेत्ररो.)

पत्रगैरिककर्पूरयष्टीनीलोत्पलाञ्जनम् ।
नागकेशरसंयुक्तमशेषतिमिरापहम् ॥

तेजपात, गेरु, कपूर, मुलैठी, नीलोत्पल, सुरमा और नागकेसर के समान-भाग मिश्रित चूर्ण को घोटकर अञ्जन बनावें ।

इसे आंख में आंजने से तिमिर रोग नष्ट होता है ।

(४२२३) **पथ्याद्यञ्जनम्**

(यो. र.; वृ. नि. र; वं. से. । नेत्ररो.)

पथ्याक्षधात्रीफलमध्यबीजै-
स्त्रिद्व्येकभागैर्विदधीतवर्तिम् ।
तयाञ्जयेदश्रुमतिप्रवृद्ध-
मक्ष्णोर्हरेत्कष्टमपि प्रकोपम् ॥

हर्र की गुठली की मींग ३ भाग, बहेड़े की गुठली की मींग २ भाग और आमले की गुठलीकी मींग १ भाग लेकर सब को पानी के साथ महीन पीसकर बत्तियां बनावें ।

इसे आंखों में आंजने से अत्यन्त प्रवृद्ध अश्रु-स्राव और कष्टसाध्य नेत्र प्रकोप (आंख दुखना) नष्ट होता है ।

(४२२४) **पलाशरसयोगः**

(वै. म. र. । पट. १६)

दिनावसाने रुधिरं पलाशा-
दादाय नेत्रे सहसैव दद्यात् ।
नक्तान्ध्यमाश्वेव विजित्य
जीवेच्चन्द्रातपे चाक्षरवाचकः स्यात् ॥

सन्ध्या समय पलाश (ढाक) का रस आंख में डालने से नक्तान्ध्य (रतौंधा) शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

इस प्रयोग से चन्द्रमा की चांदनी में पुस्तक पढ़नेकी शक्ति प्राप्त होती है ।

(४२२५) **पारदाद्यञ्जनम्**

(ग. नि. । नेत्ररो. ३)

सूतकं गन्धकोपेतं चाङ्गेरीरसमूर्च्छितम् ।
अञ्जनं दृष्टिदं नृणां सर्वनेत्रामये हितम् ॥

पारे गन्धककी कज्जली को चांगेरी (चूके) के रसमें घोटकर अञ्जन बनावें ।

इसे आंखमें आंजने से समस्त नेत्र रोग नष्ट होते और दृष्टि बढ़ती है ।

(४२२६) **पारिजातादियोगः**

(ग. नि. । नेत्ररो. ३)

वल्कलं पारिजातस्य तैलं काञ्जिकसैन्धवम् ।
कफजाताक्षिशूलघ्नं गिरिघ्नं कुलिशं यथा ॥

पारिभद्र (फरहद) की जड़ की छाल और सेंधा नमक का चूर्ण तथा तिल का तेल और कांजी समान-भाग लेकर सब को एकत्र घोट लें।

इसे आंख में आंजने से आंख की कफज पीड़ा नष्ट होती है।

(४२२७) पालङ्कयादिगुटिका

(वै. म. र. । पटल १६)

मूलं पालङ्कयायाः कृष्णाशङ्खौ च तुरगगन्धायाः
मूलं पृथक् पृथक् स्यान्निष्कं तुत्थं चतुर्निष्कम्॥
जम्बीरसारपिष्टा गुटिकेयं नेत्ररोगतिमिरहरी ॥

पालग (शाक विशेष) की जड़, पीपल, शंख और असगन्धकी जड़ १-१ भाग तथा नीला थोथा ४ भाग लेकर सबको महीन पीसकर जम्बीरी नीबूके रसमें घोटकर गोलियां बनावें।

इन्हें (पानीमें) घिसकर आंखमें लगानेसे तिमिर रोग नष्ट होता है।

(४२२८) पाशुपतयोगः

(वा. भ. । उत्त. अ. १६)

प्रपौण्डरीकं यष्ट्याह्वं दार्वीं चाष्टपलं पचेत् ।
जलद्रोणे रसे पूते पुनः पक्के घने क्षिपेत् ॥
पुष्पाञ्जनाद्दशपलं कर्षञ्च मरिचात्ततः ।
कृतश्चूर्णोऽथवा वर्तिः सर्वाभिष्यन्दसम्भवान् ॥
हन्ति रागरुजाघर्षान्सद्यो दृष्टिं प्रसादयेत् ।
अयं पाशुपतो योगो रहस्यं भिषजां परम् ॥

पुण्डरिया, मुलैठी और दारुहल्दी ४०-४० तोले लेकर कूटकर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर पुनः पकावें और जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें १० पल (५० तोले) पुष्पाञ्जन और १। तोला काली मिर्चका महीन चूर्ण मिलाकर उसकी गोलियां बना लें अथवा चूर्ण ही रहने दें।

इसे आंखमें आंजनेसे समस्त नेत्राभिष्यन्द, लालिमा और पीड़ा आदि नष्ट होकर नेत्र शीघ्र ही स्वच्छ हो जाते हैं । यह योग वैद्योंका एक रहस्य है।

(४२२९) पिण्डाञ्जनम्

(वा. भ. । उत्त. अ. १४)

जातीशिरीषधवमेषविषाणपुष्प-
वैडूर्यमौक्तिकफलं पयसा सुपिष्टम् ।
आजेन ताम्रममुना प्रतनु प्रदिग्धं,
सप्ताहतः पुनरिदं पयसैव पिष्टम् ॥
पिण्डाञ्जनं हितमनातपशुष्कमक्ष्णि,
विद्धे प्रसादजननं बलकृच्च दृष्टेः ॥

चमेलीके फूल, शिरीषपुष्प, धवके फूल, मेढासिंगीके फूल, वैडूर्य मणि और मोती समान भाग लेकर सबको बकरीके दूधमें पीसकर तांबेके बारीक पत्रों पर लेप कर दें। तदनन्तर एक सप्ताह पश्चात् उन पत्रोंसे औषधको छुड़ाकर पुनः बकरीके दूधमें घोटें और छाया में सुखाकर अञ्जन बना लें।

नेत्रोंमें बेधन कर्म करनेके पश्चात् (यथोचित कालमें) इसे आंजनेसे दृष्टि स्वच्छ और बलवती हो जाती है।

(४२३०) **पिण्डीतगराञ्जनम्**

(वं. से.; भा. प्र. । विष.)

पिण्डीतगरकं नेत्रे पुष्येणोत्पाट्य योजितम् ।
चालयत्यत्र नो चित्रं पुरुषं दष्टमृतं खलु ॥

पुष्य नक्षत्रमें पिण्डी तगरको उखाड़ लें । यदि कोई रोगी सर्प दंशसे मृतक समान भी हो गया हो तो उसकी आंखों में इसका अंजन लगानेसे वह सचेत हो जाता है ।

(४२३१) **पिप्पल्यादिगुटिका**

(यो. र.; वं. से.; यो. त.; वृ. नि. र.; वृ. मा. । ने. रो.)

पिप्पली त्रिफला लाक्षा लोध्रकं च[1] ससैन्धवम् ।
भृङ्गराजरसे पिष्टं गुटिकाञ्जनमिष्यते ॥
अर्म सतिमिरं काचं कण्डूं शुक्रमथार्जुनम् ।
अजकां नेत्ररोगांश्च हन्यान्निरवशेषतः ॥

पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, लाख, लोध और सेंधा नमकका समान भाग चूर्ण लेकर सबको भंगरेके रसमें घोटकर गोलियां बनावें ।

इसे आंखमें आंजनेसे अर्म, तिमिर, काच, कण्डु, शुक, अर्जुन और अजकाजात इत्यादि नेत्ररोग नष्ट होते हैं ।

(४२३२) **पिप्पल्याद्यञ्जनम्** (१)

(वं. से. । नेत्ररो.)

सङ्घृष्य पिप्पलीचूर्णं सफेनं कांस्यभाजने ।
सक्षौद्रं सैन्धवोपेतमञ्जनं शुक्रनाशनम् ॥

पीपल, समुद्रफेन और सेंधा नमकका महीन चूर्ण तथा शहद १-१ भाग लेकर सब को एकत्र मिलाकर कांसीके पात्र में (कांसीकी कटोरीसे) रगड़ें ।

इसे आंखमें आंजनेसे फूला नष्ट होता है ।

(४२३३) **पिप्पल्याद्यञ्जनम्** (२)

(च. द. । नेत्ररो.)

पिप्पलीं सतगरोत्पलपत्रां
वर्तयेत्समधुकां सहरिद्राम् ।
एतया सततमञ्जयितव्यं
यः सुपर्णसममिच्छति चक्षुः ॥

पीपल, तगर, कमलपत्र, मुलैठी और हल्दीका समानभाग मिश्रित महीन चूर्ण लेकर सबको पानीके साथ घोटकर बत्तियां बनालें ।

इन्हें नित्य प्रति आंखमें आंजने से दृष्टि गरुड़के समान तीक्ष्ण हो जाती है ।

(४२३४) **पिप्पल्याद्यञ्जनम्** (३)

(ग. नि. । नेत्ररो.)

वैदेहीश्वेतमरिचनागरं सैन्धवं समम् ।
मातुलुङ्गरसैः पिष्टमञ्जनं पिष्टकापहम् ॥

पीपल, सहंजनेके बीज, सोंठ और सेंधानमकका अत्यन्त महीन चूर्ण समान भाग लेकर सबको बिजौरेके रसमें घोटकर अञ्जन बनावें ।

इसे आंखमें आंजनेसे पिष्टक नामक नेत्ररोग नष्ट होता है ।

(४२३५) **पिप्पल्याद्यञ्जनम्** (४)

(ग. नि. । ज्वरा.)

पिप्पलीलशुनराजिकावचाः
पथ्यया सह जलेन चूर्णिताः ।

[1] लोहचूर्णमिति पाठान्तरम् ।

अञ्जनं च गुटिकादिकं स्फुटं
सर्वभूतजनितज्वरापहम् ॥

पीपल, ल्हसन, राई, बच और हर्रका समान-भाग—मिश्रित अत्यन्त महीन चूर्ण लेकर उसे पानीके साथ घोटकर गुटिका बना लें।

आंखमें इसका अञ्जन लगाने से भूत-जनित ज्वर नष्ट होता है।

(४२३६) पिप्पल्याद्यञ्जनम् (५)

(ग. नि. । ने रो.)

कणा करञ्जबीजानि त्रिफला च रसाञ्जनम् ।
रोध्रं स्वर्णफलं शुण्ठी काञ्जिकेनाति पेषयेत् ॥
छायाशुष्कस्य तस्याथ गुटिका वारिचूर्णिता ।
निशान्ध्यं हन्ति तिमिरं कण्डूं चाम्लकसंयुता ॥

पीपल, करञ्जबीज, हर्र, बहेड़ा, आमला, रसौत, लोध, निर्मलीके फल और सोंठ। सबके समान भाग मिश्रित अत्यन्त महीन चूर्णको काञ्जीके साथ अच्छी तरह घोटकर गुटिका बनाकर छायामें सुखा लें।

इसे लकुचके स्वरसमें या पानी में घिसकर आंखमें लगानेसे रतौंधा, तिमिर और नेत्रोंकी खुजली आदि रोग नष्ट होते हैं।

(४२३७) पुण्डरीकयोगः

(ग. नि. । नेत्ररो.)

एकं वा पुण्डरीकं च छागक्षीरावसेचितम् ।
रोगांश्च वेदनां हन्यात्क्षतपाकात्ययाजकान् ॥

केवल पुण्डरीक (श्वेतकमल) को बकरीके दूधमें भिगोकर पीसकर आंखमें लगानेसे नेत्रपीड़ा, नेत्रक्षत, पाकात्यय और अजकाजातादि नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

(४२३८) पुनर्नवायोगः

(ग. नि. । नेत्र.; शा. ध. । ख. ३ अ. १३; यो. र.; वृ. नि. र. । नेत्र.)

दुग्धेन कण्डूं क्षौद्रेण नेत्रस्रावं च सर्पिषा ।
पुष्पं तैलेन तिमिरं काञ्जिकेन निशान्धताम् ॥
पुनर्नवा जयेदाशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥

पुनर्नवा (साठी) को दूधमें घिसकर आंखोंमें लगानेसे नेत्रोंकी खुजली, शहदमें घिसकर लगानेसे नेत्रस्राव, घीके साथ लगानेसे फूला, तैलके साथ लगानेसे तिमिर और कांजी के साथ पीसकर लगानेसे रतौंधा नष्ट होता है।

(४२३९) पुष्पकासीसाद्यञ्जनम्

(ग. नि. । नेत्ररो. ३; वं. से. । नेत्ररो.; वा. भ. । उत्त. अ. १६)

पुष्पकासीसचूर्णं वा सुरसारसभावितम् ।
ताम्रे दशाहं तत्पैल्लपक्ष्मरोगजिदञ्जनात् ॥

पुष्पकसीस को तुलसीके रसकी भावना देकर दश दिन तक ताम्र पात्रमें पड़ा रहने दें और फिर पीसकर अञ्जन बना लें।

इसे आंखमें लगानेसे पिल्ल इत्यादि पक्ष्मरोग नष्ट होते हैं।

(४२४०) पुष्पहरीवर्तिः

(भा. प्र. । म. ख. ने. रो.)

पलाशपुष्पस्वरसैर्बहुशः परिभावितम् ।
करञ्जबीजं तद्वर्तिर्दृष्टेः पुष्पं विनाशयेत् ॥

करञ्जबीजोंको पलाश (ढाक) के फूलोंके स्वरसकी बहुतसी भावनाएं देकर बत्तियां बनावें।

इन्हें आंखों में लगानेसे नेत्रफूला नष्ट होता है।

(४२४१) पुष्पाक्षादिरसक्रिया

(यो. र. । नेत्ररो.)

पुष्पाक्षताक्ष्यजसितोदधिफेनशंख-
सिन्धूत्थगैरिकशिलामरिचैःसमांशैः ।
पिष्टैस्तुमाक्षिकरसेनरसक्रियेयं
हन्त्यर्मकाचतिमिरार्जुनवर्त्मरोगान् ॥

जसतका फूल, रसौत, मिसरी, समुद्रझाग, शंख, सेंधानमक, गेरू, मनसिल और कालीमिर्च का समान भाग मिश्रित अत्यंन्त महीन चूर्ण लेकर उसको शहदमें घोटें।

इसे आंखमें लगानेसे अर्म, काच, तिमिर, अर्जुन और वर्त्मरोग नष्ट होते हैं।

(४२४२) पोत्रीदन्तादिवर्तिः

(वै. म. र. । पट. १६)

पोत्रीकरभयोर्दन्तं हृदयास्थि च कुक्कुटात् ।
कौर्मं कपालं स्तन्येन पिष्टं समधु पुष्पहा ॥

सुवर और ऊंटका दांत, मुरगेके हृदयकी हड्डी और कछुवेकी खोपरीका समान भाग मिश्रित अत्यन्त महीन चूर्ण लेकर उसे स्त्रीके दूधमें पीसें। इसमें शहद मिलाकर आंखमें आंजनेसे नेत्रपुष्प (फूला) नष्ट होता है।

(४२४३) प्रकाशिकागुटिका

(ग. नि. । ने. रो. ३)

नदीजसिन्धूत्रिकटून्यथाञ्जनं
मनःशिलाले द्विनिशे गवां शकृत् ।
सचन्दनेयं गुटिका प्रकाशिका
प्रशस्यते रात्रिदिनेष्वपश्यताम् ॥

स्रोतोऽञ्जन, सेंधानमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुरमा, मनसिल, हरताल, हल्दी, दारुहल्दी, गायका गोबर (शुष्क) और लालचन्दन का समानभाग मिश्रित महीन चूर्ण लेकर उसे पानीके साथ घोटकर गुटिका बनावें।

यह गुटिका रतौंधा (नक्तान्ध्य) और दिवान्ध्यताको नष्ट करती है।

(४२४४) प्रचेतानामगुटिका

(यो. चि. म. । अ. ३)

त्र्यूषणं त्रिफला हिङ्गु सैन्धवं कटुका वचा ।
नक्तमालस्य बीजानि तथा च गौरसर्षपा ॥
मेषमूत्रेण पिष्टानि छाया शुष्कं विधापयेत् ।
भूतोन्मादेप्यचैतन्ये जननमेकाहिकादिषु ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हींग, सेंधानमक, कुटकी, बच, करञ्जबीज और सफेद सरसों के समान भाग मिश्रित चूर्णको भेड़के मूत्रमें पीसकर गुटिका बनाकर छायामें सुखा लें।

इन्हें आंखमें आंजनेसे भूतोन्माद तथा एकाहिकादि ज्वरकी बेहोशी नष्ट हो जाती है।

(४२४५) प्रचेतानामगुटिका

(यो. चि. म. । अ. ३)

राजिका मरिचं कृष्णा सैन्धवं भूतनाशनम् ।
नरमूत्रेण सम्पिष्य अञ्जनं ज्वरनाशनम् ॥

राई, कालीमिर्च, पीपल, सेंधानमक और सफेद सरसों को मनुष्य के मूत्रमें पीसकर गुटिका बनावें।

इसे आंखमें आंजने से ज्वर नष्ट होता है ।

(४२४६) प्रभावती गुटिका

(ग. नि. । नेत्ररोगा.)

मनःशिला देवकाष्ठं रजन्यौ त्रिफलोषणम् ।
लाक्षालशुनमञ्जिष्ठासैन्धवैलाः समाक्षिकाः ॥
रोध्रं शाबरजं चूर्णमायसं ताम्रमेव च ।
कालानुसारिवं चापि कुक्कुटाण्डदलान्यपि ॥
तुल्यानि पयसा पिष्टा गुटिकेयं प्रभावती ।
कण्डूतिमिरशुक्रार्मरक्तराजीजिदञ्जनात् ॥

मनसिल, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, कालीमिर्च, लाख, ल्हसन, मजीठ, सेंधानमक, इलायची, सोनामक्खी, पठानी लोध, लोहचूर्ण, ताम्रचूर्ण, तगर और मुरगीके अण्डेके छिलके । सबका समान भाग मिश्रित अत्यन्त महीन चूर्ण लेकर उसे दूधके साथ घोटकर गुटिका बनावें ।

इसे आंखमें लगानेसे आंखकी खाज, तिमिर, शुक्र, अर्म और लाल रेखाएं नष्ट होती हैं ।

(४२४७) प्रवालाद्यञ्जनम्

(वृ. मा.; वं. से. । नेत्र.)

प्रवालमुक्तावैडूर्यशङ्खस्फटिकचन्दनम् ।
सुवर्णं रजतं क्षौद्रमञ्जनं शुक्तिकापहम् ॥

मूंगा, मोती, वैडूर्यमणि, शंख, स्फटिकमणि, चन्दन, सोना और चांदी । सबके महीन चूर्णको शहदमें मिलाकर आंखमें आंजनेसे शुक्तिका का नाश होता है ।

(४२४८) प्रसादनाञ्जनम्

(शा. ध. । ख. ३ अ. १३)

कनकस्य फलं घृष्ट्वा मधुना नेत्रमञ्जयेत् ।
ईषत्कर्पूरसहितं स्मृतं नेत्रप्रसादनम् ॥

निर्मलीके फलको शहदमें घिसकर उसमें ज़रासा कपूर मिलाकर आंखमें आंजने से नेत्र स्वच्छ होते हैं ।

इति पकाराद्यञ्जनप्रकरणम् ।

अथ पकारादिनस्यप्रकरणम्

(४२४९) पलितनाशकनस्यम्

(र. र. । क्षुद्र.)

ओड्रकुसुमस्वरसो मधुतुल्यो नस्यतः पलितम् ।
योगशतैरप्यजितं मासाज्जयति नाश्चर्यम् ॥

गुडहरके फूलोंके स्वरसमें समान भाग शहद मिलाकर उस की नस्य लेने से १ मासमें, अन्य सैकड़ों औषधों से न आराम होने वाला पलितरोग भी अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(४२५०) **पिप्पल्यादिनस्यम्**

(वृ. मा.; भा. प्र.; वृ. नि. र. । नासा.)

पिप्पल्यः शिग्रुबीजानि विडङ्गं मरिचानि च ।
अवपीडः प्रशस्तोऽयं प्रतिश्यायनिवारणः ॥

पीपल, सहंजने के बीज, बायविडंग, और काली मिरच समान-भाग लेकर सब को पानी के साथ महीन पीस लें। इस लुगदीको वस्त्र में बांध कर निचोड़ने से जो रस निकले उस की नस्य लेने से प्रतिश्याय नष्ट होता है।

(४२५१) **पिप्पल्यादिनस्यम्**

(वृ. नि. र. । शिरो.)

पिप्पली सैन्धवं पाच्यं तैलेनाज्येन नस्यतः ।
शिरःशूलं निहन्त्याशु तमः सूर्योदयो यथा ॥

पीपल और सेंधा नमक के चूर्णको घी या तेल में पकाकर उस की नस्य लेने से शिरशूल इस प्रकार नष्ट हो जाता है जिस प्रकार सूर्योदय से अन्धकार।

(४२५२) **पिप्पल्यादिप्रधमननस्यम्**

(ग. नि. । उन्मा. २)

पिप्पल्यो मरिचं बीजमपामार्गशिरीषयोः ।
भवको हिङ्गुवच्ये तच्चूर्णं प्रधमनं भवेत् ॥
अवपीडश्च तैरेव बस्तमूत्रद्रवीकृतः ।
हन्त्युन्मादमपस्मारं वैचित्त्यं विषमज्वरम् ॥

पीपल, काली मिर्च, अपामार्ग, (चिरचिटे) के तुष रहित स्वच्छ बीज, सिरसके बीज, नकछिकनी, हींग और वच के समान-भाग-मिश्रित चूर्ण को सुंघाने से अथवा उस चूर्ण को बकरे के मूत्र में पीसकर लुगदी सी बनाकर उसे कपड़े में निचोड़कर निकाले हुवे रसकी नस्य देनेसे उन्माद, अपस्मार; चित्तविकृति और विषमज्वर का नाश होता है।

(४२५३) **पिप्पल्याद्यं नस्यम्**

(ग. नि. । शिरो.)

पिप्पलीमरिचद्राक्षामधुयष्टिकनागरैः ।
पक्वं गोनवनीतेन नस्यं हन्ति शिरोरुजम् ॥

पीपल, काली मिरच, मुनक्का, मुलैठी और सोंठ के समान-भाग-मिश्रित चूर्णको गायके नवनीत (मक्खन) में पकाकर उस की नस्य लेने से शिर पीड़ा नष्ट होती है।

(४२५४) **पुण्ड्रेक्ष्वादि नस्यम्**

(वै. म. र. । पट. १६)

पुण्ड्रेक्षुकाण्डरेणुस्तु सस्तन्यस्तुल्यं शर्करः ।
न्यस्तो घ्राणमुखे सद्यः सर्वोन्मादविनाशनः ॥

पुण्डरिया और ईखका काण्ड (तना), रेणुका और खांड के चूर्ण को स्त्रीके दूध में मिलाकर रोगी की नाक में डालने से उन्माद रोग नष्ट होता है।

(४२५५) **पूतिकरञ्जाद्योऽवपीडः**

(ग. नि. । क्रि. रो. ६)

फलं पूतिकरञ्जानां पिप्पल्यो मरिचानि च ।
अवपीडं क्रिमिहरं कुर्याच्छीर्षविरेचनम् ॥
एतैरेवाक्षमात्रैस्तु घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
त्रिगुणे तु गवां मूत्रे तन्नस्यं क्रिमिसूदनम् ॥

कण्टककरञ्ज के फल, पीपल और काली

मिरच को पानी में पीसकर लुगदीसी बनावें और फिर उसे कपड़े में डालकर निचोड़कर रस निकालें।

इसकी नस्य देने से शिरोविरेचन होकर कृमि नष्ट हो जाते हैं।

उपरोक्त ओषधियां १।-१। तोला लेकर पानी के साथ पीसकर कल्क बनावें फिर २ सेर घी में यह कल्क और ६ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इस घी की नस्य लेने से भी कृमि नष्ट हो जाते हैं।

(४२५६) प्रियङ्ग्वादिनस्यम्

(यो. र. । र. पि. चि.)

प्रियङ्गुमृत्तिकालोध्रमञ्जनं चेति चूर्णयेत् ।
तच्चूर्णं योजयेत्तत्र नस्ये क्षौद्रसमन्वितम् ॥
नासिकामुखपायुभ्यो योनिमेढ्राच्च वेगितम् ।
रक्तपित्तस्रवं हन्ति सिद्ध एष प्रयोगराट् ॥

फूलप्रियङ्गु, काली मिट्टी, लोध और सुरमा समान भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें।

यदि नाक, मुंह, गुदा, योनि और लिंग से रक्त आता हो तो इसे शहद में मिलाकर इसकी नस्य लेनी चाहिये।

यह एक सिद्ध प्रयोग है।

(४२५७) पलाण्ड्वादिनस्यम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १०)

पलाण्डुपत्रनिर्यासं नस्यं नासास्रजापहम् ।
यष्टीमधुमधुयुतं चापि नस्यं पित्तास्रजं जयेत् ॥

पलाण्डु (प्याज़) के पत्तों के स्वरस की अथवा मधुमिश्रित मुलैठी के चूर्ण की नस्य लेने से नाक से होने वाला रक्तस्राव (नकसीर) बन्द हो जाता है।

इति पकारादिनस्यप्रकरणम् ।



अथ पकारादिकल्पप्रकरणम्

(४२५८) पिप्पलीकल्पः

(ग. नि. । ओषधिकल्पा.)

पञ्चाष्टौ सप्त दश वा पिप्पलीर्मधुसर्पिषा ।
रसायनगुणान्वेषी समामेकां प्रयोजयेत् ॥
तिस्रस्तिस्रस्तु पूर्वाह्णे भुक्त्वाऽग्रे भोजनस्य च ।
पिप्पल्यः किंशुकक्षारभाविता घृतभर्जिताः ॥
प्रयोज्या मधुसम्मिश्रा रसायनगुणैषिणा ।
दशवृद्ध्या दशाहानि दशपैप्पलिकं हितम् ॥
वर्धयेत्पयसा सार्द्धं तथैवापनयेत्पुनः ।
जीर्णौषधस्तु भुञ्जीत षष्टिकं क्षीरसर्पिषा ॥
पिप्पलीनां प्रयोगोऽयं सहस्रस्य रसायनम् ।
पिष्टास्ता बलिभिः पेयाः शृता मध्यबलैर्नरैः ॥

शीतीकृताः क्षीणबलैर्वीक्ष्य दोषान् प्रयोजयेत् ।
तद्वद्वै छागदुग्धेन द्वे सहस्रे प्रयोजयेत् ॥
एभिः प्रयोगैः पिप्पल्यः कासश्वासगलग्रहान् ।
यक्ष्ममेहग्रहण्यर्शः पाण्डुत्वविषमज्वरान् ॥
घ्नन्ति शोफं वमिं हिध्मां प्लीहानं वातशोणितम् ॥

नित्य प्रति ५, ८, ७ या १० पीपल शहद और घी के साथ सेवन करें । यह प्रयोग रसायन (जराव्याधि-नाशक) है ।

पीपलों को पलाशके क्षारके पानी की भावना देकर घीमें भून लें । इनमें से ३-३ पीपल शहद के साथ प्रातःकाल, भोजन के पहिले और भोजन के पश्चात् सेवन करें ।

यह प्रयोग भी रसायन है ।

पहिले दिन १० पीपल दूध के साथ सेवन करें और दूसरे दिन इसी प्रकार २० पीपल सेवन करें । इसी प्रकार रोज़ाना १०-१० पीपल बढ़ाते हुवे दस दिन तक सेवन करें । ११ वें दिन से रोज़ाना १०-१० घटाकर सेवन करें । औषध पचने पर साठी चावलों का भात घी दूध के साथ खाना चाहिये ।

यह १००० पीपल का रसायन प्रयोग है ।

बलवान व्यक्ति को यह प्रयोग कराना हो तो पिप्पलों को पीसकर खिलाना चाहिये । मध्यम बलवाले को दूध में पकाकर और क्षीणबल वालेको पिप्पलीका शीत कषाय बनाकर सेवन कराना चाहिये ।

उपरोक्त १००० पिप्पली वाले प्रयोग के समान ही बकरी के दूध के साथ २००० पीपल भी सेवन कराई जाती हैं । (इस प्रयोग में रोज़ाना २०-२० पीपल बढ़ाकर सेवन करनी चाहियें ।)

पीपल के उपरोक्त समस्त प्रयोग खांसी, श्वास, गलग्रह, राजयक्ष्मा, प्रमेह, ग्रहणी, अर्श, पाण्डु, विषमज्वर, शोथ, वमन, हिचकी, प्लीहा और वातरक्त को नष्ट करते हैं ।

इति पकारादिकल्पप्रकरणम् ।

अथ पकारादिरसप्रकरणम्

(४२५९) **पञ्चनिम्बादिचूर्णम्** (१)

(वृ. यो. त. । त. १२०; वृ. नि. र. । त्वग्दोष.; यो. र.; ग. नि.; वं. से.; वै. र. । कुष्ठ.; शा. ध. चूर्णाधि.)

पिचुमन्दफलं पुष्पं त्वक्पत्रं मूलमेव च ।
पञ्चैतानि सुसूक्ष्माणि समचूर्णानि कारयेत् ॥
अष्टभागावशेषेण खदिरासनवारिणा ।
भावयित्वा तु संयोज्य द्रव्याण्येतानि दापयेत् ॥
चित्रकोऽथ विडङ्गानि व्याधिघातकशर्करान् ।
भल्लातकहरीतक्यौ शुण्ठ्यामलकगोक्षुरान् ॥
चक्रमर्दकबाकूच्यौ पिप्पलीं मरिचं निशाम् ।
लोहचूर्णसमायुक्तं समभागं प्रमाणतः ॥

भावयेद्भृङ्गराजेन पुनः शुष्काणि कारयेत् ।
निम्बार्द्धचूर्णमेतेषामेकीकृत्य निधापयेत् ॥
विडालपदमात्रन्तु सर्पिषा पयसापि वा ।
प्रातः प्रातर्निषेवेत खदिरासनवारिणा ॥
परिहारो न चात्रास्ति पञ्चनिम्बेऽवतिष्ठति ।
मासमात्रप्रयोगेण कुष्ठं हन्ति रसायनम् ॥
त्वग्दोषं नीलिकाव्यङ्गं तथैव तिलकालकान् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं सप्त चैव महाक्षयान् ॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुखी ॥

नीमका पञ्चाङ्ग (फल, पुष्प, छाल, पत्र और मूल) समान-भाग लेकर सब का कपड़छन चूर्ण करके उसे खैरसार और असन की छाल के अष्टावशेष (चौगुने पानी में पकाकर आठवां भाग शेष रहे हुवे) काढ़ेकी १-१ भावना दें तत्पश्चात् उस में निम्न लिखित चूर्ण मिलावें ।

चीता, बायबिडंग, अमलतास, खांड, शुद्ध भिलावा, हर्र, सोंठ, आमला, गोखरु, पंवाड़के बीज, बावची, पीपल, काली मिर्च, हल्दी और लोह भस्म। प्रत्येक का समान-भाग चूर्ण लेकर सब को एकत्र मिलाकर उसे भंगरे के स्वरस की एक भावना देकर सुखा लें ।

अब यह चूर्ण २ भाग तथा उपरोक्त पञ्चनिम्ब चूर्ण १ भाग लेकर दोनों को अच्छी तरह मिला लें ।

इसमें से नित्य प्रति प्रातःकाल १। तोला चूर्ण घी या दूध अथवा खैर और असन की छाल के क्वाथ के साथ १ मास तक सेवन करने से अठारह प्रकार के कुष्ठ, त्वग्दोष, नीलिका, व्यङ्ग, तिल, कालक और सात प्रकारका क्षय रोग नष्ट होता है।

यह चूर्ण रसायन (जराव्याधिनाशक) है ।

नोट—कुछ ग्रन्थोंमें पञ्चनिम्ब चूर्णके समान भाग चित्रकादि का चूर्ण मिलाने और उस के पश्चात् खैरसार, असन और भंगरेके रसकी भावना देनेको लिखा है; अकेले पञ्चनिम्ब चूर्ण को भावना देना नहीं लिखा ।

(४२६०) पञ्चनिम्बादिचूर्णम्[२] (२)

(भै. र.; वृं. मा.; च. द.; भा. प्र.; ग. नि. । कुष्ठा.)

पुष्पकाले च पुष्पाणि फलकाले फलानि च ।
सञ्चूर्ण्य पिचुमन्दस्य त्वङ्मूलानि दलानि च ॥
द्विरंशानि समाहृत्य भागिकानि प्रकल्पयेत् ।
त्रिफला त्र्यूषणं ब्राह्मी श्वदंष्ट्रारुष्कराग्निकाः ॥
विडङ्गसारो वाराही लोहचूर्णो स्मृताः समाः ।
हरिद्राद्वयावल्गुजव्याधिघाताः सशर्कराः ॥
कुष्ठेन्द्रयवपाठाश्च कृत्वा चूर्णं सुसंयुतम् ।
खदिरासननिम्बानां घनक्वाथेन भावयेत् ॥
सप्तधा पञ्चनिम्बश्च मार्कवस्वरसेन च ।
स्निग्धशुद्धतनुर्धीमान् योजयेच्च शुभे दिने ॥
मधुना तिक्तहविषा खदिरासनवारिणा ।
सेव्यमुष्णाम्बुना वापि कोलवृद्ध्या पलं पिबेत् ॥
जीर्णे च भोजनं कार्यं स्निग्धं लघुहितञ्च यत्
विचर्चिकोदुम्बरपुण्डरीक-
कापालदद्रुकिटिभालसादि ।
शतारुविस्फोटविसर्पपामाः
कफप्रकोपं विविधं किलासम् ॥
भगन्दरं श्लीपदवातरक्तं
जडान्ध्यनाडीव्रणशीर्षरोगान् ।

[२] भा. प्र. में इसका नाम 'पञ्चनिम्बावलेह' और च. द. में कुष्ठहरचूर्ण लिखा है ।

सर्वप्रमेहान् प्रदरांश्च सर्वान्
दंष्ट्राविषं मूलविषं निहन्ति ॥
स्थूलोदरः सिंहकृशोदरश्च
सुश्लिष्टसन्धिर्मधुनोपयोगात् ।
समोपयोगादपि ये दशन्ति
सर्पादयो यान्ति विनाशमाशु ॥
जीवेच्चिरं व्याधिजराविमुक्तः
शुभेरतश्चन्द्रसमानकान्तिः ॥

पुष्प कालमें नीमके पुष्प और फल कालमें फल तथा छाल, मूल और पत्र २-२ पल तथा हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, ब्राह्मी, गोखरु, शुद्ध भिलावा, चीता, वायविड़ंगकी गिरी, बराहीकन्द, लोहभस्म, हल्दी, दारुहल्दी, बाबची, अमलतास, खांड, कूठ, इन्द्रजौ और पाठा प्रत्येक १-१ पल । सबका चूर्ण करके उसे खैरसार, असन और नीमके गाढ़े (अष्टभागावशिष्ट) क्वाथ तथा भंगरेके स्वरसकी ७-७ भावना देकर सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

पञ्चकर्म द्वारा देह शुद्धि करनेके पश्चात् इसे शहदके साथ अथवा तिक्तघृत या खैर और असन के क्वाथके साथ या केवल गरम पानीके साथ ७॥ माशेकी मात्रा से सेवन करना आरम्भ करें और धीरे धीरे बढ़ाकर १ पल (५ तोले) की मात्रा तक पहुंच जाएं ।

औषधके पच जाने पर स्निग्ध लघु और पथ्य भोजन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे विचर्चिका, उदम्बर, पुण्डरीक, कपालकुष्ठ, दद्रु, किटिभ, अलस, शतारु, विस्फोट, विसर्प, पामा, कफप्रकोप, किलास, भगन्दर, श्लीपद, वातरक्त, जड़ता, अन्धत्व, नाड़ीव्रण, शिरोरोग, सर्व प्रकारके प्रमेह और प्रदर, दंष्ट्राविष, मूलविष और मेदरोग नष्ट होता है । शहदके साथ सेवन करनेसे सन्धियां मज़बूत होती हैं ।

इसे अधिक समय तक सेवन करने वाले मनुष्यको यदि सर्पादि काट खाय तो वह (सर्पादि) स्वयं ही मर जाता है और उस मनुष्य पर उसके विषका कोई प्रभाव नहीं होता ।

इसके अधिक समय तक सेवन करनेसे मनुष्य जराव्याधि-रहित दीर्घायु प्राप्त करता है ।

पञ्चनिम्बावलेहः

(भा. प्र. । कुष्ठा.)

पञ्चनिम्बचूर्णम् (सं. ४२६०) देखिये ।

(४२६१) पञ्चबाणो रसः

(वृ. यो. त. । त. १४७; यो. र.[१] । वाजीकर.)

रसाभ्रनागायसगन्धवङ्गं
कापर्दिकं तत्समभागयोजितम् ।
रसेन हेम द्विगुणं विमिश्रितं
क्षीरेण भाव्यं च गवां त्रिवारम् ॥
एकाधिकाविंशजयारसस्य ततश्च
दद्यात्कनकस्य सप्त ।
लवङ्गजातीफलकुङ्कुमं तथा
कङ्कोलकाफलगजेन्द्रकाश्च ।

१—योगरत्नाकरमें गन्धकके स्थानमें शंख, और स्वर्ण पारदसे आधा लिखा है तथा भावना द्रव्यों में भांगके स्थानमें पोस्त लिखा है एवं मुलैठी, अर्क और त्रिफलेकी ७-७ भावनाएं अधिक लिखी हैं और केसर, गजपीपल तथा पीपलकी भावनाओंका अभाव है ।

कृष्णाहरेश्चन्दनतोयभाव्याः
प्रत्येकमेकस्य च सप्त सप्त ।
दर्पेण चैकां च ददीत भावनां
सिद्धो रसः स्यादिति पञ्चबाणः ॥
वीर्यस्य वृद्धिं च करोति पुंस्त्वं
नष्टेन्द्रियाणां हि सुखावहश्च ।
येषां गृहे चागणिता रमण्य-
स्तेनैव कार्यो रसराज एषः ॥
कान्ताप्रियत्वं बहुशुक्रतां
च शेफाभिवृद्धिं दृढतामुपैति ॥

शुद्ध पारा, अभ्रक भस्म, सीसा भस्म, लोह भस्म, शुद्ध गन्धक, बंग भस्म और कौड़ी भस्म १-१ भाग तथा स्वर्ण भस्म २ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें । तत्पश्चात् उसमें अन्य औषधें मिलाकर उसे ३ भावना गायके दूधकी, २१ भांगके रसकी, ७ धतूरेके रसकी तथा ७-७ भावना लौंग, जायफल, केसर, कंकोल, अकरकरा, गजपीपल, पीपल और सफेद चन्दनके काथकी एवं १ भावना कस्तूरीकी देकर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे वीर्यवृद्धि होती और पुरुषत्व बढ़ता है । यह इन्द्रियोंकी क्षीणताको नष्ट करता तथा लिङ्गको प्रवृद्ध और दृढ़ करके अनेकों स्त्रियों से रमण करनेकी शक्ति देता है ।

(मात्रा २-३ रत्ती ।)

(४२६२) पञ्चलोहमारणम्

(आ. वे. प्र. । अ. १२)

कांस्यं रीतिस्तथा ताम्रं नागो वङ्गश्च पञ्चमः ।
एकत्र द्रावितैरेतैः पञ्चलोहं प्रजायते ॥
पञ्चलोहं पञ्चरसं वर्तुलं भर्तमित्यपि ।
व्यञ्जनं सूपमन्यच्च तद्भाण्डे साधितं शुभम् ॥
आदौ तैलादिके शोध्यं पश्चात्तप्त्वाऽजमूत्रके ।
निषिक्तं शुद्धिमायाति पञ्चलोहं न संशयः ॥
अर्कक्षीरेण सम्पिष्टगन्धतालकलेपनात् ।
पञ्चकुम्भिपुटैर्भर्तं म्रियते योगवाहकम् ॥

कांसी, पीपल, ताम्र, सीसा और बंगको एकत्र पिघलाने से जो धातु तैयार होता है उसे पञ्चलोह, पञ्चरस, वर्तुल, भर्त, व्यञ्जन और सूप कहते हैं ।

प्रथम इसे पिघला पिघला कर तैलादि (तैल, तक्र, गोमूत्र, कांजी और कुलथी के क्वाथ) में पृथक् पृथक् सात सात बार बुझावें । फिर बकरे के मूत्रमें सात बुझाव दें । इस प्रकार भर्त धातु शुद्ध हो जाती है ।

समान भाग मिश्रित गन्धक और हरतालको आकके दूधमें घोटकर भर्त पर लेप करके उसे गज पुटमें फूंकने से ५ पुटमें भस्म हो जाती है ।

यह भस्म योगवाही है ।

(४२६३) पञ्चलोहरसायनम्

(यो. र.; वृ. नि. र. । प्रमेहा.)

मृताभ्रकान्तलोहानां नागवङ्गौ विशोधितौ ।
यथोत्तरं भागवृद्ध्या खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥
तलपोटेन वाराह्या शतावर्या हिमाम्बुना ।
भावनाऽत्र प्रकर्तव्या यामं यामं पृथक् पृथक् ॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा नवनीतेन सेवयेत् ।
प्रातरुत्थाय विधिना सर्वमेहकुलान्तकः ॥

शाल्यन्नं सपटोलं च तण्डुलीयकवास्तुकम् ।
मत्स्याक्षीमुद्गयूषं च अपक्वकदलीफलम् ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं मूत्रकृच्छ्राश्मरीमणुत् ।
कामलापाण्डुशोफांश्च अपस्मारक्षतक्षयान् ॥
रक्तकासविनाशे स्यात्पञ्चलोहरसायनम् ॥

अभ्रक भस्म १ भाग, कान्तलोह भस्म २ भाग, सीसाभस्म ३ भाग और बंगभस्म ४ भाग लेकर सबको १-१ पहर ताड़, नल, बाराहीकन्द, शतावर और लालचन्दन में से जिनका स्वरस मिल सके उनके स्वरसमें और बाकी के काथमें पृथक् पृथक् घोटकर चने बराबर गोलियां बनावें।

इन्हें नित्य प्रति प्रातःकाल नवनीत (नौनीघी) के साथ सेवन करने से समस्त प्रकार के प्रमेह, अर्श, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, कामला, पाण्डु, शोथ, अपस्मार, क्षत, क्षय और रक्तवाली खांसी नष्ट होती है ।

पथ्य—शाली चावल, पटोल, चौलाई, बथुवा, मछेछी, मूंगका यूष और कच्चा केला ।

(४२६४) पञ्चवक्त्ररसः (१)
(र. का. धे. । ज्वर.)

शुद्धं सूतं समं गन्धं गन्धपादं च टङ्कणम् ।
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्यालोडयेद्द्रवैः ॥
तिलपर्णी तथा जाती पिप्पलीमूलपत्रकम् ।
द्रवैरेषां च सप्ताहं शोष्यं पेष्यं पुनः पुनः ॥
ताम्रपात्रात्समुद्धृत्य कृत्वा गोलं विशोषयेत् ।
पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्विगुञ्जः सन्निपातजित् ॥
अर्कमूलकषायं च सत्र्यूषमनुपाययेत् ।
सक्षीरं दापयेत्पथ्यं जलयोगं च कारयेत् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक ४-४ तोले तथा सुहागेकी खील १ तोला लेकर सबको तांबे के खरलमें डालकर घोटें । जब कज्जली हो जाय तो उसे जयन्ती, हुलहुल, चमेली, पीपलामूल और तेजपातमें से जिनके स्वरस मिल सकें उनके स्वरसमें और बाकी चीज़ोंके काथ में पृथक् पृथक् ७-७ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १ गोली खाकर ऊपरसे आककी जड़के काथमें त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर पीनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है ।

यदि इसके सेवनसे गर्मी अधिक हो तो शीतल जल की धारा शिरपर, या नाभिपर कांसीका कटोरा रखकर उसमें छोड़नी चाहिये ।

इसके ऊपर दूध युक्त आहार देना चाहिये ।

(४२६५) पञ्चवक्त्ररसः (२)(मृत्युञ्जयो रसः[1])
(र. र. स. । अ. १२; र. रा. सु.; वृ. नि. र. । ज्वरा.; र. प्र. सु. । अ. ८; र. चि.; र. च.; वृ. यो. त.; भा. प्र.; वै. र.; भै. र.; र. र. स.; शा. ध.; र. सा. स.; यो. र. । ज्वर.)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं मरीचं टङ्कणं कणाम् ।
मर्दयेद्धूर्तजद्रावैर्दिनमेकं च शोषयेत् ॥

र. सा. सं; भै. र.; र. रा. सुं.; र. चं; यो. र. इन ग्रन्थों में इसे 'मृत्युञ्जय' नामसे लिखा है और इसके अनुपानोंका इस प्रकार वर्णन किया है—

दध्योदकानुपानेन वातज्वरनिबर्हणः ।
आर्द्रकस्य रसैः पानं दारुणे सान्निपातिके ॥
जम्बीरद्रवयोगेन अजीर्णज्वरनाशनः ।
अजाजीगुडसंयुक्ता विषमज्वरनाशिनी ॥

पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्विगुञ्जः सन्निपातजित् ।
अर्कमूलकषायं तु त्र्यूषणं चानुपाययेत् ॥
युक्तं दध्योदनं पथ्यं जलयोगं च कारयेत् ।
रसेनानेन शाम्यन्ति सक्षौद्रेण कफादयः ॥
मधु त्वर्करसं चानु पिबेदग्निविवृद्धये ।
यथेष्टं घृतमत्त्याशु दीप्तो भवति पावकः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध विष (मीठातेलिया), शुद्ध गन्धक, काली मिर्च, सुहागेकी खील, और पीपल। सब चीज़ें समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियों का महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन धतूरेके रसमें घोटकर सुखालें। (१-१ रत्ती की गोलियां बनाकर छायामें सुखालें।)

इसे शहदके साथ खिलाकर ऊपरसे आककी जड़की छालके काथ में त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पिप्पल) का चूर्ण मिलाकर पीनेसे सन्निपात तथा कफादि नष्ट होते हैं।

अग्निकी वृद्धिके लिये इसे अर्कमूलके रस (या काथ) और शहद के साथ खाना चाहिये। तथा आहारके साथ यथेष्ट घृत खाना चाहिये।

पथ्य—दही भात। यदि अधिक सन्ताप हो तो मस्तक पर शीतल पानी डालना चाहिये।

तीव्रज्वरे महाघोरे पुरुषे यौवनान्विते ।
पूर्णमात्रा प्रदातव्या पूर्णं वटीचतुष्टयम् ॥
स्त्रीबालवृद्धक्षीणेषु अर्द्धमात्रा प्रकीर्त्तिता ।
अतिवृद्धे च क्षीणे च शिशौ चाल्पवयस्यपि ॥
तूर्यमात्रा प्रदातव्या व्यवस्था सारनिश्चिता ।
नवज्वरं महाघोरं यामैकान्नाशयेद्ध्रुवम् ॥
मध्यज्वरं तथा जीर्णं त्रिरात्रान्नाशयेद्ध्रुवम् ।
सप्ताहात्सन्निपातोत्थं ज्वराजीर्णकसंज्ञकम् ॥

वातज्वर में दहीके पानीके साथ, घोर सन्निपात में अद्रक के रसके साथ, अजीर्ण ज्वर में जम्बीरीके रसके साथ तथा विषमज्वर में जीरे के चूर्ण और गुड़ के साथ देना चाहिये।

महाघोर तीव्र ज्वर में पूर्ण युवा पुरुष को इस की ४ गोली, स्त्री बालक वृद्ध और क्षीण पुरुष को २ गोली और अत्यन्त वृद्ध, अत्यन्त क्षीण तथा छोटे बालक को १ गोली देनी चाहिये।

यह रस भयङ्कर नवीन ज्वर को १ प्रहर में, मध्य ज्वर और अजीर्ण ज्वर को तीन दिन में और सन्निपात ज्वर को सात दिन में नष्ट कर देता है।

पञ्चवक्त्ररसः (३)

(र. सा. सं.; र. रा. सु.; र. का. धे. । ज्वर.)

प्र. सं. ४२६५ में और इसमें केवल इतना ही अन्तर है कि इसमें विषके स्थानमें सीसा भस्म पड़ती है। गुण, अनुपानादि लगभग समान ही हैं।

पञ्चवक्त्ररसः (४)

(र. चि. । अ. ९; वृ. नि. र.; भै. र.; भा. प्र. । सन्निपात.; वृ. यो. त. । त. ५९)

यह भी प्र. सं. ४२६५ के समान ही है। केवल इतना ही अन्तर है कि इसमें पीपल नहीं पड़ती।

(४२६६) पञ्चशरोरसः

(भै. र.; र. रा. सु. । वाजीकरण.)

रसेन सह शाल्मलिजेन सूतं
त्रिसप्तवाराणि बलिं विमर्द्य ।

पृथक् तयोः कज्जलिकां विपक्कां
घृते रसः पञ्चशरोऽयमुक्तः ॥
वल्लोऽहिवल्लीदलसम्प्रयुक्तो
वीर्यातिवृद्धिं कुरुतेऽस्य नूनम् ॥

सेंभलके रसमें शुद्ध पारेको तथा शुद्ध गन्धक को पृथक् पृथक् सात सात बार घोटकर दोनोंकी कज्जली बनावें और फिर एक कड़ाहीमें ज़रासा घी डालकर उसमें उस कज्जली को मन्दाग्नि पर भूनें। (घीमें भूनकर पर्पटी बना लेनी चाहिये।)

इसमें से ३ रत्ती दवा पानमें रखकर खानेसे वीर्यकी अत्यन्त वृद्धि होती है।

इसपर भैंसका कढ़ा हुवा दूध पीना और गुरु (पौष्टिक) आहार करना चाहिये।

(४२६७) **पञ्चसायकः**

(वृ. यो. त. । त. १४७)

सूतं भस्मीकृतं शुद्धं गगनं दरदं तथा।
अब्धिशोषं नागफेनं जातीपत्रीफलं तथा ॥
करहाटांस्तथा गोधावानरीकोकिलाक्षकान्।
एतानि समभागानि खल्वे चूर्णीकृतानि वै ॥
विजयाशाल्मलीमूलैरसितस्वर्णबीजकैः।
शताह्वापोस्तमधुकनागवल्लीदलद्रवैः ॥
भागांशकर्पूरयुतो रसोऽयं पञ्चसायकः।
मात्रावल्लद्वयं चास्य मधुत्रितयसंयुतः ॥
पथ्यं क्षीरं यथासात्म्यं गच्छेच्च प्रमदाशतम्।
निशामुखे रसो ग्राह्योऽम्लवर्गं च वर्जयेत् ॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध हिंगुल, समन्दर सोख, शुद्ध अफीम, जावत्री, जायफल, अकरकरा, वटपत्री (पाषाण भेदकी एक जाति), कौंचके बीज और तालमखाना । सबका समान भाग महीन चूर्ण एकत्र मिलाकर उसे भांग, सेंभलकी मूसली, काले धतूरेके बीज, सौंफ, पोस्त, मुलैठी और पानमें से जिनके स्वरस मिल सकें उनके स्वरसकी और शेषके क्वाथकी पृथक् पृथक् १-१ भावना देकर उसमें चौथाई भाग (पारद भस्मसे चौथाई) कपूर मिलाकर घोटकर रक्खें।

मात्रा—६ रत्ती। **अनुपान**—शहद और त्रिफलेका क्वाथ।

पथ्य—दूध इत्यादि सात्म्य पदार्थ।

इसे सायंकालके समय खाना चाहिये। इसके सेवनसे अनेक स्त्रियों से रमण करनेकी शक्ति प्राप्त होती है।

परहेज़—अम्ल पदार्थ।

(४२६८) **पञ्चसारो रसः** (पञ्चाननः)[1]

(र. चं.; र. र. । हृद्रो.; र. चि. म. । अ. ९; र. सा. सं.; र. रा. सु.; र. का. धे.; भै. र. । हृद्रोग.)

शुद्धं सूतं समं गन्धं धात्रीफलद्रवैर्दिनम्।
यष्टीखर्जूरद्राक्षाणां क्वाथेन मर्दयेद् दिनम् ॥
पञ्चसाररसो नाम भक्षयेन्माषमात्रकम्।
धात्रीचूर्णं सितां चानु पित्तहृद्रोगजिद्भवेत् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर दोनोंकी कज्जली करके उसे १-१ दिन आमलेके रस और मुलैठी, खजूर तथा मुनक्काके क्वाथमें पृथक् पृथक् घोटकर सुरक्षित रक्खें।

[1] र. चि. म.; र. सा. सं., र. रा. सु.; र. का. धे.; भै. र. में इसे "पञ्चानन" नाम दिया गया है।

इसमें से प्रति दिन १ माशा चूर्ण खाकर ऊपरसे आमले और मिश्रीका चूर्ण (दूधके साथ) खानेसे पित्तज हृद्रोग नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती।)

(४२६९) पञ्चात्मको रसः

(र. सा. सं। शूला.; र. रा. सुं। शूला.)

मृतसूताभ्रकं चाम्लवेतसं ताम्रगन्धकम्।
विषं फलत्रयाच्चूर्णं तुल्यं मर्द्यं दिनावधि॥
जयन्ती मुण्डिरी वासा बृहती च गुडूचिका।
महाराष्ट्री जम्बु रसैस्तथा नीलोत्पलस्य च॥
प्रतिद्रावैर्दिनं भाव्यं ततः संशोष्य यत्नतः।
अर्द्धांशं पञ्चलवणं दत्त्वार्द्रकरसेन च॥
दिनं पेष्यं ततः कुर्याद्वटिकां चणसन्निभाम्।
प्रातर्मध्याह्ने रात्रौ च भक्षयेद्वटिका त्रयम्॥
माषेक्षुपिष्टगुर्वन्नं गोपयश्च हितं तथा।
सेवेत वातशूलार्तश्चायं पञ्चात्मकः स्मृतः॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, अमलबेत, ताम्र भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग तथा हर्र, बहेड़ा और आमले का चूर्ण समान-भाग लेकर सब को एकत्र मिलाकर एक दिन खरल करें। फिर उसे जयन्ती, गोरखमुण्डी, बासा, कटेली, गिलोय, जलपीपल, जामनकी छाल और नीलोत्पलमें से जिन के स्वरस मिल सकें उन के स्वरस के और शेष चीज़ों के क्वाथ के साथ १–१ दिन घोटकर छाया में सुखावें। तत्पश्चात् उसमें उससे आधा पञ्चलवण का चूर्ण मिलाकर १ दिन अद्रक के रस में घोटकर चनेके समान गोलियां बना लें।

इनमें से ३–३ गोली प्रातः, दोपहर और सायंकालके समय खानेसे वातज शूल नष्ट होता है।

पथ्य—उर्द, ईख, पिट्ठीके पदार्थ, भारी अन्न और गाय का दूध।

(४२७०) पञ्चाननवटी (१)

(वृ. यो. त.। त. ९३)

प्रत्येकं पिचुरंशजं च तपनीयप्रभूर्णं सैन्धवम्।
तुत्थं तीक्ष्णहलाहलावथ पले वैश्वानरश्रेष्ठयोः॥
शुद्धो गुग्गुलुरञ्जलिं घृतयुतामेषा द्विमाषावटी।
सश्रेष्ठाक्वथनामवातपवनातङ्केभपञ्चानना॥

सोनामक्खी भस्म, सुहागा, सैंधा नमक, शुद्ध नीलाथोथा, तीक्ष्णलोह भस्म और शुद्ध मीठा तेलिया १।–१। तोला तथा चीता और त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला) ५–५ तोले और शुद्ध गूगल २० तोले लेकर, कूटने योग्य चीजों को कूट छानकर सब को एकत्र मिलाकर घीके साथ घोट कर २–२ माशे की गोलियां बनावें।

इन्हें त्रिफला के क्वाथके साथ सेवन करनेसे आमवात और वातव्याधि नष्ट होती है।

(४२७१) पञ्चाननवटी (२)

(भै. र.; र. र.। अम्लपित्ता.)

शुद्धं सूतं पलार्धञ्च तत्समं शुद्धगन्धकम्।
तयोः समं ताम्रपत्रं लिप्त्वा मूषान्तरे क्षिपेत्॥
आच्छाद्य पञ्चलवणैर्लिप्त्वा गजपुटे पचेत्।
सिद्धं ताम्रं समादाय पलमेकं विमर्दयेत्॥
पारदस्य पलञ्चैव गन्धकस्य पलन्तथा।
पुटदग्धस्य लोहस्य गगनस्य पलंपलम्॥
यमानी शतपुष्पा च त्रिकटु त्रिफलाऽपि च।
त्रिवृता चविका दन्ती शिखरी जीरकद्वयम्॥

एतेषां पलिकैर्भागैर्घण्टकर्णकमानकम् ।
ग्रन्थिकं चित्रकश्चैव कुलिशानां पलार्धकम् ॥
आर्द्रकस्वरसैः पिष्ट्वा गुटिकां माषकोन्मिताम् ।
पञ्चाननवटी ख्याता सर्वरोगविनाशिनी ॥
अम्लपित्तमहाव्याधिनाशिनी च रसायनी ।
महाऽग्निकारिका चैषा परिणामव्यथापहा ॥
शोथपाण्ड्वामयानाहप्लीगुल्मोदरापहा ॥

शुद्ध पारा २॥ तोले और शुद्ध गन्धक २॥ तोले लेकर दोनों की कज्जली बनावें और उसे (नीबू के रसमें घोटकर) ५ तोले ताम्रके बारीक पत्रों पर लेप कर दें और उन्हें सम्पुट में पञ्चलवण के बीच में रखकर बन्द करके गजपुट में फूंक दें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो उसमें से ताम्र भस्म को निकालकर पीस लें। तत्पश्चात् ५-५ तोले शुद्ध पारद और गन्धक की कज्जली बनाकर उसमें उपरोक्त ताम्र भस्म तथा लोह भस्म और अभ्रक भस्म ५-५ तोले एवं अजवायन, सौंफ, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, निसोत, चव, दन्तीमूल, चिरचिटा तथा सफेद और काले जीरे का चूर्ण ५-५ तोले; घण्टकर्ण, मानकन्द, पीपलामूल, चीता और हाडसंघार का चूर्ण २॥-२॥ तोले मिलाकर सब को अद्रक के रसमें घोटकर १-१ माशे की गोलियां बनावें।

इन के सेवनसे अम्लपित्त, परिणाम शूल, शोथ, पाण्डु, अफारा, तिल्ली, गुल्म, और उदररोग नष्ट होते तथा अग्नि प्रदीप्त होती है।

यह रसायन (जराव्याधिनाशक) औषध है।

पञ्चाननवटी (३)

(भै. र.; र. चं. । अर्श.; र. सा. स. । अर्श.)

नित्योदित रस देखिये ।

इसमें और उसमें केवल यही अन्तर है कि उसमें विष पड़ता है और इसमें नहीं पड़ता।

(४२७२) **पञ्चाननावटी**[1]

(भै. र.; र. सा. सं., र. रा. सुं.; र. र. । पाण्डु.)

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्रगुग्गुलुः ।
जैपालबीजतुल्यञ्च घृतेन गुटकीकृतम् ॥
भक्षयेदर्धगुञ्जाभं शोथपाण्डुप्रशान्तये ।
'पञ्चानना' वटी ख्याता पाण्डुरोगकुलान्तिका॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध गूगल और शुद्ध जमालगोटा समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सब को घी के साथ घोटकर आधी आधी रत्ती की गोलियां बनावें।

इन के सेवन से शोथ और पाण्डु रोग नष्ट होता है।

(४२७३) **पञ्चाननो रसः** (१)

(र. र. स. । अ. १९)

मृतं कान्तं सुवर्णं च शुल्वताराभ्रभस्मकम् ।
पृथगक्षमितं सर्वं पटचूर्णकृतं मृदु ॥
रसगन्धककज्जल्या तुल्यया सह मर्दितम् ।
सार्धद्विपलमानेन ताप्य चूर्णेन मर्दितम् ॥
द्विपलं मूषिकामध्ये विनिक्षिप्यालचूर्णकम् ।
ततस्तु कज्जलीं क्षिप्त्वा मनोह्वां तावतीं क्षिपेत्॥
ततो निरुध्य यत्नेन परिशोष्य पुटेन्निशि ।

[1] पाण्डुसूदन रसमें और इसमें नाम मात्रका ही अन्तर है।

पुटेन गजसंज्ञेन स्वतः शीतं विचूर्णयेत् ॥
चतुर्गुणेन गन्धेन निर्मितां रसकज्जलीम् ।
क्षिप्त्वा पूर्वरसे लुङ्गवारिणा परिमर्दयेत् ॥
पचेत्क्रोडपुटेनैव दशवारमतः परम् ।
एवं तालककज्जल्या दशवारं पुटेत्ततः ॥
ततश्च मृतवैक्रान्तभस्मना च कलांशतः ।
ततो विचूर्ण्य यत्नेन करण्डान्तर्विनिक्षिपेत् ॥
अयं पञ्चाननो नाम देवराजेन कीर्तितः ।
श्रेष्ठः सर्वरसेन्द्रेषु महारससमो गुणैः ॥
पथ्याम्रूरणशुण्ठीभिः सघृताभिर्निषेवितः ।
सर्वान्पाण्डुगदान्हन्ति कृतघ्न इव सत्कृतिम् ॥
यक्ष्माणं जठरं हलीमकरुजं वातार्तिविड्बन्धनं,
कुष्ठं च ग्रहणीं ज्वरातिसरणं श्वासं च कासा-
रुची ।
श्लेष्मव्याधिमशेषतो गलगदान्दुर्नामपन्दाग्नितां,
मेहं गुल्मरुजं च किं बहुगिरा हन्याद्गदान्दु-
स्तरान् ॥
सेव्यमाने रसे चास्मिन्बिल्वमेकं च वर्जयेत् ।
स्वस्थः सर्वं समश्नीयाद्गदी पथ्यं गदापहम् ॥

कान्तलोह भस्म, सोने की भस्म, ताम्र भस्म, चांदी भस्म और अभ्रक भस्म १।–१। तोला तथा पारे और गन्धक की कज्जली इन सब के बराबर लेकर सब को एकत्र मिलाकर घोटें । तत्पश्चात् उसमें २॥ पल (१२॥ तोले) शुद्ध सोनामक्खीका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटें । तत्पश्चात् एक मूषामें १० तोले हरताल का चूर्ण बिछाकर उसके ऊपर उक्त कज्जली को रक्खें और फिर उसपर १० तोले शुद्ध मनसिल का चूर्ण बिछा दें । इस मूषा को बन्द कर के उस के ऊपर कपरमिट्टी कर के सुखा लें और रात में गजपुटमें फूंक दें । जब सम्पुट स्वांग शीतल हो जाय तो उसमें से औषध को निकालकर पीस लें । फिर १। तोला पारद और ५ तोले गधन्क की कज्जली बनाकर उसे उपरोक्त चूर्ण में मिलाकर १ दिन जम्बीरी नीबूके रस में घोटें और टिकिया बनाकर सुखाकर उन्हें सम्पुट में बन्द करके बराहपुट में फूंक दें । इसी प्रकार दस आंच लगावें । हर बार कज्जली मिला कर जम्बीरी के रस में घोटना चाहिये । इस के पश्चात् १। तोला हरताल को ५ तोले पारदमें मिलाकर घोटकर कज्जली बनावें और इसे उक्त तैयार औषध में मिलाकर एक दिन नीबू के रस में घोटें और टिकिया बनाकर, सुखाकर उन्हें सम्पु-टमें बन्द करके वराह पुटमें फूंकें । इसी प्रकार हरताल और पारेकी कज्जलीके साथ १० पुट दें।

तत्पश्चात् उसमें उसका १६ वां भाग वैक्रान्त भस्म मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसमें से नित्य प्रति १ रत्ती औषध हर्र, सूरण (जमीकन्द) और सोंठके (३ माशे) चूर्णको घीमें मिलाकर उसके साथ सेवन करने से समस्त प्रकारके पाण्डु, राजयक्ष्मा, उदररोग, हलीमक, वातव्याधि, मलावरोध, कुष्ठ, संग्रहणी, ज्वरातिसार, श्वास, खांसी, अरुचि, सब प्रकारके कफ-रोग, गलरोग, अर्श, मन्दाग्नि, प्रमेह और गुल्म आदि दुस्साध्य रोग नष्ट हो जाते हैं । इसके सेवन कालमें बेलके सिवाय समस्त पथ्य पदार्थ खाने चाहियें ।

(४२७४) **पञ्चाननो रसः** (२) (पञ्चाननवटी)
(र. मं. । अ. ६; यो. चि. । अ. ३.; वै. र. । प्रमे.; न. मृ. । त. ७)

सूतं गन्धकचित्रकं त्रिकटुकं मुस्ता विषं त्रैफलं[1], चैतेभ्यो द्विगुणैर्गुडैश्च गुटिका वल्लप्रमाणा हरेत् ।
कुष्ठाष्टादशवायुशूलमुदरं शोषप्रमेहादिकं, रोगानीककरीन्द्रदर्पदलने ख्यातो हि पञ्चाननः॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, शुद्ध बछनाग, हर्र, बहेड़ा और आमला एक एक भाग लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर घोटें तत्पश्चात् उसमें उस सबसे २ गुना गुड़[2] मिलाकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवन से १८ प्रकारके कुष्ठ, वायु, शूल, उदररोग, शोष और प्रमेहादि अनेक रोग नष्ट होते हैं ।

(४२७५) **पञ्चाननो रसः** (३)
(भै. र. । ज्वर.; र. सा. सं. । ज्वर.; यो. चिं. म.; र. म. । अ. ६; र. रा. सुं. । ज्वरा.; यो. त. । त. २०)

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिचं दैत्येन्द्ररक्तं रविः, पक्षौ सागरलोचनं शशियुतं भागाऽर्कसङ्ख्यान्वितम् ।

1 यो. चि. म. में त्रिफलेकी जगह बिडंग और गुडकी जगह सबके बराबर आकका रस लिखा है ।
2—वैद्य रहस्य तथा नपुंसका मृतार्णवमें गुडका अभाव है ।

खल्वे तत्परिमर्दितं रविजलैर्गुञ्जैकमात्रं ददेत्, सिद्धोऽयं ज्वरहस्तिदर्पदलनः पञ्चाननाख्यो रसः॥
पथ्यञ्च देयं दधितक्रभक्तं सिन्धूत्थमौद्गं सितया समेतम् ।
गन्धानुलेपो हिमतोयपानं दुग्धञ्च देयं त्वथ दाडिमाम्भः ॥

शुद्ध बछनाग २ भाग, मरिच ४ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ) १ भाग तथा ताम्रभस्म १२ भाग लेकर सबको १ दिन आकके स्वरसमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें । यह रस समस्त ज्वरोंको नष्ट करता है ।

पथ्य—दही, तक्र, भात, सेंधानमक, मूंगका यूष और मिश्री ।

यदि इससे अधिक दाह हो तो शरीर पर चन्दन अगर आदिका लेप करना और ठंडा पानी, दूध तथा अनारका रस पिलाना चाहिये ।

(४२७६) **पञ्चाननो रसः** (४)
(भै. र. । प्रमेह.)

सूतं गन्धं मृतं लौहं मृतमभ्रं समांशिकम् ।
सर्वेषां द्विगुणं वङ्गं मधुना मर्दयेद्दिनम् ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शीततोयं पिबेदनु ।
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति मूत्राघातं तथाश्मरीम् ॥
मूत्रकृच्छ्रं हरेदुग्रमयं पञ्चाननो रसः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म और अभ्रक भस्म १-१ भाग तथा बंग भस्म ८ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको

१ दिन शहदके साथ घोटकर (२-२ रत्ती की) गोलियां बना लें ।

इन्हें प्रातःकाल शीतल जलके साथ सेवन करनेसे २० प्रकारके प्रमेह, अश्मरी, मूत्राघात और उग्र मूत्रकृच्छ्र आदि रोग नष्ट होते हैं ।

(४२७७) पञ्चाननो रसः (५)

(र. रा. सु. । कुष्ठ.)

शुद्धसूतं समं गन्धं त्र्यूषणमुस्ताफलत्र्यम् ।
गुडूचीचूर्णयेत्तुल्यं चूर्णाच्च द्विगुणं गुडम् ॥
द्विगुञ्जां वटिकां खादेन्मासैकाद्गजचर्मनुत् ।
रसः पञ्चाननो नाम्ना अनुस्यात्क्षौद्रबाकुची ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला और गिलोय एक एक भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर घोटें फिर उसमें उस सबसे २ गुना गुड़ मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इसे १ मास तक सेवन करनेसे गजचर्म नामक कुष्ठ नष्ट होता है ।

इसे खाकर ऊपरसे शहदके साथ बावचीका चूर्ण खाना चाहिये ।

पञ्चाननो रसः (६)

(शीतभञ्जी रसः)

(र. सा. सं.; र. र. स.; भै. र.; र. रा. सुं.; र. चं.; र. चि.; र. सं. क.; भा. प्र.; शा. ध.; र. प्र. सु. । ज्वरा.)

ज्वरारिरस सं. २१७० देखिये ।

उसमें और इसमें केवल इतना ही अन्तर है कि उसमें पानके साथ खानेको लिखा है और इसमें तुलसीदल तथा मिर्चका अनुपान लिखा है । उसकी अपेक्षा इसमें निम्न लिखित पाठ अधिक है

तच्छीतं ताम्रभस्मापि गृह्णीयात्सुरसा जलैः ।
यामं मर्द्य ततो वल्लं तुलसीमरिचैर्युतम् ॥
हन्ति सर्वज्वरं घोरं विषमञ्च त्रिदोषजम् ।
धात्रीकल्केन वा युक्तं दाहाख्यं विषमं जयेत् ॥
पथ्यं दुग्धौदनं दद्यान्मुद्गयूषं सशर्करम् ।
ज्वरे धातुगते दद्यात्पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम् ॥
अयं पञ्चाननो नाम विषमज्वरनाशनः ॥

सम्पुटके स्वांग शीतल हो जाने पर उसमेंसे औषधको निकाल लें और ताम्रके भस्मीभूत भाग को भी उसीमें मिलाकर सबको १ पहर तुलसीके रसमें घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

तुलसीके रस और काली मिर्चके चूर्णके साथ खानेसे घोर सन्निपात और विषम ज्वर नष्ट होता है ।

आमलेके कल्कके साथ सेवन करनेसे दाहयुक्त विषम ज्वर नष्ट होता है ।

धातुगत ज्वरमें पीपलके चूर्ण और शहदके साथ देना चाहिये ।

यह रस विषम ज्वरोंके लिये विशेष उपयोगी है ।

(दाह युक्त ज्वरमें) पथ्य—दूध भात तथा मिश्रीयुक्त मूंगका यूष ।

(४२७८) पञ्चाननो रसः (७)

(पञ्चाननरसलोहम्)

(भै. र.; र. र. । आमवातरो.)

जारितं पुटितं लोहचूर्णं पञ्चपलन्ततः ।
गुग्गुलोः पलपञ्चाथ लोहार्द्धं मृतमभ्रकम् ॥

शुद्धसूतमभ्रसमं गन्धकञ्च तथा मतम् ।
त्रिगुणामयसश्चूर्णात् कृत्वा तां त्रिफलां नयेत् ॥
दत्त्वा द्विरष्टपानीयमष्टभागावशेषयेत् ।
तेन चाष्टावशेषेण पचेल्लोहाभ्रगुग्गुलुम् ॥
घृततुल्यं शतावर्या रसं दत्त्वा तथा शुभम् ।
प्रस्थं प्रस्थञ्च दुग्धस्य शनैर्मृद्वग्निना भिषक् ॥
लौहमय्या पचेद्दर्व्या पात्रे चायसि मृण्मये ।
ततः पाकविधिज्ञस्तु पाकसिद्धे विनिक्षिपेत् ॥
रसकज्जलिकां कृत्वा दत्वा चापि विशुद्धयेत् ।
विडङ्गं नागरं धान्यं गुडूचीसत्वजीरकान् ॥
पञ्चकोलं त्रिवृद्दन्ती त्रिफलैला च मुस्तकम् ।
सुचूर्णितं च प्रत्येकं चूर्णमर्द्धपलन्तथा ॥
उत्तार्य स्थापयेद्भाण्डे सिद्धे चापि सुरक्षितम् ।
घृतेन मधुना पश्चान्मर्दयित्वानुपानतः ॥
गुडूचीनागरैरण्डं क्राथयित्वा जलं पिबेत् ।
भक्षयेच्छुद्धदेहस्तु शुभेऽहनिसुरार्चकः ॥
आमवातमहाव्याधिविनाशाय महौषधम् ।
सन्धिवातं कर्णशूलं कुक्षिशूलं सुदारुणम् ॥
जङ्घापादाङ्गुलीशूलगृध्रसीमग्निमान्द्यताम् ।
गुल्मं शोथं कामलाञ्च पाण्डुरोगं सुदुःसहम् ॥
आमवातगजेन्द्रस्य केसरी मुनिनिर्मितः ॥

हर्र, बहेड़ा और आमला १५ पल (७५ तोले) लेकर अधकुटा करके उसे ३० सेर पानीमें पकावें और जब आठवां भाग (३॥ सेर) पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें लोहभस्म ५ पल (२५ तोले), शुद्ध गूगल २५ तोले और अभ्रक भस्म १२॥ तोले तथा २ सेर गायका घी, २ सेर शतावरका रस और २ सेर गायका दूध मिलाकर लोहे या मिट्टीके पात्रमें लोहेकी करछीसे चलाते हुवे मन्दाग्नि पर पकावें। जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसमें २॥ तोले शुद्ध पारद और २॥ तोले शुद्ध गन्धककी कज्जली तथा वायबिडंग, सोंठ, धनिया, गिलोयका सत, जीरा, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, निसोत, दन्तीमूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, इलायची और नागरमोथे में से हरेकका चूर्ण २॥–२॥ तोले मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें।

पञ्चकर्म द्वारा शरीर शुद्धि करनेके पश्चात् इसे ज़रासे घी और शहदमें मिलाकर गिलोय, सोंठ और अरण्ड मूलके क्वाथके साथ सेवन करनेसे आमवातका नाश होता है।

सन्धिवात, कर्णशूल, दारुण कुक्षिशूल, जंघाशूल, पादाङ्गुली–शूल, गृध्रसी, अग्निमांद्य, गुल्म, शोथ, कामला और दुःसह पाण्डु रोगके लिये यह एक उत्तम औषध है।

(४२७९) पञ्चाननो रसः (८)

(भै. र. । गुल्म.; र. चिं. । अ. ९; र. रा. सु.; र. सा. सं. । गुल्म.)

पारदाभ्रकतुल्यञ्च गन्धं जैपालपिप्पली ।
आरग्वधफलान्मज्जं वज्रीक्षीरेण भावयेत् ॥
धात्रीरसयुतं खादेद्रक्तगुल्मप्रशान्तये ।
चिञ्चादलरसञ्चानु पथ्यं दध्योदनं हितम् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध नीलाथोथा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध जमालगोटा, पीपलका चूर्ण और अमलतासका गूदा समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य औषधियां मिला-

कर सबको १ दिन सेंड (सेहुंड-थोहर) के दूधमें घोटकर (२-२ रत्तीकी) गोलियां बनालें।

इन्हें आमलेके रसके साथ सेवन करनेसे रक्तगुल्म नष्ट होता है ।

दवा खाकर ऊपरसे इमलीके पत्तोंका रस पीना चाहिये ।

पथ्य—दही भात ।

(४२८०) पञ्चामृतचूर्णम्

(र. र. । अजीर्णा.)

पारदं गन्धकं लौहं ताम्रमभ्रकमेव च ।
एषां माषकमेकैकं जम्बीरद्रवभावितम् ॥
देयं त्रिकटुना तुल्यं सम्यग्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
तप्ततोयानुपानेन वह्निमान्द्यहरं परम् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, ताम्रभस्म और अभ्रकभस्म १-१ माषा लेकर कज्जली बनाकर उसे जम्बीरी नीबूके रसमें घोटकर चार चार रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) के चूर्णके साथ मिलाकर गर्म पानीके साथ सेवन करने से अग्निमांद्य नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा-२ रत्ती ।)

(४२८१) पञ्चामृतपर्पटी (१)

(वै. र. । ज्वरचि.)

रविरसभुजगायोवङ्गतो गन्धकस्य
द्विगुणरचितभागं द्रावयेल्लोह उष्णम् ।
समविनिहितपङ्कास्थायिरम्भादलस्थं
तदितरदलयोगात्मद्रुतं यत्समन्तात् ॥
तदा तु पञ्चामृतपर्पटीति
स्मृतं ज्वराशेषविशेषहारि ।
कासक्षयार्शोग्रहणीगदघ्नं
वल्लद्वयं क्षौद्रकणावलीढम् ॥

ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, सीसाभस्म, लोहभस्म और बंगभस्म १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक सबसे २ गुना लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर खूब घोटें । तत्पश्चात् एक लोहेके पात्रमें जरासा घी चुपड़ कर उसमें इस कज्जलीको मन्दाग्नि पर पिघलावें और फिर उसे गायके ताज़े गोबर पर केलेका पत्ता बिछाकर उसपर फैला दें और जल्दीसे उसके ऊपर दूसरा पत्ता ढककर उसे गोबरसे दबा दें। जब स्वांगशीतल हो जाय तो पर्पटी को निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे ६ रत्तीकी मात्रानुसार पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकार के ज्वर, खांसी, क्षय, अर्श और संग्रहणी आदि रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(४२८२) पञ्चामृतपर्पटी (२) (भैरवनाथी)

(र. र. स. । उ. ख. अ. १४; र. रा. सु. । राजय.)

सुवर्णं रजतं ताम्रं सत्त्वाऽभ्रं कान्तलोहकम् ।
क्रमवृद्धमिदं सर्वं शाणेयौ नागवङ्गकौ ॥
द्रावयित्वैकतः सर्वं रेतयित्वा ततश्चरेत् ।
पृथक् पलमितं गन्धं शिलाऽऽलं विनिधाय च ॥
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य मर्दयेदम्लवर्गतः ।
तार्प्यं नीलाञ्जनं तालं शिलां गन्धञ्च चूर्णितम् ॥
दत्त्वा दत्त्वा पुटेत्तावद्यावद्विंशतिवारकम् ।
लोहाद् द्विगुणसूतेन ततो द्विगुणगन्धतः ॥

विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णां क्षिप्त्वा तां लोहपात्रके ।
द्रावयेद्वदराङ्गारैर्मृदुभिश्चाऽथ निक्षिपेत् ॥
हेमादिपञ्चलोहानां भस्म चाऽथ विलोडयेत् ।
अथ तत्कदलीपत्रे गोमयस्थे विनिक्षिपेत् ॥
पत्रेणाऽन्येन संच्छाद्य कुर्याद्यत्नेन पर्पटीम् ।
तस्योपरि क्षिपेत्सद्यो गोमयं स्तोकमेव च ॥
ततः शीतं समाहृत्य पटपूतं विधाय च ।
निक्षिपेदूर्ध्वदण्डायां पालिकायां ततः परम् ॥
पूर्ववद्वदराङ्गारैर्मृदुभिः द्रावयेच्छनैः ।
तुल्याऽऽलकशिलागन्धं पलार्धविषभावितम् ॥
पूर्वपर्पटिका तुल्यं तस्माद्दत्वं मुहुर्मुहुः ।
जारयेत्पालिकामध्ये दह्येत च न पर्पटी ॥
पालिकेतित्रिनिर्दिष्टा स्नेहक्षेपणयन्त्रिका ।
जीर्णे तालादिके चूर्णे पटपूतं विधीयताम् ॥
पूतीकरञ्जषट्कोलव्याघ्रीशोभाञ्जनाङ्घ्रिभिः ।
एतैः पञ्चपलैः क्वाथं षोडशांशाऽवशेषितम् ॥
तेन क्वाथेन संस्वेद्य शोषयेत्सप्तधा हि ताम् ।
विषतिन्दुफलोद्भूतै रसैर्निर्गुण्डिकोत्थितैः ॥
विभाव्य पलिकामध्ये क्षिप्त्वा बदरपावके ।
ईषत्प्रस्वेदनं कृत्वा स्थापयेदतियत्नतः ॥
उक्ता भैरवनाथेन स्यात्पञ्चामृतपर्पटी ।
व्योषाज्यसहिता लीढा गुञ्जाबीजेन सम्मिता ॥
सर्वलक्षणसम्पूर्णं त्रिनिहन्ति क्षयाऽऽमयम् ।
श्वासं कासं विसूचीञ्च प्रमेहमुदराऽऽमयान् ॥
अरोचकञ्च दुःसाध्यं प्रसेकं छर्दिहृद्द्रदम् ।
सर्वजं गुदरोगञ्च शूलकुष्ठान्यशेषतः ॥
वातज्वरञ्च विड्बन्धं ग्रहणीं कफजान्गदान् ।
एकद्वन्द्वत्रिदोषोत्थान् रोगानन्यान्महागदान् ॥
अग्निमान्द्यं विशेषेण हन्तीयं पर्पटी ध्रुवम् ।
एवं सम्यक् दातव्या रोगेषु भिषगुत्तमैः ॥
तत्तद्रोगहरैर्योगैस्तत्तद्रोगाऽनुपानतः ।
क्षयादिसर्वरोगघ्नी स्यात्पञ्चामृतपर्पटी ॥
तैलसर्षपबिल्वाऽम्लकारवेल्लकुसुम्भकम् ।
त्यजेत्पारावतं मांसं वृन्ताकं कुक्कुटं तथा ॥

शुद्ध स्वर्ण १ कर्ष (१। तोला), शुद्ध चांदी २ कर्ष, शुद्ध ताम्र ३ कर्ष, अभ्रक सत्व ४ कर्ष और शुद्ध लोह ५ कर्ष तथा ५-५ माशे शुद्ध सीसा और बंग लेकर सबको एकत्र गलाकर ठण्डा करें और फिर उसे रेतीसे रितवाकर बारीक चूर्ण करावें। तत्पश्चात् उसमें ५-५ तोले शुद्ध गन्धक मनसिल और हरतालका चूर्ण मिलाकर १ दिन अम्लवर्ग में घोटकर छोटी छोटी टिकिया बनाकर सुखा लें और फिर उन्हें ५-५ तोले सोनामक्खी, सुरमा, हरताल, मनसिल और गन्धकके चूर्णके बीच में रखकर शरावसम्पुट करके गजपुटमें फूंक दें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो सम्पुटमें से टिकियों को निकालकर नीबू आदिके रसमें घोट-कर पुनः टिकिया बनाकर सुखा लें और उन्हें उपरोक्त सोनामक्खी आदि पांचों चीज़ों के ५-५ तोले मिश्रित चूर्णके मध्यमें रखकर शराव सम्पुट करें और गजपुट में फूंक दें। इसी प्रकार इन पांच चीज़ोंके चूर्ण के साथ कुल मिलाकर २० पुट दें।

अब १० कर्ष (१२॥ तोले) शुद्ध पारद और २० कर्ष शुद्ध गन्धककी कज्जली बनाकर उसे लोहेकी कढ़ाई में (ज़रासा घी चुपड़कर) बेरीके कोयलोंकी मन्दाग्नि पर पिघलावें।

जब वह अच्छी तरह पिघल जाय तो उसमें उपरोक्त स्वर्णादि की भस्म डालकर उसे अच्छी तरह चलावें और फिर गायके ताजे गोबर पर केलेका पत्ता बिछाकर उसपर इस पिघले हुवे रस को डाल दें और उसपर दूसरा पत्ता रखकर उसे गोबरसे ढक दें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो पर्पटी को निकालकर पीसकर कपड़ेसे छान लें।

इस चूर्ण को लम्बे डंडे वाली घी तैल आदि निकालने की पली में डालकर पूर्ववत् बेरीकी मन्दाग्नि पर पिघलावें और उसमें शुद्ध हरताल, मनसिल और गन्धकका समभाग मिश्रित, तथा बछनागके काथमें घोटकर सुखाया हुवा, चूर्ण थोड़ा थोड़ा डालकर जलावें। ध्यान रखना चाहिये की पर्पटी न जल जाय। जब हरतालादिका मिश्रित चूर्ण उस पर्पटीके बराबर जल चुके तो पालीमेंसे औषधको निकालकर ठण्डा करके कपड़छन चूर्ण करलें।

तत्पश्चात् पूतिकरञ्ज, पिप्पली, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, काली मिर्च, कटैली और सहंजनेकी जड़की छाल २५--२५ तोले लेकर सबको अधकुटा करके ८ गुने पानीमें पकावें और जब १६ वां भाग पानी शेष रह जाय तो उसे छान लें और फिर उसके सात भाग करके १ भाग उपरोक्त पर्पटीके चूर्णमें मिलाकर मन्दाग्नि पर जलावें। इसी प्रकार सात बारमें समस्त काथ जला दें।

इसके बाद उसे कुचले के स्वरस और संभालूके रसकी एक एक भावना देकर पलीमें डालकर बेरीकी मन्दाग्नि पर गर्म करें। जब सब पानी सूख जाय तो पीसकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें से १ रत्ती दवा त्रिकुटे के चूर्ण और घीके साथ सेवन करनेसे सम्पूर्ण लक्षणयुक्त क्षयरोग, श्वास, खांसी, विसूचिका, प्रमेह, उदररोग, अरुचि, दुःसाध्य प्रसेक, छर्दि, हृद्रोग, सर्वदोषज अर्श, शूल, कुष्ठ, वातज्वर, मलबन्ध, ग्रहणी, कफज रोग तथा एक दोषज द्विदोषज और सन्निपातज अनेक महान रोग और विशेषतः अग्निमांद्य नष्ट होता है।

इसे जिस रोगमें देना हो उसी को नष्ट करने वाले योगके साथ मिलाकर रोगोचित अनुपानके साथ देना चाहिये।

परहेज़—सरसों, तैल, बेल, खटाई, करेला, कुसुम, कबूतरका मांस, बैंगन और मुरगेका मांस। यह चीजें अपथ्य हैं।

(४२८३) पञ्चामृतपर्पटी रसः (३)

(वै. जी. । वि. ५; वृ. नि. र. । ज्वराति.; यो. र. । ग्रह.; र. रा. सुं. । अतिसा.)

लौहाभ्रार्करसं समं द्विगुणितं गन्धं पचेत्कोलिका–
काष्ठाग्नौ मृदुले निधाय सकलं लोहस्य पात्रे भिषक् ॥
सर्वं गोमयमण्डले विनिहिते रम्भादले विन्यसे–
त्तस्योर्द्ध्वं कदलीदलं द्रुततरं वैद्येश्वरो निक्षिपेत् ॥
स्यात्पञ्चामृतपर्पटी ग्रहणिकायक्ष्मातिसारज्वर–
स्त्रीरुक्पाण्डुगराम्लपित्तगुदजक्षुन्मान्द्यविध्वंसिनी
ग्रहण्यामनुपानं च हिङ्गुसैन्धवजीरकम् ।
जीरकं पाण्डुगरयोरितरेषु स्वयुक्तितः ॥

लोहभस्म, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म और शुद्ध पारा १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर सब की कज्जली बनाकर उसे लोहेके पात्रमें जरासा घी लगाकर उसमें डालकर बेरीकी लकड़ीकी मन्दाग्नि पर पिघलावें । जब अच्छी तरह पिघल जाय तो गायके ताज़े गोबरको ज़मीनपर फैलाकर उसपर केलेका पत्ता बिछाकर उसपर वह पिघली हुई कज्जली डालकर उसके ऊपर दूसरा पत्ता रख दें और उसे गोबरसे ढक दें । जब स्वांग शीतल हो जाय तो पर्पटीको निकालकर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे संग्रहणी, राजयक्ष्मा, अतिसार, ज्वर, स्त्रीरोग, पाण्डु, विष, अम्लपित्त, अर्श और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

इसे संग्रहणीमें भुनी हुई हींग, जीरा, और सेंधा नमक के साथ तथा पाण्डु और विषरोगमें जीरेके साथ एवं अन्य रोगोंमें रोगोचित अनुपानके साथ देना चाहिये ।

(४२८४) पञ्चामृता पर्पटी (४)

(भै. र.; र. च.; र. सा. सं.; र. र. । ग्रह.; र. रा. सुं. । अति.; रसें. चिं. म. । अ. ९)

अष्टौ गन्धकतोलका रसदलं लौहं तदर्द्धं शुभम्,
लौहार्द्धश्च वराभ्रकं सुविमलं ताम्रं तदभ्रार्द्धकम् ।
पात्रे लौहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतश्चैकतः,
दर्व्यां वादरवह्निनातिमृदुना पाकं विदित्वा दले॥
रम्भाया लघु ढालयेत् पटुरियं पञ्चामृता पर्पटी,
ख्याता क्षौद्रघृतान्विता प्रतिदिनं गुञ्जाद्वयं वृद्धितः
लौहे मर्दनयोगतः सुविमलं भक्ष्यं क्रिया लौहवत्
गुञ्जाष्टावथवा त्रिकं त्रिगुणितं सप्ताहमेवं भजेत्॥
नानावर्णग्रहण्यामरुचिसमुदये दुष्टदुर्नामकादौ,
छर्द्यां दीर्घातिसारे ज्वरभरकलिते रक्तपित्ते क्षयेऽपि ।
वृष्याणां वृष्यराज्ञी वलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री,
तुन्दं दीप्तस्थिराग्निं पुनरपि नवकं रोगिदेहं करोति ॥
पाकोऽस्यास्त्रिविधः प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा,
आद्ययोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ।
मृदौ न सम्यग्भङ्गोऽस्ति मध्ये भङ्गश्च रौप्यवत् ॥
खरेऽलघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः श्लक्ष्णोऽरुणच्छविः।
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः॥

शुद्ध गन्धक ८ तोले, शुद्ध पारा ४ तोले, लोहभस्म २ तोले, अभ्रकभस्म १ तोला और ताम्रभस्म आधा तोला लेकर सबको लोहेके खरल में लोहेकी मूसलीसे घोटकर कज्जली बनावें । और फिर लोहेकी कढ़ाईमें ज़रासा घी लगाकर उसमें इस कज्जली को बेरी की मन्दाग्निपर पकावें । जब कज्जली पिघल जाय तो उसे गायके ताज़े गोबरपर केलेका पत्ता बिछाकर उसपर फैला दें और उसके ऊपर दूसरा पत्ता रखकर गोबरसे दबा दें । जब स्वांग शीतल हो जाय तो निकालकर पीस लें ।

इसे शहद और घीके साथ लोहपात्रमें खरल करके सेवन करना चाहिये ।

इसे २ या ३ रत्तीसे प्रारम्भ करके ४ दिन तक रोज़ाना २-२ रत्ती बढ़ाकर और फिर रोजाना २-२ रत्ती घटाकर सेवन करनेसे १ सप्ताहमें

अनेक प्रकारकी संग्रहणी, अरुचि, दुष्ट अर्श, छर्दि, पुराना अतिसार, ज्वर, रक्तपित्त और क्षयका नाश होता है ।

यह अत्यन्त वृष्य, बलिपलित और नेत्ररोग नाशक तथा अग्निदीपक है । इसके सेवनसे रोगी मनुष्यका शरीर पुनः नवीन हो जाता है ।

पर्पटीका मृदु, मध्यम और खर तीन प्रकार का पाक होता है । मृदु और मध्यम पाकमें पारा दिखलाई देता है और खरपाकमें नहीं देता । मृदु पाक पर्पटी अच्छी तरह नहीं टूटती, मध्यम पाक तोड़ने से चांदीकी सी चमक दिखलाई देती है और खरपाक पर्पटी तोड़नेपर कुछ कुछ ललाई दीख पड़ती है ।

मृदु और मध्यम पाक पर्पटी सेवनोपयोगी होती है और खरपाक विषके समान त्याज्य है ।

(४२८५) **पञ्चामृतपोटलीरसः**

(र. चि. म. । अ. ७)

प्रत्येकमेकगद्याणं शुद्धसूतस्वर्णयोः ।
खल्वे पिष्ट्वा त्र्यहं कार्या पिष्टी सूक्ष्मा सुवर्णजा॥
वस्त्रे क्षिप्त्वाऽथ तां पिष्टीं ग्रन्थिं दद्याद्दृढं ततः ।
मृन्मयी गोस्तनाकारा मूषा तस्यां क्षिपेच्च ताम्॥
भाण्डं च बालुकापूर्णं मूषां तत्रान्तरे क्षिपेत् ।
चुल्यामारोप्य तं भाण्डं हठाग्निं ज्वालयेदधः ॥
शुद्धगन्धकगद्याणानष्टौ मूषान्तरे क्षिपेत् ।
गलिते गन्धके जाते तिलतैलस्य सन्निभे ॥
प्रक्षिपेद्धेमजां पिष्टीं ग्रन्थिबद्धां च गन्धके ।
क्षेप्यं गन्धकगद्याणं मुहुर्दग्धे च गन्धके ॥
एवमेवमहोरात्रं स्वेद्या पिष्टी च हेमजा ।
शुद्धगन्धकगद्याणं द्वययुक्तां दिनद्वयम् ॥
वज्रीक्षीरेण सम्पिष्य प्रक्षिपेच्च शरावके ।
भूमावेव पुटो देयो लावकः पुटसप्तकम् ॥
युक्त्याऽनया मृतं हेम चूर्णं कृत्वा सुसूक्ष्मकम् ।
पीतानां च कपर्दीनां गद्याणा वेदसङ्ख्यकाः ॥
शङ्खस्यापि हि चत्वारो मिश्रितं सूक्ष्मचूर्णितम् ।
द्व्यहं सेहुण्डदुग्धेन हयर्कदुग्धेन च द्व्यहम् ॥
चित्रकार्द्ररसेनैव द्व्यहं खल्वे प्रमर्दयेत् ।
एवं षड्वासरं पिष्ट्वा गद्याणान्वसुसङ्ख्यकान्॥
मृतकान्तायसो वेदा वेदाश्च मृतहेमजाः ।
एवं षोडशगद्याणांश्च हयार्द्रचित्ररसेन च ॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्वे गुटीः कृत्वाऽथ शोषयेत् ।
ततश्चूर्णेन मृदुना पक्वकुल्हरिकान्तरम् ॥
लिप्त्वा शुष्के वटीः क्षिप्त्वा चूर्णलिप्तपिधानया ।
दत्त्वा वस्त्रमृदा लिप्तं देयं गर्ते पुटद्वयम् ॥
पेषयेच्च समाकृष्य शीतकुल्हरिकाद् गुटीः ।
रसोऽसौ जायते श्रेष्ठः पञ्चामृतसुपोटली ॥
वल्लोऽस्य च रसस्य स्याद् द्वात्रिंशमरिचैः समम् ।
घृतमिश्रः प्रदातव्यो ह्यतिसारे ज्वरे तथा ॥
देयः सर्वातिसारेषु शूलेषु विविधेषु च ।
बलक्षीणेषु मन्दाग्नौ वातव्याप्तेषु रोगिषु ॥
अष्टादशप्रमेहेषु सर्वाजीर्णगदेषु च ।
एते रोगा विलीयन्ते क्रमात्संसेविते रसे ॥
कांस्यपात्रे न भोक्तव्यं क्षाराम्लं वर्जयेत्सदा ।
शालयो दधिदुग्धं च भोजनं मधुरं स्मृतम् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध स्वर्णके कण्टकवेधी पत्र ६—६ माशे लेकर दोनोंको ३ दिन तक घोटकर सूक्ष्म पिट्ठी बनावें और उसे कपड़ेमें बांध कर मज़बूत गांठ लगा दें ।

अब एक गोस्तनाकार मिट्टीकी मूषाको रेतसे भरी हुई हाण्डीमें रखकर चूल्हे पर चढ़ा दें और नीचे तीव्राग्नि जलावें। जब मूषा गर्म हो जाय तो उसमें ४ तोले गन्धक डाल दें और उसके पिघल कर तेलके समान हो जाने पर उसमें उपरोक्त पोटली डाल दें तथा उसके ऊपर ६ माशे गन्धकका चूर्ण और डाल दें। जब ऊपरवाला गन्धक जलने लगे तो फिर ६ माशे गन्धक और डालें इसी प्रकार बारबार गन्धकका चूर्ण डालते हुवे २४ घण्टे तक पाक करें। तत्पश्चात् १-१ तोला गन्धक डालते हुवे २ दिन और पकावें। तत्पश्चात् हांडीके स्वांग शीतल होनेपर उसमें से स्वर्ण पिट्ठीको निकालकर उसके ऊपरकी गन्धक छुड़ाकर पीस लें और उसे सेंड (सेहुंड) के दूधमें घोटकर टिकिया बनाकर सुखा लें एवं यथाविधि शरावसम्पुटमें बन्द करके सुखाकर लावकपुटमें फूंक दें। इसी प्रकार सेंडके दूधकी ७ पुट देनेसे स्वर्णभस्म तैयार हो जायगी।

अब पीलीकौड़ी २ तोले और शंख दो तोले लेकर दोनों को एकत्र पीसकर २ रोज सेंडके दूध में, २ रोज़ आकके दूधमें और १-१ दिन चीते के काथ तथा अद्रकके रसमें घोटें। इस प्रकार ६ रोज़ मर्दन करनेके पश्चात् उसमें २ तोले कान्त लोहभस्म और २ तोले उपरोक्त स्वर्ण भस्म मिला कर सब को १-१ दिन चीतेके काथ और अद्रक के रसमें घोटकर छोटी छोटी गोलियां बनाकर सुखा लें।

तत्पश्चात् मिट्टीकी एक पक्की कुल्हिया (कुल्हड़) के भीतर पत्थरके चूनेका लेप करके सुखा लें और उसमें उपरोक्त गोलियां भरकर उस के मुखको चूनेसे पुते हुवे ढकनेसे बन्द करके उसपर ४-५ कपड़मिट्टी कर दें। तत्पश्चात् उसे सुखाकर गढ़ेमें रखकर २ लघुपुट लगावें। और फिर कुल्हड़के स्वांग शीतल हो जानेपर उस मेंसे गोलियें को निकालकर पीस लें। इसका नाम "**पञ्चामृतपोटलीरस**" है।

इसमें से ३ रत्ती रस ३२ काली मिर्चों के चूर्ण में मिलाकर घीके साथ देनेसे ज्वर, अतिसार, शूल, बलकी क्षीणता, अग्निमांद्य, वातव्याधि अठारह प्रकारके प्रमेह और अजीर्णका नाश होता है।

पथ्य—शाली चावल, दही, दूध और मधुर पदार्थ।

अपथ्य—क्षार और अम्ल पदार्थों का त्याग करना तथा कांसीके पात्रमें भोजन न करना चाहिये।

पञ्चामृतमण्डूरम्

(पञ्चामृतलोहमण्डूर देखिये।)

(४२८६) पञ्चामृतरसः (१)

(रसे. मं.। सर्वरोगा.)

मृतरसपलमेकं सत्त्वमेकं गुडूच्या-
त्रिकटुकपलयुग्मं रक्तचित्रस्य चैव।
त्रिफलपुरकटुकीनेत्रसङ्ख्यापलानि
इति मिलितसमस्तं सौरसारेण घृष्टम्॥
घृतमधुसितमिश्रं मर्दितश्चैकरात्रं
प्रतिदिनमिह खादेन्माषकाणां दशैव।
हरति विविधरोगान् राजरोगञ्च पाण्डुं
हृदयजठरशूलं श्वासकासाऽग्निमान्द्यम्॥
शिरसिजगुदरोगाऽर्शांसि गुल्मोदराणि
हरति किल चिरोत्थान्याशु कुष्ठादिकानि।

वलिपलितविनाशो वज्रकायो बलिष्ठो
रविशशिसमकालं चाऽऽयुराप्नोति विद्वान्॥

पारद भस्म १ पल (५ तोले), गिलोयका सत्व १ पल, त्रिकुटा, लाल चीता, त्रिफला, कुटकी और शुद्ध गूगल २–२ पल लेकर सबका महीन चूर्ण बनावें और उसे तुम्बरुके काथमें घोटकर उसमें उसके बराबर घी शहद आर खांड मिलाकर एकदिन घोटकर चिकने पात्रमें भरकर रख दें।

इसमेंसे १० माशे दवा प्रति दिन खानेसे राजयक्ष्मा, पाण्डु, हृच्छूल, उदरशूल, श्वास, खांसी, अग्निमांद्य, शिरोरोग, गुदरोग, अर्श, गुल्म, उदर-रोग और पुराने कुष्ठ शीघ्र ही नष्ट होकर मनुष्य बली पलित रहित, बलिष्ठ और दीर्घायु हो जाता है।

(४२८७) **पञ्चामृतरसः** (२)

(र. चं. । वाजीकरणा.; र. र. । रसायन.)

भस्मीभूतसुवर्णतारदिनकृत्कृष्णाभ्रसूतैः[1] क्रमात्।
गन्धानां खलु भागवृद्धिरपि तत् कृत्वा शुभां कज्जलीम् ॥
निर्गुण्डीदशमूलवह्निरजनीव्योषार्द्रकैर्भावितैः।
गोलीकृत्य विशोष्य तन्निगदितः पञ्चामृतः स्याद्रसः ॥
नानेन सदृशः कोऽपि निवसेद्भुवनत्रये ।
निहन्ति सकलान् रोगान् भवरोगमिवाच्युतः ॥
अयं पञ्चामृतो नृणां त्रिदशानामिवामृतम् ॥

१—बृहद्योगतरङ्गिणी तथा योगरत्नाकरमें-"दिनकृत्सूताभ्रसत्वैः क्रमात्" पाठ है तथा प्रथम श्लोकका उत्तरार्द्ध इस प्रकार है " संयुक्तैस्त्रितयं त्रिभिः कृमिहराम्भोदैर्युतः कट्फलैः ।" इसका नाम भी " पञ्चामृताख्यरस " लिखा है।

स्वर्णभस्म १ भाग, चांदी भस्म २ भाग, ताम्रभस्म ३ भाग, कृष्णाभ्रक भस्म ४ भाग, शुद्ध पारद ५ भाग और गन्धक ६ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर उसे १–१ दिन संभालु, दशमूल, चीता, हल्दी, त्रिकुटा और अदरक में से जिनके स्वरस मिल सकें उनके स्वरस के तथा शेष ओषधियोंके काथके साथ घोट कर गोलियां बनाकर रख छोड़ें।

यह रस समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

(बृहद्योग तरङ्गिणी के पाठके अनुसार इसमें पारद भस्म ४ भाग और अभ्रक सत्व ५ भाग पड़ना चाहिये तथा गन्धक न डालकर सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, इलायची, तेजपात, बायबिडंग और नागरमोथेका चूर्ण १–१ भाग डालना चाहिये तथा अन्य द्रव्योंकी भावनासे पूर्व १ भावना कायफलके काथ की देनी चाहिये ।)

(४२८८) **पञ्चामृतरसः** (३)

(र. का. धे. । रा. य.)

गन्धकः पारदः शुद्धो मृतं नागं विषं तथा ।
मरिचं शङ्खनाभिश्च समानेतान् विचूर्णयेत् ॥
गुञ्जाद्वयमितो देयो नासाकर्णप्रपूरणे ।
शृङ्गवेररसेनायं त्रिदोषक्षयकासनुत् ॥
ज्वरितस्य हितः सूतो रोगघ्नः स्तम्भनाशकः ।
रसः पञ्चामृतो नाम सर्वरोगहरो भवेत् ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद सीसा भस्म, शुद्ध बछनागका चूर्ण, काली मिर्चका चूर्ण और शंख भस्म समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की

कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर खरल करके रक्खें ।

इसमें से २–२ रत्ती चूर्ण अदरक के रसमें मिलाकर नाक और कानमें भरनेसे त्रिदोषज क्षय, खांसी, ज्वर और स्तम्भादिका नाश होता है ।

(४२८९) **पञ्चामृतरसः** (४)

(रसे. मं. । रसा.)

पूर्वं यानि विशोधितानि च पुनः
कान्ताऽभ्रशुल्वानि च,
पक्वान्येव हरेच्च गन्धकसमा–
न्येतानि सम्मेलयेत् ।
तच्चूर्णं सघृतञ्च शोधितरसं
शास्त्रक्रमाद्वै भिषक्,
तस्मिंश्च स्थिरमानसः सुविधिना
क्वाथं सुतप्तं क्षिपेत् ॥
पञ्चामृतमूलेन दशमूलेनाऽष्टवर्गमूलेन ।
मधुसञ्जीवनीमार्कवविदारिमूलेन च क्वाथः ॥
गुडूची हस्तिकर्णी च मुशली श्रावणी तथा ।
शतावरी च पञ्चैताः क्वाथः पञ्चामृतो मतः ॥
ऋषभकजीवकयुक्तं मेदायुग्मञ्च ऋद्धिवृद्धी च ।
काकोलीद्वयसहितं क्वाथः कथितोऽष्टवर्गस्य ॥
श्रीपर्णिका च बृहती च वसन्तदूती,
व्याघ्र्यग्निमन्थशुकनासकशालपर्ण्यः ।
बिल्वश्च गोक्षुरकमेव सुपृष्टपर्णी,
क्वाथो बुधैश्च कथितोदशमूलसञ्ज्ञः ॥
ज्वलनस्थं तत्सर्वं शनैः शनैरेव पचनीयम् ।
प्रभाततश्चाऽऽरम्भितमस्तं याति दिवाकरो यावत्॥
पाकाऽवसानसमयं ज्ञात्वा तत्रैव चित्रकं भृङ्गीम् ।
त्रिकटुकचूर्णञ्च तथा रसमानं तद्विनिक्षिपेत्प्राज्ञः॥
गुडपाकसमानेन च वह्निस्थे तान्यौषधानि भिषक् ।
उत्तारणीयमग्नेर्भूमौ संस्थापनीयश्च ॥

कान्त लोहभस्म, अभ्रकभस्म और ताम्रभस्म १–१ भाग शुद्ध गन्धक ३ भाग तथा शुद्ध पारद ३ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य चीजें मिलाकर उसमें जरासा घी डालकर अच्छी तरह खरल कर लें । और फिर उसे लोहेकी कढ़ाईमें डालकर आग पर चढ़ा दें एवं उसमें क्रमशः पञ्चामृतमूल, दशमूल, अष्टवर्गमूल, जीवन्ती, भंगरा और विदारीकन्दका क्वाथ थोड़ा थोड़ा डालकर २–२ घण्टे पकावें । (हरेक चीज के क्वाथमें २ घण्टे पकाना चाहिये । कुल क्वाथ एक साथ न डालकर थोड़ा थोड़ा डालकर जलाना चाहिये और एक क्वाथमें पका चुकनेके बाद दूसरा क्वाथ थोड़ा थोड़ा करके डालना चाहिये ।) इस प्रकार प्रातःकालसे सन्ध्याकाल तक इन छः क्वाथोंमें पकावें और अन्तमें जब औषध अवलेहके समान गाढ़ी हो जाय तो उसमें चीता, काकड़ासिंगी और सोंठ, मिर्च तथा पीपलका समान भाग मिश्रित चूर्ण ९ भाग मिलाकर गुड़के समान गाढ़ा करके उतार लें और ठंडा करके चिकने बरतन में भरकर रख दें ।

यह योग रसायन (जराव्याधि-नाशक) है ।

पञ्चामृत—गिलोय, हस्तिकर्णपलाश, मूसली, गोरखमुण्डी और शतावर ।

अष्टवर्ग—ऋषभक, जीवक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली और क्षीरकाकोली ।

दशमूल—खम्भारी, कटेली, पाढल, बड़ी-कटेली (कटेला), अरणी, अरलु, शालपर्णी, बेल, गोखरु और पृष्टपर्णी ।

(४२९०) **पञ्चामृतरसः** (५)

(भै. र. । कास.)

शुद्धसूतस्य भागैकं भागौ द्वौ गन्धकस्य च ।
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम् ॥
मृताभ्रस्य चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत् ।
अम्लेन मर्दयेत्सर्वं माषैकं वातकासनुत् ॥
अनुपानं लिहेत्क्षौद्रैर्विभीतकफलत्वचम् ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, ताम्रभस्म २ भाग, कालीमिर्चका चूर्ण १० भाग, अभ्रक भस्म ४ भाग तथा शुद्ध बछनागका चूर्ण १ भाग लेकर, प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको नीबूके रसमें घोटकर १-१ माशेकी गोलियां बना कर रख छोड़ें ।

इनमें से १-१ गोली शहदमें बहेड़े का चूर्ण मिलाकर उसके साथ सेवन करने से वातज खांसी नष्ट होती है ।

(व्यवहारिक मात्रा ४ रत्ती)

(४२९१) **पञ्चामृतरसः** (६)

(यो. र. । वा. र.; वृ. नि. र. । वातर.)

पारदं च क्रियाशुद्धं तत्तुल्यं शुद्धगन्धकम् ।
अभ्रकं तु द्वयोस्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥
सर्वांशममृतासत्वं भावयेदौषधैः पृथक् ।
निर्गुण्डीगोक्षुरछिन्नाकोकिलाक्षाङ्घ्रिजै रसैः ॥
सप्तवारं ततो गुञ्ज्याद्वातरक्ते त्रिवल्लकम् ।
कोकिलाक्षस्य मूलानां पानीयमनुपाययेत् ॥

विधिवत् शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक १ भाग, अभ्रक भस्म २ भाग, शुद्ध गूगल ४ भाग और गिलोयका सत्व ८ भाग लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको संभालु, गोखरु, गिलोय और तालमखानेकी जड़के काथकी पृथक् पृथक् सात सात भावना देकर ९-९ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें तालमखानेकी जड़के काथके साथ सेवन करनेसे वातरक्तका नाश होता है ।

(४२९२) **पञ्चामृतरसः** (७)

(र. र. स. । राजय अ. १४; र. चं.; र. र.; वृ. नि. र. । राजय.)

समसूताभ्रलोहानां शिलाजतु विषं समम् ।
गुडूचीत्रिफलाकाथैः शोधितं गुग्गुलं तथा ॥
मृतं नेपालताम्रं च सूतस्थाने नियोजयेत् ।
एकीकृत्य द्विगुञ्जं तद्भक्षयेद्राजयक्ष्मनुत् ॥
पञ्चामृतरसो नाम ह्यनुपानं च पूर्ववत् ।
हरेत्क्षीराजगन्धाभ्यां जयन्ती वा क्षयापहा ॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म और लोह भस्म १-१ भाग तथा शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध बछनाग और गिलोय तथा त्रिफलेके काथमें शुद्ध गूगल ३-३ भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें बनतुलसीके रस और दूधके साथ अथवा

पूर्वोक्त (राजमृगाङ्क रसमें कथित) अनुपानके साथ देने से राजयक्ष्माका नाश होता है।

इस रसमें पारदभस्मके स्थानमें नेपाली ताम्र की भस्म भी डाल सकते हैं।

(४२९३) **पञ्चामृतरसः** (८)

(भै. र. । शोथा.; र. चं.; र. रा. सु.; र. सा. सं । नासारो.)

शुद्धं सूतं समादाय गन्धकं भागतः समम्[१]।
त्रिभागं टङ्कणं देयं विषभागत्रयं[२] तथा ॥
भागत्रयं[३] तथा देयं मरिचस्य प्रयत्नतः।
चूर्णीकृतं जलेनापि पिष्ट्वा रक्तिमितां वटीम् ॥
शृङ्गवेररसेनैव भक्षयेद्वटिकामिमाम्।
जलदोषोद्भवे शोथे घोरेऽत्युग्रे जलोदरे ॥
सन्निपातेषु घोरेषु विंशतिश्लैष्मिके गदे।
ज्वरातिसारसंयुक्ते शोथे चैव जलोदरे ॥
शिरःशूलगदे घोरे नासारोगे सपीनसे।
पञ्चामृतरसो ह्येष सर्वरोगोपशान्तिकृत् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक १-१ भाग तथा सुहागे की खील, शुद्ध बछनाग और काली मिर्चका चूर्ण ३-३ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर पानीके साथ घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

१ "गन्धं भागद्वयं ततः" इति पाठान्तरम्

२ भागचतुष्टयमिति पाठान्तरम्।

३ पञ्चभागमिति पाठान्तरम्

किन्हीं किन्हीं पुस्तकोंमें गन्धक २ भाग, विष ४ भाग और मिर्च ५ भाग लिखी है एवं अदरक के रस से ५-५ रत्तीकी गोलियां बनाने को लिखा है।

इन्हें अद्रकके रसके साथ सेवन करनेसे जलदोषसे उत्पन्न हुवा भयङ्कर शोथ, अत्युग्र जलोदर, घोर सन्निपात, बीस प्रकारके कफरोग तथा ज्वरातिसार युक्त शोथ और जलोदर, भयङ्कर शिरशूल और पीनसादि नासारोग नष्ट होते हैं।

(४२९४) **पञ्चामृतरसः** (९)

(र. प्र. सु. । अ. ७; र. चं. । कास.)

मृतं सूतं तथा चाभ्रं वङ्गं ताम्रं च कान्तकम्।
मेलितं च समांशेन मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥
घर्षितं जलयोगेन वटिमेकां च चूर्णयेत्।
भक्षितो वल्लमात्रं हि कृष्णाक्षौद्रेण संयुतः ॥
कासश्वासान्निहन्त्याशु तमः सूर्योदये यथा ॥

पारदभस्म, अभ्रकभस्म, वंगभस्म, ताम्रभस्म और कान्तलोहभस्म समानभाग लेकर सबको १ दिन घीकुमारके रसमें तथा १ दिन सुगन्धबालाके रसमें घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनमेंसे १-१ गोली पीपलके चूर्ण और शहद के साथ खानेसे खांसी और श्वास शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(४२९५) **पञ्चामृतरसः** (१०)

(र. र. स. । उ. ख. अ. ३०)

हेममाक्षिककान्ताभ्रवज्रभस्मप्रवेशयेत्।
रसे सहेम्नि सप्ताहं मूलिकारसमर्दितम् ॥
तां पिष्टीं यन्त्रयोगेन पचेत्पञ्चामृताह्वयः।
रसोऽयं मधुसर्पिर्भ्यां युक्तः पूर्वाधिकोगुणः ॥

स्वर्णमाक्षिकभस्म, कान्तलोहभस्म, अभ्रकभस्म और हीराभस्म १-१ भाग लेकर सबको एकत्र घोटें। फिर १ भाग शुद्ध पारद और १ भाग

शुद्ध स्वर्णके पत्रोंको कई दिन तक घोटकर एक जीव करके उसमें उपरोक्त मिश्रण मिलाकर सबको सात दिन मूलीके रसमें घोटकर शरावसम्पुटमें बन्द करदें और उसे बालुकायन्त्रमें रखकर एक दिन तीव्राग्नि पर पकावें । जब स्वांग शीतल हो जाय तो औषधको निकालकर पीस लें ।

(यदि स्वर्ण कच्चा हो तो मूलीके रसमें घोटकर एक दिन और पकावें ।)

इसे घी और शहदके साथ सेवन करनेसे जरा (बुढ़ापा) और समस्त रोगोंका नाश होता है ।

(४२९६) पञ्चामृतरसः (११)

(व. से. । रसायन.)

जातीफलं जातिपत्रं लवङ्गं केसरं तथा ।
चातुर्जातकशुण्ठ्यौ च पिप्पली मरिचानि च ॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं वरीमूलन्तु वंशजम् ।
सर्वं पिष्ट्वा सुसूक्ष्मश्च वाससा परिशोधयेत् ॥
लोहचूर्णं तथाभ्रञ्च ताम्रभस्म च वङ्गकम् ।
रसराजश्च नागश्च चूर्णस्यार्द्धं प्रयोजयेत् ॥
नागवल्लीरसेनैव ह्यथवा माक्षिकेण च ।
गुटिका तत्र संकार्या माषद्वयप्रमाणिका ॥
दोषमग्निं बलं वीक्ष्य यथोक्तं भक्षयेद्बुधः ।
गोदुग्धस्यानुपानञ्च सुष्णं चैव विशेषतः ॥
वर्द्धनं सप्तधातूनां वीर्यबुद्धिबलप्रदम् ।
बलभाकान्तिरुचिरमग्नेः सन्दीप्तिकारकम् ॥
कफरोगहरश्चैव बुद्धिज्ञानस्यकारणम् ।
वन्ध्या च लभते गर्भं पण्डोऽपि पुरुषायते ॥
नपुंसको याति पुंस्त्वं रामाः कामयते शतम् ।
वज्रकायः शुचिर्धातुर्दिव्यदृष्टिस्तु जायते ॥
जराव्याधिविनिर्मुक्तो वर्षसेवी यदा भवेत् ॥

जायफल, जावत्री, लौंग, केसर, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, सोंठ, पीपल, काली-मिर्च, चीता, पीपलामूल, शतावर और बंसलोचनका कपड़छन चूर्ण ४-४ तोले तथा लोहभस्म, अभ्रक-भस्म, ताम्रभस्म, बंगभस्म, पारदभस्म और सीसा भस्म ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पानके रस अथवा शहदमें घोटकर २-२ माशेकी गोलियां बना लें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार उष्ण दूधके साथ सेवन करनेसे सप्तधातु, बल, बुद्धि, कान्ति, रुचि और अग्निकी वृद्धि तथा कफरोगोंका नाश होता है ।

इसके सेवनसे वन्ध्या स्त्री गर्भ धारण करती है और नपुंसक पुरुषमें पुरुषत्व आ जाता है ।

इसे १ वर्ष तक सेवन करनेसे मनुष्य जरा व्याधिरहित हो जाता है ।

(४२९७) पञ्चामृतरसः (१२)

(ग. नि. । परिशिष्ट चू.)

कर्षं रसाद् गन्धकस्तथैव
विमर्द्य खल्वेऽभ्रकमेव तावत् ।
दद्यात्तथा ताप्यमयोरजश्च
गव्येन चाज्येन विमृद्य किञ्चित् ॥
पात्रे मन्दं वह्निना ज्वालयेत्त–
द्द्यान्मात्रां रक्तिकैकप्रवृद्ध्या ।
यावन्माषो नाधिकं मानवेभ्यः
कृत्वा वह्नेर्दीपनं हन्ति रोगान् ॥
पाण्डुप्लीहोन्माददुर्नाममेहान्
पित्तं साम्लं सातिसारं ज्वरञ्च ।
सद्यः शूलान् त्वग्ग्रहण्यामयं च
तथैव रोगान् खलु सूतिकायाः ॥

अयं हि पञ्चामृतनामधेयो
रसेन्द्रराजः क्षयरोगहारी ।
वातास्रमुग्रं श्वयथुं च हन्यात्
स्वयोगयुक्तः सकलान् विकारान् ॥

शुद्ध पारा १ कर्ष (१। तोला) और शुद्ध गन्धक १ कर्ष लेकर दोनोंकी कज्जली बनावें और फिर उसमें १-१ कर्ष अभ्रकभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म और लोहभस्म मिलाकर जरासे घीके साथ घोटें और तदनन्तर उसे (पर्पटी बनानेकी विधिके अनुसार) मन्दाग्निपर पकाकर पर्पटी बना लें।

इसे १ रत्तीकी मात्रासे आरम्भ करके प्रति दिन १-१ रत्ती दवा बढ़ाते हुवे खिलावें और जब १ माशे तक पहुंच जायं तो फिर प्रति दिन १-१ रत्ती घटाकर खिलावें।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त होती और पाण्डु, प्लीहा, उन्माद, अर्श, प्रमेह, अम्लपित्त, अतिसार, ज्वर, शूल, त्वग्विकार, ग्रहणी विकार, सूतिका रोग, क्षय, वातरक्त और शोथका नाश होता है।

पञ्चामृतरसः (१३)

(र. र.; धन्व. । अर्श.)

नित्योदितरस देखिये।

(४२९८) **पञ्चामृतरसः** (१४)

(र. र. रसा.; र. र. । रसायना.)

अथातः संप्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम् ।
पञ्चामृतमिदं ख्यातं सर्वरोगहरं परम् ॥
शास्त्रे सौख्यप्रदं नृणां भुवि रोगनिवारणम् ।
पथ्यापथ्यविनिर्मुक्तं विष्णुना परिकीर्त्तितम् ॥
सूतकान्तरविव्योम्नां शुद्धानां भस्मकं शुभम् ।
मारितं माक्षिकं चैव प्रत्येकं च पलं पलम् ॥
गन्धं पञ्चपलं दत्वा श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
आर्द्रकस्य रसं दत्वा त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥
क्वाथे च दशमूलस्य वह्निमूलरसेन वा ।
युक्त्या तु क्वथितेनापि मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥
शोषयित्वा ततो घर्मे चूर्णयेत्तदनन्तरम् ।
त्रिवर्गत्रितयाम्भोदतिन्दुतुम्बुरुरेणुकम् ॥
भार्ङ्गीभूनिम्बतिक्ता च जातीफलकशेरुकम् ।
पलार्द्धमानं सर्वाणि प्रत्येकैकं भवन्ति हि ॥
निधाय श्लक्ष्णचूर्णानि रसेन सह मेलयेत् ।
काकमाच्याश्च निर्गुण्ड्या वर्षाभूमुण्डिका तथा॥
कषायेणार्द्रकाम्भोभिर्भावनाः परिकल्पयेत् ।
कषायेण गुडूच्याश्च शिग्रुमूलरसेन वा ॥
पुनरार्द्रकतोयेन भावयित्वा विमर्दयेत् ।
बदरास्थिप्रमाणेन कर्तव्या गुटिका ततः ॥
मरिचानान्तु विंशत्या वटीमेकान्तु भक्षयेत् ।
तत्तद्रोगहरो योगः सर्वरोगं विनाशयेत् ॥
हन्यात्सर्वविधं ज्वरक्षयकरं
पाण्डुञ्च शूलामयं,
मन्दाग्निं ग्रहणीं गदांश्च कफजान्
वातोद्भवांश्चाऽऽमयान् ।
गुल्मव्याध्यरुची च पित्तजनितान्
द्वन्द्वोद्भवान् स्रोतजान् ,
कासश्वासयथासमांश्च विविधान्
पञ्चामृतो देहिनाम् ॥
यस्य रोगानुरूपेण पेयमत्र भिषग्वरैः ।
तक्रभक्तं प्रदातव्यं पथ्याय परिनिर्मितम् ॥
देयः स्तनन्धयस्यापि सोऽयं पञ्चामृतो रसः ॥

शुद्ध पारा, कान्तलोहभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म और स्वर्णमाक्षिकभस्म १-१ पल (५-५ तोले) तथा शुद्ध गन्धक ५ पल लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर उसे ३-३ दिन अदरकके रस, दशमूलके काथ और चीतेके काथमें घोटकर धूप में सुखाकर पुनः घोटें जब महीन चूर्ण हो जाय तो उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागरमोथा, कुचला, तुम्बरु, रेणुका, भरंगी, चिरायता, कुटकी, जायफल और कसेरुका आधा आधा पल (२॥-२॥ तोले) चूर्ण मिलाकर उसे १-१ दिन क्रमशः मकोय, संभालु, पुनर्नवा (बिसखपरा) और मुण्डीके काथ तथा अदरकके रसकी एवं गिलोय, और सहंजने की जड़की छालके काथ तथा अदरकके रसकी १-१ भावना देकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली २० काली मिर्चोंके चूर्णके साथ मिलाकर रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे समस्त रोग नष्ट होते हैं।

यह रस सर्व प्रकारके ज्वर, पाण्डु, अर्श, अग्निमांद्य, संग्रहणी, समस्त कफज रोग, वात व्याधि, गुल्म, अरुचि, पित्तज रोग, स्रोतोजविकार, खांसी तथा श्वासादिको नष्ट करता है।

यह रस दूध पीनेवाले बच्चोंके लिये भी हितकर है।

पथ्य—तक्र भात।

(४२९९) पञ्चामृतलोहगुग्गुलुः

(भै. र. । परि.)

रसगन्धकताराऽभ्रमाक्षिकाणां पलं पलम्।
लोहस्य द्विपलञ्चापि गुग्गुलोः पलसप्तकम् ॥
मर्दयेदायसे पात्रे दण्डेनाऽप्यायसेन च।
कटुतैलसमायोगाद्यामद्वयमतन्द्रितः ॥
माषमात्रप्रयोगेण गदा मस्तिष्कसम्भवाः।
स्नायुजा वातजाश्चापि विनश्यन्ति न संशयः॥
यं पञ्चामृतलौहाख्यो गुग्गुलुर्न हरेद्गदम्।
नासौ सञ्जायते देहे मनुजानां कदा च न ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, चांदी भस्म, अभ्रक भस्म और सोनामक्खी भस्म ५-५ तोले, लोह भस्म १० तोले और शुद्ध गूगल ३५ तोले लेकर सबको लोहेके खरलमें लोहेकी मूसलीसे ज़रा ज़रासा सरसोंका तैल लगा लगाकर २ पहर तक घोटें और फिर १-१ माशे की गोलियां बनाकर सुरक्षित रक्खें।

इनके सेवनसे मस्तिष्क रोग, स्नायुरोग और वातव्याधि आदि समस्त रोग नष्ट होते हैं।

(४३००) पञ्चामृतलौहमण्डूरम्

(पञ्चामृतमण्डूरम्)

(भै. र.; र. रा. सु.; र. चं. । पाण्डु.; भै. र. । ग्रहणी.)

लौहं ताम्रं गन्धमभ्रं पारदञ्च समांशकम्।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चित्रकं कणा ॥
किरातं देवकाष्ठञ्च हरिद्राद्वयपुष्करम्।
यमानी जीरकं युग्मं शटीधान्यकचव्यकम् ॥
प्रत्येकं लौहभागञ्च श्लक्ष्णचूर्णन्तु कारयेत्।
सर्वचूर्णस्य चार्द्धांशं सुशुद्धं लौहकिट्टकम् ॥

गोमूत्रे पाचयेद्वैद्यो लौहकिट्टाच्चतुर्गुणे।
पौनर्नवाष्टगुणितं क्वाथं तत्र प्रदापयेत् ॥
सिद्धेऽवतारिते चूर्णं मधुनः पलमात्रकम्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाख्यानुपानतः ॥
ग्रहणीं चिरजां हन्ति सशोथां पाण्डुकामलाम्।
अग्निश्च कुरुते दीप्तं ज्वरं जीर्णं व्यपोहति ॥
प्लीहानं यकृतं गुल्ममुदरञ्च विशेषतः।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं हन्ति पुष्टिविवर्द्धनम् ॥

लोहभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारद तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिडंग, चीता, पीपल, चिरायता, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दा, पोखरमूल, अजवायन, सफेद और काला जीरा, शटी (कचूर), धनिया और चवका कपड़छन महीन चूर्ण १-१ भाग (५-५ तोले) लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य चीजोंका चूर्ण मिला लें।

तदनन्तर इस समस्त चूर्णसे आधा शुद्ध मण्डूरका चूर्ण लेकर उसमें उससे ४ गुना गोमूत्र और आठ गुना पुनर्नवाका क्वाथ मिलाकर पकावें। जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे नीचे उतारकर उसमें उपरोक्त चूर्ण मिला दें और उसके ठंडा होने पर १० तोले शहद मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रख दें।

इसे तालमखानेके क्वाथके साथ सेवन करने से शोथयुक्त पुरानी संग्रहणी, पाण्डु, कामला, जीर्ण-ज्वर, तिल्ली, यकृत्, गुल्म, विशेषतः उदररोग, खांसी, श्वास और प्रतिश्यायका नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती और बल बढ़ता है।

(मात्रा-२ माशे।)

(४३०१) पञ्चामृतवटी

(र. सा. सं.; र. र.; र. रा. सु.। अजीर्ण.)

अभ्रकं पारदं ताम्रं गन्धकं मरिचानि च।
समभागमिदं चूर्णं चाङ्गेरीरसमर्दितम् ॥
मर्दिते हि रसे भूयो जयन्तीसिन्धुवारयोः।
भावनापि च कर्त्तव्या गुञ्जापरिमिता वटी ॥
तप्तोदकानुपानेन चतस्रस्तिस्र एव वा।
वह्निमान्द्ये प्रदातव्या वट्यः 'पञ्चामृतास्तथा ॥

अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद, ताम्रभस्म, शुद्ध गन्धक और काली मिर्चका चूर्ण समान-भाग लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको चांगेरी (चूका), जयन्ती और संभालूके रसकी १-१ भावना देकर १-१ रत्ती की गोलियां बनावें।

इनमें से ३-४ गोली उष्णजल के साथ देने से अग्निमांद्य रोग नष्ट होता है।

(४३०२) पञ्चास्यरसः

(कामलाप्रणुद्रसः)

(र. चं.; र. र.। कामला.)

तीक्ष्णमाक्षिककान्ताभ्रशुल्वसूतकतालकम्।
देवदालीरसैः पिष्टं बालुकायन्त्रसाधितम् ॥
अमृतोत्पलकह्लारकन्दद्राक्षासमन्वितम्।
पिष्टं यष्ट्यम्भसा क्षौद्रसिताभ्यां कामलाप्रणुत् ॥

तीक्ष्णलोह भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, कान्त-लोहभस्म, अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध पारद और शुद्ध हरताल समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर १ दिन बिन्दालके रसमें खरल करें और

फिर उसे सुखाकर आतशी शीशीमें भरकर ४ पहर तक बालुकायन्त्र में पकावें।

तदनन्तर शीशीके स्वांग शीतल हो जाने पर उसमें से रसको निकाल कर उसे गिलोय, सफेदकमल का कन्द, लालकमलका कन्द, मुनक्का और मुलैठीके क्वाथकी १-१ भावना देकर सुरक्षित रक्खें।

इसे शहद और मिश्रीके साथ सेवन करने से कामलाका नाश होता है।

(४३०३) **पतङ्गयोगः**

(वृ. यो. त. । त. १४७)

टङ्कं पतङ्गचूर्णस्य जातीपत्रस्य टङ्ककम् ।
अहिफेनस्य टङ्कं हि दरदं टङ्कयुग्मकम् ॥
अर्द्धं वाऽप्यथवा सर्वं चूर्णं खादेद्यथाबलम् ।
पिबेदनु पयः स्वल्पं वीर्यस्तम्भं करोति हि ॥
महायोगोऽयमुदितः शुक्रस्तम्भकरः परः ॥

पतङ्गका चूर्ण, जावित्री और अफीम १-१ टंक तथा शुद्ध शिंगरफ २ टंक लेकर सबको घोटकर चूर्ण बनावें।

इसे यथोचित मात्रानुसार थोड़े दूधके साथ सेवन करने से वीर्यस्तम्भन होता है।

शुक्रस्तम्भनके लिये यह एक महान योग है।

(४३०४) **पथ्यादिचूर्णम्** (१)

(ग. नि. । रसाय.)

पथ्याकृष्णाविडङ्गायोधात्रीचूर्णं सशर्करम् ।
सर्पिस्तैलयुतं खादञ्जरया नाभिभूयते ॥

हर्र, पीपल, बायबिडंग, लोहभस्म और आमलेका चूर्ण १-१ भाग तथा खांड सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घी और तैलके साथ सेवन करनेसे वृद्धावस्था नहीं आती।

(४३०५) **पथ्यादिचूर्णम्** (२)

(भा. प्र. । वातव्या.)

पथ्याविभीतधात्रीणां चूर्णं चूर्णं मृतायसः ।
मधुना सह संलीढं बहुमूत्रणशान्तिकृत् ॥

हर्र, बहेड़ा और आमलेका चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म ३ भाग मिलाकर शहदके साथ सेवन करने से बहुमूत्र रोग नष्ट हो जाता है।

(४३०६) **पथ्यादियोगः**

(ग. नि. । रसाय)

पथ्याचित्रकधात्रीणां चूर्णं लोहरजोन्वितम् ।
प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां जरारोगनिषूदनम् ॥

हर्र, चीता और आमलेका चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर शहद और घीके साथ सेवन करनेसे बुढ़ापा दूर हो जाता है।

(४३०७) **पथ्यादिलोहम्**[1]

(वृ. यो. त. । त. ९५; वृ. नि. र.; र. चि. म.; र. र.; च. द.; भा. प्र.; यो. र.; वं. से.; वृं. मा. । परिणा. शूल.; ग. नि. । परिशि.)

पथ्यालोहरजः शुण्ठी तच्चूर्णं मधुसर्पिषा ।
परिणामभवं हन्ति वातपित्तकफात्मकम् ॥

१—भाव प्रकाश में इस योगमें पीपल भी लिखी है।

हर्र, लोहभस्म और सोंठ के समान भाग मिश्रित चूर्णको शहद और घीके साथ सेवन करनेसे त्रिदोषज **परिणाम शूल** नष्ट होता है ।

पथ्यादिलोहम्

(च. सं.; च. द. । कामला)

" अयोरजादियोग " प्र. सं. ७४ देखिये ।

पथ्यादिरसः

(वृ. नि. र. । शूल.)

शूलगजकेसरी (शूलद्विपघ्नीवटी) देखिये ।

(४३०८) परहितरसः

(र. र. स. । अ. २.)

श्वेता पाठाजटा श्वेता श्वेता चैव पुनर्नवा ।
पिष्ट्वा जलेन तत्कल्कैः प्रकुर्यान्नालमूषिकाम् ॥
स्थालीमध्ये च तां क्षिप्त्वा क्षिपेत्संशोधितं रसम् ।
क्षिपेदुपरि सम्पेष्य द्व्यञ्जलिममितं पटुम् ॥
पिधानं तन्मुखे दत्त्वा सन्निरुध्याऽतियत्नतः ।
अधस्ताज्ज्वालयेद्वह्निं पिधान्यामम्बु निक्षिपेत् ॥
यामत्रितयपर्यन्तं जातेऽथ शिशिरे ततः ।
क्रोडकेशैः समाकृष्य मृतं पारदमाहरेत् ॥
न चेदेतावता भस्म पुनरेव पुटेद्रसम् ॥
तद्रसातिविषं विषं कृमिहरं व्योषोत्तमा गन्धजं,
चूर्णं द्वादशहाटकं खलु गुडो द्वात्रिंशदंशोन्मितः।
तत्सर्वं परिचूर्णितं प्रतिदिनं वल्लैश्चतुर्भिर्मितं,
चेत्थं हन्ति समस्तरोगनिवहं नागं गरुत्मानिव॥
विशेषात्सर्वकुष्ठघ्नो रसोऽयं परिकीर्तितः ।
ख्यातः परहितो नाम्ना भानुना भूरिभानुना ॥

श्वेता अपराजिता (सफेद फूलकी कोयल), पाठामूल, बच और सफेद साठी (पुनर्नवा) को पानीके साथ पीसकर उसकी एक लम्बी मूषा बनावें और उसमें शुद्ध पारद डालकर उसे एक कपड़मिट्टी की हुई हांडीमें रखकर उसके ऊपर ४० तोले पिसा हुवा नमक डाल दें एवं हांडीके मुखको किसी गहरे ढकनेसे अच्छी तरह बन्द कर के उसे आगपर चढ़ा दें । हाण्डीके ऊपरवाले ढकनेमें-पानी भर दें और फिर उसके नीचे ३ पहर तक तेज आंच जलावें । तदनन्तर हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे मूषाको निकाल कर उसके भीतरसे सुवरके बालेंके बुरुशसे पारदभस्म को निकाल लें ।

यदि पारद की भस्म अच्छी तरह न हुई हो तो एकबार फिर ऐसे ही अग्नि दें ।

तदनन्तर वह रस, अतीस, शुद्ध बछनाग, त्रिकुटा, त्रिफला और शुद्ध गन्धक का समान-भाग मिश्रित चूर्ण १२ भाग लेकर उसे ३२ भाग गुड़ में मिलाकर १२-१२ रत्तीकी गोलियां बनालें ।

इसके सेवनसे समस्त रोग और विशेषतः समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(४३०९) पर्णखण्डेश्वरः

(र. रा. सु.; भै. र. । ज्वरा.)

समांशं मर्दयेत्खल्ले रसं गन्धं शिलां विषम् ।
निर्गुण्डीस्वरसैर्भाव्यं त्रिवारं चार्द्रकद्रवैः ॥
गुञ्जापादं स्थितं पर्णे ज्वरं हन्ति महाद्भुतम् ॥

शुद्धपारा, गन्धक, मनसिल और बछनागका चूर्ण समान-भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली

बनावें फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको संभाल और अदरकके रसकी ३-३ भावना दें।

इसमें से चौथाई रत्ती औषध पानमें रखकर खानेसे ज्वर अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है।

(यह रस वातकफज्वरमें उपयोगी है।)

(४३१०) पर्पटीरसः (१)

(र. र. स. । अ. १३)

रसं द्विगुणगन्धेन मर्दयित्वा सभृङ्गकम् ।
लोहपात्रे घृताभ्यक्ते द्रावितं बदराग्निना ॥
ऊर्ध्वाधो गोमयं दत्त्वा कदल्या कोमले दले ।
स्निग्धया लोहदर्व्या च पर्पटाकारतां नयेत् ॥
लोहपात्रे विनिक्षिप्ता लोहपर्पटिका भवेत् ।
ताम्रपात्रे विनिक्षिप्ता ताम्रपर्पटिका भवेत् ॥
विषपादं च युञ्जीत तत्साध्येष्वामयेषु च ।
सुरसाया जयन्त्याश्च कन्यकाऽऽटरूषकयोः ॥
त्रिफलाया मुनेर्भार्ङ्ग्या मुण्ड्यास्त्रिकटुचित्रयोः।
भृङ्गराजस्य वह्नेश्च प्रत्यहं द्रवभावितम् ॥
आर्द्रकस्य रसेनापि सप्तधा भावयेत्पुनः ।
अङ्गारैः स्वेदयेदीषत्पर्पटीरसमुत्तमम् ॥
गुञ्जाष्टकं ददीतास्य ताम्बूलीपत्रसंयुतम् ।
पिप्पलीदशकैः क्वाथं निर्गुण्ड्याश्चानुपाययेत् ॥
स्वरभङ्गे कफे श्वासे प्रयोज्यः सर्वदा रसः ।
त्रिकण्टकस्य मूलानि शुण्ठीं संक्षुद्य निक्षिपेत् ॥
अजाक्षीरे सनीरार्धे यावत्क्षीरं विपाचयेत् ।
तत्क्षीरं पाययेद्रात्रौ सकणं भोजनेऽपि च ॥
कूष्माण्डं वर्जयेच्चिञ्चां वृन्ताकं कर्कटीमपि ।
आरनालं च तैलं च संसर्गं च विवर्जयेत् ॥
मासत्रयं च सेवेत कासश्वासनिवृत्तये ।
सजीरहिङ्गुकव्योषैः शमयेद्ग्रहणीं रसः ॥
दशमूलाम्भसा वातज्वरं त्रिकटुना कफम् ।
ज्वरं मधुकसारेण पञ्चकोलेन सर्वजम् ॥
यक्ष्माणं मधुपिप्पल्या गोमूत्रेण गुदाङ्कुरान् ।
शूलमेरण्डतैलेन पाण्डुशोफे सगुग्गुलुः ॥
कुष्ठानि भृङ्गभल्लातबाकुचीपञ्चनिम्बकैः ।
धत्तूरबीजसंयोगान्मेहोन्मादविनाशनः ॥
अपस्मारं निहन्त्याशु व्योषनिम्बुदलैः सह ।
स्तनन्धयशिशूनां तु रसोऽयं नितरां हितः ॥
पथ्याक्षचूर्णादिवशाद्व्याधींश्चान्यान्सुदुस्तरान् ।
सजातीफलशीतोदं योजयेत्पर्पटीरसम् ॥
पित्ताजीर्णे शिरश्चास्य शीततोयेन सेचयेत् ।
नस्यं निष्ठीवनं धूमं तीक्ष्णं वमनरेचनम् ॥
अन्नं रूक्षाल्पतीक्ष्णोष्णं कटुतिक्तकषायकम् ।
चिरकालस्थितं मद्यं योजयेत्कफरोगिणे ॥

शुद्ध पारद १ भाग और शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर दोनोंकी कज्जली बनाकर उसे भंगरे के रसमें घोटकर सुखा लें। फिर एक लोहेकी कढ़ाई में ज़रासा घी लगाकर उसमें इस कज्जलीको डालकर बेरीकी मन्दाग्नि पर पिघलावें। तदनन्तर भूमिपर गायका ताजा गोबर बिछाकर उसपर केलेका पत्ता बिछावें और उसपर उपरोक्त पिघली हुई कज्जली डालकर उसे घृत लगी हुई लोहेकी करछी से अच्छी तरह फैलाकर उसपर दूसरा पत्ता रखकर उसे गोबरसे दबा दें। थोड़ी देर बाद जब वह स्वांगशीतल हो जाय तो पत्तों के बीचमें से पर्पटीको निकालकर पीस लें।

यदि यह पर्पटी लोहेके पात्रमें बनाई जाती

है तो लोहपर्पटी और ताम्रके पात्रमें बनाई जाती है तो ताम्रपर्पटी कहलाती है।

अब इसमें इसका चौथा भाग शुद्ध बछनाग का चूर्ण मिलाकर उसे तुलसी, जयन्ती, घीकुमार, अडूसा, त्रिफला, अगथिया, भरंगी, गोरखमुण्डी, त्रिकुटा, चीता, भंगरा और चीतेके काथकी पृथक् पृथक् १-१ भावना देकर अन्तमें अदरकके रसकी ७ भावना दें और फिर उसे जरा देर अग्निपर गर्म करके बिल्कुल खुश्क कर लें।

इसमें से ८ रत्ती औषध पानके साथ खिलाकर ऊपरसे दश पीपलोंका चूर्ण संभालुके रस के साथ खिलानेसे स्वरभंग, श्वास और कफका नाश होता है।

गोखरुमूल आर सोंठ बराबर बराबर लेकर दोनोंको अधकुटा करके १६ गुने बकरीके दूध में डालें और उसमें समान भाग पानी मिलाकर पकावें। जब पानी जलकर केवल दूध बाकी रह जाय तो उसे छान लें। उक्त पर्पटी सेवन काल में रात्रिको पीपलके साथ यह दूध पिलाना तथा रात्रिके भोजनमें भी यही दूध देना चाहिये।

परहेज---कुम्हड़ा (पेठा), इमली, बैंगन, ककड़ी, कांजी और तैल। इन चीज़ोंका परित्याग करना चाहिये।

इस प्रकार ३ मास तक सेवन करनेसे खांसी और श्वास नष्ट हो जाता है।

इसे---

जीरा, भुनी हुई हींग और त्रिकुटेके साथ देनेसे संग्रहणी; दशमूलके काथके साथ देनेसे वातज्वर; त्रिकुटेके काथके साथ देनेसे कफ; मुलैठीके काथके साथ देनेसे ज्वर, पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ) के काथके साथ देनेसे सर्वदोषज ज्वर; शहद और पीपलके चूर्णके साथ खिलानेसे क्षय; गोमूत्रके साथ देनेसे अर्श; अरण्डीके तेलके साथ देनेसे शूल; शुद्ध गूगलके साथ मिलाकर खिलानेसे पाण्डु और शोथ; भंगरा, शुद्धभिलावा, बाबची और नीमके पञ्चाङ्गके काथके साथ खिलानेसे समस्त कुष्ठ; धतूरेके बीजके साथ देनेसे प्रमेह और उन्माद; त्रिकुटेके चूर्ण और नीबूके पत्तोंके साथ देनेसे अपस्मार तथा हर्र और बहेड़ेके चूर्णके साथ देने से अन्य अनेक रोग नष्ट होते हैं।

यह पर्पटी दूध पीने वाले बालकोंके लिये विशेष उपयोगी है।

इसे पित्ताजीर्णमें जायफलके साथ खिलाकर शीतल पानी पिलाना और शिर पर ठंडा पानी डालना चाहिये।

कफज रोगोंमें नस्य, निष्ठीवन, धूम्रपान, तीक्ष्णवमन तथा विरेचन, और रूक्ष अल्प तीक्ष्ण उष्ण तथा कटुतिक्त कषाय रसयुक्त भोजन एवं पुराना मद्य देना चाहिये।

पर्पटीरसः (२)

(नवज्वरारण्यकृशानुमेघरसः)

(र. रा. सुं. । ज्वरा.)

प्रयो. सं. २७७८ " त्रैलोक्यसुन्दररस " देखिये।

पर्पटीरसः (३)

(र. रा. सु. । कुष्ठा.)

" कुष्ठान्तकपर्पटीरस " देखिये

(४३११) **पर्पटीरसः** (४) (मल्लपर्पटी)

(सि. भे. म. । ज्वर.)

रालं चतुःपलमिते द्राविते ऽग्नियोगा-
त्सम्मेल्य शुक्लविषमर्धपलप्रमाणम् ।
खल्वे क्षिपेत्सपदि पर्पटिका रसोऽयं,
हन्यात्कफानिलमतिभ्रमवान्तिवेगान् ॥

२० तोले रालको अग्निपर पिघलाकर उसमें २॥ तोले शुद्ध. संखियेका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटें ।

इसके सेवनसे कफ, वायु, मतिभ्रम और वमनका नाश होता है तथा ज्वरका वेग रुक जाता है ।

(नोट---इसे बनाने और सेवन कराने में बहुत सावधानी रखनी चाहिये । रालमें संखियेको मिलाकर खूब घोटना चाहिये कि जिससे दोनों चीज़ों के परमाणु अच्छी तरह मिल जायं । इसे अधिकसे अधिक आधी रत्ती मात्रामें देना चाहिये और जिस शीशीमें रक्खें उस पर " विप " शब्द लिख देना चाहिये ।

(४३१२) **पाण्डुकथाशेषरसः**

(रसायनसार । पाण्डुरो.)

तुत्थताम्राभ्रलोहानां वस्त्रपूतेषु भस्मसु ।
तुल्यहारिद्रचूर्णेषु गोमूत्रं षड्गुणं पचेत् ॥
हंसमण्डूरतुल्यं तद् गव्यतक्रेण चेद्भजेत् ।
पाण्डुहलीमकं चापि कथामात्रेण शिष्यते ॥

तूतिया, तांबा, अभ्रक, लोह; इन चारों चीज़ोंकी कपड़छन की हुई २-२ तोले भस्मों में ८ तोले हल्दी का चूर्ण मिलाकर सवा सेर गोमूत्रमें मन्दी मन्दी आंचसे लोहेकी कढ़ाई में पकावें । जब गोमूत्र सूख जाय तब इन भस्मोंकी बराबर (१६ तोले) हंसमण्डूर मिलाकर कपड़ छन करलें । इसकी मात्रा ३ मासे से छः मासे तक गौकी छाछके साथ सेवन करे तो पाण्डुरोग और हलीमक रोग नष्ट हों । (रसायनसार)

(४३१३) **पाण्डुकुठाररसः**[१]

(र. प्र. सु. । अ. ८; रसें. चिं. म. । अ. ९; वृ. नि. र.; र. रा. सुं. । पाण्डु.)

गन्धकाभ्ररसलोहभस्मकं शाल्मलीमुसलिका-
गुडूचिभिः ।
भावयेत्त्रिफलकार्द्रकन्यकावह्निशक्रजरसैश्च[२]
सप्तधा ॥
जायते हि भुविजोऽमृतस्रवः प्लीहपाण्डुविनि-
वृत्तिदायकः ।
वल्लयुग्मपरिमाणतस्त्वयं लेहितश्च घृतमाक्षि-
कान्वितः ॥
शोफपाण्डुविनिवृत्तिदायकः सेवितश्च यवचि-
ञ्चिकाद्रवैः ॥

शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारा और लोहभस्म समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य चीज़ें मिलाकर सबको सेंभलकी छाल, मूसली, गिलोय, त्रिफला, अद्रक, घीकुमार, चीता और इन्द्रजौके काथकी सात सात भावना देकर रक्खें ।

१---रसेंद्रचिन्तामणि इत्यादि में इसे " पाण्डुनिग्रह" नामसे लिखा है ।

२---शिग्रुजरसैश्चेति पाठान्तरम् ।

इसे घृत और शहदके साथ सेवन करनेसे प्लीहा और पाण्डु तथा खिरनीके क्काथके साथ सेवन करनेसे शोथयुक्त पाण्डु का नाश होता है।

मात्रा—६ रत्ती।

(४३१४) **पाण्डुगजकेशरीरसः**

(रसें. चिं. म. । अ. ९)

रविभागं तु मण्डूरं तत्समं लौहभस्मकम्।
शिलाजतु तदर्द्धं स्यात् गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥
पञ्चकोलं देवदारु मुस्ता व्योषं फलत्रयम्।
पृथगर्द्धं विडङ्गञ्च पाकान्ते चूर्णितं क्षिपेत् ॥
पाययेदक्षमात्रन्तु तक्रेणाल्पाशनो भवेत्।
पाण्डुग्रहणिमन्दाग्निशोथार्शांसि हलीमकम् ॥
ऊरुस्तम्भकृमिप्लीहगलरोगान् विनाशयेत् ॥

ताम्रभस्म, मण्डूर और लोहभस्म १–१ भाग तथा शुद्ध शिलाजीत सबसे आधी लेकर सबको आठ गुने गोमूत्रमें पकावें और जब पाक तैयार हो जाय तो उसमें पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ), देवदारु, नागरमोथा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा आमला और बायबिडंगका चूर्ण आधा आधा भाग मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार तक्रके साथ सेवन करने और लघुभोजन करने से पाण्डु, ग्रहणी, मन्दाग्नि, शोथ, अर्श हलीमक, ऊरुस्तम्भ, कृमिरोग, प्लीहा और गल रोगोंका नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा ३ माशे।)

(४३१५) **पाण्डुनाशनरसः (१)**

(र. प्र. सु. । अ. ८ । र. च. । पाण्डु.)

स्वर्णरूप्यमथ शाणमात्रकं
शुद्धताम्रमथ तत्समं कुरु ।
रसवरं सकलेन समं हि वै
पिष्टिकां कुरु विमर्द्य गोलकम् ॥
गन्धकेन परिवेष्ट्य गोलकं
पाचयेच्च मतिमान् भिषक् सदा ।
भूमिमध्यनिहितं सुयन्त्रितं
यामषट्कमथवाष्टकं ततः ॥
गन्धमन्यमपि निक्षिपेत्पुटे
एवमत्र परिजारयेद्बुधः ।
निम्बुजेन परिपेष्य षड्गुणं
गन्धचूर्णमथ लोहचूर्णकम् ॥
योजयेच्च पलमानतस्ततो
लौहपात्रकुहरे पुटत्रयैः ।
पाचयेच्च चिरबिल्ववह्निना
पाण्डुनाशनरसस्ततो भवेत् ॥
वल्लमस्य मधुपिप्पलीयुतं
लेहितं सकलपाण्डुनाशनम् ॥

स्वर्णभस्म, चांदी भस्म और ताम्रभस्म ५–५ माशे तथा शुद्ध पारा सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें। जब पिट्ठीसी हो जाय तो उसका गोला बनाकर उसपर (सबके बराबर) नीबूके रसमें घुटा हुवा गन्धकका बारीक चूर्ण लपेट दें और उसे सम्पुटमें बन्द करके ६ या ८ पहर भूधर यन्त्रमें पकावें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो गोलेको निकाल कर उस पर पुनः नीबूके रसमें घुटा हुवा समान भाग गन्धक लपेट

कर उसे पहिलेकी भांति भूधर यन्त्रमें पकावें। इसी प्रकार ६ बार पाक करके षड्गुण गन्धक जारण करें।

तदनन्तर उसमें ५-५ तोले लोहभस्म और शुद्ध गन्धक मिलाकर उसे लोहेके सम्पुटमें बन्द करके करञ्जकाष्ठ की अग्निमें पुट दें। इसी प्रकार हर बार ५ तोले गन्धक मिलाकर दो पुट और दें, और फिर स्वांग शीतल होनेपर निकालकर पीस-कर सुरक्षित रक्खें।

इसे ३ रत्तीकी मात्रानुसार पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे सर्व प्रकार के पाण्डुरोग नष्ट होते हैं।

(४३१६) **पाण्डुनाशनरसः** (२)

(र. प्र. सु. । अ. ८)

सूक्ष्मं ताम्रदलं विलिप्य बलिना सूतेन चापि तथा
स्थालीमध्यगतं सुपाचितमिदं यामद्वयं वह्निना।
नागं गन्धकसंयुतं च पुटितं चित्रार्द्रसंमिश्रितम्
चूर्णीकृत्य समं सुशोभनरसं संयोजयेच्छास्त्रवित् ॥
शोफपाण्डुकफवातनाशनो रक्तिकैकपरिमाणतस्त्वयम् ।
सेवयेच्च लघु चान्नभोजनं तैलमम्ललवणामिषं बिना ॥

समान भाग पारे गन्धककी कज्जलीको नीबूके रसमें घोटकर ताम्रके कण्टकवेधी पत्रोंपर लेप करदें और फिर उन्हें हाण्डी में रखकर उसकी सन्धि बन्द करके उसके ऊपर ४-५ कपड़मिट्टी कर दें और उसे सुखाकर २ पहर तक तीव्राग्नि पर पकावें। जब हाण्डी स्वांग शीतल हो जाय तो उसमें से ताम्र भस्मको निकालकर पीस लें।

तदनन्तर सीसे को गन्धकके साथ पुट देकर उसकी भस्म बनावें; और अन्त में उक्त ताम्र-भस्म तथा यह सीसाभस्म बराबर बराबर लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर चीतेके क्काथ और अदरक के रसमें १-१ दिन घोटकर चूर्ण बनावें।

इसे १ रत्तीकी मात्रानुसार यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे शोथ, पाण्डु और कफ तथा वायुका नाश होता है।

इसके सेवनकालमें लघुभोजन करना और तेल, खटाई, लवण तथा मांससे परहेज करना चाहिये।

पाण्डुनिग्रहो रसः

(रसें. चि. म.; र. रा. सुं.; वृ. नि. र. । पाण्डु.)

पाण्डुकुठाररस देखिये।

(४३१७) **पाण्डुपङ्कशोषणरसः**

(र. चं. । पाण्डु.; र. र. स. । अ. १९)

ताम्रभस्मरसभस्मगन्धकं वत्सनाभमथ तुल्यभागतः ।
वह्नितोयपरिमर्दितं पचेद्यामपादमथ मन्दवह्निना ॥
रक्तिकायुगलमानतोभवेच्छोफपाण्डुघनपङ्कशोषणः ॥

ताम्रभस्म पारदभस्म, शुद्ध गन्धक और शुद्ध बछनाग समान भाग लेकर सबको चीतेके रसमें

घोटकर पौन घण्टा मन्दाग्नि पर पकावें । तदनन्तर चूर्ण करके रख लें ।

इसे २ रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करनेसे शोथ और पाण्डुरोग नष्ट होता है ।

(४३१८) पाण्डुपञ्चाननरसः

(भै. र.; र. चं. । पाण्डु.)

लौहमभ्रञ्च ताम्रञ्च प्रत्येकं पलसम्मितम् ।
त्रिकटु त्रिफला दन्ती चविकाकृष्णजीरकम् ॥
चित्रकञ्च निशे द्वे च त्रिवृता मानमूलकम् ।
कुटजस्य फलं तिक्ता देवदारु वचा घनम् ॥
प्रत्येकमेषां कर्षन्तु निक्षिपेत्पाकविद् भिषक् ।
सर्वस्य द्विगुणं देयं शुद्धमण्डूरचूर्णकम् ॥
गोमूत्रेऽष्टगुणे पक्त्वा सिद्धे शीतलतां गते ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय चोष्णतोयानुपानतः ॥
हलीमकं शोथपाण्डुमूरुस्तम्भञ्च नाशयेत् ।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं सर्वरोगहरः परः ॥
रसायनवरश्चैव बलवर्णाग्निकारकः ॥

लोहभस्म, अभ्रकभस्म और ताम्रभस्म ५-५ तोले; सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, चव, काला जीरा, चीतामूल, हल्दी, दारुहल्दी, निसोत, मानकन्द, इन्द्रजौ, कुटकी, देवदारु, बच और नागर मोथे का चूर्ण १।-१। तोला । इन सब चीजोंसे दो गुना शुद्ध मण्डूरका चूर्ण लेकर उसे आठ गुने गोमूत्रमें पकावें और जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसे ठण्डा करके उसमें उपरोक्त समस्त चीजें मिलाकर (१॥-१॥ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें उष्ण जलके साथ प्रातःकाल सेवन करनेसे हलीमक, शोथ, पाण्डु, ऊरुस्तम्भ, प्लीहा, यकृत् और गुल्मका नाश होता तथा बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है ।

यह एक श्रेष्ठ रसायन (जरा व्याधि नाशक) योग है ।

(४३१९) पाण्डुसूदनरसः (१)

(र. प्र. सु. । अ. ८; र. चं. । पाण्डु.)

सूतं तीक्ष्णकमेव गन्धसहितं भागेन संवर्द्धितम्
पश्चात्खल्वतले विमर्द्य विधिना चूर्णीकृतं गालितम् ।
कूप्यां संविनिवेश्य सुमृदया संलेपितायां पचेत्
यामद्वादशमात्रकं हि सिकतायन्त्रेण वैद्यः सदा ॥
प्रक्षिपेच्च वरशाल्मलीरसं त्रैफलं च गुडवल्लिकाद्रवम् ।
पाचयेच्च मृदुवह्निना दिनं स्वांगशीतलमयं प्रगृह्य च ॥
त्र्यूषणार्द्रकरसेन भावयेत्पाण्डुसूदनरसोऽयमीरितः ।
शुष्कपाण्डुविनिवृत्तिदायको रोगराजहरणः प्रकीर्तितः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, तीक्ष्ण लोह २ भाग और शुद्ध गन्धक ३ भाग लेकर सबकी महीन कज्जली बनावें । तत्पश्चात् उसे कपरमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर उसे १२ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें । इसके बाद जब शीशी स्वांग शीतल हो जाय तो उसमें सेंमलकी छालका रस, त्रिफलेका काथ और गिलोयका स्वरस ६-६ भाग डालकर पुनः १ दिन मन्दाग्नि पर पकावें ।

तदनन्तर शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसमें से औषधको निकालकर उसे त्रिकुटेके क्वाथ और अद्रकके रसकी १-१ भावना देकर (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे पाण्डुरोग नष्ट होता है ।

(४३२०) **पाण्डुसूदनो रसः** (२)

(पञ्चाननवटी)

(भै. र.; र. चं.; र. रा. सुं.; र. सा. सं.; वृ. नि. र. । पाण्डु.; रसें. चिं. म. । अ. ९; र. का. धे.; ध.; र. र. स. । पाण्डु.)

रसं गन्धं मृतं ताम्रं जयपालश्च गुग्गुलुः ।
समांशमाज्यसंयुक्तां गुडिकां कारयेद्भिषक् ॥
एकैकां भक्षयेन्नित्यं पाण्डुशोथप्रणुत्तये ।
शीतलश्च जलश्चाम्लं वर्जयेत्पाण्डुसूदने ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, शुद्ध जमालगोटा और शुद्ध गूगल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बना लें, फिर उसमें अन्य चीजें मिलावें और सबके बराबर घी मिलाकर अच्छी तरह घोटकर (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे पाण्डु और शोथ का नाश होता है।

इसके सेवन कालमें शीतल जल और अम्ल पदार्थोंसे परहेज करें ।

(४३२१) **पाण्डुहारीहरीतकी**

(र. र. स. । अ. १९)

कोरण्टो भृङ्गराजश्च शतावरीपुनर्नवे ।
एते सप्तपला ग्राह्याः प्रत्येकं सूक्ष्मचूर्णिताः ॥
एतत्क्वाथे पचेत्सम्यग्घरीतक्या शतत्रयम् ।
षष्ट्यधिकं ततः शुष्कं गव्यदुग्धेन पाचयेत् ॥
शोषयित्वा शनैर्हृत्वा वटिकाभिः प्रपूरयेत् ।
रसस्य त्रिपलं दत्त्वा गन्धके त्रिपलात्मके ॥
पक्त्वाथ पातयेत्पत्रे चूर्णयित्वा ततः पुनः ।
गुडूचीसत्वं समादाय शुष्कं सप्तपलात्मकम् ॥
चूर्णयित्वा ततः सर्वं मधुना गुटिका किरेत् ।
तास्तु सूत्रे समाबध्वा मधुभाण्डे विनिक्षिपेत् ॥
एकैकां भक्षयेन्नित्यं शुष्कपाण्डुविनाशिनीम् ॥

पीली कटसरैया, भंगरा, शतावर और पुनर्नवा ३५-३५ तोले लेकर सबको बारीक कूटकर १६ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग पानी शेष रहने पर छानकर उसमें ३६० हर्र, डालकर पकावें । जब हर्र उसीज जाएं तो उनको निकाल कर जरा शुष्क कर लें और फिर (४ गुने) गोदुग्धमें पकावें और फिर उन्हें चाकूसे चीरकर सावधानी पूर्वक उनकी गुठलियां निकाल दें। तदनन्तर निम्न लिखित गोलियों में से १-१ गोली प्रत्येक हर्रमें भरकर उस पर कच्चा सूत लपेट कर सबको शहदमें डाल दें।

शुद्ध पारद १५ तोले और शुद्ध गन्धक १५ तोले लेकर दोनोंकी कज्जली करके उसे घृत पुती हुई लोहेकी कढ़ाईमें पिघलाकर विधिवत् पर्पटी बनावें और फिर उसे पीसकर उसमें ३५ तोले गिलोय का सत मिलाकर शहदके साथ घोटकर सबकी ३६० गोलियां बना लें और एक एक गोली १-१ हर्रमें भर दें।

इनमें से नित्य प्रति १-१ हर्र खानेसे शोष और पाण्डुरोग नष्ट होता है।

नोट—उपरोक्त प्रमाणसे बनी हुई गुटिका में लगभग १ माशा कज्जली आती है जो बहुत अधिक है अत एव ४-४ रत्तीकी गोलियां बनानी चाहियें ।

(४३२२) **पाण्डुरिरसः**

(र. रा. सुं.; बृ. नि. र. । पाण्डु.; रसें. चिं. म. । अ. ९)

रसगन्धाभ्रलोहैक्यं पाण्डुरिः पुटितस्त्रिधा ।
कुमार्याक्तश्चतुर्वल्लः पाण्डुकामलपूर्वनुत् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म और लोहभस्म समान भाग लेकर सबको घीकुमार (ग्वारपाठे) के रसमें घोटकर टिकिया बनाकर सुखा लें और शरावसम्पुट में बन्द करके लघुपुटकी आंच दें । इसी प्रकार ग्वारपाठे के रसमें घोटकर तीन पुट दें ।

इसे १२ रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करनेसे पाण्डु और कामला का नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा २ रत्ती ।)

पानीयकुमाररसः

" पानीयवटिका (सिद्धफला) " देखिये ।

(४३२३) **पानीयभक्तवटी** (१)

(वं. से. । रसायन.)

शुद्धौ गन्धरसौ कर्षौ विडङ्गमरिचार्द्रकाः ।
त्रिफलात्रिवृतावह्निः कणा दन्ती पुनर्नवा ॥
स्नुक्क्षीरं मानकुलिशयावाग्ररोगखण्डिकाः ।
प्रत्येकैकं पलं चूर्णमुष्णपानीयकं हविः ॥
अभ्राच्चतुष्पलं चूर्णमेकीकृत्वार्द्रकाम्बुना ।
त्रिफलापयसा भाव्या कोलार्द्धमानकी वटी ॥
भक्तोदकानुपानेन सेव्या वह्निप्रदीपनी ।
अम्लपित्तामवातादीन्हन्ति पयसान्नभोजनम् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक १-१ कर्ष (१।-१। तोला); वायबिडंग, कालीमिर्च, अदरक, हर्र, बहेड़ा, आमला, निसोत, चीतामूल, पीपल, दन्तीमूल, पुनर्नवा (बिसखपरा-साटी) थोहर (सेंड) का दूध, मानकन्द, हड़संघारी, यवक्षार, कूठ और खांड ५-५ तोले तथा अभ्रक भस्म २० तोले लेकर चूर्ण योग्य चीजोंका महीन चूर्ण बनाकर सबको एकत्र मिलाकर उसमें ५ तोले गर्म पानी और ५ तोले घी मिलाकर घोटें तदनन्तर उसे अदरकके रस, त्रिफलेके काथ और दूधकी १-१ भावना देकर आधे आधे तोलेकी गोलियां बना लें ।

इन्हें काञ्जीके साथ सेवन करनेसे अग्नि दीप्त होती और आमवात तथा अम्लपित्तादिका नाश होता है ।

पथ्य—दूध भात ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ माशा तक)

(४३२४) **पानीयभक्तवटी** (२) (मध्यम)

(भै. र. । अम्लपि.; र. र.; र. का. धे.; र. चि. म.; र. सा. सं. । ग्रह.; रसें. चि. म. । अ. ९)

कृष्णाभ्रलोहमलकुष्ठविडङ्गचूर्णं
प्रत्येकमेकपलिकं विधिवद्विधाय ।

चव्य कटुत्रयफलत्रयकेशराज-
दन्तीपयोदचपलाऽनलघण्टकर्णाः ॥
मानोल्वकन्दबृहतीत्रिवृताःसमूर्या-
वर्ताः पुनर्णविकया सहितास्त्वमीषाम् ।
मूलं प्रति प्रतिविशोधितमक्षमेकं
चूर्णं तदर्द्धरसगन्धकमेकसंस्थम् ॥
कृत्वार्द्रकीयरससम्वलितश्च भूयः
सम्पिष्य तस्य वटिका विधिवद्विधेया ।
हन्त्यम्लपित्तमरुचिं ग्रहणीमसाध्यां
दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान् ॥
शूलञ्च पाकजनितं सतताग्निमान्द्यं
सद्यः करोत्युपचयं चिरनष्टवह्नेः ।
कुष्ठानि हन्ति पलितञ्च बलिं विवृद्धां
श्वासञ्च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति ॥
शृङ्गाटबिल्वगुडकञ्चटनारिकेल
दुग्धानि सर्वविदलानि विवर्जयेत्तु ॥

कृष्णाभ्रक भस्म, मण्डूरभस्म, कूठ और बायबिडंगका चूर्ण ५-५ तोले । चव, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, भंगरा, दन्तीमूल, नागरमोथा, पीपल, चीता, घण्टकर्ण, मानकन्द, सूरण (जमीकन्द), कटेली की जड़, निसोत, सूर्यावर्त (हुलहुल) की जड़ और पुनर्नवामूलका वस्त्रपूत महीन चूर्ण १।-१। तोला तथा पारे और गन्धककी कज्जली इन सबसे आधी लेकर सबको एकत्र मिलाकर १ दिन अदरकके रस में घोटकर (४-४ रत्तीकी) गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे अम्लपित्त, अरुचि, कष्टसाध्य संग्रहणी, अर्श, कामला, भगन्दर, शोथ, गुल्म, परिणामशूल, अग्निमांद्य, कुष्ठ, पलित, बलि(शरीरकी झुर्रियां) श्वास, खांसी और पाण्डुका नाश होता तथा जठराग्निकी वृद्धि होती है ।

परहेज---सिंघाड़ा, बेल, गुड़, चौलाई, नारियल, दूध और हर प्रकारकी दालका परित्याग करना चाहिये ।

(४३२९) **पानीयभक्तवटी** (३)

(भै. र.; र. चि.; र. सा. सं.; र. रा. सुं.; र. चं.; वं. से.; र. का. धे. । रसायन.)

त्रिवृता चित्रकं मुस्तं त्रिफला त्र्यूषणं तथा ।
एकैकशो मतो भागस्तदर्धं रसगन्धयोः ॥
लोहाभ्रकविडङ्गानां भागश्च द्विगुणो भवेत् ।
एतत्सकलचूर्णन्तु चूर्णयित्वा विचक्षणः ॥
त्रिफलाया कषायेण गुटिकां कारयेद्भिषक् ।
तत्रैकां भक्षयेत्प्रातर्भक्तवारिपिबेदनु ॥
पक्तिशूलं त्रिदोषोत्थमम्लपित्तं वमिं तथा ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च बस्तिकुक्षिगुदारुजम् ॥
कासं श्वासं तथा कुष्ठं ग्रहणीदोषमामजम् ।
यकृत्प्लीहोदरं गुल्मं यक्ष्माणं ग्रहमेव च ॥
विष्टम्भमामदौर्बल्यमग्निसादं नियच्छति ।
सर्वानेताञ्छमयति भास्करस्तिमिरं यथा ॥

निसोत, चीता, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपल १-१ भाग, शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक आधा आधा भाग तथा लोहभस्म, अभ्रकभस्म और बायबिडंग २-२ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका कपड़छन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन त्रिफलाके क्वाथमें घोटकर (१-१ माशेकी) गोलियां बनावें ।

इनमें से १-१ गोली नित्य प्रति प्रातःकाल कांजी के साथ सेवन करनेसे पक्तिशूल, त्रिदोषज अम्लपित्त, वमन, हृदयशूल, पसलीकी पीड़ा, बस्ति कुक्षि और गुदाका दर्द, खांसी, श्वास, कुष्ठ, आमजन्य ग्रहणी विकार, यकृत्, तिल्ली, उदररोग, यक्ष्मा, विष्टम्भ, आम, दुर्बलता, और अग्निमांद्य का नाश होता है।

(४३२६) **पानीयभक्तवटी** (४)

(च. द. । अग्निमां.)

रसोर्द्धभागिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाभ्रकाः।
भक्तोदकेन सम्मर्द्य कुर्याद् गुञ्जासमां गुटीम् ॥
भक्तोदकानुपानैका सेव्या वह्निप्रदीपनी।
वार्यन्नभोजनं चात्र प्रयोगे सात्म्यमिष्यते ॥

पारद भस्म १ तोला तथा बायबिडंग और कालीमिर्चका चूर्ण एवं अभ्रक भस्म २-२ तोले लेकर सबको १ दिन काञ्जीमें घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इन्हें कांजीके साथ सेवन करनेसे अग्नि प्रदीप्त होती है।

इसके सेवन कालमें मांडयुक्त भात खिलाना चाहिये।

(४३२७) **पानीयभक्तवटी** (५)

(व. से. । रसायना.)

विडङ्गं पिप्पलीमूलं त्रिफलामुनिजं फलम्।
लोहकं गन्धकं चित्रं पलार्द्धं चूर्णितं पृथक् ॥
त्र्यूषणं चूर्णितं ग्राह्यं सार्द्धं द्विपलिकं पृथक्।
अम्लशुद्धाभ्रकपलं कर्षार्धं पारदस्य च ॥
अस्थिसंहारनिर्गुण्डीनागवल्ल्यार्द्रकैः शुभैः।
रसैश्चतुष्पलैरेवं भावयित्वा पृथक् पृथक् ॥
यथाग्नि भक्षयेदेनां वटीमनुपिबेज्जलम्।
वारिभक्तश्च भुञ्जीत कुर्यात्पूर्वोक्तकान्गुणान् ॥

बायबिडंग, पीपलामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हिंगोटके फलकी गिरी, लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और चीतामूल २॥-२॥ तोले तथा सोंठ, मिर्च और पीपल २॥-२॥ पल (प्रत्येक १२॥ तोले); अम्लपदार्थों के योगसे मारा हुवा अभ्रक ५ तोले और शुद्ध पारा ७॥ माशे लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओष-धियोंका चूर्ण मिलाकर उसे क्रमशः हड़जोड़ी, संभालु, पान, और अदरकके २०-२० तोले रस में पृथक् पृथक् घोटें। तदनन्तर (१-१ माशेकी) गोलियां बनाकर सुरक्षित रक्खें।

इन्हें पानीके साथ सेवन करनेसे आमवात, ग्रहणी, गुल्म और शूल नष्ट होता है।

इसके सेवनकालमें मांड सहित भात खिलाना चाहिये।

(४३२८) **पानीयभक्तवटी** (६)

(व. से. । रसायना.)

त्रिफलात्रिकटुकमुस्तकविडङ्गभल्लातककेशराजानाम्।
करिवर्त्तच्छददन्ती तण्डुलिका पुनर्नवा त्रिवृता॥
चित्रद्विजीरकचूर्णान्येकत्र कर्षमितानि कार्य्याणि।
गन्धशिलाकर्षार्धं गगनपलं शोधितं विधिवत् ॥
अम्लशुक्तभक्तपयसि पक्त्वा कुर्यादर्धमाषिकां वटिकाम्।
अम्लं वार्य्यनुपेयं कार्य्यं तदनुविहितं पथ्यम् ॥

कफातिदुष्टवह्नेर्नातः परमत्र भेषजं दृष्टम् ।
हन्यात्तदामवातं ग्रहणीगदगुल्मशूलरुजः ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, बायबिड़ंग, शुद्ध भिलावा, कालाभंगरा, गजपीपल, तेजपात, दन्तीमूल, कांटे वाली चौलाई-की जड़, पुनर्नवामूल (साठी), निसोत, चीता-मूल और दोनों जीरे । इन सबका कपड़छन चूर्ण १–१ कर्ष (१।–१। तोला) तथा शुद्ध गन्धक का चूर्ण आधा कर्ष एवं अभ्रक–भस्म ५ तोले लेकर सबको ४ गुने खट्टे सिरके या चावलोंकी कांजीमें पकावें । जब पाक तैयार हो जाय तो ठंडा करके आधे आधे माशेकी गोलियां बना लें ।

इसे काञ्जीके साथ सेवन करना चाहिये । कफसे अत्यन्त दुष्ट जठराग्निके लिये इससे उत्तम अन्य कोई भी औषध नहीं है ।

इसके अतिरिक्त यह संग्रहणी, आमवात, गुल्म और शूलको भी नष्ट करती है ।

(४३२९) **पानीयभक्तवटी** (७)
(व. से. । रसायना.)

ग्रन्थिकं त्रिफला चित्रं त्रिवृल्लोहितकुम्भकम् ।
एषां कर्षार्द्धकं चूर्णं प्रत्येकं तावदुन्मितम् ॥
त्र्यूषणं लवणं पाक्यं विडङ्गं कार्षिकं पृथक् ।
पलं कृष्णाभ्रकञ्चैवमन्तरदग्ध्वा विनिःक्षिपेत् ॥
शिलायां पेषणं कृत्वा सर्वमेकत्र योजयेत् ।
शिखर्यार्द्रकनिर्गुण्डीनागवल्ल्यस्थिसंहृता ॥
रसैर्द्विपलिकैरेषां भावयित्वाऽक्षसम्मिताम् ।
कृत्वैकां भक्षयेत्प्रातरम्लवारि पिबेदनु ॥
वातश्लेष्मामयान् हन्ति वह्निसादं ज्वरं वमिम् ।
आमवातं जरत्पित्तं वारिभक्तवटी मता ॥

पीपलामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीतामूल, निसोत और पद्मगुग्गुलु (गूगल भेद, जिसका रंग लाल माणिक्यके समान होता है) आधा आधा कर्ष; त्रिकुटा (समान-भाग-मिश्रित सोंठ, मिर्च और पीपल) ३॥ कर्ष, सेंधा नमक, सञ्चल (काला नमक) और बायबिड़ंग १–१ कर्ष (१।–१। तोला) और सम्पुटमें भस्म किया हुवा अभ्रक ५ तोले लेकर सबका अत्यन्त महीन चूर्ण बनाकर उसे चिरचिटा (अपामार्ग), अदरक, संभालू, नागरवेलके पान और हड़जोड़ीके १०–१० तोले रसमें पृथक् पृथक् घोटकर कमलगट्टेके बराबर गोलियां बना लें।

इन्हें प्रातःकाल काञ्जीके साथ सेवन करनेसे वातकफज रोग, अग्निमांद्य, ज्वर, वमन, आमवात और परिणामशूलका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा ४ रत्ती ।)

(४३३०) **पानीयभक्तवटी** (८)
(व. से. । रसायना.)

मानकन्दोऽश्वकर्णश्च त्रिवृता मुस्तकं तुणिः ।
त्रिकटु त्रिफला भृङ्गमपामार्गश्च दाडिमम् ॥
तुम्बीबृहतिका जातीद्वयश्च शतपुष्पिका ।
सूर्यावर्त्तस्तालमूली चूर्णमेषाञ्च कार्षिकम् ॥
कर्षद्वयं विडङ्गानां बलेः पादोनकर्षकम् ।
गुडूच्यभ्रकमण्डूरान् प्रत्येकं वेदकार्षिकान् ॥
सुचूर्णमाभ्रकं वस्त्रपातितं काञ्जिके क्षिपेत् ।
अम्ले पयसि वा पश्चादुद्धरेत्पञ्चमेऽहनि ॥
निर्वापयेच्च मण्डूरं त्रिफलाया रसे शुभे ।
सूर्यावर्तरसे वाऽथ चोभयत्र च वा भिषक् ॥

ततः पुटानि देयानि वक्ष्यमाणैर्महौषधैः ।
वंशपत्ररसैः पूर्वं पुटयेदातपे भिषक् ॥
मण्डूकपर्णी चित्रश्च दन्तीरसपुनर्नवे ।
त्रिवृता तालपटोलं चास्थिसंहार एव च ॥
आर्द्रकं तालमूली च सूर्य्यावर्तश्च शिम्बिका ।
केशराजो भृङ्गराजः शतमूली च मुस्तकम् ॥
ततः प्रक्षिप्य चूर्णानि हिङ्गुकर्षचतुष्टयम् ।
सप्तधा पेषयेद्गाढं त्रिफलाक्काथवारिणा ॥
तेनैव गुटिकां कुर्य्यान्माषैकैकप्रमाणिकाम् ।
वटिकाद्वितयं भक्ष्यमम्लवार्य्यनुपानतः ॥
वयोवस्थामग्निबलं व्याधिं प्रकृतिमेव च ।
दृष्ट्वा मात्रां प्रयुञ्जीत यथाक्षेपं प्रदीयते ॥
ग्रहणीमम्लपित्तञ्च पित्तश्लेष्माणमेव च ।
अर्शांसि वह्निसादश्च प्लीहानमरुचिन्तथा ॥
वटिकेयं निहन्त्याशु नात्र कार्य्या विचारणा ॥

मानकन्द, अश्वकर्णपलाशकी छाल, निसोत, नागरमोथा, तुनकी छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, भंगरा, चिरचिटा (अपामार्ग), अनारदाना, तुम्बी, कटैली, जावित्री, जायफल, सैांफ, हुरहुर और तालमूलीका चूर्ण १-१ कर्ष (१।-१। तोला), बायबिडंगका चूर्ण २ कर्ष, शुद्ध गन्धक पौन कर्ष तथा गिलोयका चूर्ण ४ कर्ष लेकर सबको एकत्र मिलावें ।

तदनन्तर ४ कर्ष शुद्ध अभ्रकके कपड़छन चूर्णको खट्टी कांजी अथवा दूधमें डाल दें और पांचवें दिन निकाल लें ।

इसी प्रकार शुद्ध मण्डूरके ४ कर्ष चूर्णको तपा तपाकर (७ बार) त्रिफलाके क्काथ अथवा हुरहुरके स्वरस या इन दोनोंमें बुझावें ।

तदनन्तर उपरोक्त अभ्रक और मण्डूरको एकत्र मिलाकर उन्हें वंशपत्री, मण्डूकपर्णी, (ब्राह्मी), चीता, दन्तीमूल, पुनर्नवा, निसोत, ताड़, पटोल, अस्थिसंहार, अद्रक, तालमूली, हुरहुर, सेम, काला-भंगरा, भंगरा, शतावर और नागरमोथेमें से जिनके स्वरस मिल सकें उनके स्वरसकी और शेषके काथोंकी धूपमें पृथक् पृथक् १-१ भावना दें ।

इसके बाद इसमें पूर्वोक्त ओषधियोंका चूर्ण तथा ५ तोले भुनी हुई हींग मिलाकर सबको त्रिफलाके काथकी सात भावना देकर १-१ माशे की गोलियां बना लें ।

इनमें से २-२ गोली काञ्जीके साथ सेवन करनेसे ग्रहणीरोग, अम्लपित्त, शीतपित्त, अर्श, अग्निमांद्य, तिल्ली और अरुचिका नाश होता है ।

इसकी मात्राका निर्णय रोगीकी आयु, रोगकी दशा और अग्नि, बल तथा प्रकृति आदिका विचार करके करना चाहिये ।

नोट—उपरोक्त विधिसे अभ्रक कच्चा रहता है इस लिये अभ्रक और मण्डूरके चूर्णको मिलाकर बंशपत्री आदिके रसोंमें घोट घोटकर पृथक् पृथक् १-१ गज पुट लगा देनी चाहिये ।

(४३३१) पानीयवटिका (१)

(र. रा. सुं.; भै. र. । ज्वर.)

रसमाषकचत्वारि इष्टकागुण्डके ग्रहम् ।
शोधयित्वा ततः शोध्यं तीक्ष्णपर्णे तथार्द्रके ॥
स्वर्णधुस्तूरसत्वे च वृद्धदारद्रवे तथा ।
कन्यकानिजसत्वे च रसशोधनमुत्तमम् ॥
गन्धकं रसतुल्यन्तु प्रक्षाल्य तण्डुलाम्बुना ।
कृत्वा तैलसमं दर्व्यां निर्वाप्य चित्रकद्रवे ॥

द्वाभ्यां कज्जलिकां कृत्वा लौहचूर्णस्य माषकम् ।
सुवर्णमाक्षिकमपि तत्र लौहसमं ददेत् ॥
कृत्वा कण्टकवेध्यन्तु ताम्रं कज्जललेपितम् ।
मुहूर्तं धम्यतस्ताम्रं द्रुतं चूर्णत्वमाप्नुयात् ॥
एकीकृत्य तु तत्सर्वं ततः प्रस्तरभाजने ।
मर्दयेत्ताम्रदण्डेन दत्त्वा चैषां निजद्रवम् ॥
प्रथमे केशराजश्च द्वितीये ग्रीष्मसुन्दरः ।
तृतीये भृङ्गराजश्च चतुर्थे भेकपर्णिका ॥
पञ्चमे च निसुन्दारः षष्ठे च रसपूर्त्तिका ।
सप्तमे पारिभद्रश्च अष्टमे रक्तचित्रकः ॥
शक्राशनश्च नवमे दशमे काकमाचिका ।
एकादशे तथा नीला द्वादशे हस्तिशुण्डका ॥
अमीषामौषधानाञ्च प्रत्येकन्तु पलद्रवम् ।
मर्दयेत्तु प्रयत्नेन द्वादशाहेन साधकः ॥
ततः पारदमानन्तु दत्त्वा त्रिकटुगुण्डकम् ।
वटिकां राजिकातुल्यां छायाशुष्कां समाचरेत् ॥
ततः शम्बूकजे पात्रे कर्त्तव्या वटिका त्वियम् ।
शरावे शङ्खपात्रे वा कृत्वा सलिलगोलितम् ॥
अत्यन्तदोषदुष्टाय ज्ञानशून्याय रोगिणे ।
ऊर्ध्वयोनिं समभ्यर्च्य प्रदद्याद्वटिकाद्वयम् ॥
ढक्कयेत्तं ततः पश्चान्नरं स्थूलपटादिभिः ।
मलमूत्रागमात्सद्यः स साध्यो भवति द्रुतम् ॥
दध्यन्नन्तु ततो दद्यात् पिबेत् वारि यथेच्छया ।
दद्याद्वातहरं तैलमभ्यङ्गाय सदैव हि ॥
चिरज्वरे पिबेद्वारि पञ्चमूलीप्रसाधितम् ।
ग्रहण्यां रक्तपित्ते च पिबेदतिविषां गदी ॥
पिबेत्पर्पटजं वारि घोरे कम्पज्वरे तथा ।
तथा ज्वरातिसारे च जीरकस्य जलं पिबेत् ॥
मन्दाग्नौ कामलायां च संग्रहे ग्रहणीगदे ।
कासे श्वासे सदा कार्या **पानीयवटिका** त्वियम् ॥

५ माशे साधारण शुद्ध पारदको प्रथम ईंटके चूर्ण के साथ अच्छी तरह घोटें और फिर उसे उससे अलग करके १-१ दिन कमरख, अदरक, धतूरा, बिधारा और घृतकुमारी (ग्वारपाठा)के रसमें पृथक् पृथक् घोटकर कांजीसे धो डालें।

एवं ५ माशे शुद्ध गन्धकको चावलोंके पानी में धोकर उसे करछीमें पिघलाकर चीतेके क्वाथमें बुझावें।

तदनन्तर इस प्रकार शुद्ध पारद और गन्धक की कज्जली बनाकर उसमें १-१ माशा शुद्ध लोह और स्वर्ण माक्षिकका महीन चूर्ण मिलाकर नीबू आदिके रसमें घोटकर उसे ५ माशे शुद्ध ताम्रके कण्टकवेधी पत्रों पर लेप कर दें और उन्हें दृढ़ मूषामें बन्द करके तीव्राग्निमें धमावें। इससे थोड़े समयमें ही ताम्रकी भस्म हो जायगी।

इस भस्मको पत्थरके खरलमें शुद्ध ताम्बेकी मूसलीसे काला भंगरा, गूमा, भंगरा, मण्डूकपर्णी, संभालु, मालकंगुनी, पारिभद्र (फरहद), लालचीता, कुड़ा, मकोय, नील और हाथीसुण्डीके ५-५ तोले स्वरसमें क्रमशः १-१ दिन घोटें। तत्पश्चात् उसमें ५ माशे त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर राईके बराबर गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

जब सन्निपात ज्वरमें दोषों की अधिकताके कारण रोगी संज्ञा हीन हो तब इनमेंसे २ गोली शंख या मिट्टीके कोरे शरावमें शीतल जलमें घिस-

कर पिला दें और उसे गर्म कपड़ा उढ़ाकर लिटा दें ।

यदि यह औषध खिलानेके बाद रोगीको मलमूत्र आ जाय तो रोगको साध्य समझना चाहिये अन्यथा नहीं ।

मलमूत्र आनेके पश्चात् यथोचित समयपर दही भातका पथ्य और रोगीकी इच्छानुसार जल पिलाना चाहिये । तथा नित्य किसी वातनाशक तैलकी मालिश करानी चाहिये ।

जीर्णज्वरमें वृहत्पञ्चमूलसे पका हुवा पानी; ग्रहणी रोगमें मलमार्गसे रक्त जाता हो तो अतीस का क्वाथ, घोर कम्पज्वरमें पित्तपापड़ेका पानी और ज्वरातिसारमें जीरेका पानी पिलाना चाहिये ।

यह वटी मन्दाग्नि, कामला, संग्रहणी, खांसी, और श्वासको भी नष्ट करती है ।

(४३३२) **पानीयवटिका** (२) (सिद्धफला)

(र. र.; र. रा. सुं.; भै. र. । ज्वरा.)

अनाथनाथो जगदेकनाथः
श्रीलोकनाथः प्रथमः प्रसन्नः ।
जगाद पानीयवटीं सुपूर्वी
तामेव वक्ष्यामि गुरुप्रसादात् ॥
जयार्कस्वरसश्चैव-निर्गुण्डी वासकं तथा ।
वाटयालकं करञ्जश्च सूर्यावर्त्तकचित्रकौ ॥
ब्राह्मी वनसर्षपश्च भृङ्गराजं विनिक्षिपेत् ।
दन्ती च त्रिवृता चैव तथारग्वधपत्रकम् ॥
सहदेवामरं भण्टी तथा त्रिपुरभण्टिका ।
मण्डूकपर्णी पिप्पल्यौ द्रोणपुष्पकवायसी ॥
गुञ्जाकिनी केशराजस्तथा योजनमल्लिका ।
आसारणेति विख्यातो धुस्तूरकनकस्तथा ॥
त्रैलोक्यविजया चैव तथा श्वेतापराजिता ।
प्रत्येकं कार्षिकं चैव रसमाकृष्य भाजने ॥
एकैकश्च रसं दत्त्वा मर्दयेल्लोहदण्डतः ।
चण्डातपे च संशोष्य क्षीरं तत्र पुनः क्षिपेत् ॥
स्नुहीक्षीरं चार्कदुग्धं वटदुग्धं तथैव च ।
प्रत्येकं कार्षिकं दत्त्वा मर्दयेच्च पुनः पुनः ॥
सुमर्दितश्च तं ज्ञात्वा यदा पिण्डत्वमागतम् ।
द्रव्याण्येतानि संचूर्ण्य वस्त्रपूतानि कारयेत् ॥
दग्धहीरं चातिविषा कोचिला चाभ्रकं तथा ।
पारदं शोधितश्चैव गन्धकं विषमाधुरम् ॥
हरितालं विषश्चैव माक्षिकश्च मनःशिला ।
प्रत्येकश्च चतुर्माषं सर्वं चूर्णीकृतश्च तत् ॥
प्रक्षिप्य मर्दयेत् सर्वं शोधयित्वा पुनः पुनः ।
सम्मर्दितं च तं दृष्ट्वा चाङ्गेरीस्वरसेन तु ॥
उत्थाप्य भेषजं दृष्ट्वा यदा पिण्डत्वमागतम् ।
तिलप्रमाणा गुटिकाः कारयेन्मतिमान् भिषक् ॥
त्रिदोषज्वरितो वैद्यमुक्तोऽपि बहुसम्मतः ।
लङ्घनैर्वालुकास्वेदैः प्रक्रान्तो दीनदर्शनः ॥
सम्पूज्य करुणाधारं प्रणम्य च खसर्पणम् ।
पलेन वारिणा घृष्ट्वा चतस्रो वटिकाः पिबेत् ॥
पीतेतद्भेषजं पश्चाद्वस्त्रैराच्छादयेन्नरम् ।
रसलग्नं वपुर्ज्ञात्वा दद्याद्वारि सुशीतलम् ॥
शरावप्रमितं वारि पातव्यश्च पुनः पुनः ।
सन्निपातज्वरश्चैव दाहश्चैव सुदारुणम् ॥
कासश्वासश्च हिक्काश्च विड्ग्रहं चाश्मरीं जयेत् ।
मूत्ररोधविबन्धे तु दातव्यं क्षीरसंयुतम् ॥
पञ्चतृणकृतं क्वाथं दातव्यश्च पुनः पुनः ।
पानीयवटिका ह्येषा लोकनाथेन निर्मिता ॥
लोकानामुपकाराय सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥

अरनी, आक, संभालू, बासा, नागबला, करञ्ज, हुलहुल, चीता, ब्राह्मी, बनसरसों, भंगरा, दन्ती, निसोत, अमलतास, तेजपात, सहदेवी, अमरकन्द, सिरस, रुद्रजटा, मण्डूकपर्णी, पीपल, गजपीपल, गूमा, मकोय (काकमाची), गुञ्जा, कालाभंगरा, योजनमल्लिका (हाफरमाली), आसारण, धतूरा, नागकेसर, भांग और सफेद कोयल; इनमें से प्रत्येकका स्वरस १।-१। तोला लेकर क्रमशः १-१ रसको पत्थरके खरलमें लोहेकी मूसलीसे घोटें; जब एकरस घोटते घोटते गाढ़ा हो जाय तो उसे तेज़ धूपमें सुखाकर उसमें दूसरा रस डाल कर घोटें । अन्तमें (सब रसोंके सूख जाने पर) उसमें १।-१। तोला सेंड (थूहर) का दूध, आकका दूध और बड़का दूध एक एक करके डालकर घोटें। जब लुगदी सी बन जाय तो उसमें हीरेकी भस्म, अतीसका चूर्ण, शुद्ध कुचलेका चूर्ण, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद और गन्धक, (दोनोंकी पृथक् कज्जली बनाकर), मीठा विष (शुद्ध बछनागका चूर्ण), शुद्ध हरतालका अत्यन्त महीन चूर्ण, सर्पविष, सोनामक्खी भस्म और शुद्ध मनसिलका चूर्ण ५-५ माशे मिलाकर अच्छी तरह घोटें और फिर उसे चांगेरी (चूके) के रसमें घोटकर तिलके समान गोलियां बना लें ।

सन्निपातके जिस रोगीको अनेक वैद्य अनेक प्रकारके उपचार करके जवाब दे चुके हों उसको भी इसकी ४ गोली शीतल जलके साथ देकर गर्म कपड़ा उढ़ाकर लिटा देना चाहिये और प्यासमें शीतल जल देना चाहिये । इससे पसीना आकर ज्वर नष्ट हो जाता है । इसके अतिरिक्त ये गोलियां सन्निपात ज्वरकी घोर दाह, खांसी, श्वास, हिक्का (हिचकी), मलावरोध, अश्मरी और मूत्राघात को भी नष्ट करती हैं ।

मूत्राघातमें इन्हें दूधके साथ देना और बार बार तृणपञ्चमूलका क्वाथ पिलाना चाहिये ।

पापरोगान्तको रसः

(पापाङ्कयोगः)

(र. चं. । क्षुद्ररो., रसें. चिं. म. । अ. ९)

दुर्लभरस ३२१६ देखिये ।

(४३३३) पारदगुटिका

(र. र. रसाय. ख. । उपदे. ७)

कृष्णधत्तूरतैलेन पारदं घर्षयेद्दिनम् ।
त्रिलोहैर्वेष्टितं बद्धं तत्कट्यां वीर्यधारकम् ।।

शुद्ध पारदको एक दिन काले धतूरेके तैलमें घोटें फिर उसमें समान भाग त्रिलोह (स्वर्ण, चांदी और ताम्र) का बारीक चूर्ण मिलाकर घोटकर गोली बनावें ।

इसे कमरमें बांधनेसे वीर्यस्तम्भन होता है ।

(४३३४) पारदद्रुतिः

(र. का. धे. । गुल्मा. अ. २१)

यूनो नरस्य केशांस्तु विमृद्योपलया धिया ।
निर्मलीकृत्य नीरेण सूक्ष्मसूक्ष्मान्हि खण्डकान् ।।
कृत्वा शरावमध्ये च स्थापयेदेकरात्रकम् ।
नीहारे सम्पुटीकृत्य मृदाधश्छिद्रसंयुतम् ।।
आकाशयन्त्रके वह्निं कुक्कुटेन पुटेन तु ।
दत्त्वा तच्छिद्रतो बिन्दूञ्छ्रवेत पीतसुलोहितान् ।।
गृह्णीयान्न च तान्कृशान्केशतैलमितीरितम् ।

तत्तैलमर्धसेहुण्डक्षीरेण परिमृद्य च ॥
तद्यन्त्रेणैव सङ्गृह्य तुर्यांशं नवसादरम् ।
सम्मर्द्य तेन संलिप्य काचसम्पुटकान्तरम् ॥
पारदं च विमृद्नीयाद्यामद्वितयकावधि ।
रुद्ध्वा सम्पुटके तस्मिंस्स्थापयेद्गर्भगर्तके ॥
सद्यो युवाश्वमलके संरुध्य दिवसत्रयम् ।
सञ्चित्याजशकृत्सप्त दिनान्येवं स्थितिर्भवेत् ॥
अष्टमे दिवसे तत्तु गृह्णीयाद्भिषजां वरः ।
स्वच्छा सलिलरूपा सा पारदस्य द्रुतिर्भवेत् ॥
गुञ्जा तुरीयभागेन यथारोगानुपानतः ।
सर्वरोगहरी ख्याता शूलगुल्मादिकान्गदान् ॥
क्षिप्रं विनाशयत्येव शङ्करोक्तमितीरितम् ॥

जवान मनुष्यके बालोंको थोड़ी देर बालू रेतके साथ मलकर पानीसे धो डालें । इससे वह स्वच्छ हो जायंगे । तत्पश्चात् उन्हें कैंचीसे काटकर बारीक कर लें । उन्हे एक शरावेमें डालकर रात-भर ओसमें रक्खा रहने दें और दूसरे दिन उस शरावकी तलीमें थोड़ेसे बारीक बारीक छेद कर दें और उसके ऊपर दूसरा शराव ढककर दोनोंके जोड़को अच्छी तरह बन्द करके सुखा लें । तद-नन्तर मिट्टीके एक मजबूत कूंडेकी तलीमें छेद करके उसमें उपरोक्त सम्पुट रख दें और उसे चूल्हे पर रखकर कूंडे में अरने उपले भरकर आग लगा दें । इस क्रियासे कूंडेके छेदमेंसे पहिले सफेद रंगका फिर पीला और फिर लाल रंगका प्रवाही टपकेगा । उसे कांच या चीनीके पात्रमें इकट्ठा कर लें । अन्तमें जब काले रंगकी बूंदें टपकने लगें तो उन्हे छोड़ दें । यह प्रवाही "केशतैल" है ।

इस तैलमें इससे आधा सेंड (सेहुंड-थूहर) का दूध मिलाकर घोटें और फिर पूर्वोक्त विधिसे इसका तैल निकालें । अब इस तेलमें इसका चौथा भाग नसादर मिलाकर अच्छी तरह घोटें और कांचके खरलमें उसका लेप करदें । इस खरलमें पारद डालकर उसे दो पहर तक कांचकी या चीनीकी मूसलीसे खरल करें । इसके पश्चात् उस खरलपर उतनाही बड़ा दूसरा कांच का खरल उलटा करके ढक दें और दोनोंके जोड़को अच्छी तरह बन्द कर दें । तदनन्तर एक अच्छा गहरा गढ़ा खोदकर उसमें आधे तक जवान घोड़ेकी ताज़ी लीद भरवा कर उसपर यह कांचका सम्पुट रख दें और उसके ऊपर भी लीद डलवाकर गढ़ेको भर दें । एवं ३ दिन पश्चात् उसमें से वह लीद निकलवाकर उसकी जगह बकरीकी मींगनी भरवा दें और उसे सात दिन तक बन्द रहने दें । तथा आठवें रोज़ गढ़ेमें से खरलको निकालकर उसे सावधानी पूर्वक खोलकर उसमें से पानीके समान द्रुत पारदको निकाल कर सुर-क्षित रक्खें ।

इसमें से चौथाई रत्ती भर दवा यथोचित अनुपानके साथ देनेसे शूल गुल्मादि समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(४३३५) पारदबुभुक्षाविधिः (१)

(रसायनसार)

हालाहलो ब्रह्मसुतः प्रदीपः
हारिद्रकः शृङ्गिकवत्सनाभौ ।
सौराष्ट्रिकः सक्तुककालकूटा-
वेतद्यथालाभविषेषु सूतम् ॥

सम्मर्द्य सम्मर्द्य पृथक्स्थितेषु
सप्ताथवा त्रीण्डमरूकयन्त्रे ।
उत्थाप्य चोत्थाप्य पुनःपुनस्तं
क्षाराम्लवर्गे परिपाचयेत ॥
क्षाराम्लवर्गैर्विषमष्टमांशं
सूते प्रदायोत च षोडशांशम् ।
मर्देद्दृश्यावधि सूतराजं
शुष्के द्रवे पात्यमिमं वदन्ति ॥
वारांश्च सप्तोपविषेषु मर्दे-
त्पृथक्पृथक् चास्य बुभुक्षणार्थम् ।
स्नुह्यर्कमत्तौ हलिनी हयारि-
र्गुञ्जाहिफेनोऽनु विषाणि सप्त ॥
सम्मर्दितं तं गरले तु पश्चा-
दुत्थापयेदुत्थितियन्त्रकेण ।
क्षाराम्लकैर्जागरितोऽथ जात
वक्त्रः क्षमोऽसौ कवलाय सूतः ॥
शङ्खद्रुटङ्कप्रतिसारणीयाः
पानीयसंज्ञो नवसादरोपि ।
गवादिमूत्रोद्भवधातुशुद्धि-
क्षारास्तथान्ये मुखयन्ति सूतम् ॥
ऐरावताम्लातकबीजपूर
जम्बीरिकातिन्तिडिनिम्बुचुक्राः ।
आम्राम्लसारौ करमर्दकाद्याः
श्रीसूतराजं खलु बोधयन्ति ॥
औदर्यवह्निः खलुमन्दतायां
ग्रासो गृहीतो न जरां यथैति ।
सम्यक्फलं यच्छति वा न किन्तु
स्वयं स वान्त्यादिगतैर्निरेति ॥
सुप्तो यथा जातबुभुक्षकोपि
ग्रासं ग्रहीतुं क्षमते न यद्वत् ।
संजाग्रदप्युस्तरुचिर्मनुष्यो
गृह्णन्न दृष्टः कवलं च यद्वत् ॥
तद्वच्च सूतः परिपक्ष्यमाणो
ग्रासं पुरातः क्षुधितो विधेयः ।
उन्निद्रतायै रुचये च सूतः
संस्वेदनीयो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥
दोषापहत्याविव पञ्चकर्मा-
ण्यूर्द्ध्वाधरादीनि यथा क्रियन्ते ।
तथोर्द्ध्वपातादिविधिश्च सूते
संस्कारनाम्ना कथितो मुनीन्द्रैः ॥
सम्मर्दनं चाप्युभयत्र तुल्यं
तुल्यं परीपाकविधानकं च ।
कर्मानुसारेण वियोगयोगौ
कर्मण्यशक्तेर्नरसूतयोश्च ॥

पारदकी बुभुक्षाविधि—

अर्थ—हालाहल, ब्रह्मपुत्र, प्रदीपन, हलदिया, सींगिया, वछनाभ, सौराष्ट्रिक, सक्तुक, कालकूट; इन नौ विषोंमेंसे प्रत्येकमें सात सात बार अथवा तीन २ बार शुद्धपारदको घोट घोटकर (ताजे-उग्र वीर्य विष मिल जांय तो तीन तीन बार घोटनाही पर्याप्तहै, और यदि पुराने मन्दवीर्य विष मिलें तो सात सात बार घोटना चाहिये) डमरुयन्त्रमें बारंबार उड़ाता जाय और क्षारवर्ग तथा अम्लवर्गमें दोला-यन्त्रसे स्वेदन करता जाय। यहां पर मर्दन-करनेकी ऐसी पद्धति है कि यदि [illegible] सेर पारद होय तो उग्रविष अष्टमांश ([illegible]) [illegible]

मन्दवीर्य चतुर्थांश (आधासेर) डाले । और क्षार तथा अम्लका पानी डालकर तबतक घोटे कि जब तक पारद दीखना बन्द न हो जाय और द्रवपदार्थ न सूख जाय फिर उसको डमरुयन्त्रमें उड़ाने योग्य समझे । इस विधिसे नौ विषोंमें और सात उप-विषोंमें ६३ बार पारदको घोटना पड़ता है और तिरसठ बार ही डमरुयन्त्रमें उड़ाना पड़ता है तथा तिरसठ बार ही दोलायन्त्रमें स्वेदन करना होता है । परन्तु इतने विष तो मुझे प्राप्त हुए नहीं थे किन्तु वछनाभ, सींगिया, और हलदिया बस ये ही तीन स्थावर विष मिले थे इनही में तिरसठ बार घोट-घोटकर उक्त संख्या समाप्त करनी पड़ी थी । मैंने नौ विषोंको इस वास्ते लिख दिया है कि शायद किसी वैद्यराजको अन्य विष भी प्राप्त हो जायं तो केवल तीन ही विषोंमें घोटनेकी क्या जरूरत है ? बाद सात उपविषोंमें भी पूर्ववत् क्षाराम्ल योगसे सात सात बार घोटे, और प्रत्येक बार डमरूयन्त्रमें उड़ा उड़ाकर स्वेदन करता रहे; जिसमें पारदमें बुभुक्षा उत्पन्न होय । उपविषोंके ये नाम हैं–थूहरका दूध, आकका दूध, धतूरेकी जड़, कलिहारी, कनेरकी जड़, चिरमिठी (घूंघची) की जड़ या बीज, और अफीम, इनमें कोई चीज ऐसी नहीं है जो नहीं मिले । इतनी क्रियाके बाद सर्पके विष और काञ्जी में घोटकर डमरूय-न्त्रमें रखकर उड़ाले, और क्षाराम्लमें स्वेदन करले तो सुप्तोत्थित मनुष्यकी तरह पारद अति बुभुक्षित होकर ग्रासग्रहणके लिये समर्थ होता है । सर्पका विष सपेरांसे मिल सक्ता है । वे लोग ऐसी होशि-यारीसे सर्पके गलेसे विषकी थैली को निकाल देते हैं जिससे सर्पभी नहीं मरे और विषभी निकल आवे । मुझे भी उन ही लोगोंसे प्राप्त हुआ था । शङ्खद्राव, सुहागा, प्रतिसारणीय और पानीयक्षार[१], और सुवर्णादि समस्त धातुओंके शोधनेमें जिन जिन औषधियोंके स्वरसादि निकाले गये हैं उनका क्षार[२], सैन्धवादि सर्वलवण भी क्षारके अन्तर्गत ही हैं । इनमें पारदको घोटने या स्वेदित करनेसे ग्रास ग्रहण करनेके लिये पारदके मुख (रुचि) हो जाता है और नारङ्गी, अम्बाड़ा (अमड़ा–जिनका अचार डाला जाता है मोरछलीके समान छोटेछोटे फल होते हैं), बिजौरानीबू, जमीरीनीबू, कागजीनीबू, चूका, कच्चे आम, अमलबेंत (जिसके रस्सोंके समान बटे हुए बाजारमें मिलते हैं) और करौंदा, इत्यादि अम्ल-वर्गकी कांजीमें पारदका मर्दन स्वेदन करनेसे पारद ग्रास ग्रहण करने के लिये जागरुक हो जाता है । जैसा कि "क्षारामुखकराः सर्वे सर्वे ह्यम्लाः प्रबोधकाः" पारदके ग्रास ग्रहण करनेमें बुभुक्षा, जागरण, मुखीकरण, कारण हैं इस बातको युक्तियोंसे सिद्ध करता हूं कि–जैसे जो मनुष्य मन्दाग्नि है अर्थात् जिसको भूख नहीं लगी है उसको ग्रास (भोजन) कराया जाय तो वह पचता नहीं और अपना फल प्रदान (बलवर्द्धनादि) भी यथार्थ रूपसे नहीं कर सक्ता किन्तु वमन रेच-नके द्वारा स्वयं कच्चे का कच्चा ही निकल जाता है और जैसे कोई मनुष्य भूखा भी

१–इन दोनों क्षारोंकी विधि "पकारादि मिश्र प्रकरण" में देखिये ।

२–क्काथादि छान लेनेके बाद बचे हुवे फोकों को जमा करके सुखाकर उनका क्षार बना लिया जाता है ।

है पर सुप्त (सोया हुआ) है, तो भी भोजनमें समर्थ नहीं होता। तथा कोई मनुष्य भूखा भी है और जग भी रहा है परन्तु उसको मुखीकरण (अन्नमें रुचि) नहीं है तो उस हालत में भी वह भोजन नहीं करता अर्थात् जबरदस्तीसे उसे भोजन दिया जाय तो वमनादि द्वारा निकल जायगा। तात्पर्य यह हुआ कि बुभुक्षा जागरण रुचि ये तीनों ग्रास ग्रहणमें कारण हैं तैसे ही पारद भी विषोपविषके योगसे बुभुक्षित, क्षारोंके योगसे रुचिमान्, अम्लवर्गके योगसे जागरुक होकर ग्रासको पचा सक्ता है। इसी लिये महर्षियोंने पारदके बुभुक्षादि संस्कार कहे हैं। अर्थात् जो वैद्य परिश्रम और द्रव्यके लोभसे पारदके बुभुक्षादि संस्कार नहीं करके स्वर्णग्रास देकर चन्द्रोदय रस बनाते हैं, वे पूर्णफलके भागी इस लिये नहीं हो सक्ते कि चन्द्रोदयपाक करते समय सम्पूर्ण सुवर्ण शीशीके तलभागमें रह जाता है और सुवर्णसिन्दूर शीशीके गले पर जा लगता है। जो ग्रास पचनेको दिया गया है वह जब नहीं पचकर निकल गया तो चन्द्रोदय प्रबलशक्तिक कैसे हो सक्ता है? और जैसे कफदोष के नाशार्थ वमन, पित्तदोषके नाशार्थ विरेचन, वातदोषके नाशार्थ बस्ति (पिचकारी) आदि पञ्चकर्म मनुष्यके होते हैं, तैसे ही पारदके भी ऊर्द्ध्वपातन, तिर्य्यक् पातन, आदि १८ संस्कार किये जाते हैं। इस रसायनसारके प्रथम भागमें मैंने १८ संस्कार इस लिये नहीं लिखे हैं कि संपूर्ण संस्कारोंका मैंने अभी तक अनुभव नहीं किया है परन्तु ईश्वरकी कृपा और परिश्रमके आगे १८ संस्कार कुछ दुष्कर नहीं हैं। अनुभव करके अग्रिम भागोंमें लिखूंगा। बिना अनुभूत किये लिखना मेरी आदत नहीं है और जैसे "स्नेहस्वेदोपपादनैः पञ्चकर्माणि कुर्वीत" इस चरकवचनानुसार बमन विरेचनादि पञ्चकर्मोंसे पहिले स्नेह स्वेद (तैलमालिश बफारा) दिया जाता है वैसे ही पारदका मर्दन स्वेदन किया जाता है। जिससे पारदके सर्व दोष शिथिल हो जायं बाद ऊर्द्ध्वपातनादिसे पृथक् निकल जायं। और जैसे वमन, विरेचन, आस्थापन, अनुवासन, नस्य, कर्ममें प्रवृत्त वैद्यराज दृष्टकर्मा और शास्त्रज्ञ होय तो यथावत्प्रयुक्त उन पञ्चकर्मों के प्रतापसे मनुष्य रोगसे निर्मुक्त होकर सर्व कार्यकरणमें समर्थ हो सक्ता है, यदि अज्ञ वैद्यके पाले पड़ जाय तो वह मनुष्य अपने शरीरका भी सत्यानाश कर बैठे। तैसे ही पारदके बुभुक्षादि संस्कार कोई चतुर, परिश्रमी, रसक्रिया प्रेमी, खर्चीला, मनुष्य करे तो आप भी यशका भागी बने और पारदको भी बलिष्ट बनाकर अनेक प्राणियोंका उपकार करे। यदि उक्त गुणरहित मनुष्य रसक्रियामें प्रवृत्त हो जाय तो पारदसिद्धि तो दूर रही ढीलीढाली मुद्रा देकर पारद को भी खो बैठे। इस लिखनेका तात्पर्य यह है कि यह क्रिया मेरी अनुभूत की हुई है, बिलकुल सत्य है, वैद्य लोग सावधानीके साथ कार्य्यारम्भ करेंगे तो अवश्य सफलमनोरथ होंगे।

देयग्रासमीमांसा—

बुभुक्षुसूतस्य चतुर्थभागं
ग्रासं सुवर्णस्य सुशोधितस्य।

दत्त्वा विमर्दैत्परिलग्नचेता
दिनद्वयं ग्रासविपाचनाय ॥
केचिद्वदन्ते केवलं सुवर्ण-
पत्राणि शुद्धीरनवेक्षमाणाः ।
तैःसूतराजो मलनीक्रियेत
दुष्टान्नभुक्तयेव विशुद्धकोष्ठः ॥
धात्वन्तरस्येव न दुष्टिरस्य
संकुट्टनाद्यैरपि नश्यतीव ।
अतः फलश्रावि वचोऽस्तिभोक्तु-
स्तथापि सूतग्रसनाय नेष्टे ॥
अल्पव्ययेनापि समर्जनीयं
स्त्वोद्योगलभ्यं परितोषहेतुः ।
शास्त्रोक्तरीत्या परिशुद्धहेम
फलेऽतिशेते तु ततोप्यवश्यम् ॥
संशोधितं कृत्रिमहेम चापि
ग्रासार्हतां नैव विभर्त्ति सूते ।
सूते यतो नैव फलं स्वकीयं
बत्किन्तु हेतूत्थगुणं प्रसूते ॥
कार्यं न हेतूत्थगुणाञ्जहाति
शतौषधीभावितसूतराजः ।
तत्तत्समस्तांश्च गुणान्ददानो
निदर्शनं चात्र सुयुक्तियुक्तम् ॥

पारदमें ग्रासदेनेका विचार—

अर्थ—पूर्वोक्त रीतिसे पारदको बुभुक्षित करके उसमें चतुर्थांश ग्रास दे, अर्थात् पारदको तोलकर देखले जो एक सेर बुभुक्षित पारद होय तो शुद्ध किये हुए सुवर्णको कूटकर पत्र बनाले, उनको पावभर तोलकर उस पारदमें घोटे । घोटते ही तुरन्त सर्वपत्र पारदमें मिल जायंगे । यद्यपि बुभुक्षित पारदमें सुवर्णकी डलीको भी डालकर घोटे तो भी मिल जाती है परन्तु पत्र करनेसे घोटनेमें सुभीता रहता है, पारद छलकता नहीं है। बाद बहुत होशियारीके साथ (जिसमें पारद उछलकर बाहर न गिर जाय) दो दिन तक घोटे, जिसमें ग्रास बिलकुल पच जाय । आज कल कितने ही वैद्य बाजारसे सुवर्णपत्र खरीदकर पारदमें घोटकर सुवर्णसिन्दूर, सुवर्णपर्पटी हिरण्य-गर्भपोटली, आदि अनेक रस बनाया करते हैं, और शास्त्रकारोंने जो सुवर्णकी शुद्धियां लिखी हैं उनपर ध्यान नहीं देते कि यदि बजारु सुवर्णपत्रोंसे ही काम चलता तो शास्त्रकार सुवर्णशुद्धि क्यों लिखते। वे वैद्य परम विशुद्ध पारदको भी सुवर्ण के दोषोंसे दूषित करते हैं । जैसे वमनविरेचनादि कर्मसे बहुत परिश्रम करके किसी मनुष्यके कोष्ठको शुद्धकिया होय फिर उसको दुष्टान्न सेवन कराके अनभिज्ञ वैद्य अशुद्ध कर देते हैं । यद्यपि ताम्रादि धातुओंमें जितना दोष है उतना सुवर्णमें नहीं है और वह दोष भी पत्रोंके बनाते समय सुवर्णको कूटनेसे, तथा औषधान्तरके योगसे नष्टप्राय हो जाता है । इसी वास्ते सुवर्ण पत्र सेवन करनेवालेको शास्त्रकारोंने "सिद्धं स्वर्णदलं समस्तविषहृच्छूला-म्लपित्तापहम् हृद्यं पुष्टिकरं क्षयव्रणहरं कायाग्निमा-न्द्यं जयेत् हिक्कानाहविनाशनं कफहरं भ्रूणां हितं सर्वदा तत्तद्रोगहरानुपानसहितं सर्वामयध्वंसनम्" (अर्थात् सुवर्ण वर्कोंके सेवन करनेसे सम्पूर्ण विष-रोग, शूल, अम्लपित्त नष्ट हो जाते हैं और वे हृदयको हितकारी, पुष्टि कारक हैं । तथा क्षय, व्रण, मन्दाग्नि, हिचकी, आनाह, कफरोग नष्ट होते

हैं गर्भको हितकारी हैं और अनेक अनुपानसे सभी रोगोंको नष्ट करते हैं) ये गुण लिखे हैं । तथापि पारदमें ग्रास देनेके लिये बजारु सुवर्णपत्र ठीक नहीं किन्तु सुवर्ण प्रकरणमें लिखी हुई विधिके अनुसार शुद्ध किये हुए सुवर्ण को ही ग्रास देना उचित है क्योंकि वर्कोंकी अपेक्षा शोधा-हुआ सुवर्ण कम दाममें ही पड़ जाता है, और वर्कोंको बाजारमें खरीदते फिरो, शोधना तो अपने हाथका काम है, जब चाहे शोध ले, और अपने हाथकी बनी हुइ वस्तुमें सन्तोष भी रहता है, और सब से अधिक बात यह है कि शास्त्रोक्त विधिसे शुद्ध किया हुआ सुवर्ण वर्कोंकी अपेक्षा अवश्य गुणमें कहीं अधिक होगा । इत्यादि युक्तियोंसे शोधित सुवर्णका ही ग्रास देना चाहिये । अब दूसरी बात यह और है कि सुवर्ण दो प्रकारका होता है, एक खानसे निकला हुआ, दूसरा कृत्रिम (रसायन विधिसे तांबा चांदी आदि धातुओंका बनाया हुआ) । इन दोनोंमें से खानके सुवर्ण को शोधन करके पारदको ग्रास देना चाहिये । कृत्रिम सुवर्ण शोधा हुआ भी पारदमें ग्रास योग्य नहीं है । क्योंकि कृत्रिम सुवर्ण के ग्राससे पारदमें सुवर्णका गुण नहीं आसक्ता, किन्तु वह सुवर्ण यदि ताम्रका बना होगा तो ताम्रके गुण आवेंगे, यदि चांदीका बना होगा तो चांदीके गुण आवेंगे, यदि सीसेको चांदी बनाकर उस चांदीका सोना बनाकर ग्रास दिया जायगा तो पारदमें सीसेके गुण आवेंगे इसमें युक्ति यह है कि कार्य अपने कारणके गुणको कभी नहीं छोडता है । इस बातकी पुष्टिके लिये स्पष्ट दृष्टान्त यह है कि पारदगन्धककी कज्जलीमें सैकड़ों औषधियोंकी भावना देकर सिन्दूरादि रस बन जाते हैं और उनमें पृथक् पृथक् सैकड़ों ही प्रकारके गुण भी देखे जाते हैं । इससे यह सिद्ध हुआ कि कृत्रिम सुवर्णग्राससे पारदमें सुवर्णके गुण नहीं आवेंगे किन्तु मूलधातु ताम्रादिके ही गुण आवेंगे ।

बुभुक्षितपरीक्षा—

विमर्दनाद्दृष्टसुवर्णसूतो
घनेन वस्त्रेण च गालनीयः ।
निःशेषतां यत्र वस्त्रशिष्टः
शिष्टैः स दिष्टश्च बुभुक्षुरेव ॥
सङ्गाल्यमानोपि पटेन सूतो
यःशिष्यते चेद्गुलिकात्मकस्तु ।
स्वेद्यश्च मर्द्यश्च पुनःपुरोव
ज्जह्याद्यतोसौ निजशेषभावम् ॥
संशेरते केचन बुद्धिपश्याः
सूतातिसंघर्षितहेमधातुः ।
सूक्ष्मस्वरूपेण घनेपि वस्त्रे
निर्याति चेदत्र किमस्ति चित्रम् ॥
उद्धृत्य सूतं डमरुक्रियातः
पश्येदधस्तात्स्थितहण्डिकायाम् ।
स्वर्णं न यायाद्यदि दृक्पथं ज्ञो
जीर्णं रसे वेत्तु हिरण्यमत्र ॥
चेच्छिष्यते किञ्च न हण्डिकायां
तन्मर्दनस्वेदनकर्म कुर्यात् ।
एवं विधानैरुपपञ्चवारै
निःशेषतामेति समादधामि ॥
स्वर्णं यतो नोड्डयितुं क्षमेत
सूतेन्द्रवत्कश्च न येन शङ्की ।

न माप्य जीर्णत्वमितं हिरण्यं
स्यादूर्ध्वहण्ड्यास्तलधाम नूनम् ॥
हेमापि सूतेन सहैति हण्डी-
मनेकसंस्कारयुतेति शङ्का।
कृताकृतग्राससमानमानं
सूतेन्द्रमालोक्य निवर्त्तनीया ॥
केचित्तु संस्कारगृहीतशक्तिं
श्रीसूतराजं परिगृह्य हेम।
सहैव तेन स्थितिमन्तमाहु-
र्बुभुक्षितं हैमनगौरवाढ्यम् ॥
जैनागमस्त्वाह शतैककर्षा
हेम्नो रसे कर्षमिते व्रजन्ति।
लयं यथा मूर्च्छति नापि भारो
निष्कास्यते चापि ततः सुवर्णम् ॥
तथात्मदेशे निचितस्वरूपाः
शुभाऽशुभाः पौद्गलकर्मवर्गाः।
निरस्तभाराः पुनरात्मदीपे
दीप्ते तमांसीव पृथग् भवन्ति ॥

बुभुक्षितपारदकी परीक्षा—

अर्थ—पूर्वोक्त विधिके अनुसार पारदको बुभुक्षित करके इस प्रकार परीक्षा करे कि बुभुक्षित पारदमें शुद्ध किया हुआ चौथाई सुवर्ण डालकर दो दिन तक घोटे, बाद गाढ़े कपड़ेमें छाने। यदि वस्त्रके ऊपर कुछ भी बाकी नहीं रहे, किन्तु सम्पूर्ण वस्त्र से निकल जाय तो उसको बुभुक्षित समझे। क्योंकि जो पारद बुभुक्षित नहीं हुआ होता तो कपड़ेके ऊपर कुछ न कुछ सुवर्ण अवश्य बचता। यदि वस्त्रमें छाननेके समय पारद तो वस्त्र से निकल जाय और कपड़ेके ऊपर कुछ सुवर्णकी गोलीसी बच जाय तो समझ ले कि अभी पूर्ण बुभुक्षित नहीं हुआ है, तो फिर पूर्वकी तरह क्षारवर्ग तथा अम्लवर्ग (काञ्जी आदि) में स्वेदन मर्दन करे जिससे कि बाकी बचा हुआ सुवर्ण भी निःशेष हो जाय। यहां पर कितनेक विद्वानों की यह शङ्का है कि वस्त्र के द्वारा सुवर्णसहित सम्पूर्ण पारद निकल जानेसे बुभुक्षित नहीं समझा जा सकता, क्योंकि पारद एक ऐसी सूक्ष्म वस्तु है कि जिसके साथ सुवर्णको अत्यन्त घोटनेसे सुवर्ण इतना सूक्ष्म हो जा सकता है कि पारदके साथ ही साथ वस्त्रसे निकल जाय तो कौन आश्चर्य है ? तब ऐसी दशामें बुभुक्षित पारदकी परीक्षा किस प्रकार हो ? इसका समाधान यह है कि उस पारद को डमरुयन्त्रमें रखकर एक पहरकी अग्नि देकर उठाले। जब यन्त्र स्वाङ्गशीतल हो जाय तब उसकी मुद्राको खोल कर डमरुयन्त्रकी नीचेकी हांडीमें देखे, जो सुवर्ण नहीं मिले तो बुद्धिमान् समझ ले कि पारद सम्पूर्ण सुवर्णको खागया है, अर्थात् असली बुभुक्षित हो गया है, क्योंकि यदि कुछ भी सुवर्ण बाकी रहा होता तो नीचेकी हँडीमें जरूर मिलता, कारण कि पारदकी तरह सुवर्ण तो उड़नेवाली चीज है नहीं, जो कि पारदके साथ साथ उड़ जाती यदि मुद्रा खोलनेके बाद नीचेकी हँडीमें कुछभी सुवर्ण मिल जाय तो समझ लेना चाहिये कि पारदके बुभुक्षित होने में अभी कुछ कसर है। तब फिर पूर्वकी तरह स्वेदन मर्दन करे। इसप्रकार चार छः बार करनेसे सम्पूर्ण स्वर्ण जीर्ण हो जायगा, और डमरुयन्त्रकी नीचेकी हांडीमें मलस्थानापन्न

कुछ निस्सार भस्म बचेगी । जब यह बात स्थिर है कि पारदकी तरह सुवर्ण ऊपर की हाँडीमें उड़कर नहीं जा सक्ता तब यहांपर कोई विद्वान् यह शङ्का नहीं कर सक्ता है कि पारदमें सुवर्ण जीर्ण नहीं होकर ऊपरकी हाँडीके तलस्थानमें उड़कर जा लगा है। यहां पर कितने ही विद्वानों की यह शङ्का है कि यह बात तो ठीक है कि सुवर्ण उड़नेवाली चीज नहीं है परन्तु विषोपविषमें मर्दन करनेसे तथा क्षारवर्ग और अम्लवर्गमें स्वेदन करनेसे पारद इतना प्रबलशक्तिक हो गया है कि इसकी सहायता पाकर सुवर्ण भी ऊपरकी हांडीमें पारदके साथ ही साथ जा लगे तो बुभुक्षितपारदकी क्या परीक्षा ? इस शङ्काका समाधान यह है कि जिस समय पारदमें सुवर्णग्रास नहीं दिया था उस समय जितनी पारदकी तौल थी उतनी ही तौल पारदमें सुवर्णग्रास देनेके तथा डमरुयन्त्रमें पारदको उड़ानेके बादभी बनी रहे तो उक्त शङ्काका अवकाश नहीं हो सकता। अर्थात् मेरा अनुभव ऐसा है कि पारद में जहां तक सुवर्णका भार रहेगा वहां तक पारदकी बुभुक्षाविधिमें अवश्य कुछ न्यूनता है। परन्तु कितने विद्वान् तो ऐसा मानते हैं कि पूर्वोक्त प्रकारसे सम्पूर्ण बुभुक्षाविधि सम्पादन करनेके बाद पारदको डमरुयन्त्रमें रखकर उड़ावे, वह पारद सुवर्णको लेकर ऊपरकी हाँडीमें जा लगे उस अवस्था में सुवर्णका भार बढ़ भी जाय तौ भी वह पारद उत्तम बुभुक्षित समझा जा सकता है । तात्पर्य्य यह है कि पारदमें सुवर्णको घोटनेपर भार बढ़ जाय तो उसको बुभुक्षित नहीं कह सकते किन्तु सुवर्णको लेकर पारद ऊपरकी हांडीमें जा लगे और फिर सुवर्णका भार बढ़ भी जाय तो उसके बुभुक्षित होनेमें शङ्का नहीं । यह बुभुक्षावधि जैसी मैंने अनुभूत की थी वही वैद्योंकी सेवामें लिखी है ।

पाठकवृन्द ! पारद की अपार महिमा है देखिये भगवती सूत्र आदि जैनसिद्धान्तके आर्ष ग्रन्थ क्या कह रहे हैं। जैन सिद्धान्त शुभाशुभ कर्मवर्गणाओंको मूर्तिस्वरूप मानता है, इसलिये वहांपर शङ्का हुई कि यदि कर्मवर्गणा मूर्तिस्वरूप हैं तो आत्माके प्रदेशोंपर बैठकर संघातरूप क्यों नहीं हो जातीं ? तथा उनका भार आत्मामें क्यों नहीं बढ़ता ? इसके उत्तरमें लिखा है कि जैसे १ तोला पारदमें १०० तोले सुवर्ण लीन हो जाता है तथापि सुवर्णका भार बढ़ता नहीं है, और भी बढ़कर बात यह है कि फिर उस सुवर्णको निकालना चाहें तो निकाल भी सक्ते हैं; तैसे ही आत्माके प्रदेशों पर कर्मवर्गणा इकट्ठी होती जाती हैं और परस्पर लीन होती जाती हैं तथापि उनका भार नहीं बढ़ता, और केवल ज्ञानरूपी दीपक जब जागरूक होता है तब अन्धकारकी तरह वे कर्मवर्गणा आत्मा से निकल कर दूर हो जाती हैं । ऐसी ऐसी बातें शास्त्रोंसे तथा विद्वानोंसे मैंने बहुत सुन रक्खी हैं, परन्तु यह ग्रन्थ अनुभूत बातको लिख रहा है इस लिये मैं उन समस्त बातोंको लिखकर आप लोगोंका समय नष्ट नहीं कर सक्ता।

(यह हिन्दी टीका रसायनसार से ही उद्धृत की गई है।)

(४३३६) **पारदबुभुक्षाविधिः (२)**

(रसायनसार)

विधाप्य कुण्डं मणपञ्चकाम्भो
मानं कुलालेन तदावृणोतु ।
पटेन शाणेन दृढीकरोतु
संसीवनेनापि समृत्पटेन ॥

तद्योग्यगर्त्ते निखनेद् गलान्तं
भरेन्मृदा तस्य महावकाशम् ।
तत्रावपेताग्रनिदर्शितानि
पदार्थजातानि बुभुक्षणार्थम् ॥

दिक्सेटमानं विषवत्सनाभं
तदर्धमानं विषमुष्टिकञ्च ।
हारिद्रकं तावदपि प्रपूर्य
मणार्द्धमानञ्च पलाण्डुकन्दम् ॥

चतुर्थभागं लशुनं मणार्द्धं
सिन्धूद्भवं निम्बुरसं चतुर्थम् ।
धत्तूरपञ्चाङ्गमथो मणस्य
पादञ्च वज्रार्कजमूलमर्द्धम् ॥

स्वर्जी यवाह्वौषरगुञ्जिकाश्च
सेटद्वयोन्मानमितास्तथैषु ।
सङ्कुट्य तद्योग्यमथात्र कुण्डे
भृत्वाऽवशिष्टन्तु गवां जलेन ॥

वलम्बयेत्सूतमथो भृतञ्च
कुण्ड्यामयःशिक्यदृढीकृतायाम् ।
शिलापिधानेन पिधायकुण्डं
मृदा निरोध्यापि सवस्त्रया तत् ॥

इतस्ततो हस्तिपुटोर्ध्ववह्ने-
स्तापं विदध्यादितराग्निनाऽपि ।
ऊर्ध्वस्थवह्निं पिदधीत नान्या
सच्छिद्रया वह्निनिरोधहेतोः ॥

तृतीयकोणे विदधीत कोष्ठीं
चन्द्रोदयादेः परिपाचनार्थम् ।
पुटेषु लोहाभ्रकभस्मपाकाः
सम्पच्यमाना भिषजा भवेयुः ॥

रसक्रियैवं खलु मासषट्कं
प्रवर्त्तितां सूतबुभुक्षणन्तु ।
विना प्रयासैःस्वयमेव सिद्धं
स्यादभ्रकादेर्भसितार्थसिद्धौ ॥

उद्घाट्य मुद्रामवलम्बमानं
कुण्डे रसेन्द्रं समुपाददीत ।
स्वर्णं सुशुद्धं च चतुर्थभागं
ग्रासाय तत्राऽथ विमर्दयेत ॥

लीने सुवर्णे घनवस्त्रकेण
सङ्गाल्य सूतस्तु परीक्षणीयः ।
शिष्येत वस्त्रे गुलिकात्मकश्चे-
त्स्वेदश्च मर्दश्च पुनः पुरोवत् ॥

नोचेत्पुनश्चोत्थितियन्त्रकेण
परीक्षणीयः खलु सूतराजः ।
अधःस्थहण्ड्यामवशिष्यते चे-
त्स्वर्णं पुनः पूर्ववदेव कुर्य्यात् ॥

नोचेत्तुलायामथ तोलनीयः
कृताकृतग्रासससमानमानः ।
बुभुक्षुरेवास्ति रसेन्द्रराजो
मूर्च्छाविधानेन सुमूर्च्छनीयः ॥

कुण्डस्थकल्कं परिशोष्य सम्यक्
क्षारं विदध्याद्विडसंज्ञकञ्च ।

पुनर्बुभुक्षाकरणेप्ययं स्याद्
बहूपयोगी प्रबलप्रभावः ॥
षण्मासान् रसराजस्य स्वेदनं पावकोष्मतः ।
भूविषाद्यूष्मतश्चैव हेमग्रासाय जायते ॥

सुगमरीतिसे पारदकी द्वितीय बुभुक्षा विधिः—

अर्थ—कुम्हारसे एक ऐसा कुण्डा (हौद) बनवावे जिसमें पांच मन पानी अट जाय; उसको बोरीके टाटसे मढदे और सूजा (सूआ) सुतलीसे सीमकर मजबूत करदे और उसके ऊपर एक कपरमट्टी भी चढ़ाकर सुखा ले । बाद एक ऐसा गढ़ा खोदे जिसमें वह कुण्डा आ जाय । उस गढ़ेमें कुण्डेको गले तक गाढ़ कर चारों तरफके अवकाशको मट्टीसे अच्छी तरहसे भरकर ठस करदे, बाद उस कुण्डेमें पारदके बुभुक्षित करनेवाली आगे लिखी हुइ चीजोंको भरदे । दश सेर बछनाभ विष, पांच सेर सींगिया विष, पांच सेर हल्दीया विष, (किसीको अन्य भी विष यदि मिल सकें तो वे भी दो दो सेर डालने चाहियें) बीस सेर प्याज, पांच सेर लशुन, बीस सेर सेंधानोंन, पांच सेर नीबूका रस, दश सेर धतूरेका पञ्चाङ्ग (फल पुष्पादि), पांच पांच सेर सेहुंड और मंदारकी जड़, सज्जी, जवाखार, कलमीसोरा, घूंघची, दो दो सेर । इन चीजोंमें जो कूटने योग्य वस्तु हैं उनको कूटकर अन्य वस्तुओंको योंही भरकर बाकी बचे हुवे कुण्डेको गोमूत्रसे भरकर लकड़ीसे सब चीजोंको चला दे, जिसमें सब चीज मिल जायं बाद हिंगुलोत्थ एक सेर पारद को पत्थरकी कुण्डीमें भरकर उस कुण्डीको लोहेके तारोंके छीकेमें रखकर मजबूतीके साथ बांध दे जिसमें कुण्डी टेढ़ी होकर पारद कुण्डेमें गिर न जाय । परन्तु यह भी स्मरण रहे कि पारदको चार तह कपड़ेमें बांधकर रखे, और कुण्डेके ऊपर अपने मुख आदि अङ्गको न ले जाय, नहीं तो विष क्षार आदि की ऊष्मासे मुख जल जायगा । उस छींकेको दोलायन्त्रविधिसे कुण्डे के मध्य भागमें लटकादे और कुण्डेके मुखपर उसके मापकी शिला रखकर मुद्रा करदे । अर्थात् कुण्डे और शिला की दर्ज्ज को चारों तरफसे बालु रेती मिली हुइ, चिकनी मट्टीसे ल्हेसदे, जिसमें कुण्डेकी उष्मा बाहर नहीं निकलने पावे । उस मट्टीके ऊपर एक कपरमट्टी और करदे इस गढ़ेके इधर ऊधर कोनोंपर दो गजपुट बनादे जिनमें अभ्रक लोह आदिके हमेशा पुट लगते रहें जिससे उनकी अग्नि की ऊष्मा कुण्डेमें पहुंचती रहे । और उस शिलाके ऊपरभी दश बारह सेर गोइठाकी अग्नि लगादे, और जब अग्नि निर्धूमप्राय हो जाय तब अग्निको लोह की नांदसे ढक दे । यदि मट्टीकी नांदसे ढकना हो तो उस के किनारेपर लोहेके तारोंसे चार पांच लपेटा देकर बांध दे, और तीन चार कपरमट्टी भी कर दे, जिसमें नांद अग्निकी तेजीसे फूटने नहीं पावे । अग्निको नांदसे ढकने का यह अभिप्राय है कि आग जल्दी बुझे नहीं । परन्तु इस नांदके तल भागमें इतना बड़ा छिद्र भी करदे कि जिसमें होकर रुपया निकल जाय । छिद्र करनेका यह अभिप्राय है कि इस छिद्रके द्वारा वायुका सञ्चार रहनेसे अग्नि बुझने नहीं पावे, परन्तु यह भी स्मरण रहे कि शिलाके ऊपर पांचसेर मट्टी बिछा कर गोइठे सुल-

गावे, नहीं तो शिला फूट जायगी इस गढ़ेके तीसरे कोने पर चन्द्रोदयादि रसोंकी भट्ठी भी जारी रहे जिसमें भट्ठीकी ऊष्मा भी कुण्डेमें पहुंचती रहे, अर्थात् गढ़ेके दो कोनों पर गजपुटोंकी आंच कुण्डेमें लगती रहेगी, तीसरे कोने पर भट्ठीकी आंच पहुंचती रहेगी, चौथा कोना खाली रहेगा, और मुखपर ढकी हुई शिलापर सुलगे हुवे गोइठोंकी आंच लगती रहेगी, और कुण्डेके तलभागमें पृथ्वीकी गरमी रहेगी और कुण्डेके अन्दर विष और क्षारोंकी अग्नि भबकती रहेगी इस प्रकार छः महीने तक रसायनशलाका कार्य्य जारी रखनेसे सैकड़ों रस भी तैयार हो जायंगे और पारद तो बिना ही परिश्रम अपने आप बुभुक्षित हुवा पावेगा। अर्थात् सर्व्व धातुओंकी भस्म तथा सिन्दूरादि रस बनानेके लिये छः महीने तक कार्यारम्भ किया गया है, परन्तु पारद बुभुक्षित करनेके लिये कोई नवीन क्रिया नहीं करनी पड़ती। छः महीनेके बाद कुण्डेकी मुद्राको खोलकर बहुत होशियारीके साथ कुण्डेमें लटकते हुवे पारदके शिक्य (छीके) को निकालकर पारदको निकाल ले। परन्तु यह स्मरण रहे कि मुद्राको खोलतेसमय आंख नाक को बचावे, नहीं तो कुण्डेसे बहुत तेजीके साथ ऊष्मा (भाफ) निकलकर अवश्य अङ्गभङ्ग कर देगी। इस पारदको तौलकर देख ले, यदि तीन पाव पारद हो तो चतुर्थांश (तीन छटांक) शास्त्रोक्त विधिसे शोधे हुवे सुवर्ण का ग्रास देकर मर्दन करें जब पारदमें सुवर्ण लीन हो जाय तब उसको कपड़ेमें छान कर परीक्षा करे, यदि कपड़ेमें सुवर्णकी गोलीसी तोले दो तोले बच रहे तो पूर्वोक्त विधिके अनुसार क्षारवर्ग और अम्लवर्गमें स्वेदन मर्दन करके उस अवशिष्ट सुवर्णको भी पचा दे यदि कपड़ेमें सुवर्णकी गोली नहीं बचे तो उस पारद को डमरूयन्त्रमें रखकर दो पहरकी आंच देकर परीक्षित करले। यदि डमरुयन्त्रकी नीचेकी हांडी में दो चार मासे सुवर्ण रह जाय तो उसको भी उक्त विधिके अनुसार क्षाराम्लवर्गमें स्वेदन मर्दन करके पचा दे यदि डमरूयन्त्रकी नीचेकी हांडीमें बिलकुल सुवर्ण नहीं बचे तो उसको तौल करके भी परीक्षा करले कि स्वर्णग्रास देनेसे पहिले जितना भार पारदका था, उतनाही ग्रासके पचनेपर मिले तो निश्चय करले कि यह पारद अत्यन्त बुभुक्षित हो गया है। तब वक्ष्यमाण विधिके अनुसार इसका चन्द्रोदय बनावे और कुण्डेमें जितना सामान (विषादिका कल्क) बचा हुआ है उस सबका भी क्षार बनाकर रख ले। यह भी एक प्रकारका " बिड " तैयार होजायगा, जो कि पुनः पारदबुभुक्षाविधिमें अत्यन्त उपयोगी उग्रप्रभाव होगा।

सारांश यह हुआ कि छः महीने तक उक्तविधिके अनुसार अग्निकी ऊष्मा पृथ्वीकी ऊष्मा तथा बिषादिकी ऊष्मासे पारदका स्वेदन करनेसे वह सुवर्णग्रासके योग्य होता है।

(४३३७) पारदस्य प्रचण्डबुभुक्षातृतीय विधिः

(रसायनसार.)

श्यामाभ्रकं हाटकमाक्षिकञ्च
द्वयेकांशकं सत्वद्रुतापि भस्म

विमर्दयेन्निम्बुरसेन पश्चात्
सेटं रसं सूतबिडाष्टमांशैः ॥
अवाप्य योगं खलुसूतराजो
बिडस्य सत्त्वानि बुभुक्षतेऽयम् ।
सत्त्वं च तद्योगविलीनमूर्त्ति
प्रलीय सूतात्मनि जारितं स्यात् ॥
सम्मर्दनैर्जातविशोषकल्कं
यन्त्रे डमर्वाख्यक उद्धरेत ।
भूयश्च काञ्जीप्रतिसारणीयैः
पाच्येत सूतेऽभ्रकसत्त्वकश्च ॥
एवं विमर्देदुपपञ्चवारान्
जीर्णेऽभ्रसत्त्वे क्षतपक्षता स्यात् ।
सद्घर्षितोत्थापितसूतराजो-
ऽभ्रभस्मयोगैस्तु भवेद् बलीयान् ॥
शिवारजो गन्धकमभ्रसत्त्वं
तच्छुक्रमेवर्षय आमनन्ति ।
समाभ्रकग्रासमवाप्य सूतो
बलेऽतिशेते शतजीर्णगन्धात् ॥
सत्त्वप्रधानं खलु वज्रमभ्रं
तद्भस्मयोगेन मयाऽपि सूतः ।
बलेऽनुभूतोऽतिशयान ईशात्
षड्जीर्णगन्धाद् बिडयोगयुक्तः ॥
अतोऽभ्रसत्त्वं ननु सूतराजे
सञ्जारयेयुर्यदि वैद्यराजाः ।
प्रचण्डक्षुत्स्वादितसर्व्वधातुं
मन्ये तमन्येऽपि फलं नयन्ते ॥
चराचरव्यापिरसेन्द्रभूमा
निषेव्यमाणस्सततं यदि स्यात् ।
प्रेत्येह चानन्तसुखं दवीयो
नास्तीति वैद्येन मयानुभूतम् ॥

पारदकी प्रचण्डबुभुक्षा

तीसरी विधि-

काली वज्राभ्रकका सत्त्व अथवा भस्मके दो भाग (आधसेर), सुवर्णमाक्षिकका सत्त्व अथवा भस्मका एक भाग (पाव भर) लेकर दोनोंको नीबू के रसके साथ दो तीन दिन तक खूब घोटे; बादको उसके साथ एक सेर हिंगुलोत्थ या शुद्ध पारदको बिडयोगसे खूब घोटे पारदसे अष्टमांश बिड[1] डाला जाता है। बिडके सम्बन्धसे पारद अभ्रकादिके सत्वोंको अच्छी तरह खा जाता है, और सत्व भी बिडके सम्बन्धसे द्रुत होकर पारदमें मिलकर जीर्ण हो जाता है। पूर्वोक्त पांचों चीजों (अभ्रक सत्त्व या भस्म, स्वर्ण माक्षिक सत्व या भस्म, नीबूका रस, पारद, बिड,) का कल्क जब मर्दन करते करते सूख जाय तब डमरूयन्त्रमें रख कर चार पहरकी अग्नि दे। स्वाङ्ग शीतल होनेके

बिडविधिः

मूलार्द्रवह्नीन् ज्वलने प्रदाह्य
क्षारैर्गवां मूत्रकृतैश्च तेषाम् ।
शतं शतं भावितगन्धकोऽयं
बिडो मतो जारणकर्मकारी ॥

एक मन मूली, एक मन अदरक (आदा), एक मन चित्रक। तीनोंको सुखाकर जलालें, उस भस्मको नांदमें डालकर १० सेर गोमूत्र भर दें। ४ दिनके बाद "क्षारविधि" में कही हुई विधिके अनुसार निर्मल गोमूत्रको निकाल लें। पश्चात् उसी क्षारमिश्रित गोमूत्र से सैकड़ों बार भावना देकर गन्धकको तैयार कर लें। इसी गन्धकको "बिड" कहते हैं। जब पारदमें (चन्द्रोदय बनाने के लिये) स्वर्णग्रास देते हैं तब इस बिडके साथ घोटनेसे स्वर्ण पारदमें शीघ्र पच जाता है।

बाद फिर कांजी और प्रतिसारणीय क्षारके योगसे जब अभ्रकसत्व पचजाय तब स्वाङ्ग शीतल करके डमरूयन्त्रसे सब चीजोंको निकाल ले इस प्रकार चार छः बार घोटकर डमरूयन्त्रमें उड़ाने से अभ्रकका सब सत्त्व जीर्ण हो जायगा। परन्तु जो पारद के साथ उक्तविधिसे अभ्रकका सत्त्व जीर्ण किया जायगा तो "नाधः पतति न चोर्ध्वम्" इत्यादि रसहृदयग्रन्थके प्रमाणसे पारद छिन्नपक्ष हो जायगा (अग्निमें डालने परभी नहीं उड़ेगा) और यदि उक्त विधिसे पारदको अभ्रकभस्मके साथ घोटा जायगा तो पारद छिन्नपक्ष नहीं हो सकेगा किन्तु अति बलिष्ठ अवश्य होगा। इसमें हेतु यह है कि अभ्रकभस्मके साथ पारदको घोटकर उड़ानेसे पारदको अभ्रकसत्वका उतना ग्रास नहीं मिल सक्ता जिससे कि वह छिन्नपक्ष हो, क्योंकि अभ्रक भस्ममें थोड़ा सत्व होता है उतने ग्राससे पारदकी तृप्ति नहीं हो सकती। इसमें युक्ति यह है कि जैसे कोइ भूखा मनुष्य आध सेर अन्न खाता है उसको यदि छटांक भर अन्न दिया जाय तो कुछ आधार मात्र होगा पर्य्याप्त भोजन जन्य आलस्य निद्रादि नहीं आ सक्ते। यद्यपि पारदमें गन्धक जीर्ण करनेसे भी वह बलवान् होता है परन्तु अभ्रकसत्व-जीर्ण-पारदका मुकाबिला नहीं कर सकता, क्योंकि शास्त्रकार महर्षियोंने गन्धकको तो पार्व्वतीजीका आर्त्तव माना है और अभ्रकको उनका शुक्र मानाहै, शिवशुक्र पारदकेलिये पार्व्वतीजीका रज और शुक्र दोनोंही प्रिय हैं, परन्तु पुरुषका शुक्र जितना स्त्रीके शुक्रसे बलिष्ठ होता है उतना आर्त्तवसे बलिष्ठ नहीं हो सकता, क्योंकि शुक्र तो रस, रक्त, मांस, मेदस, अस्थि, मज्जा, इन छः धातुओंका सार हुवा करता है, और आर्त्तव तो शरीरका विकारस्वरूप है। इसलिये समगुण अभ्रकग्रासको जीर्ण करके पारद, शतगुणगन्धक-जीर्ण-पारदसे भी बलवान् होता है। तात्पर्य्य यह है कि गन्धकजारणकी अपेक्षा अभ्रकसत्वजारण कहीं अधिक गुणकारी है। वज्राभ्रकमें नागाभ्रक, दर्दुराभ्रक, पिनाकाभ्रक की अपेक्षा अधिक सत्त्व हुवा करता है। यद्यपि मैं अभ्रकसे सत्वको जुदा निकालकर अभी तक पारदमें जीर्ण नहीं कर सका हूँ किन्तु कृष्णवज्राभ्रककी भस्मके साथ बिडयोगसे पारदको घोट घोटकर मैने परीक्षा की है तो षड्गुणगन्धक जीर्ण पारदसे उसमें कहीं अधिकगुण अनुभूत किया है। इसवास्ते सभी वैद्यराजोंसे भी हमारी प्रार्थना है कि अभ्रकसे सत्व निकालकर बिडयोगसे पारदमें यदि उसको जीर्ण करेंगे तो पारद प्रचण्डबुभुक्षित होकर सुवर्णादि सर्वधातुओंको जीर्ण करसकेगा और उस क्रियासे अन्य लोग भी उत्तम फल उठावेंगे। "प्रिया मे मानुषी प्रजा" इस श्रुतिके अनुसार जब हमको भगवत्प्रिय मनुष्यजन्म मिला है तो इसके सम्बन्धसे अवश्य कुछ असाधारण कार्य्य करना चाहिये इसलिये मेरा यह मन्तव्य है कि ईश्वरके समान चराचर व्यापि पारदकी यदि निरन्तर सेवा की जाय तो ऐहलौकिक तथा पारलौकिक अनन्तसुख बहुत दूर नहीं है।यह सर्वविद्वत्संवादी सिद्धान्त है कि जिसका जन्मान्तरमें भारी कल्याण होनहार होता है वही पुरुष जगत्कल्याणकारी पदार्थोंमें मनोयोग दिया करता है।

तात्पर्य यह है कि पारलौकिक फलका भागी वही

महात्मा हो सकता है जो कि लोभवासनाको छोड़कर पारदकी सेवासे समस्त लोकका कल्याण चाहता है और जिस क्रियाका अपनेको अनुभव हो उसका मार्ग सब किसीको बतला देता है ।

सङ्क्षेपेण बुभुक्षितपरीक्षा—

गालनैरूर्ध्वपातैश्चेत् स्वर्णं नायाति दृक्पथम् ।
मूल्मानं च यत्रास्ते जानीयात्तं बुभुक्षितम् ॥

संक्षेपसे बुभुक्षितपारदकी पहिचान—

बुभुक्षाविधिके अनुसार पारदको बुभुक्षित करके उसमें स्वर्णग्रास देकर कपड़ेमें छानकर परीक्षा करे यदि कपड़ेमें सोना नहीं बचे तो उसको डमरुयन्त्रमें रखकर अग्नि लगाकर उड़ा ले, यदि नीचेकी हांडीमें भी सुवर्ण दृष्टि नहीं आवे तो फिर तौलकर भी देखले, सुवर्णग्रास देनेसे पहिले जो पारदका वज़न था वही वज़न यदि ग्रासके जीर्ण होनेपर भी मिले, यानी सुवर्णका भार नहीं बढ़े तब उसको बुभुक्षित समझे ।

(४३३८) पारदभस्मविधिः (१)

(र. र. स. । पू. खं. अ. ११)

अङ्कोलस्य शिफावारिपिष्टं खल्वे विमर्दयेत् ।
सूतं गन्धकसंयुक्तं दिनान्ते तं निरोधयेत् ॥
पुटयेद्भूधरे यन्त्रे रात्रेकेन मृतो भवेत् ॥

समानभाग पारद और गन्धककी कज्जलीको अंकोलकी जड़के रसमें १ दिन घोटकर शरावसम्पुटमें बन्द करके भूधरयन्त्रमें पकानेसे १ दिनमें ही भस्म हो जाती है ।

(४३३९) पारदभस्मविधिः (२)

(र. र. स. । पू. खं. अ. ११; र. रा. सुं)

अपामार्गस्य बीजानि तथैरण्डस्य चूर्णयेत् ।
तच्चूर्णं पारदे देयं मूषायामधरोत्तरम् ॥
रुध्वा लघुपुटैः पच्याच्चतुर्भिर्भस्मतां नयेत् ॥

अपामार्ग (चिरचिटे) के बीज और अरण्डीके बीजोंकी मींग समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र कूट लें । तत्पश्चात् शुद्ध पारदके नीचे ऊपर यह चूर्ण रखकर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुट में फूंक दें ।इससे ४ पुटमें पारदकी भस्म बन जाती है ।

(४३४०) पारदभस्मविधिः (३)

(यो. र.)

शुद्धसूतं समं गन्धं वटक्षीरैर्विमर्दयेत् ।
पाचयेन्मृत्तिकापात्रे वटकाष्ठैर्विघट्टयेत् ॥
लघ्वाग्नना दिनं पाच्यं भस्मसूतं भवेद्ध्रुवम् ।
द्विगुञ्जं पर्णखण्डेन पुष्टिमग्निं च वर्धयेत् ॥

समान-भाग शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धककी कज्जली बनाकर उसे (१ दिन) बड़के दूधमें घोटें, तदनन्तर उसे मिट्टीके मजबूत पात्रमें डालकर मन्दाग्नि पर पकावें ओर पकाते हुवे बड़की (हरी) लकड़ीसे घोटते रहें । इस क्रिया से १ दिनमें ही पारदभस्म बन जाती है ।

इसमेंसे २ रत्ती दवा पानमें रखकर खानेसे शरीर पुष्ट होता और अग्निकी वृद्धि होती है ।

(४३४१) पारदभस्मविधिः (४)

(र. रा. सु. । रसा. वाजी.)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं लोहपात्रेग्निसंस्थिते ।
आर्द्रन्यग्रोधदण्डेन चालयेद्भस्मतां नयेत् ॥
रक्तिकाद्वितयं भुक्तं रेतः पुष्टिकरं परम् ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गन्धककी कज्जलीको लोहेकी कढ़ाईमें डालकर अग्नि पर रक्खें और उसे हरे (ताज़े) बड़के डण्डे से चलाते हुवे उस समय तक पकावें जब तक कि पारदकी भस्म न हो जाय। (अग्नि तेज़ न होनी चाहिये।)

इसे २ रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करनेसे वीर्य पुष्ट होता है।

(४३४२) **पारदभस्मविधिः** (५)

(भा. प्र. । प्र. खं.; शा. ध. सं. । खं. २ अ. १२; र. रा. सुं.)

काकोदुम्बरिकादुग्धे रसं किञ्चिद्विमर्दयेत्।
तद्दुग्धघृष्टहिङ्गोश्च मूषायुग्मं प्रकल्पयेत्॥
क्षिप्त्वा तत्सम्पुटे सूतं तत्र मुद्रां प्रदापयेत्।
धृत्वा तद्गोलकं प्राज्ञो मृन्मूषासम्पुटेऽधिके॥
पचेद्गजपुटेनैव सूतकं याति भस्मताम्॥

काकोदुम्बर (कठूमर-कठगूलर) के दूधमें हींगको घोटकर उसकी दो मूषा बनावें और फिर एक मूषामें कठूमरके दूधमें घुटे हुवे पारदको रखकर दूसरी मूषा उसके ऊपर ढककर दोनों के जोड़को (उसी हींगसे) अच्छी तरह बन्द कर दें। तदनन्तर उसे एक मिट्टीके सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें तो पारदकी भस्म बन जायगी।

(४३४३) **पारदभस्मविधिः** (६)

(भा. प्र. । प्र. खं.)

अपामार्गस्य बीजानां मूषायुग्मं प्रकल्पयेत्।
तत्सम्पुटे क्षिपेत्सूतं मलपूदुग्धमिश्रितम्॥
द्रोणपुष्पीप्रसूनानि विडङ्गमरिमेदकः।
एतच्चूर्णमधोश्चोर्द्ध्वे दत्वा मुद्रा प्रदीयते॥

तद्गोलं स्थापयेत्सम्यङ्मृन्मूषासम्पुटे पचेत्।
मुद्रां दत्त्वा शोषयित्वा ततो गजपुटे पचेत्॥

एवमेकपुटेनैव सूतकं भस्म जायते।
तत्प्रयोज्यं यथास्थाने यथामात्रं यथाविधि॥

अपामार्ग (चिरचिटे) के बीजोंको पीसकर उसकी दो मूषा बनाकर सुखा लें फिर पारदको कठूमर (कठगूलर) के दूधमें घोटकर उनमें से एक मूषामें नीचे ऊपर गूमाके फूल, बायबिडंग और अरिमेदका समान भाग-मिश्रित चूर्ण रखकर रक्खें और दूसरी मूषा उसके ऊपर ढककर दोनों की सन्धिको अच्छी तरह बन्द करदें एवं इस सम्पुटको मिट्टीके सम्पुटमें बन्द करके उसके ऊपर ४-५ कपड़मिट्टी करदें और उसे सुखाकर गजपुटकी आंच दें। इस प्रकार १ पुटमें ही पारदकी भस्म बन जाती है।

इसे यथोचित मात्रासे यथोचित विधि के अनुसार सेवन कराना चाहिये।

(४३४४) **पारदभस्मविधिः** (७)

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड)

देवदाली हंसपादी यमचिञ्चा पुनर्नवा।
एभिः सूतो विघृष्टव्यो पुटनान्म्रियते ध्रुवम्॥

देवदाली (बिंडाल), हंसपादी, खट्टी इमली और पुनर्नवा (साठी) के स्वरस में घोट घोटकर पुट देनेसे पारदकी भस्म बन जाती है।

(४३४५) **पारदभस्मविधिः** (८)

(र. सा. सं. । पू. ख.; र. मं. । अ. २; र. रा. सु.; भा. प्र.; शा. ध.)

भुजङ्गवल्लीनीरेण मर्दयेत्पारदं दृढम् ।
कर्कटीकन्दमूषायां सम्पुटस्थं पुटेद्गजे ॥
भस्मतद्योगवाहि स्यात्सर्वकर्म्मसु योजयेत् ॥

पारेको नागरबेलके पानके रसमें अच्छी तरह घोट कर ककोड़े की जड़की मूषामें रखकर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंकनेसे उसकी योगवाही भस्म बन जाती है।

(४३४६) **पारदभस्मविधिः** (९)

(र. मं. । अ. २)

द्विपलं शुद्धसूतं च सूतार्द्धं शुद्धगन्धकम् ।
कन्यानीरेण सम्मर्द्य दिनमेकं निरन्तरम् ॥
रुद्ध्वा तद्भूधरे यन्त्रे दिनैकं मारयेत्पुटात् ॥

१० तोले शुद्ध पारद और ५ तोले शुद्ध गन्धककी कज्जली करके उसे १ दिन निरन्तर घृतकुमारी (ग्वारपाठा) के रसमें घोटकर शराव-सम्पुटमें बन्द करके भूधरयन्त्रमें पकानेसे १ दिन में ही पारदभस्म बन जाती है।

(४३४७) **पारदभस्मविधिः** (१०)

(र. रा. सुं)

शुद्धं सूतं समं सिन्धुं सोमलं च तदर्द्धकम् ।
सोमलार्द्धं विषं क्षिप्त्वा हिङ्गुस्फटिकगैरिकम् ॥
सामुद्रलवणं चैव सर्वतुल्यं विनिक्षिपेत् ।
काञ्जिकेन पुटं दद्यात्पुटित्वा चेन्द्रवारुणीम् ॥
स्थाल्यामुत्थापनं कृत्वा अग्नियामाष्टकं ददेत् ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य भस्मसूतोर्द्ध्वपातनम् ॥
योजयेत्सर्वरोगेषु कुर्य्याद्बहुतरं क्षुधाम् ।
पुष्टिदं वर्द्धते कामः योजयेद्रक्तिकाद्वयम् ॥

शुद्ध पारा १ भाग, सेंधानमकका चूर्ण १ भाग, सोमल (संखिया) आधा भाग, मीठा विष (बछनाग) चौथाई भाग तथा हींग, फटकी, गेरु और समुद्र लवणका समानभाग-मिश्रित चूर्ण इन सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिला कर कांजीमें अच्छी तरह घोटें फिर इन्द्रायणकी जड़के स्वरसमें घोटकर डमरु यन्त्रमें रखकर ८ पहरकी आग दें और यन्त्रके स्वांग शीतल हो जाने पर उसे खोलकर ऊपरकी हांडीमें लगी हुई पारद भस्मको निकाल लें।

इसे २ रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करनेसे अत्यन्त क्षुधा वृद्धि होती, शरीर पुष्ट होता और कामशक्ति बढ़ती है।

(४३४८) **पारदभस्मविधिः** (११)

(र. रा. सु.)

वटक्षीरेण सूताभ्रौ मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ।
पाचयेत्तेन काष्ठेन भस्मीभवति तद्रसः ॥

शुद्ध पारद और अभ्रकको दो पहर तक बड़के दूधमें घोटकर लोहेकी कढ़ाईमें बड़की हरी लकड़ीसे घोटते हुवे पकानेसे पारदकी भस्म बन जाती है।

(४३४९) **पारदभस्मविधिः** (१२)

(र. रा. सु.)

कृष्णधत्तूरतैलेन सूतो मर्द्यो नियामकैः ।
दिनैकं तं पचेद्यन्त्रे कच्छपाख्ये न संशयः ॥

मृतःसूतो भवेत्सद्यो सर्वयोगेषु योजयेत् ।

शुद्ध पारदको काले धतूरेके बीजोंके तेल और नियामक ओषधियोंके स्वरसमें १-१ रोज़ मर्दन करके १ दिन कच्छपयन्त्रमें पकानेसे उसकी भस्म हो जाती है ।

(४३५०) पारदभस्मविधिः (१३)

(कृष्णभस्म)

(र. सा. सं.; र. रा. सु. । पूर्वखण्ड)

धान्याभ्रकं रसं तुल्यं मारयेन्मारकद्रवैः ।
दिनैकं तेन कल्केन वस्त्रं लिप्त्वा तु वर्तिकाम् ॥
विलिप्य तैलैर्वर्तिं तामेरण्डोत्थैः पुनः पुनः ।
प्रज्वाल्य तदाज्यभाण्डे गृह्णीयात्पतितश्च यत् ॥
कृष्णभस्म भवेत्तच्च पुनर्मर्द्य नियामकैः ।
दिनैकं पातयेद्यन्त्रे कन्दुकाख्ये न संशयः ॥
मृतः सूतो भवेत्सत्यं तत्तद्रोगेषु योजयेत् ।
श्वेतं पीतं तथा रक्तं कृष्णश्चेति चतुर्विधम् ॥
लक्षणं भस्मसूतानां श्रेष्ठं स्यादुत्तरोत्तरम् ॥

धान्याभ्रक और शुद्ध पारा समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र घोटकर मारक[१] द्रव्योंके रसमें एक एक दिन घोटें और फिर उस कल्कको एक कपड़े पर लपेट कर उसकी बत्ती बना लें ।

---

(१) मारकगणः ।

घनवचाचित्रकगोक्षुरकटुतुम्बीदन्तिकाजाति ।
सर्पाक्षी शरपुङ्खा कन्या चाण्डालिनीकन्दम् ॥
विषमुष्टिवज्रवल्ल्यौ लज्जा देवदाली लाक्षा ।
सहदेवा नीपकणा निर्गुण्डी चक्रं लाङ्गलिका ॥
माणार्कचन्द्ररेखा रविभक्ता काकमाचिका चार्कः ।
विष्णुक्रान्ता वायसतुण्डी वज्री बला शुण्ठी चैव ॥
कोपातकी जयन्ती वाराही हस्तिशुण्डिका रम्भा ।
मत्स्याक्षी यमचिञ्चा हरिद्रे द्वे पुनर्नवाद्वितयम् ॥
धुस्तूरः काकजङ्घा शतावरी कञ्चुकी चैव वन्ध्या ।
तिलमेकपर्णीके दूर्वा मूर्वा हरीतकी तुलसी ॥
गोकण्टकाखुपर्ण्यौ कर्कटीकन्दवर्गलता च ।
मूसली हिङ्गु गुडूची शिग्रु गिरिकर्णिका महाराष्ट्री
मार्कवसैन्धवसरणौ सोमलता श्वेतसर्षपासनश्च ।
हंसपदीव्याघ्रपदीकिंशुकभल्लातकेन्द्रवारुणिका ॥
सर्व्वंश्चार्द्धांशं वा अष्टादशाधिका वापि द्रव्यम् ।
समारणमूर्च्छादौ च युक्तिज्ञैर्विधिवदुपयोज्यम् ॥

नागरमोथा, बच, चित्ता, गोखरु, कड़वी, तूंबी, दंती, चमेली, नाकुलीकंद, सरफोंका, घीकुमार, चाण्डालनीकंद, विषमुष्टी (डोडी), वज्रवल्ली (हडफोड़ी), लाजवन्ती, बंदालडोडा, लाख, सहदेवा (शारिवा), नीप (कदंब), पीपल, संभालु, चक्र (तगरपुष्प या पनवाड़), लांगलीकंद, मानकंद, आक, चंद्ररेखा (बावची), रविभक्ता (हुलहुल), काकमाची, श्वेतार्क, विष्णुक्रांता (कोयल), कौवाडोडी, वज्री (थोहर), बला, सोंठ, कड़वी तोरी, जयंती, वाराहीकंद, हाथिशुण्डी, केलाकंद, मत्स्याक्षी, यमचिंचा (खट्टी इमली), हलदी, दारुहल्दी, लाल पुनर्नवा, श्वेत पुनर्नवा, धतूरा, काकजंघा, शतावर, कंचुकी (क्षीरीवृक्ष), बांझककोड़े की जड़, तिल, मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी), दूर्वा, मूर्वा, हरड़, तुलसी, गोखरु; मूषाकर्णी, कर्कटीकंद, वर्गलता, (पाठा), मूसली, हींग, गिलोय,

इस बत्तीको अण्डीके तेलमें अच्छी तरह भिगो लें और उसके एक सिरेमें आग लगाकर दूसरे सिरेको चिमटेसे पकड़कर उसे उलटा लटकावें और उससे जो तैल गिरे उसे चीनी या कांच आदिके पात्रमें इकट्ठा कर लें । तदनन्तर उस तेलके नीचे बैठी हुई कृष्ण भस्मको नियामक[२]

सुहांजना, गिरिकर्णिका (अपराजिता), महाराष्ट्री (जलपिप्पली), मार्कैव (भांगरा), सेंधा नमक, सरणी (प्रसारणी—पसरन), सोमलता, पीली सर्सों, असन (विजैसार), हंसपदी, व्याघ्रपदी, कंटाई केशु, भिलावे और इंद्रायण । यह मारक वर्ग है । इन सब ओषधियोंका या इनमें से किन्हीं १८ या ततोधिक ओषधियोंका चूर्ण पारदसे आधा मिलाकर पारदको मूर्च्छित करने या भस्म करने के लिये प्रयुक्त करना चाहिये ।

२–नियामकगण ।

सर्पाक्षी वन्यकर्कोटी कञ्चुकी यमचिञ्चिका ।
शतावरी शङ्खपुष्पी शरपुङ्खा पुनर्नवा ॥
मण्डूकपर्णी मत्स्याक्षी ब्रह्मदण्डी शिखण्डिनी ।
अनन्ता काकजङ्घा च काकमाची कपोतिका ॥
विष्णुक्रान्ता सहचरा सहदेवी महाबला ।
बला नागबला मूर्वा चक्रमर्दः करञ्जकः ॥
पाठा तामलकी नीली जालिनी पद्मचारिणी ।
घण्टा त्रिकण्टगोजिह्वा कोकिलाक्षघनध्वनिः ॥
आखुपर्णी क्षीरिणी च त्रिपुषी मेषशृङ्गिका ।
कृष्णवर्णा च तुलसी सिंहिका गिरिकर्णिका ॥
एता नियामकौषध्यः पुष्पमूलदलान्विताः ॥

ओषधियों के रसमें १–१ दिन घोट कर कन्दुक यन्त्रमें पातन कर लें । इस विधिसे पारदकी उत्तम भस्म बन जाती है ।

पारदकी भस्म श्वेत, पीली, लाल और काली इस प्रकार ४ रंगकी बनती है । इनमें से श्वेत सबसे निकृष्ट, पीली उससे अच्छी, लाल पीलीसे अच्छी और कृष्णभस्म सर्वोत्तम होती है ।

नाकुलीकंद, वांझककोड़ा, कंचुकी (शिरीषवृक्ष), खट्टी इमली, शतावर, शंखाहुली, सरफोंका, पुनर्नवा (साठी), मंडूकपर्णी (ब्राह्मी), मत्स्याक्षी (सोमलता या हुलहुल), ब्रह्मदण्डी, शिखंडिनी (पीले वर्ण की जूही), शारिवा, काकजंघा, मकोह, कपोतिका (नलिका), विष्णुक्रान्ता (कोयल), सहचरा (पीया बांसा), सहदेवी, महाबला, बला, नागबला (खरैटी के भेद), मूर्वा, (मरोड़फली), चक्रमर्द (पनवाड़), लताकरंज, पाटला, पाठा, भूमीआमला, नीलनी, जालनी (कड़वी तोरी), पद्मचारिणी (गेंदा), घंटा (कठपाडर), गोखरु, गोजिह्वा (गोजियाघास), तालमखाना, चौलाई, मूसाकन्नी, क्षीरिणी (सत्यानाशी), त्रिपुषी (खीरा), मेढासिंगी, काली तुलसी, सिंहिका (बड़ी कटेली) और अपराजिता । ये सब नियामक ओषधियां हैं । इनके पुष्प, मूल और पत्र लेने चाहियें । इन में मर्दन करने से पारा स्थिर हो जाता है ।

(४३५१) पारदभस्मविधिः (१४)

(भा. प्र. । प्र. खं.; शा. ध. सं. । खं. २ अ. १२)

धूमसारं रसं तुवरीं गन्धकं नवसादरम् ।
यामैकं मर्दयेदम्लैर्भागं कृत्वा समं समम् ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य ताञ्च मृद्वस्त्रमुद्रया ।
विलिप्य परितो वक्त्रे मुद्रां दत्त्वा विशोषयेत् ॥
अधः सच्छिद्रपिठरीमध्ये कूपीं निवेशयेत् ।
पिठरीं वालुकापूरैर्भृत्वा चाकूपिकागलम् ॥
निवेश्य चुल्ल्यां तदधो वह्निं कुर्याच्छनैः शनैः ।
तस्मादप्यधिकं किञ्चित्पावकं ज्वालयेत्क्रमात् ॥
एवं द्वादशभिर्यामैर्म्रियते रस उत्तमः ।
स्फोटयेत्स्वाङ्गशीतं तमूर्द्ध्वगं गन्धकं त्यजेत् ॥
अधस्थश्च मृतं सूतं गृह्णीयात्तं तु मात्रया ।
यथोचितानुपानेन सर्वकर्मसु योजयेत् ॥

घरका धुवां, शुद्ध पारा, फिटकी, शुद्ध गन्धक और नौसादर समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ पहर तक नीबू आदिके रस में घोटकर सुखाकर उसे कपरौटी (कपड़मिट्टी) की हुई आतशी शीशीमें भर दें और एक हाण्डीकी तलीमें छोटासा (पैसेके बराबर) छिद्र करके उसमें इस शीशीको रखकर हण्डीमें रेत भर दें । रेत शीशीके गले तक आ जाना चाहिये । तदनन्तर शीशीके मुखमें खिरिया मिट्टी आदिका डाट लगाकर उसे भट्टी पर चढ़ादें और उसके नीचे मन्दाग्नि जलावें तथा धीरे धीरे अग्निको तेज करते हुवे १२ पहरकी आंच दें। इसके पश्चात् शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसे फोड़कर ऊपरके भागमें लगे हुवे गन्धकको अलग कर दें और नीचेकी भस्मको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित अनुपानके साथ सेवन कराने से समस्त रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा--१ रत्ती ।)

(४३५२) पारदभस्मविधिः (१५)

(तलभस्म)

(वृ. यो. त. । त. ४२)

सूतश्चतुष्पलमितः समशुद्धगन्धः
स्याद्धूमसारपिचुरेकमिदं क्रमेण ।
सम्मर्दयेद्विमलदाडिमपुष्पतोये
घस्रं विमिश्रय सितसोमलमाषकेण ॥
एतन्निधाय सकलं जलयन्त्रगर्भे
सम्मुद्रय सन्धिमुदितेन पुरा क्रमेण ।
आपूर्य यन्त्रमुदकेन दिनानि चाष्टौ
वह्निं क्रमेण तदधो विदधीत विद्वान् ॥
पश्चाच्च तज्जलमुदस्य रसं तलस्थ-
मादाय भाजनवरे सुभिषङ्निदध्यात् ।
सम्पूज्य शम्भुगिरिजागिरिजातनूज-
मद्याच्छुभेऽहनि रसं वरमेकगुञ्जम् ॥
ताम्बूलिकादलयुतं ससितं पयोऽनु
पीत्वाऽम्लमाषलवणै रहितं सदन्नम् ।
अद्यात्कियन्त्यपि दिनानि ततो यथेच्छं
भक्ष्यं भजेदथ नरो विगतामयः स्यात् ॥

शुद्ध पारद २० तोले, शुद्ध गन्धक २०

तोले, घरका धुवां १। तोला तथा शुद्ध सफेद संखिया १। माशा लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें अन्य चीजें मिलाकर सबको १ दिन अनारके फूलोंके रसमें घोटकर उसे जलयन्त्रमें रखकर मुद्रा बन्द कर दें और उसे पानीमें रखकर उसके नीचे ८ दिन तक क्रमशः मृदु मध्यम और तीव्र अग्नि जलावें। तदनन्तर यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमें से पारदभस्मको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें से नित्य प्रति १ रत्ती रस पानमें खाकर ऊपरसे मिश्रीयुक्त दूध पीने और खटाई, उर्द तथा लवण रहित भोजन करनेसे मनुष्य सर्वरोगरहित हो जाता है।

(४३५३) **पारदभस्मविधिः** (१६)

(तलभस्म)

(र. रा. सु.)

गन्धकं नवसारं च शुद्धसूतं समं त्रयम् ।
यामैकं चूर्णयेत्खल्वे काचकुप्यां विनिक्षिपेत् ॥
रुध्वा द्वादशयामान्तं बालुकायन्त्रगं पचेत् ।
स्फोटयेत्स्वाङ्गशीतं तदूर्ध्वं गन्धकं क्षिपेत् ॥
तलभस्मरसो योगवाही स्यात्सर्वरोगहृत् ।

शुद्ध गन्धक, नौसादर और शुद्ध पारद समान भाग लेकर तीनोंको १ पहर तक निरन्तर खरल करके कपड़मिट्टी की हुइ आतशी शीशी में भरकर उसका मुख बन्द करदें और उसे १२ पहर तक बालुकायन्त्रमें पकावें। तत्पश्चात् शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसे फोड़कर ऊपर वाले गन्धकको अलग करदें और नीचे से पारद भस्म निकालकर सुरक्षित रक्खें। यह योगवाही भस्म सर्वरोग-नाशक है।

(मात्रा—१ रत्ती)

(४३५४) **पारदभस्मविधिः** (१७)

(पीतभस्म)

(बृ. नि. र. । आमवा.)

शरावनिहितं सूतं द्विगुणवङ्गं मुहुर्मुहुः ।
दत्वाग्निं सूर्ययामान्तं निम्बकाष्ठेन घट्टयेत् ॥
एवं भवेत्पीतवर्णा रसराजस्य भूतिका ।
यथानुपानं रोगेषु प्रदद्यात् भिषगुत्तमः ॥
अर्जितं विविधोपायैर्जङ्गमाद्भिषजान्मया ।
इदं तत्त्वं प्रलब्धं तु पालनीयं चिकित्सकैः ॥

१ भाग शुद्ध पारा और २ भाग शुद्ध बंग को एकत्र मिलाकर मिट्टीके पात्रमें डालकर चूल्हे पर रक्खें और उसके नीचे १२ पहर अग्नि जलावें तथा उसे निरन्तर नीमके सोटेसे घोटते रहें। इस क्रियासे पारदकी पीतवर्ण भस्म बन जाती है।

इसे यथोचित अनुपानके साथ देनेसे समस्त रोग नष्ट होते हैं। यह विधि एक महान वैद्यसे बड़े यत्नसे प्राप्त हुई है।

(मात्रा—१ रत्ती ।)

(४३५५) **पारदभस्मविधिः** (१८)

(पीतभस्म)

(र. रा. सु.)

भूधात्रीहस्तिशुण्डीभ्यां रसगन्धं च मर्दयेत् ।
काचकुप्यां चतुर्यामं पक्वः पीतो भवेद्रसः ॥

पारे गन्धककी कज्जलीको १–१ दिन भुइं

आमला और हाथी सुण्डीके स्वरसमें घोटकर कपड़ मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर उसे बालु-कायन्त्रमें रखकर ४ पहरकी अग्नि दें । तदनन्तर शीशीके स्वाङ्ग शीतल होनेपर उसे तोड़कर उसमें से पारदभस्मको निकाल लें । यह पीले रंगकी भस्म होगी ।

(४३५६) **पारदभस्मविधिः** (१९)

(श्वेतभस्म)

(र. र. स. । पू. खं. अ. ११)

देवदालीं हरिक्रान्तामारनालेन पेषयेत् ।
तद्द्रवैः सप्तधा सूतं कुर्यान्मर्दितमूर्छितम् ॥
तत्सूतं खर्परे दद्याद्दत्वा दत्वा तु तद्रसम् ।
चुल्योपरि पचेद्याह्नि भस्म स्याल्लवणोपमम् ॥

बिंडाल और कृष्ण अपराजिता (कोयल) को काञ्जीमें पीसकर कपड़ेसे निचोड़कर उसका रस निकालें और इस रसमें सात बार (सात दिन) शुद्ध पारदको घोटें । तदनन्तर उस पारदको मिट्टी के पात्रमें डालकर अग्नि पर चढ़ा दें और उसमें उपरोक्त दोनों पदार्थोंका रस थोड़ा थोड़ा डालते हुवे १२ पहर तक पकावें ।

इस क्रियासे लवणके समान पारदभस्म तैयार होती है ।

(४३५७) **पारदभस्मानुपानानि**

(र. र. स. । अ. २०)

रोगोक्तयोगयुक्तोऽयं तत्तद्रोगहरो भवेत् ।
सप्तुस्तपर्पटक्राथो भस्मसूतो हरेज्ज्वरम् ॥
दशमूलकषायेण पिप्पल्या च समस्तजम् ॥
माक्षिकाऽभयया वासापिप्पल्या चास्रपित्तनुत् ॥
कण्टकारीकषायेण पिप्पल्या च सकासजित् ।
अजायाः क्षीरसिद्धेन कणायुक्तेन सर्पिषा ॥
त्रिफलागन्धकव्योषगुडैर्वा क्षपयेत्क्षयम् ।
हिक्कां निहन्ति रुचकबीजपूराम्लमाक्षिकैः ॥
छर्दिदाहौ मधुसिता लाजामुद्गसिताम्बुभिः ।
अर्शांसि तैलसिन्धूत्थपुटपाचितसूरणैः ॥
त्वक्पल्लवैः कषायेण शृतेनोदश्विदम्भसा ।
क्षीरिण्या वाप्यतीसारं विषूचीं कणहिङ्गुना ॥
अजीर्णे काञ्जिकैरण्डक्राथपथ्यावलेहतः ।
बिल्वकर्कटिकागर्भे मसूरकथिताम्बु वा ॥
कृच्छ्रे मृतरसक्षीरक्षीरिणीक्षुरमाक्षिकैः ॥
पारदभस्मशिलाजतुकृष्णा-
लोहमलत्रिफलाकुलिबीजम् ।
ताप्यनिशारजतोपलकान्त-
व्योपरजः खपुरश्च कपित्थात् ॥
सर्वमिदं परिचूर्ण्य समांशं
भावितभृङ्गरसं दिवसादौ ।
विंशतिवारमिदं मधुलीढं
विंशतिमेहहरं हरिदृष्टम् ॥
न्यग्रोधाद्यसनाद्यैर्वा क्राथयुक्तो मृतो रसः ।
पथ्यालशुनगोमूत्रैः प्लीहगुल्मनिबर्हणः ॥
कलाययूषशम्बूकक्षाराभ्यां पक्तिशूलनुत् ।
सत्र्यूषणतिलक्राथेनामशूलस्य नाशनः ॥
नवनीतसुधाक्षीरभावितोऽभययोदरे ।
स हितः सहितो यष्टीवारिणा कामलामये ॥
फलत्रिकादिकाथेन पाण्डुशोफे सकामले ।
शोफे सविश्वभूनिम्बक्राथगोमूत्रसंयुतः ॥
निम्बामलककङ्कुष्ठैः प्रशस्तः स मृतो रसः ॥

फेनिलफलाहिदर्वीकन्दरसं खादतोऽनुदिनम्।
फेनिलमूलोद्वर्तनमाचरतोपि च कुतः कुष्ठम् ॥
चित्रकवानरिवायसितुण्डी–
बाकुचिकाद्विगुणाः परिपीताः।
मूत्रयुता मृतसूतसमेता–
स्तक्रभुजः शमयन्ति किलासम् ॥
सनिम्बपल्लवक्षौद्रः कृमीन्हन्ति मृतो रसः।
पीतो लशुनसिद्धेन तैलेनानिलजान्गदान् ॥
विश्वैरण्डमृतक्षीरसहितो गृध्रसीं जयेत्।
गुडाभयागुडूच्यम्बुयुक्तः पवनशोणितम् ॥
त्रिकटुत्रिफलावेल्लैः समांशो गुग्गुलुर्जयेत्।
वातारितैलसंयुक्तः स्थौल्यं भस्मरसान्वितः ॥
मधूदकाभ्यां युक्तो वा कार्श्यं तु शर्करान्वितः।
हिङ्गुसौवर्चलव्योषमूत्रसिद्धेन सर्पिषा ॥
रसो हन्यादपस्मारमुन्मादं च तथाञ्जनात् ॥
मधूककुनटीतार्क्ष्यपारावतमलैर्युतः ॥
धान्याम्लपिष्टाष्टमपिप्पलीका–
न्कार्पासबीजान्करमर्दनेन।
आदाय तैलं मृतसूतयुक्त–
मक्ष्णि प्रयुञ्जीत विशीर्णरोम्णि ॥

पारद भस्म जिस रोगको नष्ट करने वाले किसी योगके साथ खिलाई जाती है उसीको नष्ट करती है।

पारद भस्मः—

ज्वरमें मोथे और पित्तपापड़ेके क्वाथके साथ;

त्रिदोष ज्वरमें—पीपलके चूर्ण और दशमूल के क्वाथके साथ;

रक्तपित्तमें—हर्र, बासा और पीपलके चूर्णको शहदमें मिलाकर उसके साथ;

खांसीमें—पीपलके चूर्ण और कटेलीके क्वाथ के साथ;

क्षयमें—बकरीके दूधसे सिद्ध घृतमें पीपलका चूर्ण मिलाकर उसके साथ अथवा त्रिफला, त्रिकुटा, शुद्ध गन्धक और गुड़के समान-भाग-मिश्रित चूर्णके साथ;

हिचकीमें—सञ्चल (काला नमक), बिजौर का रस और शहदके साथ;

छर्दि और दाहमें—मिश्री, शहद और धान की खीलेंके साथ अथवा मिश्रीके शर्बत कौर मूंग के यूषके साथ;

अर्शमें—पुटपाकविधिसे पक्व सूरण (जिमिकन्द), और सेंधा नमकके चूर्णको तेलमें मिलाकर उसके साथ;

अतिसारमें—खिरनीकी छाल और उसके पत्तोंको तक्रके पानीमें पकाकर उसके साथ;

विसूचिकामें—हींग और पीपल के चूर्ण के साथ;

अजीर्णमें—काञ्जी या अरण्डमूलके क्वाथ अथवा "हरीतकीअवलेह"के साथ;

मूत्रकृच्छ्रमें—बेलगिरी, ककड़ीका गूदा, मसूरका क्वाथ, दूध, दुद्धी, तालमखानेका चूर्ण और शहद को एकत्र मिलाकर उस के साथ खिलानी चाहिये।

प्रमेहमें—पारदभस्म, शिलाजीत, पीपल, मण्डूर भस्म, त्रिफला, कटेली के बीज, स्वर्णमाक्षिक-

भस्म, हल्दी, चांदीभस्म, सूर्यकान्तमणि भस्म, त्रिकुटे का चूर्ण, अभ्रकभस्म, शुद्ध गूगल और कैथका फल समान-भाग लेकर सबका महीन चूर्ण बनाकर उसे १ दिन भंगरेके रसमें घोट लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार शहदमें मिलाकर चाटनेसे बीस दिनमें बीस प्रकारके प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

प्लीहा और गुल्ममें—न्यग्रोधादिगण अथवा असनादि गणके काथके साथ पारद भस्म खाकर हर्र और ल्हसनको गोमूत्रमें पीसकर खाना चाहिये।

पक्तिशूलमें—मटरके काथमें शंख भस्म मिलाकर उसके साथ और

आमशूलमें—तिलके काथमें त्रिकटुका चूर्ण मलाकर उसके साथ पारद भस्म सेवन करनी चाहिये।

कामलामें—पारद भस्मको नवनीत और थोहर (सेंड) के दूधकी १-१ भावना देकर उसे हर्रके चूर्णमें मिलाकर खाना और ऊपर से मुलैठीका काथ पीना चाहिये।

पाण्डु शोथ और कामलामें—त्रिफलादिके काथके साथ;

शोथमें—सोंठ और चिरायतेके काथमें गोमूत्र मिलाकर उसके साथ अथवा नीमकी छाल, आमला और कंकुष्ठके चूर्णके साथ खानी चाहिये।

कुष्ठमें—रीठेके फल और नागदमनके कन्दके चूर्णके साथ पारद भस्म सेवन करनी और शरीर पर रीठेकी जड़का चूर्ण (कांजीमें मिलाकर) मलना चाहिये।

किलासकुष्ठमें—चीता १ भाग, कौंचके बीज २ भाग, मकोय ४ भाग, जंगली कन्दूरी ८ भाग और बावची १६ भाग लेकर सबको गोमूत्रमें पीस कर उसके साथ पारदभस्म सेवन करनी और पथ्यमें तक्र पीना चाहिये।

कृमिरोगमें—नीमके पत्तोंको शहदके साथ मिलाकर उसके साथ;

वातव्याधिमें—ल्हसनसे सिद्ध तैलके साथ;

गृध्रसीमें—सोंठ और अरण्डमूलसे सिद्ध दूध के साथ;

वातरक्तमें—गुड़, हर्र, गिलोय और सुगन्धबालाके चूर्ण के साथ;

स्थूलतामें—त्रिकुटा, त्रिफला और बायविडङ्गके चूर्णमें सबके बराबर गूगल मिलाकर उसे अण्डीके तैलमें मिलाकर उसके साथ अथवा शहदके शर्बत के साथ और

कृशतामें—खांडके साथ पारद भस्म खानी चाहिये।

उन्माद और अपस्मारमें—हींग, सञ्चल (काला नमक) और त्रिकुटाके कल्क तथा गोमूत्रसे सिद्ध घीके साथ पारदभस्म खिलानी चाहिये तथा महुवेकी गुठलीकी मींग, मनसिल, रसौत, कबूतरकी बीट और पारदभस्मको पीसकर आंखोंमें लगाना चाहिये।

नेत्ररोगोंमें—आठ भाग पीपलके चूर्ण और १ भाग बिनौलेकी गिरीको काञ्जीमें पीसकर (धूप में रखदें और उसे) हाथोंसे रगड़े, इससे जो तैल निकले उसमें पारद भस्मको घोटकर आंखोंकी

पलकों पर लेप करनेसे पलकोंके बाल गिरने बन्द हो जाते हैं।

(४३५८) **पारदविकारहरो योगः**

(र. रा. सु । पूर्व ख.)

विकारा यदि जायन्ते पारदान्मलसंयुतान् ।
गन्धकं सेवयेद्धीमान् पाचितं विधिपूर्वकम् ॥

अशुद्ध पारद सेवनसे उत्पन्न हुवे विकार शुद्ध गन्धक सेवन करनेसे नष्ट हो जाते हैं।

(४३५९) **पारदशोधनम्** (१)

(आ. वे. प्र. । अ. १; शा. ध. । खं. २ अ. १२)

राजीरसोनमूषायां रसं क्षिप्त्वा विबन्धयेत् ।
वस्त्रेण दोलिकायन्त्रे स्वेदयेत्काञ्जिकैस्त्र्यहम् ॥
दिनैकं मर्दयेत्पश्चात् कुमारीसम्भवैर्द्रवैः ।
तथा चित्रकजैः क्वाथैर्मर्दयेदेकवासरम् ॥
काकमाचीरसैस्तद्वद्दिनमेकं तु मर्दयेत् ।
त्रिफलायास्ततः क्वाथे रसो मर्द्यः प्रयत्नतः ॥
ततस्तेभ्यः पृथक्कुर्यात् सूतं प्रक्षाल्य काञ्जिकैः ।
ततः क्षिप्त्वा रसं खल्वे रसादर्धं च सैन्धवम् ॥
मर्दयेन्निम्बुकरसैर्दिनमेकमनारतम् ।
ततो राजी रसोनश्च मुख्यश्च नवसागरः ॥
एते रससमैस्तद्वत् सूतो मर्द्यस्तुषाम्बुना ।
ततः संशोष्य चक्राभं कृत्वा लिप्त्वा च हिङ्गुना ॥
द्विस्थालीसम्पुटे धृत्वा पूरयेल्लवणेन च ।
अधः स्थाल्यां ततो मुद्रां दद्याद्दृढतरां बुधः ॥
विशोष्याग्निं विधायाधो निषिञ्चेदम्बु चोपरि ।
ततस्तु दद्यात्तीव्राग्निं तदधः प्रहरत्रयम् ॥
एवं निपत्य यात्यूर्ध्वं रसो दोषविवर्जितः ।
अथोर्ध्वपिठरीमध्ये लग्नो ग्राह्यो रसोत्तमः ॥

समान भाग राई और ल्हसनको एकत्र कूट-कर उसकी मूषा बनावें और उसमें पारा डालकर उसे कपड़ेमें बांधकर ३ दिन तक दोलायन्त्र विधि से काञ्जीमें स्वेदित करें। तत्पश्चात् उस पारदको १-१ दिन ग्वारपाठाके रस, चीतेके क्वाथ, मकोय के रस और त्रिफलाके क्वाथमें पृथक् पृथक् घोटकर काञ्जीसे अच्छी तरह धो डालें। तदनन्तर उसमें उससे आधा सेंधा नमकका चूर्ण मिलाकर १ दिन नीबूके रसके साथ घोटें। तत्पश्चात् उसमें पिसी हुई राई, ल्हसन और नवसादर समान-भाग-मिश्रित पारदके बराबर मिलाकर १ दिन काञ्जीके साथ घोटें और फिर उसकी गोल टिकिया बनाकर सुखा लें और उनके ऊपर हींगका लेप कर दें। तत्पश्चात् उन्हें एक हांडीमें रखकर उसे नमकसे भर दें और उसके ऊपर दूसरी हांडी उलटी रखकर दोनोंकी सन्धिको गुड़चूने आदिसे बन्द कर दें और सुखाकर इस यन्त्रको चूल्हे पर रखकर इसके नीचे ३ पहर तक तीव्राग्नि जलावें। इस बीचमें ऊपर की हांडी पर भीगा हुवा कपड़ा रक्खे रहना चाहिये और उसे बार बार बदल कर ऊपर वाली हांडीको ठण्डा रखना चाहिये।

३ पहर बाद यन्त्रके स्वांग शीतल होनेपर जोड़को आहिस्तासे खोलकर ऊपर वाली हांडीमें लगे हुवे पारेको सावधानीपूर्वक छुड़ा लेना चाहिये।

यह पारद सर्व-दोष-रहित और अत्यन्त शुद्ध होगा।

(४३६०) **पारदशोधनम्** (२)

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड)

जयन्त्या वर्द्धमानस्य चार्द्रकस्य रसेन च ।
वायस्याश्चानुपूर्व्येण मर्दनं रसशोधनम् ॥
एषां प्रत्येकशस्तावन्मर्दयेत्स्वरसेन च ।
यावच्च शुष्कतां याति सप्तवारं क्रमेण च ॥
उद्धृत्योष्णारणालेन मृद्भाण्डे क्षालयेत्सुधीः ।
सर्वदोष विनिर्म्मुक्तः सप्तकञ्चुकवर्जितः ॥
जायते शुद्धसूतोऽयं युज्यते सर्वकर्म्मसु ॥

पारदको जयन्ती, अरण्ड, अदरक और मकोय के रसमें क्रमशः पृथक् पृथक् सात सात बार घोटकर सुखा लें । तदनन्तर उसे मिट्टीके पात्रमें डालकर गर्म काञ्जीसे धो डालें तो पारद सप्त कञ्चुकी और सर्वदोष रहित हो जाता है । इसे समस्त योगोंमें डाल सकते हैं ।

नोट-पारदको हर बार घोटकर सुखाकर काञ्जीसे धोना चाहिये अर्थात उक्त ४ ओषधियों के रसमें २८ बार घोटकर सुखाना और २८ बार काञ्जीसे धोना पड़ेगा ।

(४३६१) **पारदशोधनम्** (३)

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड)

रसोनस्वरसैः सूतः नागवल्लीदलोत्थितैः ।
त्रिफलायास्तथा क्वाथे रसो मर्द्यः प्रयत्नतः ॥
ततस्तेभ्यः पृथक् कृत्वा सूतं प्रक्षाल्य काञ्जिकैः ।
सर्वदोषविनिर्म्मुक्तं योजयेद्रसकर्मसु ॥

पारदको १-१ दिन क्रमशः ल्हसन और पानके स्वरस तथा त्रिफलाके क्वाथमें घोटकर काञ्जी से धो डालें । इस क्रियासे पारद सर्वदोषरहित शुद्ध हो जाता है ।

(४३६२) **पारदशोधनम्** (४)

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड)

रसस्य द्वादशांशेन गन्धं दत्त्वा विमर्दयेत् ।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैर्यामं पाच्यं पातनयन्त्रके ॥
पुनर्मर्द्यं पुनः पाच्यं सप्तवार विधानतः ॥

पारदमें उसका बारहवां भाग गन्धक मिलाकर कज्जली बनावें और फिर उसे १ पहर तक नीबूके रसमें घोटकर ऊर्ध्वपातन यन्त्र द्वारा उड़ा लें । इसी प्रकार गन्धकके साथ घोट घोटकर सात बार उड़ानेसे पारद शुद्ध हो जाता है ।

(४३६३) **पारदशोधनम्** (५)

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड)

कुमार्य्या च निशाचूर्णैर्दिनं सूतं विमर्दयेत् ।
पातयेत्पातनायन्त्रे सम्यक् शुद्धो भवेद्रसः ॥

पारदमें उसका सोलहवां भाग हल्दीका चूर्ण मिलाकर दोनोंको १ दिन ग्वारपाठा के रसमें घोटकर उर्ध्वपातनयन्त्र द्वारा उड़ानेसे वह शुद्ध हो जाता है ।

(४३६४) **पारदशोधनम्** (६)

(र. सा. स. । पूर्वखण्ड)

श्रीखण्डं देवकाष्ठञ्च काकजङ्घा जयाद्रवैः ।
कर्कटीमूषलीकन्याद्रवं दत्त्वा विमर्दयेत् ॥
दिनैकं पातयेत्पश्चात्तं शुद्धं विनियोजयेत् ॥

पारदको सफेद चन्दन, देवदारु, काकजंघा, जयन्ती, बांझककोड़ा (या देवदाली--बिंडाल), मूसली और ग्वारपाठामें से जिन के स्वरस मिल सकें उनके स्वरसके और शेष द्रव्योंके क्वाथके

साथ १-१ दिन घोटकर ऊर्ध्व पातनयन्त्रसे उड़ा लें। इस क्रियासे पारद शुद्ध हो जाता है।

(४३६५-४३७९) **पारदसंस्काराः**

(र. चं.; र. रा. सु.)

स्वेदनं मर्दनञ्चैव मूर्च्छनोत्थापने तथा।
पातनं रोधनं चैव नियामनमतः परम्॥
दीपनं चेति संस्काराः सूतस्याष्टौ प्रकीर्तिताः॥

पारदके ८ संस्कार होते हैं यथा:—स्वेदन, मर्दन, मूर्च्छन, उत्थापन, पातन, रोधन, नियामन और दीपन संस्कार।

(यह आठों संस्कार क्रमपूर्वक करनेसे पारद सर्वदोष-रहित हो जाता है। नीचे इन आठोंका यथाक्रम वर्णन किया जाता है। जो वैद्य यह आठों संस्कार न कर सकें वे पीछे बतलाई हुई पारद-शोधन की किसी विधिसे पारद शुद्ध करके काम चला सकते हैं।

(१) **पारदस्वेदनम्** (अ)

(भा. प्र.। प्रथम खं.)

त्र्यूषणं लवणं राजी रजनी त्रिफलार्द्रकम्।
महाबला नागबला मेघनादः पुनर्नवा॥
मेषशृङ्गी चित्रकञ्च नवसारं समं समम्।
एतत्समस्तं व्यस्तं वा पूर्वाम्लेनैव पेषयेत्॥
प्रलिम्पेत्तेन कल्केन वस्त्रमङ्गुलमात्रकम्।
तन्मध्ये निक्षिपेत्सूतं बद्ध्वा तत्रिदिनं पचेत्॥
दोलायन्त्रेऽम्लसंयुक्ते जायते स्वेदितो रसः॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानमक, राई, हल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, अदरक, महाबला (खरैटी-भेद), नागबला (गंगेरन), चौलाई, बिसखपरा (साठी), मेढासिंगी, चीता और नसादर समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर या पृथक् पृथक् काञ्जीमें पीस लें और फिर उस कल्कका एक वस्त्र पर १ अंगुल मोटा लेप करदें। तत्पश्चात् इस वस्त्रमें पारदकी पोटली बनाकर उसे दोलायन्त्र विधिसे ३ दिन तक काञ्जीमें पकावें। इसीका नाम स्वेदन संस्कार है।

पारदस्वेदनम् (आ)

(भा. प्र.। प्र. खं)

मूलकानलसिन्धूत्थत्र्यूषणार्द्रकराजिकाः।
रसस्य षोडशांशेन द्रव्यं युञ्ज्यात्पृथक् पृथक्॥
द्रवेष्वनुक्तमानेषु मतं मानमितं बुधैः।
पट्टावृतेषु चैतेषु सूतं प्रक्षिप्य काञ्जिके॥
स्वेदयेद्दिनमेकञ्च दोलायन्त्रेण बुद्धिमान्।
स्वेदात्तीव्रो भवेत्सूतो मर्दनाच्च सुनिर्मलः॥

मूली, चीता, सेंधानमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, अदरक और राई; इनमें से हरेक पदार्थ पारेका सोलहवां भाग लें, क्योंकि पारद-शोधनमें जहां ओषधियोंका परिमाण न बतलाया हो वहां हरेक पदार्थ पारदसे सोलहवां भाग लेनेका नियम है। तदनन्तर इन सब चीज़ोंको काञ्जीमें पीसकर एक कपड़ेपर लेप कर दें और उसमें पारद को बांधकर १ दिन दोलायन्त्र-विधिसे काञ्जीमें पकावें।

स्वेदन करनेसे पारद तीव्र और मर्दन करनेसे निर्मल होता है।

पारदस्वेदनम् (इ)

(र. रा. सु.। पूर्वखण्ड; रसें. चि. म.। अ. ३)

रसं चतुर्गुणे वस्त्रे बद्ध्वा दोलाकृतं पचेत्।
दिनं व्योषवरावह्निकन्याकल्केषु काञ्जिके॥

दोषशेषापनुत्त्यर्थमिदं स्वेदनमुच्यते ॥

पारदको चार तह किये हुवे वस्त्रमें बांधकर दोलायन्त्र विधिसे १-१ दिन त्रिकुटा, त्रिफला, चीता और ग्वारपाठाके कल्कको काञ्जीमें मिलाकर उसके साथ स्वेदन करें।

नोट—स्वेदन संस्कारकी तीन विधियां बतलाई गई हैं इनमें से किसी एकके द्वारा स्वेदन कर लेना ही पर्याप्त है।

(२) मर्दनम्

(यो. र. । पारदप्रकरण)

रक्तेष्टिकानिशाधूमसारोर्णाभस्मचूर्णकैः।
जम्बीरद्रवसंयुक्तैर्नागदोषापनुत्तये ॥
विशालाङ्कोलमूलानां रजसा काञ्जिकेन च।
शनैः शनैः स्वहस्तेन वङ्गदोषविमुक्तये ॥
राजवृक्षस्य मूलोत्थचूर्णेन सह कन्यका।
मलदोषापनुत्यर्थं चित्रको वह्निदूषणम् ॥
चाञ्चल्यं कृष्णधतूरो गिरिं हन्ति कटुत्रयम् ॥

पारेमें उससे सोलहवां भाग लाल ईंटका चूर्ण, हल्दीका चूर्ण, घरका धुवां, ऊनकी भस्म और चूना मिलाकर उसमें नीबूका रस डालकर १ दिन घोटें और फिर गरम काञ्जीसे धो डालें। इस क्रियासे पारद नागदोषमुक्त हो जाता है।

इसके पश्चात् उस पारदमें उसका सोलहवां भाग इन्द्रायन मूल और अंकोलका चूर्ण मिलाकर काञ्जीके साथ १ दिन घोटकर गर्म काञ्जीसे धो डालें। इससे पारद बंगदोष-रहित हो जाता है।

इसके पश्चात् उसमें अमलतासकी जड़का चूर्ण मिलाकर ग्वारपाठाके रसके साथ घोटकर धो डालें। इससे उसका मल दोष दूर हो जाता है।

इसी प्रकार उसमें चीतेका चूर्ण मिलाकर घोटनेसे वह्निदोष, काले धतूरेके रसमें घोटनेसे चाञ्चल्य और त्रिकुटाके रसमें घोटनेसे उसका गिरि दोष नष्ट हो जाता है।

प्रत्येक ओषधिका चूर्ण पारदका सोलहवां भाग लेना चाहिये और हरेकमें १-१ दिन घोटनेके पश्चात् पारदको काञ्जीसे धो डालना चाहिये।

(३) मूर्च्छनम् (अ)

(र. रा. सु. । पूर्वखण्ड)

गृहकन्यामलं हन्यात् त्रिफलावह्निनाशिनी।
चित्रमूलं विषं हन्ति तस्मादेभिः प्रयत्नतः ॥
मिश्रितं सूतकं द्रव्यैः सप्तवाराणि मूर्च्छयेत्।
इत्थं सम्मूर्च्छितः सूतो दोषशून्यः प्रजायते ॥

पारदको ग्वारपाठा, त्रिफला और चीतामूलके साथ पृथक् पृथक् ७-७ बार घोटनेसे उसके मल, असह्याग्नि और विष दोष नष्ट हो जाते हैं।

प्रत्येक द्रव्य पारदका सोलहवां भाग लेना चाहिये।

मूर्च्छनम् (आ)

(भा. प्र. । खं. १)

त्र्यूषणं त्रिफला वन्ध्याकन्दैः क्षुद्राद्वयान्वितैः।
चित्रकोर्णानिशाक्षारकन्यार्ककनकद्रवैः ॥
सूतं कृतेन यूषेण वारान्सप्तविमर्दयेत्।
इत्थं सम्मूर्च्छितः सूतस्त्यजेत्सप्तापि कञ्चुकान् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बांझककोड़ेकी जड़, छोटी और बड़ी कटेली, चीतामूल, ऊन, हल्दी, यवक्षार, ग्वारपाठा, आक और

धतूरेके क्वाथमें पारदको सात बार घोटनेसे वह सप्तकञ्चुकी–रहित हो जाता है ।

नोट---मूर्च्छन कर्मके जो २ प्रयोग लिखे गये हैं उनमें से किसी एकसे ही मूर्च्छन-संस्कार कर लेना पर्याप्त है ।

(४) उत्थापनम्

(र. र. स. । अ. ११)

अस्माद्विरेकात्संशुद्धो रसः पात्यस्ततः परम् ।
उद्धृतः काञ्जिकक्काथात्पूतिदोषनिवृत्तये ॥

मूर्च्छनके पश्चात् पारदको ऊर्ध्वपातनयन्त्र द्वारा उड़ाकर गर्म कांजीसे धो डालना चाहिये । इसीका नाम उत्थापन–संस्कार है ।

(५) पातनम्

(१) पारदाधः पातनम्

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड; र. चि. म. । अ. ३)

नवनीताह्वयं सूतं घृष्ट्वा जम्बाम्भसा दिनम् ।
वानरीशिग्रुशिखिभिः सैन्धवासुरि संयुतैः ॥
नष्टपिष्टं रसं कृत्वा लेपयेदूर्द्धभाण्डके ।
ऊर्ध्वभाण्डोदरं लिप्त्वाऽधोभाण्डं जलसंयुतम् ॥
सन्धिलेपं द्वयोः कृत्वा तद्यन्त्रं भुवि पूरयेत् ।
उपरिष्टात्पुटे दत्ते जले पतति पारदः ॥
अधःपातनमित्युक्तं सिद्धाद्यैः सूतकर्म्मणि ॥

समान भाग गन्धक और पारदकी कज्जली में कौंचके बीज, सहंजनेके बीज, चीता, सेंधानमक और राईका चूर्ण मिलाकर उसे १ दिन जामनके रसमें घोटकर पिट्ठी बना लें और फिर उसे एक हाण्डीके भीतर लेप कर दें । इस हाण्डीको दूसरी उतनी ही बड़ी पानीसे भरी हुई हाण्डीपर उलटी रखकर दोनोंके जोड़को गुड़ चूने आदिसे अच्छी तरह बन्द कर दें और उसे सुखाकर भूमिमें गाड़ दें ।

पानी वाली हाण्डी भूमिमें और ऊपर वाली हाण्डी भूमिके बाहर रहनी चाहिये । अब ऊपर वाली हाण्डीके चारों ओर तथा उसके ऊपर अरने उपले लगाकर उनमें आग लगा देनी चाहिये ।

इस क्रियासे पारद उड़कर नीचेवाली हाण्डी में पानीमें चला जायगा । इसीका नाम अधःपातन संस्कार है ।

(२) पारदोर्ध्वपातनम् (अ)

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड; र. रा. सु. । पूर्वखण्ड)

भागास्त्रयो रसस्यार्कं भागमेकं विमर्दयेत् ।
जम्बीरद्रवयोगेन यावदायाति पिण्डताम् ॥
तत्पिण्डं तलभाण्डस्थमूर्द्धभाण्डे जलं क्षिपेत् ।
कृत्वालवालं केनापि ततः सूतं समुद्धरेत् ॥
उर्द्धपातनमित्युक्तं भिषग्भिः सूतशोधने ॥

१ भाग ताम्रके बारीक पत्र और ३ भाग पारदको एकत्र मिलाकर नीबूका रस डालकर इतना घोटें कि दोनोंका एक पिण्ड बन जाय । इस गोलेको कपरमिट्टी की हुई हाण्डीमें रख कर उसके ऊपर दूसरी हांडी उल्टी ढककर दोनों के जोडको गुड़ चूने आदिसे अच्छी तरह बन्द कर दें । तदनन्तर ऊपर वाली हाण्डीकी तली पर मुलतानी मिट्टी आदिसे एक आलबाल (घेरा) बनाकर उसमें पानी भर दें । अब इस यन्त्रको चूल्हे पर चढ़ाकर उसके नीचे मृदु मध्यम और तीव्र अग्नि

जलावें । ऊपर वाली हाण्डीके पानीको बारबार बद-लकर उसकी तलीको ठंडा रखना चाहिये ।

इस क्रियासे (३ पहरमें) पारद उड़कर ऊपर जा लगेगा । हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर उसे सावधानी पूर्वक निकाल लेना चाहिये ।

पारदोर्द्ध्वपातनम् (आ)

(भा. प्र. । खं. १)

मयूरग्रीवताप्याभ्यां नष्टपिष्टीकृतस्य च ।
यन्त्रे विद्याधरे कुर्याद्रसेन्द्रस्योर्द्ध्वपातनम् ॥

पारद में नीला थोथा और स्वर्णमाक्षिकका चूर्ण मिलाकर उसे घी कुमार (ग्वारपाठे) के रस के साथ इतना घोटें कि पारद दिखलाई न दे और सबकी पिट्ठी सी हो जाय । इसे डमरु यन्त्रमें रखकर उड़ा लेना चाहिये ।

(३) पारदस्य तिर्यकपातनसंस्कारः

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड; र. चि. म. । अ. ३; र. रा. सु. । पूर्वखण्ड.)

घटे रसं विनिक्षिप्य सजलं घटमन्यकम् ।
तिर्यङ्मुखं द्वयोः कृत्वा तन्मुखं रोधयेत्सुधीः ॥
रसाधो ज्वालयेदग्निं यावत्सूतो जलं विशेत् ।
तिर्यक् पातनमित्युक्तं सिद्धैर्नागार्जुनादिभिः ॥

एक घड़ेमें पारा डालें और दूसरे उतने ही बड़े घड़ेमें पानी भर दें । तदनन्तर दोनोंके मुखों को तिरछा मिलाकर सन्धिको गुड़ चूने आदिसे अच्छी तरह बन्द कर दें, और फिर पारद वाले घड़े के नीचे आग जलावें ।

इस विधिसे पारा उड़कर पानी वाले घड़े में चला जायगा । इसीका नाम " तिर्यकपातन संस्कार " है ।

नोट—पातनके जो तीन भेद—अधः पातन, ऊर्द्ध्व पातन और तिर्यकपातन लिखे गये हैं वे तीनों आवश्यक हैं । एक एक विधिके जो कई कई प्रकार लिखे गये हैं उनमें से कोइ एक किया जा सकता है ।

(६) **रोधनसंस्कारः**

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड; र. रा. सु. । पूर्वखण्ड)

एवं कदर्थितः सूतः षण्ढत्वमधिगच्छति ।
तन्मुक्तयेऽस्य क्रियते बोधनं कथ्यते हि तत् ॥
विश्वामित्रकपाले वा काचकूप्यामथापि वा ।
सूते जलं विनिक्षिप्य तत्र तन्मज्जनावधि ॥
पूरयेत्रिदिनं भूम्यां गजहस्तप्रमाणतः ।
अनेन सूतराजोऽयं षण्ढभावं विमुञ्चति ॥

पूर्वोक्त संस्कारोंसे पारदमें षण्ढत्व आ जाता है उसे नष्ट करने के लिये यह रोधन संस्कार करना चाहिये ।

नारयल या काचकी शीशीमें पारेको डालकर उसमें इतना पानी डालें कि जिससे पारद डूब जाय । तत्पश्चात् उसका मुख अच्छी तरह बन्द करके उसे डेढ़ हाथ नीचे भूमिमें गाढ़ दें और ३ दिन पश्चात् निकाल लें । इससे पारेका नपुंसक-त्व दोष दूर हो जाता है ।

(७) **नियमनसंस्कारः** (अ)

(र. रा. सु । पूर्वखण्ड)

उत्तराशाभवः स्थूलो रक्तसैन्धवलोष्टकः ।
तद्गर्भे रन्ध्रकं कृत्वा सूतं तत्र विनिक्षिपेत् ॥

ततस्तु चणकक्षारं दत्त्वा चोपरि निम्बुकम् ।
रसं क्षिप्त्वा दातव्यं तादृग् सैन्धवखोटकम् ॥
गर्त्तं कृत्वा धरागर्भे दत्वा सैन्धवसंयुतम् ।
धूलिमष्टाङ्गुलं दत्वा कारिषं दिनसप्तकम् ॥
वह्निं मज्ज्वाल्य तद्ग्राह्यं क्षालयेत्काञ्जिकेन तु ।
अयं नियमनो नामसंस्कारो गदितो बुधैः ॥
अभावे चणकक्षारादर्पयेन्नवसादरम् ॥

लाल रंगके सेंधेका एक बड़ासा पत्थर लेकर उसके बीचमें एक गढ़ा करके उसमें पारद भर दें और उसके ऊपर चनेका खार (अभावमें नसदर) डालकर ऊपरसे नीबूका रस डाल दें। तत्पश्चात् उस छिद्रको सेंधेके टुकड़ेसे ढककर जोड़को अच्छी तरह बन्द कर दें और फिर उसे भूमिमें आठ अंगुल नीचे गाढ़कर उसके ऊपर सात दिन तक अरण्य उपलोंकी अग्नि जलावें। तत्पश्चात् पारद को निकालकर कांजीसे धो डालें।

नियमनसंस्कारः (आ)

(र. रा. सु । पूर्वखण्ड)

सर्पाक्षीचिञ्चिकावन्ध्याभृङ्गाब्दकनकाम्बुभिः ।
दिनं संस्वेदितः सूतो नियमात्स्थिरतां व्रजेत् ॥

सर्पाक्षी (नाकुली कन्द), इमली, बांझ-ककोड़ा, भंगरा, नागरमोथा और धतूरेके रसमें पारदको १-१ दिन स्वेदित करनेसे उसकी चञ्चलता दूर हो जाती है।

(८) **दीपनसंस्कारः**

(र. रा. सु. । पूर्वखण्ड)

काशीसं पञ्चलवणं राजिकामरिचानि च ।
भूशिग्रुबीजमेकत्र टङ्कणेन समन्वितम् ॥
आलोड्य काञ्जिके दोलायन्त्रे पाच्यो त्रिभि-दिनैः ।
दीपनं जायते सम्यक् सूतराजस्य चोत्तमम् ॥

कसीस, पांचो नमक, राई, काली मिरच, सहंजनेके बीज और सुहागेके चूर्णको कांजीमें मिलाकर उसमें पारदको ३ दिन तक दोलायन्त्र विधिसे पकावें। इसे दीपन संस्कार कहते हैं।

(४३८०) **पारदस्याग्निस्थायीकरणम्**

(र. चि. म. । स्तबक ५)

ताम्रेण वा समं पिष्टीं चतुर्भागां विधीयताम् ।
पातयेड्डमरूयन्त्रे त्रिवारं निम्बुकद्रवैः ॥
ततो रक्तगणेनायं रसराजो यथा दृढम् ।
मर्दितो जायते वह्निस्थायी विघ्नविवर्जितः ॥

शुद्ध पारदमें उससे चौथाई शुद्ध ताम्रके कण्टकवेधी पत्र डालकर दानोंको नीबूके रसके साथ अच्छी तरह घोटकर पिट्टी सी बना लें और उसे ३ बार डमरुयन्त्रसे उड़ाकर रक्तगणके[1] रसमें अच्छी तरह खरल करें। इस क्रियासे पारद अग्निस्थायी हो जाता है।

(४३८१) **पारदादिगुटिका** (रसादिगुटिका)

(वै. र.; र. रा. सु. । दाह; वृ. यो. त. । त. ८७; र. चं. । दाह.)

रसबलिघनसारचन्दनानां
सनलदसेव्यपयोदजीवनानाम् ।
अपहरति गुटी मुखस्थितेयं-
सकलसमुत्थितदाहमाशु वाति ॥

[1] रक्तगण—कुसुम (कसुम्भा), खैर, लाख, मजीठ, लाल चन्दन, रतनजोत, गुलदुपहरिया, कर्पूर-गन्धिनी और शहद ।

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कपूर, सफेद चन्दन, खस, सेव्य (खसभेद), नागरमोथा और जीवनीय गणकी[1] ओषधियोंका चूर्ण समान-भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें, तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको पानीके साथ अत्यन्त महीन पीसकर १-१ मारोकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली मुंहमें रखनेसे त्रिदोषज दाह अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाती है।

(४३८२) **पारदादिचूर्णम्** (१)

(र. रा. सु. । वमना.; यो. र. । छर्दि.; वृ. नि. र. । छर्दि.; वृ. यो. त. । त. ८४)

रसवलिघनसारकोलमज्जा-
ऽमरकुसुमाम्बुधरप्रियङ्गुलाजाः।
मलयजमगधात्वगेलपत्रं[2]
दलितमिदं परिभाव्य चन्दनाद्भिः ॥
मधुमरिचयुतं रजोऽस्य माषं
जयति वमिं प्रबलां विलिह्य मर्त्यः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कपूर, बेरकी गुठलीकीगिरी, लौंग, नागरमोथा, फूलप्रियङ्गु, धानकी खील, सफेद चन्दन, पीपल, दालचीनी, इलायची और तेजपात (पाठभेदके अनुसार इलायची और तेजपातके स्थानमें इन्द्र जौ) समान-भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको चन्दनके क्वाथ में घोटकर सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे १ माषा चूर्णमें (७ नग) काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर उसे शहदमें मिलाकर चाटने से प्रबल वमनका भी नाश हो जाता है।

(४३८३) **पारदादिचूर्णम्** (२)

(रसादिचूर्णम्)

(र. रा. सुं. । तृषा.; र. चं । तृषा.; वृ. यो. त.; यो. र. । तृष्णा.)

रसगन्धककर्पूरैः शैलेयोशीरचित्रकैः[1] ।
ससितैः क्रमवृद्धैश्च सूक्ष्मं चूर्णमहरमुखे ॥
त्रिगुञ्जाप्रमितं खादन् पिबेत्पर्युषिताम्बु च ।
भृशं तृषां निहन्त्येवमश्विनेय प्रकाशितम् ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, कपूर ३ भाग, भूरिछरीला ४ भाग, खस ५ भाग, चीता (पाठान्तरके अनुसार काली मिर्च) ६ भाग और मिश्री सात भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटकर रक्खें।

इसमें से नित्य प्रति प्रातःकाल ३ रत्ती चूर्ण बासी पानीके साथ सेवन करनेसे प्रवृद्ध तृषा नष्ट हो जाती है।

पारदादिमलहरम्

लेपप्रकरणमें देखिये।

(४३८४) **पारदादिधूपः** (१)

(भै. र. । उपदंशा.)

रसं तालं शिला मुद्राशङ्खं सिन्दूरतुत्थके ।
स्फटिकारियवक्षारौ विडटङ्कणमूषणम् ॥

---

१ जीवनीय गण — जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती और मुलैठी। इनमेंसे जितनी ओषधियां मिल सकें उतनी ही डालकर काम चलाना चाहिये।

२ त्वगिन्द्रयवमिति पाठान्तरम्।

१ "शैलोशीरमरीचकैः" इति पाठान्तरम्।

श्वेतार्कमूलत्वक् चैव देया माषमिता ततः ।
हिङ्गुलं तोलकं सार्द्धं सर्वमेकत्र चूर्णितम् ॥
घृतप्लुतं संविधाय धूपं दद्याद्यथाविधि ।
एभिः प्रधूपनं हन्याद् व्रणं लिङ्गसमुत्थितम् ॥

पारद, हरताल, मनसिल, मुर्दासिंग, सिन्दूर, नीलाथोथा, फटकी, जवाखार, बिडनमक, सुहागा, कालीमिर्च और सफेद आककी जड़की छाल १-१ माषा तथा हिंगुल (सिंगरफ) १॥ तोला लेकर सबको एकत्र कूटकर चूर्ण बनावें। इसमें घी मिलाकर यथाविधि धूप देनेसे लिंगके घाव नष्ट हो जाते हैं।

(४३८५) पारदादिधूपः (२)

(धन्व.; भै. र. । उपदंश.)

रसं वङ्गञ्च खदिरं हरीतक्याश्च भस्मकम् ।
तरुणीकदलीभस्म पूगस्य फलजन्तथा ॥
एकतोलकमानं स्याद्धिङ्गुलं हरितालकम् ।
गन्धकं तुत्थकञ्चाऽपि पद्मकं सरलन्तथा ॥
द्वे चन्दने देवदारु बकमं काष्ठमेव च ।
तथा केशरकाष्ठञ्च माषमानं प्रकल्पयेत् ॥
एकीकृत्य विचूर्ण्याऽथ सर्वं चाङ्गेरिकाद्रवैः ।
तुलसीपत्रजरसैः पुरातनगुडेन च ॥
घृतेन सह षट् कार्या वटिका मन्त्ररक्षिताः ।
वेदनायामुत्कटायां चतुर्भिः शुक्लवस्त्रकैः ॥
वेष्टयित्वा च निर्धूमाऽङ्गारोपरि प्रदापयेत् ।
तं धूमं प्रतिगृह्णीयान्नरो वस्त्रादिवेष्टितः ॥
मुखनासाकर्णवहिर्निःश्वासस्य निरोधनात् ।
स्वेदे जातेऽस्य नैरुज्यं सायं प्रातर्दिनत्रयम् ॥
मासमात्रन्तु पथ्याशी शाकाम्लदधिवर्जनम् ।
गुर्वन्नपायसादीनि चाऽपथ्यानि विवर्जयेत् ॥
दिनत्रये व्यतीते तु स्नानमुष्णाम्बुना चरेत् ।
एवं धूमे कृते शान्तिर्व्रणाश्च पिडिका अपि ॥
तथा शोथश्चामवातः खञ्जता पङ्गुताऽपि च ।
कुष्ठोपदंशशान्त्यर्थं भैरवेण प्रकीर्तितः ॥

पारद, बंगभस्म, कत्था, हर्रकी भस्म, केलेके कोमल पत्तोंकी भस्म और सुपारीकी भस्म १-१ तोला तथा हिंगुल (सिंगरफ), हरताल, गन्धक, तूतिया, पद्माक, सरलकाष्ठ (चीरका बुरादा), सफेद चन्दन, लाल चन्दन, देवदारु, पतङ्गकी लकड़ी और हल्दूकी लकड़ी १-१ माशा लेकर सबको कूटकर चूर्ण बनावें और उसे चूके तथा तुलसीके पत्तोंके रसमें और गुड़के पानीमें १-१ रोज़ घोटकर सुखाकर घीमें मिलाकर ६ गोलियां बनावें।

जिस समय उपदंशके रोगीको अत्यन्त पीड़ा हो रही हो उस समय इनमेंसे १ गोली चार तह किये हुवे सफेद वस्त्रमें बांधकर निर्धूम अग्नि पर रक्खें और रोगीको बिस्तर रहित छिद्रयुक्त (बानों से बुनी हुई या लोहेके तारोंकी) खाट पर लिटाकर उसके नीचे वह अग्नि रख दें एवं रोगीको वस्त्र उढ़ा दें। वस्त्र इतना बड़ा होना चाहिये कि रोगी की चारपाईके चारों ओर भूमि तक लटकता रहे कि जिससे धूम बाहर न निकल सके। रोगीको अपना मुख भी वस्त्रसे ढांप लेना चाहिये। इससे उसके शरीरसे पसीना निकलकर रोग नष्ट हो जायगा।

इसी प्रकार ३ दिन तक प्रातः सायं धूम लेना चाहिये और १ मास तक पथ्य पालन करना चाहिये ।

धूम लेनेके दिनोंमें स्नान न करना चाहिये बल्कि ३ दिन तक धूम लेनेके बाद चौथे दिन मन्दोष्ण जलसे स्नान करना चाहिये ।

इस प्रकार धूम लेनेसे आतशकके घाव, पिडिका, शोथ, आमवात, खञ्जता, पंगुता और कुष्ठ का नाश हो जाता है ।

इस प्रयोगमें १ मास तक शाक, खटाई, दही और दूधपाकादि भारी पदार्थोंसे परहेज़ करना चाहिये ।

(पथ्य—घी और बेसनकी लवणरहित रोटी)

(४३८६) **पारदादियोगः**

(र. र. । रसायन.)

सूतं स्वर्णं व्योमसत्त्वं तारं ताम्रं च रोचनम् ।
बीजं वै शरपुङ्खायाः कृष्णधत्तूर बीजकम् ॥
सर्वं मर्द्यं वटक्षीरैः कुबेराक्षस्य बीजके ।
तत्क्षिप्त्वा धारयेद्वक्त्रे वीर्यस्तम्भकरं चिरम् ॥

शुद्ध पारा, स्वर्णभस्म, अभ्रकसत्व, चांदीभस्म, ताम्रभस्म, गोरोचन तथा सरफोंके और काले धतूरे के बीज समान भाग लेकर प्रथम पारे और भस्मों को मिलाकर घोटें फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको बड़के दूधके साथ घोटकर गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १–१ गोली करञ्जके फलमें रखकर मुंहमें रखनेसे बहुत देर तक वीर्यस्तम्भन होता है ।

पारदादियोगः

(र. चं.; र. सा. सं.; वृ. नि. र. । कृमिरो.)

" कृमिहरो रसः " सं. १०४६ देखिये ।

(४३८७) **पारदादिरसः** (श्वासान्तकरसः)

(र. रा. सुं.; र. चं.; र. र. स. । श्वासा.)

सूतः षोडश तत्समो दिनकरस्तस्यार्द्धभागो बलिः ।
सिन्धुस्तस्य समः सुसूक्ष्ममृदितः षट्पिप्पलीचूर्णितः ॥
जम्बीरस्वरसेन मर्दितमिदं तप्तं सुपक्वं भवेत् ।
कासश्वासस्शूलगुल्मजठरं पाण्डुं प्लिहं नाशयेत् ॥

शुद्ध पारा और ताम्रभस्म १६–१६ भाग, शुद्ध गन्धक ८ भाग, सेंधानमक ८ भाग तथा पीपल ६ भाग लेकर पारे गन्धककी कज्जली बनाकर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन जम्भीरी नीबूके रसमें घोट लीजिये। फिर उसका गोला बनाकर उसे अरण्ड इत्यादिके पत्तोंमें लपेटकर पुटपाक विधिसे पकाइये और उसे पीसकर सुरक्षित रखिये ।

इसके सेवनसे खांसी, श्वास, शूल, गुल्म, उदररोग, पाण्डु और तिल्लीका नाश होता है ।

(मात्रा—२ रत्ती ।)

नोट—पुटपाक करनेकी विधि भा. भै. र. भाग १ के पृष्ठ ३५३ पर देखिये ।

पारदादिलेपः

लेपप्रकरणमें देखिये ।

(४३८८) पारदादिवटी (१)

(सिद्धभेषजमणिमाला । ग्रहण्य.)

शुद्धं शिवांशमेकांशमेकांशं फणिफेनकम् ।
द्व्यंशं गन्धमिति त्रीणि पिष्ट्वा कुर्वीत पर्पटीम् ॥
विषमुष्टिकधत्तूरबीजजातीफलान्यपि ।
एकांशानि पृथक्तत्र दत्त्वा मसृणतां नयेत् ॥
दाडिमीतिन्तिडीतोयैर्भावयेत्सप्तधा पृथक् ।
वटीर्बध्नीत जरणक्षौद्रैस्ता ग्रहणीच्छिदः ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर दोनोंकी कज्जली बनाकर उसमें १ भाग अफीम डालकर अच्छी तरह घोटें और फिर उसे लोहेकी करछीमें डालकर मन्दाग्नि पर पकावें जब वह पिघल जाय तो उसकी यथाविधि पर्पटी बना लें।

(भूमिपर ताज़ा गोबर फैलाकर उसपर केले का पत्ता बिछा दें और उसके ऊपर वह पिघली हुई कज्जली फैलाकर उसे दूसरे पत्ते से ढक दें और फिर उसके ऊपर ताजा गोबर डालकर उसे दबा दें। तथा स्वांग शीतल होने पर दोनों पत्तोंके बीचमेंसे पर्पटीको निकाल लें।

तदनन्तर इस पर्पटीको पीसकर उसमें १–१ भाग शुद्ध कुचला, धतूरेके बीज और जायफलका चूर्ण मिलाकर खूब घोंटें। जब वह अत्यन्त महीन हो जाय तो उसे अनारकी छाल या फूलेंके स्वरस और तिंतड़ीकके पानीको पृथक् पृथक् ७–७ भावना देकर (१–१ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इन्हें जीरेके चूर्णमें मिलाकर शहदके साथ चटाने से संग्रहणी नष्ट होती है।

(४३८९) पारदादिवटी (२)

(र. रा. सु.; वृ. नि. र. । ग्रहणी.)

पारदं गन्धकं तारममृतं चानु शुल्वकम् ।
त्रिफला त्रिसुगन्धं च चित्रकोशीररेणुकाः ॥
रजनी द्वयसंयुक्तं सम्पेष्य वटकीकृतम् ।
ग्रहण्यष्टविधं शूलं शोथातीसारनाशनम् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, चांदीभस्म, शुद्ध बछनाग, ताम्रभस्म, हर्र, बहेड़ा, आमला, तेजपात, दालचीनी, इलायची, चीतामूल, खस, रेणुका, हल्दी और दारु हल्दीका चूर्ण समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको पानी आदिके साथ घोटकर (१–१ माशेकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे आठ प्रकारकी ग्रहणी, शूल, शोथ और अतिसारका नाश होता है।

(नोट–यदि अजवायनके क्वाथके साथ घोट-कर गोलियां बनाई जावें और उसीके साथ खिलाई जावें तो शीघ्र लाभ होगा।)

(४३९०) पारदादिवटी (३)

(वृ. नि. र. । श्वास.)

पारदं गन्धकं नागं ताम्रं व्योषानलैः समम् ।
स्वर्जीरसेन सञ्चूर्ण्य प्रदेया भावना दश ॥
पुनः पर्णरसैः सम्यक् चार्द्रकस्य रसैस्तथा ।
मिरिमप्रमाणा कफजित् कार्या सा गुटिकोत्तमा ॥
मन्दाग्निकफरोगेषु श्वासकासे विशेषतः ।
आध्मानप्रतिनाहेषु प्रदेया सुखकारिणी ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सीसाभस्म, ताम्र-

भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल और चीतेका चूर्ण समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको सज्जीके पानी, पान और अदरकके रसकी १०-१० भावना देकर काली मिर्चके बराबार गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे कफ, मन्दाग्नि और विशेषतः श्वास खांसी तथा अफारा और प्रतिनाह आदि रोग नष्ट होते हैं ।

(४३९१) पारदादिवटी (४)

(र. रा. सु. । कास.)

पारदस्य पलं चैव यशदं नागरङ्गके ।
पृथक् पलमितं प्रोक्तं त्रयाणाञ्च विशेषतः ॥
अयं तु मृत्तिका पात्रे द्रावं कुर्य्याद्यथाविधि ।
सूतं च प्रक्षिपेत्तस्मिन् पुनर्भूम्यां तु प्रक्षिपेत् ॥
खल्वे धृत्वा मर्दयेत्तु कज्जलीं कारयेद्बुधः ।
शुद्धामृतं पलमितं मरिचस्य पलाष्टकम् ॥
सूक्ष्मचूर्णं विधायाथ वस्त्रपूतं समाचरेत् ।
शिग्रुजस्य रसैर्मर्द्य पुटानि त्रीणि दापयेत् ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव त्रिपुटं तु पुनर्ददेत् ।
कालायसदृशी कार्या वटिका कफनाशिनी ॥
कासश्वासौ निहन्त्याशु शीतवातं तथैव च ।
शूलरोगहरी प्रोक्ता रसादि वटिकात्रियम् ॥

शुद्ध जस्त, सीसा और बंग ५-५ तोले लेकर तीनोंको मिट्टीके पात्रमें एकत्र पिघलावें और फिर उसमें ५ तोले पारा मिलाकर सबको खरलमें डालकर घोटें । जब सबका महीन कज्जलके समान चूर्ण हो जाय तो उसमें १ पल (५ तोले) शुद्ध बछनाग और ८ पल काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर खूब घोटें और फिर उसे कपड़े से छानकर सहंजने और अदरकके रसकी ३-३ भावना देकर मटरके बराबर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे कफ, खांसी, श्वास, शीतवात और शूलरोग नष्ट होता है ।

(४३९२) पारिजातटङ्कणम् (तालकेश्वरः)

(र. का. धे. । स्वरभेदे.)

दिनैकं कदलीद्रावैष्टङ्कणं मर्दयेद्दिनम् ।
हरिद्राया द्रवे द्रावे निशापामार्गभस्मजे ॥
तृतीयांशं च तालं च दत्त्वा पालाशपुष्पजे ।
सप्ताहं च रविक्षीरैः श्वेतैरण्डजस्य बीजतः ॥
यामद्वादशकं वह्निः काचकूप्यां गतस्य च ।
तत्रिधा जायते सत्त्वमूर्ध्वाधो भेदतः पुनः ॥
ऊर्ध्वसत्त्वमधः किट्टं पुष्पितं च प्रजायते ।
पुष्पितं चोर्ध्वसत्वं च पूर्वोक्तविधिना पुनः ॥
विमर्द्य काचकूप्यां च निक्षिप्याग्निं प्रदापयेत् ।
त्रिवारमेवं हि कृते तलस्थं तत्प्रयोजयेत् ॥
अथ तस्य चतुर्थांशं दरदं न्यस्य मर्दयेत् ।
भृङ्गामार्कवदुःस्पर्शधत्तूरकपलाशजैः ॥
प्रत्यहं च शिवाम्भोभिः सप्ताहं मर्दयेद्भृशम् ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वह्निं यामांस्तु षोडश ॥
दत्त्वैवं हि त्रिवारं च पलाण्डुस्वरसैस्ततः ।
रसोनमानरसतः प्रत्यहं मर्दयेदलम् ॥
एकोनविंशतिविधाः शङ्खद्रावस्य भावनाः ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य यामद्वादशकं पचेत् ॥
त्रिवारमेवं हि कृते दिव्यं तलगतं भवेत् ।
रक्तिका सर्वरोगघ्नी स्वरभेदक्षयादयः ॥
दत्तमात्रेण नश्यन्ति तूलराशिरिवाग्निना ॥

सुहागेको १ दिन केलेकी जड़के रसमें, १ दिन हल्दीके स्वरसमें और १–१ दिन हल्दी तथा अपामार्गके क्षारजलमें[1] घोटकर उसमें उसका तीसरा भाग शुद्ध हरितालका महीन चूर्ण मिलावें और फिर दोनोंको ७–७ दिन पलाश पुष्प (टेसू) के स्वरस, आकके दूध और सफेद अरण्डके बीजोंके स्वरस में घोटकर सुखाकर कपड़मिट्टी की हुइ आतशी शीशीमें भरकर उसे बालुकायन्त्रमें रखकर उसके नीचे १२ पहर तक अग्नि जलावें । तदनन्तर शीशीके स्वांग शीतल होनेपर उसे सावधानी पूर्वक तोड़ लें । शीशीको कांच काटनेकी कलमसे तोड़ा जाय तो अच्छा है । इसके भीतर सबसे ऊपर सत्व, बीचमें पुष्प और नीचे किट्ट मिलेगा । इनमें से किट्ट भागको छोड़ कर शेष दोनों भागोंको खरलमें डालकर पहिलेकी भांति ही पलाश पुष्प के रसादि तीनों चीज़ोंमें ७–७ दिन घोटकर उसे उपरोक्त विधिसे १२ पहरकी अग्नि दें और फिर शीशीमें से सत्व तथा पुष्पको निकालकर इसी प्रकार घोटकर पुनः १२ पहर पकावें ।

इस प्रकार ३ बार पाक करने के पश्चात् सत्व और पुष्प के साथ तीसरे पाकके अन्तमें जो किट्ट शीशीकी तलीमें मिले उसे भी मिला लें; और फिर तीनोंको खरलमें डालकर उसमें इन सबसे चौथाइ शुद्ध शिंगरफ़ मिलाकर सबको १–१ दिन भांग, भंगरा, धमासा, धतूरा और पलाशपुष्पके स्वरसमें तथा ७ दिन हरके स्वरस या काथमें घोटकर सुखाकर आतशी शीशी में भरदें और फिर उसे बालुकायन्त्रमें रखकर उसके नीचे १६ पहर अग्नि जलावें । तदनन्तर शीशीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकालकर इन्हीं चीज़ोंके रस में घोटकर इसी प्रकार पुनः १६ प्रहरकी अग्नि दें । इस प्रकार इन चीज़ोंके रसमें घोटकर कुल ३ बार पकावें ।

तदनन्तर उसे प्याज, लहसन और मानकन्द के रसकी १–१ तथा शंखद्रावकी १९ भावना देकर १२ पहर तक बालुका यन्त्रमें पकावें । इसी प्रकार ३ बार पाक करनेके पश्चात् शीशीकी तली में जो पदार्थ मिले उसे निकालकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे १ रत्तीकी मात्रानुसार यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे स्वरभंग और क्षय इत्यादि समस्त रोग अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ।

(४३९३) पारिभद्रो रसः

(रसें. सा. सं.; र. रा. सुं. । कुष्ठा.; र. म. । अ. ६; रसें. चिं. म. । अ. ९)

मूर्छितं सूतकं धात्री फलं निम्बस्य चाहरेत् ।
तुल्यांशं खादिरकाथैर्दिनं मर्द्यञ्च भक्षयेत् ॥
निष्कैकं द्रुद्रुकुष्ठघ्नः पारिभद्राह्वयो रसः ॥

मूर्च्छित पारद (कज्जली), आमला और नीमके फलोंकी मज्जा (गिरी) समान भाग लेकर सबको १ दिन खैरके काथमें घोटकर ४–४ माशेकी गोलियां बना लें ।

इसके सेवनसे दाद और कुष्ठ नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—६ रत्ती ।)

१—क्षारजल (क्षारोदक) बनानेकी विधि भा. भै. र. भाग १ के पृष्ठ ३५३ पर देखिये ।

(४३९४) **पार्वतीरसः**

(रसें. सा. सं.; र. रा. सुं. । मुख.; रसें. चि. म. । अ. ९)

पार्वती काशीसम्भूतो दरदो मधुपुष्पकम् ।
गुडूची शाल्मली द्राक्षा धान्यभूनिम्बमार्कवम् ॥
तिलमुद्गपटोलश्च कूष्माण्डं लवणद्वयम् ।
यष्टिका धान्यकं भस्म चान्तर्दग्धं समं समम् ॥
मुखरोगं निहन्त्याशु पार्वतीरस उत्तमः ।
पित्तज्वरं चिरं हन्ति तिमिरश्च तृषामपि ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा, शुद्ध सिंगरफ, महुवेके फूल, गिलोय, सेंभलकी मूसली, द्राक्षा, धनिया, चिरायता, भंगरा, तिल, मूंग, पटोल, पेठा (कुम्हड़ा), सेंधा नमक, कालानमक, मुलैठी और धनिये की अन्तर्धूमदग्ध (बन्द बरतनमें बनाइ हुई) भस्म समान भाग लेकर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह घोटकर रख लें।

इसके सेवनसे मुखरोग, पुराना पित्तज्वर, तिमिर और तृषाका नाश होता है।

(४३९५) **पाशुपतो रसः**

(**पाशुपतास्त्ररसः**)

(यो. र.; वृ. नि. र.; र. सा. सं.; र. रा. सु. । अजीर्ण.; यो. त. । त. २४; र. चि. म. । स्त. ११)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं त्रिभागं तीक्ष्णभस्मकम् ।
त्रिभिः समं विषं देयं चित्रककाथभावितम् ॥
धूर्त्तबीजस्य भस्मापि द्वात्रिंशद्भागसंयुतम् ।
कटुत्रयं त्रिभागं स्याल्लवङ्गैला च तत्समम् ॥
जातीफलं तथा कोषमर्द्धभागं नियोजयेत् ।
तथार्द्धं लवणं पञ्च स्नुह्यर्कैरण्डतिन्तिडी ॥
अपामार्गाश्वत्थजश्च क्षारं दद्याद्विचक्षणः ।
हरीतकी यवक्षारं स्वर्जिका हिङ्गुजीरकम् ॥
टङ्कणश्च सूततुल्यं चाम्लयोगेन मर्दयेत् ।
भोजनान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाफलप्रमाणतः ॥
रसः पाशुपतो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ।
दीपनः पाचनो हृद्यः सद्यो हन्ति विसूचिकाम् ॥
तालमूलीरसेनैव उदरामयनाशनः ।
मोचरसेनातीसारं ग्रहणीं तक्रसैन्धवैः ॥
सौवर्चलकणाशुण्ठीयुतः शूलं विनाशयेत् ।
अर्शो हन्ति च तक्रेण पिप्पल्या राजयक्ष्मकम् ॥
वातरोगं निहन्त्याशु शुण्ठीसौवर्चलान्वितः ।
शर्कराधान्ययोगेन पित्तरोगं निहन्त्ययम् ॥
पिप्पलीक्षौद्रयोगेन श्लेष्मरोगश्च तत्क्षणात् ।
अतः परतरो नास्ति धन्वन्तरिमतो रसः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, तीक्ष्ण-लोह भस्म ३ भाग और शुद्ध बछनाग ६ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें; फिर उसमें अन्य दोनों ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन चीतामूलके काथमें घोटें और फिर धतूरेके बीजोंकी भस्म ३२ भाग; सोंठ, मिर्च, पीपल, लैांग और इलायची ३-३ भाग; जायफल और जावत्री आधा आधा भाग; पांचों नमक (समान-भाग मिश्रित) २॥ भाग, तथा सेहुंड (सेंड—थूहर), आक, अरण्डमूल, तिन्तड़ीक, अपामार्ग (चिरचिटे) और पीपलवृक्षका क्षार, हर्र, जवाखार, सज्जीखार, भुनी हुई हींग, जीरा और सुहागेकी खील १-१ भाग लेकर सबका बारीक

चूर्ण करके उसे उपरोक्त कज्जलीमें मिलाकर सबको १ दिन नीबूके रसमें घोटकर रक्खें ।

इसे १ रत्तीकी मात्रानुसार भोजनके अन्तमें खाना चाहिये ।

यह दीपन पाचन हृद्य और शीघ्र ही फल दिखलाने वाली औषध है ।

इसके सेवनसे विसूचिका शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

इसे उदररोगोंमें तालमूलीके रसके साथ; अतिसारमें मोचरसके साथ; संग्रहणीमें सेंधानमक-मिश्रित तक्रके साथ; शूलमें सञ्चल, पीपर और सोंठके चूर्णके साथ; अर्शमें तक्रके साथ; राजयक्ष्मा में पीपरके चूर्णके साथ; वातव्याधिमें सोंठ और सञ्चलके चूर्णके साथ; पित्तरोगोंमें मिश्री और धनियेके चूर्णके साथ और कफज रोगोंमें पीपलके चूर्ण और शहदके साथ देना चाहिये ।

(४३९६) पाषाणभिन्नः

(र. र.; भै. र.; र. चं. । अश्मरी.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं शिलाजतुरसः पलम् ।
श्वेतपुनर्नवावासारसैः श्वेतापराजितैः ॥
प्रतिद्रावैस्त्र्यहं मर्द्यं शुष्कं तद्भाण्डसम्पुटे ।
स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे संशुष्कं तद्विचूर्णयेत् ॥
रसः पाषणभिन्नः स्याद् द्विगुञ्जश्चाश्मरीं हरेत् ।
भूधात्रीफलविशालां पिष्ट्वा दुग्धेन पाययेत् ॥
कुलत्थक्वाथसम्पीतमनुपानं सुखावहम् ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और शुद्ध शिलाजीत १ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें शिलाजीत मिलाकर तीनोंको सफेद पुनर्नवा (साठी) के स्वरसमें ३ दिन घोटकर सुखा लें और फिर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके दोलायन्त्र–विधिसे १ दिन पुनर्नवाके रसमें पकावें । तदनन्तर उसे इसी प्रकार ३–३ दिन बासा और सफेद कोयलके रसमें घोटकर एक एक दिन इन्हींके रसमें दोला-यन्त्रविधिसे स्वेदित करें । अन्तमें पीसकर सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

भुई आमला और इन्द्रायनकी जड़को दूधमें पीसकर उसमें २ रत्ती यह रस मिलाकर रोगीको पिला दें और फिर उसके ऊपर कुलथीका क्वाथ पिलावें ।

इसके सेवनसे अश्मरी नष्ट होती है ।

(४३९७) पाषाणभेदी रसः (१)

(पाषाणवज्ररसः)

(रसें. चि. म. । अ. ९; र. सा. स.; र. रा. सु.; धन्व.; भै. र.; वृ. नि. र.; यो. र.; र. च. । अश्म.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं श्वेतपौनर्णवद्रवैः ।
भावना त्रितयं देयं रुद्ध्वा तं भूधरे पुटेत् ॥
पाषाणभेदी चूर्णं तु समं योज्यं विमर्दयेत् ।
निष्कमश्मरिकां हन्ति पूर्वोक्तादनुपानतः ॥
योगवाहान् प्रयुञ्जीत रसानश्मरिशान्तये ॥

१ भाग शुद्ध पारा और २ भाग शुद्ध गन्धककी कज्जलीको श्वेत पुनर्नवाके रसकी तीन भावना देकर शराव सम्पुटमें बन्द करके १ दिन भूधर यन्त्रमें पकावें । एवं उसके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकालकर उसमें उसके बराबर

पखानभेदका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे ४ माशेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे अश्मरी नष्ट होती है ।

(व्यवहारिक मात्रा २-३ रत्ती । अनुपान कुलथीका काथ या पित्तपापड़ेका रस ।)

नोट-योगरत्नाकर आदिमें गन्धक तीन भाग तथा एक दिन घोटनेको लिखा है। एवं इसीको पाषाणवज्रनाम दिया है। किन्ही किन्ही ग्रन्थोंमें पाषाणभेदके स्थानमें गुड़ लिखा है।

(४३९८) **पाषाणभेदी रसः** (२)

(र. र. स. । अ. १७)

रसेन सितवर्षाभ्वा रसं द्विगुणगन्धकम् ।
घृष्टं पचेच्च मूषायां द्वौ माषौ तस्य भक्षयेत् ॥
गोपालकर्कटीमूलं कुलत्थोदैः पिबेदनु ।
गोकण्टकसदाभद्रामूलकाथं पिबेन्निशि ॥
अयं पाषाणभिन्नामा रसः पाषाणभेदकः ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गन्धककी कज्जलीको सफेद पुनर्नवा (साठी) के स्वरसकी १ भावना देकर शरावसम्पुटमें बन्द करके भाण्डपुट१ में पकावें और फिर उसके स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे रसको निकालकर पीस लें।

इसमेंसे २ माषा औषध खाकर ऊपरसे गोपाल-कर्कटी (जंगली ककड़ी) की जड़का चूर्ण कुलथीके काथके साथ पीना तथा रात्रिको गोखरु और गम्भारीकी जड़की छालका काथ पीना चाहिये । इसके सेवनसे पथरी टूटकर निकल जाती है ।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती ।)

१—भाण्डपुट—एक बड़ी सी हाण्डीमें धानकी भूसी भर कर उसके बीचमें सम्पुट रख कर पकावें ।

(४३९९) **पाषाणभेदी रसः** (३)

(र. र. स. । अ. १७.)

रसं द्विगुणगन्धेन मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
वसुः पुनर्नवा वासा श्वेता ग्राह्या प्रयत्नतः ॥
तद्द्रवैर्भावयेदेनं प्रत्येकं तु दिनत्रयम् ।
पक्वं मूषागतं शुष्कं स्वेदयेज्जलयन्त्रतः ॥
पाषाणभेदीनामायं नियुञ्जीतास्य वल्लकम् ।
गोपालकर्कटीबीजं भूम्यामलकमूलिकाम् ॥
कुलत्थकाथतोयेन पिष्ट्वा तदनु पाययेत् ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गन्धककी कज्जलीको सफेद और लाल पुनर्नवा (साठी), बासा और सफेद कोयलके रसमें ३-३ दिन घोटकर मूषामें बन्द करें और उसे १ दिन भाण्डपुटमें पकानेके पश्चात् जलयन्त्रमें स्वेदित करके पीसकर सुरक्षित रक्खें ।

इसमें से ३ रत्ती रस खिलाकर ऊपरसे गोपाल-कर्कटी के बीज और भुई आमलेकी जड़का चूर्ण कुलथी के काथके साथ पीनेसे अश्मरी नष्ट होती है।

(४४००) **पिङ्गलेश्वररसः**

(र. रा. सु.; र. का. । कुष्ठा.)

भस्मसूतं विषं शुण्ठी वचा वह्निः फलत्रिकम् ।
ब्रह्मबीजं विडङ्गानि भृङ्गिभल्लातगन्धकम् ॥
शिखितुत्थं कणातुल्यं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
त्रिफलाकाथसंयुक्तं कान्तपात्रे स्थितं निशि ॥
कर्षमात्रं लिहेत्प्रातः सर्वकुष्ठनिवृत्तये ।
षण्मासात्पलितं हन्ति रसोऽयं पिङ्गलेश्वरः ॥

पारदभस्म, शुद्ध बछनाग, सोंठ, बच, चीता-मूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, पलाशके बीज, बाय-

बिड़ंग, भंगरा, शुद्ध भिलावा, शुद्ध गन्धक, तुत्थ-भस्म और पीपल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसमेंसे १ कर्ष औषधको त्रिफलाके काथमें मिलाकर रातके समय कान्तलोहके पात्रमें रख दें और प्रातःकाल सेवन करें।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं। इसे ६ मास तक सेवन करनेसे पलितरोग नष्ट हो जाता है। (व्यवहारिक मात्रा १ माशा)

पिण्डीरसः

कम्पवातहररस देखिये ।

पित्तकासान्तकरसः

(कासनाशनरसः, कासारिः, तिक्तत्रयरसः)

(ध.; र. र.; र. चं.; र. रा. सु. । कासा.)

'त्रिनेत्ररस' सं. २७२५ देखिये ।

(४४०१) पित्तकुन्तनो रसः

(र. चं.; र. प्र. सु. । पित्तरो.)

सूतकश्च मृततारभस्मकं
गन्धकेन सहितं समांशकम् ।
मर्दितं हि खलु भृङ्गवारिणा
चाऽर्धयाममपि कुक्कुटे पुटे ॥
पाचितं हि सकलं विचूर्णितं
लिहितं हि मधुशर्करायुतम् ।
पित्तदोषशमनं मयोदितं
पित्तकुन्तनमिदं प्रशस्यते ॥

शुद्ध पारा, चांदी भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर कज्जली बनावें और उसे आधा पहर भंगरेके रसमें खरल करके शराव सम्पुटमें बन्द करके कुक्कुटपुटमें फूंकें।

इसे मिश्री और शहदके साथ सेवन करनेसे पित्त शान्त होता है।

(४४०२) पित्तपाण्डुरिरसः (लोहगर्भरसः)

(र. रा. सु.; र. का. । पाण्डु.; र. र. स. । अ. १९)

रसस्य भागाश्चत्वारो लोहस्याष्ट प्रकीर्तिताः ।
वह्निमुस्ताविडङ्गानां त्रिकटुत्रिफलस्य च ॥
भागास्त्वनेकशो ग्राह्या कुटजस्य तथाऽपरः ।
चूर्णयित्वा ततः सर्वं मधुना गुटिकाः किरेत् ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः पित्तपाण्डुप्रनुत्तये ॥

पारद-भस्म ४ भाग, लोह-भस्म ८ भाग तथा चीतामूल, नागरमोथा, बायबिड़ंग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला और कुड़ेकी छालका चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर शहदके साथ घोटकर (४-४ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल सेवन करनेसे पित्तजपाण्डु नष्ट होता है।

(४४०३) पित्तप्रभञ्जनो रसः

(र. चं. । पित्तरो.)

प्रवालं माक्षिकं तुल्यं त्रिवारमार्द्रवारिणा ।
मर्दितं दुग्धसितया सेव्यं पित्तनिवारणे ॥
मध्वाज्येन सितायुक्तं सेवितं वातपित्तनुत् ।
पित्तप्रभञ्जनो योगः पित्तं नाशयति क्षणात् ॥

प्रवालभस्म और स्वर्णमाक्षिकभस्म समान-भाग लेकर दोनोंको अदरकके रसकी ३ भावना देकर सुरक्षित रक्खें।

इसे मिश्रीयुक्त दूधके साथ सेवन करनेसे

पित्त; और शहद, घी तथा मिश्रीमें मिलाकर चाटनेसे वातपित्तका नाश होता है।

(४४०४) **पित्तलभस्मविधिः**

(र. र. स. । अ. ५)

निम्बूरसशिलागन्धवेष्टिता पुटिताऽष्टधा ।
रीतिरायाति भस्मत्वं ततो योज्या यथायथम् ॥
ताम्रवन्मारणं तस्याः कृत्वा सर्वत्र योजयेत् ॥

मनसिल और गन्धक समान-भाग-मिश्रित (पीतलके बराबर) लेकर दोनोंको नीबूके रसमें घोटकर पीतलके पत्रोंपर लेप कर दें और उन्हें सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। इसी प्रकार ८ पुट देनेसे पीतलकी भस्म बन जाती है।

पीतल की भस्म ताम्रभस्म की विधिसे बनाकर सर्वत्र प्रयुक्त कर सकते हैं।

(४४०५) **पित्तलरसायनम्**

(र. र. स. । अ. ५)

मृतारकूटकं कान्तं व्योमसत्त्वं च मारितम् ।
त्र्यं समांशकं तुल्यव्योषजन्तुघ्नसंयुतम् ॥
ब्रह्मबीजाजमोदाऽग्निभल्लाततिलसंयुतम् ।
सेवितं निष्कमात्रं हि जन्तुघ्नं कुष्ठनाशनम् ॥
विशेषाच्छ्वेतकुष्ठघ्नं दीपनं पाचनं हितम् ॥

पीतलभस्म, कान्तलोहभस्म और अभ्रकसत्व-भस्म १-१ भाग तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, बाय-बिड़ंग, पलाशके बीज, अजमोद, चीतामूल, शुद्ध भिलावा और तिलका समान भाग मिश्रित चूर्ण ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह खरल करके रक्खें।

इसमें से ४ माशे चूर्ण नित्य प्रति सेवन करनेसे कृमि, कुष्ठ और विशेषतः श्वेतकुष्ठ नष्ट होता है।

यह प्रयोग दीपन और पाचन है।

(व्यवहारिक मात्रा ४ रत्ती।)

(४४०६) **पित्तलशोधनम्**

(र. र. स. । अ. ५)

रीतिका काकतुण्डी च द्विविधं पित्तलं भवेत् ।
सन्तप्त्वा काञ्जिके क्षिप्ता ताम्राभा रीतिका मता ॥
एवं या जायते कृष्णा काकतुण्डीति सा मता ।
रीतिस्तिक्तरसा रूक्षा जन्तुघ्नी सास्रपित्तनुत् ॥
कृमिकुष्ठहरा योगात्सोष्णवीर्या च शीतला ।
काकतुण्डी गतस्नेहा तिक्तोष्णा कफपित्तनुत् ॥
यकृत्प्लीहहरा शीतवीर्या च परिकीर्तिता ।
गुर्वी मृद्वी च पीताभा साराङ्गी ताडनक्षमा ॥
सुस्निग्धा मसृणाङ्गी च रीतिरेतादृशा शुभा ।
पाण्डुपीता खरा रूक्षा बर्बराऽताडनक्षमा ॥
पूतिगन्धा तथा लघ्वी रीतिर्नेष्टा रसादिषु ।
तप्त्वा क्षिप्त्वा च निर्गुण्डीरसे श्यामारजोन्विते
पञ्चवारेण संशुद्धिं रीतिरायाति निश्चितम् ॥

पीतल दो प्रकारकी होती है एक **'रीतिक'** और दूसरी **' काकतुण्डी '**।

अग्निमें तपाकर कांजीमें बुझानेसे जिसके रंगमें ताम्रकी सी झलक आजाय वह **' रीति '** और जिसका रंग काला हो जाय वह **'काकतुण्डी'** कहलाती है।

रीति---रसमें तिक्त; रूक्ष; कृमि, रक्तपित्त और कुष्ट नाशक तथा योगवाही है।

काकतुण्डी—रूक्ष, तिक्त, कफ पित्त तथा यकृत्प्लीह रोग नाशक और योगवाही है।

जो पीतल वज़नमें भारी, मृदु और रंगमें पीली हो, चोट सहन कर सके, स्निग्ध हो और जो स्पर्श में चिकनी हो वह उत्तम मानी जाती है।

जो पीतल रंगमें भूरी पीली, खरदरी, रूक्ष, कमज़ोर, पीटनेसे टूट जाने वाली, दुर्गन्धियुक्त और हल्की होती है वह अच्छी नहीं मानी जाती। ऐसी पीतल रसोंमें प्रयुक्त न करनी चाहिये।

संभालुके रसमें हल्दीका चूर्ण मिलाकर उसमें पीतलके पत्रोंको तपा तपाकर ५ बार बुझानेसे वह शुद्ध हो जाती है।

(४४०७) **पित्तान्तकरसः** (१)

(र. सा. सं.; र. चं.; र. रा. सु. । पित्तरो.)

जातीकोषफले मांसी कुष्ठं तालीसपत्रकम् ।
माक्षिकं मृतलोहं च ह्यभ्रं दिव्यं समांशकम् ॥
सर्वतुल्यं मृतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा ॥
द्विगुञ्जाभा वटी कार्या पित्तरोगविनाशिनी ॥
कोष्ठाश्रितं च यत्पित्तं शाखाश्रितमथापि वा ।
शूलं चैवाम्लपित्तं च पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥
दुर्नामभ्रान्ति वान्ति च क्षिप्रमेव विनाशयेत् ।
रसः पित्तान्तको ह्येष काशिराजेन भाषितः ॥
यद्यत्र माक्षिकं त्यक्त्वा सुवर्णमपि दीयते ।
महापित्तान्तको नाम सर्वपित्तविनाशनः ॥

जायफल, जावित्री, जटामांसी, कूठ, तालीस पत्र, स्वर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म और अभ्रकभस्म, १–१ भाग तथा चांदी भस्म ८ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर पानीके साथ घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे कोष्ठ और शाखाश्रित पित्त, शूल, अम्लपित्त, पाण्डु, हलीमक, अर्श, भ्रान्ति और वमन का शीघ्र ही नाश हो जाता है।

यदि इस योगमें स्वर्णमाक्षिकके स्थानमें स्वर्णभस्म डाली जाय तो इसका नाम "**महा पित्तान्तकरस**" हो जाता है।

(४४०८) **पित्तान्तकरसः** (२)

(र. चं. । पित्तरो.; र. र. स.; अ. १८)

मृतसूताभ्रमुण्डार्कतीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।
गन्धकं मर्दयेत्तुल्यं यष्टिद्राक्षाऽमृताद्रवैः ॥
जलमण्डपजैः पाठाद्रवैः क्षीरविदारिजैः ।
मर्दयेच्च दिनं खल्वे सिताक्षौद्रयुता वटी ॥
वल्लमात्रा निहन्त्याशु पित्तं पित्तज्वरं क्षयम् ।
दाहतृष्णाश्रमांश्छोषं हन्ति पित्तान्तको रसः ॥
सिताक्षीरं पिबेच्चानु यष्टिकाथं सिताऽन्वितम् ।
पिबेद्वा पित्तशान्त्यर्थं शीततोयेन वालकम् ॥

पारदभस्म, अभ्रकभस्म, मुण्डलोहभस्म, ताम्रभस्म, तीक्ष्णलोह-भस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, हरताल-भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर मुलैठी, दाख (मुनक्का), गिलोय, शैवाल (सिरवाल), पाठा और क्षीर-बिदारी के स्वरस की १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १–१ गोली मिश्री और शहदके साथ खिलानेसे पित्त, पित्तज्वर, क्षय, दाह, तृषा, थकान और शोष नष्ट होता है।

अनुपान–गोली खानेके बाद मिसरी मिलाकर दूध या मुलैठीका काथ अथवा शीतल जलमें पीस-कर सुगन्धबाला पीना चाहिये।

(४४०९) **पित्तार्शोहररसः**

(र. र. स. । अ. १५)

मृतसूतार्कहेमाभ्रतीक्ष्णमुण्डं सगन्धकम् ।
मण्डूरं माक्षिकं तुल्यं मर्द्यं कन्याद्रवैर्दिनम् ॥
अन्धमूषागतं पाच्यं त्रिदिनं तुषवह्निना ।
चूर्णितं सितया माषं खादेत्पित्तार्शसां जयेत् ॥

पारदभस्म, ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म, अभ्रकभस्म, तीक्ष्णलोहभस्म, मुण्डलोहभस्म, शुद्ध गन्धक, मण्डूर-भस्म और स्वर्णमाक्षिक-भस्म समान-भाग लेकर सबको १ दिन घृतकुमारी (ग्वारपाठा) के रसमें घोटकर अन्धमूषामें बन्द करके ३ दिन तक तुषाग्निमें पकावें । (एक बड़े हण्डेमें आधी दूर तक धानकी भूसी खूब दबा दबाकर भर दें और फिर उसमें मूषाको रखकर उसके ऊपर भी भूसी भरकर हण्डेको चूल्हेपर रखकर पकावें ।) तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे रसको निकाल कर पीस लें ।

इसे १ माशेकी मात्रानुसार मिश्रीके साथ खानेसे पित्तार्शका नाश होता है ।

(४४१०) **पिप्पलीलोहयोगः**

(ग. नि. । उदर.)

पिप्पलीलोहचूर्णं वा पयसाप्लीहनाशनम् ।

पीपलके चूर्ण और लोह भस्मको दूधके साथ सेवन करनेसे तिल्ली नष्ट होती है ।

(मात्रा—४ रत्ती)

(४४११) **पिप्पल्यादिलोहम्** (१)

(भै. र.; र. रा. सु.; र. चि.; र. चं.; र. सा. सं.; धन्व.; र. र. । हिक्काश्वासा.)

पिप्पल्यामलकीद्राक्षाकोलाऽस्थिमधुशर्करा-
विडङ्गपुष्करैर्युक्तं लौहं हन्ति सुदारुणाम् ॥
छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिरात्रेण न संशयः ॥

पीपल, आमला, दाख (मुनक्का), बेरकी गुठली की गिरी, शहद, मिश्री, बायबिडंग और पोखरमूल १—१ भाग तथा लोहभस्म आठ भाग लेकर चूर्ण योग्य चीजोंका चूर्ण करके सबको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे भयङ्कर छर्दि, हिचकी और तृष्णा ३ दिनमें अवश्य शान्त हो जाती है ।

(मात्रा ४ रत्ती । अनुपान शहद ।)

(४४१२) **पिप्पल्यादिलोहम्** (२)

(र. सा. सं.; र. चि.; र. र.; र. रा. सुं. । उदरा.)

पिप्पलीमूलचित्राऽभ्रत्रिकत्रयेन्दुसैन्धवम् ।
सर्वचूर्णसमं लौहं हन्ति सर्वोदरामयम् ॥

पीपलामूल, चीतामूल, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, तेजपात, इलायची, दालचीनी, कपूर और सेंधा नमकका चूर्ण १—१ भाग तथा लोहभस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह खरल करके रक्खें ।

इसके सेवनसे समस्त उदररोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—४ रत्ती । अनुपान—शहद ।)

(४४१३) **पिष्टीरसः**

(र. चं. । वातरो.; रसे. चि. । अ. ९)

बाणभागं शुद्धसूतं द्विगुणं गन्धमिश्रितम् ।
नागवल्लिदलैः पिष्टं ततस्तेन प्रलेपयेत् ॥

ताम्रापात्रीं प्रलिप्यैतां रुध्वा गजपुटे पचेत् ।
द्विगुञ्जं त्र्यूषणेनार्धवपुर्वातं सकम्पकम् ॥
निहन्ति दाहं सन्तापं मूर्च्छापित्तसमन्वितम् ॥

१ भाग शुद्ध पारे और २ भाग शुद्ध गन्धककी कज्जलीको १ दिन पानोंके रसमें घोटकर ३ भाग शुद्ध ताम्रकी कटोरी पर लेप कर दें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी आंच देकर भस्म बनावें ।

इसे २ रत्तीकी मात्रानुसार त्रिकुटेके चूर्णके साथ सेवन करनेसे अर्दित, कम्पवात, दाह, सन्ताप, और पित्तज मूर्च्छा नष्ट होती है ।

(४४१४) **पीडाभञ्जीरसः**

(पीडारिरसः)

(बृ. नि. र.; र. का. धे. । शूला.)

व्योमपारदगन्धाश्मजयपालकटङ्कणम् ।
वह्निचन्द्रशशिद्वित्रिभागान् जम्भाम्भसा त्र्यहम्॥
पिष्ट्वा कोलमिता कृत्वा गुडका[illegible]तो वटिः ।
वितरेदामशूलादौ कृमिशूले विशेषतः ॥
पथ्यं तक्रोदनं चात्र स्तम्भार्थे शीतलक्रिया ॥

अभ्रकभस्म ३ भाग, शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक १ भाग, शुद्ध जमालगोटा २ भाग और सुहागेकी खील ३ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य चीज़ें मिलाकर सबको ३ दिन नींबूके रसमें घोटकर झड़बेरीके बेरकी गुठलीके बराबर गोलियां बना लें ।

इसे गुड़युक्त काञ्जीके साथ देनेसे विरेचन होकर आमशूल और विशेषतः कृमि-शूल नष्ट होता है ।

पथ्य—तक्र भात । दस्त बन्द करनेके लिये शीतल क्रिया करनी चाहिये । (व्यवहारिक मात्रा १ रत्तीसे २ रत्ती तक ।)

पीतकं चूर्णम्

चूर्णप्रकरणमें देखिये ।

(४४१५) **पीयूषघनरसः** (१)

(र. चं. । ज्वरचि.)

हेमाभ्रताराणि मृतानि सूते
दत्त्वा तु सूतेन समं च गन्धम् ।
गन्धेन तुल्यं दरदञ्च दत्त्वाऽ
मृतारसेनैकदिनं विमर्द्य ॥
कौरण्टभृङ्गाग्निविषैर्दिनैकं
सूतेन तुल्येऽथ विनिक्षिपेत्तु ।
पुटे सुताम्रस्य मृदा च लिप्त्वा
सामुद्रपूर्णेऽथ पुटेत भाण्डे ॥
ससम्पुटं तच्च विमर्द्य यामं
गुडूचिकात्र्यूषणशृङ्गवेरैः ।
ददीत वल्लं गदिताऽनुपानै-
र्ज्वरेषु पीयूषघनो रसेन्द्रः ॥

स्वर्णभस्म, अभ्रकभस्म, चांदीभस्म, शुद्धपारा, शुद्ध गन्धक और शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ) १–१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको १–१ दिन गिलोय, कुरण्टा (कटसरैया), भंगरा, चीता और बछनाग में से जिनके स्वरस मिल सकें उनके स्वरसमें और बाकी के क्वाथमें घोटकर १ भाग शुद्ध ताम्रके सम्पुटमें बन्द करदें और फिर उसके ऊपर ५–७ कपरमिट्टी करके उसे १ दिन लवणयन्त्रमें पकावें ।

तदनन्तर यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमें से सम्पुटको निकालकर ताम्र सहित पीस लें। और फिर उसे १-१ पहर गिलोयके स्वरस, त्रिकुटेके क्वाथ और अदरकके स्वरसमें घोटकर सुखाकर रक्खें।

इसे ३ रत्तीकी मात्रानुसार यथोचित अनुपान के साथ देनेसे ज्वर नष्ट होता है।

नोट—यदि १ दिन की अग्निके बाद भी ताम्र कच्चा रह जाय तो उसे पुनः इसी प्रकार पकाना चाहिये।

(४४१६) **पीयूषघनरसः** (२)

(र. चं. । ज्वर.)

गन्धं रसेन्द्रं दरदं च मुक्तां
विमर्द्य ताम्रस्य पुटे पुटेत ।
पूर्वप्रकारेणगतौषधीभि-
र्विमर्दितस्याऽथ ददीत वल्लम् ॥
ज्वरेषु सर्वेषु यथाऽनुपानैः
शूलेषु सर्वेष्वपि मान्द्यकार्श्ये ।
शीतज्वरे श्रीतुलसीरसेन
पिष्ट्वा मरीचानि ददीत वल्लम् ॥
नीरस्य पादेन नियोज्य दुग्धं
कुस्तुम्बुरीनीरयुतं पचेत ।
दुग्धावशेषं कणया युतश्च
ददीत चोष्णज्वरनाशनाय ॥
एकाहिके तण्डुलवारिपिष्टं
ददीत मेघध्वनिमूलचूर्णम् ।
चातुर्थिकादौ विजया विडाल-
पादप्रमाणं कटुकत्रयेण ॥
पित्तोत्तरे चामलशर्कराभ्यां
गव्येन दुग्धेन घृतेन पक्वम् ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, शुद्ध शिंगरफ (हिंगुल) और मोती समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको १-१ दिन गिलोय, कटसरैया, भंगरा, चीता और बछनागके स्वरस या क्वाथमें घोटकर १ भाग शुद्ध ताम्रके सम्पुटमें बन्द करके उस पर कपड़मिट्टी कर दें और फिर उसे १ दिन लवणयन्त्रमें पकावें।

तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर उस मेंसे सम्पुटको निकालकर ताम्रसमेत पीस लें; और फिर उसे गिलोय, त्रिकुटा और अदरकके रस या क्वाथमें १-१ पहर घोटकर रक्खें।

इसे यथोचित अनुपानके साथ देनेसे ज्वर, शूल, अग्निमांद्य और कृशताका नाश होता है।

शीतज्वरमें—तुलसीके रसमें काली मिर्च घोटकर उसके साथ ३ रत्ती यह रस देना चाहिये।

उष्णज्वरमें—१ भाग दूधमें ४ भाग धनिये का क्वाथ मिलाकर दूध मात्र शेष रहने तक पकावें और उसमें पीपलका चूर्ण डालकर उसके साथ यह रस खिलावें।

इकतरे (एकाहिक) ज्वरमें—चौलाईकी जड़को चावलों के पानीके साथ पीसकर उसके साथ खिलावें।

चातुर्थिकज्वरमें—१ कर्ष भांग और त्रिकुटे के चूर्णके साथ खिलावें। (भांग १ माशा और त्रिकुटा १ माशा लेना चाहिये।)

पित्तज्वरमें—आमले के चूर्ण और खांडके साथ खिलाकर ऊपरसे घृतयुक्त पका हुवा गोदुग्ध पिलावें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

(४४१७) पीयूषवल्लीरसः

(भै. र.; र. सा. सं.; र. रा. सु. । ग्रह.)

सूतमभ्रं गन्धकञ्च तारं लौहं सटङ्कणम् ।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च शाणमेकं पृथक् पृथक् ॥
लवङ्गं चन्दनं मुस्तं पाठाजीरकधान्यकम् ।
समङ्गाऽतिविषा लोध्रं कुटजेन्द्रयवं त्वचम् ॥
जातीफलं विश्वबिल्वं कनकं दाडिमीच्छदम् ।
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससम्मितम् ॥
भावयेत्सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः ।
चणकाभा वटी कार्या छागीदुग्धेन पेषिता ॥
अनुपानं प्रदातव्यं दग्धबिल्वं समं गुडैः ।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं चिरजामपि ॥
आमसम्पाचनो सम्यग्वह्निवृद्धिकरस्तथा ।
पीयूषवल्ली नामाऽयं ग्रहणीरोगनाशनः ॥

शुद्ध पारा, अभ्रक भस्म, शुद्ध गन्धक, चांदी-भस्म, लोहभस्म, सुहागेकी खील, रसौत, स्वर्णमाक्षिक भस्म, लौंग, सफेद चन्दन, नागरमोथा, पाठा, जीरा, धनिया, मजीठ, अतीस, लोध, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, दालचीनी, जायफल, सोंठ, बेलगिरी, धतूरेके बीज (शुद्ध), अनारकी छाल, लज्जालु, धायके फूल और कूठ समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको काले भंगरे और बकरीके दूधकी १-१ भावना देकर चनेके बराबर गोलियां बना लें ।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके अतिसार और पुरानी ग्रहणी नष्ट होती है । यह रस आमको पचाता और अग्निको दीप्त करता है ।

अनुपान—बेलगिरीकी राख समान भाग गुड़में मिलाकर दवा खिलानेके बाद खिलावें ।

(४४१८) पीयूषसिन्धुरसः

(रसे. चि. । अ. ९; र. चं.; र. रा. सु.; र. का. । अर्शो.)

शुद्धं सूतं टङ्कणं जीर्णगन्धं
काचे पात्रे वालुकायन्त्रयोगात् ।
भस्मीभूतं योजयेदत्र हेम
तत्तुल्यांशं भस्म लोहाऽभ्रयोश्च ॥
सूतातुल्यं गन्धकं मेलयित्वा
खल्वे मर्द्य सूरणस्य द्रवेण ।
दन्तीमुण्डीकाकमाचीहलाख्या
भृङ्गाऽर्काणामग्निजातं द्रवञ्च ॥
क्षिप्त्वा पश्चाद्धान्यराशौ त्रिघस्रं
चूर्णीभूतं माषमात्रं ददीत ।
अर्शोरोगे दारुणे च ग्रहण्यां
शूले पाण्ड्वाम्लपित्ते क्षये च ॥
श्रेष्ठं क्षौद्रं चाऽनुपानं प्रशस्तं
रोगोक्तं वा मासषट्कप्रयोगात् ।
सर्वे रोगा यान्ति नाशं जरायां
वर्षद्वन्द्वं सेवनीयं प्रयत्नात् ॥
पथ्यं दद्यादम्लतैलादियोपि-
द्वर्ज्यं देयं सर्वरोगप्रशान्त्यै ।
पुष्टिं कान्ति वीर्यवृद्धिं सुदार्ढ्यं
सेवायुक्तो मानव संलभेत ॥

आतशी शीशीमें षड्गुणगन्धक जारण किया हुवा पारद, स्वर्णभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको सूरण (जिमींकन्द), दन्ती, गोरखमुण्डी, मकोय, लांगली (कलिहारी), भंगरा, अर्क और चीतेके स्वरस या काथकी १-१ भावना देकर गोला बनाकर उसे अरण्ड आदिके पत्तों में लपेट कर अनाजके ढेरमें दबा दें । और ३ दिन पश्चात् निकाल कर पीस लें ।

इसे १ माशेकी मात्रानुसार सेवन करने से भयङ्कर अर्श, ग्रहणी, शूल, पाण्डु, अम्लपित्त और क्षयका नाश होता है ।

अनुपान---शहद या रोगोचित पदार्थ ।

इसे ६ मास तक सेवन करनेसे समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं । २ वर्ष तक सेवन करने से बुढ़ापा नहीं रहता ।

इसके सेवन से पुष्टि, कान्ति और वीर्यकी वृद्धि होती है ।

इसके सेवन कालमें खटाई, तैल और स्त्री-प्रसंग से परहेज़ करना चाहिये ।

(४४१९) **पुत्रप्रदोरसः**

(र. सं. क. । उल्लास ४)

शुद्धसूतं त्र्यहं स्वेद्यं मन्दाग्नौ दध्नि माहिषे ।
त्रुटिते त्रुटिते दद्याद्दधि तुर्येऽह्नि चोद्धरेत् ॥
तस्मिन् स्वर्णं क्षिपेत्प्राज्ञश्चतुःषष्टितमांशकम् ।
मर्दयेन्निम्बुनीरेण यावदैक्यं हि जायते ॥
पुनः संस्वेद्य तं सूतं वटशुङ्गाऽहिवल्लिजैः ।
काकमाच्या च जीवन्त्या रसः स्याद्यामयुग्मकात् ॥
दिनं शीताऽम्बुकुम्भस्थं दिनैकं दध्नि माहिषे ।
एवं सिद्धरसाद्वल्लं प्रत्यहं ब्रह्मचर्यधृक् ॥
मासैकं सेवते भर्ता सितादुग्धौदनप्रियः ।
त्रिफलानिम्बकार्पासीरसैर्नारी क्रमात्पृथक् ॥
सप्त सप्तदिनं पीत्वा पश्चादृतुसमागमे ।
रसं वल्लं त्र्यहं चैकं कार्पास्यम्बुसितायुतम् ॥
टङ्कणः स्फटिका सूतः पक्काम्लिकरसान्वितः ।
त्रिदिनं मधुना योनौ लेपः शुद्धिकरः परः ॥
महिष्या दधिमध्यस्थं दिवा सूतं त्रिमाषकम् ।
स्त्रीसेवासमये रात्रौ भक्षयेद्दधिसंयुतम् ॥
सम्भोगान्ते तथा स्थेयं यामार्धं सम्पुटेन च ।
सर्वलक्षणसम्पन्नं सुतं जनयते वरम् ॥
तापादिके समुत्पन्ने देयं द्राक्षासितादिकम् ।
कार्यः शीतोपचारश्च युवत्या भिषजा सदा ॥
आयुर्वृद्धिं बलं कान्तिं नष्टवीर्यविवर्धनम् ।
कुर्याद्रोगहरः पुत्रप्रदो रुद्रविनिर्मितः ॥

शुद्ध पारेको ३ दिन भैंसके दहीमें मन्दाग्नि पर दोलायन्त्र विधिसे स्वेदन करें । ज्यों ज्यों दही सूखता जाय त्यों त्यों और डालते जायं । चौथे दिन पारेको निकालकर उसमें उसका चौसठवां भाग स्वर्ण मिलाकर नीबूके रसके साथ इतना घोटें कि जिससे वे दोनों मिलकर एक जीव हो जायं ।

तदनन्तर उसे दोलायन्त्र विधिसे बड़के अंकुर, पान, मकोय और जीवन्तीके रसमें २-२ पहर स्वेदन करें ।

तत्पश्चात् उस रसकी पोटलीको ठण्डे पानीके घड़ेमें डाल दें और एक दिन उसीमें पड़ा रहने दें। फिर उसे १ दिन भैंसके दहीमें डाले रक्खें। बस रस तैयार है।

इसमें से ३ रत्ती रस नित्य प्रति १ मास तक पुरुषको खाना चाहिये तथा आहारमें दूध भात और खांड खानी और ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये।

साथ ही स्त्रीको भी ३ रत्तीकी मात्रानुसार त्रिफला, नीम और कपासके क्वाथके साथ ७ सप्ताह तक सेवन करना चाहिये। एवं ऋतुकालमें ३ दिन तक केवल कपास के क्वाथ में मिश्री मिलाकर उसके साथ सेवन करना चाहिये। फिर सुहागा, फटकी और पारेको एकत्र घोटकर पक्की इमलीके रसमें मिलाकर उसमें थोड़ासा शहद डालकर स्त्रीको अपनी योनिमें ३ दिन तक उसका लेप करना चाहिये। इससे योनि शुद्ध हो जाती है।

इसके बाद ३ माशे उपरोक्त रसको प्रातः-काल भैंसके दहीमें मिलाकर रख देना चाहिये और रात्रिको स्त्री-समागमके समय पुरुषको यह रस दही समेत खा लेना चाहिये। तदनन्तर गर्भाधान करके स्त्री पुरुष दोनों को आध पहर तक वैसे ही रहना चाहिये।

यदि इसके सेवन से तापादि हो तो द्राक्षाका रस और मिसरी आदिका सेवन करना चाहिये तथा स्त्रीको शीतल उपचार करने चाहियें।

इस प्रयोगसे समस्त शुभ लक्षणयुक्त पुत्र उत्पन्न होता है।

इसके सेवनसे आयु, बल, कान्ति और वीर्य-की वृद्धि होती है।

(४४२०) पुनर्नवामण्डूरम् (१)

(वृ. नि. र.; भा. प्र.; र. रा. सु. । पाण्डु.)

पुनर्नवा त्रिवृद्व्योषं विडङ्गं दारु चित्रकम् ।
कुष्ठं हरिद्रा त्रिफला दन्ती चव्यं कलिङ्गकम् ॥
कटुका पिप्पलीमूलं मुस्तं शृङ्गी च कारवी ।
यवानी कट्फलश्चेति पृथक् पलमितं समम् ॥
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाद्गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
गुडेन वटकान् कृत्वा तक्रेणाऽऽलोडच तान् पिबेत् ॥

पुनर्नवादिमण्डूरवटकोऽश्विविनिर्मितः ।
पाण्डुरोगं निहन्त्याशु कामलाञ्च हलीमकम् ॥
श्वासं कासञ्च यक्ष्माणं ज्वरं शोथं तथोदरम् ।
शूलं प्लीहानमाध्मानमर्शांसि ग्रहणीं कृमीन् ॥
वातरक्तञ्च कुष्ठञ्च सेवनान्नाशयेद् ध्रुवम् ॥

पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, बाय-बिड़ंग, देवदारु, चीता, कूठ, हल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, चव, इन्द्रजौ, कुटकी, पीपला-मूल, नागरमोथा, काकड़ासिंगी, कालाजीरा, अज-वायन और कायफलका चूर्ण ५-५ तोले तथा शुद्ध मण्डूर इन सबसे २ गुना लेकर सबको आठ गुने (१६ गुने) गोमूत्रमें पकावें। जब सब चीजें अच्छी तरह मिल जायं और पाक तैयार होनेमें थोड़ी कमी हो तो उसमें सबके बराबर गुड़ मिला-कर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो (२-२ माशेकी) गोलियां बनाकर सुरक्षित रक्खें।

इन्हें तक्रके साथ सेवन करनेसे पाण्डु, कामला,

हलीमक, श्वास, खांसी, क्षय, ज्वर, शोथ, उदररोग, शूल, प्लीहा, आध्मान्, अर्श, ग्रहणीरोग, कृमिरोग, वातरक्त और कुष्ठका नाश होता है।

(४४२१) पुनर्नवामण्डूरम्[1] (२)

(भै. र.; वृ. मा.; च. सं.; ग. नि.; नि. र.; च. द.; वृ. मा.; र. र. । पाण्डु.)

पुनर्नवा त्रिवृच्छुण्ठी पिप्पली मरीचानि च ।
विडङ्गं देवकाष्ठं च चित्रकं पुष्कराह्वयम् ॥
हरिद्राद्वितयं दन्ती त्रिफला चविका तथा ।
कुटजस्य फलं तिक्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥
एतानि समभागानि मण्डूरं द्विगुणं ततः ।
मूत्रे चाष्टगुणे पक्त्वा स्थापयेत्स्निग्धभाजने ॥
पाण्डुशोषोदरानाहशूलार्शः कृमिरोगनुत् ॥

पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिडंग, देवदारु, चीता, पोखरमूल, हल्दी, दारुहल्दी, दन्तीमूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चव, इन्द्रजौ, कुटकी, पीपलामूल और नागरमोथा १-१ भाग तथा शुद्ध मण्डूर सबसे २ गुना लेकर सब को कूट छानकर आठ गुने (१६ गुने) गोमूत्रमें पकावें और जब गाढ़ा हो जाय तो उसे स्निग्ध पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे पाण्डु, शोष, उदररोग, आनाह, शूल, अर्श और कृमिरोगका नाश होता है।

(मात्रा-१ माशा । अनुपान तक्र ।)

[1] च. सं.; और र. र. में पोखरमूलकी जगह कूठ और कुटकीकी जगह पीपल लिखी है।

(४४२२) पुनर्नवादिमण्डूरम्

(बं. से. । परिणामशूल.; र. का. धे. । शूला.)

वर्षाभूर्वरुणो मानो लोहकिट्टन्तु पूतकम्[1]।
भार्ङ्गी च समभागानि मूत्रे दशगुणे पचेत् ॥
अन्तर्धूमविपकेन मधुसर्पियुतं लिहन् ।
वाताधिकं तथा पित्तं द्वन्द्वजं श्लेष्मजं तथा ॥
एष त्रिदोषजं हन्ति शूलं हि परिणामजम् ॥

पुनर्नवा, (विसखपरा), बरनेकी छाल, मानकन्द, शुद्ध मण्डूर और भरंगीका चूर्ण समान-भाग लेकर सबको दस गुने गोमूत्रमें पात्रका मुंह ढककर पकावें और जब गाढ़ा हो जाय तो स्निग्ध पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें।

इसे शहद और घीमें मिलाकर सेवन करनेसे एकदोषज, द्वन्द्वज और सन्निपातज परिणामशूल नष्ट होता है।

(मात्रा २ माशे ।)

(४४२३) पुरन्दरवटी

(र. चं.; र. सा. स.; र. रा. सु.; धन्व. । कासा.)

सूतकाद्विगुणं गन्धमेकधा कज्जलीकृतम् ।
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसम्मितम् ॥
अजाक्षीरेण सम्भाव्य वटिकां कारयेत्ततः ।
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शीतं तोयं पिबेदनु ॥
कासश्वासप्रशमनी विशेषादग्निवर्द्धिनी ।
इयं यदि सदा सेव्या तदा स्याद् योगवाहिका ॥
वृद्धोऽपि तरुणः शक्तः स्त्रीशतेषु वृषायते ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गन्धक की कज्जली बनाकर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र,

[1] लोहकिट्टं मयूरकमिति पाठान्तरम् ।

बहेड़ा और आमलेका चूर्ण १-१ भाग मिलाकर सबको १ रोज़ बकरीके दूधमें घोटकर (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें।

इन्हें अद्रकके रसमें मिलाकर चाटकर ऊपर से थोड़ा ठण्डा पानी पीनेसे खांसी और श्वास नष्ट होते और विशेषतः अग्निकी वृद्धि होती है। इसे निरन्तर अधिक समय तक सेवन करनेसे वृद्ध पुरुष भी तरुणके समान शक्तिमान् हो जाता है।

(४४२४) **पुष्पधन्वारसः** (१)

(र. र. स. । अ. २७; र. चं. । वाजीकरणा.)

रम्भाकन्दे हेमताराऽर्कपिष्टिं
पक्त्वा यन्त्रे भूधरे तां पचेत ।
गन्धं दत्त्वा षड्गुणार्द्धं क्रमेण
पश्चात्कान्तं तेन तुल्यं क्रमेण ॥
दत्त्वा खल्वे शाल्मलीयष्टितोयैः
पक्षैकं तन्मर्दयेन्नागवल्ल्याः ।
नीरैर्यामं पुष्पधन्वा रसः स्या-
द्वल्लं दद्यादस्य पूर्वोक्तयुक्त्या ॥
पुष्टिं वीर्यं दीपनं सोऽत्र दद्या-
द्धन्याद्रोगान् रोगयोग्याऽनुपानैः ॥

शुद्ध स्वर्ण, शुद्ध चांदी और शुद्ध ताम्रके अत्यन्त बारीक पत्र या चूर्ण समान-भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर केलेकी जड़में रखकर उस-पर कपड़मिट्टी करके उसे भूधरयन्त्रमें (१ रोज़) पकावें। तदनन्तर उसमें उसके बराबर शुद्ध गन्धक मिलाकर पुनः इसी प्रकार पकावें। इस प्रकार ३ बार बराबर बराबर गन्धक मिलाकर पकावें और जब ३ गुना गन्धक जारण कर चुकें तो उसमें उसके बराबर कान्तलोह-भस्म मिलाकर उसे सेंभलकी मूसली और मुलैठीके काथ में १५ दिन खरल करें। तदनन्तर १ पहर पान के रसमें घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे घृत मधु और मिश्री युक्त दूधके साथ सेवन करनेसे बल वीर्य और अग्निकी वृद्धि होती है तथा रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे अनेक रोग नष्ट होते हैं।

(४४२५) **पुष्पधन्वारसः**[१] (२)

(भै. र.; यो. र. । रसायनवाजी.; आ. वे. वि. । अ. ६९; वृ. यो. त. । त. १४७; यो. त. । त. ८०)

हरजभुजगलौहश्चाऽभ्रकं वङ्गभस्म,
कनकविजययष्ट्यः शाल्मलीनागवल्ल्यौ ।
घृतमधुसितदुग्धं पुष्पधन्वा रसेन्द्रो,
रमयति शतरामा दीर्घमायुर्बलञ्च ॥

पारदभस्म, सीसाभस्म, लोहभस्म, अभ्रक-भस्म, बंगभस्म, धतूरेके बीज (शुद्ध), विजयसार, मुलैठी, सेंभलकी मूसली और पान समानभाग लेकर सबका यथाविधि चूर्ण बनावें।

इसे घृत मधु और मिश्री युक्त दूधके साथ सेवन करनेसे बल और आयुकी वृद्धि होती तथा सैकड़ों स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति प्राप्त होती है। (मात्रा-३ रत्ती ।)

१ इस प्रयोगमें योगतरंगिणीमें पारद तथा बंग नहीं हैं। बृहद्योगतरंगिणीमें बंगकी जगह चीता है और धतूरे आदि ५ पदार्थोंसे भावना देनेके लिये लिखा है। योगरत्नाकरमें बंग नहीं है तथा इसका नाम 'लघुपुष्पधन्वा' लिखा है।

(४४२६) **पुष्पधन्वारसः** (३)

(या. र. । वाजीकरणा.)

कनकहरजकान्तं ताप्यकं वृद्धिभागं,
द्विजकुवलययष्टीशाल्मलीनागिनीभिः ।
घृतमधुपयखण्डैः पुष्पधन्वा द्विवल्लो,
रमयति बहुकान्ता दीर्घमायुर्विधत्ते ॥

स्वर्णभस्म १ भाग, पारदभस्म २ भाग, कान्तलोहभस्म ३ भाग और स्वर्णमाक्षिकभस्म ४ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके तुम्बुरु, कमल, मुलैठी, सेंभलकी मूसली और पानोंके रसमें १-१ दिन घोटकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें घृत मधु और मिश्रीयुक्त दूधके साथ सेवन करनेसे अनेक स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति और दीर्घायु प्राप्त होती है ।

(४४२७) **पूतीकरञ्जाद्यं चूर्णम्**

(वं. से. । उदर.)

पूतीकरञ्जबीजं मूलकबीजं गवादनीमूलम् ।
शङ्खभस्म च काञ्जिकपीतं शमयेज्जलोदरमपि ॥

पूतीकरञ्ज (कांटा करञ्ज) के बीज, मूलीके बीज, इन्द्रायणकी जड़, और शंखभस्म समान-भाग लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें ।

इसे काञ्जीके साथ सेवन करनेसे जलोदर नष्ट होता है ।

(४४२८) **पूर्णकलावटी**

(र. सा. सं । ग्रहणीरो.)

रसं गन्धं घनं लौहं धातकीपुष्पबिल्वकम् ।
विषं कुटजबीजञ्च पाठा जीरकधान्यकम् ॥
रसाञ्जनं टङ्कणञ्च शिलाजतु फलन्तथा ।
अभ्रांशश्च फलं ग्राह्यं प्रत्येकं तोलकत्रयम् ॥
भेकपर्णी पञ्चमूली बलाकञ्चटदाडिमम् ।
शृङ्गाटं केशरं जम्बू दधिमस्तु जयन्तिका ॥
केशराजं भृङ्गराजं प्रत्येकं तोलकद्वयम् ।
द्विमाषा वटिका कार्य्या तक्रेण परिसेविता ॥
इयं पूर्णकला नाम ग्रहणीगदनाशिनी ।
शूलघ्नी दाहशमनी वह्निदा ज्वरनाशिनी ॥
भ्रमच्छर्दिच्छेदकारी सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, लोह-भस्म, धायके फूल, वेलगिरि, शुद्ध बछनाग, इन्द्र जौ, पाठा, जीरा, धनिया, रसौत, सुहागा, शिला-जीत, जायफल, हर्र, बहेड़ा और आमला ३-३ तोले; मण्डूकपर्णी, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु, बला (खरैटी), चौलाईकी जड़, अनारका छिलका, सिंघाड़ा, केसर, जामनकी छाल (या गुठली), दहीका पानी, जयन्ती तथा सफेद और काला भंगरा २-२ तोले लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनाकर उसमें भस्में मिलावें और फिर अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सब को पानीके साथ अच्छी तरह घोटकर २-२ माशेकी गोलियां बनावें ।

इन्हें छाछके साथ सेवन करनेसे ग्रहणीरोग, शूल, दाह, ज्वर, भ्रम और छर्दिका नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती है ।

(४४२९) **पूर्णचंद्रोदयरसः**

(र. सा. सं.; र. चं । अतिसा.)

शुद्धञ्च तालकं लौहं गगनञ्च पलं पलम् ।
कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं वटकोन्मितम् ॥

जातीकोषो मुरा पत्रं शटी तालीसकेशरम् ।
व्योषं चोचं कणामूलं लवङ्गं पिचुसम्मितम् ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥
अम्लपित्तं तथा शूलं शूलञ्च परिणामजम् ।
रसायनवरश्चाऽयं वाजीकरण उत्तमः ॥

शुद्ध हरताल, लोहभस्म और अभ्रकभस्म ५-५ तोले, कपूर, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, जावित्री, मुरामांसी, तेजपात, कचूर, तालीसपत्र, केसर, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, पीपलामूल और लौंग १-१ तोला लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका अत्यन्त महीन चूर्ण मिलाकर खरल करके सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे अनेक प्रकारके अतिसार, सर्व प्रकारकी संग्रहणी, अम्लपित्त, शूल और परिणाम शूल नष्ट होता है। यह रस रसायन और वाजीकरण है।

(मात्रा-३ रत्ती।)

(४४३०) पूर्णचन्द्रो रसः (१)

(र. चं.; र. प्र. सु. । राजय.१)

हेमभस्मसमतो रसं त्विमं
मौक्तिकं तु विषगन्धकं कुरु ।
चित्रकार्द्रकरसेन पेषये-
त्स्थापयेच्च परिवेष्ट्यन्मृदा ॥

भाजनेऽच्छलवणोदरे क्षिपे-
दङ्गुलीत्रितयमानतस्तु तत् ।
गोमयेन परिवेष्ट्य भाजने
शोषयेत पुटयेत्तृणाग्निना ॥
पूर्णचन्द्र इति कीर्तितो रसो
राजयक्ष्मरवितापनाशनः ।
पथ्यमत्र कुमुदेश्वरे यथा
तद्वदेव हि विवर्ज्य वर्जनम् ॥
अम्लपित्तपरिणामशूलहा
सेवितो मधुकणाज्यमिश्रितः ।
पैत्तिकज्वरविषूचिकापहा
जीरकद्वयगुडूचिकान्वितः ॥
शाल्मलीद्वयगुडूचिकाकणैः
शुष्कपाण्डुहरणः सितायुतैः ।
शाल्मलीद्वयगुडूचिकासिता
वानरीकणपयोविमिश्रितैः ॥
पुष्टिदृष्टिबलकामवीर्यदो
जायतेऽखिलगदापहारकः ॥

स्वर्णभस्म, शुद्ध पारा, मोतीभस्म, शुद्ध बछनाग विष और शुद्ध गन्धक समान-भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको १-१ दिन चीतेके क्वाथ और अदरक के रसमें घोटकर गोला बनावें और उसे सुखाकर चार तह किये हुवे कपड़ेमें लपेटकर उस पर मिट्टीका लेप कर दें और उसके ऊपर ३ अंगुल मोटा गायके गोबरका लेप करके सुखाकर उसे एक हाण्डीमें नमकके बीचमें रख दें तथा उसका मुंह बन्द करके सुखा लें। तदनन्तर उसे तृणाग्निमें १ दिन पकावें और फिर उसके

१ रस चण्डांशुमें यह रस राजयक्ष्मा प्रकरणमें २ स्थानोंमें लिखा है। उनमेंसे एक पाठ ऊपर दिया गया है दूसरे पाठमें मोती और विषके स्थानमें नागभस्म लिखी है तथा भावना द्रव्योंमें अद्रकका अभाव है।

स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे औषधको निकालकर पीस लें।

इसके सेवनसे राजयक्ष्माका नाश होता है।

इसे अम्लपित्त और परिणामशूलमें पीपलके चूर्ण और शहद तथा घीके साथ; पित्तज्वर और विषूचिकामें स्याह और सफेद जीरेके चूर्ण तथा गिलोयके क्वाथके साथ; तथा शोषयुक्त पाण्डुरोगमें सफेद और लाल सेंभलकी छाल, पीपल, गिलोय और मिश्रीके साथ देना चाहिये।

इसे दोनों प्रकारके सेंभलकी छाल, गिलोय, मिश्री, कौंचके बीज और पीपलके चूर्ण तथा दूध के साथ सेवन करनेसे पुष्टि, दृष्टि, बल, वीर्य, और कामशक्तिकी वृद्धि होती है।

पथ्य—मधुर पदार्थ, शाली चावल, मूंग, घी दूध, मस्तु, घीमें बनाये हुये अधिक क्षार और हींग रहित पदार्थ तथा शीतल पदार्थ हितकारी हैं। भोजन दो तीन बार करना चाहिये।

परहेज—तेल, बेलफल, करेला, राई, सत्तू और काम क्रोधादिसे बचना चाहिये।

(४४३१) पूर्णचन्द्रो रसः (२)

(र. चं.; र. र.; र. र. स.; रसे. चि.; धन्व.; र. रा. सु.। वाजीकरणा.)

सूतं गन्धश्चाऽश्वगन्धां गुडूचीं
यष्टीतोयैर्मर्दयेदेकघस्रम्।
क्षुद्रं शङ्खं मौक्तिकं लोहकिट्टं
भस्मीभूतं सूततुल्यञ्च दद्यात्॥
भूकूष्माण्डैर्वासरं तद्विमर्द्य
गोलं कृत्वा भूधरे तं पुटेत्तु।
चूर्णं कृत्वा नागवल्लीरसेन
दद्यादेवं मर्दयित्वैकयामम्॥
मध्वाज्याभ्यां पूर्णचन्द्रो रसेन्द्रः
पुष्टिं वीर्यं दीपनञ्चैव कुर्यात्।
प्रायो योज्यः पित्तरोगे ग्रहण्या-
मर्शोरोगे पित्तजे बोलयुक्तः॥
स्त्रीणां रोगे शाल्मलीनीरयुक्तो
शैलेयं वा शर्करातुल्यभागम्।
शुद्धं गन्धं वाजिगन्धाञ्च यष्टीं
पक्त्वा दुग्धे तच्च कार्श्ये ददीत॥
एवञ्चाऽऽज्यं पाचयित्वा प्रदद्या-
द्यद्वा यष्टी मागधी चाऽश्वगन्धा।
मध्वाज्याभ्यां शाल्मलीसत्वयुक्ताः
शम्बूकैर्वा भर्जितैराज्यमिश्रैः॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, असगन्ध और गिलोय १-१ भाग लेकर पारे गन्धककी कज्जली बनाकर उसमें अन्य दोनों ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन मुलैठीके क्वाथमें घोटें और फिर उसमें १-१ भाग क्षुद्रशंख (घोंघा), मोती और मण्डूरकी भस्म मिलाकर १ दिन बिदारीकन्दके रसमें घोटकर गोला बनावें और उसे १ दिन भूधरयन्त्रमें पकाकर स्वांग शीतल होनेपर निकाल कर १ पहर पानके रसमें घोटकर सुरक्षित रक्खें।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे पुष्टि, वीर्य और अग्निकी वृद्धि होती है।

इसे पित्तरोग, पित्तज ग्रहणी और पित्तज अर्श में बोल के चूर्णके साथ तथा स्त्री रोगोंमें सेंभलकी छालके रसके साथ अथवा शिलाजीत

और मिश्री (आधा आधा माशा) एकत्र मिलाकर उसके साथ देना चाहिये । यदि कृश पुरुषको सेवन कराना हो तो रस खिलानेके बाद उसे शुद्ध गन्धक, असगन्ध और मुलैठीको दूधमें पकाकर पिलाना चाहिये । अथवा इन्हीं चीज़ोंसे घृत पकाकर पिलाना चाहिये । या रस खिलानेके पश्चात् मुलैठी, असगन्ध और पीपलका चूर्ण घी और शहदमें मिलाकर चटाना चाहिये; या मोती और घोंघेकी भस्म में सेंभलका गोंद और घी मिलाकर देना चाहिये ।

(४४३२) **पूर्णचन्द्रो रसः** (३)

(र. सा. सं.; भै. र.; र. चं.; र. र. स.; र. रा. सु. । रसायना.)

मृतसूताभ्रलोहं वै शिलाजतुविडङ्गकम् ।
ताप्यं क्षौद्रघृतं तुल्यमेकीकृत्य विमर्दयेत् ॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम्ना माषैकं भक्षयेत्सदा ।
शाल्मलीपुष्पचूर्णञ्च क्षौद्रैः कर्षं पिबेदनु ॥
दुर्बलो बलमाप्नोति मासैकेन यथा शशी ।
कृशानां बृंहणं देयं सर्वं पानान्नभेषजम् ॥

पारदभस्म, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, शिलाजीत, बायबिड़ंग, स्वर्णमाक्षिक भस्म, घी और शहद समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके १-१ माशेकी गोलियां बना लें ।

इनमें से १ गोली नित्य प्रति खाकर १। तोला सेंभलके पुष्पोंका चूर्ण शहदमें मिलाकर खानेसे दुर्बल मनुष्य चन्द्रमाकी भांति १ मासमें बलवान हो जाता है ।

दुर्बल व्यक्तियोंको बृंहण अन्न पानादि देना चाहिये ।

(४४३३) **पूर्णचन्द्रो रसः** (४) (बृहत्)

(र. रा. सु., ध.; र. चं.; र. र.; र. सा. सं.; भै. र. । वाजीकरणा.)

द्विकर्षं शुद्धसूतस्य गन्धकञ्च द्विकार्षिकम् ।
लोहभस्म पलञ्चाऽभ्रं जारितञ्च पलांशिकम् ॥
द्वितोलं रजतञ्चैव वङ्गभस्म द्विकार्षिकम् ।
सुवर्णं तोलकञ्चैव ताम्रं कांस्यञ्च तत्समम् ॥
जातीफलञ्चेन्द्रपुष्पमेलाभृङ्गञ्च जीरकम् ।
कर्पूरं वनिता मुस्तं कर्षं कर्षं पृथक् पृथक् ॥
सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा कन्यारसविमर्दितम् ।
भावयित्वा वरातोयैः केबुकानां रसेन च ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्ये रात्रिदिनोषितम् ।
उद्धृत्य मर्दयित्वा तु वटिकां चणसम्मिताम् ॥
खादेच्च पर्णखण्डेन संयुक्तां व्याधिनाशिनीम् ।
सर्वव्याधिविनाशाय काशीनाथेन भाषितः ॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम सर्वरोगेषु योजयेत् ।
बल्यो रसायनो वृष्यो वाजीकरण उत्तमः ॥
अयमष्ठीलिकां हन्ति कासश्वासमरोचकम् ।
आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलकम् ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च ग्रहणीं चिरजामपि ।
आमवातमम्लपित्तं भगन्दरमपि द्रुतम् ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं वातशोणितम् ।
नातः परतरः श्रेष्ठो विद्यते वाजिकर्मणि ॥
रसस्याऽस्य प्रसादेन नरो भवति निर्गदः ।
मेधाञ्च लभते वाग्मी तुष्टिपुष्टिसमन्वितः ॥
मदनस्य समां कान्तिं मदनस्य समं बलम् ।
गीयते मदनेनैव मदनस्य समं वपुः ॥
प्रियाश्च मदनमायाः पश्यन्ति मदनाऽऽकुलम् ।
स्त्रीणां तथाऽनपत्यानां दुर्बलानाञ्च देहिनाम् ॥

क्षीणानामल्पशुक्राणां वृद्धानां वातरेतसाम् ।
ओजस्तेजस्करश्चाऽयं स्त्रीषु कामविवर्धनः ॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं सर्वामयध्वंसकः,
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गमे ।
नित्यानन्दकरः सुखाऽतिसुखदो भूपैः सदा सेव्यते,
दृष्टः सिद्धफलो रसायनवरः श्रीपूर्णचन्द्रो रसः॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक २॥-२॥ तोले; लोहभस्म और अभ्रकभस्म ५-५ तोले; चांदी और बंगभस्म २॥-२॥ तोले; स्वर्ण भस्म, ताम्र-भस्म, कांसीभस्म, जायफल, लैंग, इलायची, भंगरा, जीरा, कपूर, फूलप्रियंगु और नागरमोथा, १।-१। तोला लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको ग्वारपाठा, त्रिफला और केमुक (केऊंआ) के रसकी पृथक् पृथक् १-१ भावना देकर अरण्डके पत्तोंमें लपेटकर अनाजके ढेरमें दबा दें और फिर २४ घण्टे बाद पत्तोंमें से औषधको निकालकर खरल करके चनेके बराबर गोलियां बना लें ।

इसे पानमें रखकर खानेसे समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

यह रस बल्य, रसायन और वाजीकरण है तथा अष्ठीलिका, खांसी, श्वास, अरुचि, आमशूल, कटिशूल, हृच्छूल, पित्तजशूल, अग्निमांद्य, अजीर्ण, पुरानी संग्रहणी, आमवात, अम्लपित्त, भगन्दर कामला, पाण्डु, प्रमेह और वातरक्तका नाश करता है ।

इसके सेवनसे मेधा और वाचा शक्तिकी वृद्धि होती तथा मनुष्य अत्यन्त बलवान, कान्ति-युक्त और रूपवान हो जाता है ।

यह रस पुत्रहीन स्त्री तथा दुर्बल, क्षीण, अल्पवीर्य और वृद्ध पुरुषोंके लिये अत्यन्त हित-कारी है । ओज, तेज और काम-शक्तिको बढ़ाता है ।

इसके अभ्याससे पलितरोग नष्ट होता और वृद्ध पुरुषोंमें तरुणोंके समान शक्ति आ जाती है।

यह श्रेष्ठ रसायन और शीघ्र फल देनेवाला अनुभूत प्रयोग राजाओंके सदैव सेवन करने योग्य है ।

(४४३४) पूर्णेन्दुरसः

(र. मं. । अ. ६; बृ. यो. त । त. १४७; र. र. । वाजीकरणा.; यो. र. । रसायना.)

शाल्मल्युत्थैर्द्रवैर्मर्द्यं पक्षैकं शुद्धपारदम् ।
यामद्वयं पचेच्चाऽपि वस्त्रे बद्धाऽथ मर्दयेत् ॥
दिनैकं शाल्मलीद्रावैर्मर्दयित्वा वटीकृतम् ।
वेष्टयेन्नागवल्ल्याऽथ निक्षिपेत् काचभाजने ॥
भाजनं शाल्मलीद्रावैः पूर्णं यामद्वयं पचेत् ।
वालुकायन्त्रमध्यस्थं द्रवे जीर्णे समुद्धरेत् ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेत्प्रातर्नागवल्लीदलान्तरे ।
मुसलीं ससितां क्षीरं पलैकं पाययेदनु ॥
रसः पूर्णेन्दुनामाऽयं सम्यग्वीर्यकरो भवेत् ।
कामिनीनां सहस्रैकं नरः कामयते ध्रुवम् ॥

शुद्ध पारदको १५ दिन सेंभलके रसमें खरल करें । तत्पश्चात् उसे वस्त्रमें बांधकर २ पहर तक यथाविधि दोलायन्त्र विधिसे सेंभलके रसमें स्वेदन

करें । फिर उसे १ दिन सेंभलके रसमें घोटकर गोला बनालें और उसे पानोंमें. लपेट कर कपड़-मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें डाल दें तथा शीशीको सेंभलके रससे भरकर दो पहर बालुका-यन्त्रमें पकावें । इतने समय में वह समस्त द्रव सूख जायगा । (यदि न सूखे तो अधिक देर पकावें । दो पहर से कम न पकाना चाहिये ।) तदनन्तर शीशीके स्वांगशीतल होनेपर उसमें से औषधको निकालकर पीस लें ।

इसमें से २ रत्ती रस पानमें रखकर खाने और उसके बाद ५ तोले मूसली के चूर्णको मिश्रीयुक्त दूधके साथ फांकनेसे अत्यन्त वीर्यवृद्धि और बहुसंख्यक स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति प्राप्त होती है ।

(४४३५) पोटलीरसः

(र. र. स. । अ. १६)

कपर्दतुल्यं रसगन्धकल्कं
लोहं मृतं टङ्कणकं च तुल्यम् ।
जयारसेनैकदिनं विमर्द्य
चूर्णेन सम्पेष्य पुटेत भाण्डे ॥
ददीत तां पोटलिकां च दोष-
त्रयप्रधानग्रहणीनिवृत्त्यै ॥

कौड़ीभस्म ५ तोले, शुद्ध पारा और गन्धक २॥-२॥ तोले, लोहभस्म ५ तोले तथा सुहागेकी खील ५ तोले लेकर सबको १-१ दिन जयाके रस और चूनेके पानीमें घोटकर शरावसम्पुटमें बन्द करके भाण्डपुटमें पकावें ।

इसके सेवनसे त्रिदोषज संग्रहणी नष्ट होती है ।

(मात्रा--२ रत्ती)

नोट--भाण्डपुटकी विधि ' पाषाणभेदी रस ' के फुटनोट में देखिये ।

(४४३६) प्रचण्डभैरवो रसः

(र. र. । अपस्मा.)

कासीसं गन्धकं सूतं दरदं मधुपुष्पकम् ।
गुडूची शाल्मली धान्यं भूनिम्बोऽमरतुम्बुरु ॥
तिलमुद्गपटोलानि द्राक्षां कूष्माण्डभस्म च ।
झिण्टिका कन्यका भार्ङ्गी बलाद्वयसमायुतम् ॥
सर्वमेतत्समाहृत्य मध्वाज्ये गुटिकाः शुभाः ।
छर्द्यपस्मारमुन्मादवातरोगांश्च दुस्तरान् ॥
कासं श्वासं क्षयं हिक्कां दुर्नामञ्च प्रमेहकम् ।
पित्तज्वरारुचिश्चैव तिमिरं चक्षुरामयम् ॥
गलरोगेषु सर्वेषु कर्णस्तम्भं हरेद्ध्रुवम् ॥

शुद्ध गन्धक, कसीस, पारद, सिंगरफ, महुवेके फूल, गिलोय, सेंमलकी मूसली, धनिया, चिरायता, देवदारु, तुम्बुरु, तिल, मूंग, पटोल, मुनक्का, पेठेकी भस्म, पियाबांसा, घीकुमार, भारंगी खरैटी और कंघी समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य चीज़ों का महीन चूर्ण डालकर सबको आवश्यकतानुसार घी और शहदमें घोटकर (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे छर्दि, अपस्मार, उन्माद, वात-रोग, खांसी, श्वास, क्षय, हिचकी, अर्श, प्रमेह, पित्तज्वर, अरुचि, तिमिर, नेत्ररोग, गलरोग औ कर्णस्तम्भ का अवश्य नाश हो जाता है ।

(४४३७) **प्रचण्डरसः**

(नवज्वरविनाशनरसः)

(भै. र.; र. चि.; र. रा. सु.; वै. क. द्रु. । स्क. २ ज्वर.)

अमृतं पारदं गन्धं मर्दयेत् प्रहरद्वयम् ।
सिन्धुवाररसैः पश्चाद्भावयेदेकविंशतिम् ॥
तिलप्रमाणं दातव्यं नवज्वरविनाशनम् ।
उद्वेगे मस्तके तैलं तक्रं चापि प्रदापयेत् ॥

शुद्ध मीठा तेलिया, शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर कज्जली करके उसे २ पहर तक घोटें तत्पश्चात् संभालूके रसकी २१ भावना दें ।

इसमें से १ तिलके बराबर रस देनेसे नवीन ज्वर नष्ट होता है ।

इसके खानेके पश्चात् यदि बेचैनी हो तो शिरपर तैलकी मालिश करानी और तक्र पिलाना चाहिये ।

(अनुपान—शहद ।)

(४४३८) **प्रतापतपनो रसः**

(र. रा. सु.; भै. र. । ज्वर.)

गन्धकं हिङ्गुलं तालं मृतकं लौहटङ्कणम् ।
खर्परं साचिकाक्षारं मञ्जिष्ठां हिङ्गुलं समम् ॥
रसेन मर्दितं पिण्डं निर्गुण्डीहस्तिशुण्डयोः ।
अष्टयामं पचेत् कूप्यां निरुध्य सिकताह्वये ॥
ततः सिद्धं समादाय रक्तिकामार्द्रकेन च ॥
सन्निपातविनाशाय प्रतापतपनो रसः ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ), शुद्ध हरताल, शुद्ध पारद, लोहभस्म, सुहागेकी खील; खपरियाभस्म, सज्जीक्षार, मजीठ और शुद्ध हिंगुल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको १-१ दिन संभालू और हाथी सुण्डीके रसमें घोटकर गोला बना लें और उसे आतशी शीशीमें डालकर आठ पहर बालुका-यन्त्रमें पकावें । तदनन्तर शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसमें से रसको निकाल कर पीस लें ।

इसमें से १ रत्ती रस अद्रकके रसके साथ देनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है ।

(४४३९) **प्रतापमार्त्तण्डो रसः**

(भै. र.; र. रा. सु.; र. सा. सं. । ज्वर.)

विषहिङ्गुलजैपालटङ्कणं क्रमवर्द्धितम् ।
रसः प्रतापमार्त्तण्डः सद्यो ज्वरविनाशनः ॥

शुद्ध बछनाग १ भाग, शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ) २ भाग, शुद्ध जमालगोटा ३ भाग और सुहागेकी खील ४ भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर रक्खें ।

इसके सेवनसे ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—२ रत्ती)

(४४४०) **प्रतापलङ्केश्वररसः** (१)

(र. र. स. । अ. २० कुष्ठ.)

विषादिकाभ्रं रसगन्धटङ्कणं
सताम्रकुष्ठायसपिप्पलीरजः ।
विमर्दितं काञ्चनपत्रवारिणा
प्रतापलङ्केश्वरसञ्ज्ञको रसः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, ताम्रभस्म, कूठ, लोहभस्म और पीपल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको कचनारके पत्तों के रसमें घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवन से विषादिकाका नाश होता है । (मात्रा—४ रत्ती ।)

(४४४१) प्रतापलङ्केश्वररसः (२)

(र. मं. । अ. ६; र. रा. सु. । ज्वरा.)

अपामार्गस्य मूलस्य चूर्णं चित्रकमूलजैः ।
वल्कलैर्मर्दयित्वा च रसं वस्त्रेण गालयेत् ॥
तेन सूतसमं गन्धमभ्रकं दरदं विषम् ।
टङ्कणं तालकं चैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥
त्रिदिनं मुशलीकन्दैर्भावयेद्घर्मरक्षितम् ।
मूषां च गोस्तनाकारामापूर्य परिढक्रयेत् ॥
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वेष्टयित्वा पुटेल्लघु ।
रसतुल्यं लोहभस्म मृतं वङ्गमहिस्तथा ॥
मधूकसारजलदौ रेणुका गुग्गुलुः शिला ।
चव्यकं च समांशं स्याद्भागार्द्धं शोधितं विषम्॥
तत्सर्वं मर्दयेत्खल्वे भावयेद्विषनीरतः ।
आतपे सप्तधा तीव्रे मर्दयेद्घटिकाद्वयम् ॥
कटुकत्रयकषायेण कनकस्य रसेन च ।
फलत्रयकषायेण मुनिपुष्परसेन च ॥
समुद्रफलनीरेण विजयावारिणा तथा ।
चित्रकस्य कषायेण ज्वालामुख्या रसेन च ॥
प्रत्येकं सप्तधा भाव्यं तद्वत्पिष्टश्च भावयेत् ।
सर्वस्य समभागेन विषेण परिधूपयेत् ॥
दिनं विमर्दयित्वाऽथ रक्षयेत्कूपिकान्तरे ।
गुञ्जैकं वह्निनीरेण शृङ्गवेररसेन वा ॥
प्रदद्याद्रोगिणे तीव्रमोहविस्मृतिशान्तये ।
शस्त्रेण तालुमाहत्य मर्दयेदार्द्रनीरतः ॥
नोद्घटन्ते यदा दन्तास्तदा कुर्यादमुं विधिम् ।
सेचयेन्मन्त्रयित्वाऽथ धारां कुम्भशतैर्मुहुः ॥
भोजनेच्छा यदा तस्य जायते रोगिणस्तदा ।
दद्ध्योदनं सितायुक्तं दद्यात्तक्रं सजीरकम् ॥
पाने पानं सितायुक्तं यदीच्छति तदा ददेत् ।
एवं कृते न शान्तिः स्यात्तापस्य रसजस्य च ॥
सचन्द्रचन्दनरसाल्लेपनं कुरु शीतलम् ।
तूलिकामल्लिकाजातीपुन्नागबकुलावृताम् ॥
विधाय शय्यां तत्रस्थं लेपयेच्चन्दनैर्मुहुः ।
हावभावविलासोक्तिकटाक्षचश्चलेक्षणैः ॥
पीनोत्तुङ्गकुचोत्पीडैः कामिनीपरिरम्भणैः ।
रम्यवीणानिनादाद्यैर्गायनैः श्रवणामृतैः ॥
पुण्यश्लोकपुराणानां कथासंभाषणैः शुभैः ।
एभिः प्रकारैस्तापस्य जायते शमनं परम् ॥
वर्जयेन्मैथुनं तावद्यावन्नो बलवान् भवेत् ।
दद्याद्वातादिरोगेषु सिन्धुगुग्गुलुवह्निभिः ॥
दद्यात्कणामाक्षिकाभ्यां कामलाक्षयपाण्डुषु ।
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
अयं प्रतापलङ्केशः सन्निपातनिकृन्तनः ॥

अपामार्ग (चिरचिटे) की जड़के चूर्णको चीतामूलकी छालके स्वरसमें घोटकर उसे कपड़ेमें डालकर निचोड़कर रस निकालें । तत्पश्चात् पारा, गन्धक, अभ्रकभस्म, हिंगुल (शिंगरफ), बछनाग, सुहागेकी खील और हरताल १–१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें, फिर

उसमें अन्य ओषधियोंका अत्यन्त महीन चूर्ण मिलाकर सबको उपरोक्त रसमें सात दिन खरल करें फिर मूसलीके रसमें धूपमें ३ भावना दें। तदनन्तर उसे गोस्तनाकार मूषामें रखकर उसका मुख बन्द करके उसपर ७ कपरमिट्टी करदें और फिर उसे सुखाकर लघुपुटमें फूंक दें।

इसके बाद उसमें पारेके बराबर लोहभस्म, बंगभस्म, सीसाभस्म, महुवेका सार, नागरमोथा, रेणुका, गूगल, मनसिल और चव्यका चूर्ण तथा पारेसे आधा शुद्ध बछनागका चूर्ण मिलाकर सबको बछनागके स्वरस या काथसे तेज धूपमें ७ भावना दें। तदनन्तर उसे २ घड़ी तक खरल करनेके बाद त्रिकुटेके काथ, धतूरेके रस, त्रिफलाके काथ, अगस्ती (अगथिया)के स्वरस, समन्दरफलके काथ, भांगके स्वरस या काथ, चीतामूलके काथ और कलिहारीके स्वरसमें ७-७ बार घोटकर उसे उस सबके बराबर विषकी धूप देकर रक्खें।

यदि सन्निपातमें संज्ञानाश और विस्मृति हो तो इसमेंसे १ रत्ती रस चीतामूलके काथ या अदरकके रसके साथ देना चाहिये।

यदि रोगीकी जबाड़ी बन्द हो तो उसके तालुको लुंगसे जरा एक खुरचकर उस पर यह रस अदरकके रसमें मिलाकर मलना चाहिये। इससे उसे होश आ जायगा। यदि उस विधिसे भी होश न आवे तो रोगीके मस्तक पर मन्त्रपूत १०० घड़े शीतल जल धार बांधकर छोड़ें। और होश आने पर रोगीको भूख लगे तो उसे दही भात और खांड अथवा जीरेका चूर्ण मिलाकर तक्र दें। प्यासमें मिश्रीका शरबत पिलावें।

यदि इतना करने पर भी औषधकी गरमी शान्त न हो तो चन्दनके पानीमें कपूर मिलाकर उसके शरीर पर लेप करें तथा रुई, मोगरा, चमेली, पुन्नाग और मौलश्रीके फूल चारपाई पर बिछाकर उस पर रोगीको लिटा दें और उसके शरीर पर बार बार चन्दनका लेप करते रहें। इसके अतिरिक्त सुन्दरी युवतिके आलिंगन, वीणाके मधुर स्वर, गायन और मनोहर धर्मकथाओंके श्रवणसे भी ताप कम हो जाता है।

ज्वरके रोगीको ज्वर जानेके बाद भी अच्छी तरह बल आने तक स्त्रीप्रसंगसे बचना चाहिये।

इसे वातव्याधिमें सेंधानमक, गूगल और चीतेके चूर्णके साथ तथा कामला पाण्डु और क्षय में पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करना चाहिये।

यह रस सन्निपातको तो नष्ट करता ही है पर साथ ही रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे अन्य समस्त रोगोंको भी नष्ट करता है।

(४४४२) प्रतापलङ्केश्वररसः (३)

(वृ. यो. त. । त. १४२; यो. र.; र. चं. । सूतिका.; यो. त. । त. ७५)

एकेन्दुचन्द्रानलवार्धिदन्ती
कलैकभागं क्रमशो विमिश्रम् ।
मृताभ्रगन्धोपणलोहशङ्ख-
वन्योत्पलाभस्मविषं च पिष्टम् ॥
प्रसूतिवातेऽनिलदन्तबन्धे
सार्द्राम्भसा वल्लममुष्य लिह्यात् ।

वातामये श्लेष्मगदेऽर्शसि स्यात्
पुरामृतार्द्रत्रिफलायुतोऽयम् ॥
सशृङ्गबेरद्रव एष हन्ति
ससन्निपातं ज्वरमुग्ररूपम् ।
निजानुपानैर्निजपथ्ययुक्तः
सर्वातिसारान् ग्रहणीविकारान् ॥
'प्रतापलङ्केश्वर' नामधेयः
सूतः प्रयुक्तो गिरिराजपुत्र्या ॥

शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक और शुद्ध बछनागका चूर्ण १-१ भाग, कालीमिर्चका चूर्ण ३ भाग, लोहभस्म ४ भाग, शंखभस्म ८ भाग और अरने उपलोंकी भस्म १६ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें, फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको एकत्र घोटकर सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे ३ रत्ती रस अदरकके स्वरसके साथ देनेसे प्रसूतिवात, दन्तबन्ध और भयंकर सन्निपात; तथा शुद्ध गूगल, गिलोयका रस, अदरकका रस और त्रिफलाके काथके साथ देनेसे वातव्याधि, कफरोग और अर्शका नाश होता है।

इसे यथोचित अनुपानके साथ सेवन करने और पथ्य पालन करनेसे समस्त प्रकारके अतिसार और ग्रहणीविकार नष्ट होते हैं।

(४४४३) प्रतापलङ्केश्वरो रसः (४)

(र. का. धे. । पाण्डु. ८)

रसगन्धकत्र्यूषणविषहयकट्फलकारभम् ।
जातीफलदलं चित्रार्द्रजलत्रिकभावितम् ॥
अयं प्रतापलङ्केशः सर्ववातादिपाण्डुनुत् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध बछनाग, कनेरकी जड़, कायफल, अकरकरा, जावत्री और जायफल समान-भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको चित्रकके काथ और अदरकके रसमें ३-३ भावना देकर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे वातादि सर्व दोषज पाण्डुका नाश होता है।

(मात्रा--६ रत्ती)

(४४४४) प्रतापाग्निकुमाररसः

(यो. र. । वात.)

पारदं शुल्वजं भस्म विषं मरिचनागरम् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणान्विमर्द्यार्द्रजैर्द्रवैः ॥
काचकूप्यन्तरे क्षिप्त्वा मृदा संलेपयेद्बहिः ।
शनैर्मृद्वग्निना पाच्यं बालुकायन्त्रके दिनम् ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य दशांशं च विषं क्षिपेत् ।
सूक्ष्मचूर्णं कृतं खल्वे गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ॥
सन्निपातान्निहन्त्याशु आर्द्रकद्रवसंयुतः ।
प्रतापाग्निकुमारोऽयं सर्ववातहरः परः ॥

पारदभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध बछनाग, काली मिर्च, सोंठ, यवक्षार, सज्जीखार, सुहागा और पांचों नमक समान-भाग लेकर सबका महीन चूर्ण बनाकर उसे १ दिन अदरख के रसमें घोटकर कपड़मिट्टीकी हुई आतशी शीशीमें भरकर उसे १ दिन बालुकायन्त्रमें मन्दाग्नि पर पकावें। और फिर शीशीके स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे रसको निकालकर उसमें उसका दसवां भाग शुद्ध बछ-

नागका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटकर रक्खें।

इसे १ रत्तीकी मात्रानुसार अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे सन्निपात ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(४४४५) प्रतिज्ञावाचको रसः

(र. प्र. सु. । अध्याय ८)

शुद्धं सूतं भागमेकं तु तालाद्
द्वौ भागौ चेद्वेदसङ्ख्या शिलायाः।
ताम्रस्यैवं भागयुग्मं प्रकुर्या-
द्भल्लातं वै वेदभागं तथैव ॥
अर्कक्षीरैर्भावयेच्च त्रिवारं
कृत्वा चूर्णं कारयेद्गोलकं तत्।
स्थालीमध्ये स्थापितं तच्च गोलं
दत्त्वा मुद्रां भस्मना सैन्धवेन ॥
धूमस्यैवं रोधनं च प्रकुर्या-
च्छाणैर्दद्यात् स्वेदनं मन्दवह्नौ।
पश्चात्तोयेनैव भाव्यं च चूर्णं
गोलं कृत्वा मन्दवह्नौ विपाच्य ॥
पश्चादेनं भक्षयेद्वै रसेन्द्रं
वल्लं चैकं शर्कराचूर्णमिश्रम्।
तद्वत्कृष्णामाक्षिकेणैव जूर्तिं
हन्यादेतत्सर्वदोषोत्थितां वै ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध हरताल २ भाग, शुद्ध मनसिल ४ भाग, ताम्रभस्म २ भाग और शुद्ध भिलावा ४ भाग लेकर भिलावेको कूटकर उसमें अन्य औषधियोंको एकत्र घोटकर मिला दें। फिर उसे आकके दूधकी ३ भावना देकर उसका एक गोला बनावें और उसे कपड़मिट्टीकी हुई एक मज़बूत हाण्डीमें रखकर उसके ऊपर एक प्याला ढक दें और जोड़को अच्छी तरह बन्द करके हाण्डीमें मुंहतक अरने उपलोंकी राख दाब दाब कर भर दें और उसके ऊपर थोड़ासा बारीक पिसा हुवा सेंधा नमक डालकर दबा दें। तदनन्तर इस हाण्डीको चूल्हेपर चढ़ाकर उसके नीचे १ दिन अरने उपलोंकी मन्दाग्नि जलावें। यह ध्यान रखना चाहिये कि हाण्डीमेंसे किसी जगहसे धुवां न निकलने पावे। तत्पश्चात् हाण्डीके स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे औषधको निकालकर पानीके साथ घोटकर गोला बनावें और उसे पहिलेकी भांति ही हाण्डीमें रखकर एक दिन मन्दाग्नि पर पकावें। जब हाण्डी स्वांग शीतल हो जाय तो उसमेंसे रसको निकालकर पीसकर सुरक्षित रक्खें।

इसे ३ रत्तीकी मात्रानुसार खांड अथवा पीपलके चूर्ण और शहदके साथ खिलानेसे सब प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं।

(४४४६) प्रतिमेषरसः

(र. र. स. । अ. २५)

ब्राह्मीपलाशयोः क्वाथे रीतिपत्रं विनिक्षिपेत्।
दिनद्वयं ततस्तानि पुनस्तेनैव घर्षयेत् ॥
लघुभाण्डे समादाय चूर्णं कुष्माण्डवारिणा।
महत्त्रिवारं कुर्वीत पुटं ककुभवारिणा ॥
मर्दयित्वा पुटं दद्यादजामूत्रेण भावयेत्।
ततोऽप्येकं पुटं दत्त्वा तिस्रस्त्रिकटुभावना ॥
अमर्यजाविडङ्गाऽग्निगोजलैरथ भावितः।
प्रतिमेषः सुसंसिद्धो रसो वल्मीकमृद्रसैः ॥
वल्लत्रयमितो देयो वल्मीके तस्य मृत्स्न्या।
वल्मीकं संविलिप्यैतत्कृमिसङ्घप्रशान्तये ॥

शुद्ध पीतलके कण्टकवेधी पत्रोंको ब्राह्मी और पलाशके क्वाथमें २ दिन तक डाले रहें और फिर उसीमें घोटकर गजपुटमें फूंकें । जब तक भस्म न हो जाय इसी प्रकार पुट देते रहें । तदनन्तर उसे पीसकर पेठेके रसमें घोटकर ३ पुट दें; फिर १-१ पुट अर्जुनके क्वाथ और बकरीके मूत्रमें घोटकर दें । फिर उसे ३ भावना त्रिकुटेके क्वाथकी और १-१ भावना दूब, अजा (ओषधि विशेष), वायविडंग, चीता और गोमूत्रकी देकर चूर्ण करके रक्खें ।

इसे ९ रत्तीकी मात्रानुसार दीमककी मिट्टीके पानीके साथ खिलाने और उसी मिट्टीका लेप करनेसे कृमियुक्त वल्मीकरोग नष्ट हो जाता है ।

(व्यवहारिक मात्रा २-३ रत्ती ।)

(४४४७) प्रतिश्यायहरो रसः

(रसेन्द्रसं. । प्रतिश्याये)

सुलभासमगन्धकसूतवरं
गिरिकर्णिरसे कृतमर्दनकम् ।
चपलारसशुण्ठिरसैस्त्रिदिनं
मृदितं घ्राणघ्राणरुजार्तिहरम् ॥

१-१ भाग शुद्ध पारे और गन्धककी कज्जली में १ भाग तुलसीका चूर्ण मिलाकर उसे कोयलके रस और पीपल तथा सेंठके क्वाथमें ३-३ दिन घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे प्रवृद्ध नासारोग भी नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा-३ रत्ती ।)

(४४४८) प्रदरान्तकलोहम्

(र. सा. सं.; र. रा. सु. । प्रदर.)

लौहं ताम्रं हरितालं वंगमभ्रं वराटिका ।
त्रिकटु त्रिफला चित्रं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ॥
चविका पिप्पली शङ्ख वचा हवुषपाकलम् ।
शटी पाठा देवदारु एला च वृद्धदारकम् ॥
एतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु ।
शर्करामधुसंयुक्तां घृतेन भक्षयेत्पुनः ॥
रक्तं श्वेतं तथा पीतं नीलं प्रदरं दुस्तरम् ।
कुक्षिशूलं कटिशूलं योनिशूलञ्च सर्वजम् ॥
मन्दाग्निमरुचिं पाण्डुं कृच्छ्रश्वासञ्च कासनुत् ।
आयुःपुष्टिकरं बल्यं बलवर्णप्रसादनम् ॥

लोहभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध हरताल, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, कौड़ीभस्म, सेंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीतामूल, वायविडंग, पांचों नमक, चव, पीपल, शंख भस्म, बच, हाऊबेर, कूठ, कचूर, पाठा, देवदार, इलायची और विधारा; सब चीजें समान-भाग लेकर एकत्र घोटकर (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें शकर, शहद और घीके साथ मिलाकर सेवन करनेसे लाल, सफेद, पीला और काला दुस्साध्य प्रदर तथा कुक्षिशूल, कटिशूल, सर्वदोषज योनिशूल, मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, श्वास और खांसीका नाश होता तथा आयु, पुष्टि और बलवर्णकी वृद्धि होती है ।

(४४४९) प्रदरान्तको रसः

(भै. र.; र. चं.; र. सा. सं.; र. र.; ध.; र. रा. सु. । प्रदरा.; रसें. चि. म. । अ. ९)

शुद्धसूतं तथा गन्धं शुद्धवङ्गकरूप्यकम् ।
खर्परञ्च वराटञ्च शाणमानं पृथक् पृथक् ॥

तोलकत्रितयं चैव लौहचूर्णं क्षिपेत्सुधीः ।
कन्यानीरेण सम्मर्द्य दिनमेकं भिषग्वरः ॥
असाध्यं प्रदरं हन्ति भक्षणान्नात्र संशयः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, वंगभस्म, चांदी भस्म, खपरियाभस्म और कौड़ीभस्म ५-५ माशे तथा लोहभस्म ३॥। तोले लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको १ दिन ग्वारपाठा (घीकुमार) के रसमें घोटकर (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे असाध्य प्रदर भी निस्सन्देह नष्ट हो जाता है।

(४४५०) **प्रदरारिरसः** (प्रदररिपु).

(र. चं.; वैद्य र.; यो. र. । प्रदर.; वृ. यो. त. । त. १३५; वृ. नि. र. । स्त्रीरो.)

रसं गन्धं सीसं मृतमिति समं तैस्तु रसजं ।
समानं सर्वैः स्यात्तुलितमपि लोध्रं वृषरसैः ॥
दिनं पिष्टं नाम्ना प्रदररिपुरेषोऽपहरति ।
द्विवल्लः क्षौद्रेण प्रदरमतिदुःसाध्यमपि च ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और सीसाभस्म १-१ भाग तथा रसौत ३ भाग और लोधका महीन चूर्ण ६ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन बासा (अडूसा) के रसमें घोटकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनालें।

इन्हें शहदके साथ सेवन करने से दुःसाध्य प्रदर भी नष्ट हो जाता है।

(४४५१) **प्रदरारिलोहम्**

(भै. र.; धन्व. । स्त्रीरो.)

वत्सकस्य तुलां सम्यग्जलद्रोणे विपाचयेत् ।
अष्टभागावशिष्टन्तु कषायमवतारयेत् ॥
वस्त्रपूते घनीभूते द्रव्याणीमानि दापयेत् ।
समङ्गां शाल्मलं पाठां बिल्वं मुस्तञ्च धातकीम्।
अरुणां व्योमकं लौहं प्रत्येकन्तु पलंपलम् ।
माषद्वयं प्रयुञ्जीत कुशमूलपयो ह्यनु ॥
श्वेतं रक्तं तथा नीलं पीतं प्रदरं दुस्तरम् ।
कुक्षिशूलं कटिशूलं देहशूलञ्च सर्वगम् ॥
प्रदरारिरयं लौहो हन्ति रोगान् सुदुस्तरान् ।
आयुःपुष्टिकरश्चैव बलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥

६। सेर कुड़ेकी छालको ३२ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छानकर उसे पुनः पकाकर गाढ़ा करें और फिर उसमें मजीठ, मोचरस, पाठा, बेलगिरी, नागरमोथा, धाय-केफूल और अतीसका चूर्ण तथा अभ्रकभस्म और लोहभस्म ५-५ तोले मिलाकर २-२ माशेकी गोलियां बनालें।

इन्हें कुशके काथके साथ सेवन करनेसे श्वेत लाल काला और पीला दुस्साध्य प्रदर, कुक्षिशूल, कटिशूल और शरीरकी पीड़ाका नाश होता तथा आयु, बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है।

प्रदीपनरसः

(र. सा. सं.)

" राजवल्लभरस " देखिये

(४४५२) **प्रभाकरवटी**

(भै. र. । हृद्रोगा.)

माक्षिकं लौहमभ्रञ्च तुगाक्षीरी शिलाजतु ।
क्षिप्त्वा खल्लोदरे पश्चाद् भावयेत् पार्थवारिणा॥

गुञ्जाद्वयमितां कुर्याद् वटीं छायाविशोषिताम् ।
प्रभाकरवटी सेयं हृद्रोगान् निखिलान् जयेत् ॥

स्वर्णमाक्षिक भस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, बंसलोचन और शिलाजीत समान भाग लेकर सबको एक दिन अर्जुनकी छाल के रसमें घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियां बना कर छायामें सुखालें।

इसके सेवनसे हृद्रोग नष्ट होते हैं।

(४४५३) **प्रभावतीगुटिका**

(र. चि. म. । स्तब. ९)

यवचूर्णमतिश्लक्ष्णं वज्रीदुग्धेन संयुतम् ।
शुद्धजैपालसञ्चूर्णं त्रिभागमरिचान्वितम् ॥
विमर्द्य गुटिकाः कार्याष्टङ्कमात्राश्च शोषिताः ।
एकैव दीयते सार्क शुभ्रखण्डेन रेचने ॥
निहन्ति सोदरानष्टौ गुल्मप्लीहादिकान्गदान् ।
अचिरेणैव वेगेन नरं सारयते ध्रुवम् ॥
पातयेदामदोषश्च पित्तरोगं भिनत्त्यसौ ।
पाषाणमपि दुर्भेद्यं भिनत्त्येष प्रभावती ॥

बारीक जौका आटा, थूहरका दूध और शुद्ध जमालगोटा १–१ भाग तथा कालीमिर्चका चूर्ण ३ भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर १–१ टङ्क की गोलियां बनावें।

(व्यवहारिक मात्रा—३ रत्ती ।)

इनमेंसे १ गोली मिश्रीके साथ देनेसे शीघ्र ही वेगपूर्वक विरेचन होकर आम निकल जाती हैं और उदररोग, गुल्म, प्लीहा तथा पित्त रोगोंका नाश हो जाता है। यह गोलियां पत्थरके समान कठिन मलको भी तोड़कर निकाल देती हैं।

(४४५४) **प्रभावतीगुटिका** (वृकोदरीवटी)

(र. चं.; र. रा. सु.; र. र. स. । वातरो.)

सूतगंधकतीक्ष्णाभ्रैः सताप्यैः समभागिकैः ।
रसांशमपरं सर्वं षट्कोलं जीरकद्वयम् ॥
सौवर्चलं च सिन्धूत्थं विडङ्गं च हरीतकी ।
अम्लवेतसकं सर्वं बीजपूराम्लमर्दितम् ॥
गुटिकास्तेन कल्केन कार्याः कोलास्थिमात्रिकाः
योगिन्या बहुघातिनामयुतया त्रैलोक्यविख्या-तया ॥
निर्दिष्टा हि वृकोदरीति गुटिका सोष्णाम्बुना सेविताः ।
निःशेषानिलदोषरोगजरुजः श्लेष्मामरोगोद्भवम् ॥
मन्दाग्निं ग्रहणीं चतुर्विधमहाजीर्णं च तूर्णं जयेत् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, तीक्ष्णलोहभस्म, अभ्रकभस्म और सोनामक्खीभस्म तथा पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, कालीमिर्च, दानों जीरे, सञ्चल (काला नमक), सेंधा नमक, बायबिड़ंग, हर्र और अम्लवेतका चूर्ण समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको बिजौरेके रसमें घोटकर बेर के बराबर गोलियां बनाकर सुखालें।

इन्हें गरम पानीके साथ सेवन करनेसे समस्त वातजरोग, कफजरोग, आमविकार, मन्दाग्नि, ग्रहणी और अजीर्णका नाश होता है।

(४४५५) **प्रमदानन्दो रसः** (१)

(आ. वे. वि. । जरायु. अ. ७९)

अयो रौप्यं तथा हेम रसं गन्धं शिलाजतु ।
वह्निद्रवेण सम्मर्द्य रक्तिमाना वटीश्चरेत् ॥

नाम्नासौ प्रमदानन्दो रसो ह्याशु विनाशयेत् ।
त्रिफलातोययोगेन सर्व्वाञ्जरायुजान् गदान् ॥
जरायुरोगिणी नारी न च सेवेत पूरुषम् ।
न खादेदुग्रवीर्य्याणि नापि कुर्य्यादतिश्रमम् ॥

लोहभस्म, चांदीभस्म, स्वर्णभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और शिलाजीत समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको चीतेके काथमें घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें त्रिफलाके काथके साथ देनेसे स्त्रियोंके समस्त जरायुरोग नष्ट हो जाते हैं ।

जरायु रोगसे पीड़ित स्त्रीको पुरुषसमागम, उग्रवीर्य पदार्थ और अति परिश्रमसे बचना चाहिये ।

(४४५६) प्रमदानन्दो रसः (२)

(वृ. यो. त. । त. १४७)

कणाजातिजं हिङ्गुलं टङ्कणं च
वराटं विषं हेमबीजं च विश्वम् ।
भृशं मर्दयेन्निम्बुनीरेण यामं
तथा धूर्ततोयेन भृङ्गीरसेन ॥
अद्रभे च मेहे विकारे ग्रहण्यां
कफे वातशूले सतौ खण्डमेहे ।
प्रशस्तः सितासेवितः शुक्रकारी
रसः सर्वदाऽऽनन्दनामा प्रसिद्धः ॥
चपलानवयौवनभिन्नमदा
प्रमदाशतदर्पहरः सहसा ।
कथितो भृगुणा मुनिना शतशो
ऽनुमितो रसिके रसराजपरः ॥

पीपल, जायफल, शुद्ध हिंगुल (शंगरफ), सुहागेकी खील, कौड़ीभस्म, शुद्ध बछनाग, शुद्ध धतूरेके बीज और सोंठका महीन चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलाकर १-१ पहर नीबू, धतूरा और भंगरेके रसमें घोटकर सुखाकर चूर्ण करके रक्खें ।

इसे मिश्रीके साथ सेवन करनेसे भयङ्कर प्रमेह, ग्रहणी, कफ, वातशूल और मधुमेहका नाश होता तथा वीर्य और कामशक्तिकी वृद्धि होती है ।

(४४५७) प्रमदेभाङ्कुशरसः

(वृ. यो. त. । त. १४७)

विशुद्धो रसो मासमुन्मत्ततैले
दशाहानि तैले तथोपर्बुधेषु ।
विपाच्योऽहर्निशं तच्च तैलं
पलं जीर्यते तत्समो गन्धनामा ॥
कृतां कज्जलिं तां विनिक्षिप्य कूप्यां
मृदुस्वर्णपत्राणि सूताष्टमांशात् ।
ततो भस्मसादर्कयामं विधाय
स्वशीतं समादाय सिन्दूरकल्पम् ॥
त्र्यहं खाखसत्वक्कषायैर्विमर्द्य
त्र्यहं वैजयौर्जातिसारैर्दिनैकम् ।
तथा कोकिलाक्षस्य घस्रं कषायै-
र्विदार्याथ भूमौ क्षिपेद्गोलकं तम् ॥
मृदा द्व्यङ्गुलोन्मानयाच्छाद्य पश्चा-
दरण्योपलद्वन्द्ववन्हिं विधाय ।
सुशीतं मृदुस्वेदमात्तं रसेन्द्रं
गृहीत्वा ततो भागमानं वदामः ॥

रसाभ्रयोमवैक्रान्तजातीप्रसूनं
लवङ्गं द्विभागं त्रिभागं भुजङ्गम् ।
सितं कान्तभस्म विषं केसराख्यं
त्रिजातं तथा बङ्गभस्म समस्तम् ॥
अहेःफेनतापीजयोरर्धभागं
विमर्द्याथ यामं मरुद्भूप्रसूनैः ।
विदारीवरावासकैर्नागवल्ली
बलाशाल्मलीमर्कटीमूलजातैः ॥
पयोभिश्च गोधाङ्घ्रिरम्भासमुत्थैः
शताह्वासहादीप्यमुण्डीसमुत्थैः ।
महापत्रिकायष्टिहस्तिद्रवैश्च
विभाव्यं त्रिवारं ततो गोलमस्य ॥
दिनं स्वेदयेत्खाखसत्वक्कषाये-
र्निबध्याम्बरे दोलिकायन्त्रमध्ये ।
अकूपारशोषस्य तैलेन भाव्यो
द्विवारं तथा स्वर्णबीजस्य तैलैः ॥
तथा वैजयैर्जातिसारस्य तैलै-
र्द्विवारं विभाव्योऽथ गोलं निबध्य ।
ततो मृत्पटैस्त्रिर्धराधारयन्त्रे-
पचेत्पूर्ववत्स्वाङ्गशीतं ततस्त्रिः ॥
उशीरेण भाव्यः सुगन्धेन तद्व-
त्तथाजोङ्गकेनाथ कस्तूरिकाद्भिः ।
विभाव्य शिवद्विट्कुचाद्भिः शिफाली-
द्रवैः शातपत्रोद्भवैः सिद्ध एषः ॥
तमेनं स्वतुर्यांशकर्पूरयुक्तं
निषेवेत बल्लद्वयं वाऽस्य मात्रा ।
लवङ्गं सितापुष्पसारोऽनुपानं
हितं क्षीरपानं विवर्ज्योऽम्लवर्गः ॥

पठित्वा च पञ्चाक्षरं मन्त्रराजं
कुमारीश्च यन्त्राणि च पूजयित्वा ।
निषेवेत पूर्वोक्तरीत्या रसेन्द्रं
निषेवेदसौ कामिनीसङ्गमं च ॥
त्रिदोषघ्न एषोऽबलागर्वहारी
वशीकार्यकारी महास्तम्भकारी ।
सदा पुंध्वजोत्थानकारी नराणां
तथा पातकारी न चार्वाक् च कारी ॥
यद्येकरात्रादपि नूत्नयोषा-
सङ्गाच्च्युतं वीर्यबलाद्विरिच्यते ।
तथाऽपि तुल्यो द्रवकालयुक्ते-
स्तेजोबलं नैव जहाति किञ्चित् ॥
रसमेनं सेवयित्वा न सेवेत स्त्रियं यदि ।
निर्गच्छेन्नेत्रयोर्वीर्यं नेत्रनाशस्तदा भवेत् ॥
नाङ्गं शैथिल्यभावं व्रजति न च कटि-
स्त्रुट्यते तस्य कान्ति-
र्हेमाभा जायतेऽष्टादशविधमतुलं
नाशमेति प्रमेहम् ।
नष्टं वीर्यं प्रपन्नं प्रभवति यदि पुमान्
सेवते रम्यकान्तां,
षण्ढो वा वाजितुल्यो जनयति च महा
वाजितुल्यांश्च पुत्रान् ॥
एनं रसं च प्रमदा निषेवेत्
कुमारितुल्याऽऽप्तवयाऽपि सा स्यात्
एतद्रसास्वादनतः पुमान्स्तां
युवाऽपि यातुं न समर्थ एव ॥
गर्भाशयगतान्दोषान्हन्ति वातकफोद्भवान् ।
प्रमदेभाङ्कुशो नाम रसराजः सुसिद्धिदः ॥

शुद्ध पारेको १ मास तक रातदिन निरन्तर धतूरेके तैलमें और १० दिन लाल चीतेके तैलमें पकावें। अग्नि इतनी होनी चाहिये कि जिससे १ दिन रातमें ५ तोले तेल जल जाय। तत्पश्चात् उस शुद्ध पारे में उसका आठवां भाग सोनेके वर्क मिलाकर इतना घोटें कि वर्क पारेमें मिल जायं। फिर उसमें पारेके बराबर गन्धक मिलाकर कज्जली बनावें और उसे आतशी शीशीमें डालकर मकरध्वज बनानेकी विधिके अनुसार १२ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। एवं बालुके बिल्कुल शीतल हो जाने पर उसमें से शीशीको निकालकर उसे सावधानी पूर्वक तोड़कर उसमें से सिन्दूरके समान लाल रंगके रसको निकाल लें।

इसे पीसकर ३ दिन पोस्तके डोढेके काथमें, ३ दिन भांगके बीजोंके तेलमें और १ दिन जायफलके तेलमें एवं १-१ दिन ताल मखाने और बिदारी कन्दके रसमें घोटकर गोला बनावें और उसे अरण्ड आदिके पत्तों में लपेटकर भूमिमें गढ़ा खोदकर उसमें रख दें तथा गोलेपर २ अंगुल मिट्टी चढ़ा दें। और फिर उस पर २ अरने उपले रखकर उनमें आग लगा दें।

तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर उसे निकाल कर पीस लें और उसमें अभ्रकभस्म, वैक्रान्तभस्म, जावित्री और लौंग २-२ भाग, सीसाभस्म ३ भाग, चांदीभस्म, कान्तलोहभस्म, शुद्ध बछनाग, केसर, दालचीनी, इलायची, तेजपात, बंगभस्म, अफीम और स्वर्णमाक्षिक भस्म आधा आधा भाग मिलाकर सबको १ पहर शंखपुष्पीके रसमें और ३-३ दिन विदारीकन्द, त्रिफला, बासा, पान, बला (खरैटी), सैंभलकी मूसली, कौंचकी जड़, गोदुग्ध, लज्जालु, केलेकी जड़, सौंफ, घृतकुमारी, अजमोद, गोरखमुण्डी, नागबला, मुलैठी और हाथीके मदमें घोटकर गोला बनावें। और उसे कपड़ेमें बांधकर दोलायन्त्र विधिसे १ दिन पोस्तके डोढेके काथमें पकावें। तदनन्तर उसे २-२ दिन समुद्रशोषके तेल, धतूरेके बीजोंके तैल, गांजेके बीजोंके तैल और जायफलके तैलमें घोटकर गोला बनावें और उसपर तीन कपर मिट्टी करके पहिलेकी भांति ही गढ़ेमें रखकर २ उपलोंकी अग्निमें स्वेदित करें। और फिर स्वांग शीतल होने पर निकालकर उसे खस, त्रिसुगन्ध, (दालचीनी, इलायची, तेजपात), अगर, कस्तूरी, केतकी, हारसिंहार और कमलके स्वरस या काथमें ३-३ दिन घोटकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें से ६ रत्ती औषधमें १॥ रत्ती कपूर और १॥ रत्ती लौंगका चूर्ण मिलाकर मिश्री और शहदके साथ खाकर ऊपरसे दूध पीना चाहिये।

इसके सेवन कालमें दूध अधिक पीना और अम्ल पदार्थोंसे परहेज करना चाहिये।

यह रस त्रिदोष नाशक, कामिनी मदभञ्जक, वशीकरण, अत्यन्त स्तम्भक, नपुंसकता नाशक और वाजीकरण है।

इसे सेवन करने वाले पुरुष, स्त्रीसमागम करने पर भी बलहीन नहीं होते।

इसे सेवन करनेवाला पुरुष यदि स्त्रीसमागम नहीं करता तो उसके नेत्र बिगड़ जाते हैं।

इसे सेवन करनेसे न तो कभी अङ्गों में शिथिलता आती है और न कमर टूटती है। तथा शरीरकी कान्ति स्वर्णके समान दीप्तिमान हो जाती है। इसके अतिरिक्त यह रस समस्त प्रमेहोंको भी नष्ट करता है।

यदि इसे नपुंसक मनुष्य भी सेवन करे तो वह भी अत्यन्त बलशाली सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ हो जाता है।

यदि इसे वृद्धा स्त्री सेवन करे तो वह भी युवतीके समान हो जाती है।

इसके अतिरिक्त यह रस गर्भाशयके वातज और कफज रोगोंको भी नष्ट करता है।

(४४५८) प्रमेहकुठारो रसः

(यो. त. । त. ५१; र. रा. सु. । प्रमेह.; वृ. यो. त. । त. १०३)

चन्द्रकलावटी सं. १८८६ देखिये ।

(४४५९) प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः

(र. चं. । प्रमेहा.)

रसगन्धायसाभ्राणि नागवङ्गौ सुवर्णकम् ।
वज्रकं मौक्तिकं सर्वमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥
शतावरीरसेनैव गोलकं शुष्कमातपे ।
बुद्ध्वा शुष्कं समुद्धृत्य शरावे सुदृढे क्षिपेत् ॥
सन्धिलेपं मृदा कुर्याद्गर्ते च गोमयाग्निना ।
पुटेद्यामचतुःसङ्ख्यमुद्धृत्य स्वांगशीतलम् ॥
श्लक्ष्णं खल्वे विनिक्षिप्य गोलं तं मर्दयेद् दृढम् ।
देवब्राह्मणपूजाश्च कृत्वा धृत्वाऽथ कूपिके ॥
खादेद्वल्लद्वयं प्रातः शीतं चानु पिबेज्जलम् ।
अष्टादशप्रमेहांश्च जयेन्मासोपयोगतः ॥
तुष्टिं तेजो बलं वर्णं शुक्रवृद्धिमनुत्तमाम् ।
अग्नेर्बलं वितनुते मेहकुञ्जरकेसरी ॥
दिव्यं रसायनं श्रेष्ठं नात्र कार्या विचारणा ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, नाग (सीसा) भस्म, बंगभस्म, स्वर्णभस्म, हीराभस्म और मोतीभस्म समानभाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको एक दिन शतावरके रसमें घोटकर गोला बना लें और उसे सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करें एवं गढ़ेमें रखकर अरने उपलोंकी आगमें पकावें । उपले इतने डालने चाहियें कि अग्नि ४ पहर में शान्त हो जाय। तत्पश्चात् सम्पुटके स्वांग शीतल हो जाने पर उसमेंसे गोलेको निकाल कर खूब खरल करके शीशीमें भर लें।

इसमें से नित्य प्रति ६ रत्ती दवा शीतल जलके साथ १ मास तक सेवन करनेसे १८ प्रकारके प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

यह रस उत्साह, तेज, बल, वर्ण, शुक्र और अग्निकी वृद्धि करता है । तथा एक श्रेष्ठ रसायन है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ रत्ती ।)

(४४६०) प्रमेहकुलान्तको रसः

(मेहकुलान्तकः)

(र. र.; र. का. धे. । प्रमेहा.)

सूतं वङ्गं मृतं तुल्यं मृताभ्रं सूतकात्त्रिधा ।
लशुनं सर्वतुल्यांशं सर्वमेकत्र पेषयेत् ॥

बदराभां वटीं कुर्यात् प्रमेहस्य कुलान्तकः ।
लशुनं छागमूत्रेण वसामेही पिबेदनु ॥

पारदभस्म और बंगभस्म १-१ भाग तथा अभ्रकभस्म ३ भाग और ल्हसन ५ भाग लेकर प्रथम ल्हसनको पीसकर महीन लुगदी बनावें और फिर उसमें भस्में मिलाकर सबको अच्छी तरह घोटकर जंगली बेरके बराबर गोलियां बना लें ।

इनमेंसे नित्यप्रति १ गोली खाकर ऊपरसे बकरीके मूत्रमें ल्हसन पीसकर पीनेसे वसामेह नष्ट होता है ।

(४४६१) **प्रमेहकुलान्तको रसः** (२)

(मेहकुलान्तकः)

(भै. र.; धन्व. । प्रमेह.)

मृतं वङ्गं मृतश्चाभ्रं शुद्धपारदगन्धकम् ।
भूनिम्बं पिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत् ॥
रसाञ्जनं विडङ्गाब्दबिल्वगोक्षुरदाडिमम् ।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं शुद्धमश्मजतोः पलम् ॥
गोपालकर्कटीमूलस्वरसैर्वटिकां कुरु ।
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥
अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राघातमरोचकम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं छागीदुग्धं पयोऽथवा ॥
धात्रीफलस्य निर्यासं क्वाथं कौलत्थजं पिबेत् ॥

बंगभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, चिरायता, पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, निसोत, रसौत, बायबिडंग, नागरमोथा, बेलगिरी, गोखरु और अनारकी छाल १।-१। तोला तथा शुद्ध शिलाजीत ५ तोले लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन गोपालकर्कटी (जंगली ककड़ी) के रसमें घोटकर (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें बकरीके दूध, पानी या आमलेके स्वरस अथवा कुलथीके क्वाथके साथ सेवन करनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, अश्मरी, कामला, पाण्डु, मूत्राघात और अरुचिका नाश होता है ।

(४४६२) **प्रमेहकेतूरसः** (प्रमेहसेतुः)

(र. चि. । अ. ९; र. चं; र. सा. सं; । र. का. धे.; र. रा. सु. । प्रमेह.)

मृताभ्रं च वटक्षीरैर्मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ।
विशोष्य पक्वं मूषायां सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥
विशेषान्मेहरोगेषु त्रिफलामधुसंयुतम् ।
युञ्जीत वल्लमेकं तु रसेन्द्रस्यास्य वैद्यराट् ॥

पारदभस्म और अभ्रकभस्म बराबर बराबर लेकर दोनोंको २ पहर बड़के दूधमें घोटकर गोला बनावें और उसे मूषामें बन्द करके भूधरयन्त्रमें पकावें ।

इसे ३ रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करनेसे समस्त रोग और विशेषतः प्रमेह नष्ट होता है ।

इसे खानेके बाद त्रिफलाका चूर्ण शहदमें मिलाकरचाटना चाहिये ।

प्रमेहकेतुरसः

' हरिशङ्कररस ' देखिये ।

प्रमेहगजकेसरी रसः

(र. सा. स.; र. च.; र. रा. सु.; र. चि. । प्रमेह.)

मेहकेसरीरस देखिये ।

प्रमेहगजसिंहो रसः

(र. र. । प्रमेह.)

" मेहद्विरदसिंहरस " देखिये ।

(४४६३) **प्रमेहगजसिंहो रसः**

(र. र. स. । अ. १७; र. रा. सु. । प्रमेह.)

चाण्डालीराक्षसीपुष्परसमध्वाज्यटङ्कणम् ।
रसं समांशोपरसं समं हेम्ना विमर्दितम् ॥
समांशं पूतिलोहं वा मूषायां विपचेत्क्रमात् ।
प्रमेहगजसिंहोयं रसः क्षौद्रैर्द्विमाषकम् ॥

शिवलिंगी और चोरकके फूलोंका रस, घी, शहद, सुहागा, शुद्ध पारा, और उपरस[1] समान भाग तथा सोनाभस्म या नाग अथवा वङ्गभस्म इन सबके बराबर लेकर सबको खरल करके एक गोला बनावें और उसे शराव सम्पुटमें बन्द करके १ दिन भूधरयन्त्रमें पकावें ।

इसमेंसे २ माशे दवा शहदके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा—१ रत्ती ।)

(४४६४) **प्रमेहबद्धरसः** (प्रमेहवज्ररसः)

(शा. ध. । म. ख. अ. १२; र. र. स.; र. म.; र. का.; र. प्र. सु.; वृ. नि. र.; र. रा. सु. । प्रमेहा.; वृ. यो. त. । त. १०३)

भस्मसूतं मृतं कान्तं मुण्डभस्म शिलाजतु ।
शुद्धं ताप्यं शिला व्योषं त्रिफलाङ्कोलबीजकम् ॥
कपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत् ।
विंशद्वारं विशोष्याथ मधुयुक्तं लिहेत्सदा ॥
निष्कमात्रं हरेन्मेहान्मेहबद्धरसो महान् ।
महानिम्बस्य बीजानि पिष्ट्वा षट्सम्मितानि च ॥
पलतन्दुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च ।
एकीकृत्य पिबेच्चानु हन्ति मेहं चिरन्तनम् ॥

पारदभस्म, कान्तलोहभस्म, मुण्डलोहभस्म, शिलाजीत, सोनामक्खीभस्म, शुद्ध मनसिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, अङ्कोलके बीज कैथ और हल्दी समान-भाग लेकर प्रथम कूटने योग्य ओषधियोंको कूटकर चूर्ण बना लें फिर सब को एकत्र मिलाकर भंगरेके रसकी २० भावना देकर ४–४ माशेकी गोलियां बना लें।

इसे शहदके साथ खाकर ऊपरसे बकायनके ६ बीजोंको ५ तोले चावलोंके पानीके साथ पीस-कर उसमें ८ माशे घी मिलाकर पीनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ माशा)

नोट—र. र. स.; र. चि.; र. म. और धन्वन्तरिमें इसे '**प्रमेहवज्र**' नामसे लिखा है। वृ. यो. त. में इसीको '**मेघनादरस**' नाम दिया गया है । वृ. यो. त. में मुण्डलोहकी जगह तीक्ष्ण लोह तथा गन्धक अधिक लिखा है ।

रसमञ्जरीमें मुण्डभस्मकी जगह ताम्रभस्म लिखी है। रसेन्द्रसारसंग्रह आदि कई ग्रन्थोंमें अङ्कोलकेबीजोंके स्थानमें बेल और जीरा लिखा है।

(४४६५) **प्रमेहसिन्धुतारकरसः**

(र. का. धे. । अ. २९)

रसो निष्काष्टादशको गन्धकस्य च विंशतिः ।
तालसत्वाच्च दशधौ तद्वत्सोमलस्य च ॥

[1] उपरस—गन्धक, सोनागेरु, कसीस, फटकी, हरताल, मनसिल, सुरमा, मुर्दासिंग ।

वङ्गस्य षट् षट्रसकाच्छीसकादथ चाभ्रकात् ।
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य पुटेद्गजपुटेन च ॥
त्रिरष्टौ द्वादश तथा द्वात्रिंशत्प्रहरं पुनः ।
वह्निस्त्रिधाऽर्कक्षीरेण भावयित्वा पुनः पुनः ॥
एवं पुटैस्त्रिभिः सिद्धः कपोतग्रीवसन्निभः ।
मेहरोगहरोऽयं स्याद्रसो मेहाब्धितारकः ॥

शुद्ध पारा १८ निष्क, शुद्ध गन्धक २० निष्क, हरताल सत्व तथा शुद्ध सोमल १२-१२ निष्क तथा बंगभस्म, खपरियाभस्म, सीसाभस्म, और अभ्रकभस्म ६-६ निष्क लेकर सबको एकत्र घोटकर १ दिन आकके दूधमें खरल करके छोटी छोटी टिकिया बना लें और उन्हें सुखाकर शराव-सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें ३ पहरकी अग्नि दें अर्थात् गढ़ेमें इस अन्दाज़से उपले डालें कि ३ पहरमें अग्नि शान्त हो जाय। तदनन्तर पुटके स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे औषधको निकालकर पुनः आकके दूधमें घोटें और पहिलेकी भांति ही गजपुटमें ८ पहर आंच दें। एवं इसी प्रकार आक के दूधमें घोटकर तीसरी पुट १२ पहरकी और चौथी पुट ३२ पहरकी लगावें। इसके पश्चात् उसे पुनः आकके दूधमें घोट घोटकर तीन पुट और दें। इस प्रकार कुल सात पुट लगानेसे रस तैयार हो जायगा। उसका रंग कबूतरकी गर्दनके समान होगा।

इसके सेवनसे समस्त प्रमेह नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१ रत्ती।)

प्रमेहसेतुरसः

'प्रमेहकेतूरस' तथा 'हरिशङ्कररस' देखिये।

(४४६६) प्रमेहहरो रसः

(र. का. धे. । अधि. २९)

रससौम्यशिला ताम्रं मर्दयेद्वेदयामकम् ।
कुमार्या च कदल्या च छिकाकूष्माण्डजै रसैः ॥
तद्रसैरेव संस्वेद्य मर्दयेद्रजनीद्रवैः ।
पुटेद्गजपुटेऽश्वत्थपलाशोदुम्बरेन्धनैः ॥
चिञ्चाक्षारान्तरेऽयं तु रसो मेहहरो भवेत् ॥

पारदभस्म, चांदीभस्म, शुद्ध मनसिल और ताम्रभस्म बराबर बराबर लेकर सबको चार पहर तक ग्वारपाठाके रसमें घोटकर १ दिन उसीके रसमें दोलायन्त्र विधिसे पकावें तत्पश्चात् उसे इसी प्रकार केलेकी जड़, नकछिकनी और पेठेके स्वरसमें पृथक् पृथक् ४-४ पहर घोटकर इन्हींके रसोंमें ४-४ पहर स्वेदित करें और अन्तमें हल्दीके रस में घोटकर यथाविधि शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पलाश, पीपल, या गूलरकी लकड़ियोंकी आगमें फूंक दें। औषधको सम्पुटमें बन्द करते समय ऊपर नीचे इमलीका क्षार रखना चाहिये।

इसके सेवनसे प्रमेह नष्ट होता है।

(मात्रा—१ रत्ती।)

(४४६७) प्रमेहाङ्कुशरसः

(र. प्र. सु. । अ. ८; र. चं. । प्रमेह.)

हेमबीजविषवङ्गसूतकं
बलिवसाऽप्यथ चाभ्रभस्मकम् ।
नागवल्लिजरसेन मर्दितं
कामदं सकलमेहजित्तथा ॥

शुद्ध धतूरेके बीज, शुद्ध बच्छनाग, बंगभस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और अभ्रकभस्म समान-

भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन पानके रसमें घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे प्रमेह नष्ट होता है ।

(मात्रा—१-२ रत्ती ।)

सूचना

जिन रसोंके नाम 'प्रमेह' शब्दसे प्रारम्भ होते हैं उनमेंसे जो रस यहां न मिलें उन्हें मकारादि रस प्रकरणमें देखना चाहिये वहां वे 'मेह' शब्दसे आरम्भ होने वाले रसोंमें मिलेंगे ।

(४४६८) **प्रवालपञ्चामृतरसः**

(वृ. नि. र.; र. चं.; यो. र. । गुल्म.)

प्रवालमुक्ताफलशङ्खशुक्ति-
कपर्दिकानां च समांशभागम् ।
प्रवालमत्र द्विगुणं प्रयोज्यं
सर्वैः समांशं रविदुग्धमेव ॥
एकीकृतं तत्खलु भाण्डमध्ये
क्षिप्त्वा मुखे बन्धनमत्र योज्यम् ।
पुटं च दद्यादतिशीतले च
उद्धृत्य तद्भस्म क्षिपेत्करण्डे ॥
नित्यं द्विवारं प्रतिपाकयुक्तं
वल्लप्रमाणं हि नरेण सेव्यम् ।
आनाहगुल्मोदरप्लीहकास
श्वासाग्निमांद्यान्कफमारुतोत्थान् ॥
अजीर्णमुद्गारहृदामयघ्नं
ग्रहण्यतीसारविकारनाशनम् ॥
मेहामयं मूत्ररोगं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽश्मरीम् ।
नाशयेन्नात्र सन्देहो सत्यं गुरुवचो यथा ॥
पथ्याश्रितं भोजनमादरेण
समाचरेन्निर्मलचित्तवृत्त्या ।
प्रवालपञ्चामृतनामधेयो
योगोत्तमः सर्वगदापहारी ॥

प्रवाल (मूंगा) भस्म २ भाग, मोतीभस्म, शंखभस्म, शुक्ति (मोतीकी सीप) भस्म और कौड़ी भस्म १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर उसमें सबके बराबर आकका दूध डालकर एक दिन घोटें और फिर उसे यथाविधि शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें एवं सम्पुटके स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे भस्मको निकालकर पीसकर सुरक्षित रक्खें ।

इसमेंसे नित्य प्रति ३ रत्ती भस्म प्रातः सायं खिलानेसे आनाह, उदररोग, गुल्म, प्लीहा, खांसी, श्वास, अग्निमांद्य, कफ और वातजरोग, अजीर्ण, डकारें आना, हृद्रोग, ग्रहणीविकार, अतिसार, प्रमेह, मूत्रदोष, मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी आदि अनेक रोगोंका नाश होता है ।

(४४६९) **प्रवालप्रयोगः** (१)

(भा. प्र. । हिक्का.)

प्रवालशङ्खत्रिफलाचूर्णं मधुघृतप्लुतम् ।
पिप्पलीगैरिकश्चेति लेहो हिक्कानिवारणः ॥

प्रवालभस्म, शंखभस्म, हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपल और गेरुका चूर्ण समान-भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर रक्खें ।

इसे घी और शहदके साथ मिलाकर चाटनेसे हिचकी नष्ट होती है ।

(४४७०) **प्रवालप्रयोगः** (२)

(सु. सं. । उत्त. त. अ. ४४ पाण्डु चि.)

प्रवालमुक्ताञ्जनशङ्खचूर्ण
लिह्यात्तथाकाञ्चनगैरिकोत्थम् ॥

प्रवाल (मूंगा), मोती, सुरमा, शंख और गेरु का चूर्ण समान भाग लेकर सबको गुलाबजल आदिमें पीसकर पिष्टी बनावें ।

इसके सेवनसे पाण्डु नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ माशा)

(४४७१) **प्रवालप्रयोगः** (३)

(च. सं. । चि. अ. २६ त्रिमर्मीय.)

पिबेत्तथा तण्डुलधावनेन
प्रवालचूर्णं कफमूत्रकृच्छ्रे ।

प्रवाल (मूंगे) के चूर्णको चावलोंके पानी के साथ सेवन करनेसे कफज मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ माशा)

(४४७२) **प्रवालमारणम्** (१)

(र. सा. सं. । पूर्वखण्ड)

स्त्रीदुग्धेन प्रवालश्च भावयित्वा तु हण्डिके ।
मध्येऽपि तक्रसहितं स्थापयेत्तां निरोधयेत् ॥
चुल्ल्यामग्निप्रतापेन म्रियते प्रहरद्वये ॥

मूंगेको स्त्रीके दूधमें घोटकर एक हाण्डीमें थोड़ासा तक्र डालकर उसमें रक्खें और उसका मुख बन्द करके उसे चूल्हे पर चढ़ाकर उसके नीचे २ पहर तक अग्नि जलावें तो मूंगेकी भस्म बन जायगी ।

(४४७३) **प्रवालमारणम्** (२)

(र. रा. सु. । पूर्वखण्ड)

मौक्तिकस्य विधिप्रोक्तः
प्रवालेऽपि तथा विधिः ।

मुक्ताभस्मकी विधिसे ही प्रवाल की भी भस्म बनती है ।

('मुक्ताभस्म विधि' मकारादि रसप्रकरणमें देखिये ।)

(४४७४) **प्रवाललक्षणगुणाः**

(आ. वे. प्र. । अ. १३; र. र. स.; र. चं.)

पक्वबिम्बीफलच्छायं वृत्तायतमवक्रकम् ।
स्निग्धमव्रणकं स्थूलं प्रवालं सप्तधा शुभम् ॥
पाण्डुरं धूसरं सूक्ष्मं सव्रणं कण्डरान्वितम् ।
निर्भारं शुभ्रवर्णञ्च प्रवालं नेष्यते सप्तधा ॥
प्रवालं मधुरं साम्लं कफपित्तादिदोषनुत् ।
वीर्यकान्तिकरं स्त्रीणां धृते मङ्गलदायकम् ॥
क्षयपित्तास्रकासघ्नं दीपनं पाचनं लघु ।
विषभूतादिशमनं विद्रुमं नेत्ररोगहृत् ॥

जिस मूंगेका रंग पकी कन्दूरीके समान चमकदार लाल हो, जो आकारमें गोल बड़ा और अवक्र (सीधा) तथा स्थूल हो एवं स्पर्श में चिकना हो और जिसमें व्रण न हों वह उत्तम होता है ।

जो मूंगा हल्का पीला, धुंधला या सफेद हो, जो बारीक और वजनमें हल्का हो तथा जिसमें छिद्र और रेखाएं हों वह मूंगा अच्छा नहीं माना जाता ।

मूंगा मधुर, किञ्चिदम्ल, कफपित्तनाशक,

वीर्य और कान्ति वर्द्धक, यदि स्त्रियां धारण करें तो उनके लिये मंगलकारी तथा क्षय, रक्तपित्त, खांसी, विष, भूतविकार और नेत्ररोगनाशक एवं दीपन और पाचन है।

प्रवालशोधनम्

(मुक्ताशोधन देखिये ।)

प्राणत्राणरसः

(र. र. । राजयक्ष्मा.)

('प्राणनाथरस' सं. ४४७६ देखिये ।)

(४४७५) प्राणदापर्पटी

(वृ. यो. त. । त. ७६; वृ. नि. र.; यो. र.; र. चं. । क्षय.)

सूताभ्रायोहिवङ्गोषणविषमखिलां-
शेन गन्धेन लौहां
कोलाग्नौ विद्रुतेन क्षणमथ मिलितं
ढालितं गोमयस्थे ।
रम्भापत्रेऽमुनाऽन्येन च दृढपिहितं
प्राणदा पर्पटीस्या-
त्पाण्डौ रेके ग्रहण्यां ज्वरारुचिकसने
यक्ष्ममेहाग्निमान्द्ये ॥
प्राणदा पर्पटी सैषा भाषिता शम्भुना स्वयम् ।
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगविनाशिनी ॥

शुद्ध पारद, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, सीसाभस्म, बंगभस्म तथा काली मिर्च और शुद्ध बछनाग का चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक ७ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको अच्छी तरह खरल करें। तदनन्तर एक लोहेकी कढ़ाईमें जरासा घी लगाकर उसमें इस कज्जलीको डालकर बेरीके कोयलोंकी मन्दाग्नि पर पिघलावें और फिर भूमि पर गायका गोबर फैलाकर उसपर केलेका पत्ता बिछावें एवं उसके ऊपर वह पिघली हुई कज्जली फैलाकर उसपर दूसरा पत्ता ढककर शीघ्रता पूर्वक गोबरसे दबा दें। थोड़ी देर बाद जब वह बिल्कुल शीतल हो जाय तो दोनों पत्तों के बीचमें से पर्पटीको निकाल लें।

इसके सेवनसे पाण्डु, अतिसार, ग्रहणी, ज्वर, खांसी, यक्ष्मा, प्रमेह और अग्निमांद्यका नाश होता है। इसके अतिरिक्त उचित अनुपान के साथ देनेसे यह अन्य समस्त रोगोंको भी नष्ट करती है।

(साधारण मात्रा—३ रत्ती । विशेष सेवन विधि 'पञ्चामृत पर्पटी' में देखिये ।)

(४४७६) प्राणनाथरसः[1] (१)

(प्राणत्राणरसः)

(वृ. नि. र. । क्षय.; र. र.; र. का. घे. । क्षय.)

लोहभस्म पलैकन्तु द्विपलं भृङ्गजद्रवम् ।
वराभार्ङ्गीभवं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत् ॥
पलैकं त्रैफले क्वाथे सर्वं भर्ज्यं च खर्परे ।
लोहांशं माक्षिकं शुद्धं मर्द्यं पूर्वोदितैर्द्रवैः ॥
रुद्ध्वा त्रिभिः पुटैः पाच्यं द्रवैर्मर्द्यं पुनः पुनः ।
मृतं सूतं मृतं वङ्गं निष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥

१—रसरत्नाकर में इसे "प्राणत्राण" नाम दिया गया है। उसमें "वराभार्ङ्गी... नियोजयेत्" यह श्लोकार्ध नहीं है तथा बंग की जगह नाग लिखा है।

द्वौ निष्कौ शुद्धगन्धस्य चतुर्निष्का वराटिका ।
एकी कृत्य पुटे पाच्यं पूर्वलोहविमिश्रितम् ॥
पूर्वोक्तैस्तु द्रवैर्मर्द्य पुटेनैकेन पाचयेत् ।
चूर्णयेन्मरिचं सप्त तुत्थटङ्कणयोर्दश ॥
मेलयेच्च पृथङ् निष्कं प्राणनाथाह्वयो रसः ।
भक्षयेन्निष्कपादार्द्धमसाध्यराजयक्ष्मनुत् ॥
शोफोदरार्शोग्रहणीज्वरगुल्महरं तथा ॥

५ तोले त्रिफलेका क्वाथ एक मिट्टीके शरावे में डालकर उसमें ५ तोले लोहभस्म डालकर मन्दाग्निपर सेकें । जब समस्त रस शुष्क हो जाय तो लोहभस्मको खरलमें डालकर उसमें ५ तोले शुद्ध सोनामक्खीका चूर्ण मिला कर सबको १० तोले भंगरेके रस और ५-५ तोले त्रिफले और भरंगीके रसमें घोटें । तदनन्तर उसका एक गोला बनाकर उसे शराव-सम्पुटमें बन्द करके गजपुट में फूंकें । इसी प्रकार उसे उक्त तीनों रसों में घोट घोट कर तीन पुट दें । तत्पश्चात् उसमें ५-५ माशे पारे और बंग की भस्म तथा १० माशे शुद्ध गन्धक और २० माशे कौड़ीभस्म मिला कर पूर्वोक्त तीनों रसों में घोटकर गजपुट में फूंक दें । जब पुट स्वांग शीतल हो जाय तो उसमें से औषधको निकाल कर उसमें ३५ माशे काली मिर्चका चूर्ण तथा ५० माशे तुत्थभस्म और इतना ही सुहागा मिलाकर अच्छी तरह घोट-कर रक्खें ।

इसके सेवनसे दुस्साध्य राजयक्ष्मा, शोथ, उदररोग, अर्श, ग्रहणी, ज्वर और गुल्मका नाश होता है ।

मात्रा—आधा माशा ।

(४४७७) प्राणनाथरसः (२)

(र. र. स. । उ. खं. अ. १४; र. चि. म. । स्तबक ११)

अयोरजो विंशतिनिष्कमानं
विभावितं भृङ्गरसाढकेन ।
धत्तूरभार्ङ्गी त्रिफलारसार्धै
तुल्यांशताप्यं विपचेत्पुटेषु ॥
सूतस्य निष्कं समभागतुत्थं
गन्धोपलौ द्वौ चतुरो वराटान् ।
पक्त्वा पुटाग्नौ समलोहचूर्णा-
त्पचेत्तथा पूर्वरसैर्विमिश्रान् ॥
चूर्णेऽस्मिन् मरिचाः सप्ततुत्थटङ्कणयोर्दश ।
संसृजेत्तत्पृथङ्निष्कान्प्राणनाथाह्वयोदितः ॥
अर्धपादो रसाद्भक्ष्यो केवलाद्राजयक्ष्मिभिः ।
शोफोदरार्शोग्रहणीज्वरगुल्माद्युपद्रुतैः ॥

१००-१०० माशे शुद्ध लोह और सोना-मक्खीके चूर्णको ८ सेर भंगरे के रसमें थोड़ा थोड़ा रस डालते हुवे घोटें । तत्पश्चात् उसकी टिकिया बनाकर सुखाकर, शरावसम्पुटमें बन्द करके यथाविधि गजपुटमें फूंकें । इसी प्रकार उसे क्रमशः धतूरा, भारंगी और त्रिफलाके ४-४ सेर रसमें घोट कर एक एक पुट दें ।

तत्पश्चात् उसमें ५ माशे शुद्ध पारा, ५ माशे शुद्ध तूतिया, १० माशे शुद्ध गन्धक और २० माशे कौड़ीका चूर्ण मिलाकर सबको उपरोक्त रसोंमें खरल करके गजपुटमें फूंकें । और फिर उसमें ३५ माशे काली मिर्चका चूर्ण तथा ५०-५० माशे सुहागेकी खील और तुत्थभस्म मिलाकर घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे ४ रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करनेसे राजयक्ष्मा, शोष, उदररोग, अर्श, ग्रहणी, ज्वर और गुल्मादिका नाश होता है।

(४४७८) प्राणवल्लभो रसः [1]

(र. चं. । गलगं.; रसें. सा. सं. । प्लीह.; रसें. चि. म. । अ. ९; र. चं. । गुल्मा.; रसें. सा. सं. । गुल्मा.; भै. र. । गुल्मा.)

लौहं ताम्रं वराटं च तुत्थं हिङ्गु फलत्रिकम्।
स्नुहीमूलं यवक्षारं जैपालं टङ्कणं त्रिवृत्॥
प्रत्येकं च पलं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषितम्।
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुनाऽपि वा॥
प्राणवल्लभनामायं गहनानन्दभाषितः।
दोषं रोगं च संवीक्ष्य युक्त्या वा त्रुटिवर्द्धनम्॥
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदार्बुदम्।
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम्॥
अपचीं वातरक्तं च कण्डुविस्फोटकुष्ठकम्।
नातः परतरः श्रेष्ठः कामलार्तिभयेष्वपि॥

लोहभस्म, ताम्रभस्म, कौड़ीभस्म, तुत्थभस्म, भुनी हुई हींग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सेंड (थूहर) की जड़, जवाखार, शुद्ध जमालगोटा, सुहागेकी खील और निसोत ५-५ तोले लेकर कूटने योग्य चीज़ोंको कूटकर चूर्ण बनावें और फिर सबको एकत्र मिलाकर १ दिन बकरीके दूधमें घोटकर ४-४ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें पानी या शहदके साथ सेवन करनेसे कामला, पाण्डु, आनाह, श्लीपद, अर्बुद (रसौली), गलगण्ड, गण्डमाला, व्रण, हलीमक, अपची (गण्डमालाभेद), वातरक्त, खुजली, विस्फोटक और कुष्ठका नाश होता है।

कामला रोगके लिये इससे अच्छी अन्य एक भी औषध नहीं है।

इसकी मात्रामें रोगीके बलाबल का विचार करके न्यूनाधिकता भी कर सकते हैं।

(४४७९) प्राणिकल्पद्रुमगोलरसः

(आ. वे. प्र. । अ. १)

सूतं गन्धं कान्तपाषाणमिश्रं
ब्राह्मीबीजैर्मर्दयेदेकघस्रम्।
गोलं कृत्वा टङ्कणेन प्रवेष्ट्य
पश्चान्मृत्स्नागोमयाभ्याम् धमेत्तम्॥
शुष्के यन्त्रे सत्त्वपातप्रधाने
किट्टे सूतो बद्धतामेति नूनम्।
बद्धं पश्चात्क्षारकाचप्रयोगा-
द्धेम्ना तुल्यं सूतमावर्तयेत्तु॥
वक्त्रे खोटः स्थापितो वत्सरार्धं
रोगान् सर्वान् हन्ति सौख्यं करोति।
यद्वा दुग्धे गोलकं पाचयित्वा
दद्याद्दुग्धं पिप्लीभिः क्षये तत्॥
लौहे पात्रे पाचयित्वा तु देयं
शुष्के पाण्डौ कामले पित्तरोगे।
वाते गोलं व्योषवातारितैले
पक्त्वा तैलं गन्धयुक्तं ददीत॥
भार्गीमुण्डीकासमर्दाटरूष
द्रावैर्गोलं पाचयेच्छ्लेष्मनुत्त्यै।

[1] रसेन्द्रसारसंग्रह, रसचण्डांशु तथा रसराजसुन्दर में यह रस पाण्डुरोगाधिकार में भी लिखा है। उसमें हिंगुलसे निकला हुवा पारा, गन्धक और केसर अधिक हैं।

कासे श्वासे तं च दद्यात्कषायं
माध्वीकार्क्तं पिप्पलीचूर्णयुक्तम् ॥
यस्मिन् रोगे यः कषायोऽस्ति चोक्त-
स्तस्मिन् गोलं पाचयित्वा कषाये ।
दद्यात्तत्तद्रोगनाशाय पथ्यं
तत्तद्रोगे कीर्तितं यत्तदेव ॥
उक्तो गोलः माणिकल्पद्रुमोऽयं
पूजां कृत्वा योजयेद्भक्तियोगात् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, कान्तपाषाण और पलाशके बीज समान भाग लेकर सबको एक दिन अच्छी तरह घोटकर पानीकी सहायतासे गोला बनावें और उस पर सुहागेका लेप करके सुखा लें। तत्पश्चात् उसपर मिट्टी और गोबर का लेप करके उसे सुखा कर सत्वपातन यन्त्रमें धमावें। इससे पारा अवश्य बद्ध हो जायगा। तदनन्तर उसे काचलवण और सुहागे के साथ पिघलाकर उसमें उसके बराबर स्वर्ण पत्र मिलाकर गोली बना लें।

इस गोलीको ६ मास तक मुंहमें रखनेसे समस्त रोग नष्ट होकर सौख्यकी वृद्धि होती है।

इसे दूधमें डालकर उसे गर्म करके उसमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे क्षयरोग नष्ट होता है।

लोहे के पात्रमें दूध डालकर उसमें यह गोली डालकर पकावें, इस दूधके पीनेसे शोषयुक्त पाण्डु, कामला और पित्तरोगोंका नाश होता है। अरण्डीके तेलमें त्रिकुटेका चूर्ण और यह गोली डालकर थोड़ी देर तक पकावें। इस तेलमें गन्धक मिलाकर पिलानेसे वातव्याधि नष्ट होती है।

इस गोलीको भरंगी, गोरखमुण्डी, कसौंदी और अडूसे (बासे) के रसमें पकाकर पिलानेसे कफजरोग नष्ट होते हैं।

खांसी और श्वास में उपरोक्त भारंगी इत्यादि औषधोंके क्वाथमें यह गोली डालकर थोड़ी देर पकाकर उसमें माध्वीक सुरा और पीपलका चूर्ण मिलाकर पीना चाहिये।

इसे जिस रोगमें देना हो उसीको नष्ट करने वाले किसी कषायके साथ पकाकर पिलाना और तद्रोगोचित पथ्य पालन करना चाहिये।

प्राणेश्वररसः (१) (सिद्धाख्यः)
(र. सा. सं.; र. चं.; भै. र.; र. का.; र. रा. सुं। ज्वरातिसा.)

'सिद्धप्राणेश्वररस' देखिये।

(४४८०) **प्राणेश्वररसः** (२) (लघुः)
(र. का. धे. । ज्वर.)

त्रिक्षारं ग्रन्थिकं त्र्यूषद्विजीरकयवानिकाः ।
तेजोवती धूर्तबीजलवङ्गाऽर्ककराऽनलम् ॥
रसगन्धौ विषं शिग्रु निर्गुण्ड्यार्द्रकधूर्तजैः ।
विधाय भावना गुञ्जाढ्यं द्विगुणशर्करम् ॥
सद्योजलाऽनुपानेन रसः शीतज्वरापहः ।
लघुः प्राणेश्वरः सोऽयं रसो युक्तो ज्वरे मतः ॥

सुहागा, जवाखार, सज्जीखार, पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, दोनों जीरे, अजवायन, तेजबल, धतूरेके बीज, लौंग, अकरकरा, चीता, पारा, गन्धक, बछनाग और सहंजने की छाल एक एक भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण

मिलाकर सबको संभालें, अद्रक और धतूरेके रसकी १—१ भावना देकर २—२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनमें से १—१ गोली ४ रत्ती शक्करमें मिलाकर ताजे पानीके साथ देनेसे शीतज्वर नष्ट होता है।

(४४८१) प्राणेश्वरो रसः (३)

(सर्वाङ्गसुन्दररसः)

(र. र. स. । उ. अ. १८)

शुद्धमभ्रं रसं गन्धं मेलयित्वा समांशकम् ।
तालमूलीरसैर्मर्द्य कल्कं सम्पादयेच्छुभम् ॥
तत्कल्कं कूपिकामध्ये कृत्वा वक्त्रं निरुन्धयेत् ।
खटिन्या मुखमाच्छाद्य मृदा खर्परसंज्ञया ॥
कूपिकां लेपयेत्सर्वां शोषयेदातपे खरे ।
कूपिकां भूमिगर्तायां कृत्वा तां पुटयेत्ततः ॥
कूपिकां मर्दयेत्कृत्स्नां खटिन्या सह संयुताम् ।
त्रिभिः क्षारैस्तु तच्चूर्णं पञ्चभिर्लवणैस्तथा ॥
त्र्यूषणं त्रिफला हिङ्गु पुरमिन्द्रयवास्तथा ।
गुञ्जाकिनी तथा चित्रमजमोदा यवानिका ॥
एतानि समभागानि समादाय विचूर्णयेत् ।
योजयेत्सह सूतेन ततः सिद्ध्यति सूतकः ॥
सिद्धसूतस्य पर्णेन माषं सर्वरुजापहम् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥
उष्णोदकानुपानं तु पाययेच्चुलुकद्वयम् ।
भक्षयेदेकवारं तु द्विवारं न कथं च न ॥
दिनमध्ये वारमेकं दातव्यो भिषजा रसः ।
शीतोदकं सकृद्देयं तृड्भावेप्यहर्निशम् ॥
भोजने वर्जयेत्तत्र शाकाम्लं द्विदलं तथा ।
तैलाभ्यङ्गं ब्रह्मचर्यं वर्जयेच्छयनं दिवा ॥
हितं तत्सेवयेत्पथ्यमहितं च विवर्जयेत् ।
अनेनैव प्रकारेण योजयेत्प्रतिवासरम् ॥
यस्त्वचेतनतां याति सन्निपाती कथं च न ।
तस्य नातिप्रयोक्तव्यो रसो यत्नाद्भिषग्वरैः ॥
देवाग्निऋषिविप्रांश्च कुमारीयोगिनीगणान् ।
पूजयित्वा यथा शक्त्या सेव्यः प्राणेश्वरो रसः ॥
गुल्मं चाष्टविधं वातं शूलं च परिणामजम् ।
सन्निपातज्वरं चैव प्लीहानमपकर्षति ॥
कामलां पाण्डुरोगं च मन्दाग्निं ग्रहणीं तथा ।
शिववत्सेविता हन्ति रसः प्राणेश्वरस्त्वयम् ॥

शुद्ध पारद और गन्धक तथा अभ्रकभस्म १-१ भाग लेकर तीनोंको तालमूलीके रसमें घोटकर कल्क बनावें और उसे कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर उसके मुखमें खिड़ियाका डाट लगाकर उस पर भी कपड़मिट्टी करके सुखा दें। इसके पश्चात् उस शीशीको गढ़ेमें रखकर भूधरपुटमें पकावें और फिर स्वांग शीतल होनेपर उसमें से औषधको निकालकर पीस लें तथा सुहागा, सज्जीखार, जवाखार, पांचों नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, भुनीहुई हींग, गूगल, इन्द्रजौ, भांग, चीता, अजमोद और अजवायनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलावें और उपरोक्त रसमें उसके बराबर यह चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें से १ माशा औषध पानमें रखकर खानेसे समस्त रोग नष्ट होते हैं।

इसे प्रातःकाल खाकर ऊपरसे दो एक चुल्लु

उष्ण जल पीना चाहिये। इसे दिन भरमें केवल एक बार ही खिलाना चाहिये, दो बार भूलकर भी न देना चाहिये। यदि प्यास न लगे तो भी २४ घण्टेमें एक बार शीतल जल पिलाना चाहिये।

इसके सेवनकालमें शाक, खटाई और दाल न खानी चाहिये; दिनमें सोने से भी बचना चाहिये। शरीरपर तैलकी मालिश करनी और ब्रह्मचर्यव्रतका पालन करना चाहिये।

इसके सेवनसे आठ प्रकारके गुल्म, वायु, परिणाम शूल सन्निपात ज्वर, प्लीहा, कामला, पाण्डु, मन्दाग्नि और ग्रहणीरोगका नाश होता है।

यदि सन्निपातका रोगी अचेत हो तो उसे यह रस अधिक सेवन न कराना चाहिये।

नोट—र. र. समुच्चय के बारहवें अध्यायमें तथा र. का. धे.; र. रा. सु. ज्वराधिकारमें जो प्राणेश्वर रसका योग दिया है वह भी लगभग इसके समान ही है। उसमें पारदादि तीनों औषधोंको बाराहीकन्द के रसमें घोटकर बालुकायन्त्रमें पकानेको लिखा है तथा भांगका अभाव है और जीरेकी जगह अजमोद है एवं सुहागा इत्यादि प्रत्येक औषध पारेकी बराबर लिखी है। र. का. धे. और र. रा. सु. वाले प्रयोगमें अभ्रक के स्थानमें ताम्रभस्म है। तथा बाराहीकन्द और मूसली की भावना अधिक लिखी है। एवं सुहागा आदि सब मिलाकर कूपीपक रसके बराबर लिखे हैं।

(४४८२) **प्राणेश्वरोरसः** (४)

(भै. र.; र. रा. सुं; रसे. सा. सं.; । र. का. धे. । ज्वरा.; रस. मं. । अ. ६)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मृताभ्रं विषसंयुतम्।
समं तन्मर्दयेत्तालमूलीनीरैस्त्र्यहं बुधः॥
पूरयेत्कूपिकान्ते च मुद्रयित्वा च शोषयेत्।
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वेष्टयित्वा च शोषयेत्॥
पुटेत् कुण्डप्रमाणेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
गृहीत्वा कूपिकामध्यान्मर्दयेच्च दिनं ततः॥
अजाजी जीरकं हिङ्गु सर्जिका टङ्कणं जगत्।
गुग्गुलुः पञ्चलवणं यवक्षारो यमानिका॥
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकं रसमानतः।
एषां कषायेण पुनर्भावयेत् सप्तधातपे॥
नागवल्लीदलयुतं द्विगुञ्जं च रसेश्वरम्।
दद्यात्प्रवज्वरे तीव्रे सोष्णं वारि पिबेदनु॥
प्राणेश्वरो रसो नाम सन्निपातप्रकोपनुत्।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मशूले त्रिदोषजे॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात् कुर्याच्चन्दनलेपनम्।
तापोद्रेकस्य शमनं बलाधिष्ठान कारकम्॥
भवेच्च नात्र सन्देहः स्वास्थ्यञ्च लभते नरः॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म और शुद्ध बछनाग समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अभ्रक तथा बछनागका चूर्ण मिलाकर सबको ३ दिन तालमूली के रसमें घोटकर सुखाकर सात कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर दें और उसकी डाट बन्द करके उसपर भी कपड़मिट्टी करके सुखा दें। इसे गढ़ेमें रखकर पुट लगादें और उसके स्वांग शीतल होनेपर शीशीमेंसे औषधको निकालकर एकदिन निरन्तर खरल करें। तत्पश्चात् सफेद और काला जीरा, हींग, सज्जी, सुहागा, फिटकरी, गूगल, पांचो नमक, जवाखार, अजवायन, काली मिर्च और पीपल में से प्रत्येक औषध पारेके बराबर लेकर सबको एकत्र पकाकर क्वाथ बनावें और उस क्वाथसे

उपरोक्त तैयार रसको धूपमें सात भावना देकर सुखाकर पीस लें।

इसे २ रत्तीकी मात्रानुसार पानमें रखकर खाना चाहिये। और नवीन तीव्र ज्वरमें देना हो तो ऊपरसे उष्ण जल भी पिलाना चाहिये।

इसके सेवनसे सन्निपातका प्रकोप, शीत ज्वर, दाहपूर्व ज्वर, गुल्म, त्रिदोषज शूल और ज्वरका प्रचण्ड ताप शान्त होता है।

इस रसके ऊपर रोगीकी इच्छानुसार भोजन देना चाहिये। तथा उसके शरीरपर चन्दनादिका लेप करना चाहिये।

(४४८३) **प्राणेश्वरो रसः** (४)

(भै. र.। ज्वराति.; र. चं.; रसें. सा. सं.। ज्वरा.)

रसगन्धकमभ्रश्च टङ्कणं शतपुष्पकम्।
यमानी जीरकाख्यश्च प्रत्येकं कर्षयुग्मकम्॥
कर्षमेकं यवक्षारं हिङ्गु पटुकपञ्चकम्।
विडङ्गेन्द्रयवं सर्जरसकं चाग्निसम्मितम्॥
घृष्ट्वा च वटिका कार्या नाम्ना प्राणेश्वरो रसः॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, सुहागेकी खील, सौंफ, अजवायन और जीरा २–२ कर्ष तथा जवाखार, हींग, पांचों नमक, बायबिडंग, इन्द्रजौ, राल और चीता १–१ कर्ष लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर पानीके साथ घोटकर (१–१ माशेकी) गोलियां बना लें।

(इनके सेवनसे ज्वरातिसार नष्ट होता है।)

(४४८४) **प्लीहशार्दूलो रसः**

(भै. र.; र. रा. सुं.; रसें. सा. सं.। प्लीहा.; रसें. चिं. म.। अ. ९)

सूतकं गन्धकं व्योषं समभागं पृथक् पृथक्।
एभिः समं ताम्रभस्म योजयेद्वैद्यसत्तमः॥
मनःशिला वराटश्च तुत्थं रामठलौहकम्।
जयन्ती रोहितश्चैव क्षारटङ्कणसैन्धवम्॥
विडं चित्रं कानकश्च रसतुल्यं पृथक् पृथक्।
भावयेत्त्रिदिनं यावत् त्रिवृच्चित्रकणार्द्रकैः॥
गुञ्जामात्रां वटीं खादेत्सद्यः प्लीहविनाशिनीम्।
मधुपिप्पलिसंयुक्तां द्विगुञ्जां वा प्रयोजयेत्॥
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृद्गुल्मंसुदुस्तरम्।
आमाशयेषु सर्वेषु चोदरे शोथविद्रधौ॥
अग्निमांद्ये ज्वरे चैव प्लीह्नि सर्वज्वरेषु च।
श्रीमद्गहननाथेन भाषितः प्लीहशार्दूलः॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सोंठ, मिर्च और पीपल १–१ भाग, ताम्रभस्म ५ भाग तथा मनसिल, कौड़ीभस्म, तुत्थभस्म, भुनी हुई हींग, लोह भस्म, जयन्ती, रुहेड़ेकी छाल, यवक्षार, सुहागेकी खील, सेंधानमक, बिडनमक, चीतामूल और धतूरेके बीज १–१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको ३–३ दिन निसोत, चीता और पीपलके काथ तथा अद्रकके रसमें घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे २–२ गोली पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे प्लीहा, अग्रमांस, यकृत् दुस्साध्य गुल्म, आमाशय रोग, उदररोग, शोथ, विद्रधि, अग्निमांद्य और ज्वरका नाश होता है।

(४४८५) प्लीहान्तको रसः

(भै. र. । प्लीह.)

मृतं शुल्वञ्च तारञ्च गगनायसमौक्तिकाः ।
दरदं पुष्करं सूतं गन्धकं नवमं तथा ॥
गुग्गुलुस्त्रिकटू रास्ना तथा जैपालबीजकम् ।
त्रिफला कटुका दन्ती देवदाली तु सैन्धवम् ॥
त्रिवृता तु यवक्षारं वातारितैलमर्दितम् ।
अष्टोदराणि पाण्डुत्वमानाहं विषमज्वरम् ॥
अजीर्णमामञ्च कफं क्षयञ्च सर्वशूलकम् ।
कासं श्वासञ्च शोथञ्च सर्वमाशु व्यपोहति ॥
प्लीहान्तको रसो नाम प्लीहोदरविनाशनः ॥

ताम्रभस्म, चांदीभस्म, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, मोतीभस्म, शुद्ध हिंगुल, पोखरमूल, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध गूगल, सोंठ, मिर्च, पीपल, रास्ना, शुद्ध जमालगोटा, हर्र, बहेड़ा, आमला, कुटकी, दन्तीमूल, बिंडालडोढा, सेंधानमक, निसोत और जवाखार समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें जमालगोटा तथा गूगल डालकर थोड़ा थोड़ा अण्डीका तेल डालते हुवे अच्छी तरह घोटें। जब गूगल कज्जलीमें मिल जाय तो अन्य समस्त चीज़ोंका महीन चूर्ण मिलाकर आवश्यकतानुसार अण्डीका तेल डालकर घोटकर (६—६ रत्तीकी) गोलियां बनालें।

ये गोलियां आठ प्रकारके उदर रोग, पाण्डु, आनाह, विषमज्वर, अजीर्ण, आम, कफ, क्षय, सब प्रकारके शूल, खांसी, स्वास, शोथ और विशेषतः तिल्लीका नाश करती हैं।

(४४८६) प्लीहारिरसः (१)

(भै. र.; र. सा. सं.; र. रा. सु. । प्लीहा.)

कर्षैकं तालचूर्णस्य तत्पादांशं सुवर्णकम् ।
पलार्द्धं मृतताम्रञ्च तत्समं शुद्धमभ्रकम् ॥
मृगाजिनस्य भस्मापि कर्षमत्र प्रदापयेत् ।
लिम्पाकाङ्घ्रित्वचस्तद्वत्सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
गुञ्जाद्वयं प्रमाणेन वटिकां कारयेत्ततः ।
मधुना वह्निचूर्णेन खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥
असाध्यमपि प्लीहानं हन्त्यवश्यं न संशयः ।
यकृतं पाण्डुरोगञ्च गुल्मादिकभगन्दरान् ॥

शुद्ध हरताल १ कर्ष (१। तोला), स्वर्णभस्म चौथाई कर्ष (३।।। माशे), ताम्रभस्म २।। तोले, अभ्रकभस्म २।। तोले, मृगचर्मकी भस्म १। तोला और बिजौरेनीबूकी जड़की छालका चूर्ण १। तोला लेकर सबको एकत्र मिलाकर पानीके साथ घोटकर २—२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें चित्रकमूलकी छालके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे असाध्य प्लीहा भी अवश्य नष्ट हो जाती है। इसके अतिरिक्त ये यकृत्, पाण्डु, गुल्म और भगन्दर को भी नष्ट करती हैं।

(४४८७) प्लीहारिरसः (२)

(भै. र. । प्लीहा.)

पारदं गन्धकं टङ्कं विषं व्योषं फलत्रयम् ।
तोलकस्य समोपेतं जैपालञ्च तदर्द्धकम् ॥
किंशुकस्य रसेनैव याममात्रन्तु मर्दयेत् ।
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा छायायां शोषयेत्ततः ॥
वटिकैका प्रदातव्या शृङ्गवेररसेन च ।
गुदाङ्कुरे गुल्मशूले प्लीहशोथे कफात्मके ॥

उदावर्ते वातशूले श्वासकासज्वरेषु च ।
रसः प्लीहारि नामायं कोष्ठामय विनाशनः ॥
आमवातगदच्छेदी श्लेष्मामयविनाशनः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला १-१ तोला तथा शुद्ध जमालगोटा सबसे आधा लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ पहर केसूके फूलोंके रसमें घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखालें ।

इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसके साथ देनेसे अर्श, गुल्म, शूल, प्लीहा, कफजशोथ, उदावर्त, वातजशूल, श्वास, खांसी, ज्वर, समस्त उदर विकार और आमवात तथा कफविकार नष्ट होते हैं ।

(४४८८) प्लीहारिरसः (३)

(र. सा. सं. । प्लीह.; रसें. चिं. म. । अ. ९; र. रा. सुं. । प्ली.)

द्विकर्षं लौहभस्मापि कर्षं ताम्रं प्रदापयेत् ।
शुद्धसूतं तथा गन्धं कर्षमानं भिषग्वरः ॥
मृगाजिनं पलं भस्म लिम्पाकाङ्घ्रित्वचः पलम् ।
एवं भागक्रमेणैव कुर्यात्प्लीहारिकां वटीम् ॥
नव गुञ्जामितां खादेन्नाथ नित्यं हि पूतवान् ।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥

लोहभस्म २॥ तोले, ताम्रभस्म १। तोला, शुद्ध पारद और गन्धक १।-१। तोला, मृगचर्मभस्म ५ तोले और बिजौरकी जड़की छालका चूर्ण ५ तोले लेकर प्रथम पारेगन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको पानीके साथ घोटकर ९-९ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे प्लीहा, यकृत्, और गुल्म अवश्य नष्ट हा जाता है ।

(व्यवहारिक मात्रा ४-६ रत्ती)

(४४८९) प्लीहारिवटिका

(भै. र. । प्ली.)

महासाराभ्रकासीसलशुनानि समानि च ।
द्रोणपुष्पीरसेनैव मर्दयेत्प्रहरत्रयम् ॥
वल्लद्वयं प्रदातव्यं प्रदोषे सलिलं ह्यनु ।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममग्निमान्द्यं सशोथकम् ॥
कासं श्वासं तृषां कम्पं दाहं शीतं वमिं भ्रमिम् ।
प्लीहारिवटिका ह्येषा नाशयेन्नात्र संशयः ॥

एलवा, अभ्रकभस्म, कसीस और ल्हसन समान भाग लेकर सबको ३ पहर गूमाके रसमें घोटकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इन्हें सायङ्कालके समय पानीके साथ सेवन करनेसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, अग्निमांद्य, शोथ, खांसी, श्वास, तृषा, कम्प, दाह, शीत, वमन और भ्रमका नाश होता है ।

(४४९०) प्लीहार्णवो रसः

(भै. र.; र. रा. सुं.; र. [illegible] [illegible] प्लीहा.; रसें. चिं. म. । अ. ९.)

हिङ्गुलं गन्धकं टङ्कण[illegible] [illegible] ।
प्रत्येकं पलिकं [illegible] ॥

पिप्पलीमरिचञ्चैव प्रत्येकञ्च पलार्द्धकम् ।
मर्दयित्वा वटीं कुर्यात् वल्लमात्रां प्रयत्नतः ॥
सेव्या शेफालिदलजैर्वटी माक्षिकसंयुता ।
प्लीहानं षट्प्रकारञ्च हन्ति शीघ्रं न संशयः ॥
ज्वरं मन्दानलं चैव कासं श्वासं वमिं भ्रमिम् ।
प्लीहार्णव इति ख्यातो गहनानन्दभाषितः ॥

शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, अभ्रकभस्म और शुद्ध बछनागका चूर्ण ५-५ तोले तथा पीपल और कालीमिर्चका चूर्ण २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र घोटकर अत्यन्त महीन चूर्ण बनावें और उसे पानीमें खरल करके ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें शहदमें मिलाकर हारसिंगार के रसके साथ सेवन करनेसे ६ प्रकारका तिल्ली रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

इसके अतिरिक्त यह गोलियां ज्वर, मन्दाग्नि, खांसी, श्वास वमन और भ्रमको भी नष्ट करती हैं ।

इति पकारादिरसप्रकरणम्

अथ पकारादिमिश्रप्रकरणम् ।

(४४९१) पञ्चकोलसिद्धपेया

(वं. से. । शूल.)

श्लेष्मशूलहरा पेया पञ्चकोलेन साधिता ॥

१। तोला पञ्चकोलको २ सेर पानीमें पकाकर आधा शेष रहने पर छान लें और फिर उस पानीमें चावलोंकी पेया (कणयुक्त मांड) बनावें।

यह पेया कफज शूलका नाश करती है ।

(४४९२) पञ्चगव्यम्

(भै. र. । परिभाषा.)

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं गव्यमाज्यं दधीति च ।
युक्तमेतद्यथायोगं पञ्चगव्यमुदाहृतम् ॥

गोमूत्र, गोबर, गोदुग्ध, गोघृत और गाय का दही । इन पांचोंको **"पञ्चगव्य"** कहते हैं ।

(४४९३) पञ्चमित्रम्

(यो. र. । लोहमारण प्र.)

मधुगुडघृतगुञ्जाटङ्कणं पञ्चमित्रम् ।

शहद, गुड़, घी, चैांटली और सुहागा । इन पांचोंके योगका नाम " **पञ्चमित्र** " है ।

(४४९४) पञ्चमूल्यादिपेया

(वृ. मा. । रक्तपि.)

शालिपर्ण्यादिना सिद्धा पेया पूर्वप्रयोगतः ।
रक्तातिसारहन्ता च योज्यो विधिरशेषतः ॥

शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला और गोखरु समान भाग मिला कर १। तोला लें और २ सेर पानीमें पकाकर १ सेर पानी शेष रक्खें। इस पानीमें चावलोंकी पेया बनाकर पिलानेसे रक्तातिसार और अधोगत रक्तपित्तका नाश होता है।

(पेया बनानेके लिये १ सेर पानी में ५ तोले चावल डालने चाहियें।)

(४४९५) **पञ्चशिरीषोऽगदः**

(च. स. । चि. अ. । २३ विष.; ग. नि. । सर्पविष.)

शिरीषपुष्पपत्रत्वक्फलमूलकृतोऽगदः ।
सिद्धः पञ्चशिरीषोऽयं चरस्थिरविषापहः ॥

सिरसके पुष्प, पत्र, छाल, फल और मूल समान भाग लेकर कूट लें।

यह चर (सर्पादि) और अचर (संखिया, बछनाग आदि) विष को नष्ट करनेके लिये अत्युत्तम अगद है।

(इसे घीमें मिलाकर पिलाना चाहिये।)

(४४९६) **पञ्चसारम्**

(वृ. नि. र.; ग. नि. । ज्वरा.)

सर्पिः क्षौद्रं शृतं क्षीरं पिप्पल्यः सितशर्कराः ।
पिबेत्खजेनोन्मथितं पञ्चसारमिति स्मृतम् ॥
विषमज्वरहृद्रोगकासश्वासक्षयापहम् ॥

घी, शहद, पकाहुवा दूध, पीपलका चूर्ण और सफेद खांड समान भाग लेकर सबको मथनीसे मथकर पीनेसे विषमज्वर, हृद्रोग, खांसी, श्वास और क्षयका नाश होता है।

(४४९७) **पञ्चाम्लम्**

(भै. र. । परिभाषा.)

कोलदाडिमवृक्षाम्लैः साम्लवेतससंगतैः ।
चतुरम्लन्तु पञ्चाम्लं मातुलुङ्गसमायुतम् ॥

बेर, अनार, इमली और अम्लबेतके योगको "चतुराम्ल" कहते हैं। यदि इसमें बिजौरेको भी सम्मिलित कर लिया जाय तो उसका नाम "पञ्चाम्ल" हो जाता है।

(४४९८) **पटोलादिबस्तिः**

(च. सं. । चि. अ. ३)

पटोलारिष्टपत्राणि सोशीरश्चतुरङ्गुलः ।
ह्रीवेरं रोहिणी तिक्ता श्वदंष्ट्रा मदनानि च ॥
स्थिरा बला च तत्सर्वं पयस्यर्द्धोदके शृतम् ।
क्षीरावशेषं निर्यूहं संयुक्तं मधुसर्पिषा ॥
कल्कैर्मदनमुस्तानां पिप्पल्या मधुकस्य च ।
वत्सकस्य च संयुक्तं बस्तिं दद्याज्ज्वरापहम् ॥

पटोल और नीमके पत्ते, खस, अमलतास, सुगन्धबाला, मजीठ, कुटकी, गोखरु, मैनफल, शालपर्णी और खरैटी को आधा भाग जलयुक्त दूधमें पकावें और जब दूध मात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें शहद, घी तथा मैनफल, नागरमोथा, पीपल, मुलैठी और इन्द्रजौका कल्क मिला कर उसकी बस्ति दें। इससे ज्वर नष्ट होता है।

(यह बस्ति विषम ज्वरमें हितकारी है।)

(४४९९) **पथ्यायोगः**

(वै. म. र. । पट. ४)

प्रसेकशमनी पथ्या भुक्तस्योपरि चर्विता ।

भोजनके बाद हर्र चबानेसे प्रसेक (मुंहसे लार बहना) नष्ट होता है ।

(४५००) **पद्मिनीपत्रयोगः**

(वृ. नि. र.; वं. से. । क्षुद्ररो.)

पद्मिनीकोमलं पत्रं यः खादेच्छर्करान्वितम् ।
एतन्निश्चित्य निर्दिष्टं न तस्य गुदनिर्गमः ॥

कमलिनीके कोमल पत्तों को खांड मिलाकर सेवन करनेसे कांच निकलना बन्द हो जाता है ।

पर्पटाद्यरिष्टः

(भै. र.)

पर्पटं तुलामेकां चतुर्द्रोणे जले पचेत् ।
क्वाथे पादावशेषे च शीते पलशतद्वयम् ॥
दद्याद् गुडस्य धातक्याः पलषोडशिका मता ।
गुडूची मुस्तकं दार्वी दारु व्याघ्री दुरालभा ॥
चव्यं चित्रकमूलञ्च त्रिकटु क्रिमिनाशनः ।
सर्वाण्येतानि सञ्चूर्ण्य पलांशेन विनिक्षिपेत् ॥
स्थापयित्वा ततो भाण्डे मासादूर्ध्वं पिबेदमुम् ।
पाण्डुगुल्मोदराष्ठीलाकामलाश्च हलीमकम् ॥
प्लीहानं यकृतं शोथं सर्वञ्च विषमज्वरम् ।
एषोऽरिष्टो निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

६। सेर पित्तपापड़ेको ४ द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें । जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो ठण्डा करके उसमें १२॥ सेर गुड़, १ सेर धायके फूलोंका चूर्ण तथा ५-५ तोले गिलोय, नागरमोथा, दारुहल्दी, देवदारु, कटेली, धमासा, चव, चीतामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल और बायबिडंगका चूर्ण मिलाकर चिकने मटके में भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और १ मास पश्चात् निकालकर छान लें ।

यह आसव पाण्डु, गुल्म, उदर, अष्ठीला, कामला, हलीमक, प्लीहा, यकृत्, शोथ और विषम ज्वरको नष्ट करता है ।

(यह प्रयोग आसवारिष्ट प्रकरणमें आनेसे छूट गया था इस लिये यहां दिया गया है ।)

(४५०१) **पलाशवृन्तयोगः**

(ग. नि. । नेत्ररो.)

पलाशवृन्तमाहृत्य दध्ना कांस्ये निधापयेत् ।
आश्च्योतनं श्लेष्महरं पक्ष्मणाञ्च प्ररोहणम् ॥

पलाशके डंठलों (अंकुरों) को कांसीकी थालीमें दहीके साथ घिसकर पतला पानीसा बना लें । इसकी रोज़ाना २-३ बूंद आंखों में डालनेसे आंखोंके कफज विकार नष्ट होते और पलकोंके बाल जम आते है ।

(४५०२) **पाचनीयक्षारः** (रसायनसार)

रसशालौषधीनाञ्च क्षारा भागाष्टकास्तथा ।
शुक्तिशम्बूकशङ्खानां गोमूत्रेषूषितात्मानम् ॥
चत्वारः क्षारभागाश्च द्वौ भागौ प्रतिसारणात् ।
त्रयस्ते मिलिताः क्षाराः पाचनीयतमा मताः ॥
गुल्मप्लीहोदरव्याधीन्नाशयन्तीति पूजिताः ।
अनिशं सेव्यमानास्तु बहनर्थकरा नृणाम् ॥

पाचकक्षार—

अर्थ—रसायनशालाकी औषधियोंको जलाकर जो मैं उनके क्षार बनानेकी विधि लिख चुका हूं उन क्षारोंके आठभाग, और सीप, सुकला (घोंघा), शंख; इनकी भस्मको चार दिन तक गोमूत्र में

डालकर नितरे हुवे जलको आगसे कढ़ाइमें पूर्वकी तरह पकाकर गाढ़ा करले इस क्षारके चार भाग, और प्रतिसारणीय क्षारके दो भाग, ये तीनों क्षार मिलकर अत्यन्त पाचनीय होते हैं गुल्म प्लीहा आदि अनेक उदर व्याधियोंको नाश करते हैं। चाहे इनको किसी चूर्णके योगमें देवे या ऐसे ही जलमें डालकर पिलावे । मात्रा इसकी चार रत्तीसे दो मासे तककी बलाबल देखकर कल्पना करे। यद्यपि इस क्षारमें बहुत गुण हैं तथापि बहुत दिन तक सेवन करनेसे नपुंसकता आदि अनेक अनर्थोंको पैदा करता है इस लिये इस क्षारको बिना रोगके अधिक सेवन नहीं करे ।

(४५०३) **पारावतपुरीषादियोगः**

(वं. से. । विषरोगा.)

पारावतः शकृत् पथ्या तगरं विश्वभेषजम् ।
बीजपूररसोपेतः परमो वृश्चिकागदः ॥

कबूतरकी बीट, हर्रे, तगर और सोंठ । सबके समान भाग चूर्णको बिजौरे नीबूके रसमें मिलालें ।

यह बिच्छूके विषके लिये अत्युत्तम अगद है।

(४५०४) **पिच्छाबस्तिः** (१)

(च. सं. । चि. स्था. अ. १४ अर्श.)

यवासकुशकाशानां मूलं पुष्पञ्च शाल्मलम् ।
न्यग्रोधोडुम्बराश्वत्थशुङ्गाश्च द्विपलोन्मिताः ॥
त्रिप्रस्थे सलिलस्यैतत् क्षीरप्रस्थे च साधयेत् ।
क्षीरशेषं कषायं च पूतं कल्कैर्विमिश्रयेत् ॥
कल्काः शाल्मलिनिर्य्यासमञ्जा चन्दनोत्पलम् ।
वत्सकस्य च बीजानि प्रियङ्गुपद्मकेसरम् ॥
पिच्छाबस्तिरयं सिद्धः सघृतक्षौद्रशर्करः ।
प्रवाहिकागुदभ्रंशरक्तस्रावज्वरापहः ॥

जवासामूल, कुशाकी जड़, कासकी जड़, सैंभलके फूल तथा बड़, गूलर और पीपलके अंकुर २-२ पल (१०-१० तोले) लेकर सबको एकत्र कूट कर ६ सेर पानी और २ सेर दूधमें एकत्र मिलाकर पकावें । जब दूधमात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें सैंभलका गोंद, मजीठ, लालचन्दन, नीलोत्पल, इन्द्रजौ, फूलप्रियङ्गु और कमलकेसरका कल्क तथा घी, शहद और खांड मिलाकर उसकी बस्ती करावें ।

यह बस्ती प्रवाहिका, गुदभ्रंश, रक्तस्राव और ज्वरको नष्ट करती है ।

(४५०५) **पिच्छाबस्तिः** (२)

(वृ. यो. त. । त. ६४)

अल्पाल्पं बहुशो रक्तं सशूलमुपवेश्यते ।
यदा वायुर्विबद्धश्च पिच्छाबस्तिस्तदा हितः ॥
शाल्मलेरार्द्रपुष्पाणि पुटपाकीकृतानि च ।
सङ्कुट्योलूखले सम्यग्गृह्णीयात्पयसि श्रृते ॥
गृहीत्वा पट्पलं तस्य त्रिपलं घृततैलयोः ।
युक्तं मधुककल्केन माक्षिकत्रिपलेन च ॥
तैलाक्तवपुषो दद्याद्बस्तौ प्रत्यागते रसे ।
भोजयेत्पयसा वापि पित्तातीसारपीडितम् ॥

पित्तातिसारमें जब पीड़ाके साथ बार बार थोड़ा थोड़ा रक्त निकलता हो और वायु रुका हुवा हो तो पिच्छा बस्ति देनी चाहिये ।

पिच्छाबस्तिका योग—

सैंभलके ताज़े फूलोंको बड़ आदिके पत्तों में

लपेट कर उस पर कपड़मिट्टी करके कण्डोंकी निर्धूम अग्निमें पकावें । जब ऊपर वाली मिट्टीका रंग लाल हो जाय तो फूलोंको कूटकर आठ गुने दूध और ३२ गुने पानीमें पानी जलने तक पकाकर छान लें फिर ६० तोले यह दूध, १५-१५ तोले घी और तेल, १५ तोले मुलैठीका कल्क और १५ तोले शहद लेकर सब को एकत्र मिलाकर बस्ति दें ।

(४५०६) **पिप्पलदलादियोगः**

(वै. म. र. । पट. १६)

पिप्पलदलकुवलयदल-
मास्येन चर्वणं चिरं कृत्वा ।
दृढधवलाम्बरनिहितं
सिञ्चेद्दृशि तिमिरनाशाय ॥

पीपल और नीलकमलके पत्तोंको बहुत देर तक मुखमें चबाकर स्वच्छ और मजबूत सफेद कपड़ेमें बांधकर आंखोंमें निचोड़नेसे तिमिर रोग नष्ट होता है ।

(नोट—जिनके दांत मैले हों या दांतों, मसूढ़ों अथवा मुंहमें कोई रोग हो उन्हें यह क्रिया न करनी चाहिये ।)

(४५०७) **पिप्पलीशोधनम्**

(यो. र. । भाग. १)

वैदेही चित्रकरसैरातपे भावयेत् पुटे ।
सम्यक् शुद्धा भवत्यत्र रसयोगेषु योजयेत् ॥

पिप्पलियों में चीतेका क्वाथ डालकर उसे धूपमें सुखा देने से वे शुद्ध हो जाती हैं । रसोंमें यही शुद्ध पीपल डालनी चाहिये ।

(४५०८) **पिप्पल्यादिपेया**

(च. स. । चि. अ. १४ अर्श.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रकं हस्तिपिप्पलीम् ।
शृङ्गवेरमजाजीश्च कारवीं धान्यतुम्बुरुम् ॥
बिल्वं कर्कटकं पाठां पिष्ट्वा पेयां विपाचयेत् ।
फलाम्लां यमकैर्भृष्टां तां दद्याद्गुदजापहाम् ॥
एतैश्चैव खडं कुर्यादेतैश्चैव पाचयेज्जलम् ।
एतैश्चैव घृतं साध्यमर्शसां विनिवृत्तये ॥

पीपल, पीपलामूल, चीता, गजपीपल, अद्रक, जीरा, कालाजीरा, धनिया, तुम्बरु, बेलगिरी, काकड़ासिंगी और पाठाको पीसकर ३२ गुने पानीमें पकावें जब आधा पानी शेष रह जाय तो छान कर उसमें चावलोंकी पेया (कणयुक्त मांड) बनाकर उसमें रुचि-अनुसार बिजौरेका रस मिलाकर और उसे घी तैलसे बघार कर पिलाने से अर्श नष्ट होती है ।

अर्श में इन्हीं ओषधियोंसे बनाया हुवा खडयूष, इन्हीसे पकाया हुवा जल और इन्हीं से सिद्ध घृत देना चाहिये ।

(४५०९) **पिप्पल्यादिवर्तिः**

(वृ. मा.; वं. से.; भा. प्र.; यो. र. । योनिरो.)

पिप्पल्या मरिचैर्माषैः शताह्वाकुष्ठसैन्धवैः ।
वर्तिस्तुल्या प्रदेशिन्या धार्या योनिविशोधिनी ॥

पीपल, कालीमिरच, उड़द, सैांफ, कूठ और सैंधा नमकके महीन चूर्णको पानीके साथ पीस कर प्रदेशिनी (तर्जनी) अंगुलीके बराबर मोटी बत्ती बना लें ।

इसे योनिमें धारण करने से योनिस्राव बन्द होकर योनि शुद्ध हो जाती है।

(४५१०) **पुनर्नवामूलधारणम्**

(ग. मा. । स्त्री. रो.)

मूलं पुनर्नवायाः सतैलमीषत्कृतं गुह्ये।
गर्भं प्रवेपमानं सहसा स्त्रीणां बहिः कुरुते॥

पुनर्नवा (साठी) की जड़को तैलसे चिकना करके योनिमें प्रविष्ट करनेसे मूढ़ गर्भ तुरन्त बाहर आ जाता है।

(४५११) **पीलुरसायनम्**

(ग. नि.)

पीलून्यार्द्राणि सेवेत पक्षं पक्षार्द्धमेव वा।
न चान्नं शीलयेत्किञ्चित्तेभ्यः सौख्य-मवाप्नुयात्॥
एतदर्शांसि शमयेच्छ्रेष्ठं पीलुरसायनम्।
ग्रहणीकृमिदोषाणां गुल्मिनाममृतोपमम्॥

१५ दिन या ७ दिन तक अन्नादि बन्द करके केवल पीलूके ताज़े फलों पर रहने से अर्श ग्रहणी, कृमि और गुल्मका नाश हो कर मनुष्य सुखी हो जाता है।

यह एक श्रेष्ठ रसायन प्रयोग है और उक्त रोगोंमें अमृतके समान गुणकारी है।

(४५१२) **पुष्परेचनी गुटिका**

(र. चं.; र. सा. सं. । विरेका.)

देवदाली स्वर्णपुष्पं गुडेन वटकीकृतम्।
गुदमध्ये प्रदेयैषा पातयेच्च महागदम्॥
अधश्च साममायाति पुनः सा दीयते गुदे।
प्रक्षाल्य वारिणा चैषा वारं वारं प्रयच्छति॥
अनेन क्रमयोगेन मलमामं विरेचनम्।
करोति सकलं देहं शुद्धवर्णं निरामयम्॥

बिंडालडोडा, अमलतासका गूदा और गुड़ समान भाग लेकर तीनोंको अच्छी तरह बारीक पीसकर बत्ती बनावें।

इसे गुदामें रखनेसे पेट से आम (कच्चा मल) निकलकर देह शुद्ध हो जाती है।

आमके साथमें बत्ती भी बाहर निकल आती है, उसे पानीसे धोकर पुनः लगा लेना चाहिये। इसी प्रकार बार बार लगानेसे सब आम निकल जाती है। (यह प्रयोग प्रवाहिका में अत्यन्त उपयोगी है।)

(४५१३) **पूतीकपत्रादियोगः**

(वं. से. । गुल्म., अम्लपित्त.)

खादेद्वाप्यङ्कुरान् भृष्ट्वा पूतीकनृपवृक्षयोः।
पिबेत्त्रिवृन्नागरं वा सगुडां वा हरीतकीम्॥

करञ्ज और अमलतासकी कोंपलोंको (घीमें) भूनकर खानेसे अथवा निसोत और सोंठके चूर्णको (गरम पानीके साथ) पीनेसे अथवा हर्रके चूर्णको गुड़में मिलाकर खानेसे गुल्म और अम्लपित्तका नाश होता है।

(४५१४) **पूपकयोगः** (ग. नि. । क्रिमि.)

आखुपर्णीदलैः पिष्टैः पिष्टकेन च पूपकान्।
पक्त्वा सौवीरकं चानु पिबेत् क्रिमिहरं परम्॥

मूषाकर्णी के पत्तोंको पीसकर पुराने चावलों की पिट्ठी में मिलाकर उसके पूड़े बनवावें।

इन्हें खाकर ऊपरसे सौवीरक कांजी पीनेसे कृमि रोग नष्ट होता है।

(४५१५) **पूपलिकायोगः**

(ग. नि. । ग्रन्थ्याध.)

वनकार्पासिकामूलं तन्दुलैः सह योजितम् ।
पक्त्वा पूपलिकां खादेदपचीनाशनाय च ॥

बनकपासकी जड़को पीसकर चावलों की पिट्ठी में मिलावें और फिर उसके पूड़े बनवा कर खावें ।

इनके सेवन से अपची (गण्डमाला भेद) नष्ट होती है ।

(४५१६) **पृश्निपर्ण्यादिपेया**

(वृं. मा.; ग. नि. । ज्वरातिसा.)

पृश्निपर्णीबलाबिल्वनागरोत्पलधान्यकैः ।
ज्वरातिसारी पेयां वा पिबेत्साम्लां शृतां नरः॥

पृष्ठपर्णी, खरैटी, बेलगिरी, सोंठ, नीलोत्पल और धनिये के पानीमें पेया (कण सहित मांड) बनाकर उसमें अनारका रस मिलाकर पिलानेसे ज्वरातिसार नष्ट होता है ।

(समस्त ओषधियां समान भाग मिश्रित १। तोला । पाकार्थ जल २ सेर । शेष १ सेर ।)

(४५१७) **प्रतिसारणीय**

(ग्रन्थिभेदन) क्षारः

(रसायनसार)

सेटोन्मिता स्वर्जिरथो सुधापि
द्विसेटिका तद्द्वयकुट्टनेन ।
चूर्णं विधायाथ निधाय नान्द्यां
मणप्रमाणेन जलेन साकम् ॥
सन्नीय दण्डेन निरावृते चो-
पेक्ष्येत देशे दिनपञ्चकं तत् ।
दिने दिने तत्परिचालयेच्च
स्वच्छं जलं लोहकटाहमध्ये ॥
निधाय चुल्ल्याञ्च पचेत पश्यन्
सेटार्धशिष्टत्वमवेक्ष्य तत्र ।
जलं रसोनस्य पलं ददीत
चतुःपलश्चान्ववतारयेत ॥
वर्णेन रक्तं मसृणं च तीक्ष्णं
क्षारं भरेताथ च काचकूप्याम् ।
ग्रन्थीनशेषांश्च भिनत्ति कुर्या-
त्कोथव्रणांश्चापि कथावशेषान् ॥
श्वेतञ्च कुष्ठं गजचर्म दद्रून्
क्षारः क्षिणोत्येष विलेपनेन ।
देशञ्च कालं बलमातुरस्य
समीक्ष्य कुर्यात्प्रतिसारयोगम् ॥

अर्थ—सुश्रुत सूत्रस्थान ११ ग्यारहवें अध्यायमें ग्रन्थि आदि को बहानेवाला प्रतिसारणीय और पाचनीय दो प्रकारके क्षार लिखे हैं परन्तु उन औषधियोंका संग्रह करना बहुत परिश्रमसे साध्य है इस लिये काम चलाने के लिये अपना अनुभूत प्रतिसारणीय नामक (प्लेगआदि रोगोंकी गाठोंको फोड़कर बहाने वाला) क्षार लिखता हूं—

एकसेर (लोटिया) सज्जी, दोसेर बिनाबुझाया हुवा चूना, दोनोंको कूट कर एक नांदमें डाल दे और उसी नांदमें एक मन पक्का पानी भरदे; फिर डंडेसे चूना सज्जी और पानी तीनोंको खूब मिलादे, परन्तु यह स्मरण रहे कि इसको हाथसे कभी न मिलावे नहीं तो हाथका चमड़ा उतर जायगा । फिर खुलेहुवे मैदान में इसको पांच दिन तक छोड़दे, जिसमें धूप और चन्द्रमाकी चांदनी इसपर

पड़ती रहे। दिनमें एक दो बार पांच दिन तक डंडेसे इसको चला दियाकरे, जिससे नांदके पेंदेमें जम न जाय। बाद छठे दिन गंगाजलके माफिक नितरे हुवे (थहरायेहुवे) निर्मल जलको दूसरी स्वच्छ लोहेकी कढ़ाइमें निकाल लेवे; इस कढ़ाईको भट्ठीपर चढ़ाकर पकावे, जब आधा सेर मात्र पानी बाकी रहे तब इसमें लहसुनका चार तोला स्वरस डाल दे और मन्दी २ आंचसे पकाना शुरूकरे। जब अन्दाज सोलह तोले पानी रह जाय तब कढ़ाईको भट्ठीसे उतारकर ठंडी कर लेवे। बस प्रतिसारणीयक्षार बन गया, इसका रंग लाल हो जाता है, और यह बहुत चिकना होता है। जहांपर लग जायगा उस जगह तुरन्त घाव कर देगा। यदि थोड़ासा लगाया जायगा तो फलक पैदा कर देगा। इस क्षारको शीशीमें भरकर रख छोड़े। प्लेगकी गांठ या और फोड़ेकी गांठ जहांपर शस्त्र लगाने की आवश्यकता हो उन सब गाठोंको फोड़कर यह क्षार बहा देगा और उस जगहको काली कर देगा, जो कुछ समय (महीना पन्दरह दिन) में स्वयं चमड़ेके रंगमें मिल जायगी। इसके लगानेपर इतना भारी मरीजको दुःख भी नहीं होता है। यदि रोगी इतना दुःख भी नहीं सह सके तो सौ बार धोया हुवा घी लगा देने से पीड़ा तुरन्त बन्द हो जाती है। और जो घाव ऐसे सड़े हुवे हैं कि जिनका अच्छा होना बहुत मुशकिल है उनके ऊपर लगा देनेसे भी उनको तत्काल जलाय देगा, परन्तु घावमें लगानेसे कुछ अधिक पीड़ा मालूम होगी इसलिये कुछ इसमें पानी मिलाकर लगावे, जब घाव कमजोर पड़ जाय तब विनाही पानी मिलाये थोड़ा थोड़ा लगावे। बवासीर के मस्से जो बाहर होयं अथवा और शरीरमें जहां कहीं मस्से हों या सफेद कुष्ठका कोई दाग हो या गजचर्म दाद अर्थात् जिस जगहको साफ करना हो उसी जगह लेप कर देनेसे उतनी जगह को उपाड़कर फेंक देगा और अपना घाव कर देगा, इस घावके ऊपर गरम घी चुपड़नेसे पीड़ा भी शान्त हो जावेगी और घाव भी अच्छा हो जावेगा। इस क्षारका स्वभाव गरम है इसलिये गरम देश, गरमकाल, रोगीकी पित्तप्रकृतिको बचा कर इसका प्रयोग करे।

(रसायनसारसे उद्धृत)

इति पकारादिमिश्रप्रकरणम्।





अथ फकारादिकषायप्रकरणम्।



(४५१८) **फलत्रिकादिक्काथः** (१)

(वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

फलत्रिकत्र्यूषणमुस्तकट्वी
कलिङ्गसिंहाननशर्वरीभिः ।
क्काथः कृतः कृन्तति कण्ठकुब्जं
कण्ठीरवः कुञ्जरमाशु यद्वत् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, कुटकी, इन्द्रजौ, बासा और हल्दीका काथ कण्ठकुब्ज सन्निपातको नष्ट करता है ।

(४५१९) **फलत्रिकादिक्काथः** (२)

(यो. त. । त. ५१; वृ. मा. । प्रमेहा.)

फलत्रिकं दारुनिशां विशालां
मुस्तां च निष्क्वाथ्य निशांशकल्कम् ।
पिबेत्कषायं मधुसंयुतं च
सर्वप्रमेहेषु समुत्थितेषु ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, दारुहल्दी, इन्द्रायन और नागरमोथा; इनके काथमें शहद और हल्दीका कल्क मिलाकर पीनेसे सब प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(४५२०) **फलत्रिकादिक्काथः** (३)

(बं. से. । स्त्रीरो.)

फलत्रिकं दारु वचा सवासा
लाजा सदूर्वा कलशी समङ्गा ।
क्षौद्रान्वितं काथमिदं सुशीतं
सर्वात्मके पेयमसृग्दरे हि ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, बच, बासा, धानकी खील, दूर्वा, पृष्ठपर्णी और मजीठके काथको ठण्डा करके उसमें शहद मिलाकर पीनेसे सन्निपातज रक्तप्रदर नष्ट होता है ।

(४५२१) **फलत्रिकादिक्काथः** (४)

(यो. चि. । अ. ४)

फलत्रिकामृतातिक्तानिम्बकैरातवासकाः ।
हरिद्रे पद्मकं मुस्तापामार्गं चन्दनं कणा ॥
पटोलं पर्पटं चैषां क्काथः कमलवातहा ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, कुटकी, नीमकी छाल, चिरायता, बासा, हल्दी, दारुहल्दी, पद्माक, नागरमोथा, अपामार्ग (चिरचिटा), लालचन्दन, पीपल, परवल और पित्तपापड़ेका काथ कामलाको नष्ट करता है ।

(४५२२) फल्ग्वयादिकषायः

(ग. नि. । क्रिमिरो.)

फञ्जीफणिज्जकफलत्रितयाखुपर्णी-
काथः क्रिमिघ्नमगधाशिखिशिग्रुयुक्तः ।
पीतः क्रिमीनपहरेत् क्रिमिजा रुजश्च
जन्तोर्जयेदथ कणाक्रिमिजित्कषायः ॥

भरंगी, छोटी तुलसी, हर्र, बहेड़ा, आमला, मूषाकर्णी, बायबिड़ंग, पीपल, चीता और सहंजनेकी छालका अथवा पीपल और बायबिड़ंगका काथ पीनेसे कृमि और तज्जन्य रोग नष्ट होते हैं ।

इति फकारादिकषायप्रकरणम् ।

अथ फकारादिचूर्णप्रकरणम्।

(४५२३) फलत्रिकादिचूर्णम् (१)

(वृ. नि. र. । स्वरभेद.; वृ. यो. त. । त. ८१)

फलत्रिकत्र्यूषणयावशूक-
चूर्णानि हन्युः स्वरभङ्गमाशु ।
किं वा कुलित्थं वदनान्तरस्थं
स्वरामयं हन्त्यथ पौष्करं वा ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल और जवाखारका चूर्ण (शहदमें मिलाकर) चाटनेसे स्वरभंग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

अथवा कुलथी या पोखरमूलको मुंहमें रखनेसे भी स्वरभंग (गला पड़ना रोग) नष्ट हो जाता है ।

(४५२४) फलत्रिकादिचूर्णम् (२)

(व. से.; वृ. नि. र. । मेदारो.)

फलत्रयं त्रिकटुकं सतैलं लवणान्वितम् ।
षड्मासमुपभुक्तं चेत्कफमेदोनिलापहम् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमकके चूर्णको तेलके साथ ६ मास तक सेवन करनेसे कफ, मेद और वायु नष्ट हो जाता है ।

(४५२५) फलिन्यादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । बालरो.)

फलिन्यञ्जनमुस्तानां चूर्णं पीतं समाक्षिकम् ।
तृष्णां छर्दिमतीसारं बालानां तत्त्वतो हरेत् ॥

फूलप्रियङ्गु, सुरमा और नागरमोथेका चूर्ण शहदमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी तृष्णा, छर्दि और अतिसारका नाश होता है ।

इति फकारादिचूर्णप्रकरणम्

अथ फकारादिगुटिकाप्रकरणम्।

(४५२६) फलत्रयगुटी

(वृ. नि. र. । श्वासकर्म.)

फलत्रयं नागरदारुकृष्णा
विषानपार्वेल्लसुवर्णबीजैः ।
दिनत्रयं भृङ्गरसैर्विमर्द्य
कार्या गुटी श्वासकफापहारी ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, देवदारु, पीपल, शुद्ध बछनाग, सुगन्धबाला, बायबिड़ंग और धतूरेके बीजोंका समानभाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलाकर ३ दिन भंगरेके रसमें घोटकर (१-१ माशेकी) गोलियां बना लीजिये ।

इनके सेवनसे श्वास और खांसीका नाश होता है।

(४५२७) फलत्रिकाद्यो मोदकः

(ग. नि. । परिशिष्ट गुटिका ४)

फलत्रिकगुडव्योषशर्करात्रिवृतादिकम् ।
मोदकं भक्षयित्वाऽनुपिबेत्कोष्णं जलं पुनः ।
पार्श्वशूलेऽरुचौ कासे ज्वरे चानिलसम्भवे ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, गुड़, सोंठ, मिर्च, पीपल, खांड और निसोतका चूर्ण समान भाग लेकर (सबसे २ गुने गुड़की चाशनीमें मिलाकर) उसके मोदक बना लीजिये ।

इन्हें उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे पसलीका दर्द, अरुचि, खांसी और वातज ज्वरका नाश होता है ।

(मात्रा-६ माशेसे १ तोले तक ।)

इति फकारादिगुटिकाप्रकरणम् ।

अथ फकारादिघृतप्रकरणम्।

(४५२८) फलघृतम्

(वं. से.; र. र.; वृ. मा.; भा. प्र. म. खं.; यो. र. । योनि रोगा.; भै. र. । स्त्रीरो.; ग. नि. । घृता.; वा. भ. । उ. स्था. अ. ३४)

मञ्जिष्ठा मधुकं कुष्ठं त्रिफला शर्करा बला[1] ।
मेदे पयस्या काकोली मूलं चैवाश्वगन्धजम् ॥
अजमोदा हरिद्रे द्वे प्रियङ्गु[2] कटुरोहिणी ।
उत्पलं कुमुदं लाक्षा[3] काकोल्यौ चन्दनद्वयम् ॥
एतेषां कार्षिकैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
शतावरीरसं क्षीरं घृताद्देयम् चतुर्गुणम् ॥
सर्पिरेतन्नरः पीत्वा स्त्रीषु नित्यं वृषायते ।
पुत्राञ्जनयते वीरान्मेधाढ्यान्प्रियदर्शनान् ॥

१—वचेति पाठान्तरम् ।

२—हिङ्ग्विति पाठान्तरम् । ३ द्राक्षेति पाठान्तरम् ।

या चैवास्थिरगर्भा स्यात्पुत्रं वा जनयेन्मृतम् ।
अल्पायुषं वा जनयेद्या च कन्यां प्रसूयते ॥
योनिरोगे रजोदोषे परिस्रावे च शस्यते ।
प्रजावर्धनमायुष्यं सर्वग्रहनिवारणम् ॥
नाम्ना फलघृतं ह्येतदश्विभ्यां परिकीर्तितम् ।
अनुक्तं लक्ष्मणामूलं क्षिपन्त्यत्र चिकित्सकाः ॥
जीवद्वत्सैकवर्णाया घृतं तत्र प्रयुज्यते ।
आरण्यगोमयेनेह वह्निज्वाला च दीयते ॥

कल्क—मजीठ, मुलैठी, कूठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, खांड, खरैटी (पाठान्तरके अनुसार बच) मेदा, महामेदा, क्षीरकाकोली, काकोली, असगन्ध-मूल, अजमोद, हल्दी, दारुहल्दी, फूलप्रियङ्गु (पाठान्तरके अनुसार हींग) कुटकी, नीलोत्पल, कुमुद, लाख (पाठान्तरके अनुसार मुनक्का) काकोली, क्षीरकाकोली, लालचन्दन और सफेद चन्दन प्रत्येक १।-१। तोला लेकर पानीके साथ पीस लें।

जिसका बच्चा जीता हो ऐसी १ रंगकी गायका घी २ सेर। तथा शतावरका रस और गायका दूध ८-८ सेर लेकर सबको एकत्र मिला-कर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इस घृतको नित्य प्रति सेवन करनेसे मनुष्यमें स्त्री समागम करनेकी शक्ति बढ़ती है और वह वीर, मेधावी तथा सुन्दर पुत्रोत्पादनमें समर्थ होता है।

जिस स्त्रीका गर्भ स्थिर न रहता हो, जो मृत पुत्रोंको जन्म देती हो, या जिसके बच्चे थोड़ी उमरमें ही मर जाते हों या जिसके कन्या ही कन्या उत्पन्न होती हों उसके लिये यह घृत अत्यन्त हितकारी है।

यह घृत योनिदोष, रजोदोष, गर्भस्राव और ग्रहदोषोंको नष्ट करता है। तथा इसके सेवनसे आयु बढ़ती और सन्तान वृद्धि होती है।

इस घृतमें चिकित्सक लक्ष्मणामूल भी डालते हैं। इसे गायके उपलोंकी अग्नि में पकाना चाहिये।

(४५२९) फलघृतम् (वृहत्)

(वृ. यो. त. । त. १३९; वृ. मा. । योनिरोगा.; शा. ध. । म खं. अ. ९)

मुस्तं कुष्ठं हरिद्रे द्वे पिप्पली कटुरोहिणी ।
काकोली क्षीरकाकोली विडङ्गं त्रिफला वचा ॥
मेदा रास्ना विशाला च देवदारु प्रियङ्गुका ।
द्वे सारिवे शताह्वा च दन्ती मधुकमुत्पलम् ॥
अजमोदा महामेदा चन्दनं रक्तचन्दनम् ।
जातीपुष्पं तुगाक्षीरी कट्फलं हिङ्गु शर्करा ॥
एतैरक्षसमैः कल्कैर्घृतप्रस्थं भिषक्तमः ।
चतुर्गुणेन पयसा विपचेद्गोमयाग्निना ॥
पुष्यनक्षत्रसम्पक्वं भाण्डे हेमादिजे स्थितम् ।
सर्पिरेतन्नरः पीत्वा स्त्रीषु नित्यं वृषायते ॥

४—गदनिग्रहमें काकोली, क्षीरकाकोली दुबारा न लिख कर उनकी जगह जीवक ऋषभक लिखे हैं। तथा रेणुका, देवदारु और कटेली तथा कटेला अधिक लिखा है। एवं कुमुदकी जगह पद्माक लिखा है और सफेदचन्दन तथा शतावरीके रसका अभाव है।

वाग्भट में कल्कमें तगर और शतावर अधिक है तथा खांड, नीलोत्पल, कुमुद, लाख, चन्दन और सफेद चन्दन एवं शतावरीके रस और दूधका अभाव है।

या च वन्ध्या पिबेन्नारी या च कन्याप्रजायिनी।
पीत्वैतत्स्थिरगर्भा स्याद्या च स्रुता पुनः स्थिता ॥
अनायुषं या जनयेद्या वा जनयते मृतम् ।
सा च सञ्जनयेत्पुत्रं दीर्घायुषमरोगिणम् ॥
वेदवेदाङ्गशास्त्रज्ञं सर्वावयवसुन्दरम् ।
नानेन सदृशं किञ्चिदौषधं चान्यदुत्तमम् ॥
वर्तते मर्त्यलोकेऽत्र योषितां पुत्रदं परम् ।
नाम्ना फलघृतं ह्येतद्भारद्वाजेन निर्मितम् ॥
अनुक्तं लक्ष्मणामूलं क्षिप्यन्त्यत्र चिकित्सकाः ।
जीवद्वत्सैकवर्णाया घृतमस्मिन् प्रशस्यते ॥
आरण्यगोमयेनात्र वह्निज्वालाविधिः स्मृतः ॥

कल्क द्रव्य—नागरमोथा, कूठ, हल्दी, दारुहल्दी, पीपल, कुटकी, काकोली, क्षीरकाकोली, बायबिड़ंग, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), बच, मेदा, रास्ना, इन्द्रायनकी जड़, देवदार, फूल-प्रियङ्गु, दोनों सारिवा, सौंफ, दन्तीमूल, मुलैठी, नीलोत्पल, अजमोद, महामेदा, सफेदचन्दन, लाल चन्दन, चमेलीके फूल, बंसलोचन, कायफल, हींग और खांड १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पीस लें ।

नोट—वृन्द माधव में दन्तीका अभाव है । शारङ्गधरमें देवदारु और महामेदा का अभाव है ।

२ सेर गोघृतमें उपरोक्त कल्क और ८ सेर गायका दूध मिलाकर अरण्य उपलोंकी अग्नि पर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इसे पुष्य नक्षत्रमें पकाना और स्वर्णादिके पात्रमें भरकर रखना चाहिये ।

यदि इस घृतको पुरुष सेवन करता है तो उसमें स्त्रीसमागमकी शक्ति बढ़ती है ।

जिस स्त्रीके सन्तान न होती हो या जिसके कन्या ही कन्याएं होती हों, जिसके बार बार गर्भ रहकर नष्ट हो जाता हो, जो स्त्री मृत या अल्पायु सन्तान उत्पन्न करती हो वह यदि इसे सेवन करे तो दीर्घायु और रोग-रहित पुत्रको जन्म देनेमें समर्थ हो जाती है ।

पुत्र प्राप्त कराने वाला स्त्रियोंके लिये संसार में इससे उत्तम एक भी औषध नहीं है ।

इस प्रयोगमें १ वर्णकी जीवद्वत्सा (जिसका बच्चा जीता हो ऐसी) गायका घी लेना चाहिये और उसे जंगली उपलों की अग्निपर पकाना चाहिये ।

(४५३०) **फलघृतम्**

(यो. चि. । घृता. ५.; बं. से. । स्त्री रो.; शा. ध. । म. ख. अ. ९)

सहचरे द्वे त्रिफलां गुडूचीं सपुनर्नवाम् ।
शुकनासां हरिद्रे द्वे रास्नां मेदां शतावरीम् ॥
कल्कीकृत्य घृतप्रस्थं पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ।
तत्सिद्धं पाययेन्नारीं योनिशूलनिपीडिताम् ॥
पीडिता चलिता या च निःसृता विवृता च या ।
पित्तयोनिश्च विभ्रान्ता षण्ढयोनिश्च या स्मृता ॥
प्रपद्यन्ते हि ताः स्थानं गर्भं गृह्णन्ति चासकृत् ।
एतत्फलघृतं नाम योनिदोषहरं परम् ॥

पीले और नीले फूलका पियाबांसा, हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, पुनर्नवा (साठी), अर-

लुकी छाल, हल्दी, दारुहल्दी, रास्ना, मेदा और शतावर १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पीस लें। तत्पश्चात् २ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर गोदुग्ध मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इसे सेवन करनेसे स्त्रियोंका योनिशूल, योनि विभ्रंश, योनिका बाहर निकल आना, विवृता योनि, पित्तदूषित योनि और षण्ढ योनि आदि समस्त योनिविकार नष्ट होकर स्त्री गर्भ धारण करने योग्य हो जाती है।

इति फकारादिघृतप्रकरणम्।

अथ फकारादितैलप्रकरणम्।

(४५३१) फणिज्जकाद्यं तैलम्

(ग. नि. । तैला.)

फणिज्जकः सक्षवको नादेयं नवमालिका ।
अश्मन्तको विडङ्गानि मयूरकफलानि च ॥
वितुन्नकं देवदारु सहदेवा च कट्फलः ।
बीजं कारञ्जपालाशं मूलकस्यार्जकस्य च ॥
महापर्पटको मुस्तं त्रिकटु त्रिफला वचा ।
सुवर्चला च हिङ्गुश्च समभागानि कारयेत् ॥
अक्षमात्रैः पचेदेभिस्तैलप्रस्थं सुखाग्निना ।
अजाक्षीरेण संयुक्तमजाक्षीरे चतुर्गुणे ॥
तदस्य नस्यं दद्याच्च गण्डमालाविनाशनम् ।
विदारिकां गलग्रन्थिं गलगण्डं च नाशयेत् ॥

छोटी तुलसी, सहंजनेके बीज, जलबेत, नवमल्लिका (वासन्ती—नेवारी), पत्थानभेद, वायविडंग, चिरचिटेके बीज, धनिया, देवदारु, सहदेवी, कायफल, करञ्जबीज, ढाक (पलाश) के बीज, मूलीके बीज, तुलसीके बीज, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बच, सज्जी और हींग। प्रत्येक ओषधि १।-१। तोला लेकर पानी के साथ पीसकर कल्क बनावें। फिर यह कल्क, २ सेर तैल और ८ सेर बकरीका दूध एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे कण्टमाला, विदारिका, गलग्रन्थि और गलगण्डका नाश होता है।

(४५३२) फलवर्तितैलम्

(व. से. । अर्शो.)

तिक्ततुम्ब्युद्भवं तैलं तैलश्चालसिसम्भवम् ।
आस्फोटकरसश्चैव रसं निर्गुण्डीगोमयैः ॥
प्रत्येकैकन्तु सर्वेषां प्राह्यं पलचतुष्टयम् ।
कर्षैकं सैन्धवं दद्याद्दन्तीमूलं द्विमाषकम् ॥
द्विमाषं सर्जिकाक्षारमेतत्तैलं विपाचयेत् ।
तिक्ततुम्बीकृतावर्त्तिर्यवेन्द्रस्वरसेन च ॥
तैलेनाभ्यञ्जनेनैव दद्याद्दुर्नामशान्तये ॥

कड़वी तुम्बीके बीजोंका तेल, अलसीका तेल, अखरोटका रस, संभालु का रस और गायके गोबरका रस ४०-४० तोले तथा सेंधा नमक १। तोला, दन्तीमूल २।। माशे और सज्जीखार २।। माशे लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तेलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

कड़वी तुम्बीके गर्भ (गूदे) को इन्द्रयवके रसमें पीसकर बत्ती बनावें और उसे इस तैलसे तर कर लें। इसे गुदामें रखनेसे अर्श का नाश होता है।

इति फकारादितैलप्रकरणम्।

अथ फकाराद्यरिष्टप्रकरणम्।

(४५३३) **फलारिष्टः**

(च. सं. । चि. अ. १४ अर्श चि.; ग. नि. । ग्रहण्य.)

हरीतकीफलं प्रस्थं प्रस्थमामलकस्य च।
विशालाया दधित्थस्य पाठाचित्रकमूलयोः ।।
द्वे द्वे पले समापोथ्य द्विद्रोणे साधयेदपाम्।
पादावशेषे पूते च रसे तस्मिन् प्रदापयेत् ।।
गुडस्यैकां तुलां वैद्यः संस्थाप्य घृतभाजने।
पक्षस्थितं पिबेदेनं ग्रहण्यर्शो विकारवान् ।।
हृत्पाण्डुरोगं प्लीहानं कामलां विषमज्वरम्।
वर्चोमूत्रानिलकृतान् विबन्धानग्निमार्दवम् ।।
कासं गुल्ममुदावर्त्तं फलारिष्टो व्यपोहति।
अग्निसन्दीपनो ह्येष कृष्णात्रेयेण भाषितः ।।

हर्रे और आमला १-१ सेर, इन्द्रायनके फल, कैथका फल, पाठा और चीतामूल १०-१० तोले लेकर सबको कूटकर ६४ सेर पानीमें पकावें। जब १६ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें ६। सेर गुड़ मिलाकर यथाविधि मिट्टीके चिकने बरतनमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें। एवं १५ दिन पश्चात् छानकर बोतलों में भर लें।

यह अरिष्ट ग्रहणी, अर्श, हृद्रोग, पाण्डु, प्लीहा, कामला, विषमज्वर, वायु तथा मलमूत्रका अवरोध, अग्निमांद्य, खांसी, गुल्म और उदावर्तका नाश तथा अग्निको दीप्त करता है।

इति फकाराद्यरिष्टप्रकरणम्।

अथ फकारादिधूपप्रकरणम् ।

(४५३४) फिरङ्गशमनीवटी (धूपः)

(भै. र. । परिशिष्टे)

कर्षद्वयं श्रीशिवयोश्च वीर्य-
भक्षप्रमाणानि च तण्डुलानि ।
पिष्ट्वा वलायाः स्वरसैश्च सप्त
त्रिघ्ना वटीः सप्तदिनैर्नियोज्याः ॥
वटीत्रयस्यापि निषेव्य नित्यं
धूमञ्च यो वाथ फिरङ्गरोगी ।
स सप्तभिर्वा दिवसैश्च तस्मा
द्विमुच्यतेऽम्लं लवणं त्यजेच्चेत् ॥

१।-१। तोले शुद्ध पारद गन्धककी कज्जली बनाकर उसमें १। तोला चावलोंका महीन चूर्ण मिलावें और फिर उसे खरैटीके स्वरस में घोटकर सबकी २१ गोलियां बनावें ।

इनमें से १-१ गोलीकी धूनी नित्य प्रति ३ बार लेनेसे आतशकके घाव भर जाते हैं । खटाई और नमकसे परहेज़ करना चाहिये ।

इति फकारादिधूपप्रकरणम् ।

अथ फकारादिरसप्रकरणम् ।

(४५३५) फिरङ्गवातकेसरीरसः

(वै. र. । फिरङ्ग.)

कालाजाजी च कङ्कुष्ठं टङ्कत्रयमितं पृथक् ।
उभयोः सार्द्धगुणितं गुडं जीर्णं विनिःक्षिपेत् ॥
सञ्चूर्ण्य सर्वमेकत्र गुटीः पञ्चदशाचरेत् ।
प्रातः सायं च भोक्तव्या गुटिका सप्तवासरम् ॥
गोधूमरोटिकासर्पिर्युक्ता भक्ष्या तु केवला ।
फिरङ्गजनिताः सर्वोपद्रवा यान्ति संक्षयम् ॥
नास्त्यनेन समो योगः फिरङ्गजनिते गदे ॥

कलौंजी का चूर्ण और मुरदासिंग ३-३ टंक (१५-१५ माशे) लेकर दोनोंको अच्छी तरह खरल करें और फिर उसमें ४५ माशे पुराना गुड़ मिलाकर सबकी १५ गोलियां बनावें ।

इनमेंसे प्रति दिन प्रातः तथा सायङ्काल १-१ गोली निगलने से ७ दिनमें आतशकके समस्त विकार नष्ट हो जाते हैं । आतशक के लिये इससे उत्तम और कोई औषध नहीं है ।

पथ्य—केवल गेहूंकी रोटी और घी खाना चाहिये । अन्य कोई चीज़ भी न खानी चाहिये ।

(नोट—इस पर तनिक भी कुपथ्य होनेसे मुंह आ जाता है ।)

(४५३६) **फिरङ्गशमनीवटी**

(भै. र. । परिशिष्टे)

टङ्कैकपारदमितं खदिरद्विटङ्क-
माकारकादिकरभञ्च विघृष्य सम्यक् ।
कृत्वा वटीश्च खलु माक्षिकरामटङ्कैः
प्रातः फिरङ्गशमनाय गिलेच्च नित्यम् ॥
कट्वम्ले च परित्याज्ये भोज्यं रूक्षं विशेषतः ।
सप्तभिर्दिवसैर्नॄणां फिरङ्गो नश्यति ध्रुवम् ॥

शुद्ध पारद ५ माशे, कत्था १० माशे और अकरकरेका चूर्ण १० माशे लेकर तीनोंको एकत्र मिलाकर खरल करें फिर उसमें १५ माशे शहद डालकर अच्छी तरह घोटकर सबकी ७ गोलियां बना लें ।

इनमें से नित्य प्रति प्रातः काल १-१ गोली निगलनेसे ७ दिनमें फिरंगरोग (आतशक) अवश्य नष्ट हो जाता है ।

अपथ्य—तीक्ष्ण और खट्टी चीज़ों से परहेज़ और विशेषतः रूक्ष भोजन करना चाहिये ।

(४५३७) **फिरङ्गारिरसः**

(भा. प्र. । म. खं. फिरङ्गरोगा.)

पारदः कर्षमात्रः स्यात्तावन्मात्रं तु गन्धकम् ।
तावन्मात्रस्तु खदिरस्तेषां कुर्यात्तु कज्जलीम् ॥
रजनीकेशरत्रुट्यो जीरयुग्मं यवानिका ।
चन्दनद्वितयं कृष्णा वांसी मांसी च पत्रकम् ॥
अर्द्धकर्षमितं सर्वं चूर्णयित्वा च निक्षिपेत् ।
तत्सर्वं मधुसर्पिर्भ्यां द्विपलाभ्यां पृथक्पृथक् ॥
मर्दयेदथ तत्खादेदर्द्धकर्षमितं नरः ।
व्रणः फिरङ्गरोगोत्थस्तस्यावश्यं विनश्यति ॥
अन्योऽपि चिरजातोऽपि प्रशाम्यति महाव्रणः ।
एतद्भक्षयतः शोथो मुखस्यान्तर्न जायते ॥
वर्जयेदत्र लवणमेकं विंशतिवासरान् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और कत्था १-१ कर्ष (१।-१।) तोला लेकर तीनोंकी कज्जली बनावें तत्पश्चात् उसमें आधा आधा कर्ष हल्दी, केसर, छोटी इलायची, दोनों जीरे, अजवायन, सफेद और लाल चन्दन, पीपल, वंसलोचन, जटामांसी और तेजपातका चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह खरल करें और फिर उसमें १०-१० तोले शहद और घी मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसमें से नित्यप्रति आधा कर्ष औषध सेवन करनेसे आतशकके घाव तथा अन्य प्रकारके पुराने और बड़े बड़े घाव भी अवश्य नष्ट हो जाते हैं । इसके सेवनसे मुखमें शोथ उत्पन्न नहीं होता ।

परहेज़—२१ दिन तक लवण न खाना चाहिये ।

इति फकारादिरसप्रकरणम् ।

अथ फकारादिमिश्रप्रकरणम् ।

(४५३८-३९) **फलद्रावः**

(ग. नि. । वाजीकरणा.)

सञ्चूर्ण्य शुण्ठीं सगुडां च निस्त्वचं
कृत्वा च पक्वाम्रफलं हि निष्कुलम् ।
घर्मे धृतं तद्द्रवति द्वियामात्
सशर्करं पानकयोग्यमुत्तमम् ॥
जम्बूत्वचावह्निमरीचदूर्वा
चूर्णेनपक्वं कदलीफलं च ।
श्रेष्ठेन युक्तं प्रविलिप्य निस्त्वचं
घर्मे धृतं द्रावमुपैति यामात् ॥

(१) पके आमोंको छीलकर उनका गूदा उतार लें और उसमें सोंठ तथा गुड़का चूर्ण मिलाकर धूपमें रख दें। २ पहरमें आम्रद्राव तैयार हो जायगा। इसे शीशीमें भरकर सुरक्षित रक्खें।

इसे खांडके शर्बतमें डालकर पीना चाहिये।

(२) जामनकी छाल, चीता, कालीमिर्च, दूबघास और त्रिफलाके समान भाग मिश्रित चूर्णको केलेकी छिलकेरहित फलियों पर लेप करके धूपमें रख दें तो १ पहरमें उनका पानी हो जायगा।

इति फकारादिमिश्रप्रकरणम् ।



अथ बकारादिकषायप्रकरणम्।

(४५४०) **बकुलप्रयोगः**

(वै. म. र. । पटल ६)

बकुलजटाभवकल्कः पयसा पीतः प्रगे त्रिदिनम्।
दृढतरमूलान् कुरुते दन्तान् वृद्धस्य किमुत बालानाम् ॥

मौलसिरीकी जड़की छालको दूधके साथ पीसकर उसीमें मिलाकर ३ दिन तक प्रातःकाल सेवन करनेसे वृद्धोंके दांत भी दृढ़ हो जाते हैं।

(४५४१) **बदरीपत्रयोगः**

(वृ. मा. । स्वर.; यो. र. । स्वरभे.; यो. त. । त. ३१)

बदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैन्धवम् ।
स्वरोपघाते कासे च लेहमेनं प्रयोजयेत् ॥

बेरीके पत्तोंको पीसकर घीमें भून लें और उसमें सेंधानमक मिलाकर रोगीको चटावें ।

इससे स्वरभंग (गलाबैठना) और खांसीका नाश होता है।

(४५४२) **बदरीपल्लवरसयोगः**

(वै. म. र. । पटल ६)

बदरीपल्लवरसं पिबेद्रक्तातिसारवान् ।
शुण्ठीकदम्बत्वक्क्वाथं पिबेद्रात्रौ दिनत्रयम् ॥

रक्तातिसारके रोगीको दिनमें बेरीके पत्तोंका रस और रात्रिको सोंठ तथा कदम्बकी छालका काथ पीना चाहिये ।

इससे ३ दिनमें रक्तातिसार नष्ट हो जाता है ।

(४५४३) **बदरीमूलकल्कः**

(शा. ध. । खं. २ अ. ५; व. से. । अति.)

बदरीमूलकल्केन तिलकल्कश्च योजितः ।
मधुक्षीरयुतः कुर्याद्रक्तातीसारनाशनम् ॥

बेरीकी जड़की छाल और तिलोंको पीसकर दूधमें मिला लें और उसमें शहद डालकर रोगीको पिला दें ।

इससे रक्तातिसार नष्ट होता है ।

(४५४४) **बब्बूलपल्लवयोगः**

(रा. मा. । राजयक्ष्मा.)

बब्बूलपल्लवचयं सलिलेन सार्ध-
मापिष्य यः पिवति तस्य कुतोऽतिसारः।

कीकर (बबूल) के पत्तोंको पानीके साथ पीसकर पीनेसे अतिसारका नाम भी नहीं रहता।

(४५४५) **बब्बूलरसक्रिया**

(व. से. । उदररो.)

बब्बूलस्य त्वचं श्रेष्ठां काथयेत्सलिलेन तु ।
पुनः पचेत्कषायन्तु यावत्सान्द्रत्वमागतम् ॥

तत्पिबेत्तक्रसंयुक्तं तक्रभोजी मिताशनः ।
निहन्यादाशु योगोऽयं जलोदरमपि ध्रुवम् ॥

कीकरकी छाल और त्रिफलेको कूटकर आठ गुने पानीमें पकावें । जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो उसको छानकर पुनः पकाकर गाढ़ा कर लें ।

इसे तक्रके साथ पीने और केवल तक्र पर ही संयमके साथ रहने से जलोदर तक भी अवश्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(४५४६) **बब्बूल्यादिस्वरसयोगः**

(वृ. नि. र. । अतीसा.)

स्थूलबब्बूलिकापत्ररसः पानाद्व्यपोहति ।
सर्वातिसारान् श्योनाककुटजत्वग्रसोथ वा ॥

बड़े बबूलके पत्तोंका रस अथवा अरलु या कुड़ेकी छालका रस पीनेसे सर्व प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं ।

(४५४७) **बलादिकल्कः** (१)

(यो. र. । प्रदर.; वृ. मा. । प्रदर; व. से. । स्त्रीरो.)

प्रदरं हन्ति बलाया मूलं दुग्धेन संयुतं पीतम् ।
कुशवाट्यालकमूलं तण्डुलसलिलेन रक्ताख्यम् ॥

खरैटीकी जड़को दूधके साथ पीसकर उसीमें मिलाकर पीनेसे प्रदर नष्ट होता है ।

कुश और खरैटीकी जड़को चावलोंके धोवन के साथ पीसकर पीनेसे रक्तप्रदर नष्ट होता है ।

(४५४८) **बलादिकल्कः** (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

बलाबृहत्यौ मधुकं वृषं च
तथैव कुष्ठं पिचुमन्दकं च ।
गवां स्तनीसंयुतकल्कमेतत्
पानं हितं पित्तकफात्मके च ॥

खरैटी, छोटी और बड़ी कटेली, मुलैठी, बासा, कूठ, नीमकी छाल और मुनक्का का कल्क सेवन करनेसे पित्तकफज खांसी नष्ट होती है ।

(४५४९) **बलादिकल्कः** (३)

(यो. र.; उरःक्ष.; ग. नि.; वृ. मा. । रा. य.; भा. प्र. म. ख.; वृ. नि. र. । क्षय.)

बला विदारी श्रीपर्णी बहुपुत्री पुनर्नवा ।
पयसा नित्यमभ्यस्ताः शमयन्ति क्षतक्षयम् ॥

खरैटी, विदारीकन्द, खम्भारीकी छाल, शतावर और पुनर्नवा को दूधमें पीसकर पीनेसे क्षत क्षयका नाश होता है ।

(४५५०) **बलादिकल्कः** (४)

(वृ. नि. र. । स्त्रीरो.)

बलाचांशुमतीद्राक्षा उशीरं तिक्तरोहिणी ।
लवणं चन्दनं कृष्णा सारिवा लोध्रसंयुता ॥
एतत्कल्कं समधुकं पाययेत्तन्दुलाम्बुना ।
त्र्यहात्प्रशमयत्येष योषितां पैत्तिकारुजः ॥

खरैटी, शालपर्णी, मुनक्का, खस, कुटकी, सेंधानमक, लाल चन्दन, पीपल, सारिवा, लोध और मुलैठी समानभाग लेकर सबको एकत्र पीसकर चावलोंके धोवनके साथ पिलानेसे स्त्रियोंका पित्तज प्रदर ३ दिनमें ही नष्ट हो जाता है ।

(४५५१) **बलादिक्वाथः** (१)

(व. से. । वाता.)

बलामूलशृतं तोयं सैन्धवेन समन्वितम् ।
बाहुशोषगते वायौ मन्यास्तम्भे च शस्यते ॥

खरैटीकी जड़के काथमें सेंधा नमक मिलाकर पीनेसे बाहुशोष और मन्यास्तम्भ का नाश होता है ।

(४५५२) **बलादिक्काथः** (२)

(वृ. मा.; व. से.; वृ. नि. र.; ग. नि.; यो. र.। कासा.; वृ. यो. त. । त. ७८)

बलाद्विबृहतीद्राक्षावासाभिः कथितं जलम् ।
पित्तकासापहं पेयं शर्करामधुयोजितम् ॥

खरैटी, दोनों प्रकारकी कटेली, मुनक्का और बासेके काथमें शहद तथा मिश्री मिलाकर पीनेसे पित्तज खांसी नष्ट होती है ।

(१० तोले काथमें १।-१। तोला शहद और मिश्री मिलाने चाहियें ।)

(४५५३) **बलादिक्काथः** (३)

(वं. से. । ज्वरा.)

बलाभार्ग्यमृतैरण्डचन्दनोशीर पर्पटैः ।
उपकुल्याब्दहूीबेरैः कषायश्च पिबेत्ततः ॥
पर्वभेदशिरःकम्पं वातपित्तज्वरं जयेत् ॥

खरैटी, भरंगी, गिलोय, अरण्डकी जड़, लालचन्दन, खस, पित्तपापड़ा, पीपल, नागरमोथा और सुगन्धबालाका काथ पीनेसे पर्वभेद (जोड़ों का टूटना), शिर कांपना और वातपित्तज्वर का नाश होता है ।

(४५५४) **बलादिक्काथः** (४)

(वृ. यो. त. । त. ९४; वृ. मा.; व. से.; यो. र. । शूला.)

बलापुनर्नवैरण्डबृहतीद्वयगोक्षुरैः ।
क्राथः सहिङ्गुलवणः पीतो वातरुजं जयेत् ॥

खरैटी, पुनर्नवा (बिसखपरा), अरण्डकी जड़, दोनों प्रकारकी कटेली और गोखरुके काथमें सेंधा नमक और हींग मिलाकर पीनेसे वातजशूल नष्ट होता है ।

(४५५५) **बलादिक्काथः** (५)

(भा. प्र.; व. से. । वातव्याधि.)

मूलं बलायास्त्वथ पारिभद्रं
तथात्मगुप्तास्वरसं पिबेद्वा ।
नस्यन्तु यो माषरसेन
दद्यान्मासादसौ वज्रसमानबाहुः ॥

खरैटीकी जड़ और नीमकी छालका अथवा कौंचका स्वरस पीने और उड़दके काथकी नस्य लेनेसे १ मासमें बाहुशोष रोग नष्ट होकर बाहु वज्रके समान दृढ़ हो जाता है ।

(४५५६) **बलादिक्काथः** (६)

(ग. नि. । ज्वरा.)

बलापटोलत्रिफलायष्ट्याह्वानां वृषस्य च ।
काथो मधुयुतः पीतो हन्ति पित्तकफज्वरम् ॥

खरैटी, परवल, हर्र, बहेड़ा, आमला, मुलैठी और बासेके काथमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्त-कफज ज्वर नष्ट होता है ।

(४५५७) **बलादिक्षीरम्**

(व. से. । अतिसारा.)

बलाविश्वभृतं क्षीरं गुडतैलानु योजितम् ।
दीप्ताग्निं पाययेत्प्रातः सुखदं वर्चसःक्षये ॥

यदि अतिसारमें मलक्षय हो गया हो और रोगीकी अग्नि दीप्त हो तो उसे खरैटी और सोंठसे पकाये हुवे दूधमें गुड़ और तैल मिलाकर पिलाना चाहिये ।

(४५५८) **बलासिद्धक्षीरम्**

(हा. स. । तृ. स्था. अ. १०)

बलाश्वदंष्ट्रामलकीफलानि
द्राक्षा मधूकं मधुयष्टिकानाम् ।
सिद्धं पयः पानमिदं हितं स्यात्
पित्ते सरक्ते मनुजस्य शान्त्यै ॥

खरैटीकी जड़, गोखरु, आमला, मुनक्का, महुवा और मुलैठीसे सिद्ध दूध पीनेसे रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है ।

(समान भाग मिश्रित ओषधियां ५ तोले, दूध १ सेर, पानी ४ सेर । सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकावें ।)

(४५५९) **बल्यमहाकषायः**

(च. सं. । सूत्रस्थान अ. ४)

एन्द्र्यृषभ्यतिरसर्ष्यप्रोक्तापयस्याश्वगन्धास्थिरारोहिणीबलातिबला इति दशेमानि बल्यानि भवन्ति ।

इन्द्रायन, कौंच, शतावर, माषपर्णी, विदारीकन्द (या क्षीरकाकोली), असगन्ध, शालपर्णी, कुटकी, बला (खरैटी) और अतिबला (कंघी) । इन दश चीज़ोंके योगको '**बल्यमहाकषाय**' कहते हैं ।

(४५६०) **बाकुचिकाप्रयोगः**

(वै. म. । पटल ११)

कलित्वक्साधिते तोये वासिता निशि बाकुची ।
पिष्ट्वा तैलेन पीता च श्वित्रशत्रुविनशिनी ॥

रात्रिको बहेड़ेकी छालके काथमें बावचीको भिगोकर रख दें और उसे प्रातःकाल पीसकर तैलमें मिलाकर रोगीको पिलावें ।

यह प्रयोग श्वेत कुष्ठको नष्ट करता है ।

(४५६१) **बाकुचीबीजयोगः**

(ग. नि. । कुष्ठा.; वृ. यो. त. । त. १२०)

बिभीतकत्वङ्मलयूजटानां
क्वाथेन पीतं गुडसंयुतेन ।
आवल्गुजं बीजमपाकरोति
श्वित्राणि कुष्ठान्यपि पुण्डरीकम् ॥

बहेड़ेकी छाल और कठूमर (कठगूलर)की जडकी छालके क्वाथमें गुड़ मिलाकर उसमें बावचीके बीजोंका कल्क डालकर पीनेसे श्वेतकुष्ठ और पुण्डरीक कुष्ठका नाश होता है ।

(४५६२) **बालकादिकल्कः**

(ग. नि. । अर्श.)

बालकं शृङ्गबेरं च पाययेत्तण्डुलाम्बुना ।
मधुयुक्तं प्रशमयेदर्शः पित्तसमुद्भवम् ॥

सुगन्धबाला और सोंठको चावलोंके पानीमें पीसकर उसमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्तज अर्श का नाश होता है ।

(४५६३) **बिभीतकपुटपाकः**

(शा. ध. । ख. २ अ. १; वृ. मा. । कासा.; ग. नि. । कास.; वै. र. । ज्वर.)

बिभीतकं घृताभ्यक्तं गोशकृत्परिवेष्टितम् ।
स्विन्नमग्नौ हरेत्कासं ध्रुवमास्यविधारितम् ॥

बहेड़ेके फलोंको घीमें तर करके उनके ऊपर गायका गोबर लपेट दें और फिर उन्हें कण्डोंकी

मन्दाग्निमें दबा दें। जब वे अच्छी तरह स्वेदित हो जायं तो निकालकर उनकी छाल उतार लें।

इसमें से जरा जरासा टुकड़ा मुंहमें रखकर रस चूसनेसे खांसी नष्ट होती है।

(४५६४) बिभीतकादिकाथः

(ग. नि. । ज्वर.)

बिभीतो व्याधिघातश्च कटुका त्रिफला निशा।
क्राथो हन्ति तृषां दाहं ज्वरं च विषमं द्रुतम् ॥

बहेड़ा, अमलतास, कुटकी, हर्र, बहेड़ा, आमला और हल्दीका काथ तृषा, दाह और विषमज्वरको नष्ट करता है।

(४५६५) बिभीतकादिकाथः

(वृ. मा.; व. से.; वृ. नि. र. । नेत्र.; यो. र. । नेत्र.)

बिभीतकशिवाधात्रीपटोलारिष्टवासकैः।
काथो गुग्गुलुना पेयः शोफशूलाक्षिपाकहा ॥

बहेड़ा, हर्र, आमला, परवल, नीमकी छाल और बासेके काथमें गूगल मिलाकर पीनेसे शोथ और शूलयुक्त नेत्रपाक नष्ट हो जाता है।

(४५६६) बिल्वपञ्चककाथः

(भै. र. । ज्वरा.)

शालपर्णी पृश्निपर्णी बला बिल्वं सदाडिमम्।
बिल्वपञ्चकमित्येतत् काथं कृत्वा प्रदापयेत् ॥
अतिसारे ज्वरे छर्द्यां शस्यते बिल्वपञ्चकम् ॥

शालपर्णी, पृष्टपर्णी, खरैटी, बेलछाल और अनारकी बकलीका काथ अतिसार, ज्वर और छर्दिका नाश करता है।

(४५६७) बिल्वपत्ररसादियोगः

(वृ. मा.; व. से., यो. र.; वृ. नि. र. । शोथा.)

बिल्वपत्ररसं पूतं सोषणं श्वयथौ त्रिदोषजे।
विट्सङ्गे चैव दुर्नाम्नि विदध्यात्कामलासु च ॥

बेलपत्रके रसको छानकर उसमें काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर पीनेसे त्रिदोषज शोथ, मलावरोध, अर्श और कामलाका नाश होता है।

(४५६८) बिल्वमूलादिकषायः

(ग. नि. । मूत्राघात.)

बिल्वारग्वधमूलानां मूत्रकृच्छ्री दिनत्रयम्।
शृतं शीतं पिबेत्सम्यक्कषायं सम्प्रसाधितम् ॥

बेल और अमलतासकी जड़के काथको ठण्डा करके ३ दिन तक पीनेसे मूत्रकृच्छ्र रोग नष्ट हो जाता है।

(४५६९) बिल्वमूलादिकाथः

(व. से. । बाल.)

बिल्वमूलकषायेण लाजाश्चैव सशर्कराः।
आलोड्य पाययेद्बालं छर्द्यतीसारनाशनम् ॥

बेलकी जड़की छालके काथमें धानकी खीलोंका चूर्ण और खांड मिलाकर उसे अच्छी तरह आलोडित करके पिलाने से बालकोंकी छर्दि और अतिसारका नाश होता है।

(४५७०) बिल्वशलाटुयोगः

(ग. नि.; वृ. मा. । ग्रहण्य.)

श्रीफलशलाटुकल्को नागरचूर्णेन मिश्रितः सगुडः।
ग्रहणीगदमत्युग्रं तक्रभुजां सम्मतो जयति ॥

बेलगिरीके कल्कमें सोंठका चूर्ण और गुड़ मिलाकर सेवन करने तथा तक्र पर रहनेसे भयङ्कर ग्रहणी रोग भी नष्ट हो जाता है।

(४५७१) **बिल्वादिकषायः**

(ग. नि.; व. से.; वृ. नि. र.; यो. र.। अतिसारा.)

बिल्वशक्रयवाम्भोदबालकातिविषाकृतः।
कषायो हन्त्यतीसारं सामं पित्तसमुद्भवम्॥

बेलगिरी, इन्द्रजौ, नागरमोथा, सुगन्धबाला और अतीसका क्राथ आमयुक्त पित्तातीसारको नष्ट करता है।

(४५७२) **बिल्वादिक्वाथः** (१)

(व. से. । अतीसारा.)

बिल्वं वत्सकबीजानि पाठाहिङ्गुशिवान्विता।
वातश्लेष्मातिसारेषु कषायं पाचनं पिबेत्॥

बेलगिरी, इन्द्रजौ, पाठा और हर्रके काथमें हींग डालकर पीनेसे वातकफज अतिसारका नाश होता है। यह काथ पाचक है।

(४५७३) **बिल्वादिकाथः** (२)

(यो. र.; वृ. नि. र. । बालरो.)

अग्निना स्वेदयेद्वापि दाहयेद्वा शलाकया।
जठरे बिन्दुकाकारं पृष्ठभागे यथा ध्रुवम्॥
बिल्वमूलकं नीरदो वृकी
श्रैफलं तथा सिंहिकाद्वयम्।
गौडमिश्रितं क्वथितं समं
पाययेच्छिशुं फुल्लिकापहम्॥

उत्फुल्लिका रोगमें बालकके पेट पर सेक करनी चाहिये तथा उसके पेट और पीठपर गर्म सलाईसे एक बिन्दूके बराबर दाग देना चाहिये। एवं बालकको बेलकी जड़की छाल, नागरमोथा, पाठा, हर्रे, बहेड़ा, आमला और छोटी तथा बड़ी कटेलीके काथमें गुड़ मिलाकर पिलाना चाहिये।

(४५७४) **बिल्वादिक्वाथः** (३)

(हा. स. । तृ. स्था. अ. ७)

बिल्वाग्निमन्थवृषचित्रकनागराश्च
एरण्डहिङ्गु सह सैन्धवकं समांशम्।
क्वाथो निहन्ति कफजोद्भवशूलसङ्घं
सद्यस्तथैव जठरानलवर्धनं च॥

बेलछाल, अरणी, बासा, चीता, सोंठ, अरण्डकी जड़, हींग और सेंधा नमकका क्काथ सेवन करनेसे कफजशूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता तथा अग्नि दीप्त होती है।

(४५७५) **बिल्वादिक्वाथः** (४)

(च. सं. । चिकि. स्थान अ. १९)

बिल्वं कर्कटिका मुस्तमभया विश्वभेषजम्।
वचा विडङ्गं भूतीकं धान्यकं देवदारु च॥
कुष्ठं सातिविषा पाठा चव्यं कटुकरोहिणी।
पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रकं हस्तिपिप्पली॥
योगाः श्लोकार्धविहिताश्चत्वारस्तान् प्रयोजयेत्।
शृताञ्श्लेष्मातिसारेषु कायाग्निबलवर्धनान्॥

(१) बेलगिरी, काकड़ासिंगी, नागरमोथा, हर्र और सोंठ।

(२) बच, बायबिड़ंग, अजवायन, धनिया और देवदारु।

(३) कूठ, अतीस, पाठा, चव, कुटकी।

(४) पीपल, पीपलामूल, चीतामूल और गजपीपल । ये चारों क्वाथ कफातिसारका नाश और अग्नि तथा बलकी वृद्धि करते हैं ।

(४५७६) **बिल्वादिक्काथः** (५)

(व. से.; च. द.; भा. प्र.; बालरो.; यो. चि. । क्वाथा.; यो. त. । त. ७७)

बिल्वं च पुष्पाणि च धातकीनां
जलं सलोध्रं गजपिप्पली च ।
क्वाथावलेहौ मधुना विमिश्रौ
बालेषु योज्यावतिसारितेषु ॥

बेलगिरी, धायकेफूल, सुगन्ध बाला, लोध और गजपीपलके क्वाथमें शहद मिलाकर पिलाने या इनके चूर्णको शहदमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका अतिसार नष्ट होता है ।

(४५७७) **बिल्वादिक्काथः** (६)

(भा. प्र.; यो. र. । छर्दिरो.; वृ. यो. त. । त. ८३; शा. ध. । द्वि. ख. अ. २)

बिल्वत्वचो गुडूच्या वा क्वाथः क्षौद्रेण संयुतः ।
छर्दिं त्रिदोषजां हन्ति पर्पटः पित्तजां तथा ॥

बेलकी छाल या गिलोयके क्वाथमें शहद मिलाकर सेवन करनेसे त्रिदोषज छर्दि, और पितपापड़ेके क्वाथमें शहद मिलाकर पिलाने से पित्तज छर्दि नष्ट होती है ।

(४५७८) **बिल्वादिक्काथः** (७)

(शा. ध. । ख. २ अ. २)

बिल्वोग्निमन्थः स्योनाकः काश्मरी पाटला तथा ।
क्वाथ एषां जयेन्मेदोदोषं क्षौद्रेण संयुतः ॥

बेलछाल, अरणीकी छाल, अरलु और खम्भारी तथा पाढलकी छाल के क्वाथमें शहद मिलाकर पिलानेसे मेदविकार नष्ट होता है ।

(४५७९) **बिल्वादिक्काथः** (८)

(व. से.; वृ. मा.; वृ. नि. र. । तृषा.)

बिल्वाढकीधातकीपञ्चकोल-
दर्भेषु सिद्धं कफजां निहन्ति ।
हितं भवेच्छर्दनमेव चात्र
तप्तेन निम्बप्रसवोदकेन ॥

बेलछाल, अरहर, धायके फूल, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और दाभका क्वाथ सेवन करनेसे कफज तृषा नष्ट होती है ।

कफज तृषामें नीमके फूलोंका उष्ण क्वाथ पिलाकर वमन कराना भी हितकारक है ।

(४५८०) **बिल्वादिक्काथः** (९)

(वृ. नि. र.; वृ. मा.; ग. नि.; ब. से. । अतिसारा.; यो. र. । शोफातिसार.)

बिल्वचूतास्थिनिर्यूहः पीतः सक्षौद्रशर्करः ।
निहन्याच्छर्द्यतीसारं वैश्वानर इवाहुतिम् ॥

बेलगिरी और आमकी गुठलीके क्वाथमें शहद और खांड मिलाकर पीनेसे छर्दि और अतिसार तुरन्त नष्ट हो जाते हैं ।

(४५८१) **बिल्वादिक्काथः** (१०)

(वृ. नि. र.; । अजीर्णा.)

बिल्वनागरनिःक्वाथो हन्याच्छर्दिविशूचिकाम् ।
बिल्वनागरकैडर्यक्वाथः स्यादधिको गुणैः ॥

बेलगिरी और सोंठका क्वाथ छर्दि और विसू-

चिकाको नष्ट करता है । तथा बेलगिरी, सोंठ और कायफलका काथ छर्दि और विसूचिकामें इससे भी अधिक गुणकारी है ।

(४५८२) बिल्वादिक्काथः (११)

(वै. र.; यो. र.; वृ. नि. र.; व. से. । आत-सार.; वृ. यो. त. । त. ६५)

बिल्वबालकभूनिम्बगुडूचीधान्यनागरैः ।
कुटजाब्दयुतः काथो ज्वरातीसारशूलनुत् ॥

बेलगिरी, सुगन्धबाला, चिरायता, गिलोय, धनिया, सोंठ, कुड़ेकी छाल और नागरमोथेका काथ ज्वरातिसार तथा शूलको नष्ट करता है ।

(४५८३) बिल्वादिक्काथः (१२)

(ग. नि. । ज्वरा.; भै. र. । ज्वरा.)

बिल्वादिपञ्चमूली च गुडूच्यामलकं तथा ।
कुस्तुम्बरुयुतो ह्येष कषायो वातिके ज्वरे ॥

बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरनीकी छाल तथा गिलोय, आमला और कुस्तुम्बरु (नैपाली धनिये) का काथ वातज्वरको नष्ट करता है ।

(४५८४) बिल्वादिक्काथः (१३)

(यो. र. । योनिरो.; व. से. । स्त्री.)

बिल्वमार्कवजं बीजकल्कं मद्येन पाययेत् ।
तेन योनिगतं शूलमाशु शाम्यति योषिताम् ॥

बेल और भंगरेके बीजोंको पीसकर मद्यके साथ पीनेसे स्त्रियोंका योनिशूल तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(४५८५) बिल्वादिक्काथः (१४)

(यो. र.)

बिल्वाग्निमन्थपकं वा पाटल्या नागरेण वा ।
सिद्धमम्बु पिबेच्छीतं गर्भिणी वातरोगनुत् ॥

बेलछाल और अरणीका अथवा पाढल और सोंठका काथ ठण्डा करके पिलानेसे गर्भिणीके वातजरोग नष्ट होते हैं ।

(४५८६) बिल्वादिक्षीरम्

(व. से. । ज्वरा.)

साधितं बिल्वपेशीभिर्मूलेनाऽमण्डकस्य च ।
सद्यो हन्ति पयः पीतं ज्वरं सम्परिवर्त्तिकम् ॥

बेलगिरी और अरण्डकी जड़से सिद्ध दूध पिलानेसे जीर्णज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(दोनों ओषधियां १।-१। तोला, गोदुग्ध ४० तोले, पानी २ सेर । सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकाकर छान लें ।)

(४५८७) बिल्वादियोगः

(वृ. नि. र.; व. से.; यो. र. । अतिसारा.)

बिल्वं छागपयः सिद्धं सितामोचरसान्वितम् ।
कलिङ्गचूर्णसंयुक्तं रक्तातीसारनाशनम् ॥

बेलगिरीसे बकरीका दूध पकाकर उसमें मिश्री और मोचरस तथा इन्द्रजौका चूर्ण मिलाकर पीनेसे रक्तातिसार नष्ट होता है ।

(बेलगिरी २॥ तोले । दूध ४० तोले । पानी २ सेर । सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकाकर छान लें । मोचरस और इन्द्रजौका चूर्ण १-१ माशा ।)

(४५८८) **बिल्वादिसिद्धपयः**

(व. से. । ग्रह.; यो. र. । ग्रहण्य.)

बिल्वाब्दशक्रयवबालकमोचसिद्ध-
माजं पयः पिबति यो दिवसत्रयञ्च ।
सोऽतिप्रवृद्धचिरजं ग्रहणीविकारं
शोषं सशोणितमसाध्यमपि क्षिणोति ॥

बेलगिरी, नागरमोथा, इन्द्रजौ, सुगन्धबाला और मोचरस से सिद्ध बकरीका दूध तीन दिन तक पीनेसे अत्यन्त प्रवृद्ध और रक्तयुक्त पुरानी ग्रहणी भी नष्ट हो जाती है।

(प्रत्येक ओषधि १ तोला । दूध १ सेर । पानी ४ सेर । सबको मिलाकर पानी जलने तक पकावें)

(४५८९) **बिल्वादिस्वेदः**

(व. से. । कर्ण.)

बिल्वैरण्डार्कवर्षाभूदधित्थोन्मत्तशिग्रुभिः ।
वस्तगन्धाश्वगन्धाभ्यां तर्कारीयवरेणुभिः ॥
आरनालश्रृतैरेभिर्नाडीस्वेदः प्रयोजितः ।
कफवातसमुत्थानं कर्णशूलं निवारयेत् ॥

बेलछाल, अरण्डकी जड़, अर्कमूल, पुनर्नवा (साठी), कैथ, धतूरा, सहंजनेकी छाल, अजमोद, असगन्ध, अरणी, इन्द्रजौ और रेणुका समान भाग लेकर कूटकर सबको ८ गुनी कांजी में पकावें। जब आधा भाग कांजी शेष रहे तो उसे छानकर उससे कानको नाडी स्वेद दें। (कानमें रबर आदिकी नलीकी सहायता से उसकी भाप पहुंचावें।)

इससे कफवातज कर्णशूल नष्ट हो जाता है।

(४५९०) **बिल्वाद्याश्च्योतनम्**

(यो. र.)

बिल्वादिपञ्चमूलेन बृहत्यैरण्डशिग्रुभिः ।
क्वाथश्चाऽऽश्च्योतनं कोष्णो वाताभिष्यन्दनाशनः ॥

बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणीकी छाल तथा कटेली, अरण्डमूल और सहंजनेकी छालके क्वाथको अत्यन्त स्वच्छ वस्त्रसे छानकर उसके मन्दोष्ण रहते हुवे उसकी बूंदें आंखमें टपकावें।

इससे वाताभिष्यन्द नष्ट होता है।

(४५९१) **बीजपूरकादिकषायः**

(ग. नि. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । सन्निपात.)

बीजपूरकबिल्वाश्मभेदकं बृहतीद्वयम् ।
एकैकांशमथैरण्डमूलं चाष्टगुणीकृतम् ॥
क्वाथो गोमूत्रसंयुक्तो बिडसौवर्चलान्वितः ।
हृद्वस्तिशूले सानाहे त्वभिन्यासज्वरे तथा ॥

बिजौरेकी जड़की छाल, बेलछाल, पखानभेद, और दोनों प्रकारकी कटेली १-१ भाग तथा अरण्डमूल ८ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर कूट लें।

इनके क्वाथमें गोमूत्र और बिडनमक तथा सञ्चल (काला नमक) मिलाकर पिलानेसे हृदय और वस्तीकी पीड़ा, अफारा और अभिन्यास ज्वर नष्ट होता है।

(४५९२) **बीजपूरमूलयोगः**

(ग. नि. । मूत्रा.)

शीतेन वारिणा घृष्टा बीजपूरस्य मूलिका ।
पीता पातयते वेगान्मेहनान्मूत्रशर्कराम् ॥

बिजौरे नीबूकी जड़को शीतल जलमें घिसकर पीनेसे शर्करा शीघ्र ही पेशाबके साथ निकल जाती है।

(४५९३) **बीजपूररसयोगः**

(वृ. नि. र.। कर्ण.)

स्वर्जिकाचूर्णसंयुक्तं बीजपूररसं क्षिपेत्।
कर्णस्रावरुजादौ तु प्रशस्तं नात्र संशयः॥

बिजौरेके रसमें सज्जीखार मिलाकर कानमें डालनेसे कर्णस्राव और कर्णपीड़ा आदिका अवश्य नाश हो जाता है।

(४५९४) **बीजपूररसयोगः**

(ग. नि.। शूला.)

सुपक्वबीजपूरस्य रसः सैन्धवमिश्रितः।
पीतः पथ्याशिनो हन्ति हृच्छूलमतिदारुणम्॥

बिजौरे नींबूके रसमें सेंधा नमक मिलाकर पीने और पथ्य पालन करनेसे दारुण हृच्छूल भी नष्ट हो जाता है।

(४५९५) **बीजपूररसादियोगः**

(ग. नि.। गुल्मा.)

बीजपूररसो हिङ्गु सैन्धवं विडपूर्वकम्।
लवणं दाडिमं शुक्तं सितया वातगुल्मजित्॥
अम्लवेतसनिर्यासो लवणं विडपूर्वकम्।
रामठं स्वर्जिकाक्षारस्तक्रपीतं च गुल्महृत्॥

बिजौरेके रसमें हींग, सेंधा और बिडनमक मिलाकर पीनेसे या सिरकेमें सेंधानमक, अनारका रस और मिश्री मिलाकर पीनेसे वातज गुल्म नष्ट होता है।

अम्लवेतके क्वाथमें बिडनमक मिलाकर पीने या हींग और सज्जीखारको तक्रके साथ सेवन करने से भी गुल्म नष्ट हो जाता है।

(४५९६) **बीजपूरस्वरसयोगः**

(शा. ध.। खं. २ अ. १; यो. र.। शूला.)

बीजपूररसः पानान्मधुक्षारयुतो जयेत्।
पार्श्वहृद्बस्तिशूलानि कोष्ठवायुं च दारुणम्॥

बिजौरे नीबूके रसमें शहद और जवाखार मिलाकर पीनेसे पसली, हृदय और बस्तिका शूल तथा कोठेकी दुस्साध्य वायुका नाश होता है।

(४५९७) **बीजपूरादिपाचनकषायः**

(शा. ध.। अ. २.; वृ. यो. त.। त. ५९)

बीजपूरशिवापथ्यानागरग्रन्थिकैः शृतम्।
सक्षारं पाचनं श्लेष्मज्वरे द्वादशवासरे॥

बिजौरे नीबूकी जड़की छाल, आमला, हर्र, सोंठ और पीपलामूलके क्वाथमें जवाखार मिलाकर कफज्वरमें बारहवें दिन पीना चाहिये। यह क्वाथ ज्वरपाचक है।

(४५९८) **बीजपूरादिपुटपाकः**

(यो. र.। छर्दि.; शा. ध.। खं. २ अ. १)

बीजपूराम्रजम्बूनां पल्लवानि जटाः पृथक्।
विपचेत् पुटपाकेन क्षौद्रयुक्तश्च तद्रसः॥
छर्दि निवारयेद् घोरां सर्वदोषसमुद्भवाम्॥

बिजौरा, आम और जामनमें से किसी एकके पत्तों या छालको पुटपाक विधिसे पकाकर उसका रस निकालें।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे सर्वदोषज भयङ्कर छर्दि भी नष्ट हो जाती है।

(पुटपाक करनेकी विधि भारत भै. र. भाग १ में पृष्ठ ३५२ पर देखिये ।)

(४५९९) बृंहणीयमहाकषायः

(च. सं. । सूत्रस्था. अ. ४)

क्षीरिणी राजक्षवकं बला काकोली क्षीरकाकोली वाट्यायनी भद्रौदनी भारद्वाजी पयस्यर्ष्यगन्धा इति दशेमानि बृंहणीयानि भवन्ति ॥

क्षीरलता, दुद्धी, खरैटी, काकोली, क्षीरकाकोली, महाबला, नागबला (गुलशकरी), बनकपास, बिदारीकन्द और विधारा ।

इन दश ओषधियोंका समूह बृंहणीयमहा कषाय कहलाता है । अर्थात वीर्य वर्द्धक ओषधियोंमें ये ओषधियां मुख्य हैं ।

(४६००) बृहत्यादिक्काथः (१)

(वं. से.; वृ. मा.; वृ. नि. र. । मुखरो.)

बृहतीभूमिकदम्बकपञ्चाङ्गुलकण्टकारिकाक्वाथः । गण्डूषस्तैलयुतः कृमिदन्तकवेदनोपशमः ॥

बनभंटा, भूमिकदम्ब, अरण्डमूल और कटेली के काथमें तैल मिलाकर उसके कुल्ले करनेसे कृमिदन्त की पीड़ा नष्ट होती है ।

(४६०१) बृहत्यादिक्काथः (२)

(वृ. मा. । शूला.; यो. र. । शूला.)

बृहत्यौ गोक्षुरैण्डकुशकाशेक्षुवालिकाः । पीताः पित्तभवं शूलं सद्यो हन्युः सुदारुणम् ॥

छोटी और बड़ी कटेली, गोखरु, अरण्डकी जड़, कुश, कांस और तालमखाना समान भाग लेकर काथ बनाकर पिलानेसे भयङ्कर पित्तज शूल भी तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(४६०२) बृहत्यादिक्काथः (३)

(ग. नि.; वृ. यो. त. । त. १००; वृ. नि. र.; व. से.; वृ. मा.; यो. र. । मूत्रकृच्छ्र)

बृहतीधावनीपाठायष्टीमधुकालिङ्गकान् । पक्त्वा काथं पिबेन्मर्त्यो कृच्छ्रे दोषत्रयोद्भवे ॥

कटेली, पृश्निपर्णी, पाठा, मुलैठी और इन्द्र-जौका काथ त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्रको नष्ट करता है ।

(४६०३) बृहत्यादिक्काथः (४)

(च. सं. । अ. ३)

बृहत्यौ वत्सकं मुस्तकं देवदारु महौषधम् । कोलवल्ली च योगोऽयं सन्निपातज्वरापहम् ॥

छोटी और बड़ी कटेली, कुड़ेकी छाल, नागर मोथा, देवदारु, सोंठ और गजपीपल (या चव) का काथ सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है ।

(४६०४) बृहत्यादिक्काथः (५)

(व. से.; ग. नि. । ज्वरा.)

बृहती पौष्करं भार्ङ्गी शठी शृङ्गी दुरालभा । पक्त्वा पानं प्रशंसन्ति श्लेष्मा तेनोपशाम्यति ॥

कटेली, पोखरमूल, भरंगी, शठी (कचूर), काकड़ासिंगी और धमासा । इनका काथ कफको नष्ट करता है । यह काथ ज्वरमें उपयोगी है ।

(४६०५) बृहत्यादिगणः

(भा. प्र. । ज्वरा; व. से.; वृ. मा.; च. द.; ग. नि. । ज्वरा.; च. सं. । अ. ३)

बृहती पौष्करं भार्ङ्गी शठी शृङ्गी दुरालभा । वत्सकस्य तु बीजानि पटोलं कटुरोहिणी ॥

बृहत्यादिर्गणः शस्तः सन्निपाते कफोत्तरे ।
श्वासादिषु च सर्वेषु हितः सोपद्रवेष्वपि ॥

कटेली, पोखरमूल, भरंगी, कचूर, काकड़ासिंगी, धमासा, इन्द्रजौ, परवल और कुटकी । इन ओषधियोंके समूहको 'बृहत्यादिगण' कहते हैं । इनका काथ कफप्रधान सन्निपात तथा श्वासादि में हितकर है ।

(४६०६) **बृहत्यादिगणः** (२)

(सु. । सूत्रस्थान अ. ३८)

बृहतीकण्टकारिका कुटजफलपाठा मधुकं चेति ।
पाचनीयो बृहत्यादिर्गणः पित्तनिलापहः ॥
कफारोचकहृल्लासमूत्रकृच्छ्ररुजापहः ॥

बड़ी कटेली, छोटी कटैली, इन्द्रजौ, पाठा और मुलैठी । इन ओषधियों के समूहको 'बृहत्यादिगण' कहते हैं । इनका काथ पित्त, वायु, कफ, अरुचि, हल्लास (जी मचलाना) और मूत्रकृच्छ्रको नष्ट करता है ।

(४६०७) **ब्राह्म्यादिक्काथः**

(वृ. नि. र.; यो. र. । सन्निपात.)

ब्राह्मीवचाभीरुफलत्रिकेण
तिक्ताबलारग्वधतिक्तकेन ।
निम्बाह्वकोशातकिहारहूरा
द्विपञ्चमूलीभिरसौ कषायः ॥
पीतो हि चित्तभ्रमसन्निपातं
निहन्ति रुग्दाहमपि प्रभूतम् ॥

ब्राह्मी, बच, खस, हर्र, बहेड़ा, आमला, कुटकी, खरैटी, अमलतास, चिरायता, नीमकी छाल, कड़वी तोरी, मुनक्का और दशमूलका कषाय पिलानेसे चित्तभ्रम तथा रुग्दाह नामक सन्निपात नष्ट होते हैं ।[1]

(४६०८) **ब्राह्म्यादिस्वरसयोगः**

(वृ. मा.; यो. र.; वृ. नि. र. । उन्माद.; शा. ध. सं. । खं. २ अ. १)

ब्राह्मीकूष्माण्डीफलषड्ग्रन्थाशङ्खपुष्पिकास्वरसाः
दृष्टा उन्मादहराः पृथगेते कुष्ठमधुमिश्राः ॥

ब्राह्मी, पेठा, बच, और शंखपुष्पी । इनमें से किसी एकके रसमें कूठका चूर्ण और शहद मिलाकर पिलानेसे उन्माद नष्ट होता है ।

(स्वरस ५ तोले । कूठका चूर्ण १॥ माशा । शहद २ तोले ।)

[1] योगरत्नाकरमें इस प्रयोगमें नागरमोथा अधिक है ।

इति बकारादिकषायप्रकरणम् ।

अथ बकारादिचूर्णप्रकरणम्।

(४६०९) बदरचूर्णयोगः

(रा. मा. । स्त्री.)

समघृतगुडभागं श्लक्ष्णकर्कन्धुचूर्णं
प्रदरशमनमुक्तं खाद्यमानं वधूनाम् ॥

बेरोंके बारीक चूर्णमें समान भाग गुड़ और घी मिलाकर सेवन करानेसे स्त्रियोंका प्रदररोग नष्ट होता है।

(४६१०) बदराद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । परिशि. चू.)

बदरत्रिफलानां च व्योषस्य च पलद्वयम्।
कर्पूरकर्षौ लाजानां पलद्वादशकं भवेत् ॥
एलात्वक्पत्रकाणां तु पलं स्यार्द्धशरोचना।
पलाष्टका वेतसाम्लश्चतुष्पलमुदाहृतः ॥
चूर्णं द्विगुणखण्डं तु हृद्यं वमिहरं परम्।
यक्ष्माणं रक्तपित्तं च ज्वरं च कासं
च नाशयेत् ॥

बेर, हर्रं, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, और पीपल १०-१० तोले, कपूर १। तोला, धानकी खील ६० तोले तथा इलायची, दालचीनी और तेजपात ५-५ तोले, बंसलोचन ४० तोले और अम्लबेत २० तोले तथा खांड इन सबसे दो गुनी लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण हृदयके लिये हितकारी है। तथा वमन, राजयक्ष्मा, रक्तपित्त, ज्वर और खांसीको नष्ट करता है।

(मात्रा—६ माशे)

(४६११) बन्दाकयोगः

(वै. म. र. । पटल १)

बन्दाको बिल्वभवस्तक्रेण घृतेन वा भगे पीतः।
विषमज्वरस्य विकृतिं जयेन्निःशेषमतिविषमाम् ॥

बेलके बन्देके चूर्णको तक्र या घृतके साथ सेवन करनेसे विषमज्वरके कष्टसाध्य विकार भी नष्ट हो जाते हैं।

(४६१२) बब्बूरादिप्रयोगः

(व. से. । रसाय.)

आभाश्च सोमराजीश्च समभागविचूर्णिताम्।
नरः क्षीरेण सम्पीत्वा स कृशः स्थूलतां व्रजेत् ॥
देहकम्पे च शोषे च योगमेतत् प्रयोजयेत्।
मासमात्रोपयोगेन मतिमाञ्जायते नरः ॥
मेधावी स्मृतिमांश्चैव वलीपलितनाशनः ॥

कीकर (बबूल) की फली और बावची समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे दूधके साथ सेवन करनेसे कृश पुरुष स्थूल हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह चूर्ण देहकम्प और शोष रोगमें भी हितकारी है।

इसे लगातार १ मास तक सेवन करनेसे मनुष्य बुद्धिमान्, स्मृतिमान्, मेधावी और बलिपलित रहित हो जाता है।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक।)

(४६१३) **बब्बूलादियोगः**

(वृ. नि. र. । अति.)

बब्बूलपत्रं सम्पिष्टं रात्रौ जीरद्वयं हितम् ।
कर्षमात्रं भवेद्भक्ष्यं कफातीसारनाशनम् ॥

बबूलके पत्ते और दोनों जीरे समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसमेंसे नित्य प्रति रात्रिके समय १। तोला चूर्ण सेवन करनेसे कफातिसार नष्ट होता है ।

(अनुपान—उष्ण जल ।)

(४६१४) **बलादिचूर्णम्** (१)

(व. से. । श्लीपद.)

क्षीरेण प्रातरुत्थाय पिबेद्यस्तु बलाद्वयम् ।
सक्षीरं श्लीपदाज्जन्तुरसाध्यादपि मुच्यते ॥

प्रातःकाल बला और अतिबला (खरैटी तथा कंघी) के चूर्णको दूधके साथ सेवन करनेसे असाध्य श्लीपद भी नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(४६१५) **बलादिचूर्णम्** (२)

(यो. र. । प्रदर.; भा. प्र. । म. खं. प्रदर.)

बलाकङ्कतिकाख्या या तस्या मूलं सुचूर्णितम् ।
लोहितप्रदरे खादेच्छर्करामधुसंयुतम् ॥

कंघी (अतिबला) के चूर्णको समानभाग खांडमें मिलाकर शहदके साथ सेवन करनेसे रक्त-प्रदर नष्ट होता है ।

(मात्रा—बलाचूर्ण ३ माशे, खांड ३ माशे।)

(४६१६) **बलादिचूर्णम्** (३)

(यो. त. । त. ८०)

सघृतमधुबलात्रयस्य चूर्णं
समधुसिताघृतमुच्चटोद्भवं वा ।
समधुकमथ माषमुद्गपर्ण्यो-
रमृतलतामलकत्रिकण्टकं वा ॥
इति कथितमिदं हि पुष्पिताग्रा
चरणचतुष्टयवेष्टनेन शिष्टैः ।
अभिमतमसकृद्व्यवायभाजा-
मिह खलु योगचतुष्कमाविकल्प्य ॥

काम शक्तिकी वृद्धि के लियेः—

(१) बला (खरैटी), अतिबला (कंघी) और नागबला (गंगेरन—गुलशकरी) के समान भाग मिश्रित चूर्णको घी और शहदमें मिलाकर सेवन करें । अथवा —

(२) उटङ्गणके बीजोंके चूर्णको समान भाग खांडमें मिलाकर उसे घी और शहदके साथ सेवन करें । या—

(३) मुलैठी और माषपर्णी तथा मुद्गपर्णीका चूर्ण अथवा

(४) गिलोय, आमला और गोखरुका चूर्ण सेवन करें ।

यह चारों प्रयोग कामी पुरुषोंके लिये हित-कारी हैं ।

(४६१७) **बलादिचूर्णम्** (४)

(व. से. । स्त्री.)

बलामतिबलां चैव शर्करां मधुयष्टिकाम् ।
क्षीरं मधुघृतं चैव पीतं गर्भप्रदं भवेत् ॥

बला (खरैंटी), अतिबला (कंघी), खांड और मुलैठीके समानभाग मिश्रित चूर्णको शहद और घीके साथ चाटकर ऊपरसे दूध पीनेसे स्त्रियां गर्भ धारण कर लेती हैं ।

(मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक ।)

(४६१८) **बलादिचूर्णम्** (५)

(भा. प्र. । म. खं. सोम.; यो. र. । योनि.)

बला सिताढ्या मधुकं बला च
शृङ्गं वटोत्थं गजकेशरं च ।
एतन्मधुक्षीरघृतैर्निपीतं
वन्ध्या सुपुत्रं नियतं प्रसूते ॥

बला (खरैंटी), मिश्री, मुलैठी, अतिबला, (कघी), बड़के अङ्कुर और नागकेसरके समान-भाग मिश्रित चूर्णको शहद और घीमें मिलाकर दूधके साथ सेवन करनेसे बन्ध्या स्त्री सुपुत्रको जन्म देती है ।

(मात्रा—३ से ६ माशे तक ।)

(४६१९) **बलादिचूर्णम्** (६)

(वृ. नि. र. । क्षय.; हा. सं. । स्था. ३. अ. ९.)

बला विदारी लघुपञ्चमूली
पञ्चैव क्षीरीद्रुमत्वक् प्रयोज्या ।
पुनर्नवामेघतुगारजश्च
सञ्जीवनीयैर्मधुकैः समांशैः ॥
अक्षप्रमाणानि समानि कानि
सर्वाणि चैतानि विचूर्णयित्वा ।
विमिश्रयेत्तत्र कणाक्षतानि
पञ्चाशगोधूमयवांश्च पिष्ट्वा ॥
तुगासमांशं सिततन्दुलानां
पिष्टं सशृङ्गाटकमिश्रितं तु ।
प्राक्चूर्णकार्धेन वियोजनीयं
सर्वांशकेनाथ सिता प्रयोज्या ॥
विभावयेच्चामलकीरसेन
वारत्रयं गोपयसा विभाव्यम् ।
ततोस्य सर्वैः समशर्करा वा
घृतेन चैवं पुनरेव भाव्यम् ॥
तं भक्षयेत्क्षौद्रयुतं पलार्द्धं
जीर्णे च भोज्यं कटुकाम्लवर्ज्यम् ।
क्षीरं घृतं वा सितशर्करं वा
यवान्नगोधूमकशालिप्रधान् ॥
ज्ञात्वाग्निपाकं जठरे नरस्य
देयो विधिज्ञैः क्षयरोगशान्त्यै ।
पथ्यः क्षये श्रान्तचिराभिताप-
सम्पीडितानां च तथा शिरोऽर्तौ ॥
पित्तातुराणां रुधिरक्षयाणां
श्रमाध्वसम्पीडितकामलानाम् ।
श्वासातुराणां मधुमेहिनाञ्च
क्षीणेन्द्रियाणां बलकारि शस्तम् ॥
गर्भो गृहीतश्च यया स्त्रिया च
तस्याः प्रशस्तं तु बलादिचूर्णम् ॥

बला (खरैंटी) के बीज, बिदारीकन्द, लघु पञ्चमूल (शालपर्णी, पृष्टपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु), बड़की छाल, पीपलकी छाल, गूलरकी छाल, पिलखनकी छाल, बेतकी छाल, पुनर्नवा (बिसखपरा), नागरमोथा, बंसलोचन, जीवन्ती, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, और ऋषभक १।-१। तोला

तथा मुलैठी २॥ तोले एवं १०० नग पीपल और ५०-५० दाने जौ और गेहूं, तथा १। तोला सफेद चावल और सब औषधोंसे आधा सिंघाड़ा लेकर सबको कूट छानकर बारीक चूर्ण बनावें और उसे आमलेके स्वरस और गायके दूधकी ३-३ भावना देकर सुखा लें। तत्पश्चात् उसमें उसके बराबर खांड मिलाकर सबको घीमें घोटकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें से नित्य प्रति २॥ तोले चूर्ण शहदमें मिलाकर सेवन करना चाहिये तथा औषध पचनेपर कटु तथा अम्ल पदार्थोंको त्यागकर पथ्य भोजन करना चाहिये।

इसके सेवनसे क्षय, थकान, जीर्णज्वर, शिरशूल, पित्तविकार, रुधिरक्षय, मार्ग चलने या अधिक श्रमसे उत्पन्न थकान, कामला, श्वास, मधुमेह और इन्द्रियोंकी क्षीणता नष्ट होकर शरीरमें बल बढ़ता है।

यह चूर्ण गर्भिणी स्त्रीके लिये भी उपयोगी है।

पथ्य—दूध, घी, सफेद खांड, जौ, गेहूं और चावल।

(४६२०) **बाकुचिकाद्यं चूर्णम्**

(ग. नि. । चूर्णा.)

बाकुचि त्रिफला वह्निर्भल्लातं च शतावरी ।
सिन्दुवारोऽश्वगन्धा च निम्बः पश्चाङ्गसंयुतः ॥
मासैकं भक्षितं हन्ति चूर्णमेषां समांशकम् ।
सर्वकुष्ठानि वातांश्च रोगिणां नात्र संशयः ॥

बावची, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीतामूल, शुद्ध भिलावा, शतावर, संभालु, असगन्ध और नीमका पश्चाङ्ग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे १ मास तक सेवन करनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ और वातरोग नष्ट होते हैं।

(४६२१) **बादरचूर्णयोगः**

(वृ. मा. । मसूरि.)

लिह्याद्वा बादरं चूर्णं पाचनार्थं गुडेन वा ।
अनेनाऽऽशु विपच्यन्ते वातपित्तकफात्मिका ॥

बेरोंके चूर्णको गुड़में मिलाकर सेवन करानेसे वातज, पित्तज और कफज मसूरिका शीघ्र पक जाती है।

बालचातुर्भद्रिका

(भै. र.; र. र.)

प्र. सं. १६३२ देखिये।

(४६२२) **बिडलवणयोगः**

(ग. नि. । अरोचका.)

बिडचूर्णसमायुक्तं मधु मात्रासमन्वितम् ।
असाध्यामपि संहन्यादरुचिं वक्त्रधारितम् ॥

बिडनमकके चूर्णको शहदमें मिलाकर मुखमें धारण करनेसे असाध्य अरुचि भी नष्ट हो जाती है

(४६२३) **बिडलवणादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.; यो. चि. म.१ । अ. २)

बिडं चित्रकमजाजियुग्मं यवानी
शिवा त्र्यूषणं धान्यसौवर्चलं च ।
त्वचा तिन्तडीकाजमोदाम्लवेतं
समं योज्यमेतत्समं च विडङ्गम् ॥

१—योगचिन्तामणिमें बिडंगका अभाव है।

बिडादिरोगदारकं गदार्तिनां च तारकं।
अनेन जीर्यते धरा कथं न जानते नराः॥

बिडनमक, चीतामूल, दोनों जीरे, अजवायन, हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया, सञ्चल (काला नमक), दालचीनी, तिन्तड़ीक, अजमोद और अम्लवेत १-१ भाग तथा बायबिडंग सबके बराबर लेकर कूट छानकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण अत्यन्त पाचक है। आश्चर्य है कि मनुष्य यह नहीं जानते कि इसके सेवन से तो पृथ्वी भी पच सकती है, भोजनकी तो बात ही क्या है?

(४६२४) बिभीतकचूर्णम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

बिभीतकं घृतभृष्टं चूर्णं कृत्वा भिषग्वरः।
भावितं चाटरूषस्य दलानां च रसेन तु॥
वेष्टितं चार्कपत्रैस्तु कर्दमेन तु लेपयेत्।
स्विन्नमग्नौ मुखे धार्यं कासं नाशयते ध्रुवम्॥

बहेड़ेके फलोंको घीमें भूनकर चूर्ण बनावें और फिर उसे १ दिन बासेके पत्तोंके रसमें घोटकर उसका गोला बना लें एवं उसे आकके पत्तों में लपेटकर उस पर आध अंगुल मोटा मिट्टीका लेप कर दें तथा उसे सुखाकर कण्डोंकी मन्दाग्नि में स्वेदित करें। जब ऊपर वाली मिट्टीका रंग लाल हो जाय तो गोलेको अग्निसे निकालकर ठण्डा करके उसके ऊपरकी मिट्टी छुड़ा दें और भीतरसे बहेड़े के गोलेको निकालकर पीस लें।

इसमें से ज़रा ज़रा सा चूर्ण मुंहमें रखकर रस चूसनेसे खांसी अवश्य नष्ट हो जाती है।

(४६२५) बिभीतकफलचूर्णम्

(व. से. । अति.)

बिभीतकफलं दग्धं हन्याल्लवणसंयुतम्।
महान्तमप्यतीसारं चक्रपाणिरिवाऽसुरान्॥

बहेड़ेके फलोंकी भस्ममें सेंधा नमक मिलाकर सेवन कराने से प्रवृद्ध अतिसार भी नष्ट हो जाता है।

(मात्रा---३ माशे। दिनमें २-३ बार।)

(४६२६) बिभीतकफलचूर्णम्

(रा. मा. । रक्तपित्ता.)

मध्वाक्तमक्षफलकल्पितचूर्णकर्ष-
मुदुर्ध्रंसिकां हरति भुक्तवताऽवलीढम्।
श्वासं च सन्ततविकाशविकारभावं
दुःस्थीकृतोदरमिदं सततं नियुक्तम्॥

बहेड़ेके फलकी छालका चूर्ण १। तोलेकी मात्रानुसार शहदमें मिलाकर भोजनके बाद सेवन करनेसे खांसी और श्वासका नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा---३ माशे।)

(४६२७) बिभीतकादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । कास.)

द्वौ भागौ च बिभीतक्या भागैकं पिप्पलीयुतम्।
चूर्णं मधुयुतं लेह्यं कासरोगहरं परम्॥

२ भाग बहेड़े और १ भाग पीपलका चूर्ण एकत्र मिलाकर शहदके साथ चाटने से खांसी नष्ट होती है।

(मात्रा---२-३ माशे।)

(४६२८) **बिभीतकाद्यं चूर्णम्**

(ग. नि. । चूर्णा.; र. र. । हिक्का.)

बिभीतकं सातिविषं भद्रमुस्तं च पिप्पली ।
भार्गी च शृङ्गवेरं च सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
तानि चूर्णानि मद्येन पीतान्युष्णोदकेन वा ।
नाशयन्ति नृणां क्षिप्रं श्वासकासापतन्त्रकान् ॥

बहेड़ेके फलकी छाल, अतीस, नागरमोथा, पीपल, भरंगी और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे मद्य या उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे श्वास, खांसी और अपतन्त्रक रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(४६२९) **बिल्वगुडादिप्रयोगः**

(वृ. मा. । अति.; ग. नि. । अति.)

बालबिल्वं गुडं तैलं पिप्पली विश्वभेषजम् ।
लिह्याद्वाते प्रतिहिते सशूले सप्रवाहिके ॥

कच्ची बेलगिरी, गुड़, पीपल और सोंठके चूर्णको तेलमें मिलाकर चाटनेसे शूल युक्त वातज प्रवाहिका नष्ट होती है ।

(४६३०) **बिल्वगुडादिप्रयोगः**

(वं. से.; वृ. मा.; ग. नि. । अतिसा.)

बिल्वपेशीं गुडं रोध्रं तैलं मरिचयोजितम् ।
लीढ्वा प्रवाहिकां हन्ति क्षिप्रं सुखमवाप्नुयात् ॥

बेलगिरी, गुड़, लोध और काली मिर्च के चूर्णको तेलमें मिलाकर चाटनेसे प्रवाहिका शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(मात्रा—२–३ माशे ।)

(४६३१) **बिल्वप्रयोगः**

(वं. से. । विष.)

बिल्वकाकोलयोर्मूलं गिरिकर्ण्यास्तिलस्य च ।
एतेषां मधुसर्पिर्भ्यां पानमाखुविषापहम् ॥

बेल और काकोलीकी जड़, कोयलकी जड़ और तिलकी जड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करने से चूहेका विष नष्ट होता है ।

(४६३२) **बिल्वफलादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । संग्रहण्य.)

श्रीघनवालकमोचकशक्रं
चूर्णमजापयसापरिपेयं ।
हन्ति च तद्ग्रहणीभयमाशु
सामगदं रुधिरेण विमिश्रम् ॥

बेलगिरी, नागरमोथा, सुगन्धबाला, मोचरस और इन्द्रजौ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे बकरीके दूधके साथ सेवन करने से साम और रक्तवाली संग्रहणी नष्ट होती है ।

(मात्रा—२–३ माशे ।)

(४६३३) **बिल्वमूलाद्यं चूर्णम्**

(वं. से. । ब्रध्न.; भै. र. । वृद्धि.; वृ. नि. र. । अण्डवृद्धि.; ग. नि. । चूर्णा.; यो. त. । त. ५६; वृ. यो. त. । त. १०७; वृ. मा. । गल. ग.; च. द. । अ. ३९)

मूलं बिल्वकपित्थयोररलुकस्याग्नेबृहत्योर्द्वयोः
श्यामापूतिकरञ्जशिग्रुकतरोर्विश्वौषधारुष्करम् ।
कृष्णाग्रन्थिकवेल्लपञ्चलवणक्षाराजमोदान्वितं
पीतं काञ्जिककोष्णतोयमथितैश्चूर्णीकृतं
वर्ध्मजित् ॥

बेलमूल, कैथकी जड़, अरलुकी जड़, चीतामूल, दोनों कटेलियों की जड़, निसोत, पूतिकरञ्ज, सहंजनेकी जड़की छाल, सोंठ, शुद्ध भिलावा, पीपल, पीपलामूल, बायबिड़ंग, पांचों नमक, जवाखार और अजमोद समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे काञ्जी, मन्दोष्ण जल अथवा मथी हुई दही के साथ सेवन करनेसे ब्रध्न रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा---१ से ३ माशे तक ।)

(४६३४) बिल्वादिचूर्णम् (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

**पक्वबिल्वागुरुरोध्रचूर्णं मध्वादियोजितम् ।
रक्तातिसारशमनं बालानां क्षीणदेहिनाम् ॥**

पक्के बेलकी गिरी, अगर और लोधके समान भाग मिश्रित चूर्णको शहद इत्यादिके साथ चटानेसे दुर्बल बालकोंका रक्तातिसार नष्ट होता है ।

(४६३५) बिल्वादिचूर्णम् (२)

(व. से.; वृ. मा.; यो. र.; वृ. नि. र. । शूला.)

**बिल्वमूलमथैरण्डं चित्रकं विश्वभेषजम् ।
हिङ्गुसैन्धवसंयुक्तं सद्यः शूलहरं परम् ॥**

बेलकी जड़, अरण्डकी जड़, चीतामूल, सोंठ, हींग और सेंधा नमकके चूर्णको (उष्ण पानी या काञ्जीके साथ) सेवन करनेसे शूल तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(४६३६) बिल्वादिचूर्णम् (३)

(वं. से. । अतिसारा.)

**बिल्वाब्दधातकीपाठाशुण्ठीमोचरसः समः ।
पीतो रुन्ध्यादतीसारं गुडतक्रेण दुर्जयम् ॥**

बेलगिरी, नागरमोथा, धायके फूल, पाठा, सोंठ और मोचरस समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे गुड़युक्त तक्रके साथ सेवन करने से कष्ट साध्य अतीसार भी नष्ट हो जाता है ।

(४६३७) बीजपूरचूर्णम्

(धन्व. । शूल.)

**बीजपूरकमूलञ्च घृतेन सह पाययेत् ।
जयेद्वातभवं शूलं कर्षमेकं प्रमाणतः**

बिजौरे नीबूकी जड़के एक कर्ष (१। तोला) चूर्णको घृतमें मिलाकर खिलानेसे वातज शूल नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा---३-४ माशे ।)

(४६३८) ब्राह्म्यादिचूर्णम् (१)

(व. से. । रसा.; भा. प्र. म. खं. २ । स्वरभे.; वृ. मा. । रसायना.)

**ब्राह्मीवचाभयावासा पिप्पलीमधुसंयुता ।
अस्य प्रयोगात्सप्ताहात् किन्नरैः सह गीयते ॥**

ब्राह्मी, बच, हर्र, बासा और पीपलके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटनेसे गला खुल जाता है, और स्वर अत्यन्त मधुर हो जाता है ।

(४६३९) ब्राह्म्यादिचूर्णम् (२)

(वृ. नि. र. । स्वर.)

**ब्राह्मीमुण्डीवचाशुण्ठीपिप्पली मधुसंयुता ।
सेविता सप्तरात्रेण जायते किङ्किणिध्वनिः ॥**

ब्राह्मी, गोरखमुण्डी, बच, सोंठ और पीपलके चूर्णको सात दिन तक शहदके साथ चाटनेसे स्वर अत्यन्त मधुर हो जाता है और गला खुल जाता है ।

इति बकारादिचूर्णप्रकरणम् ।

अथ बकारादिगुटिकाप्रकरणम् ।

(४६४०) **बल्लीतर्वादिगुटिका**

(ग. नि. । वात. व्या.)

बल्लीतरुः पुष्करमूलशुण्ठी
कुष्ठं गुडूची सुरदारु रास्ना ।
स्यात्सैन्धवं तद्विगुणो गुडश्च
सर्वाङ्गवाते गुटिका च सेव्याः ॥

साल वृक्षकी छाल, पोखरमूल, सोंठ, कूठ, गिलोय, देवदारु, रास्ना और सेंधा नमक १-१ भाग लेकर चूर्ण बनावें आर उसे सबसे २ गुने गुड़में मिलाकर (६-६ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे सर्वाङ्गगत वायु नष्ट होता है ।

(४६४१) **बिल्वादिगुटिका**

(वृ. नि. र. । शूला.; व. से. । शूला.)

बिल्वैरण्डतिलैः कृत्वा गुटिकाश्चाम्लपेषिताः ।
वातशूलोपशान्त्यर्थं प्रयुञ्ज्यादुष्ट्रया तथा ॥

बेलछाल, अरण्डमूल और तिल समानभाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे नीबूके रसमें घोटकर (३-३ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें वृश्चिकालीके रसके साथ सेवन करनेसे वातज शूल नष्ट होता है ।

(४६४२) **बीजपूरादिगुटिका**

(यो. चि. । अ. ३)

त्रिकटुविकटदंष्ट्रा हिङ्गुगुञ्जाररौद्र
त्रिलवणनखमुग्रं जीरके द्वे च हस्तौ ।
प्रकटितकटुकार्द्रैः प्रोल्लसत्केसरौघः
कफमदगजहन्ताकेसरीबीजपूरः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हींग, सेंधा नमक, सञ्चल नमक, बिडनमक, सफेद जीरा और काला जीरा । इनके समान भाग-मिश्रित चूर्णको नीबूके रसमें घोटकर गोलियां बनावें ।

यह गोलियां कफ रूपी हाथीके लिए सिंहके समान हैं ।

(४६४३) **वृद्धदारुमोदकः**

(वृ. नि. र. । संग्रहणी रा.)

वृद्धदारुकभल्लातशुण्ठीचूर्णेन पेषितः ।
मोदकः सगुडो हन्यात्षड्विधार्शः कृतारुजः ॥

विधारामूल, शुद्ध भिलावा और सोंठ का चूर्ण १-१ भाग तथा गुड़ ६ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर मोदक बनावें ।

इनके सेवनसे ६ प्रकारका अर्शरोग नष्ट होता है ।

(मात्रा-९ माशे ।)

(४६४४) **बोलवटिका**

(र. चं. । सूतिका.)

रम्भाफलार्धसह पिप्पलजाङ्कुराणि
कर्षं गृहीतमपि माषमितं च बोलम् ।

माषं पृथग् वरुणचन्द्रलतालवानि
सर्वं विमर्द्य पयसा विलिहेत्प्रगे च ॥
शाल्योदनं गोपयसाऽत्र भोज्यम्
दुग्धेन कार्यस्त्वतितृड्विनाशः।
क्षयं च पाण्डुं प्रसुतीगदं च
नश्यन्ति सत्यं ह्यनुभूतमेतत् ॥

केलेकी छिली हुई फली आधी, पीपल वृक्षके अंकुर १। तोला, बोल, बरनेके पुष्प, इलायची और लैंगका चूर्ण १–१ माशा लेकर सबको एकत्र पीस लें।

इसे प्रातःकाल गायके दूधके साथ खिलाना और आहारमें केवल गायका दूध और शाली चावलका भात देना चाहिये। प्यासमें पानी न देकर गायका दूध ही देना चाहिये।

इसके सेवनसे क्षय, पाण्डु और प्रसूत रोग नष्ट होते हैं। यह सत्य और अनुभूत प्रयोग है।

ब्रह्मवटी

रसप्रकरणमें देखिये।

इति बकारादिगुटिकाप्रकरणम्।

अथ बकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्।

(४६४५) बिल्वाद्यो गुग्गुलुः

(ग. नि.। गुटिका.)

बिल्वैलापटुहेमचव्यहपुषाद्राक्षाकणादाडिमं
मूलं पौष्करमक्षपाक्यमरिचं शुण्ठी यवानी वचा।
कर्चूरेन्द्रयवाम्लवेतसत्रुटित्वक्तिन्तडीकाग्निकं
नैम्बं पत्रमजाजियुग्मरुचकं क्षुद्राम्बुधात्रीफलम् ॥
पाठाधान्ययवासदीप्यककणामूलं दलं वाष्पिका
मुस्ता कर्षसमैश्चतुष्पलयुतैः क्षौद्रस्य जीर्णस्य वै।
दत्त्वा गुग्गुलुमत्र चाष्टपलिकं कृत्वा वटान्भक्षयेत्
ते जग्धा विनिहन्ति वातकफजान्
व्याधीनशेषानपि ॥

बेलछाल, बड़ी इलायची, सेंधानमक, नागकेसर, चव, हाऊबेर, मुनका, पीपल, अनारकी छाल, पोखरमूल, बहेड़ा, यवक्षार, काली मिरच, सोंठ, अजवायन, बच, कचूर, इन्द्रजौ, अम्लबेत, छोटी इलायची, दालचीनी, तिन्तड़ीक, चीता, नीमके पत्ते, दोनों जीरे, काला नमक (सञ्चल), कटेली, सुगन्धबाला, आमला, पाठा, धनिया, जवासा, अजमोद, पीपलामूल, तेजपात, कलौंजी और नागरमोथा। इनका चूर्ण १।–१। तोला, पुराना शहद ४० तोले और शुद्ध गूगल ४० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह कूटें और (६–६ माशेके) मोदक बनाकर रक्खें।

इनके सेवनसे समस्त वातकफज रोग नष्ट होते हैं।

इति बकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्।

अथ बकाराद्यवलेहप्रकरणम् ।

(४६४६) **बादामपाकः**

(नपु. मृता. । त. ४)

मज्जां वातादजं पिष्ट्वा प्रस्थार्धं मानतो बुधः ।
प्रस्थैकं च सितां पक्त्वा विधिना मेलयेत्ततः ॥
पलद्वयं घृतं दत्त्वा चूर्णानेतांश्च संक्षिपेत् ।
एलाद्वयं जातिफलं लवङ्गं केशरं त्वचम् ॥
कर्षकर्षप्रमाणेन चूर्णयित्वा विमेलयेत् ।
मज्जाद्वयं पलैकैकं दलाश्चाथ सुवर्णजान् ॥
राजताव्छतमानेन सम्मेल्य विधिना ततः ।
पञ्चकर्षप्रमाणेन मोदकान्कारयेद्बुधः ॥
धनिनां पुरवासानां भक्षणार्थे हि शोभनम् ।
बलवृद्धिकरं शश्वद्वाजीकरणमुत्तमम् ॥

बादामकी आधसेर गिरीको रात्रिके समय पानी में भिगो दें और प्रातःकाल उसे छीलकर पत्थरपर पीस लें । तदनन्तर उसे १० तोले घीमें भूनकर १ सेर खांडकी चाशनीमें मिला दें और फिर उसमें छोटी बड़ी इलायची, जायफल, लैांग, केसर और दालचीनीका चूर्ण १।-१। तोला तथा पिस्ता और चिरौंजी ५-५ तोले एवं सोने चांदीके वर्क १००-१०० नग मिलाकर ५-५ कर्ष (६। तोले) के लड्डू बना लें ।

यह पाक बलवर्द्धक और उत्तम वाजीकरण है।

(४६४७) **बालकुटजावलेहः**

(भै. र.; र. र. । बालरो.)

मूलत्वचं वत्सकस्य पलमेकं सुकुट्टितम् ।
अष्टभागं जलं दत्त्वा चतुर्भागावशेषितम् ॥
अतिविषा च पाठा च जीरकं बिल्वमेव च ।
आम्रास्थि शतपुष्पा च धातकी मुस्तकं तथा ॥
जातीफलं च सञ्चूर्ण्य निक्षिपेत्तत्र यत्नतः ।
बालानामामशूलघ्नो रक्तस्रावं सुदारुणम् ॥
अपि वैद्यशतैस्त्यक्तं जयेदेतन्न संशयः ॥

५ तोले कुड़ेकी जड़की छालको कूटकर १ सेर पानीमें पकावें । जब २० तोले पानी शेष रह जाय तो उसको छानकर पुनः पकाकर गाढ़ा करें और उसमें अतीस, पाठा, जीरा, बेलगिरी, आमकी गुठली, सोया, धायके फूल, नागरमोथा और जायफलका चूर्ण समान भाग मिश्रित २॥ तोले मिला दें ।

यह अवलेह बालकोंके आमशूल और रक्तस्रावको नष्ट करता है । सैकड़ों वैद्योंसे त्यक्त रोगी इससे अच्छा हो जाता है ।

बालचातुर्भद्रिका

(भै. र. । बालरोगा.)

प्र. सं. १६३२ देखिये ।

(४६४८) **बाहुशालगुडः** (१)

(व. से. । ग्रहण्य. ३)

त्रिवृत्तिक्ता निकुम्भा च श्वदंष्ट्रा चित्रकं शठी ।
विशाला मुस्तकं शुण्ठी कृमिशत्रुर्हरीतकी ॥

द्विपलांशाः पलान्यष्टौ भल्लातकफलानि च ।
सूरणं द्वादश प्रोक्तं षट्पलं वृद्धदारुकम् ॥
एतानि खण्डशः कृत्वा द्विद्रोणेऽपां विपाचयेत् ।
पादशेषन्तु कुर्वीत पचेद्गुडतुलां भिषक् ॥
कन्दस्तिक्तस्त्रिवृद्वह्निर्मुस्तैलामरिचत्वचम् ।
नागकेसरचूर्णञ्च ह्येकैकं द्विपलोन्मितम् ॥
एतानि सूक्ष्मचूर्णानि गुडमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
भक्षयेद्गुटिकां प्राज्ञः कर्षांशां पथ्यभुङ्नरः ॥
वातपित्तकफप्रायां द्विदोषां सान्निपातिकाम् ।
ग्रहणीं नाशयत्याशु चक्रपाणिर्यथाऽसुरान् ॥
कामलाकुष्ठमेहार्शः पाण्डुरोगभगन्दरान् ।
श्वयथूदरगुल्मांश्च जयेत्सम्यक्प्रयोजितः ॥
"सर्वास्वृतुषु कर्त्तव्यो गुडोऽयं बाहुशालिकः ॥"

नोट—इस प्रयोगकी ओषधियां तो लगभग "बाहुशालगुड (२)" के समान ही हैं परन्तु उनके परिमाणमें बहुत अन्तर है, इसी लिये दोनों प्रयोग पृथक् पृथक् लिखे हैं ।

निसोत, कुटकी, दन्तीमूल, गोखरु, चीता, कचूर, इन्द्रायनमूल, नागरमोथा, सोंठ, बायबिडंग और हर्र १०-१० तोले तथा शुद्ध भिलावा ४० तोले, सूरण (जिमिकन्द) ६० तोले, और विधारा-मूल ३० तोले लेकर सबको कूटकर ६४ सेर पानी में पकावें और १६ सेर पानी बाकी रह जाय तो उसे छानकर उसमें ६। सेर गुड़ मिलाकर पुनः पकावें । जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें—

विदारीकन्द, परवल, निसोत, चीता, नागर मोथा, इलायची, कालीमिरच, दालचीनी और नाग-केसरका चूर्ण १०-१० तोले मिलाकर ठंडा करके चिकने पात्रमें भरकर रख दें ।

इसमें से नित्य प्रति १। तोला अवलेह सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज, द्विदोषज और सन्निपातज संग्रहणी तथा कामला, कुष्ठ, प्रमेह, अर्श, पाण्डुरोग, भगन्दर, शोथ और गुल्म का नाश होता है ।

इसे सभी ऋतुओं में सेवन कर सकते हैं ।

(४६४९) **बाहुशालगुडः** (२)

(श्रीबाहुशालगुडः)

(शा. ध. । खं. २ अ. ७; वृ. नि. र.; यो. र. । अर्शो.; भै. र.;* च. द.; वृ. मा.; भा. प्र.; र. र.; धन्व.; व. से. । अर्शो.; ग. नि.।[१] लेहा.; वृ. यो. त. । त. ६९; यो. चि. म.[२] । पाका. १)

इन्द्रवारुणिका मुस्तं शुण्ठी दन्ती हरीतकी ।
त्रिवृत् सठी विडङ्गानि गोक्षुरश्चित्रकस्तथा ॥
तेजोह्वा च द्विकर्षाणि पृथग् द्रव्याणि कारयेत् ।
सूरणस्य पलान्यष्टौ वृद्धदारु चतुष्पलम् ॥
चतुःपलं स्याद्भल्लातः क्वाथयेत्सर्वमेकतः ।
जलद्रोणे चतुर्थांशं गृह्णीयात्क्वाथमुत्तमम् ॥

---

* योगरत्नाकरके पश्चात् वाले (भै र. से यो. चि. म. तकके) ग्रन्थोंमें:—

(१) समस्त द्रव्योंका परिमाण इस पाठमें दिये हुवे परिमाणसे द्विगुण लिखा है परन्तु विधारा ६ पल ही लिखा है जो उक्त पाठके अनुसार ८ पल होना चाहिये ।

(२) त्रिकुटेकी जगह विदारीकन्द लिखा है ।

(३) शहदका अभाव है ।

(४) दन्तीके स्थानमें बिदारीकन्द लिखा है । किसी किसी ग्रन्थमें दन्तीके स्थानमें कुटकी भी लिखी है ।

१—गदनिग्रहमें भिलावेका अभाव है ।

२—योगचिन्तामणिमें इसका नाम सूरणपाक लिखा है

काथ्यद्रव्यात्त्रिगुणितं गुडं क्षिप्त्वा पुनः पचेत् ।
सम्यक् पक्वं च विज्ञाय चूर्णमेतत्प्रदापयेत् ॥
चित्रकस्त्रिवृता दन्ती तेजोह्वा पलिकाः पृथक् ।
पृथक् त्रिपलिकाः कार्या व्योषैलामरिचत्वचः ॥
निक्षिपेन्मधुशीते च तस्मिन्प्रस्थप्रमाणतः ।
एवं सिद्धो भवेच्छ्रीमान् बाहुशालगुडः शुभः ॥
जयेदर्शांसि सर्वाणि गुल्मं वातोदरं तथा ।
आमवातं प्रतिश्यायं ग्रहणीक्षयपीनसान् ॥
हलीमकं पाण्डुरोगं प्रमेहं च रसायनम् ॥

इन्द्रायणमूल, नागरमोथा, सोंठ, दन्तीमूल, हर्र, निसोत, शठी (कचूर), बायबिडंग, गोखरु, चीतामूल और तेजबल २॥-२॥ तोले; सूरण (जिमीकन्द) ४० तोले, विधारामूल २० तोले और शुद्ध भिलावा २० तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें उपरोक्त समस्त ओषधियों से ३ गुना गुड़ मिलाकर पुनः पकावें और गाढ़ा हो जाने पर उसमें चीता, निसोत, दन्तीमूल और तेजबलका चूर्ण ५-५ तोले तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, इलायची, मिर्च और दालचीनीका चूर्ण १५-१५ तोले मिलाकर अग्निसे नीचे उतार लें एवं उसके ठण्डा हो जाने पर उसमें १ सेर शहद मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रख दें ।

इसके सेवनसे अर्श, गुल्म, वातोदर, आमवात, प्रतिश्याय, संग्रहणी, क्षय, पीनस, हलीमक, पाण्डु और प्रमेहका नाश होता है ।

यह रसायन भी है ।

(मात्रा-आधेसे १ तोले तक ।)

(४६५०) **बिभीतकावलेहः** (१)

(रा. मा. । रक्तपित्ता. ९)

विहितमसृणचूर्णान्यारनालेन सार्धं
कलितरुफलकृष्णासैन्धवानि प्रलिह्यात् ।
अभिलषति विजेतुं यः स्वरस्य प्रणाशं
स पिबतु सह दुग्धेनामलक्या फलं वा ॥

बहेड़ा, पीपल और सेंधानमक के अत्यन्त महीन चूर्णको कांजी में मिलाकर चाटने से अथवा आमले के चूर्णको दूधके साथ पीनेसे स्वरभंग (गला बैठना) रोग नष्ट होता है ।

(४६५१) **बिभीतकावलेहः** (२)

(वै. जी. । वि. ३; यो. र.; व. से. । कासा.; ग. नि. । लेह्या.)

अजस्य मूत्रस्य शतं पलानां
शतं पलानां च कलिद्रुमस्य ।
पक्वं समश्वाशु निहन्ति कासं
श्वासं च तद्वत्सबलं बलासम् ॥

६। सेर बहेड़े के चूर्णको उतने ही बकरेके मूत्रमें पकावें जब गाढ़ा हो जाय तो उतार कर चिकने पात्रमें भरकर रख दें ।

इसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे खांसी, श्वास और कफका नाश होता है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(४६५२) **बीजपूरकादिलेहः**

(ग. नि. । छर्दि.)

निष्पीड्य च बीजपूरकाद्रसमेलार्द्रकनागरायुतम् ।
लेहो मधुशर्करायुतो वमथुं वातकृतां नियच्छति ॥

बिजौरे नीबूके रसमें इलायची, अदरक और सोंठका चूर्ण मिलाकर उसमें शहद और खांड डालकर चाटनेसे वातज छर्दि (वमन) नष्ट होती है ।

(४६५३) ब्राह्मरसायनम् (१)

(च. सं. । चि. अ. । १)

पञ्चानां पञ्चमूलानां भागान्दशपलोन्मितान् ।
हरीतकीसहस्रं च त्रिगुणामलकं नवम् ॥
विदारिगन्धां बृहतीं पृश्निपर्णीं निदिग्धिकाम् ।
विद्याद्विदारिगन्धाद्यं श्वदंष्ट्रापञ्चमं गणम् ॥
बिल्वाग्निमन्थस्योनाकं काश्मर्यमथ पाटलाम् ।
पुनर्नवां शूर्पपर्ण्यौ बलामेरण्डमेव च ॥
जीवकर्षभकौ मेदां जीवन्तीं सशतावरीम् ।
शरेक्षुदर्भकाशानां शालीनां मूलमेव च ॥
इत्येषां पञ्चमूलानां पञ्चानामुपकल्पयेत् ।
भागान्यथोक्तांस्तत्सर्वं साध्यं दशगुणेऽम्भसि ॥
दशभागावशेषं तु पूतं तं ग्राहयेद्रसम् ।
हरीतकीश्च ताः सर्वाः सर्वाण्यामलकानि च ॥
तानि सर्वाण्यनस्थीनि फलान्यापोथ्य कूर्चनैः ।
विनीय तस्मिन्निर्यूहे चूर्णानीमानि दापयेत् ॥
मण्डूकपर्ण्याः पिप्पल्याः शङ्खपुष्प्याः प्लवस्य च ।
मुस्तानां सविडङ्गानां चन्दनागुरुणोस्तथा ॥
मधुकस्य हरिद्राया वचायाः कनकस्य च ।
भागांश्चतुष्पलान् कृत्वा सूक्ष्मैलायास्त्वचस्तथा ॥
सितोपलासहस्रं च चूर्णितं तुलयाऽधिकम् ।
तैलस्य द्व्याढकं तत्र दद्यात्त्रीणि च सर्पिषः ॥
साध्यमौदुम्बरे पात्रे तत्सर्वं मृदुनाऽग्निना ।
ज्ञात्वा लेहमदग्धं च शीतं क्षौद्रेण संसृजेत् ॥
क्षौद्रप्रमाणं स्नेहार्धं तत्सर्वं घृतभाजने ।
तिष्ठेत्सम्मूर्छितं तस्य मात्रां काले प्रयोजयेत् ॥
या नोपरुन्ध्यादाहारमेवं मात्रा जरां प्रति ।
षष्टिकः पयसा चात्र जीर्णे भोजनमिष्यते ॥
वैखानसा वालखिल्यास्तथा चान्ये तपोधनाः ।
रसायनमिदं प्राप्य बभूवुरमितायुषः ॥
मुक्त्वा जीर्णं वपुश्चाग्र्यमवापुस्तरुणं वयः ।
वीततन्द्राक्लमश्वासा निरातङ्काः समाहिताः ॥
मेधास्मृतिबलोपेताश्चिररात्रं तपोधनाः ।
ब्राह्मं तपो ब्रह्मचर्यं चेरुश्चात्यन्तनिष्ठया ॥
रसायनमिदं ब्राह्ममायुष्कामः प्रयोजयेत् ।
दीर्घमायुर्वयश्चाग्र्यं कामांश्चेष्टान् समश्नुते ॥

शालपर्णी, बनभंटा, पृश्निपर्णी, कटेली, गोखरु, बेल, अरणी, अरलु, खम्भारी, पाढल, पुनर्नवा (बिसखपरा), मुद्गपर्णी, माषपर्णी, बला (खरैटी), अरण्ड, जीवक, ऋषभक, मेदा, जीवन्ती, शतावरी, शर, ईख, दाभ कास और शालीधान्य । इन पच्चीस ओषधियों में से बड़े वृक्षोंकी जड़की छाल और शेषकी जड़ १०-१० तोले तथा १००० पल हर्र और ३ हजार पल आमले लेकर सबको २० गुने पानीमें पकावें और दशवां भाग पानी शेष रहने पर छान लें एवं हर्र और आमलोंकी गुठली अलग करके उन्हें कूट लें। तदनन्तर यह क्वाथ, हर्र, आमले और मण्डूकपर्णी, पीपल, शंखपुष्पी, केवटी मोथा, नागरमोथा, बायबिडंग, सफेद चन्दन, अगर, मुलैठी, हल्दी, बच, नागकेसर, छोटी इलायची और दालचीनीका चूर्ण २०-२० तोले, खांड इन सबसे ६२॥ सेर अधिक अर्थात ६२॥ + ३॥ = ६६ सेर और

१६ सेर तेल तथा २४ सेर घी मिलाकर तांबेके कढ़ावमें मन्दाग्निपर पकावें । जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर रक्खें और उसके ठण्डा होने पर उसमें १२ सेर शहद मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रख दें ।

इसे इतनी मात्रानुसार खाना चाहिये कि जिससे भूख बन्द न हो जाय । एवं औषध पच जाने पर साठीके चावलेंके भात और दूध का आहार करना चाहिये ।

इस रसायनको सेवन करके वानप्रस्थी, बालखिल्य और अन्य तपस्वी लोगों ने दीर्घायु प्राप्त की थी । उनके वृद्ध शरीर पुनः यौवनको प्राप्त हो गये थे एवं वे तन्द्रा, क्लान्ति और श्वासादि रोग रहित होकर बली, स्मृतिमान् और मेधावान् होकर दीर्घकाल तक ब्रह्मचर्य व्रतका पालन करते हुवे तपस्या करते रहे थे ।

दीर्घायुकी इच्छा करने वाले व्यक्तियोंको यह रसायन सेवन करनी चाहिये । इसके सेवनसे दीर्घायु और तरुणावस्था प्राप्त होती है ।

(४६५४) **ब्राह्मरसायनम्**

(च. सं. । चि. अ. १)

यथोक्तगुणानामामलकानां सहस्रं पिष्ट्वा स्वेदनविधिना पयस ऊष्मणा सुस्विन्नमनातपशुष्कमनस्थि चूर्णयेत्, तदामलकसहस्रस्वरसपरिपीतं स्थिरापुनर्नवाजीवन्तीनागबलाब्रह्मसुवर्चलामण्डूकपर्णीशतावरीशङ्खपुष्पीपिप्पलीवचाविडङ्गस्वयंगुप्तामृताचन्दनागुरुमधुकमधूकपुष्पोत्पलपद्ममालतीयुवतीयूथिकाचूर्णाष्टभागसंयुक्तं, पुनर्नागबलासहस्रपलस्वरसपरिपीतमनातपशुष्कं द्विगुणितसर्पिषा क्षौद्रसर्पिषा वा क्षुद्रगुडाकृतिं कृत्वा शुचौ दृढे घृतभाविते कुम्भे भस्मराशेरधः स्थापयेदन्तर्भूमेः पक्षं कृतरक्षाविधानमथर्ववेदविदा, पक्षात्यये चोद्धृत्य कनकरजतताम्रप्रवालकालायसचूर्णाष्टभागसंयुक्तमर्धकर्षवृद्ध्या यथोक्तेन विधिना प्रातः प्रातः प्रयुञ्जानोऽग्निबलमभिसमीक्ष्य जीर्णे च षष्टिकं पयसा ससर्पिष्कमुपसेवमानो यथोक्तान् गुणान् समश्नुत इति ॥

भवन्ति चात्र ।

इदं रसायनं ब्राह्मं महर्षिगणसेवितम् ।
भवत्यरोगो दीर्घायुः प्रयुञ्जानो महाबलः ॥
कान्तः प्रजानां सिद्धार्थश्चान्द्रादित्यसमद्युतिः ।
श्रुतं धारयते सत्त्वमार्षं चास्य प्रवर्तते ॥
धरणीधरसारश्च वायुना समविक्रमः ।
स भवत्यविषं चास्य गात्रे सम्पद्यते विषं ॥

१००० नग सर्व गुण सम्पन्न आमलोंको दूधकी भापसे सिजाकर उनके भीतरकी गुठली अलग कर दें और फिर उन्हें पीसकर छायामें सुखालें । तदनन्तर उनका चूर्ण करके उसे १ हजार आमलों के रसकी भावना दें । जब सब रस सूख जाय तो उसमें उसका आठवां भाग शालपर्णी, पुनर्नवा, जीवन्ती, नागबला (गुलसकरी), ब्रह्मसुवर्चला, मण्डूकपर्णी, शतावर, शंखपुष्पी, पीपल, बच, बायबिडंग, कौंचके बीज, गिलोय, सफेद चन्दन, अगर, मुलैठी, महुवेके फूल, नीलोत्पल, कमल, मालती, फूलप्रियङ्गु और जूहीका

समानभागमिश्रित चूर्ण मिलाकर उसे नागबलाके १००० पल (६२॥ सेर) रस की भावना देकर छायामें सुखा लें। और फिर उसमें उससे २ गुना घी या बराबर बराबर घी और शहद मिलाकर क्षुद्रगुड (पतली राब) के समान बना लें और उसे घृत रखनेके मज़बूत और चिकने पात्रमें भर-कर, उसका मुख बन्द करके भूमिमें गढ़ा खोद-कर उसमें रख दें और राखसे दबा दें। एवं १५ दिन बाद निकालकर उसमें उसका आठवां भाग सोना, चांदी, ताम्र, प्रवाल और कृष्णलोहका चूर्ण (भस्में) मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे आधा कर्ष (७॥ माशे) की मात्रासे प्रारम्भ करके धीरे धीरे मात्रा बढ़ाते हुवे विधि पूर्वक प्रातःकाल सेवन करने और औषध पचने पर अग्नि-बलानुसार दूध के साथ घृतयुक्त साठी चावलोंका भात खानेसे रोग रहित दीर्घायु प्राप्त होती है।

इसे प्राचीन कालमें ऋषियोंने सेवन किया था। इसके सेवनसे अत्यन्त बलकान्ति, सन्तति और तेजकी वृद्धि होती है। मनुष्य श्रुतिधर, चट्टानके समान् दृढ़ और वायुके समान् विक्रम शाली हो जाता है।

यदि शरीरमें किसी प्रकारके विषका प्रवेश हो गया हो तो वह भी इसके सेवनसे नष्ट हो जाता है।

(व्यवहारिक मात्रा—३ माशे।)

इति बकारादिलेह्यप्रकरणम्।

अथ बकारादिघृतप्रकरणम्।

(४६५५) बदरीफलादिघृतम्

(ग. नि.। कासा.)

कोललाक्षारसे तद्वत्क्षीराष्टगुणसाधितम्।
कल्कैः कटूवङ्गदार्वीत्वकूवत्सकत्वक्फलैर्घृतम्॥

बेरोंके क्वाथ और लाक्षारस तथा आठ गुने दूध और अरलुकी छाल, दारुहल्दीकी छाल, कुड़ेकी छाल तथा इन्द्रजौके कल्कसे सिद्ध घृत खांसीका नाश करता है।

(घी १ सेर; क्वाथ और लाक्षारस २-२ सेर; दूध ८ सेर; कल्ककी हरेक वस्तु २॥ तोले।

लाक्षारस बनानेकी विधि भारत भैषज्य रत्नाकर भाग १ में पृष्ठ ३५३ पर देखिये।)

(४६५६) बलाघृतम्

(व. से.। वातरक्ता.; भा. प्र.। म. ख. २ वात-रक्ता.; च. सं.। चि. अ. २९)

बलामतिबलां मेदामात्मगुप्तां शतावरीम्।
काकोलीं क्षीरकाकोलीं रास्नां मृद्वीकां पेषयेत्॥

घृतं चतुर्गुणे क्षीरे तैः सिद्धं वातरक्तनुत् ।
हृत्पाण्डुरोगवीसर्पकामलादाहनाशनम् ॥

बला (खरैटी), अतिबला (कंघी), मेदा, कौंचकी जड़, शतावर, काकोली, क्षीरकाकोली, रास्ना और मुनक्काके कल्क तथा ४ गुने दूधके साथ घृत सिद्ध करें ।

यह घृत वातरक्त, हृद्रोग, पाण्डुरोग, वीसर्प, कामला और दाहका नाश करता है ।

(कल्ककी सब चीजें समान भाग मिश्रित २० तोले, घी २ सेर, दूध ८ सेर ।)

(४६५७) बलादिघृतम् (१)

(च. सं. । चि. अ. ३० योनि व्या.; वा. भ. । उ. अ. ३४)

बलाद्रोणद्वयक्काथे घृततैलाढकं पचेत् ।
स्थिरापयस्याजीवन्तीवीरर्षभकजीवकैः ॥
श्रावणीपिप्पलीमूलपीलुमाषाख्यपर्णिभिः ।
शर्कराक्षीरकाकोलीकाकनासाभिरेव च ॥
पिष्टैश्चतुर्गुणक्षीरसिद्धं पेयं यथाबलम् ।
वातपित्तकृतान् रोगान् हत्वा गर्भं दधाति तत् ॥

खरैटीका काथ ६४ सेर । घृत ८ सेर । तैल ८ सेर ।

कल्कद्रव्य—शालपर्णी, विदारीकन्द, जीवन्ती, काकोली, ऋषभक, जीवक, गोरखमुण्डी, पीपलामूल, मूर्वा, माषपर्णी, खांड, क्षीरकाकोली और काकनासा (काकजंघा या कौवा डोढी) सब समान भाग मिश्रित २ सेर ।

विधि—कल्क, काथ, घी तैल और ६४ सेर दूध एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसके सेवन से वात, पित्त और कफका नाश होता तथा स्त्री गर्भ धारण करती है ।

नोट—वाग्भटमें:—

(अ) पीपलामूलकी जगह पीपल तथा, ऋषभक और जीवक के स्थानमें ऋद्धि और जीरा लिखा है ।

(आ) मुद्गपर्णी अधिक है ।

(४६५८) बलादिघृतम् (२)

(ग. नि. । पाण्डु.)

बलया मधुकेनापि पिप्पल्युत्पलकेसरैः ।
पूर्ववत्साधितं सर्पिर्मृद्दोषानपकर्षति ॥

बला (खरैटी), मुलैठी, पीपल, नीलोत्पल और नागकेसरके कल्क तथा काथसे सिद्ध घृत मिट्टी खानेसे उत्पन्न हुवे पाण्डुरोग को नष्ट करता है ।

(कल्कके लिये प्रत्येक वस्तु १ तोला ४ माशे लें । काथके लिये प्रत्येक वस्तु ३२ तोले लेकर सबको १६ सेर पानीमें पकाकर ४ सेर पानी शेष रक्खें । घी १ सेर ।)

(४६५९) बलादिघृतम् (३)

(वृ. नि. र.; यो. र.; व. से. । नेत्र.)

बलाशतावरीवीरासिताशैलेयकैः पचेत् ।
त्रिफलासहितं सर्पिस्तिमिरनाशनम् ॥

बला (खरैटी), [illegible], [illegible], [illegible], बालछड़, हर्र, [illegible] और [illegible] । [illegible] कल्क

तथा क्वाथसे सिद्ध घृत तिमिररोगको नष्ट करता है ।

(क्वाथके लिये—प्रत्येक वस्तु २० तोले, पानी १६ सेर, शेष क्वाथ ४ सेर । कल्कार्थ प्रत्येक वस्तु १० माशे । घी १ सेर ।)

(४६६०) बलाद्यं घृतम् (१)

(व. से. । हृद्रोगा., क्षतक्षय.; वृ. नि. र. । क्षय.; धन्व.; र. र.; भा. प्र. म. ख.; भै. र. । हृद्रोगा.; यो. र. । उरःक्षत.; च. द. । हृद्रोगा. ३१; वृ. मा. । राजय.; वृ. यो. त. । त. ७७)

घृतं बलानागबलार्जुनाम्बु-
सिद्धं सयष्टीमधुकल्कपादम् ।
हृद्रोगशूलं क्षतरक्तपित्त-
कासानिलासृक्छमयत्युदीर्णम् ॥

क्वाथ—बला (खरैंटी), नागबला (गुलसकरी) और अर्जुनकी छाल समान-भाग-मिश्रित ४ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर ।

कल्क—मुलैठीका चूर्ण २० तोले ।

विधि—२ सेर घीमें क्वाथ और कल्क मिलाकर क्वाथ जलने तक पकावें ।

इसके सेवनसे हृद्रोग, शूल, उरःक्षत, रक्तपित्त, खांसी और कष्टसाध्य वातरक्तका नाश होता है ।

(४६६१) बलाद्यं घृतम् (२)

(वा. भ. । चि. स्था. अ. ५; व. से. । राजय.)

बलाविदारिगन्धाभ्यां विदार्य्या मधुकेन[1] च ।
सिद्धं सलवणं सर्पिर्नस्यं स्वर्य्यमनुत्तमम्[2] ॥

खरैंटी, शालपर्णी, बिदारीकन्द और मुलैठी (पाठान्तरके अनुसार आमला) के क्वाथ तथा कल्कसे सिद्ध घृतमें सेंधा नमक मिलाकर उसकी नस्य लेने या पीनेसे स्वरभंग और राजयक्ष्माका नाश होता है ।

कल्कके लिये प्रत्येक वस्तु ३ तोले ४ माशे । क्वाथके लिये प्रत्येक वस्तु १ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर । घी २ सेर ।

(४६६२) बलाद्यं घृतम् (३)

(वै. म. र. । भूतग्रहा. पट. १६)

बलांशुमत्योर्द्वन्द्वं च बृहतीगोक्षुरस्य च ।
द्वात्रिंशन्निष्कमेतेषां क्षुण्णं प्रत्येकमाहरेत् ॥
द्रोणार्धे सलिले क्षिप्त्वा पादशेषे विपाचिते ।
अमृतास्वस्तिकवरीमूर्वाकन्यारसं पृथक् ॥
कुडवं कुडवं दत्त्वा बिसात्तौद्रद्रुमात् फलात् ।
कदलीकन्दसाराच्च प्रत्येकं कुडवार्धकम् ॥
दत्त्वा कल्याणकाख्यस्य घृतस्यौषधकल्ककम् ।
तस्मिन् विशालां हित्वा च हयगन्धां समावपेत्॥
क्षीराढकेन विधिवद्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
उन्मादापस्मृती हन्यात् पित्तमत्युल्वणं तथा ॥
धीमेधास्मृतीकृच्चैव दाहतृष्णाहरं परम् ॥

१—विदार्यामलकेन चेति पाठान्तरम्

२—पेयमनुत्तममिति पाठान्तरम् ।

क्वाथ—बला (खरैंटी), अतिबला (कंघी), शालपर्णी, पृष्टपर्णी, बनभंटा और गोखरु । प्रत्येक १३ तोले ४ माशे लेकर सबको कूटकर १६ सेर पानीमें पकावें और जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

अन्य द्रव पदार्थ—गिलोयका रस, चांगेरीका रस, शतावरका रस, मूर्वाका रस और घृत कुमारीका रस आधा आधा सेर । कमलनालका स्वरस, नारियलका पानी और केलेकी जड़का स्वरस २०–२० तोले । दूध ८ सेर ।

कल्क—असगन्ध, हर्र, बहेड़ा, आमला, रेणुका, देवदारु, एलबालुक, शालपर्णी, अनन्तमूल, हल्दी, दारुहल्दी, दोनों प्रकारकी सारिवा, फूलप्रियङ्गु, नीलोत्पल, बड़ी इलायची, मजीठ, दन्तीमूल, अनारदाना, नागकेसर, तालीसपत्र, बनभंटा, चमेलीके ताजे फूल, बायबिड़ंग, पृष्टपर्णी, कूठ, सफेद चन्दन और पद्माक १।–१। तोला ।

विधि—२ सेर घी, उपरोक्त क्वाथ, द्रव पदार्थ, और कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इसके सेवनसे उन्माद, अपस्मार, प्रवृद्ध पित्त, दाह और तृष्णाका नाश तथा बुद्धि, मेधा और स्मृतिकी वृद्धि होती है ।

(४६६३) बलाद्यं घृतम् (४)

(वृ. यो. त. । त. ७६; च. द. । राजय. अ. १०; च. सं. । चि. अ. ३; वृ. मा. । राजय.; व. से.; वृ. नि. र.; यो. र. । ज्वरा.)

बलां श्वदंष्ट्रां बृहतीं कलशीं धावनीं स्थिराम् ।
निम्बं पर्पटकं मुस्तं त्रायमाणां दुरालभाम् ॥
कृत्वा कषायं पेष्याथ दद्यात्तामलकीं सटीम् ।
द्राक्षां पुष्करमूलं च मेदामामलकानि च ॥
घृतं पयश्च तत्सिद्धं सर्पिर्ज्वरहरं परम् ।
क्षयकासप्रशमनं शिरःपार्श्वरुजापहम् ॥

क्वाथ—खरैंटी, गोखरु, बनभंटा, पृश्निपर्णी, कटेली, शालपर्णी, नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, त्रायमाना और धमासा । सब चीजें समान भाग मिश्रित २ सेर । पानी १६ सेर । शेष क्वाथ ४ सेर ।

कल्क—भुई आमला, शठी (कचूर), मुनक्का, पोखरमूल, मेदा और आमला । सब चीजें समान भाग–मिश्रित १० तोले ।

विधि—१ सेर घी, ४ सेर दूध, उपरोक्त क्वाथ और कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसके सेवनसे ज्वर, क्षय, खांसी, शिरशूल और पार्श्व शूलका नाश होता है ।

(४६६४) बालचाङ्गेरीघृतम्

(भै. र. । बाल.; च. द. । बाल. ६३; वृ. मा. । ग्रहण्य.)

चाङ्गेरीस्वरसे सर्पिश्छागक्षीरसमं पचेत् ।
कपित्थव्योषसिन्धूत्थसमङ्गोत्पलबालकैः ॥
सबिल्वधातकीमोचैः सिद्धं सर्वातिसारनुत् ।
ग्रहणीं दुस्तरां हन्ति बालानान्तु विशेषतः ॥

कल्क—कैंथका गूदा, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानमक, लज्जालु, नीलोत्पल, सुगन्धबाला, बेलगिरी और धायके फूल समान भाग मिश्रित १० तोले । चूकेका स्वरस ८ सेर, बकरीका दूध २

सेर, घी २ सेर। सब चीजोंको एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह घृत बड़ोंके और विशेषतः बालकोंके सब प्रकारके अतिसार और कष्टसाध्य ग्रहणीको नष्ट करता है।

(४६६५) **बिडलवणादिघृतम्**

(वा. भ.। चि. अ. १०)

बिडं कालोपलवणस्वर्जिकायावशूकजान्।
सप्तलां कण्टकारीं च चित्रकं चैकतो दहेत् ॥
सप्तकृत्वः स्रुतस्यास्य क्षारस्याढ्ढाढके पचेत्।
आढकं सर्पिषः पेयं तदग्निबलवृद्धये ॥

बिडनमक, कालानमक, ऊषर लवण, सज्जीखार, जवाखार, सातला, कटेली और चीता समान भाग लेकर भस्म करें और उस भस्ममें ६ गुना पानी मिलाकर उसे क्षार बनानेकी विधिसे सात बार छान लें। तदनन्तर ४ सेर यह पानी और २ सेर घी एकत्र मिलाकर पकावें जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसे पीनेसे अग्निकी वृद्धि होती है।

(४६६६) **बिभीतकादिघृतम्**

(वृ. नि. र.; यो. र.। नेत्र.)

बिभीतकशिवाधात्रीपटोलारिष्टवासकैः।
पक्वमेभिर्घृतं सर्वानक्षिरोगान्व्यपोहति ॥

बहेड़ा, हर्र, आमला, परवल, नीम और बासेके क्वाथ तथा कल्कसे सिद्ध घृत समस्त नेत्ररोगोंको नष्ट करता है।

(क्वाथार्थ सब चीजें समानभाग-मिश्रित २ सेर। पाकार्थ जल १६ सेर। शेष क्वाथ ४ सेर। कल्कके लिये सब चीजें समानभाग-मिश्रित ६ तोले ८ माशे।

विधि---१ सेर घी, क्वाथ और कल्क एकत्र मिलाकर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें।)

(४६६७) **बिम्बीघृतम्**

(ग. नि.। क्रिमि.)

क्रिमीनामाशयगतान् पक्वाशयगतानपि।
पीतं बिम्बीघृतं हन्ति तरुमिन्द्राशनिर्यथा ॥

कन्दूरीके क्वाथ और कल्कसे सिद्ध घृत पीनेसे पक्वाशय और आमाशयगत कृमि नष्ट होते हैं।

(कन्दूरीका क्वाथ ८ सेर। घी २ सेर। कन्दूरीका कल्क १३ तोले ४ माशे।)

(४६६८) **बिल्वाद्यं घृतम्** (१)

(ग. नि.; व. से.; यो. र.; वृ. मा.; च. द.। ग्रहण्य. ४; वृ. यो. त.। त. ६७; वृ. नि. र.। ग्रहण्य., उदर.)

बिल्वाग्निचव्यार्द्रक शृङ्गबेरैः
क्वाथेन कल्केन च सिद्धमाज्यम्।
सच्छागदुग्धं ग्रहणीगदोत्थे
शोथाग्निसादाऽरुचिनुद्वरिष्टम् ॥

बेलगिरी, चीता और चव १-१ भाग तथा अदरक २ भाग लेकर इनके क्वाथ और कल्क तथा बकरीके दूधके साथ घृत सिद्ध करें।

इसके सेवनसे संग्रहणी, शोथ, अग्निमांद्य और अरुचि नष्ट होती है।

(क्वाथ ८ सेर, घी २ सेर, दूध २ सेर, कल्क १३ तोले ४ माशे ।)

(४६६९) **बिल्वाद्यं घृतम्** (२)

(ग. नि. । घृता.)

बिल्वं पाठाऽभया धान्यं यवानी सैन्धवं विडम् ।
पञ्चकोलं समरिचं क्षारैश्चैभिर्घृतं पचेत् ॥
दध्ना चतुर्गुणेनैव शकृद्वातविबन्धनुत् ।
सर्वामप्लीहवातार्तिगुदभ्रंशरुजापहम् ॥

बेलगिरी, पाठा, हर्र, धनिया, अजवायन, सेंधानमक, विडनमक, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सेंठ, कालीमिर्च और यवक्षारके कल्क तथा ४ गुने दहीके साथ घृत सिद्ध करें ।

यह घृत मलावरोध, अपानवायुका रुकना, आम, प्लीहा, वातज शूल और गुदभ्रंशको नष्ट करता है ।

(घी २ सेर, दही ८ सेर, कल्क २० तोले और पानी ८ सेर ।)

(४६७०) **बीजपूरकाद्यं घृतम्**

(ग. नि. । घृता. १)

घृताच्चतुर्गुणो देयो मातुलुङ्गरसो दधि ।
शुष्कमूलककोलाम्लकषायो दाडिमाद्रसः ।
विडङ्गलवणक्षारपञ्चकोलयवानिभिः ॥
पाठामूलककल्कैश्च सिद्धं पूरकसञ्ज्ञितम् ।
हृत्पार्श्वशूलवैस्वर्यहिध्माश्वासभगन्दरान् ॥
वर्ध्मगुल्मप्रमेहार्शोवातव्याधीन् विनाशयेत् ॥

घी २ सेर, बिजौरेका रस २ सेर, दही २ सेर, सूखी मूली और खट्टे बेरका क्वाथ २ सेर तथा अनारका रस २ सेर एवं वायबिड़ंग, सेंधा नमक, यवक्षार, पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल, सेंठ, अजवायन, पाठा और मूलीका कल्क २० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसके सेवनसे हृदय और पसलीका शूल, स्वरभंग, हिचकी, श्वास, भगन्दर, वर्ध्म, प्रमेह, अर्श, और वातव्याधि नष्ट होती है ।

(४६७१) **बीजपूराद्यं घृतम्**

(भै. र. । शूला.; व. से.; धन्व.; र. र. । शूला.)

बीजपूरकमेरण्डं रास्नां गोक्षुरकं बलाम् ।
पृथक् पञ्चपलान् भागान् यवप्रस्थसमायुतान् ॥
वारिद्रोणेन संसाध्यं यावत्पादावशेषितम् ।
घृतप्रस्थं पचेत्तेन कल्कं दत्त्वाक्षसम्मितम् ॥
तुम्बरुण्यभयाव्योषं हिङ्गुसौवर्चलं विडम् ।
सैन्धवं यावशूकञ्च सर्जिकामम्लवेतसम् ॥
पुष्करं दाडिमञ्चैव वृक्षाम्लं जीरकद्वयम् ।
मस्तुप्रस्थद्वयं दत्त्वा सर्वं मृद्वग्निना पचेत् ॥
घृतमेतत्प्रशंसन्ति शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ।
वातशूलं यकृच्छूलं गुल्मप्लीहापहं परम् ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च अङ्गशूलञ्च नाशयेत् ।
बलवर्णकरं हृद्यमग्निसन्दीपनं परम् ॥

क्वाथ—बिजौरे नीबूकी जड़, अरण्डमूल, रास्ना, गोखरु और खरैंटी २५-२५ तोले तथा जौ १ सेर लेकर सबको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—तुम्बरु, हर्र, सेंठ, मिर्च, पीपल, हींग, सञ्चल (काला नमक), बिड नमक, सेंधा, जवाखार, सज्जीखार, अम्लबेत, पोखरमूल, अनार-

दाना, तिन्तड़ीक और दोनों जीरे । प्रत्येक ओषधि १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पीस लें।

विधि---२ सेर घी, ४ सेर मस्तु (दहीका तोड़) और उपरोक्त क्राथ तथा कल्क एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह घृत वातज तथा त्रिदोषज शूल, यकृच्छूल गुल्म, प्लीहा, हृच्छूल, पार्श्वशूल और अङ्गशूलको नष्ट तथा बलवर्ण और अग्निकी वृद्धि करता है । हृदयके लिये हितकारी है ।

(४६७२) **बृहतीचित्रकक्षारघृतम्**

(व. से. । ग्रहण्य.)

बृहतीचित्रकक्षारः सप्तवारपरिस्रुतः ।
द्विगुणेन घृतं पक्कं वर्द्धयत्याशु पावकम् ॥

बनभंटा और चीतेकी भस्मको ६ गुने पानी में मिलाकर क्षार बनानेकी विधिसे सात बार छान लें। तदनन्तर १ सेर घीमें २ सेर यह पानी मिलाकर पकावें ।

इसके सेवनसे अग्नि अत्यन्त शीघ्र दीप्त हो जाती है ।

(४६७३) **ब्रह्मघृतम्** (ब्राह्मं घृतम्)

(व. से. । उदर.; ग. नि. । घृता.)

शिलाह्वयं नागरकालशाकं
काकादनीमूलनिदिग्धिका च ।
पञ्चैव दद्याल्लवणानि हिङ्गु
कृष्णा च तैरक्षसमैः पृथक्पृथक् ॥
प्रस्थं घृतं स्याच्च पचेच्छनैः शनै-
श्चतुर्गुणं मूत्रमतः प्रदीयते ।
पयश्च दद्याद्द्विगुणं विपक्कं
तद्ब्रह्मजुष्टं प्रवदन्ति सर्पिः ॥
प्लीहोदरं दूष्यमथोदरञ्च
आयम्यमानं जठरं निहन्ति ॥

मनसिल, सोंठ, नाड़ीका शाक, चौंटलीकी जड़, कटेली, पांचों नमक, हींग और पीपल १-१ कर्ष (१।-१। तोला) लेकर सबको पानीके साथ पीसकर कल्क बनावें । तत्पश्चात् २ सेर घीमें यह कल्क, ४ सेर दूध और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

यह घृत प्लीहोदर और अन्य समस्त प्रकारके उदर विकारोंको नष्ट करता है ।

(४६७४) **ब्राह्मीघृतम्** (१)

(ग. नि. । घृता.; वा. भ. । उ. अ. ६)

द्वौ प्रस्थौ स्वरसाद्ब्राह्म्या घृतप्रस्थं च साधयेत् ।
व्योषश्यामात्रिवृद्ब्राह्मीशङ्खपुष्पीनृपद्रुमैः ॥
ससप्तलाकृमिहरैः कल्कितैरक्षसम्मितैः ।
पलवृद्ध्या प्रयुञ्जीत यावन्मात्रा चतुष्पलं ॥
उन्मादकुष्ठापस्मारहरं वन्ध्यासुतप्रदम् ।
वाक्स्मृतिस्वरमेधाकृद्धन्यं ब्राह्मीघृतं शुभम् ॥

ब्राह्मीका स्वरस ४ सेर, घी २ सेर और १।-१। तोला सोंठ, मिर्च, पीपल, काली निसोत, निसोत, ब्राह्मी, शंखपुष्पी, अमलतासकी छाल, सातलाकी छाल और बायबिडंगका कल्क (तथा ८ सेर पानी) एकत्र मिलाकर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसे ५ तोलेकी मात्रासे सेवन करना प्रारम्भ करें और धीरे धीरे २० तोले तक मात्रा बढ़ा दें ।

इसके सेवनसे उन्माद, कुष्ठ और अपस्मारका नाश होता तथा वाचाशक्ति, स्वर, स्मृति और मेधाकी वृद्धि होती है एवं वन्ध्या स्त्रीको पुत्रप्राप्ति होती है। (व्यवहारिक मात्रा—१ से २ तोले तक)

(४६७५) **ब्राह्मीघृतम्** (२)

(वै. म. र. । पटल ३)

ब्राह्मीवासासिंहलीभिः कुण्डल्या मूलकेन च ।
अमृतालर्कके: सर्पिः साधितं श्वासकासजित् ॥

ब्राह्मी, बासा, पीपल, घीकुमारकी जड़, गिलोय और आकके क्वाथ तथा कल्कसे सिद्ध घृत श्वास और खांसीको नष्ट करता है।

(घी २ सेर । क्वाथ ८ सेर । कल्क १३ तोले ४ माशे ।)

(४६७६) **ब्राह्मीघृतम्** (३)

(व. से.; वृ. नि. र.; वृ. मा.; यो. र.; र. र. । अपस्मा.; भा. प्र. । म. ख. अपस्मा.; च. द. । वातव्या.; वृ. यो. त. । त. ८९; वै. म. र. । पट. १५; च. सं. । चि. अ. १५; यो. चि. म. । घृता. अ. ५; हा. सं. । स्था. ३ अ. २१)

ब्राह्मीरसवचाकुष्ठं शङ्खपुष्पिभिरेव च ।
पुराणं पकमुन्मादग्रहापस्मारहृद्घृतम् ॥

ब्राह्मीके रस और बच, कूठ तथा शंखपुष्पीके कल्कसे सिद्ध पुराना घृत उन्माद, ग्रह और अपस्मारको नष्ट करता है।

(पुराना घी २ सेर, ब्राह्मीका स्वरस ८ सेर, कल्क १० तोले ।)

नोट—पाककी उत्तमताके लिये ८ सेर पानी भी डालना चाहिये ।

(४६७७) **ब्राह्मीघृतम्** (४) (सारस्वत घृतम्)

(च. द. । रसायना. ६५; र. र. । स्वरभेदा.)

समूलपत्रमादाय ब्राह्मीं प्रक्षाल्य वारिणा ।
उलूखले क्षोदयित्वा रसं वस्त्रेण गालयेत् ॥
रसे चतुर्गुणे तस्मिन्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
औषधानि तु पेष्याणि तानीमानि प्रदापयेत् ॥
हरिद्रा मालती कुष्ठं त्रिवृता सहरीतकी ।
एतेषां पलिकान्भागान् शेषाणि कार्षिकाणि तु ॥
पिप्पल्योऽथ विडङ्गानि सैन्धवं शर्करा वचा ।
सर्वमेतत्समालोड्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥
एतत्प्राशितमात्रेण वाग्विशुद्धिश्च जायते ।
सप्तरात्रप्रयोगेण किन्नरैः सह गीयते ॥
अर्धमासप्रयोगेण सोमराजीवपुर्भवेत् ।
मासमात्रप्रयोगेण श्रुतमात्रं तु धारयेत् ॥
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि अर्शांसि विविधानि च ।
पञ्चगुल्मान् प्रमेहांश्च कासं पञ्चविधं जयेत् ॥
वन्ध्यानां चैव नारीणां नराणां चाल्परेतसाम् ।
घृतं सारस्वतं नाम बलवर्णाग्निवर्धनम् ॥

मूल और पत्र सहित ताजी ब्राह्मीको पानीसे धोकर कूटकर स्वरस निकालें। तत्पश्चात् २ सेर घीमें ८ सेर यह स्वरस और निम्न लिखित कल्क तथा ८ सेर पानी एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

कल्क—हल्दी, चमेलीके फूल, कूठ, निसोत और हर्र ५-५ तोले तथा पीपल, बायबिडंग, सेंधा, खांड और बच १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ पीस लें।

इसे सेवन करनेसे वाणि शुद्ध हो जाती है।

इसके केवल १ सप्ताहके सेवनसे स्वर किन्नरोंके समान सुन्दर हो जाता है। २ सप्ताह तक सेवन करनेसे मुख अत्यन्त कान्तिमान् हो जाता है। यदि इसे १ मास तक सेवन किया जाय तो मनुष्य श्रुतिधर हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह अठारह प्रकारके कुष्ठ, अर्श, पांच प्रकारके गुल्म, प्रमेह और पांच प्रकारकी खांसी को भी नष्ट करता है।

यह घृत बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि करने वाला तथा बन्ध्या स्त्रियें और अल्पशुक्र मनुष्यें के लिये हितकारी है।

(४६७८) **ब्राह्मीघृतम्** (५)

(सु. सं. । चि. अ. २८)

ब्राह्मीस्वरसप्रस्थद्वये घृतप्रस्थं विडङ्गतण्डुलानां कुडवं द्वे द्वे पले वचात्रिवृतयोर्द्वादशहरीतक्यामलकविभीतकानि श्लक्ष्णपिष्टान्यावाप्यैकध्यं साधयित्वा स्वनुगुप्तं निदध्यात्। ततः पूर्वविधानेन मात्रां यथाबलमुपयुञ्जीत जीर्णे पयः सर्पिरोदन इत्याहारः एतेनोर्द्ध्वमधस्तिर्य्यक्कृमयो निष्क्रामन्ति। अलक्ष्मीरपक्रामति, पुष्कर कर्णः स्थिरवयाः श्रुतनिगादी त्रिवर्ष शतायुर्भवत्येतदेव कुष्ठविषमज्वरापस्मारोन्माद विषभूत ग्रहेष्वन्येषु च महाव्याधिषु च संशोधनमादिशन्ति ॥

ब्राह्मीका स्वरस ४ सेर, घी २ सेर तथा निम्न लिखित कल्क (और १६ सेर पानी) एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

कल्क—बायबिडंगके चावल (गिरी) २० तोले, बच और निसोत १०-१० तोले तथा हर्र, बहेड़ा और आमला २०-२० तोले। सबको पानीके साथ पीस लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करने और औषध पचने पर घृतयुक्त भात तथा दूधका आहार करनेसे शरीरसे कृमि निकल जाते हैं। अलक्ष्मी दूर हो जाती है। दूरकी आवाज सुनाई देने लगती है। आयु स्थिर हो जाती है। मनुष्य वेदवक्ता हो जाता है और उसे ३०० वर्षकी आयु प्राप्त होती है।

यह घृत कुष्ठ, विषमज्वर, अपस्मार, उन्माद, विष, भूत, ग्रह और अन्य अनेक महाव्याधियेंको नष्ट करता है।

(४६७९) **ब्राह्मीघृतम्** (६)

(वै. म. र. । पटल १५)

**ब्राह्मीस्वरसे सिद्धं कुष्ठवचाशङ्खपुष्पिकागर्भे।
आजं पीतं सर्पिः सर्वापस्मारदोषघ्नम् ॥**

ब्राह्मीका स्वरस ४ सेर, बकरीका घी १ सेर तथा कूठ, बच और शंखपुष्पीका समान भाग मिश्रित कल्क ५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब स्वरस जल जाय तो घृतको छान लें।

इसे पीनेसे समस्त प्रकारका अपस्मार (मिरगी) रोग नष्ट होता है।

इति बकारादिघृतप्रकरणम्।

अथ बकारादितैलप्रकरणम् ।

(४६८०) **बकुलाद्यं तैलम्**

(भै. र. । मुख.; र. र.; धन्व.; व. से.; च. द. । मुखरोगा.; ग. नि. । तैला.)

बकुलस्य फलं लोध्रं वज्रवल्ली कुरण्टकम् ।
चतुरङ्गुलबब्बोलवाजिकर्णारिमाशनम् ॥
एषां कषायकल्काभ्यां तैलं पक्वं मुखे धृतम् ।
स्थैर्यं करोति चलतां दन्तानां नावनेन च ॥

मौलसिरीके फल, लोध, हडसंघरी, पियाबासाकी जड़, अमलतासकी छाल,[1] बबूलकी छाल, अश्वकर्ण (पलाशभेद) की छाल, दुर्गन्धित खैर और असना वृक्षका सार समान भाग मिश्रित ८ सेर लेकर सबको अधकुटा करके ६४ सेर पानीमें पकावें । जब १६ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें और फिर ४ सेर तेलमें यह क्राथ तथा उपरोक्त ओषधियोंका समान भाग मिश्रित कल्क २६ तोले ८ माशे मिलाकर क्वाथ जलने तक पकाकर छान लें ।

इसे मुखमें धारण करनेसे तथा इसकी नस्य लेनेसे हिलते हुवे दांत स्थिर हो जाते हैं ।

(४६८१) **बलातैलम्** (१)

(ग. नि. । तैला.)

बलाया जातसारायास्तुलां कुर्यात्सुकुट्टिताम् ।
पचेत्तोयचतुर्द्रोणे चतुर्भागावशेषिते ॥
पलानि दश पिष्टानि बलायास्तत्र दापयेत् ।
लुञ्चितानां तिलानाञ्च दद्यात्तैलाढकद्वयम् ॥
चतुर्गुणेन पयसा पाचयेन्मृदुनाऽग्निना ।
वातव्याधिषु सर्वेषु रक्तपित्ताश्रयाश्च ये ॥
व्यापन्नासु च योनिषु शस्तं नष्टे च रेतसि ।
तालुशोषं तृषां दाहं पार्श्वशूलमसृग्दरम् ॥
हन्ति शोषमपस्मारं विसर्पं सशिरोग्रहम् ।
आयुर्वर्णकरं चैव बलातैलं प्रजाकरम् ॥

६। सेर खरैटीको अच्छी तरह कूटकर १२८ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर पानी शेष रहने पर छान लें तथा १६ सेर तिलके तैलमें यह क्वाथ, ५० तोले खरैटीका कल्क, ५० तोले तुषरहित तिल और ६४ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

यह तैल समस्त वातव्याधि, रक्ताश्रित वात, पित्ताश्रित वात, योनिदोष, तालुशोष, तृषा, दाह, पार्श्वशूल, रक्तपित्त, शोष, अपस्मार, विसर्प और शिरोग्रह आदि रोगोंको नष्ट करता और आयु वर्ण तथा प्रजाकी वृद्धि करता है । अल्पवीर्य पुरुषोंके लिये हितकारी है ।

(४६८२) **बलातैलम्** (२) (वृहत्)

(वा. भ. । चि. अ. २१; ग. नि.१ । तैला.; च. सं. । चि. अ. २८; यो. चि. । अ. २३)

वृहद्बलायास्तु तुलां चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ।

[1] —गदनिग्रहके अतिरिक्त प्रायः अन्य सभी ग्रन्थों में २५ पल गिलोय और १२॥ पल रास्ना क्वाथ्य द्रव्योंमें अधिक लिखी है ।

समुत्तार्य ततः सम्यग्दशभागस्थिते रसे ॥
दधिमण्डेक्षुनिर्यासयुक्तैस्तैलाढकं समैः ।
पचेत्साजपयोर्धांशैः कल्कैरेभिः पलोन्मितैः ॥
शठीसरलदार्वेलामञ्जिष्ठागुरुचन्दनैः ।
पद्मकातिबलामुस्तामूर्पपर्णीहरेणुभिः ॥
यष्ट्याह्वसुरसव्याघ्रनखर्षभकजीवकैः ।
पलाशरसकस्तूरीनलिकाजातिकोशकैः ॥
स्पृक्काकुङ्कुमशैलेयमालतीकट्फलाम्बुभिः ।
त्वचाकुन्दुरुकर्पूरतुरुष्कश्रीनिवासकैः ॥
लवङ्गनखकङ्कोलकुष्ठमांसीप्रियङ्गुभिः ।
स्थौणेयतगरध्यामवचादमनचोरकैः ॥
सनागरकेशरैः सिद्धे दद्यात्पात्रावतारिते ।
तत्र कल्कं ततः पूतं विधिना च प्रयोजयेत् ॥
कासं श्वासं ज्वरं छर्दिं शूलं हिक्कां क्षतक्षयम् ।
प्लीहं शोषमपस्मारमलक्ष्मीं च प्रणाशयेत् ॥
बलातैलमिदं श्रेष्ठं वातव्याधिहरं परम् ॥

६। सेर महाबलाको कूटकर १२८ सेर पानी में पकावें और जब दसवां भाग पानी शेष रह जाय तो उसे छान लें । तत्पश्चात् ८-८ सेर दधिमण्ड (दहीका घोल), ईखका रस और तिलका तैल तथा ४ सेर बकरीका दूध और उपरोक्त क्वाथ तथा निम्न लिखित चीजोंका कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

कल्क-द्रव्य—सठी (कचूर), धूपसरल, देवदारु, इलायची, मजीठ, अगर, सफेद चन्दन, पद्माक, अतिबला (कंघी), नागरमोथा, माषपर्णी, रेणुका, मुलैठी, तुलसी, नख, ऋषभक, जीवक, ढाकका गोंद, कस्तूरी, नलिका, जावित्री, स्पृक्का, केसर, छरीला, चमेलीके फूल, कायफल, सुगन्धबाला, दालचीनी, कुन्दरु, कपूर, सिलारस, पियाबासेकी जड़, लौंग, नख, कङ्कोल, कूठ, जटामांसी, फूलप्रियङ्गु, थुनेर (स्थौणेय), तगर, सुगन्ध तृण, बच, दवना, चोरक और नागकेसर ५-५ तोले । (इनमेंसे कस्तूरी, केसर और कपूर तैलको छाननेके बाद मिलाने चाहियें ।)

यह तैल खांसी, श्वास, ज्वर, छर्दि, शूल, हिचकी, क्षत, क्षय, प्लीहा, शोष, अपस्मार, कान्तिहीनता और वातव्याधिको नष्ट करता है ।

(४६८३) बलातैलम् (३)
(ग. नि. । तैला.)

बलाशतकषाये तु तैलस्यार्धाढकं पचेत् ।
कल्कैर्मधुकमञ्जिष्ठाचन्दनोत्पलपद्मकैः ॥
सूक्ष्मैलापिप्पलीकुष्ठत्वगेलागरुकेशरैः ।
गन्धैश्च जीवनीयैश्च क्षीराढकसमायुतम् ॥
एतन्मृद्वग्निना पक्वं स्थापयेद्राजने शुभे ।
सर्ववातविकारांस्तु सर्वधात्वन्तराश्रयान् ॥
तैलमेतत्प्रशमयेच्छिन्नाभ्रमिव मारुतः ।
बलातैलं नरेन्द्राईमेतद्वातविकारनुत् ॥

६। सेर खरैटीको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छानकर उसमें ४ सेर तिलका तैल तथा ८ सेर दूध और निम्न लिखित चीजोंका कल्क मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क-द्रव्य—मुलैठी, मजीठ, सफेद चन्दन, नीलोत्पल, पद्माक, छोटी इलायची, पीपल, कूठ,

दारचीनी, बड़ी इलायची, अगर, केसर, गन्धद्रव्य (इलायची, सफेद चन्दन, केसर, अगर, मुरामांसी, कंकोल, जटामांसी, कचूर, चीरकी छाल, ग्रन्थिपर्ण, कस्तूरी, नख, जुन्दबेदस्तर, खस और लवंगादि) और जीवनीय गण । (सब समान—भाग मिश्रित आधा सेर ।)

नोट—कस्तूरी आदि तैल छाननेके बाद मिलानी चाहिये ।

यह तैल समस्त धातुगत सर्व वातज रोगोंको नष्ट करता है ।

(४६८४) **बलातैलम्** (४)

(ग. नि. । तैला.; सु. सं. । चि. अ. १५; वृ. मा.,[1] र. र.; च.द. । वा. व्या.; शा. ध. । ख. २ अ. ९)

बलामूलकषायस्य दशमूलीकृतस्य च ।
यवकोलकुलत्थानां क्काथस्य पयसस्तथा ॥
अष्टावष्टौ शुभा भागास्तैलादेकस्तदैकतः ।
पचेदावाप्य मधुरं गणं सैन्धवसंयुतम् ॥
तथागरुं सर्जरसं सबलं देवदारु च ।
मञ्जिष्ठां चन्दनं कुष्ठमेलां कालानुसारिवाम् ॥
शतावरीं चाश्वगन्धां शतपुष्पां पुनर्नवाम् ।
तत्साधुसिद्धं सौवर्णे राजते मृन्मयेऽपि वा ॥
प्रक्षिप्य कलशे सम्यक् स्वनुगुप्तं निधापयेत् ।
बलातैलमिदं ख्यातं सर्ववातविकारनुत् ॥
यथाबलमतो मात्रां सूतिकायै प्रदापयेत् ।
या च गर्भार्थिनी नारी क्षीणशुक्रश्च यः पुमान् ॥

[1] वृन्द माधव में जटामांसी, शैलेय, तेजपात और दोनों सारिवा अधिक लिखी हैं. ।

धातुक्षीणे मर्महते मथितेऽभिहते तथा ।
भग्ने श्रमाभिपन्ने च सर्वथैव प्रयुज्यते ॥
एतदाक्षेपकादींश्च वातव्याधीनपोहति ।
प्रत्यग्रधातुः पुरुषो भवेत्सुस्थिरयौवनः ॥
राज्ञामेतत्प्रकर्तव्यं राजमात्राश्च ये नराः ।
सुखिनः सुकुमाराश्च धनिनश्चापि ये नराः ॥

बला (खरैटी) की जड़का क्काथ, दशमूलका क्काथ, जौका क्काथ, बेरका क्काथ, कुलथीका क्काथ और दूध १६–१६ सेर, तिलका तेल २ सेर तथा निम्न चीज़ोंका कल्क २० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और जब तैल मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

कल्क–द्रव्य—मधुरादि गण (काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, गिलोय, काकड़ासिंगी, बंसलोचन, पद्माक, मुनक्का, जीवन्ती, मुलैठी और प्रपौण्डरीक (पुण्डरिया), सेंधा, अगर, राल, बलाबीज (बीजबन्द), देवदारु, मजीठ, सफेद चन्दन, इलायची, कूठ, सारिवा, सतावर, असगन्ध, सोया और पुनर्नवा (बिसखपरा) ।

इसके सेवनसे समस्त वातजरोग नष्ट होते हैं । यह तैल प्रसूता स्त्री, अल्पवीर्य मनुष्यों और गर्भकी इच्छा रखने वाली स्त्रियोंके लिये हितकारी हैं । धातुक्षीणता, मर्माघात, भग्न, श्रम और आक्षेपकादि वातज रोग इसके सेवनसे नष्ट होते और धातुवृद्धि होती तथा यौवन स्थिर रहता है ।

(४६८५) **बलादितैलम्**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २४)

बलाक्काथाढकं क्षिप्त्वा दधि तत्राढकं क्षिपेत् ।
कुलत्थाढकयूषं तु सौवीरकरसाढकम् ॥
आढकं च तथैरण्डतैलं तत्र प्रदापयेत् ।
एकत्र कृत्वा विपचेत् योजयेदौषधं च तत् ॥
शतपुष्पा देवदारु पिप्पली गजपिप्पली ।
त्रिसुगन्धि मुरामांसी कुष्ठं द्विपञ्चमूलकम् ॥
चूर्णं विनिक्षिपेत् तत्र सिद्धं तदवतारयेत् ।
पाने चाभ्यङ्गे च योज्यं निरूहे बस्तिकर्मणि ।
हन्ति वातामयं सर्वं श्रेष्ठं गुणगणप्रदम् ॥

खरैटीका क्वाथ ८ सेर, दही ८ सेर, कुलथी का क्वाथ ८ सेर, सौवीरक काञ्जी ८ सेर और अरण्डका तेल ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलावें और उसमें निम्न लिखित चीजोंका कल्क मिलाकर पकावें। जब तैलमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

कल्कद्रव्य—सोया, देवदारु, पीपल, गजपीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, मुरामांसी, कूठ और दशमूल का चूर्ण समान भाग मिश्रित १ सेर।

इसे पीने तथा इसकी मालिश और बस्ति करनेसे समस्त वातजरोग नष्ट होते हैं।

(४६८६) **बलाद्यं तैलम्**

(व. से. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

बलामधूकमञ्जिष्ठापद्मपद्मकचन्दनैः ।
समुद्रफेनह्रीबेररजनीगैरिकोत्पलैः ॥
पिष्टैरेतैः पचेत्तैलं मस्तुक्षीरं चतुर्गुणम् ।
वातपित्तज्वराज्जीर्णात्तिनाभ्यक्तः प्रमुच्यते ॥

खरैटीकी जड़, मुलैठी, मजीठ, कमल, पद्माक सफेद चन्दन, समुद्रफेन, सुगन्ध बाला, हल्दी, गेरु और नीलोत्पलका समान भाग मिश्रित चूर्ण २० तोले, तिल तैल २ सेर तथा मस्तु (दहीका तोड़) और दूध ८-८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इसकी मालिशसे वातपित्तज जीर्णज्वर नष्ट होता है।

(४६८७) **बलाद्यं यमकम्**

(व. से. । शिरो.)

बलाजीवन्तिनिर्यासैः पयोभिर्यमकं पचेत् ।
जीवनीयैश्च नस्यैश्च सर्वजत्रूर्ध्वरोगजित् ॥

खरैटी और जीवन्ती १-१ सेर लेकर दोनों को १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छानकर उसमें आधा सेर तिलका तैल, आधा सेर घी, १ सेर दूध और १० तोले जीवनीयगणका कल्क मिलाकर पकावें और तैलमात्र शेष रहनेपर छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे समस्त ऊर्ध्वजत्रुगत रोग नष्ट होते हैं।

(**जीवनीयगण**—जीवन्ती, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी और मुलैठी।)

(४६८८) बलाद्यायं तैलम्

(व. से. । नासा.)

उभे बले बृहत्यौ च विडङ्गं साविकङ्कतम् ।
श्वेतामूलं महाभद्रां वर्षाभूं चापि संहरेत् ॥
तैलमेभिर्विपकन्तु नस्यमस्योपकल्पयेत् ॥

खरैटी और कंघीकी जड़, कटेली, बड़ी कटेली (बनभण्टा), बायबिडंग, कंटाई, सफेद कोयलकी जड़, अरलुकी छाल और पुनर्नवा (बिसखपरा) का काथ ८ सेर; इन्हींका कल्क १३ तोले ४ माशे और तिलका तैल २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे कफज प्रतिश्याय नष्ट होता है।

(४६८९) बाधिर्यनाशकतैलम्

(यो. त. । त. ७०)

तैलं काञ्जिकबीजपूरकरसक्षौद्रैः समूत्रैः शृतम् ।
स्यात्क्षौद्रार्द्रकशिग्रुमूलकदलीकन्दद्रवैर्वा समैः ॥

काञ्जी, बिजौरेका रस, शहद और गोमूत्र १-१ सेर तथा तिलका तेल १ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तेलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

अथवा—शहद, अद्रकका रस, सहंजनेकी जड़की छालका रस, और केलेकी जड़का रस १-१ सेर तथा तेल १ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें।

इन दोनों तेलोंमें से किसीको भी मन्दोष्ण करके कानमें डालनेसे बधिरता नष्ट होती है।

(४६९०) बिल्वतैलम् (१)

(भै. र. । ग्रहणी.)

तुलार्द्धं शुष्कबिल्वस्य तुलार्द्धं दशमूलतः ।
जलद्रोणे विपक्तव्यं चतुर्भागावशेषितम् ॥
आर्द्रकस्य रसप्रस्थमारनालं तथैव च ।
तैलप्रस्थं समादाय क्षीरप्रस्थं तथैव च ॥
धातकीबिल्वकुष्ठश्च शटी रास्ना पुनर्नवा ।
त्रिकटुः पिप्पलीमूलं चित्रकं गजपिप्पली ॥
देवदारु वचा कुष्ठं मोचकं कटुरोहिणी ।
तेजपत्राजमोदा च जीवनीयगणस्तथा ॥
एषामर्द्धपलान् भागान् पाचयेन्मृदुनाग्निना ।
एतद्धि बिल्वतैलाख्यं मन्दाग्नीनां प्रशस्यते ॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति अतीसारमरोचकम् ।
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्ति अर्शसामपि नाशकम् ॥
श्लीपदं विविधं हन्ति अन्त्रवृद्धिश्च नाशयेत् ।
कफवातोद्भवं शोथं ज्वरमाशु व्यपोहति ॥
कासं श्वासश्च गुल्मश्च पाण्डुरोगविनाशनम् ।
मक्कलशूलशमनं सूतिकातङ्कनाशनम् ॥
मूढगर्भे च दातव्यं मूढवातानुलोमनम् ।
शिरोरोगहरश्चैव स्त्रीणां गदनिषूदनम् ॥
रजोदुष्टाश्च या नार्यो रेतोदुष्टाश्च ये नराः ।
तेऽपि तारुण्यशुक्राढ्या भविष्यन्ति महाबलाः ॥
वन्ध्यापि लभते पुत्रं शूरं पण्डितमेव च ।
बिल्वतैलमिति ख्यातमात्रेयेण विनिर्मितम् ॥

सूखी बेलगिरी और दशमूल आधी आधी तुला (प्रत्येक ३ सेर १० तोले) लेकर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें। तत्पश्चात् यह क्वाथ तथा २-२ सेर अद्रकका रस, कांजी, तिलका तेल और

दूध तथा निम्न लिखित चीज़ोंका कल्क एकत्र मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

कल्कद्रव्य—धायके फूल, बेलगिरी, कूठ, कचूर, रास्ना, पुनर्नवा (बिसखपरा), सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, चीता, गजपीपल, देवदारु, बच, कूठ, मोचरस, कुटकी, तेजपात, अजमोद और जीवनीय गणकी ओषधियां आधा आधा पल (२॥-२॥ तोले ।)

(**जीवनीयगण**—जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती और मुलैठी ।)

यह तैल मन्दाग्नि, ग्रहणीविकार, अतिसार, अरुचि, संग्रहग्रहणी, अर्श, श्लीपद, अन्त्रवृद्धि, कफवातज शोथ, ज्वर, खांसी, श्वास, गुल्म, पाण्डु रोग, मक्कलशूल, सूतिकारोग, मूढगर्भ सम्बन्धी विकार, मूढवात, शिरोरोग और स्त्री रोगोंको नष्ट करता है ।

जिन स्त्रियोंका रज दूषित हो या जिन पुरुषोंका वीर्य विकृत् हो यदि वे इसे सेवन करें तो तरुणके समान् बलशाली हो जाते हैं । यदि इसे वन्ध्या स्त्री सेवन करे तो वह अवश्य ही बुद्धिशाली पुत्रको जन्म देती है ।

(४६९१) बिल्वतैलम् (२)

(भा. प्र. म. ख.; वृ. नि. र. । अतिसारा.)

तुलां सङ्कुट्य बिल्वस्य पचेत्पादावशेषितम् ।
सक्षीरं साधयेत्तैलं श्लक्ष्णपिष्टैरिमैः समैः ॥
बिल्वं सधातकीकुष्ठं शुण्ठीरास्नापुनर्नवाः ।
देवदारु वचा मुस्तं लोध्रमोचरसान्वितम् ॥
एभिर्मृद्वग्निना पक्वं ग्रहण्यर्शोऽतिसारनुत् ।
बिल्वतैलमिति ख्यातमत्रिपुत्रेण भाषितम् ॥
ग्रहण्यर्शोधिकारे ये स्नेहाः समुपदर्शिताः ।
प्रयोज्यास्तेऽतिसारेऽपि त्रयाणां तुल्यहेतुना ॥

६। सेर बेलगिरीको कूटकर ३२ सेर पानी में पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो उसे छान लें। तदनन्तर २ सेर तेलमें यह क्वाथ, २ सेर दूध और निम्न लिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब तेलमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—बेलगिरी, धायके फूल, कूठ, सोंठ, रास्ना, पुनर्नवा (बिसखपरा), देवदारु, बच, नागरमोथा, लोध और मोचरस का अत्यन्त महीन चूर्ण समानभाग-मिश्रित २० तोले ।

यह तेल संग्रहणी, अर्श और अतिसारका नाश करता है ।

यतः अतिसार, संग्रहणी और अर्श समान कारणों से ही उत्पन्न होते हैं इस लिये संग्रहणी और अर्शके प्रयोग अतिसारमें भी प्रयुक्त करने चाहियें ।

(४६९२) बिल्वतैलम् (३)

(भै. र.; च. द. । कर्ण.; वृ. मा.; र. र. । कर्ण.; शा. ध. । ख. २ अ. ९; वं. से.; यो. र.; भै. र.; भा. प्र.; वृ. नि. र. । कर्णरो.)

फलं बिल्वस्य मूत्रेण पिष्ट्वा तैलं विपाचयेत् ।
साजक्षीरं तद्धितरेद् बाधिर्ये कर्णपूरणे ॥

२० तोले बेलगिरीको गोमूत्रमें पीसलें और फिर २ सेर तेलमें यह कल्क, ८ सेर बकरीका दूध और ८ सेर पानी मिलाकर पकावें। जब तैल मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इसे कानमें डालनेसे बधिरता नष्ट होती है।

(४६९३) **बिल्वतैलम् (४)**

(भै. र. । कर्ण.)

बिल्वगर्भे पचेत्तैलं गोमूत्राजपयोऽन्वितम् ।
बाधिर्ये पूरयेत्तेन कर्णौ स कफवातजित् ॥

तिलका तेल २ सेर, बेलगिरीका कल्क २० तोले और गोमूत्र तथा बकरीका दूध ४–४ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तैल मात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इसे कानोंमें डालनेसे बधिरता और कफज तथा वातज कर्णरोग नष्ट होते हैं।

(४६९४) **बिभीतकाद्यं तैलम्**

(व. से. । बालरो.)

बिभीतकं वचा कुष्ठं हरितालं मनःशिला ।
एभिस्तैलं विपक्वन्तु बालानां पूतिकर्णके ॥

बहेड़ा, बच, कूठ, हरताल और मनसिलका चूर्ण ४–४ तोले तथा तिलका तैल २ सेर और पानी ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकाकर छान लें।

यह तैल बालकोंके पूतिकर्ण रोगको नष्ट करता है।

(४६९५) **बिभीतकाद्यं तैलम्**

(व. से. । नेत्ररो.)

बिभीतकशिवाधात्रीपटोलारिष्टवासकैः ।
आढकीरससंसिद्धं तैलं तिमिरनुत्परम् ॥

बहेड़ा, हर्र, आमला, पटोल, नीमकी छाल और बासा समान भाग–मिश्रित १३ तोले ४ माशे, अरहरका क्वाथ ८ सेर और तिलका तेल २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर क्वाथ जलने तक पकाकर छान लें।

यह तैल तिमिरको नष्ट करता है।

(४६९६) **बृहतीतैलम्**

(नपु. मृता. । त. ६)

बृहतीपञ्चाङ्गमानीय अजादुग्धे विभावयेत् ।
यन्त्रे पातालिके तैलं विधिना संहरेत्सुधान् ॥
एकविंशतियोगेन मुच्यते स्वकृतार्दनात् ॥

बड़ी कटेली के पञ्चाङ्गको कूट छानकर कई दिन तक बकरीके दूधमें घोटें और फिर उसकी गोलियां बनाकर सुखाकर पातालयन्त्रसे उनका तेल निकाल लें।

इसकी २१ दिन तक इन्द्री पर मालिश करनेसे हस्तदोष जनित विकार (इन्द्रीकी शिथिलता आदि) नष्ट हो जाते हैं।

(४६९७) **बृहत्यादितैलम्**

(वृ. मा. । क्षुद्ररोगा.)

बृहतीरससिद्धेन तैलेनाभ्यज्य बुद्धिमान् ।
शिलारोचनकासीसचूर्णैर्वा प्रतिसारयेत् ॥

बड़ी कटेलीका रस ४ सेर और सरसोंका तेल १ सेर लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तेलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

अलस (खारवों) पर यह तेल लगाकर मनसिल, गोरोचन और कसीसका चूर्ण मलना चाहिये।

इति बकारादितैलप्रकरणम्

अथ बकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम् ।

(४६९८) **बब्बुल्यासवः** (बब्बूल्याद्यरिष्टः)

(ग. नि. । आसवा. ६; शा. ध. । खं. २ अ. १०; भै. र. । अतीसारा.)

तुलाद्वयं तु बब्बुल्याश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ।
द्रोणशेषे रसे शीते गुडस्य त्रिशतं क्षिपेत् ॥
धातक्याः षोडशपलं पिप्पलीनां पलद्वयम् ।
जातीलवङ्गकङ्कोलमेलात्वक्पत्रकेसरम् ॥
मरिचेन समायुक्तं पलिकांस्तत्र कल्पयेत् ।
मासमात्रं स्थितो ह्येष बब्बुल्यासवसञ्ज्ञितः ॥
क्षयं कुष्ठं प्रमेहांश्च कासश्वासांश्च नाशयेत् ॥

१२ सेर बबूलकी छालको १२८ सेर पानीमें पकावें और जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर ठंडा करके उसमें ३ तुला (१८॥ सेर) गुड़, १ सेर धायके फूलोंका चूर्ण और २ पल पीपल तथा १-१ पल (५-५ तोले) जावत्री, लौंग, कंकोल, इलायची, दारचीनी, तेजपात, नागकेसर और काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर सबको चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें; और १ मास पश्चात् निकालकर छान लें ।

इसके सेवनसे क्षय, कुष्ठ, प्रमेह, खांसी और श्वासका नाश होता है ।

(४६९९) **बलारिष्टः**

(भै. र. । वातव्या.)

बलाश्वगन्धयोर्ग्राह्यं पृथक् पलशतं शुभम् ।
चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा द्रोणमेवावशेषयेत् ॥
शीते तस्मिन् रसे पूते क्षिपेद् गुडतुलात्रयम् ।
धातकीं षोडशपलां पयस्यां द्विपलांशिकाम् ॥
पञ्चाङ्गुलपलद्वन्द्वं रास्नामेलां प्रसारिणीम् ।
देवपुष्पमुशीरञ्च श्वदंष्ट्राश्च पलांशिकाम् ॥
मासं भाण्डे स्थितस्त्वेष बलारिष्टो महाफलः ।
हन्त्युग्रान् वातजान् रोगान् बलपुष्ट्यग्निवर्धनः॥

खरैटीकी जड़ और असगन्ध १००-१०० पल (प्रत्येक ६। सेर) लेकर दोनों को कूटकर पृथक् पृथक् ६४-६४ सेर पानीमें पकावें और १६-१६ सेर पानी शेष रहने पर छानकर दोनों काथोंको एकत्र मिला लें और फिर उसके ठंडा होने पर उसमें ३ तुला (१८॥ सेर) गुड़ और १ सेर धायके फूलोंका चूर्ण तथा १०-१० तोले क्षीरविदारी और अरण्डकी छालका चूर्ण एवं ५-५ तोले रास्ना, इलायची, प्रसारणी, लौंग, खस और गोखरुका चूर्ण मिलाकर चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और १ मास पश्चात् निकालकर छान लें ।

इसके सेवनसे प्रबल वातव्याधि नष्ट होती और बल पुष्टि तथा अग्निकी वृद्धि होती है ।

(४७००) **बीजकासवः**

(ग. नि. । आसवा.; चरक । चि. अ. १६ पाण्डु.)

बीजकात्षोडशपलं त्रिफलायाश्च विंशतिः ॥
द्राक्षायाः पञ्च लाक्षायाः सप्त द्रोणे तथाऽम्भसि ।
साध्यं पादावशेषे च पूतशीते प्रदापयेत् ॥
शर्करायास्तुलां प्रस्थं क्षौद्रं दद्याच्च कार्षिकम् ।
व्योषव्याघ्रनखोशीरं क्रमुकं सैलवालुकम् ॥

मधुकं कुष्ठमित्येतच्चूर्णितं घृतभाजने ।
यवेषु दशरात्रस्थं ग्रीष्मे, द्विः शिशिरे स्थितम् ॥
पिबेत्तद्ग्रहणीपाण्डुरोगार्शःशोफगुल्मनुत् ।
मूत्रकृच्छ्राश्मरीकुष्ठकामलासन्निपातनुत् ॥

विजयसार १ सेर, त्रिफला १। सेर, द्राक्षा (मुनक्का) २५ तोले और लाख ३५ तोले लेकर सबको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहनेपर छानकर उसमें ६। सेर खांड, २ सेर शहद तथा १।-१। तोला सोंठ, मिर्च, पीपल, नख, खस, सुपारी, एलबालुक, मुलैठी और कूटका चूर्ण मिलाकर सबको चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके उसे जौके ढेरमें दबा दें और ग्रीष्म ऋतुमें १० दिन पश्चात् तथा शीतकालमें २० दिन पश्चात् निकालकर छान लें।

इसके सेवनसे ग्रहणी, पाण्डु, अर्श, शोथ, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, कुष्ठ, कामला और सन्निपातका नाश होता है।

इति बकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम् ।

अथ बकारादिलेपप्रकरणम् ।

(४७०१) बदरीमूलादियोगः

(ग. नि. । शिरो.)

ललाटे बदरीमूलपिप्पलीनां प्रलेपनम् ।
हन्ति सर्वत्रतो लग्ना रुजो दैन्यमिव व्यथाम् ॥

बेरीकी जड़की छाल और पीपलको पीसकर लेप करनेसे मस्तक पीड़ा नष्ट होती है।

(४७०२) बदर्यादिलेपः

(वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

बदरीपल्लवलेपः श्रीखण्डारिष्टकेन संयुक्तः ।
दातव्यः पादतलयोस्त्वरयारुग्दाहसन्निपातघ्नः ॥

बेरीके पत्ते, सफेद चन्दन और नीमके पत्ते समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर पैरोंके तलुवोंमें लेप करनेसे रुग्दाह सन्निपातमें लाभ पहुंचता है।

(४७०३) बब्बूलबीजादिलेपः

(यो. र. । स्नायु.)

बब्बूलबीजं गोमूत्रपिष्टं हन्ति प्रलेपनात् ।
स्नायुकानि समस्तानि सशोथानि सरुञ्जि च ॥

बबूलके बीजोंको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे शोथ और पीड़ायुक्त सर्व प्रकारके स्नायुक (नहरवा) रोग नष्ट होते हैं।

(४७०४) बब्बूलादियोगः

(वं. से.; यो. र. । उपदंश. वृ. नि. र. । उपदंशा.)

बब्बूलदल[1] चूर्णेन दाडिमत्वग्रजोऽथ वा ।
गुण्डनं लिङ्गदेशस्य लेपः पूगफलेन वा ॥

आतशक सम्बन्धी लिङ्गके घावोंपर बबूलके

[1] बन्धूकदलेति पाठान्तरम् ।

सूखे पत्तोंका या अनारकी छालका अथवा सुपारीका चूर्ण लगाना चाहिये ।

(४७०५) **बलादिलेपः** (१)

(यो. र.; वृ. नि. र. । शिरोरो.)

बलानीलोत्पलं दूर्वा तिलाः कृष्णा पुनर्नवा ।
शङ्खकेऽनन्तवाते च लेपः सर्वशिरोर्तिनुत् ॥

खरैटीकी जड़, नीलोत्पल, दूबघास, काले तिल और पुनर्नवा (साठी) का लेप करनेसे शङ्खक और अनन्तवातादि शिरोरोग नष्ट होते हैं ।

(४७०६) **बलादिलेपः** (२)

(ग. नि. । विसर्पा.)

बलानागबलापथ्याभूर्जग्रन्थिबिभीतकम् ।
वंशपत्राण्यग्निमन्थं दद्याद्ग्रन्थिप्रलेपनम् ॥

खरैटी, गंगेरन, हर्र, भोजपत्रकी गांठ, बहेड़ा, बांसके पत्ते और अरणीकी जड़की छाल समान भाग लेकर सबको पीसकर लेप करने से ग्रन्थि-विसर्प नष्ट होता है ।

(४७०७) **बलादिलेपः** (३)

(च. स. । चि. अ. ८ रांजय.)

बला रास्ना तिलाः सर्पिर्मधुकं नीलमुत्पलम् ।
पलङ्कषा देवदारु चन्दनं केशरं घृतम् ॥
वीरा बला विदारी च कृष्णगन्धा पुनर्नवा ।
शतावरी पयस्या च कत्तृणं मधुकं घृतम् ॥
चत्वार एते श्लोकार्धैः प्रदेहाः परिकीर्त्तिताः ।
शस्ताः संसृष्टदोषाणां शिरःपार्श्वांसशूलिनाम् ॥

(१) खरैटी, रास्ना, तिल, मुलैठी और नीलोत्पलके चूर्णको घीमें मिलाकर लेप करें ।

(२) गूगल, देवदारु, लालचन्दन और केसरके चूर्णको घीमें मिलाकर लेप करें ।

(३) क्षीरकाकोली, खरैटी, बिदारीकन्द, सहंजनेकी छाल और पुनर्नवा (साठी) को पीस कर लेप करें ।

(४) शतावर, क्षीरकाकोली, सुगन्ध तृण और मुलैठीके चूर्णको घीमें मिलाकर लेप करें ।

ये चारों लेप राजयक्ष्मा में होने वाले शिर-शूल, अंसशूल और पार्श्वशूल में उपयोगी हैं ।

(४७०८) **बल्यादिलेपः**

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

बलिवेल्लाग्निभल्लातदन्तिशम्पाकनिम्बजैः ।
काञ्जिके पेषितैर्लेपः श्वेतकुष्ठविनाशकृत् ॥

गन्धक, बायबिड़ंग, चीतेकी जड़की छाल, भिलावा, दन्तीमूल, अमलतासके पत्ते और नीमकी छाल समान भाग लेकर सबको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे श्वेतकुष्ठ नष्ट होता है ।

(४७०९) **बाकुच्यादिलेपः**

(वृ. मा. । कुष्ठा.)

कुडवोऽवल्गुजबीजाद्धरितालचतुर्थभागसंमिश्रः ।
मूत्रेण गवां पिष्टः सवर्णकरणः परः श्वित्रे ॥

२० तोले बाबची और ५ तोले हरतालको कूट छानकर चूर्ण बनाकर रक्खें ।

इसे गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे श्वेतकुष्ठ नष्ट होता है ।

(४७१०) **बाणदलादिलेपः**

(वै. म. र. । प. ११)

बाणदलस्य स्वरसं लिकुचस्वरसं च तैलं च ।
सम्मिश्रितं प्रलेपयेद्धन्यात् कुष्ठानि दुष्टानि ॥

सरफोंकाके स्वरस, कटहलका स्वरस और तेल एकत्र मिलाकर लेप करनेसे दुष्ट कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(४७११) **बिडालास्थिलेपः**

(बृ. यो. त. । त. ११६; यो. र. । भगन्द.)

त्रिफलारससंयुक्तं बिडालास्थिप्रलेपनात् ।
भगन्दरं निहन्त्याशु दुष्टव्रणहरं परम् ॥

बिल्लीकी हड्डीको त्रिफलाके क्वाथमें घिसकर लेप करनेसे भगन्दर और दुष्ट व्रण नष्ट होते हैं ।

(४७१२) **बिभीतकादिलेपः**

(शा. ध. । उ. अ. ११; व. से.; यो. र. । शोथा.)

बिभीतकफलमज्जाया लेपो दाहार्तिनाशनः ।

बहेड़ेकी गिरी (मींग) का लेप करनेसे शोथकी दाह और पीड़ा नष्ट होती है ।

(४७१३) **बिल्वाद्यौ योगौ**

(बृ. यो. त. । त. १०४)

बिल्वशिवे समभागे लेपाद्भुजमूलगन्धमपहरतः ।
परिणततित्तिडीकान्वितपूतिकरञ्जोत्थबीजं वा ॥

बेलगिरी और हर्र समान भाग लेकर दोनोंको पानीमें पीसकर लेप करनेसे या पक्की इमली और कण्टक करञ्जके बीजोंका लेप करनेसे बगलकी दुर्गन्ध नष्ट होती है ।

(४७१४) **बीजपूरकमूलादिलेपः**

(ग. नि.; बृ. मा. । ज्वर.; यो. र.[१]; भा. प्र. । वातजशोथा.; शा. ध. । ख. २ अ. ११)

बीजपूरकमूलानि वह्निमन्थस्तथैव च ।
सनागरं देवदारु रास्नाचित्रकपेषितम् ॥
प्रलेपनमिदं श्रेष्ठं गलशोफविनाशनम् ॥

बिजौरेकी जड़, अरणी, सोंठ, देवदारु, रास्ना और चीतेको पीसकर लेप करनेसे गलेकी सूजन नष्ट होती है ।

बृहतीन्यग्रोधादिलेपः

(बृ. यो. त.; व. से.)

प्र. सं. ३५६० देखिये ।

(४७१५) **बृहत्यादिलेपः**

(व. से. । क्षुद्ररोगा.; शा. ध. । उ. ख. अ. ११)

इन्द्रलुप्तापहो लेपान्मधुना बृहतीरसः ।
गुञ्जामूलफलं वापि भल्लातकरसोऽपि वा ॥

बड़ी कटेली (बनभण्टे) के रसको शहदमें मिलाकर लेप करनेसे अथवा चौटलीकी जड़ या फल या भिलावेके रसका लेप करनेसे इन्द्रलुप्त रोग नष्ट होता है ।

(४७१६) **बृहत्याद्यो योगः**

(ग. नि. । अजीर्णा)

बृहत्यौ कट्फलं चैव मुस्तं पत्रमथोऽगुरुः ।
गुग्गुल्वतिविषा रास्ना मुस्तं व्याघ्रनखं वचा ॥
एतैरुत्सादनं कुर्यात् प्रदेहश्चैव शस्यते ।
नस्यं प्रधमनं चैव विषूची तेन शाम्यति ॥

छोटी और बड़ी कटेली, कायफल, नागरमोथा, तेजपात, अगर, गूगल, अतीस, रास्ना, केवटीमोथा, नख और बच समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

---

१ योगरत्नाकर, शारङ्गधर और भावप्रकाशमें चीतेके स्थान पर जटामांसी लिखी है ।

पेटपर इसकी मालिश या लेप करनेसे तथा इसीकी प्रधमन नस्य देनेसे विसूचिका रोग शान्त होता है।

(४७१७) बोल्लजलम्

(यो. त. । त. ६२)

चत्वारो बोल्लभागाः स्युर्द्वौ भागौ तु कुलिञ्जनात् ।
मस्तकी चैकभागा स्याद्यवानीपोटलीयुते ॥
जले समुचिते हण्ड्यां घर्ममध्ये दिनत्रयम् ।
संस्थाप्य तज्जलं लेपाद्धन्ति दद्रूं न संशयः ॥

बीजाबोल ४ भाग, कुलिंजन २ भाग, रूमी मस्तगी और अजवायन १-१ भाग लेकर सबको पोटलीमें बांधकर हाण्डीमें (चारगुने) जलमें डालकर धूपमें रख दें।

तीन दिन पश्चात् इस पानीका लेप करनेसे दाद अवश्य नष्ट हो जाता है।

(४७१८) ब्रह्मदण्डीयोगः

(वृ. नि. र. । गण्ड.; यो. र. । गण्ड.)

ब्रह्मदण्डीयमूलं तु पिष्टं तण्डुलवारिणा ।
स्फुटितां हन्ति लेपेन गण्डमालां न संशयः ॥

ब्रह्मदण्डीकी जड़को चावलोंके पानीमें पीसकर लेप करनेसे स्फुटित (फूटी हुई) गण्डमाला अवश्य नष्ट हो जाती है।

(४७१९) ब्राह्मणयष्टिकादिलेपः

(यो. र.; वृ. नि. र. । अण्डवृद्धिरो.)

सुपेषितं ब्राह्मणयष्टिकाया मूलं समं तण्डुलधावनेन ।
निहन्ति लेपाद्गलगण्डमालां कुरण्डमुख्यानखिलान्विकारान् ॥

भरंगीकी जड़को चावलोंके पानीके साथ पीसकर लेप करनेसे गण्डमाला और कुरण्डादि रोग नष्ट होते हैं।

(४७२०) ब्राह्म्यादिलेपः

(व. से. । व्रण.)

कपोतवङ्कालशुनं सशीर्षं ससैन्धवं चित्रकमूलमिश्रम् ।
तदश्वलेड्रस्य रसेन पिष्टं व्रणे प्रलेपो भवने हि रोम्णाम् ॥

ब्राह्मी, ल्हसन, अगर, सेंधानमक और चीतेकी जड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घोड़ेकी लीदके रसमें पीसकर लेप करनेसे व्रणके स्थानपर बाल उग आते हैं।

इति बकारादिलेपप्रकरणम्।



अथ बकारादिधूपप्रकरणम् ।



(४७२१) **ब्रह्मसहो धूपः**

(वै. म. र. । पटल १५)

श्रीवासागरुदारुप्रियङ्गुवंशत्वगोतुविट्कुष्ठम् ।
साज्यं पिष्टमजाया मूत्रेण छायया शुष्कम् ॥
तैर्धूपो ब्रह्मसहो नाम्नाऽपस्माररराक्षस-पिशाचान् ।
भूतग्रहांश्च सर्पान् ज्वरं च चातुर्थकं हन्यात् ॥

गूगल, अगर, देवदारु, फूलप्रियङ्गु, बांसकी छाल (अथवा वंसलोचन और दारचीनी), बिल्लीकी विष्ठा और कूठ तथा घी समान भाग लेकर कूटने योग्य चीजोंको कूटकर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको बकरीके मूत्रमें घोटकर छायामें सुखा लें ।

इसकी धूप देनेसे अपस्मार, राक्षस, पिशाच, भूत और समस्त ग्रहविकार तथा चातुर्थिक ज्वर (चौथिया) का नाश होता है ।

इति बकारादिधूपप्रकरणम् ।



अथ बकाराद्यञ्जनप्रकरणम् ।

(४७२२) **बिभीतकादिवर्त्तिः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४८)

मज्जाबिभीतकफलस्य च शङ्खनाभि-
घृष्टं ससैन्धवयुतं पयसाम्लकेन ।
वर्तिर्गुडेन नयनाञ्जनके हिता च
पित्तप्रसूतपटलस्य निवारणं च ॥

बहेड़ेके फलकी मींगी (मज्जा), शङ्खनाभि और सेंधानमक समान भाग लेकर सबका महीन चूर्ण करके उसे काञ्जीमें घोटें और फिर समान भाग गुड़में मिलाकर बत्तियां बना लें ।

इसे आंखमें आंजनेसे पित्तज पटलरोग नष्ट होता है ।

(४७२३) **बिभीतमज्जादियोगः**

(ग. नि.; रा. मा. । नेत्ररो. ३)

कलितरुफलमज्जा चातिसुश्लक्ष्णपिष्टा
हरति नयनपुष्पं प्रातरेवाञ्जनेन ।

बहेड़ेके फलकी मींगीको अत्यन्त महीन पीसकर नित्यप्रति प्रातःकाल आंखमें आंजनेसे आंखोंका फूला नष्ट हो जाता है ।

(४७२४) **बिल्वाञ्जनम्** (१)

(भै. र.; च. द.; धन्व.; वृ. मा.; र. र. । नेत्ररो.)

बिल्वपत्ररसः पूतः सैन्धवाज्यसमन्वितः ।
शुल्वे वराटिकाघृष्टो धूपितो गोमयाग्निना ॥
पयसालोडितश्चाक्ष्णोः पूरणाच्छोथशूलनुत् ।
अभिष्यन्देऽधिमन्थे च स्रावे रक्ते च शस्यते ॥

बेलपत्रके स्वरसको छानकर उसमें जरासा सेंधा नमक और घी मिलावें और फिर उसे ताम्र-पात्रमें डालकर कौड़ीसे इतना घिसें कि जिससे वह गाढ़ा हो जाय । फिर उसे गायके गोबरके उपलेकी अग्निसे धूपित करके रक्खें ।

इसमें गायका (या स्त्रीका) दूध मिलाकर पतला करके उसे आंखमें डालनेसे आंखकी सूजन, पीड़ा, अभिष्यन्द (आंखें दुखना), अधिमन्थ, नेत्रस्राव और आंखोंकी लाली आदि विकार नष्ट होते हैं ।

नोट—वृन्द माधव में पीपल अधिक है ।
रसरत्नाकरमें गोदुग्ध के स्थान में स्त्री दुग्ध लिखा है ।

(४७२५) **बिल्वाञ्जनम्** (२)

(भै. र. । नेत्र.)

बिल्वपत्ररसं साम्लं निघृष्टं ताम्रभाजने ।
सिन्धूत्थकटुतैलाक्तं कुर्यान्नेत्र स्रावादिषु ॥

बेलके पत्तोंका स्वरस, कांजी और सरसोंका तेल समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलावें और उसमें जरासा सेंधा नमक मिलाकर सबको ताम्र-पात्रमें तांबेकी मूसलीसे घोटें इसे आंखमें डालनेसे नेत्रस्रावादि रोग नष्ट होते हैं ।

(४७२६) **बिल्वादियोगः**

(वा. भ. । उ. अ. ३६; धन्व' । विसू.)

बिल्वस्य मूलं सुरसस्य पुष्पं
फलं करञ्जस्य नतं सुराह्वम् ।
फलत्रिकं व्योषनिशाद्वयं च
बस्तस्य मूत्रेण सुसूक्ष्मपिष्टम् ॥
भुजङ्गलूतोन्दुरवृश्चिकाद्यै-
र्विषूचिकाजीर्णगरज्वरैश्च ।
आर्तान्नरान्भूतविधर्षितांश्च
स्वस्थी करोत्यञ्जनपाननस्यैः ॥

बेलकी जड़की छाल, तुलसीकी मञ्जरी (पुष्प), करञ्जके फल, तगर, देवदारु, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी और दारुहल्दी का अत्यन्त महीन चूर्ण समान भाग लेकर सबको बकरेके मूत्रमें अच्छी तरह घोटकर छायामें सुखाकर रक्खें ।

इसका अञ्जन लगाने, इसकी नस्य लेने और इसे पीनेसे सांप, मकड़ी, चूहे और बिच्छू आदिका विष तथा विसूचिका, अजीर्ण और ज्वर एवं भूत-विकार नष्ट होते हैं ।

(४७२७) **बृहत्यादिवर्तिः**

(ग. नि. । नेत्ररो. ३)

बृहत्येरण्डमूलत्वक्शिग्रोर्मूलं ससैन्धवम् ।
अजाक्षीरेण पिष्टा स्याद्वर्तिर्वाताक्षिरोगनुत् ॥

बड़ी कटेली, अरण्डकी जड़की छाल, सहंजनेकी जड़की छाल और सेंधा नमकके अत्यन्त महीन चूर्णको बकरीके दूधमें पीसकर बत्तियां बना लें ।

इसे आंखमें आंजनेसे वातज नेत्ररोग (आंखें दुखना आदि) नष्ट होते हैं ।

(४७२८) बृहत्याद्यञ्जनम्

(ग. नि. । नेत्ररो. ३)

वार्ताकीरजनीशङ्खशिलामरिचसैन्धवैः ।
अंशाद्द्विगुणितैरेभिरञ्जनं शुक्रनाशनम् ॥

बड़ी कटली १ भाग, हल्दी २ भाग, शंखनाभि ४ भाग, मनसिल ८ भाग, काली मिर्च १६ भाग और सेंधा नमक ३२ भाग लेकर अञ्जन बनावें ।

इसे आंखमें आंजनेसे आंखका फूला नष्ट होता है ।

इति बकाराद्यञ्जनप्रकरणम् ।

अथ बकारादिनस्यप्रकरणम् ।

(४७२९) बृहत्यादिनस्यम्

(वं. से. । नेत्र. ।)

बृहतीफलसैन्धवयष्टीमधुकल्कितकैर्नस्यम् ।
अतिविततामपि सततां निद्रामेव सततं हन्यात् ॥

कटेलीके फल, सेंधानमक और मुलैठीको पीसकर नस्य देनेसे अत्यधिक निद्रा नष्ट हो जाती है।

(४७३०) बृहत्याद्यं नस्यम्

(ग. नि. । ज्वरा.)

एकं बृहत्या फलपिप्पलीकं
शुण्ठीयुतं चूर्णमिदं प्रशस्तम् ।
प्रध्मापयेत्घ्राणपुटे विसंज्ञ-
श्चेष्टां करोति क्षवथुप्रबुद्धः ॥

कटेलीके फल, पीपल और सोंठ के समान भाग मिश्रित चूर्णको रोगीकी नाकमें फूंक द्वारा चढ़ानेसे छींक आकर उसकी बेहोशी दूर हो जाती है।

(४७३१) ब्रह्मदण्डीनस्यम्

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

एकाहिकं ज्वरं हन्ति नस्याद्वा गिरिकर्णिका ।
ब्रह्मदण्डीति विख्याता अधःपुष्पी तु नामतः ॥

अपराजिता (कोयल) अथवा ब्रह्मदण्डी या अधःपुष्पी की नस्य देने से एकाहिक ज्वर नष्ट हो जाता है ।

(४७३२) ब्राह्म्याद्या वर्तिः

(वाग्भट्ट । उ. अ. ६; ग. नि. । उन्मादा.)

ब्राह्मीमैन्द्रीं विडङ्गानि व्योषं हिङ्गुं जटीं मुराम् ।
रास्नां विशल्यां लशुनं विषघ्नीं सुरसां वचाम् ॥
ज्योतिष्मतीं नागविन्नामनन्तां सहरीतकीम् ।
काङ्क्षीं च बस्तमूत्रेण पिष्ट्वाच्छायाविशोषिता ॥
वर्तिर्नस्याञ्जनालेपधूपैरुन्मादसूदनी ॥

ब्राह्मी, इन्द्रायणमूल, बायबिडंग, सोंठ, मिर्च,

पीपल, हींग, जटामांसी, मुरामांसी, रास्ना, कलिहारी, ल्हसन, देवदाली (बिंडाल), तुलसी, बच, मालकंगनी, नागदन्ती, धमासा, हर्र और फटकीका समान भाग मिश्रित अत्यन्त महीन चूर्ण लेकर उसे बकरे-के मूत्रमें अच्छी तरह घोटकर बत्तियां बनाकर उन्हें छायामें सुखा लें।

इनकी नस्य लेने, धूप देने और इनका अञ्जन तथा लेप करनेसे उन्माद रोग नष्ट होता है।

इति बकारादिनस्यप्रकरणम्।

अथ बकारादिरसप्रकरणम्।

(४७३३) बब्बूलादिगुटिका [१]

(भागोत्तर गुटिका, भागोत्तरवटी, रसगुटिका, कासकर्तरिवटी, सप्तोत्तरावटी, सप्तामृतवटी.)

(यो. चि. । अ. ३; भै. र.; यो. र.; र. का. धे.; र. सा. स.; धन्व.; वै. मृ.; वै. र. । कासा.; यो. त. । त. २८; र. र. स. । अ. १३; र. रा. सु.; र. चं. । श्वासा.)

रसभागो भवेदको गन्धको द्विगुणो मतः।
त्रिभागा पिप्पली ग्राह्या चतुर्भागा हरीतकी ॥
बिभीतकं पञ्चभागं आटरूषश्च षट्गुणः।
भार्गी सप्तगुणा ग्राह्या सर्वं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
बब्बूलकाथमादाय भावना एकविंशतिः।
कार्या बिभीतकमिता गुटिका मधुना सह ॥
कासं पञ्चविधं हन्यादूर्ध्वश्वासं कफं जयेत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, पीपल ३ भाग, हर्र ४ भाग, बहेड़ा ५ भाग, बासा (अडूसा) ६ भाग और भरंगी ७ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको बबूलके रसकी २१ भावना देकर सुखा लें और फिर शहदके साथ घोटकर बहेड़ेके फलके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे ५ प्रकारकी खांसी और ऊर्ध्व-श्वास नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा १-१॥ माशा।)

[१]—इसको भै. र. व. में भागोत्तर गुटिका, यो. र. में भागोत्तरवटी, र. रा. सु. में सप्तोत्तरा वटी, र. सा. सं. तथा धन्वन्तरिमें रस गुटिका, यो. त. और र. का. धे. में भागोत्तरो वटकः, र. च. तथा र. र. स. में सप्तामृत वटी और वै. र. में कासकर्तरी रस नामसे लिखा है। धन्वन्तरि और रसेन्द्रसारसंग्रहमें बासाके स्थानमें आमला लिखा है।

(४७३४) बलादिमण्डूरम्

(र. का. धे. । अम्लपित्त. अ. ११)

बला शतावरीमूलं यवैरण्डपलद्वयम्।
गुडस्य द्विपलं दत्त्वा पचेत्सान्द्रत्वमागतम् ॥
जीरकस्य पलं चैव पिप्पल्याश्च पलं तथा।
चातुर्जातकचूर्णन्तु प्रत्येकं टङ्कणं क्षिपेत् ॥

यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं ततः ।
गोमूत्रे त्रिफलाक्वाथे निषिक्तं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥
एतद्बलादिकं नाम मण्डूरं हन्ति दुस्तरम् ।
अम्लपित्तं सुदुर्वारं शूलं तीव्रं नियच्छति ॥

खरैटी, शतावर, जौ और अरण्डकी जड़का चूर्ण तथा गुड़ १०–१० तोले लेकर सबको चार गुने पानीमें पकावें । जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें ५–५ तोले जीरे और पीपल का चूर्ण तथा साढ़े सात सात माशे दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसरका चूर्ण एवं २९ तोले, गोमूत्र और त्रिफलाके काथमें बुझा-बुझाकर भस्म किया हुवा मण्डूर मिला कर अच्छी तरह घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

यह मण्डूर असाध्य अम्लपित्त और तीव्र शूलको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ माशा)

(४७३५) **बहुमूत्रान्तको रसः** (१)

(सि. भे. म. मा. । प्रमेहचिकि.)

बीजबन्धेक्षुरक्लीतवांशीसिह्लकसालिमम् ।
शुक्तिविद्रुमयोर्भूती मज्जानावक्षपथ्ययोः ॥
शिलाजतु त्रुटिर्वङ्गः सर्वं सञ्चूर्ण्य माक्षिकैः ।
वटीर्बधान सुखदा बहुमूत्रप्रमेहिणाम् ॥

बीजबन्द, तालमखाना, मुलैठीका सत, बंसलोचन, सतबिरोजा, सालममिश्री, सीपकी भस्म, मूंगाभस्म, बहेड़े और हर्रकी गुठलीकी मज्जा (मींगी), शिलाजीत, छोटी इलायचीके बीज तथा बङ्गभस्म समान भाग लेकर सबका महीन चूर्ण करके उसे शहदमें घोटकर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे बहुमूत्ररोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(४७३६) **बहुमूत्रान्तको रसः** (२)

(र. चं. । प्रमेहा.)

सिन्दूरं च तथा लौहं वङ्गाहिफेनसारकौ ।
उदुम्बरभवं बीजं बिल्वमूलं सुरमिथा ॥
सर्वं समं जन्तुफलरसैः सम्मर्दितं भवेत् ।
रक्तिद्वयमितां खादेद्वटिकामनुपानतः ॥
औदुम्बरफलद्रावं दद्यान्मेहप्रशान्तये ।
बहुमूत्रं तथा चान्यान्रोगांश्चैव तदुद्भवान् ॥
बहुमूत्रान्तकरसो नाशयेदविकल्पतः ।
तृष्णाधिक्ये प्रदातव्यं शृतशीतमिदं शुभम् ॥
सारिवा मधुकं द्राक्षा दर्भः सरलचन्दने ।
पथ्या मधूकपुष्पश्च सर्वैश्च समभागिकम् ॥
जले संस्थाप्य रजनीं पराह्णे वस्त्रगालितम् ।
प्रोक्तो गहननाथेन सद्यस्तृष्णाहरः परः ॥

रससिन्दूर, लोहभस्म, बङ्गभस्म, शुद्ध अफीम, शुद्ध जमाल गोटा, गूलरके बीज, बेलकी जड़की छाल और तुलसी समान भाग लेकर सबका महीन चूर्ण बनाकर उसे गूलरके फलोंके रसमें अच्छी तरह घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे बहुमूत्र और उसके उपद्रव अवश्य नष्ट हो जाते हैं । अनुपान—गूलरके फलों का रस ।

यदि प्यास अधिक लगे तो सारिवा मुलैठी, मुनक्का, दर्भ, चीरका बुरादा, लालचन्दन, हर्र और महुवेके फूल समान भाग लेकर काढ़ा बनाकर ठण्डा करके पिलाना चाहिये । अथवा इन चीजों-

को रातको पानीमें भिगो दें और प्रातःकाल छानकर पिलावें ।

(४७३७) **बहुमूत्रान्तकलोहम्**

(आ. वे. वि. । बहुमूत्रा. अ. ६७)

रसं गन्धमयोऽभ्रञ्च वङ्गं सर्वं समं समम् ।
रसस्य पादिकं हेम रम्भापुष्परसेन च ॥
मर्दयित्वा वटी कार्य्या चणकाभाऽनुपानतः ।
रसो गुडूच्या दातव्यो बहुमूत्रान्तकाभिधः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और बङ्गभस्म ४-४ भाग तथा स्वर्णभस्म १ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको केलेके फूलके रसमें घोटकर चनेके बराबर गोलियां बना लें । इन्हें गिलोयके रसके साथ सेवन करनेसे बहुमूत्र रोग नष्ट होता है ।

(४७३८) **बाकुच्यादिलेहः**

(ग. नि. । कुष्ठा. २६)

शशाङ्कलेखा सविडङ्गसारा
सपिप्पलीका सहुताशमूला ।
सायोमला सामलका सतैला
कुष्ठानि सर्वाणि निहन्ति लीढा ॥

बाबची, बायबिड़ंगकी गिरी (चावल-मींग), पीपल, चीतेकी जड़की छाल और मण्डूरभस्म तथा आमला १-१ भाग लेकर बारीक चूर्ण बनाकर उसमें १ भाग तिलका तेल मिलाकर रक्खें ।

इसे सेवन करनेसे समस्त कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(४७३९) **बाकुच्यादिलोहम्**

(ग. नि. । रसायना.)

बाकुची त्रिफला कृष्णा विडङ्गं सुरसाऽमृता ।
अयोमधुस्थितं पक्कं जरामृत्युविषापहम् ॥

बाबची, हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपल, बायबिड़ंग, तुलसी, गिलोय और लोहभस्म समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे जरा, मृत्यु और विषका नाश होता है ।

(४७४०) **बाकुच्याद्यं चूर्णम्**

(ग. नि. चूर्णा.)

पलानि संगृह्य दशेन्दुराज्या
फलत्रयस्यापि समानमेतत् ।
विडङ्गसारस्य पलानि सप्त
शिलाजतोऽर्धं च पुरस्य चैकम् ॥
शतं च भल्लातकसत्फलानां
पलं तथा पुष्करमूलनाम्नः ।
पलत्रयं लोहभवं सुचूर्णं
तुरी पलार्धं ह्यथ कर्षभागाः ॥
सपत्रमुस्ताकणयष्टिकानां
सचित्रकग्रन्थिककेशराणाम् ।
न्यग्रोधमूलोषणकुङ्कुमाना-
मेकत्र सञ्चूर्ण्य समं तु खण्डम् ॥
खादेद्यथाग्नि प्रयतस्तु मात्रां
कुष्ठान्यशेषाण्यपयान्ति नाशम् ।
अर्शोविकाराः षडपि प्रवृद्धाः
श्वित्राणि चित्राण्युदराणि चाष्टौ ॥
क्षयाश्च कृच्छ्रः खलु पाण्डुरोगः
कण्ठामया विंशतिरेव मेहाः ।

उन्मादरोगज्वरनेत्ररोगा

नासोद्भवा पश्चविधाश्च गुल्माः ॥
वातमशीतिविकारं चत्वारिंशत्प्रभेदजं पित्तम् ।
श्लेष्माणं विंशतिकं विनाशमायाति दुष्टमपि ॥
भवति रुचिरदीप्तिर्गौरवर्णो मनुष्यः
समधिकशतवर्षं जीवतीह प्रगल्भम् ।
विघटितघनरोगो मासमात्रप्रयोगा–
द्युवतिनयनहारी हृष्टपुष्टो वृषश्च ॥

बावची १० पल, त्रिफला १० पल, बिड़ंग-तण्डुल (बायबिड़ंगकी मींग) ७ पल, शिलाजीत ३॥ पल, शुद्ध गूगल १ पल (५ तोले), शुद्ध भिलावे १०० नग, पोखरमूल १ पल, लोहभस्म ३ पल, फटकीकी खील २॥ तोले तथा तेजपात, नागरमोथा, पीपल, मुलैठी, चीतेकी जड़, पीपलामूल, नागकेसर, बड़की जड़की छाल, कालीमिर्च और केसर १।–१। तोला लेकर सबका महीन चूर्ण बनावें और उसमें उसके बराबर खांड मिलाकर रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ, ६ प्रकारका अर्श (बवासीर), श्वित्रकुष्ठ, चित्र, ८ प्रकारके उदररोग, क्षय मूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, कण्ठरोग, २० प्रकारके प्रमेह, उन्माद, ज्वर, नेत्ररोग, नासारोग, ५ प्रकारके गुल्म, ८० प्रकारके वातरोग, ४० प्रकारके पित्तरोग और २० प्रकारके कफजरोग नष्ट होते हैं। तथा मनुष्य सुन्दर गौरवर्ण हो जाता है, एवं सौ वर्ष तक जीवित रहता है।

इसे केवल १ मास तक ही सेवन करनेसे समस्त जटिलरोग नष्ट हो जाते हैं

(मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक ।)

(४७४१) बालज्वराङ्कुशरसः

(वृ. नि. र. । बालरो.)

मृतसूताभ्रवङ्गं च रौप्यं योज्यं च तत्समम् ।
मृतताम्रस्य तीक्ष्णस्य प्रत्येकं च द्विभागिकम् ॥
व्योषं बिभीतकं चैव कासीसं मृतमेव च ।
नागवल्लीदलरसैर्भावयेच्च पुनः पुनः ॥
वल्लप्रमाणो दातव्यः सर्वरोगहरः परः ।
गर्भिणीबालकानां च सर्वज्वरविनाशनः ॥

पारदभस्म, अभ्रकभस्म, वंगभस्म और चांदी भस्म १–१ भाग, ताम्रभस्म और फौलादभस्म तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, बहेड़ा और कसीस–भस्म २–२ भाग लेकर सबका महीन चूर्ण करके उसे पानके रसकी कई भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे गर्भिणी और बालकों के समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं।

(४७४२) बालयकृदरि लोहम्

(आ. वे. वि. । बालरो. अ. ८०)

सहस्रपुटितश्चाभ्रं लौहश्चैव तथा रसः ।
जम्बीरबीजातिविषे मूलं प्लीहारिसम्भवम् ॥
रक्तचन्दनमश्मघ्नः प्रत्येकञ्च समांशकम् ।
गुडूचीस्वरसेनैव धान्यद्वयमिता वटी ॥
बालानां यकृतं घोरं ज्वरं प्लीहानमेव च ।
शोथं विबन्धं पाण्डुञ्च कासं मुखगदं तथा ॥
उदरं नाशयेदाशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
बालयकृदरिर्नाम लौहः श्रीशिवभाषितः ॥

सहस्रपुटी अभ्रकभस्म, लोहभस्म, पारदभस्म, जम्बीरीके बीज, अतीस, सरफोंकेकी जड़, लालचन्दन

और पखानभेद समान भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें और उसे गिलोयके रसमें घोटकर २-२ चावलकी गोलियां बना लें ।

ये गोलियां बालकों के कष्टसाध्य यकृत्, ज्वर, प्लीहा, शोथ, विबन्ध, पाण्डु, खांसी, मुखरोग और उदर रोगोंको नष्ट करती हैं ।

(४७४३) **बालरसः**

(र. सा. सं.; धन्व.; भै. र.; र. च.; र. रा. सु.; र. र. । बालरो.)

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्णमाक्षिकस्यापि चार्द्धभागं नियोजयेत् ॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लौहमये दृढे ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्डयाः पर्णसम्भवम् ॥
स्वरसं काकमाच्याश्च ग्रीष्मसुन्दरकस्य च ।
सूर्य्यावर्त्तकवर्षाभूभेकपर्णीरसैस्तथा ॥
श्वेतापराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः ।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥
शुभे शिलामये पात्रे यामं दण्डेन मर्दयेत् ।
शुष्कमातपसंयोगाद्गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥
प्रमाणं सर्षपाकारं बालानाञ्च प्रयोजयेत् ।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥
कासञ्च विविधञ्चैव सर्व्वरोगं निहन्ति च ॥

शुद्ध पारद ५ तोले, शुद्ध गन्धक ५ तोले और सोनामक्खी भस्म २॥ तोले लेकर तीनोंको अच्छी तरह घोटकर कज्जली बनावें । तत्पश्चात् उसे लोहेके खरलमें काले भंगरे और सफेद भंगरे तथा संभालुके पत्तों के रस एवं मकोय, ग्रीष्मसुन्दर, हुलहुल, पुनर्नवा (बिसखपरा), मण्डूकपर्णी और सफेद कोयलके रसकी १-१ भावना देकर उसमें २॥ तोले काली मिर्चोंका चूर्ण मिलाकर १ पहर पत्थरके खरलमें घोटें । और सरसोंके बराबर गोलियां बनाकर धूपमें सुखा लें ।

ये गोलियां बालकों के भयङ्कर सन्निपात ज्वर और खांसी आदि समस्त रोगोंको नष्ट करती हैं ।

(४७४४) **बालहरीतक्यादियोगः**

(वृ. नि. र. । शूक.)

बालपथ्यापलैकं च तुत्थं शाणमितं तथा ।
निम्बद्रवेण सम्मर्द्य दृढं सप्तदिनानि वै ॥
गुटिकां चणकप्रायां छायाशुष्कां तु कारयेत् ।
शीतोदकानुपानेन नित्यमेकां प्रदापयेत् ॥
घस्राणामेकविंशत्या मुच्यते तूपदंशतः ।
शालिगोधूममुद्गाश्च गोसर्पिः पथ्यमीरितम् ॥

छोटी हर्रका चूर्ण ५ तोले और शुद्ध नीलाथोथा ५ माशे लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर सात दिन तक नीमके पत्तों या उसकी छालके रसमें घोटकर चनेके बराबर गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें ।

इनमें से नित्य प्रति एक गोली शीतल जलके साथ सेवन करनेसे २१ दिन में उपदंश (आतशक) रोग नष्ट हो जाता है ।

पथ्य—शाली चावल, गेहूं, मूंग और गोघृत ।

(४७४५) **बालार्करसः**

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

रसहिङ्गुलजेपालवृद्धयादन्त्यम्बुमर्दयेत् ।
दिनार्धेन ज्वरं हन्ति तमः सूर्योदयो यथा ॥

पारद भस्म १ भाग, शुद्ध हिंगुल २ भाग और शुद्ध जमालगोटा ३ भाग लेकर सबको दन्ती के रसमें घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे ज्वर एक दिनमें ही नष्ट हो जाता है।

(४७४६) **बिभीतकाख्यलवणम्**

(मण्डूरलवणम्)

(र. रा. सु. । क्रिमि.)

कृत्वाग्निवर्णं मलमायसं तु
मूत्रैर्निषिञ्चेद्बहुशो गवां तत्।
तत्रैव सिन्धूत्थसमं विपाच्य
निरुद्धधूमश्च विभीतकाग्नौ॥
तक्रेण पीतं मधुनाथ वापि
विभीतकाख्यं लवणं प्रयुक्तं।
पाण्ड्वामयेभ्यो हितमेतदस्मा–
त्पाण्ड्वामयघ्नं न हि किञ्चिदस्ति॥

मण्डूरको बहेड़ेकी अग्निमें तपा तपा कर अग्निके समान लाल करके बार बार गोमूत्र में बुझावें। जब उसका चूर्ण हो जाय तो उसमें उसके बराबर सैंधा नमक और सबसे चार गुना गोमूत्र मिलाकर सबको हाण्डीमें भर दें और उसका मुख बन्द करके उसे चूल्हे पर चढ़ाकर नीचे बहेड़ेकी लकड़ीकी आग जलावें। जब समस्त गोमूत्र जल जाय तो अग्नि देनी बन्द कर दें और हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर उसमें से औषधको निकालकर पीसकर रख लें।

इसे तक्र अथवा शहदके साथ सेवन करनेसे पाण्डु नष्ट होता है। पाण्डुके लिये यह सर्वोत्तम औषध है।

(मात्रा—२–३ माशे।)

(४७४७) **बिभीतकाद्यो वटकः**

(ग. नि.; व. से.; र. रा. सु. । पाण्डु.)

विभीतकायोमलनागराणां
चूर्णं तिलानां च गुडश्च मुख्यः।
तक्रानुपानो वटकः प्रयोज्यः
क्षिणोति घोरानपि पाण्डुरोगान्॥

बहेड़ा, मण्डूरभस्म, सोंठ और तिलका चूर्ण समान भाग लेकर उसमें सबके बराबर पुराना गुड़ मिलाकर (६–६ माशे के) मोदक बना लें।

इन्हें तक्रके साथ सेवन करनेसे भयङ्कर पाण्डु भी नष्ट हो जाता है।

(४७४८) **बुभुक्षुवल्लभो रसः** (१)

(रसा. सार. । अजीर्णा.)

सूतगन्धकसिन्दूरशङ्खशुक्तिवराटिकाः।
तुवरीटङ्कणं फुल्ले पञ्चकोलाश्च तत्समाः॥
बीजपूराम्बुना कृत्वा वटीः सेवेत प्रत्यहम्।
बुभुक्षार्थी मिताऽऽहारैरजीर्णैर्नाभिभूयते॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, रस सिन्दूर, शंखभस्म, सीपभस्म, कौड़ीभस्म, सुहागे और फिटकीकी खील १–१ भाग तथा पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ) का चूर्ण इन सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको बिजौरे नीबूके रसमें घोटकर (१–१ माशेकी) गोलियां बना लें।

यदि मिताहारी व्यक्ति इन्हें सेवन करता रहे तो उसे अजीर्ण नहीं होता।

(४७४९) **बुभुक्षुवल्लभोरसः** (२)

(रसा. सार । अजी.)

यद्वा भल्लाततैलेन गालितं परिवापितम् ।
वीजपूराऽम्बु गन्धैकं लिह्यात् क्षौद्रेण भुक्तये ॥

आमलासार गन्धकको मिलावेके तेलके साथ अग्निपर गलाकर बिजौरेके रसमें बुझावें ।

इसे सेवन करनेसे भोजन अच्छी तरह पचता है और अजीर्ण नहीं होता ।

(मात्रा—२-३ रत्ती ।)

(४७५०) **बुभुक्षुवल्लभो रसः** (३)

(रसा. सार । अजीर्णा.)

ईश्वरानुगृहीतश्चेच्छतगन्धेन रञ्जितम् ।
स्वर्णसिन्दूरमेवाऽद्यादजीर्णादिरुजाऽपहम् ॥

यदि केवल शतगुण गन्धकजारित स्वर्ण-सिन्दूर ही सेवन किया जाय तो भी अजीर्णादि रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(४७५१) **बृहत्यादिलोहम्**

(र. र. । कुष्ठा.)

बृहतीशर्करानागतिलसारसमन्वितम् ।
लोहं कुष्ठं निहन्त्याशु सर्वरोगहरोऽपि सः ॥

बड़ी कटैली, खांड, नागकेसर और तुष-रहित तिलका चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म ४ भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर रक्खें ।

इसके सेवनसे कुष्ठादि समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—४ से ८ रत्ती तक । अनुपान—शहद या त्रिफलाकाथ ।)

(४७५२) **बोलपर्पटीरसः** (सिद्धोदयः)

(र. चं.; र. रा. सु.; र. का. धे.; वृ. नि. र.; यो. र. । रक्तपित्ता.; यो. र. । प्रदर.)

सूतगन्धकसुकज्जलिकायाः
पर्पटी समयुता समभागम् ।
बोलचूर्णविहितं प्रतिवाप्यं
स्याद्रसोऽयमसृगामयहारी ॥
वल्लयुग्मयुगलं प्रतिदेयं
शर्करामधुयुतः किल दत्तः ।
रक्तपित्तगुदजस्रुतियोनि-
स्रावमाशु विनिवारयतीशः ॥

समान भाग शुद्ध पारे और शुद्ध गन्धककी कज्जली बनाकर उसे घी चुपड़े हुवे लोहपात्रमें डालकर बेरीकी मन्दाग्निपर पिघलावें और फिर उसमें उसके बराबर बोल (हीरादोखी—खूनखराबा) का अत्यन्त महीन चूर्ण मिलाकर गायके गोबरपर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फैला दें तथा उसके ऊपर दूसरा पत्ता ढककर उसे गोबरसे दबा दें । थोड़ी देर बाद जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो पर्पटीको निकालकर पीस लें ।

इसे ६ रत्तीकी मात्रानुसार मिश्रीमें मिला-कर शहदके साथ चाटनेसे रक्तपित्त, बवासीरका रक्त और रक्तप्रदर नष्ट होता है ।

(४७५३) **बोलबद्धो रसः** (१)

(वृ. यो. त. । त. १०३; वै. र.; र. च. । अर्श.; वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

गुडूचिकासत्त्वसमो रसेन्द्रो
गन्धः समांशो निखिलेन बर्बरः ।

विमर्दयेच्छाल्मलिकाभवैर्द्रवैः
स्याद्बोलबद्धो मधुयुक्तिवल्लः ॥
पित्ते तु चाम्ले मधुशर्कराभ्यां
मेहे मदेयो मधुपिप्पलीभ्याम् ।
रक्तार्शसां नाशकृदेष सूतः
पित्तार्शसां चैव तु विद्रधेश्च ॥
रक्तप्रमेहस्य खुडस्य चापि
स्त्रीणां गदस्यापि भगन्दरस्य ॥

गिलोयका सत, शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक १–१ भाग लेकर कज्जली बनावें और फिर उसमें ३ भाग बोल (हीरादोखी——खूनखराबा) का अत्यन्त महीन चूर्ण मिलाकर सबको एक दिन सेंभलको छालके रसमें घोटकर सुखाकर रक्खें ।

इसे ९ रत्तीकी मात्रानुसार मिश्रीमें मिलाकर शहदके साथ चाटनेसे अम्लपित्त नष्ट होता है ।

इसे प्रमेहमें पीपलके चूर्ण और शहदके साथ देना चाहिये ।

यह रस रक्तार्श, पित्तार्श, विद्रधि, रक्तप्रमेह, वातरक्त, रक्त प्रदर और भगन्दरका नाश करता है।

साधारण अनुपान——मधु ।

(४७५४) **बोलबद्धो रसः** (२)

(र. र. स. । उ. ख. अ. १३; र. रा. सु.; र. का. धे. । कासा.)

**रसभस्म विषं तुल्यं गन्धकं द्विगुणं मतम् ।
बोलतालकबाह्लीककर्कोटीमाक्षिकं निशा ॥
कण्टकारी यवक्षारं लाङ्गलीजीरसैन्धवम् ।
मधूकसारं सञ्चूर्ण्य सप्ताहं चार्द्रकद्रवैः ॥
गुटिकां बदराकारां श्लेष्मकासापनुत्तये ।
भक्षयेद्बोलबद्धोयं रसः सश्वासपाण्डुनुत् ॥**

पारदभस्म और शुद्ध बछनाग १–१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, बोल (हीरादोखी——खूनखराबा), हरतालभस्म, भुनीहुई हींग, ककोड़ेकी जड़, स्वर्णमाक्षिक भस्म, हल्दी, कटेली, जवाखार, कलिहारी की जड़की छाल, सफेद जीरा, सेंधानमक और महुवेका सार १–१ भाग लेकर सबका अत्यन्त महीन चूर्ण बनाकर उसे ७ दिन तक अदरकके रसमें घोटकर बेरके बराबर गोलियां बना लें ।

इसके सेवनसे कफज खांसी श्वास और पाण्डुका नाश होता है ।

(४७५५) **ब्रह्मरसः**

(र. सा. सं. । कुष्ठा.; र. रा सु.; र. चं. । कुष्ठा.; र. मं. । अ. ६; र. चि. म. । अ. ९; र. का. धे. । कुष्ठा.)

**भागैकं मूर्च्छितं सूतं गन्धकत्वग्निवाकुजी ।
चूर्णन्तु ब्रह्मबीजानां प्रतिद्वादशभागिकम् ॥
त्रिंशद्भागं गुडस्यापि क्षौद्रेण गुडिका कृता ।
अयं ब्रह्मरसो नाम्ना ब्रह्महत्यादिनाशनः ॥
द्विनिष्कं भक्षणाद्धन्ति प्रसुप्तिकुष्ठमण्डलम् ।
पातालगरुडीमूलं जलैः पिष्ट्वा पिबेदनु ॥**

रससिन्दूर १ भाग तथा शुद्ध गन्धक, चीतेकी जड़, बाबची, और ढाकके बीजोंका चूर्ण १२–१२ भाग लेकर सबको ३० भाग गुड़में मिलावें और फिर उसमें आवश्यकतानुसार शहद मिलाकर १०–१० माशेकी गोलियां बनालें ।

पाताल गरुडीकी जड़को पानीमें पीसकर उसके साथ ये गोलियां सेवन करनेसे प्रसुप्ति (सुन्नबहरी) और मण्डल इत्यादि कुष्ठ नष्ट होते हैं।

(४७५६) **ब्रह्मवटी** (१) (ब्रह्मप्रभावटी)

(र. रा. सु. । सन्निपाता.; र. का. धे. । ज्वरा. १)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं रससाम्यममृतं क्षिपेत् ।
कृष्णाभ्रताम्रलोहश्च मर्दयेत्त्र्यूषणद्रवैः ॥
आर्द्रकस्य द्रवैः पश्चात्क्रमाद्द्रावैर्दिनं दिनम् ।
कृष्णजीरकपत्राङ्गमजमोदा जयन्तिका ॥
यवानी तिलपर्णी च ब्राह्मी धत्तूरभृङ्गिराट् ।
यवानी चार्द्रकर्णी च शिग्रुहस्तिकशुण्डिके ॥
श्वेतापराजितावासाचित्रकानां द्रवैश्च तम् ।
भावयेद्वटिका कार्या बदरास्थिसमोपमा ॥
योज्येयं यामयामान्ते मरिचैरार्द्रकद्रवैः ।
इयं ब्रह्मवटी नाम सन्निपातकुलान्तकी ॥
पथ्यं स्यान्मुद्गयूषेण दिवास्वापश्च वर्जयेत् ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग तथा शुद्ध बछनाग, कृष्णाभ्रकभस्म, ताम्रभस्म और लोहभस्म १-१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको १-१ दिन त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), अद्रक, कालाजीरा, पतङ्ग, अजमोद, जयन्ती (जैत), अजवायन, हुलहुल, ब्राह्मी, धत्तूरा, भंगरा, अजवायन, अदरक, अमलतास, सहंजना, हाथीसुण्डी, सफेद कोयल, वासा और चीतेके स्वरस या क्वाथमें घोटकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलियां बना लें।

इन्हें काली मिर्चके चूर्ण और अदरकके रसके साथ १-१ पहरके बाद देनेसे समस्त सन्निपात नष्ट होते हैं।

पथ्य—मूंगका यूष और भात।

इसपर दिनमें सोनेसे परहेज़ करना चाहिये।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती।)

ब्रह्मवटी (२)

(र. चं.; र. रा. सु. । अपस्मार.)

इन्द्रब्रह्मवटी प्र. सं. ४५९ देखिये।

(४७५७) **ब्रह्मवटी** (३)

(र. र. । उदरा.)

विडङ्गं दाडिमं कुष्ठं निम्बत्वग्दहनं वचा ।
त्र्यूषं पाठा देवदारु निशा व्याघ्रनखाभया ॥
बिल्वकं रोहिणी चैला त्रिवृत्प्रत्येककार्षिकम् ।
जैपालबीजचूर्णं च दन्तीमूलं पलं पलम् ॥
ब्रह्मदण्डीरसप्रस्थं पलमाज्यं पुरातनम् ।
पूर्वकल्कयुतं पाच्यं मृद्वग्निना सुपाचितम् ॥
भक्षयेद्बदराकारां नित्यं ब्रह्मवटीं शुभाम् ।
चतुःषष्ट्युत्तरव्याधीन्साध्यासाध्यान्निहन्त्यलम् ॥

बायबिडंग, अनारदाना, कूठ, नीमकी छाल, चीता, बच, सोंठ, मिर्च, पीपल, पाठा, देवदारु, हल्दी, नखी, हर्र, बेलगिरी, कुटकी, इलायची और निसोतका चूर्ण १।-१। तोला तथा शुद्ध जमालगोटे और दन्तीमूलका चूर्ण ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर उसमें १ सेर ब्रह्मदण्डीका रस और ५ तोले पुराना घी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे ६४ प्रकारके उदररोग नष्ट होते हैं।

(४७५८) **ब्राह्मीरसादियोगः**

(यो. त. । त. ३८; वृ. नि. र.; यो. र. । उन्मा.)

ब्राह्मीरसः स्यात्वचः सकुष्ठः
सशङ्खपुष्पः ससुवर्णचूर्णः ।
उन्मादिनामुन्मदमानसाना-
मपस्मृतौ भूतहितात्मानां हि ॥
नस्येऽञ्जने पानविधौ च शस्तो
ब्राह्मीरसोऽयं सवचादिचूर्णः ॥

ब्राह्मीके स्वरसमें बच, कूठ, शंखपुष्पी और स्वर्णभस्मका समान भाग-मिश्रित चूर्ण मिलाकर उसकी नस्य देने या उसका अञ्जन लगाने अथवा उसे पिलानेसे उन्माद और अपस्मारादि रोग नष्ट होते हैं।

इति बकारादिरसप्रकरणम् ।

अथ बकारादिकल्पप्रकरणम्।

(४७५९) **बीजपूरककल्पः**

(ग. नि.। औ. कल्पा.)

सिन्धुत्थेन घनागमे तु सितया काले श[illegible]त्सञ्ज्ञके
हेमन्ते च कणार्द्रहिङ्गुरुचकैः सिद्धार्थतैलान्वितैः।
एतैस्तैः शिशिरे मधावपि युतं ग्रीष्मे गुडेनान्वितं
सञ्ज्ञानामपि बीजपूरकमिदं प्राहुः प्रशस्तं बुधाः ॥
विश्वासैन्धवसंयुतं च शिशिरे क्षौद्रैर्वसन्तोदये
ग्रीष्मे क्षौद्रकणान्वितं च विमलैर्हिङ्ग्वष्टकैः प्रावृषि ।
युक्तं शर्करया शरद्यथ च हेमन्ते सहिङ्गुत्रयं
सेव्यं यद्विदुषा त्रिदोषशमने श्रीमातुलुङ्गं सदा ॥

बिजौरेको:—

वर्षा (श्रावण, भाद्रपद) में सेंधा नमक के साथ; शरदऋतु (आश्विन, कार्तिक) में मिश्रीके साथ; हेमन्त ऋतु (अग्रहायण, पौष) में पीपल, अदरक, हींग और काला नमक तथा सरसों के तेल के साथ, और शिशिर (माघ, फाल्गुन) तथा वसन्त (चैत्र, वैशाख) में भी इन्हीं चीजोंके साथ एवं ग्रीष्म (ज्येष्ठ, आषाढ़) में गुड़के साथ सेवन करना उत्तम है।

अथवा

शिशिर (माघ, फाल्गुन) में सोंठ और सेंधा नमकके साथ, वसन्त (चैत्र, वैशाख) में शहद्के साथ, ग्रीष्म (ज्येष्ठ, आषाढ़)में शहद और पीपलके चूर्णके साथ, वर्षा (श्रावण, भाद्रपद) में हिंग्वष्टक चूर्णके साथ, शरद (आश्विन, कार्तिक)में मिश्रीके साथ और हेमन्त (अग्राहयण, पौष)में हिंगुत्रय (हींग, नाडी हींग और हिंगुपत्री) के साथ सेवन करनेसे तीनों दोषोंका शमन होता है।

इति बकारादिकल्पप्रकरणम् ।

अथ बकारादिमिश्रप्रकरणम् ।

(४७६०) **बकुलप्रयोगः**

(वै. जी. । वि. ४)

सोयं सुगन्धिमुकुलो बकुलो विभाति
वृक्षाग्रणीः प्रियतमे मदनैकबन्धुः ।
यस्य त्वचैव चिरचर्वितया नितान्तं
दन्ता भवन्ति चपला अपि वज्रतुल्याः ॥

मौलसिरीकी छालको दीर्घकाल तक चबाने से हिलते हुवे दांत भी वज्रके समान दृढ़ हो जाते हैं।

(४७६१) **बकुलबीजचर्वणम्**

(रा. मा. । मुखरो.)

दन्तास्तु बीजैर्बकुलद्रुमस्य
स्थानच्युता अप्यचला भवन्ति ।

मौलसिरीके बीज चबानेसे हिलते हुवे दांत दृढ़ हो जाते हैं ।

(४७६२) **बदरीफलत्वगादिवर्तिः**

(वृ. मा. । नाडीव्रणा.)

घोण्टाफलत्वङ्मदनात्फलानि
पूगस्य च त्वग्लवणं च मुख्यम् ।
स्नुह्यर्कदुग्धेन सहैष कल्को
वर्तीकृतो हन्त्यचिरेण नाडीम् ॥

बेरोंकी छाल (ऊपरका छिलका), मैनफल, सुपारी, दालचीनी और सेंधा नमक के समानभाग मिश्रित अत्यन्त महीन चूर्णको स्नुही (सेंड–सेहुंड) और आकके दूधमें घोटकर बत्ती बनाकर उसे घावमें लगानेसे नाडीव्रण (नासूर) शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(४७६३) **बदरीमूलयोगः**

(रा. मा. । स्त्री.)

स्यान्मूलमाराशृगालिकाथाः
सञ्चर्व्य दन्तैर्धृतमास्यमध्ये ।
स्तन्यावहं वासरसप्तकेन
स्तन्योत्थकीटक्षयकारणं च ॥

छोटी बेरीकी जड़को दांतों से चबाकर मुखमें रखकर उसका रस चूसनेसे प्रसूता स्त्री के स्तनों में दुग्ध वृद्धि होती और दूधके कृमि नष्ट हो जाते हैं।

इस प्रयोगका फल सात दिनमें मालूम होता है

(४७६४) **बब्बूलादियोगः**

(यो. र. । मेदो.; वृ. नि. र. । मेदो.)

बब्बूलस्य दलैः सम्यग्वारिणा परिपेषितैः ।
गात्रमुद्वर्तयेत्पश्चाद्धरीतक्या सुपिष्टया ॥
भूय उद्वर्तनं कृत्वा पश्चात्स्नानं समाचरेत् ।
प्रस्वेदान्मुच्यते क्षिप्रं ततस्त्वेवं समाचरेत् ॥

बब्बूलके पत्तोंको पानीमें पीसकर शरीरपर मलें और फिर इसी प्रकार हर्रको पीसकर मलें । तत्पश्चात् स्नान करें । इस प्रयोगसे अधिक स्वेद आना शीघ्र ही रुक जाता है ।

(४७६५) **बलामूलचूर्णप्रक्षेपः**

(रा. मा. । बालरो.)

शिरः समुत्थेषु भवन्त्यरुंषु
ये बालकस्य क्रिमयोऽतितीव्राः ।
स्नातस्य तच्छान्तिकृदस्य मूर्ध्नि
भद्रौदनीमूलरजो निदध्यात् ॥

यदि बालकके शिरमें घाव होकर उनमें कृमि पड़ जायं तो उसे स्नान कराके घावोंपर खरैटीकी जड़का चूर्ण छिड़कना चाहिये ।

(४७६६) **बस्तमूत्रप्रयोगः**

(वृ. मा. । कर्णरोगा.)

तीव्रशूलातुरे कर्णे सशब्दे क्लेदवाहिनि ।
बस्तमूत्रं क्षिपेत्कोष्णं सैन्धवेन समन्वितम् ॥

बकरेके मूत्रमें सेंधा नमक मिलाकर उसे जरा निवाया (मन्दोष्ण) करके कानमें डालनेसे कानका तीव्रशूल, कानोंमें धांय धांय शब्द होना और कर्णस्रावका नाश होता है ।

(४७६७) **बस्तमूत्रादियोगः**

(ग. नि. । वन्ध्या.)

बस्तमूत्रं सघृतं च नवनीतं च माहिषम् ।
पलत्रयं पिबेन्नारी अपि वन्ध्या प्रसूयते ॥

बकरेका मूत्र, घी और भैंसका मक्खन ५-५ तोले लेकर तीनोंको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे वन्ध्यत्व रोग नष्ट होता है ।

(४७६८) **बाकुचिकाप्रयोगः**

(रा. मा. । कुष्ठा.)

चूर्णेन भाण्डमुपलिप्य शशाङ्कराज्या
तत्र स्थितेन पयसा दधि संविदध्यात् ।
स्नेहं तदीयमसकृन्मधुनोपयुज्य
श्वित्रं नरो जयति तन्मथितानुपानात् ॥

बावचीके चूर्णको पानीमें पीसकर पात्रमें लेप करके उसमें दही जमावें और उसे मथकर घृत निकाल लें ।

इस घीमें शहद मिलाकर चाटें और ऊपरसे उक्त दहीका मट्ठा पियें ।

इस प्रयोगसे श्वित्र (सफेद कुष्ठ) नष्ट हो जाता है ।

(४७६९) **बाकुचियोगः**

(ग. नि. । कुष्ठा.)

तैस्तक्रपिष्टैः प्रथमं शरीरं
तैलाक्तमुद्वर्तयितुं यतेय ।
तेनास्य कण्डूः किटिभाः सपामाः
कुष्ठानि शोफाश्च शमं व्रजन्ति ॥

शरीरपर तैल मर्दन करनेके पश्चात् बाकुची (बावची) को तक्रमें पीसकर मलने से खुजली, किटिभ, पामा, शोफ और कुष्ठादि रोग नष्ट होते हैं ।

(४७७०) **बाष्पस्वेदः**

(वै. म. र. । प. १६)

बाष्पस्वेदेन पयसो गवां नेत्रार्तिनाशनम् ।
स्यादेरण्डशिफासिद्धपयसाऽऽश्च्योतनं तथा ॥

गायके दूध की भाप देने तथा अरण्डकी जड़के साथ पकाया हुवा गोदुग्ध डालनेसे नेत्र पीड़ा नष्ट होती है ।

(अरण्डकी जड़ ५ तोले, गोदुग्ध १ सेर,

पानी ४ सेर। सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो स्वच्छ वस्त्रमें छान लें।)

(४७७१) **बिल्वयोगः**

(व. से. । ग्रहण्य.)

स्विन्नानि बालबिल्वानि खादेत्क्षौद्रेण मानवः।
तक्रेणाऽनलगर्भेण सार्द्धं तद् ग्रहणीं जयेत् ॥

कच्ची बेलगिरीको सिजाकर शहदमें मिलाकर चित्रक चूर्ण मिश्रित तक्रके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी रोग नष्ट होता है।

(४७७२) **बिल्वशलाटुप्रयोगः**

(रा. मा. । अर्श.)

यः सततं बिल्वशलाटुभोजी
रक्तार्शसां नाशमसौ करोति।
कृष्णैस्तिलैर्मिश्रितमत्ति यो वा
हैयङ्गवीनं सतताभियुक्तः ॥

नित्य प्रति कच्ची बेल खानेसे अथवा काले तिल गायके नवनीतमें मिलाकर सेवन करनेसे रक्तार्शका नाश हो जाता है।

(४७७३) **बिल्वादियवागू**

(व. से. । ग्रहण्य.)

बालबिल्वबलाशुण्ठीधातकीमुस्तधान्यकैः।
कषायैः साधिता हन्ति यवागूर्ग्रहणीगदम् ॥

कच्ची बेलगिरी, खरैटी, सोंठ, धायके फूल, नागरमोथा और धनियेके क्वाथमें यवागू बनाकर पिलानेसे ग्रहणी रोग नष्ट होता है।

(४७७४) **बिसादिपरिषेकः**

(वै. म. र. । प. १६)

सबिसं सविदारि सोत्पलं ससितार्कं
सकशेरुचन्दनम्।
मधुकेन समं त्वजापयः परिषेकेण
दृगामयाञ्जयेत् ॥

कमलकन्द (भिसण्डा), बिदारीकन्द, नीलोत्पल, मिश्री, कसेरु, लालचन्दन और मुलैठी के साथ बकरीका दूध पकाकर उसे नेत्रोंपर सींचने (बन्द आंखोंपर उसकी बारीक धार डालने)से नेत्र रोग (नेत्राभिष्यन्दादि) नष्ट होते हैं।

(ओषधियां ५ तोले, दूध १ सेर, पानी ४ सेर। एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो दूधको छान लें।)

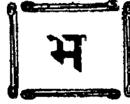
(४७७५) **बीजपूरयोगः**

(भा. प्र. । म. खं. मुखरो.)

आस्वादिता सकृदपि मुखगन्धं सकलमपनयति।
त्वगबीजपूरफलजा पवनमपाच्यं वारयति ॥

यदि बिजौरेके फलका छिलका एक बार भी चबा लिया जाय तो मुखकी दुर्गन्ध नष्ट हो जाती है तथा अपान वायु शुद्ध हो जाता है।

इति बकारादिमिश्रप्रकरणम्।



अथ भकारादिकषायप्रकरणम्।

(४७७६) **भद्रमुस्तादिक्काथः**

(यो. र. । ज्वर.; भा. प्र. म. ख. । बालरोग.; वृ. यो. त. । त. १४४)

भद्रमुस्ताभयानिम्बपटोलमधुकैः कृतः।
क्वाथः कोष्णः शिशोरेष निःशेषज्वरनाशनः॥

नागरमोथा, हर्र, नीमकी छाल, पटोल (परवल) और मुलैठीका मन्दोष्ण क्वाथ पिलानेसे बालकोंके समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

(४७७७) **भद्रादिक्काथः**

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

भद्राधान्याकशुण्ठीभिर्गुडूचीमुस्तपद्मकैः।
रक्तचन्दनभूनिम्बपटोलवृषपौष्करैः॥
कटुकेन्द्रयवारिष्टभार्ङ्गीपर्पटकैः समम्।
क्वाथः प्रातर्निषेवेत सर्वशीतज्वरापहम्॥

कायफल, धनिया, सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, पद्माक, लाल चन्दन, चिरायता, पटोल, बासा (अडूसा), पोखरमूल, कुटकी, इन्द्रजौ, नीमकी-छाल, भरंगी और पित्तपापड़ा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसे प्रातःकाल सेवन करनेसे समस्त शीतज्वर नष्ट होते हैं।

(४७७८) **भद्रोदुम्बरिकादियोगः**

(ग. नि. । कुष्ठा.)

भद्रासञ्ज्ञोदुम्बरीमूलतुल्यं
दत्त्वा मूलं क्षोदयित्वा मलप्वाः।
सिद्धं तोये पीतमुष्णे सुखोष्णं
स्फोटांश्श्वित्रे पुण्डरीके च कुर्यात्॥
द्वैपं दग्धं चर्म मातङ्गजं वा
भिन्ने स्फोटे तैलयुक्तः प्रलेपः॥

दन्तीमूल, कठूमर (कठगूलर) की जड़ और बावचीकी जड़का मन्दोष्ण क्वाथ सेवन करनेसे श्वित्र (सफेद कोढ़) और पुण्डरीक कुष्ठके स्थानमें छाले पड़ जाते हैं। उन छालेंको फोड़ कर चीते या हाथीकी खालकी भस्म तेलमें मिलाकर लगानेसे कुष्ठ नष्ट हो जाता है।

(४७७९) **भल्लातकक्षीरम्**

(च. सं । चि. अ. १)

भल्लातकान्यनुपहतान्यनामयान्यापूर्णरसप्रमाणवीर्याणि पक्वजाम्बवप्रकाशानि शुचौ शुक्रे वा मासे सङ्गृह्य यवपल्वे माषपल्वे वा निधापयेत्, तानि चतुर्मासस्थितानि सहसि सहस्ये वा मासे प्रयोक्तुमारभेत शीत-

स्निग्धमधुरोपस्कृतशरीरः, पूर्वं दश भल्लातकान्यापोथ्याष्टगुणेनाम्भसा साधु साधयेत्, तेषां रसमष्टभागावशिष्टं पूतं सपयस्कं पिबेत् सर्पिषाऽन्तर्मुखमभ्यज्य, तान्येकैकभल्लातकोत्कर्षापकर्षेण दश भल्लातकान्यात्रिंशतः प्रयोज्यानि, नातः परमुत्कर्षः प्रयोगविधानेन, सहस्रपर एव भल्लातकप्रयोगः; प्रयोगान्ते च द्विस्तावत् पयसैवोपचारः, तत्प्रयोगाद्वर्षशतमजरं वयस्तिष्ठतीति समानं पूर्वेण ॥

ज्येष्ठ या आषाढ़ मासमें रोगरहित, रससे परिपूर्ण, वीर्यवान् और पकी जामनके समान कृष्णवर्ण भिलावे लेकर उन्हें जौ या उड़दके ढेरमें दबा दें और ४ मास पश्चात् निकाल लें एवं अगहन या पौष मासमें सेवन करें।

भिलावा सेवन करनेसे पूर्व शीतल स्निग्ध और मधुर द्रव्योंके द्वारा शरीर-शुद्धि कर लेनी चाहिये।

प्रथम दिन दश भिलावोंको कूटकर आठ गुने पानीमें पकावें और जब आठवां भाग शेष रह जाय तो उसे छानकर उसके दश भाग करें और एक भाग दूधमें मिलाकर पियें। दूसरे दिन इसी प्रकार क्वाथ बनाकर २ भाग पियें । इसी प्रकार प्रति दिन १-१ भाग बढ़ाते हुवे १० दिन तक सेवन करें और फिर ११ वें दिन से १-१ भाग घटाते हुवे सेवन करें और एक भाग पर आजायं। इस प्रकार यह १०० भिलावोंका प्रयोग हुवा। यदि यह प्रयोग अनुकूल आजाय तो फिर इसी प्रकार १० भिलावोंका क्वाथ करके उसका दसवां भाग पियें और प्रतिदिन १-१ भाग बढ़ाते रहें। जब पूरे दश भाग पर आजायं तो उसके दूसरे दिन ११ भिलावोंका क्वाथ बनाकर वह सब पी जायं और फिर प्रति दिन १-१ भिलावा बढ़ाते जायं। जब तीस तक पहुंच जायं तो प्रतिदिन १-१ भिलावा कम करने लगें और १ भिलावे पर पहुंचकर प्रयोग समाप्त कर दें।

इस प्रकार यह १ हजार भिलावोंका प्रयोग हुवा। (प्रथम दिनसे दसवें दिन तक १० दिनमें कुल ५५, ग्यारहवें दिनसे १९ वें दिन तक ९ दिन में कुल ४५, बीसवें दिनसे ४९ वें दिन तक कुल ४६५ और ५० वें दिनसे ७८ वें दिन तक २९ दिनमें कुल ४३५; इस प्रकार ७८ दिनमें कुल ५५ + ४५ + ४६५ + ४३५ = १००० भिलावे।) इससे आगे और अधिक न बढ़ाने चाहियें।

भल्लातक-प्रयोग-कालमें और उसके पश्चात् भी दूध पर ही रहना चाहिये।

इस प्रयोगसे जरारहित १०० वर्षकी आयु प्राप्त होती है तथा रसायनके अन्य समस्त लाभ भी प्राप्त होते हैं।

नोट—भिलावेका प्रयोग किसी योग्य वैद्यकी संरक्षामें ही करना चाहिये।

(४७८०) भल्लातकक्षौद्रम्

(च. सं. । चि. अ. १)

भल्लातकानां जर्जरीकृतानां पिष्टस्वेदनं पूरयित्वा भूमावाकण्ठं निखातस्य स्नेहभावितस्य दृढस्योपरि कुम्भस्यारोप्योडुपेनापिधाय कृष्णमृत्तिकावलिप्तं गोमयाग्निभिरुपस्वेदयेत्,

तेषां यः स्वरसः कुम्भं प्रपद्येत तमष्टभागमधुसंप्रयुक्तं द्विगुणघृतमद्यात्; तत्प्रयोगाद्वर्षशतमजरं वयस्तिष्ठतीति समानं पूर्वेण ॥

शुद्ध भिलावोंको कूटकर एक मजबूत और स्निग्ध हाण्डीमें भर दें। इसकी तलीमें दो चार छोटे छोटे छिद्र कर देने चाहियें। तदनन्तर एक दूसरी स्नेहभावित हाण्डीको कण्ठ पर्यन्त भूमिमें गाड़कर उसके ऊपर पहिली हाण्डीको रक्खें और दोनोंके जोड़को काली मिट्टी से मजबूत कर दें तथा ऊपरवाली हाण्डीके मुख पर ढकना ढककर उसे भी काली मिट्टीसे मजबूत कर दें। ऊपरवाली हाण्डीके चारों ओर भी काली मिट्टीका लेप कर देना चाहिये। तत्पश्चात् ऊपर वाली हाण्डी पर अरण्य उपलोंकी अग्नि जलावें। जब समझें कि अब भिलावोंका सम्पूर्ण रस निकल आया होगा तब अग्नि बन्द कर दें और हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर नीचेकी हाण्डीमें जो रस जमा हुवा हो उसे निकाल लें और उसमें उसका आठवां भाग शहद तथा दो गुना घी मिलाकर सेवन करें।

इस प्रयोगसे १०० वर्ष तक वृद्धावस्था नहीं आती।

(४७८१) भल्लातकरसायनम्

(वृ. मा. । रसायना.)

पञ्चभल्लातकांश्छित्वा साधयेद्विधिवज्जले।
कषायं तु पिबेच्छीतं घृतेनाक्तोष्ठतालुकः ॥
पञ्चवृद्ध्या पिबेद्यावत्सप्तर्ति ह्रासयेत्ततः।
जीर्णेऽद्यादोदनं शीतं घृतक्षीरोपसंहितम् ॥
एतद्रसायनं मेध्यं वलीपलितनाशनम्।
कुष्ठार्शः क्रिमिदोषघ्नं दुष्टशुक्रविशोधनम् ॥
भल्लातककाथपाने मन्त्रोऽयं पठ्यते क्वचित् ॥
" वरुण त्वं हि देवानाममृतं परिकल्पसे।
आयुरारोग्यसिद्ध्यर्थमस्माकं वरदो भव ॥ "

५ भिलावोंको* कूटकर उनका काथ बनाकर ठण्डा कर लें और ओष्ठ तथा तालुको घी लगाकर पी जायं। दूसरे दिन इसी प्रकार १० भिलावोंका और तीसरे दिन १५ भिलावोंका काथ पियें। इसी प्रकार प्रति दिन ५–५ भिलावे बढ़ाते रहें और जब ७० पर पहुंच जायं तो प्रति दिन ५–५ कम करने लगें और ५ पर आकर प्रयोग समाप्त कर दें।

औषध पचने पर दूधके साथ घृतयुक्त भात खाना चाहिये।

यह रसायन प्रयोग मेध्य, बलिपलित नाशक, दुष्ट–शुक्रशोधक तथा कुष्ठ, अर्श और क्रिमिरोगको नष्ट करनेवाला है।

भल्लाककाथ पीनेके समय कोई कोई " वरुण........वरदो भव " मन्त्र भी पढ़ते हैं।

(४७८२) भल्लातकादिकाथः (१)

(व. से. । श्वासा.)

भल्लातकमधुपर्णीपथ्यादशमूलनागरकाथः।
तमके कफप्रधाने शस्तः श्वासे च मारुतजे ॥

* सुश्रुत संहिता चि अ. ६ में एक भिलावेसे प्रारम्भ करके प्रतिदिन १–१ बढ़ाते हुवे ५ तक और फिर ५–५ बढ़ाते हुवे ७० भिलावे तक सेवन करनेके लिये लिखा है।

भिलावा, मुलैठी, हर्र, दशमूल और सोंठका क्काथ पीनेसे कफप्रधान तमक श्वास तथा वातज श्वास नष्ट होता है।

(४७८३) **भल्लातकादिक्काथः** (२)

(ग. नि.; रा. मा.; वृ. नि. र. । ऊरुस्तम्भ.)

भल्लातकोपकुल्यातन्मूलैः साधितं पिबन्नम्भः ।
ऊरुस्तम्भादचिराद्घोरादपि मुच्यते नियतम् ॥

भिलावा, पीपल और पीपलामूलका क्काथ पीनेसे कष्ट साध्य ऊरुस्तम्भ भी अवश्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(४७८४) **भल्लातकादियोगः** (१)

(ग. नि. । बाजीकरणा.)

भल्लातकैश्चतुर्भिश्च गोदुग्धस्याढकं शृतम् ।
पीतं करोति वृषतां सुजीर्णस्यापि देहिनः ॥
उच्चटाचूर्णमप्येवं शतावर्याश्च योजयेत् ॥

भिलावे ४ नग, गायका दूध ४ सेर और पानी १६ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें जब पानी जल जाय तो दूधको छान लें।

यथाशक्ति यह दूध सेवन करनेसे जीर्ण मनुष्य भी बलवान और वीर्यवान हो जाता है।

इसी प्रकार उटङ्गणके बीजोंका चूर्ण तथा शतावर का चूर्ण सेवन करनेसे भी बलवीर्यकी वृद्धि होती है।

(४७८५) **भल्लातकादियोगः** (२)

(ग. नि.; वृ. मा.; वृ. नि. र.; व. से.; ध. व. भा. प्र. । ऊरुस्तम्भा.)

भल्लातकामृताशुण्ठीदारुपथ्यापुनर्नवाः ।
पञ्चमूलीद्वयोन्मिश्रा ऊरुस्तम्भनिबर्हणाः ॥

भिलावा, गिलोय, सोंठ, देवदारु, हर्र, पुनर्नवा (बिसखपरा) और दशमूलका **क्काथ पीनेसे** ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट होता है।

(४७८६) **भार्ग्यादिक्काथः** (१)

(ग. नि. । ज्वरा.)

भार्गी पथ्या वचा मुस्ता हरिद्रा च हरीतकी ।
मधुयष्टीपर्पटकौ क्काथः पित्तकफज्वरे ॥

भरंगी, हर्र, बच, नागरमोथा, हल्दी, हर्र, मुलैठी और पित्तपापड़ेका क्काथ **पित्तकफज्वरको** नष्ट करता है।

(हर्र २ भाग और अन्य सब चीजें १-१ भाग लेनी चाहियें ।)

(४७८७) **भार्ग्यादिक्काथः** (२)

(भै. र.; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

भार्गीगुडूचीघनदारुसिंही-
शुण्ठीकणापुष्करजः कषायः ।
ज्वरं निहन्ति श्वसनं क्षिणोति
क्षुधां करोति प्ररुचिं तनोति ॥

भरंगी, गिलोय, नागरमोथा, देवदारु, कटेली, सोंठ, पीपल और पोखरमूलका क्काथ पीनेसे **ज्वर और श्वास** नष्ट होते हैं तथा **क्षुधा** और **अग्निकी** वृद्धि होती है।

(४७८८) **भार्ग्यादिक्काथः** (३)

(भै. र.; धन्व. । ज्वरा.)

भार्ग्यब्दपर्पटकपुष्करशृङ्गवेर-
पथ्याकणाह्वदशमूलकृतः कषायः ।

सद्यो निहन्ति विषमज्वरसन्निपात-
जीर्णज्वरश्वयथुशीतकवह्निसादम् ॥

भरंगी, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, पोखरमूल, सोंठ, हर्र, पीपल और दशमूल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ **विषमज्वर, सन्निपात, जीर्णज्वर, शोथ, शीत** और **अग्निमांद्यको** नष्ट करता है ।

(४७८९) **भार्ग्यादिक्वाथः** (४)

(व. से. । कासा.; यो. र. । कासश्वासा.; बृ. नि. र. । कासा.; बृ. यो. त. । त. ७८)

भार्ङ्गीं सनागरां सिंहीं कुलित्थं मूलकं तथा ।
पिबेत्पिप्पलीचूर्णेन कासश्वासं व्यपोहति ॥

भरंगी, सोंठ, कटेली, कुलथी और मूली समान भाग लेकर क्वाथ बना लीजिये ।

इस क्वाथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे खांसी और श्वास का नाश होता है ।

(४७९०) **भार्ग्यादिक्वाथः** (५)

(यो. र.; बृ. नि. र. । ज्वरा.)

भार्गीपर्पटविश्ववासक
कणाभूनिम्बनिम्बामृता-
मुस्ताधन्वकभेषजैस्तु
दशभिर्हन्तीह सर्वज्वरान् ।
जीर्णान्धातुगतांस्तथा च
विषमान्सोपद्रवान्दारुणान्
क्वाथोऽयं यदि युग्मवासर-
मितं दत्तो यमाद्रक्षति ॥

भरंगी, पित्तपापड़ा, सोंठ, बासा, पीपल, चिरायता, नीमकी छाल, गिलोय, नागरमोथा और धामन वृक्षकी छाल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ जीर्णज्वर, धातुगतज्वर, विषमज्वर और उपद्रव युक्त भयङ्कर ज्वरादि समस्त ज्वरोंको नष्ट करता है ।

यदि इसे केवल दो दिन ही सेवन कर लिया जाय तो रोगी यमराजके फन्देसे छूट जाता है ।

(४७९१) **भार्ग्यादिक्वाथः** (६)

(यो. र.; बृ. नि. र. । ज्वर.)

भार्ग्यब्दपर्पटकधन्वयवासविश्व-
भूनिम्बकुष्ठकणसिंह्यमृताकषायः ।
जीर्णज्वरं सततसन्ततकौ निहन्या-
दन्येद्युकं सहतृतीयचतुर्थकौ च ॥

भरंगी, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, धमासा, सोंठ, चिरायता, कूठ, पीपल, कटेली और गिलोय समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ जीर्णज्वर, सतत, सन्तत, अन्येद्युः तृतीयक और चातुर्थिक ज्वरको नष्ट करता है ।

(४७९२) **भार्ग्यादिक्वाथः** (७)

(यो. र.; बृ. नि. र. । सन्निपाता.)

भार्गीपुष्करपथ्यानिदिग्धिकानागरामृताक्वाथः ।
अपनयति तन्द्रिकमिमं निःसंशयं प्रगे पीतः ॥

भरंगी, पोखरमूल, हर्र, कटेली, सोंठ, और गिलोय समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ तन्द्रिक सन्निपातको अवश्य नष्ट कर देता है ।

(४७९३) **भार्ग्यादिक्वाथः** (८)

(भा. प्र. । म. ख. ज्वरा.; वृ. नि. र. । सन्नि.)

भार्ङ्गीजयापौष्करकण्टकारी
कटुत्रिकोग्रावनकुण्डलीभिः ।
कुलीरशृङ्गीकटुकारसाभिः
कृतः कषायः किल कर्णकघ्नः ॥

भरंगी, अरणी, पोखरमूल, कटेली, सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, जंगली जिमीकन्द, काकड़ासिंगी, कुटकी और रास्ना समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ कर्णक सन्निपातको अवश्य नष्ट कर देता है ।

(४७९४) **भार्ग्यादिक्वाथः** (९)

(च. द.; ग. नि. । ज्वरा.)

भार्ङ्गीं पुष्करमूलं च रास्नां बिल्वं यवानिकाम् ।
नागरं दशमूलं च पिप्पलीं चाप्सु साधयेत् ॥
सन्निपातज्वरे देयं हृत्पार्श्वानाहशूलिनाम् ।
कासश्वासाग्निमन्दत्वं तन्द्रीं च विनिवर्तयेत् ॥

भरंगी, पोखरमूल, रास्ना, बेलकी छाल, अजवायन, सोंठ, दशमूल और पीपल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसके सेवनसे सन्निपात ज्वर, हृदय और पसलीका शूल, आनाह, खांसी, श्वास, अग्निमांद्य और तन्द्रा नष्ट होती है ।

(४७९५) **भार्ग्यादिक्वाथः** (१०)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

भार्ग्याश्च नागपिप्पल्याः पिबेत् क्वाथं सुखोष्णकम् ।
कफे कासे प्रतिश्याये श्वासे हृद्रोगसञ्ज्ञिके ॥

भरंगी और गजपीपलका मन्दोष्ण क्वाथ पीनेसे कफ, खांसी, प्रतिश्याय श्वास और हृद्रोग नष्ट होता है ।

(४७९६) **भार्ग्यादिगणः**

(व. से. । ज्वरा.)

भार्ङ्गीपुष्करमूलञ्च मुस्तकं कण्टकारिका ।
त्रिकण्टकबृहत्यौ च कर्णिनी नागरैः शृतैः ॥
एष भार्ग्यादिको नाम्ना पित्तश्लेष्मज्वरापहः ।
हृल्लासारोचकच्छर्दितृष्णादाहविबन्धनुत् ॥

भरंगी, पोखरमूल, नागरमोथा, कटेली, गोखरु, बड़ी कटेली (बनभण्टा), कर्णिनी और सोंठ समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ पित्तकफज ज्वर, हल्लास, अरुचि, छर्दि, तृष्णा, दाह और विबन्धको नष्ट करता है ।

(४७९७) **भूनिम्बादिकल्कः**

(वं. से.; वृ. नि. र. । शोथा.)

भूनिम्बविश्वकल्कं जग्ध्वा पीतः पुनर्नवाक्वाथः ।
अपहरति नियतमाशु श्वयथुं सर्वाङ्गजं नृणाम् ॥

चिरायता और सोंठका कल्क खाकर ऊपरसे पुनर्नवा (साठी–बिसखपरे) का क्वाथ पीनेसे सर्वाङ्गगत शोथ अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(४७९८) **भूनिम्बादिकषायः** (१)

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

भूनिम्बतिक्ताजलचन्दनं च
धानेय पथ्या दशमूलसञ्ज्ञाः ।
ह्रीबेरविश्वाकरमर्दका च
एषां शृतं पित्तमरुज्ज्वरेष्टम् ॥

चिरायता, कुटकी, सुगन्धबाला, लाल चन्दन, धनिया, हर्र, दशमूल, खस, सोंठ और करौंदा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसे सेवन करनेसे वातज ज्वर नष्ट होता है।

(४७९९) **भूनिम्बादिकषायः** (२)

(ग. नि. । विस्फोट.)

कर्षद्वयं च भूनिम्बं तदर्धं निम्बमेव च ।
क्वाथस्तयोस्त्र्यहं पीतः सर्वविस्फोटनाशनः ॥

२॥ तो. चिरायता और १। तोला नीमकी छाल लेकर दोनोंका क्वाथ बनाकर ३ दिन पीनेसे सर्व प्रकारका विस्फोटक रोग नष्ट होता है ।

(४८००) **भूनिम्बादिकषायः** (३)

(ग. नि. । ज्वरा.)

भूनिम्बकल्याणकनिम्बच्छिन्ना–
रास्नाम्बुदोशीरकनिम्बकं च ।
भिषक्सुमाताकटुकायवासा
द्वन्द्वज्वरं हन्ति कृतः कषायः ॥

चिरायता, पित्तपापड़ा, नीमकी गिलोय, रास्ना, नागरमोथा, खस, नीमकी छाल, बासा, कुटकी और जवासा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ द्वन्द्वज ज्वरको नष्ट करता है ।

(४८०१) **भूनिम्बादिक्वाथः** (१)

(वृ. मा. । कुष्ठा.)

भूनिम्बनिम्बखदिरासनराजवृक्ष–
यष्टीपटोलकटुरोहिणिकुष्ठपाठाः ।
वासागुडूचिघनयोजनवल्ल्यनन्ता–
त्रायन्तिकाद्विरजनीत्रिफलाजगन्धाः ॥
कृष्णेन्द्रवृक्षसुरवारुणिसोमराजी–
वेल्लाग्निभृङ्गमलयूसुरदारुविश्वाः ।
पत्तङ्गपद्मकशतावरिसप्तपर्णै–
रेभिः कृतो विधिवदेष महाकषायः ॥
पीतो जयत्यखिलधातुगतानि कुष्ठा–
न्येतत्प्रशाम्यति सशोणितमामवातम् ।
पाण्डुप्रमेहपिटिकाकृमिशोथदुष्ट–
नाडीभगन्दरव्रणार्बुदगण्डमालाः ॥

चिरायता, नीमकी छाल, खैरसार, असना वृक्षकी छाल, अमलतास, मुलैठी, पटोल (परवल), कुटकी, कूठ, पाठा, बासा, गिलोय, नागरमोथा, मजीठ, अनन्तमूल, त्रायमाणा, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, बन तुलसी, पीपल, इन्द्रजौ, ऋद्धि, भुईआमला, बाबची, बायबिडंग, चीता, भंगरा, कठूमर (कठगूलर), देवदारु, सोंठ, पतङ्ग, पद्माक, शतावर, और सतौना (सप्तपर्ण) समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसे सेवन करनेसे समस्त धातुगत कुष्ठ, वातरक्त, आमवात, पाण्डु, प्रमेह, पिडिका, कृमि, शोथ, दुष्ट नाडीव्रण, भगन्दर, व्रण, अर्बुद (रसौली) और गण्डमाला का नाश होता है ।

(४८०२) **भूनिम्बादिक्वाथः** (२)

(वै. जी. । विला. ४; वृ. नि. र.; यो. र. । अम्लपित्ता.)

भूनिम्बनिम्बत्रिफलापटोली
वासामृतापर्पटभृङ्गराजैः ।

काथो हरेत्क्षौद्रयुतोऽम्लपित्तं
चित्तं यथा वारवधूविलासः ॥

चिरायता, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोलपत्र, बासा, गिलोय, पित्तपापड़ा, और भंगरा समान भाग लेकर काथ बनावें।

इसमें शहद मिलाकर सेवन करनेसे अम्लपित्त नष्ट हो जाता है।

(४८०३) **भूनिम्बादिकाथः** (३)

(ग. नि. । क्रिमिरोगा.)

भूनिम्बदन्तीत्रिफलाविशाला-
त्रिवृन्निशायुग्मविडङ्गचित्राः ।
कृतः कषायः कफवातहन्ता
क्रिमिज्वरच्छर्दिनिवारणोऽयम् ॥

चिरायता, दन्तीमूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, इन्द्रायणमूल, निसोत, हल्दी, दारुहल्दी, बायबिडंग और चीतेकी जड़ समानभाग लेकर काथ बनावें।

यह काथ कफ, वायु, कृमि, ज्वर और छर्दिका नाश करता है।

(४८०४) **भूनिम्बादिकाथः** (४)

(ग. नि.; यो. र. । विस्फोटा.; वृ. नि. र.; यो. र.; व. से. । विसर्पा.)

भूनिम्बवासाकटुकापटोल-
फलत्रिकाचन्दननिम्बसिद्धः ।
विसर्पदाहज्वरवक्त्रशोष-
विस्फोटतृष्णावमिनुत्कषायः ॥

चिरायता, बासा (अडूसा), कुटकी, पटोल (परवल), हर्र, बहेड़ा, आमला, लाल चन्दन और नीमकी छाल समानभाग लेकर काथ बनावें।

यह काथ विसर्प, दाह, ज्वर, मुखशोष, विस्फोटक, तृष्णा और वमनका नाश करता है।

(४८०५) **भूनिम्बादिकाथः** (५)

(वै. र.; वृ. नि. र.; व. से. । ज्वरा)

भूनिम्बातिविषालोध्रमुस्तकेन्द्रयवामृताः ।
वालकं धान्यबिल्वे[1] च कषायो माक्षिकान्वितः ॥
विड्भेदश्वासकासांश्च रक्तपित्तज्वरं हरेत् ॥

चिरायता, अतीस, लोध, नागरमोथा, इन्द्रजौ, गिलोय, सुगन्धबाला, धनिया और बेलगिरी समान भाग लेकर काथ बनावें।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे अतिसार, श्वास, खांसी, रक्तपित्त और ज्वर नष्ट होता है।

(४८०६) **भूनिम्बादिकाथः** (६)

(वृ. यो. त. । त. ५९; वृ. नि. र. । ज्वरा.; शा. ध. । खं. २ अ. २)

भूनिम्बनिम्बपिप्पल्यः सटी शुण्ठी शतावरी ।
गुडूची बृहती चेति काथो हन्यात्कफज्वरम् ॥

चिरायता, नीमकी छाल, पीपल, कचूर, सोंठ, शतावर, गिलोय और कटेलीका काथ बनाकर पीनेसे कफज्वर नष्ट होता है।

(४८०७) **भूनिम्बादिकाथः** (७)

(वृ. नि. र. । वातकफज्वरा.)

भूनिम्बमुस्ताकटुकागुडूची
दुरालभापर्पटनागराख्यः ।

१ वासकं नागरं बिल्वमिति पाठान्तरम् ।

क्काथोऽनिलश्लेष्महरो वदन्ति
सूर्यो यथा नाशयतेन्धकारम् ॥

चिरायता, नागरमोथा, कुटकी, गिलोय, धमासा, पित्तपापड़ा, और सोंठ समान भाग लेकर क्काथ बनावें।

यह क्काथ वातकफ ज्वरको इस प्रकार नष्ट कर देता है जैसे अन्धकारको सूर्य ।

(४८०८) **भूनिम्बादिक्काथः** (८)

(यो. र.; व. से. । विस्फोटा.; वृ. यो. त. । त. १२५)

भूनिम्बनिम्बवासाश्च त्रिफलेन्द्रयवासकाः ।
पिचुमन्दः पटोली च क्काथमेषां सशर्करम् ॥
पीत्वा विमुच्यते नूनं कफविस्फोटकाज्वरः ॥

चिरायता, नीमकी छाल, वासा (अडूसा), हर्र, बहेड़ा, आमला, इन्द्रजौ, जवासा, नीमकी छाल और पटोल (परवल) समान भाग लेकर क्काथ बनावें ।

इसमें खांड मिलाकर पीनेसे कफज विस्फोटक रोग अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(नीमकी छाल २ बार आई है इस लिये २ भाग लेनी चाहिये और अन्य पदार्थ १–१ भाग।)

(४८०९) **भूनिम्बादिक्काथः** (९)

(वं. से. । मसूरिका.)

भूनिम्बमुस्तकं वासा त्रिफलेन्द्रयवासकम् ।
पिचुमन्दं पटोलश्च सक्षौद्रं योजितं हितम् ॥

चिरायता, नागरमोथा, बासा, हर्र, बहेड़ा, आमला, इन्द्रजौ, जवासा, नीमकी छाल और पटोल (परवल) के क्काथमें शहद मिलाकर पीना मसूरिका में हितकर है ।

(४८१०) **भूनिम्बादिसप्तकः**

(ग. नि. । मसूरिका.)

भूनिम्बनिम्बविश्वापर्पटह्रीबेरधान्यवृषैः ।
क्काथः प्रातः पीतो विनिहन्ति सकष्टां शीतलीम् ॥

चिरायता, नीमकी छाल, सोंठ, पित्तपापड़ा, सुगन्धबाला, धनिया और बासेका क्काथ बनाकर प्रातःकाल सेवन करनेसे दुखदायी शीतला नष्ट हो जाती है ।

(४८११) **भूनिम्बाद्यष्टादशाङ्गक्काथः**

(भै. र. । ज्वरा.; हा. सं. । स्था. ३ अ. २; यो. त. । ज्वर.; यो. चि. म. । अ. ४ क्काथा.; ग. नि. । ज्वरा.)

भूनिम्बदारुदशमूलमहौषधाब्द–
तिक्तेन्द्रबीजधनिकेभकणाकषायः ।
तन्द्राप्रलापकसनारुचिदाहमोह–
श्वासादियुक्तमखिलं ज्वरमाशु हन्ति ॥

चिरायता, देवदारु, दशमूल, सोंठ, नागरमोथा, कुटकी, इन्द्रजौ, धनिया और गजपीपल समान भाग लेकर क्काथ बनावें ।

यह क्काथ तन्द्रा, प्रलाप, खांसी, अरुचि, दाह, मोह और श्वासादि उपद्रव युक्त समस्त ज्वरों को नष्ट करता है ।

(४८१२) **भृङ्गराजरसायनम्**

(वृ. मा. । रसायना.; यो. त. । त. ७९)

ये मासमेकं स्वरसं पिबन्ति
दिने दिने भृङ्गरजः समुत्थम् ।
क्षीराशिनस्ते बलवर्णयुक्ताः
समाः शतं जीवितमाप्नुवन्ति ॥

१ मास तक भंगरेका स्वरस सेवन करने और दुग्धाहार पर रहनेसे बलवर्णयुक्त १०० वर्ष की आयु प्राप्त होती है।

(४८१३) **भृष्टमुद्गादिकषायः**

(ग. नि. । छर्द्य.; वृ. मा. । छर्द्य.)

कषायो भृष्टमुद्गस्य सलाजमधुशर्करः।
छर्द्यतीसारदाहघ्नो ज्वरघ्नः संप्रकाशितः॥

भुनी हुई मूंगके क्वाथमें धानकी खीलोंका चूर्ण तथा शहद और मिश्री मिलाकर पीने से छर्दि, अतिसार, दाह और ज्वर नष्ट होता है।

(४८१४) **भृष्टेक्षुरसपानम्**

(वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्रा.)

भृष्टेक्षुस्वरसं प्राह्यमाखुविड्विहितं पिबेत्।
नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि सद्य एव न संशयः॥

ईख (गन्ने) को अग्निमें सेककर उसका रस निकालें और उसमें चूहेकी मींगन मिलाकर रोगी को पिला दें।

यह प्रयोग मूत्रकृच्छ्रको अत्यन्त शीघ्र नष्ट कर देता है।

(४८१५) **भेदनीयकषायदशकः**

(च. सं. । अ. ४ सूत्रस्थान)

सुवहार्कोरुबूकाग्निमुखीचित्राचित्रकचिरबिल्वशङ्खिनीसकुलादनीस्वर्णक्षीरिण्य इति दशेमानि भेदनीयानि भवन्ति॥

निसोत, आक, अरण्ड, लांगली (कलिहारी), दन्ती, चीता, करञ्ज, शंखिनी, कुटकी और स्वर्ण क्षीरी। इन दश ओषधियों के समूहको भेदनीय कषायदशक कहते हैं।

इति भकारादिकषायप्रकरणम्।

अथ भकारादिचूर्णप्रकरणम्।

(४८१६) **भद्रदार्वादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । आनाहोदावर्ता.)

भद्रदारु घनं मूर्वा हरिद्रा मधुकं तथा।
कोलप्रमाणं तु पिबेदन्तरिक्षेण वारिणा॥

देवदारु, नागरमोथा, मूर्वा, हल्दी और मुलैठी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे वर्षाजलके साथ आधा कर्षकी मात्रानुसार सेवन करनेसे अफारा और उदावर्त नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा—३ माशे।)

(४८१७) **भद्रमुस्तादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । कास.)

भद्रमुस्ताकणाचूर्णं समांशं मधुना सह।
निहन्ति भक्षितं शीघ्रं श्लेष्मकासं न संशयः॥

नागरमोथा और पीपलके समानभाग-मिश्रित चूर्णको शहदके साथ सेवन करनेसे कफज खांसी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(४८१८) **भद्रादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । मूत्राघात.)

सदाभद्राश्मभिन्मूलं शतावर्याश्च चित्रकम् ।
रोहिणीकोकिलाख्यौ च क्रौञ्चस्थूलत्रिकण्टकम्॥
श्लक्ष्णं पिष्टं सुरापीतं मूत्राघातनिषूदनम् ॥

खम्भारीकी छाल, पखानभेद, शतावर, चीते की जड़, कुटकी, काकोली, कमलगट्टा और बड़े गोखरु समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे सुराके साथ सेवन करनेसे मूत्राघात नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

(४८१९) **भर्जितहरीतकीयोगः**

(वृ. नि. र. । ग्रहणी.)

घृतसम्भर्जिता पथ्या पिप्पलीगुडसंयुता ।
भक्षयेद्वा त्रिवृद्धन्ति भक्षिता चानुलोमनी ॥

हर्रेको घीमें भूनकर पीस लें और फिर उसमें उसके बराबर पीपलका चूर्ण तथा गुड़ मिला लें ।

इसे सेवन करनेसे ग्रहणी नष्ट होती और वायु अनुलोम होता है ।

निसोतका चूर्ण खानेसे भी वायु अनुलोम होता है ।

(मात्रा—६ माशेसे ९ माशे तक । अनुपान उष्ण जल ।)

(४८२०) **भल्लातकादिचूर्णम्** (१)

(यो. र.; वृ. नि. र. । अतिसार.)

भल्लातानां द्विखण्डानां द्वे पले भर्जिते क्षिपेत् ।
शुण्ठ्याः पलं तु चेतक्याः पलार्द्धं सुमनाफलम् ॥
कर्षं मेथीवेल्लजीरसर्षपान्कोलमात्रतः ।
ततो यवान्यर्धपलं पिप्पलीरामठोषणम् ॥
बिडसैन्धवजीरं च किर्माणीसञ्ज्ञकं तथा ।
कर्षप्रमाणं विज्ञेयं वैद्यविद्याविशारदैः ॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य यथासात्म्यं तु भक्षयेत् ।
दध्ना सह तथा खादेत्सर्वातीसारनाशनम् ॥

दो दो टुकड़े करके भूने हुवे भिलावे १० तोले, सोंठ ५ तोले, हर्रे २॥ तोले, करञ्जुवे की गिरी १। तोला और मेथी, बायबिडंग, जीरा तथा सरसों ७॥-७॥ माशे, अजवायन २॥ तोले, पीपल, भुनी हुई हींग, काली मिर्च, बिड नमक, सेंधानमक, काला जीरा और खुरासानी अजवायन १।-१। तोला लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार दहीके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(४८२१) **भल्लातकादिचूर्णम्** (२)

(ग. नि. । अर्श.)

तिलारुष्करसंयोगं भक्षयेदग्निवर्धनम् ।
कुष्ठरोगहरं श्रेष्ठमर्शसां नाशनं परम् ॥

काले तिल और शुद्ध भिलावा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे सेवन करनेसे अग्नि दीप्त होती और कुष्ठ तथा अर्शका नाश होता है ।

(४८२२) **भल्लातकादिचूर्णम्** (३)

(यो. र. । क्रिमि.)

भल्लातको वा दध्ना वा
चिञ्चाम्लेन हरेत्क्रमीन् ।

शुद्ध भिलावेके चूर्णको दही या इमलीके पानी के साथ सेवन करनेसे क्रिमिरोग नष्ट हो जाता है ।

(४८२३) भल्लातकादिचूर्णम् (४)

(ग. नि. । अर्श.; हा. सं.१ । स्था. ३ अ. ११; वृ. नि. र.; यो. र.२ । आमवाता.)

तिलभल्लातकं पथ्या गुडश्चेति समांशकम् ।
दुर्नामश्वासकासघ्नं प्लीहपाण्डुज्वरापहम् ॥

तिल, शुद्ध भिलावा, हर्रे और गुड़ १-१ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण अर्श, श्वास, खांसी प्लीहा (तिल्ली), पाण्डु और ज्वरको नष्ट करता है ।

(४८२४) भल्लातकाद्यः क्षारः

(ग. नि. । ग्रहणी.; यो. र.; व. से.; वृ. नि. र.। ग्रहण्य.; च. सं. । चि. अ. १९ ग्रहण्य.)

भल्लातकं त्रिकटुकं त्रिफलां लवणत्रयम् ।
अन्तर्धूमं द्विपलिकं गोपुरीषाग्निना दहेत् ॥
स क्षारः सर्पिषा पीतो भोज्ये वाऽप्यवचूर्णितः ।
हृद्रोगपाण्डुग्रहणीगुल्मोदावर्तशूलनुत् ॥

भिलावा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्रे, बहेड़ा, आमला, सेंधानमक, सञ्चल (काला नमक) और बिड लवण १०-१० तोले लेकर सबको एक हाण्डीमें भरकर उसके मुखको बन्द कर दें और फिर उसे गायके गोबरकी अग्निपर इतना पकावें कि सब चीजोंकी भस्म हो जाय । तदनन्तर हाण्डीके स्वांगशीतल होनेपर उसमेंसे औषधको निकालकर पीस लें ।

इसे घीके साथ मिलाकर पीने या भोज्य पदार्थोंमें मिलाकर खानेसे हृद्रोग, पाण्डु, ग्रहणी, गुल्म, उदावर्त और शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा—१-१॥ माशा ।)

(४८२५) भल्लातकाद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । कुष्ठा.)

भल्लातको मार्कवशङ्खपुष्पी
ब्राह्मीवचावाकुचिकाविडङ्गम् ।
फलत्रयं पिप्पलीका च चव्यं
कुष्ठानि चूर्णं सघृतं निहन्ति ॥

भिलावा, भंगरा, शंखपुष्पी, ब्राह्मी, बच, बावची, बायबिड़ंग, हर्रे, बहेड़ा, आमला, पीपल और चव समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घृतके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

(४८२६) भल्लातकामृतम्

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

गुडूचीलाङ्गलीशृङ्गीमुण्डीगुञ्जा च केतकी ।
षण्णां पत्ररसैर्मर्द्यं बालभल्लातबीजकं ॥
दिनैकं मर्दयेद्गाढं निष्कार्धं भक्षयेत्सदा ।
भल्लातामृतयोगोयं सर्वार्शान् पित्तजान् जयेत् ॥

कच्चे भिलावोंको गिलोय, कलियारी, काकड़ासिंगी, गोरखमुण्डी, गुञ्जा (चैांटली) और केतकी; इन छः ओषधियोंके पत्तों के रसोंकी १-१ भावना देकर चूर्ण बना लें ।

इसे २ माशेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे पित्तज अर्श नष्ट हो जाती है ।

१—हारीत संहितामें इसके गुण इस प्रकार लिखे हैं—इसके सेवनसे अर्श, प्रमेह, शूल और खांसी नष्ट होती है ।

२—वृ. नि. र. और यो. र. में इसे आमवात और कटिशूल नाशक लिखा है ।

(४८२७) **भस्मार्कचूर्णम्**

(ग. नि. । चूर्णा.)

युगर्तुसंख्यानि दलानि
भानोश्चत्वारि काण्डानि सुधाद्रुमस्य ।
सुरेन्द्रवल्ल्या दश सत्फलानि
पञ्चैव पत्राणि कुमारिकायाः ॥
चत्वारि वृन्ताकतरो फलानि
व्याघ्रीचतुःषष्टिफलानि युक्त्या ।
पञ्चाङ्गमेकं हरिपर्णकन्दं
सिद्धार्थतैलं च पलप्रमाणम् ॥
यवाह्वसौवर्चलधूर्तवार्षैः
पलं पलं स्यात्क्रमशश्चतुर्णाम् ।
पलानि पञ्चैव शिवाह्वयस्य
गोक्षुरकं चाऽपि वदन्ति वैद्याः ॥
गुरूपदेशादधिगम्य सम्य-
ग्भाण्डे स्वबुद्ध्याऽर्कदलानि मुक्त्वा ।
सर्वाणि चान्यानि महौषधानि
सिद्धार्थतैलेन विमिश्रितानि ॥
प्रक्षिप्य संरुद्ध्य मुखं तदीयं
मृत्कर्पटं सन्धिषु वेष्टनीयम् ।
गम्भीरगर्ते कुहरे निवेश्य
प्रच्छादनीयं छगणैः प्रभूतैः ॥
उत्तार्य यत्नेन सुशीतलं तं
क्षारं चतुर्भिः प्रहरैः सुसिद्धम् ।
सूक्ष्मीकृतं जीरककर्षषट्कं
मध्ये क्षिपेदर्धपलं क्षवस्य ॥
तदाढ्यवाते ह्यथ पाण्डुरोगे
भगन्दराजीर्णविषूचिकासु ।
आनाहबन्धे ग्रहणीविकारे
पाषाणिके विद्रधिमूत्रकृच्छ्रे ॥
तक्रेण कर्षार्धमिदं प्रदेयं
भस्मार्कचूर्णं दधिमस्तुना वा ।
श्वासे सकासे हृदयोपरोधे
कण्ठग्रहे जीर्णगुडेन देयम् ॥
तैलेन शूले मधुनोदरेषु
गुल्मप्रकोपे फलपूरकेण ।
सौवीरकेणाथ सदा प्रयोज्य-
मुष्णेन सर्वत्र जलेन देयम् ॥
यथा मृगेन्द्रो द्विपदर्पहन्ता
वज्रं यथा भूधरमध्यभेदि ।
अयं तथा योगवरो जनानां
निहन्ति दुष्टानपि रोगसङ्घान् ॥
योगप्रदीपो मुनिभिः पुराणै-
र्निवेदितोमूलमसौ हितानाम् ।
अनेन भीमादपि गाढवह्नि-
र्नरोभवेत्पथ्यहितोपचारैः ॥

आकके पत्ते १२ नग, सेहुंड (सेंड–थूहर) के काण्ड (तन्ने–डंडी) ४ नग, इन्द्रायनके फल १० नग, ग्वारपाठा (घृतकुमारी) के पत्र ५ नग, बैंगन ४ नग, कटेलीके फल ६४ नग, पत्तों सहित मूली १ नग, सरसोंका तैल ५ तोले, इन्द्रजौ, सञ्चल (कालानमक), धतूरा और पीपल ५–५ तोले, हर्र २५ तोले तथा गोखरु २५ तोले लेकर एक मजबूत हाण्डीमें नीचे आकके पत्ते बिछा दें और फिर अन्य ओषधियोंके चूर्णमें तैल मिलाकर उसे उसमें भर दें। एवं उसके मुखपर ढकना रखकर सन्धिपर कपरमिट्टी कर दें और उसे सुखा-कर हाण्डीको एक अच्छे गहरे गढ़ेमें रखकर उसके ऊपर बहुतसे उपले डालकर ४ पहरकी आग दें।

तत्पश्चात् उसके स्वांगशीतल होने पर हाण्डीमें से भस्मको निकालकर पीस लें और उसमें ७॥ तोले जीरे तथा २॥ तोले सरसोंका बारीक चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे तक्र या दहीके तोड़के साथ सेवन करनेसे आढ्यवात (वातरक्त), पाण्डु, भगन्दर, अजीर्ण, विसूचिका, आनाह, विबन्ध, ग्रहणी रोग, पथरी, विद्रधि और मूत्रकृच्छ्र नष्ट हो जाता है ।

श्वास, खांसी, हृदयोपरोध और कण्ठग्रहमें पुराने गुड़के साथ सेवन करना चाहिये ।

शूलमें तेलके साथ, उदरमें शहदके साथ और गुल्ममें बिजौरेके रसके साथ देना चाहिये ।

इसे सौवीरक या उष्ण जलके साथ देनेसे भी उपरोक्त समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं ।

यदि पथ्य पालन पूर्वक इसे सेवन किया जाय तो जठराग्नि भीमसे भी अधिक तीव्र हो जाती है ।

(४८२८) भार्ग्यादिचूर्णम् (१)

(यो. र.; वृ. नि. र. । कासा.)

भार्गीशुण्ठीकणाचूर्णं गुडेन श्वासकासनुत् ।
पथ्याशुण्ठीगुडयुतां गुटिकां धारयेन्मुखे ॥
सर्वेषु श्वासकासेषु केवलं वा बिभीतकम् ।
नागरेणाभया तद्वत्कासमाशु व्यपोहति ॥

भरंगी, सोंठ और पीपलका चूर्ण १-१ भाग लेकर उसे ३ भाग गुड़में मिलावें ।

यह चूर्ण श्वास और खांसीको नष्ट करता है ।

हर्र और सोंठके समान भाग-मिश्रित चूर्णको उससे २ गुने गुड़में मिलाकर गोलियां बनावें ।

इन गोलियोंको अथवा केवल बहेड़ेको मुंहमें रखनेसे भी हर प्रकारकी खांसी और श्वासका नाश हो जाता है ।

सोंठ और हर्रका चूर्ण सेवन करने से भी खांसी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(४८२९) भार्ग्यादिचूर्णम् (२)

(यो. र. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । विषमज्वर.)

भार्ङ्गी कर्कटशृङ्गी च चव्यं तालीसपत्रकम् ।
मरीचं मागधीमूलं प्रत्येकं द्विपलं भवेत् ॥
षट्पलं शृङ्गवेरं च द्विपलं पिप्पलीद्वयम् ।
चातुर्जातमुशीरं च पलमेकं पृथक् पृथक् ॥
चातुर्जातसमा शुभ्रा शर्करा समयोजिता ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति कासं श्वासं च दारुणम् ॥
शोफशूलोदराध्मानदोषत्रयहरं परम् ॥

भरंगी, काकड़ासिंगी, चव, तालीसपत्र, कालीमिर्च और पीपलामूल १०-१० तोले; सोंठ ३० तोले, पीपल और गजपीपल १०-१० तोले; दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर और खस ५-५ तोले और सफेद खांड २० तोले लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण आठ प्रकारके ज्वर, भयङ्कर खांसी, श्वास, शोथ, शूल, उदररोग, आध्मान और त्रिदोषको नष्ट करता है ।

(मात्रा---३-४ माशे ।)

(४८३०) भार्ग्यादिचूर्णम् (३)

(यो. र. । गुल्मा.; वा. भ. । चि. अ. १४)

भार्गीकृष्णाकरञ्जत्वग्ग्रन्थिकामरदारुजम् ।
चूर्णं तिलानां क्वाथेन रक्तगुल्मरुजापहम् ॥

भरंगी, पीपल, करञ्जकी छाल, पीपलामूल और देवदारु समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे तिलके काथके साथ सेवन करनेसे रक्त-गुल्म नष्ट होता है।

(मात्रा—३–४ माशे ।)

(४८३१) भार्ग्यादियोगः (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५७)

भार्गीरास्नाकर्कटकचूर्णं वा मधुसंयुतम् ।
लेह्यो वा बालकस्यापि श्वासकासनिवारणः ॥

भरंगी, रास्ना और काकड़ासिंगीके चूर्णको शहदमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी खांसी और श्वासका नाश होता है।

(४८३२) भार्ग्यादियोगः (२)

(वृ. मा.; वृ. नि. र.; योग. र. । हिक्का.)

हिक्काश्वासी पिबेद्भार्गी सविश्वामुष्णवारिणा ।
नागरं वा सिताभार्गीसौवर्चलसमन्वितम् ॥

भरंगी और सोंठके समान भाग–मिश्रित चूर्णको गर्म पानीके साथ सेवन करने से या सोंठ मिसरी, भरंगी और सञ्चल (काला नमक) का चूर्ण खानेसे हिचकी और श्वास नष्ट होता है।

भास्करचूर्णम्

(वा. भ. । उ. अ. १३)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये।

(४८३३) भास्करलवणचूर्णम्

(शा. ध. । खं. २ अ. ६; यो. र. । गुल्मा.; यो. र.; वृ. मा.; व. से. । अजीर्णा.; च. द.; भै. र.; र. र. । अग्निमांद्य.)

सामुद्रलवणं कार्यमष्टकर्षमितं बुधैः ।
पञ्चसौवर्चलं ग्राह्यं बिडं सैन्धवधान्यके ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं कृष्णजीरकपत्रकम् ।
नागकेसरतालीसमम्लवेतसकं तथा ॥
द्विकर्षमात्राण्येतानि प्रत्येकं कारयेद् बुधः ।
मरिचं जीरकं विश्वमेकैकं कर्षमात्रकम् ॥
दाडिमं स्याच्चतुःकर्षं त्वगेला चार्धकार्षिकी ।
बीजपूररसेनैव भावितं सप्तवारकम् ॥
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं लवणं भास्कराभिधम् ।
शाणप्रमाणं देयं तु मस्तुतक्रसुरासवैः ॥
वातश्लेष्मभवं गुल्मं प्लीहानमुदरं क्षयम् ।
अर्शांसि ग्रहणीं कुष्ठं विबन्धं च भगन्दरम् ॥
शोफं शूलं श्वासकासमामदोषं च हृद्रुजम् ।
मन्दाग्निं नाशयेदेतद्दीपनं पाचनं परम् ॥
सर्वलोकहितार्थाय भास्करेणोदितं पुरा ॥

सामुद्रलवण १० तोले, सञ्चल (कालानमक) ६। तोले, विडलवण, सेंधानमक, धनिया, पीपल, पीपलामूल, कालाजीरा, तेजपात, नागकेसर, तालीसपत्र और अमलवेत २॥—२॥ तोले, काली मिर्च, सफेद जीरा और सोंठ १।–१। तोला, अनारदाना ५ तोले तथा दालचीनी और इलायची ७॥–७॥ माशे लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें और उसे बिजौरे नीबूके रसकी सात भावना देकर रक्खें।

इसे ५ माशेकी मात्रानुसार, मस्तु, सुरा या तक्र अथवा किसी रोगोचित आसवके साथ खाना चाहिये।

इसके सेवनसे वातकफज गुल्म, तिल्ली, उदररोग, क्षय, अर्श, ग्रहणी रोग, कुष्ठ, विबन्ध, भगन्दर, शोथ, शूल, श्वास, खांसी, आमविकार,

हृदयकी पीड़ा और अग्निमांद्यका नाश होता है। यह दीपन और पाचन है।

भूतभैरवचूर्णम्

(र. चं.; भा. प्र. । ज्वरा.)

रसप्रकरणमें देखिये।

(४८३४) **भूधात्र्यादियोगः**

(वृ. नि. र. । प्रमेह.; यो. र. । प्रमेहा.)

भूधात्री च त्रिगद्याणं मरीचानां च विंशतिः।
असाध्यान्साधयेन्मेहान् सप्तरात्रान्न संशयः॥

भुईआमला ३ भाग और काली मिर्च २० भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे सात दिन तक सेवन करनेसे असाध्य प्रमेह भी नष्ट हो जाते हैं।

(४८३५) **भूनिम्बादिक्षारः**

(च. सं. । चि. अ. १९ ग्रहण्य.; वा. भ. । चि. अ. १०; व. से. । ग्रहणी.)

भूनिम्बं रोहिणीं तिक्तां पटोलं निम्बपर्पटम्।
दहेन्माहिषमूत्रेण क्षार एषोऽग्निवर्द्धनः॥

चिरायता, कुटकी, पटोल, नीमकी छाल और पित्तपापड़ा समान भाग लेकर अधकुटा कर लें और फिर एक मजबूत हाण्डीमें १ भाग यह चूर्ण तथा ४ भाग भैंसका मूत्र भरकर उसका मुख बन्द करके इतना पकावें कि सब चीजें जलकर उनकी भस्म बन जाय।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त होती है।

(मात्रा---१॥-२ माशे।)

(४८३६) **भूनिम्बादिचूर्णम्**

(वा. भ. । चि. अ. । १९; ग. नि. । कुष्ठा.)

भूनिम्बनिम्बत्रिफलापद्मकातिविषाकणाः।
मूर्वा पटोली द्विनिशा पाठातिक्तेन्द्रवारुणीः॥
सकलिङ्गवचास्तुल्या द्विगुणाश्च यथोत्तरम्।
लिह्याद्दन्तीत्रिवृद्ब्राह्मयश्चूर्णिता मधुसर्पिषा॥
कुष्ठप्रमेहसुप्तीनां परमं स्यात्तदौषधम्॥

चिरायता, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, पद्माक, अतीस, पीपल, मूर्वा, पटोल, हल्दी, दारुहल्दी, पाठा, कुटकी, इन्द्रायणकी जड़, इन्द्रजौ और बच १-१ भाग, दन्ती २ भाग, निसोत ४ भाग और ब्राह्मी ८ भाग लेकर कूट छानकर चूर्ण बनावें।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ, प्रमेह और सुप्ति (सुन्नबहरी) रोग नष्ट होता है। इन रोगोंकी यह एक उत्तम औषध है।

(मात्रा---३-४ माशे।)

(४८३७) **भूनिम्बाद्यं चूर्णम्** (१)

(ग. नि.; वृ. नि. र.; यो. र. । ग्रहण्य.; यो. त. । त. २२; च. स. । चि. अ. १९ ग्रहणी.; ग. नि. । चूर्णा.; व. से.; च. द.; वृ. नि. र.; वृ. मा.; यो. र. । ग्रहण्य.)

भूनिम्बकौटजकटुत्रिकमुस्ततिक्ताः
कर्षांशकाः सशिखिमूलपिचुद्वयाः स्युः।
त्वक्कौटजी पलचतुष्कमिता गुडाम्भः-
पीतं नृणामिह हरेद्ग्रहणीविकारम्॥

चिरायता, कुड़ेके बीज (इन्द्रजौ), सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा और कुटकी १-१ तोला, चीते की जड़ २॥ तोले और कुड़ेकी छाल २० तोले लेकर कूट छानकर चूर्ण बनावें।

इसे गुड़के शरबतके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी विकार नष्ट होते हैं ।

नोट—चरकादिमें इसे मस्तुके साथ पीनेके लिये लिखा है तथा लिखा है कि यह चूर्ण ग्रहणी, कामला, पाण्डु, ज्वर, प्रमेह, अरुचि और अतिसारको नष्ट करता है ।

(४८३८) भूनिम्बाद्यं चूर्णम् (२)

(यो. र. । सन्निपाता.)

भूनिम्बमाक्षिकवचासहितं च कुर्या-
ल्लेहं कणोषणरसोनसुराजिकाभिः ।
नेत्राञ्जनं च लवणोत्तमपिप्पलीभ्यां
नस्यं वचामरिचहिङ्गुमधूकसारैः ॥

सन्निपात ज्वरमें—

(१) चिरायता, बच, पीपल, कालीमिर्च, ल्हसन और राई समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे शहदके साथ चटावें ।

(२) सेंधा नमक और पीपल समान भाग लेकर अत्यन्त बारीक पीसकर आंखमें उसका अञ्जन लगावें ।

(३) बच, कालीमिरच, हींग और महुवेका गोंद समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसकी नस्य दें ।

(४८३९) भूनिम्बाद्यं चूर्णम् (३)

(ग. नि.; व. से.; र. र. । विद्रध्य.; ग. नि. । चूर्णा.)

भूनिम्बार्धपलं निशापलयुतं दार्वी पले द्वे तथा
दार्व्यर्धेन पुनर्नवां कुरु समां दार्वीसमः प्रग्रहः ।
सार्धं दुःस्पर्शपलं तु कटुका योज्या तदर्धेन वै
अश्वाह्वं निशया समानममृता कर्षास्तु पञ्चैव तु ॥
सर्वं वत्सकसप्तकर्षसहितं शुष्कं तु चूर्णीकृतं
वासायाः स्वरसेन भावितमिदं त्रीन् पञ्च
वा वासरान् ।
भूयस्तद्गुडवारिणा प्रतिदिनं पीतं पुरस्थे रवौ
पुंसां विद्रधिनाशनं तु कथितं प्रोक्तं स्वयं
ब्रह्मणा ॥

चिरायता आधा पल, हल्दी १ पल (५ तोले), दारुहल्दी २ पल, पुनर्नवा (बिसखपरा) १ पल, अमलतास २ पल, धमासा १॥ पल, कुटकी पौन पल (३॥। तोले), असगन्ध १ पल, गिलोय ६। तोले और कुड़ेकी छाल ८॥। तोले लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें और उसे ३ या ५ दिन बासेके रसमें घोटें ।

इसे गुड़के शरबतके साथ सेवन करनेसे विद्रधि नष्ट होती है ।

(मात्रा—३–४ माशे)

(४८४०) भूनिम्बाद्योद्धूलम्

(वृ. मा.; व. से.; वृ. नि. र. । ज्वर.; वै. र. । ज्वरा.)

भूनिम्बः कारवी तिक्ता वचा कट्फलजं रजः ।
एतदुद्धूलनं श्रेष्ठं सन्ततस्वेदसम्भवे ॥

चिरायता, कलौंजी, कुटकी, बच और कायफल समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें ।

ज्वरमें आवश्यकतासे अधिक पसीना निकलता हो तो शरीरपर इस चूर्णकी मालिश करनी चाहिये ।

(४८४१) भूमिकूष्माण्डादियोगः

(व. से. । स्त्री.; यो. र. । स्तनदोष.)

भूमिकूष्माण्डमूलं पिबति क्षीरेण या नारी ।
सशर्करेणैव पुष्टा ह्यतिशयदुग्धवती सा भवति ॥

जो स्त्री बिदारीकन्दके चूर्णमें खाण्ड मिलाकर दूधके साथ सेवन करती है उसका शरीर पुष्ट हो जाता है और उसके स्तनोंमें खूब दूध आताहै।

(४८४२) भूम्यामलक्यादिचूर्णम्

(यो. र. । प्रदर.; वृ. नि. र. । स्त्रीरोगा.; यो. त. । त. ७४; व. से. । स्त्री.)

भूम्यामलकमूलं[1] तु पीतं तण्डुलवारिणा ।
द्वित्रैरेव दिनैर्नार्याः प्रदरं दुस्तरं जयेत् ॥

भुईआमलेकी जड़का चूर्ण चावलोंके पानीके साथ पीनेसे २-३ दिनमें ही भयङ्कर प्रदर रोग नष्ट हो जाता है।

(४८४३) भृङ्गराजरसायनम् (१)

(व. से. । रसायना.)

सम्यग् भृङ्गरजः क्षुण्णं वस्त्रपूतं प्रयत्नतः ।
क्षीरन्तु समभागेन मासमेकं नियोजयेत् ॥
वर्षेणान्धो गमनरहितो मत्तमातङ्गगामी ।
मूको वाग्मी श्रवणरहितो दूरशब्दानुश्रावी ॥
षण्ढः पुत्री भवति पलितो नीलजीमूतकेशः ।
जीर्णादन्ताः पुनरपि दृढा वज्रदेहा भवन्ति ॥

उत्तम भंगरेको कूटकर कपड़छन चूर्ण बनावें।

इसे १ मास तक समान भाग दूधके साथ सेवन करें।

यदि इसे १ वर्ष पर्यन्त सेवन किया जाय तो अन्धा और लूला मनुष्य मदमत्त हाथीके समान चलने लगता है, गूंगा बोलने लगता है, बहिरा दूरके शब्दको भी सुन सकता है, नपुंसकको पुत्र प्राप्त हो जाता है, यदि बाल सफेद हो गये हों तो वे काले हो जाते हैं और कमजोर दांत पुनः दृढ़ हो जाते हैं।

(४८४४) भृङ्गराजरसायनम् (२)

(वृ. मा. । रसायना.)

असिततिलविमिश्रान्पल्लवान्भक्षयेद्यः
सततमिह पयोशी भृङ्गराजस्य मासम् ।
भवति स चिरजीवी व्याधिभिर्विप्रयुक्तो
भ्रमरसदृशकेशः कामचारी मनुष्यः ॥

भंगरेके पत्ते और काले तिल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे १ मास तक सेवन करने और केवल दूध पर रहनेसे मनुष्य रोगरहित और दीर्घ जीवी हो जाता है और उसके बाल भौंरे के समान काले हो जाते हैं।

(४८४५) भृङ्गराजादिचूर्णम् (१)

(यो. चि. म. । अ. २ चूर्णा.; भै. र. । रसायना.)

सूक्ष्मीकृतं भृङ्गनृपस्य चूर्णं
कृष्णैस्तिलैरामलकैश्च सार्द्धम् ।
सितायुतं भक्षयता नराणां
न व्याधयो नैव जरा न मृत्युः ॥

१—वं. से. में भूम्यामलकीके बीज लिखे हैं और यह पंक्ति अधिक लिखी है—

" मेढ्रगं रुधिरस्रावं रक्तातिसारमुल्वणम् "

अर्थात् यह योग मूत्रमार्गसे होने वाले रक्तस्राव और रक्तातिसारको भी नष्ट करता है।

भंगरा, काले तिल और आमलेका चूर्ण १-१ भाग तथा मिश्री ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिलावें।

इसे सेवन करनेवालों को रोग नहीं सताते, न ही उन्हें वृद्धावस्था आती है और न वे अकाल-मृत्यु से मरते हैं।

(४८४६) **भृङ्गराजादिचूर्णम्** (२)

(यो. चि. म. । अ. २ चूर्णा.; रसे. चि. म. । अ. ८)

समूलं भृङ्गराजं च छायाशुष्कं तु कारयेत् ।
तत्समं त्रिफलाचूर्णं सर्वतुल्या सिता भवेत् ॥
पलैकं भक्षयेच्चैतदल्पमृत्युजरापहम् ॥

छायामें सुखाया हुवा मूल सहित भंगरा और त्रिफला १-१ भाग तथा मिश्री २ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमेंसे नित्य प्रति ५ तोले चूर्ण खानेसे अकाल मृत्यु और वृद्धावस्था नहीं आती।

इति भकारादिचूर्णप्रकरणम्।

अथ भकारादिगुटिकाप्रकरणम्।

भक्तपाकवटी

(र. सा. सं.; र. रा. सु. । अजीर्णा.)

रसप्रकरणमें देखिये।

भक्तवारिगुटिका

रसप्रकरणमें देखिये

भक्तविपाकवटी

रसप्रकरणमें देखिये।

भक्तोत्तरीयावटी

रसप्रकरणमें देखिये।

(४८४७) **भद्रमुस्तादिवटिका**

(व. से. । मुखरोगा.; वृ. नि. र. । मुख.; यो. र.; भा. प्र. । दन्त.; वै. र. । मुख.; वृ. यो. त. । त. १२८)

भद्रमुस्ताभयाव्योषविडङ्गारिष्टपल्लवैः ।
गोमूत्रपिष्टैर्वटिकां छायाशुष्कां प्रकल्पयेत् ॥
तां निधाय मुखे सुप्याच्चलदन्तातुरो नरः ।
नातः परतरं किञ्चिच्चलद्दन्तस्य भेषजम् ॥

नागरमोथा, हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल और बायबिड़ंगका चूर्ण १-१ भाग तथा पत्थरपर पिसे

हुवे नीमके ताजे पत्ते २ भाग लेकर सबको गोमूत्रमें पीसकर गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें।

इनमेंसे एक एक गोली मुंहमें रखकर सोनेसे हिलते हुवे दांत दृढ़ हो जाते हैं। हिलते हुवे दांतोंके लिये इससे उत्तम और कोई भी औषध नहीं है।

(४८४८) **भल्लातकमोदकः**

(व. से.; । उदरा; वृ. यो. त. । त. १०५; वृ. नि. र.; वृ. मा.; ग. नि. । उदररो.)

भल्लातकाऽभयाजाजीगुडेन सह मोदकः।
सप्तरात्रान्निहन्त्याशु प्लीहानमतिदारुणम् ॥

शुद्ध भिलावा, हर्र और जीरेका चूर्ण १-१ भाग तथा गुड़ ६ भाग लेकर सबको एकत्र कूटकर या चूर्णको गुड़की चाशनीमें मिलाकर गोलियां बनावें।

इन्हें सेवन करनेसे सात दिनमें भयङ्कर तिल्ली भी नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—१ तोला। अनुपान जल।)

(४८४९) **भल्लातकवटकः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

त्रिकटुकमगधानां मूलचित्रं विडङ्गं
समतुलितममीषां तुल्यभल्लातकानि।
सकलमिह समन्तादेकतः सम्प्रचूर्ण्य
द्विगुणतुलितमात्रं योजनीयो गुडस्तु ॥
सकलमपि विकुट्य स्निग्धभाण्डे निधाय
प्रतिदिनमपि सेव्यं चाक्षमात्रं सुधीरैः।
गुदजजठररोगं शूलगुल्मान् क्रिमींस्तु।
जनयति वडवाग्निं हन्ति पाण्डुं क्षयं वा ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, चीतेकी जड़ और बायबिड़ंगका चूर्ण १-१ भाग, शुद्ध भिलावेकी मज्जा ६ भाग और गुड़ २४ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह कूटकर चिकने पात्रमें भरकर रख दें।

इसे १ तोलेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे अर्श, उदररोग, शूल, गुल्म, कृमि, पाण्डु और क्षयका नाश होता तथा अग्निकी वृद्धि होती है।

(४८५०) **भल्लातकहरीतकी**

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

भल्लातकहरीतक्यौ पाठा कटुकरोहिणी।
यवानी जाजिकुष्ठं च चित्रकोतिविषावचा ॥
कचोरं पौष्करं मूलं हिङ्गु इन्द्रयवं तथा।
शुण्ठी सौवर्चलं तुल्यं गवां मूत्रेण पेषयेत् ॥
छायाशुष्का च वटिका माषमात्रं च भक्षयेत्।
पिबेदुष्णोदकं पश्चात्कफोत्थानर्शसाञ्जये ॥

शुद्ध भिलावा, हर्र, पाठा, कुटकी, अजवायन, जीरा, कूठ, चीता, अतीस, बच, कचूर, पोखरमूल, हींग, इन्द्रजौ, सोंठ और सञ्चल (काला नमक) समान भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनाकर उसे गोमूत्रमें घोटकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें।

इन्हें उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफज अर्श नष्ट होती है।

भस्मवटी

रसप्रकरणमें देखिये।

भागोत्तरगुटिका

रसप्रकरणमें देखिये।

भार्गोत्तरवटकः

रसप्रकरणमें देखिये ।

(४८५१) भार्ग्यादिगुटिका

(ग. नि. । गुटिका.)

भार्गी सकृष्णा द्विनिशेन्दुकान्ता
पथ्याबिभीतत्वचकुष्ठविश्वाः ।
कन्यारसेनापि गुटिर्विधेया
सश्वासकासामरुचिं निहन्ति ॥

भरंगी, पीपल, हल्दी, दारुहल्दी, कपूर, बड़ी इलायची, हर्र, बहेड़ा, दालचीनी, कूठ और सोंठके समानभाग-मिश्रित चूर्णको घृतकुमारी (ग्वारपाठा) के रसमें घोटकर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे श्वास, खांसी और अरुचि नष्ट होती है ।

(मात्रा--१-१॥ माशा ।)

भास्करामृताभ्रवटी

रसप्रकरणमें देखिये

भास्वद्वटी

रसप्रकरणमें देखिये ।

भीममण्डूरवटकः

रसप्रकरणमें देखिये

(४८५२) भीमसेनवटकः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

मुस्ता विश्वविडङ्गचव्यकसठी पथ्या च तेजोवती
दन्तीन्द्रा त्रिवृता समांशकपलीमात्रा च प्रत्येकशः
तस्माच्चाष्टपलानि रुष्करमपि षट् वृद्धदारोः पलान्
युञ्ज्यात् षोडश सूरणस्य सलिलद्रोणेऽखिलं कल्कितम् ॥
पूतं भूयः पचेत् गुडत्रिगुणितं युञ्ज्याद् भवेद्वा घनम् ।
उद्धृत्य पुनरेव चित्रकत्रिवृत्तेजोवतीसूरणम् ॥
एलापत्रकनागकेशरलवङ्गानां समं चूर्णितम् ।
एषां षोडशभागयोग्यविहितं सर्वेश्च तं चैकतः ॥
स्थाप्यं स्निग्धघटे प्रभातसमये स्यादक्षमात्राशनः
जीर्णे क्षीरमपि प्रभूतमतिमान् पाने तथा भोजने
अर्शोपाण्डुभगन्दरग्रहणिकाशोषं कृतं नाशयेत् ।
शूलानाहविबन्धगुल्मकफजात्रोगान् जयेत् कामलान् ॥

नागरमोथा, सोंट, बायबिड़ंग, चव, सठी (कचूर), हर्र, गजपीपल, दन्तीमूल, इन्द्रायणमूल और निसोत ५-५ तोले, शुद्ध भिलावा ४० तोले, विधारा ३० तोले और जिमीकन्द ८० तोले लेकर सबको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी रह जाय तो उसे छानकर उसमें उपरोक्त समस्त ओषधियों से ३ गुना गुड़ मिलाकर पुनः पकावें और जब गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे नीचे उतारकर उसमें चीता, निसोत, गजपीपल, जिमीकन्द (सूरण), इलायची, तेजपात, नागकेसर और लैंगका समान भाग मिश्रित चूर्ण उपरोक्त गुड़ समेत समस्त औषधोंका सोलहवां भाग मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रख दें ।

इसे प्रातः काल १। तोलेकी मात्रानुसार खाना और औषध पचने पर भूख तथा प्यासमें केवल दूध पीना चाहिये ।

इसे इस प्रकार सेवन करनेसे अर्श, पाण्डु, भगन्दर, ग्रहणी, शोष, शूल, आनाह, विबन्ध, गुल्म, कामला और अन्य कफजरोग नष्ट होते हैं ।

(४८५३) भुजङ्गीगुटिका

(वृ. नि. र. । वातव्याधि.)

तेजोह्वा प्रस्थमेकं पयसि गजगुणे
पाकयुक्त्या विपाच्य व्योषं पथ्या शताह्वा
कृमिरिपुमनलं ग्रन्थिकं चाजमोदाम्
उग्रा कुष्ठाश्वगन्धौ सुरतरुममृतं ।
पालिकानि प्रदद्यात्सर्वान्वातान्वटीयं
घृतमधुसहिता नास्ति भावान्करोति ॥

१ सेर तेजबलके चूर्णको ८ सेर गोदुग्धमें पकावें । जब खोया (मावा) हो जाय तो उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, सोया, बायबिडंग, चीता, पीपलामूल, अजमोद, बच, कूठ, असगन्ध और देवदारु का चूर्ण तथा घी ५-५ तोले मिलाकर गोलियां बना लें ।

इन्हें घी और शहदके साथ सेवन करनेसे समस्त वातव्याधियां नष्ट होती हैं ।

(मात्रा—६ माशे ।)

भूनिम्बादिगुटी

रसप्रकरणमें देखिये

भेकराजरसादिमोदकः

रसप्रकरणमें देखिये

(४८५४) भेदिनीवटी

(भै. र. । उदरा.; र. का. धे. । उदर.; रसे. चि. म. । अ. ९)

त्रिकण्टकस्नुक्पयसा पिप्पल्या वटिकाकृता ।
भेदनी या सिद्धिमता महागदनिषूदनी ॥

गोखरु और पीपलका चूर्ण तथा स्नुही (सेंड) का दूध समान भाग लेकर तीनों को एकत्र घोटकर (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे विरेचन होकर उदररोग नष्ट हो जाते हैं ।

भैरवीगुटिका

रसप्रकरणमें देखिये

भैरवीवटी

रसप्रकरणमें देखिये

भोगपुरन्दरीगुटिका

रसप्रकरणमें देखिये

(४८५५) भ्रमनाशिनीगुटी

(व. से. । मूर्च्छा.)

कृष्णाशताह्वाशुण्ठीनां साभयानां पलं पलम् ।
गुडस्य षट्पलान्येषा गुटिका भ्रमनाशिनी ॥

पीपल, शतावर, सोंठ और हर्रका चूर्ण १-१ पल (५-५ तोले) तथा गुड़ ६ पल लेकर सबको एकत्र कूटकर गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे भ्रम नष्ट होता है ।

(मात्रा—६ माशेसे १ तोले तक ।)

इति भकारादिगुटिकाप्रकरणम् ।



अथ भकारादिलेहप्रकरणम्

(४८५६) **भद्रोत्कटाद्यवलेहः**

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

भद्रोत्कटतुलाक्काथे पादशेषे विनिःक्षिपेत् ।
शर्करायाः पलत्रिंशच्चूर्णानीमानि दापयेत् ॥
वत्सकं धान्यकं मुस्तमुशीरं बिल्वमेव च ।
शाल्मलीवेष्टकञ्चैव पिप्पली मरिचानि च ॥
बला चातिबला मांसी ह्रीवेरं सदुरालभम् ।
एषाञ्च पलिकैर्भागैश्चूर्णैरेनं समाचरेत् ॥
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्ति सूतिकाञ्च सुदुस्तराम् ।
वह्निञ्च कुरुते दीप्तं शूलानाहविबन्धनुत् ॥

६। सेर नागरमोथेको ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें ३० पल (१५० तोले) खांड मिलाकर पुनः पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें इन्द्रजौ, धनिया, नागरमोथा, खस, बेलगिरी, मोचरस, पीपल, काली मिरच, खरैटी, कंघी, जटामांसी, सुगन्धबाला और धमासेका ५-५ तोले चूर्ण डालकर उसे करछीसे अच्छी तरह मिला दें और ठंडा होने पर चिकने पात्रमें भरकर रख दें ।

इसके सेवनसे संग्रहणी, सूतिका रोग, शूल, अफारा और मलावरोधका नाश होता तथा अग्निकी वृद्धि होती है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

भल्लातकगुडः (१)

(वृ. मा.; च. द.; व. से. । अर्श.; हा. सं.। स्था. ३ अ. ११)

(गुडभल्लातक सं. १३३९ देखिये)

(४८५७) **भल्लातकगुडः** (२)

(वृ. मा.; च. द. । अर्शो.)

दशमूल्यमृता भार्ङ्गी श्वदंष्ट्रा चित्रकं शठी ॥
भल्लातकसहस्रं तु पलांशं काथयेद्बुधः ।
दत्त्वा गुडतुलामेकां लेहीभूतं समुद्धरेत् ॥
माक्षिकं पिप्पलीं तैलमौरुबूकं च दापयेत् ।
कुडवं कुडवं चात्र त्वगेलामरिचं तथा ॥
अर्शः कासमुदावर्तं पाण्डुत्वं शोफमेव च ।
नाशयेद्वह्निसादं च गुडो भल्लातकः स्मृतः ॥

दशमूल, गिलोय, भरंगी, गोखरु, चीतामूल और शठी (कचूर) ५-५ तोले तथा शुद्ध भिलावे १ हजार नग लेकर सबको अधकुटा करके ८ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग पानी शेष रहने पर छानकर उसमें ६। सेर गुड़ और ४० तोले अरण्डीका तेल मिलाकर पुनः पकावें जब गाढ़ा हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर उसमें पीपल, दालचीनी, इलायची और काली मिर्चका चूर्ण २०-२० तोले मिलावें और जब ठण्डा हो जाय तो उसमें ४० तोले शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

यह अवलेह अर्श, खांसी, उदावर्त, पाण्डु, शोथ और अग्निमांधको नष्ट करता है ।

(मात्रा-१ तोला ।)

(४८५८) **भल्लातकगुडः** (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

दशमूलगुडूचिसठीक्षुरकं
सहचित्रकभार्ङ्गिपलेन मितम् ।
प्रदिशेत् शतपश्चकमग्निमुखान्
विपचेज्जलद्रोणमितेन ततः ॥
गुडजीर्णशतं प्रददेत्कथित-
मवतार्य सुशीतलकं च ततः ।
दलकेसरभृङ्गलवङ्गयुतं
कृतचूर्णमिदं सकलैकमिति ॥
घृतभावितमेकदिनं च पुन-
र्घृतभाजनके दिनसप्तमिदम् ।
स्निग्धघटे विदधीत मनुष्यो
दत्तमिदं च गुदामयसङ्घे ॥
मोदकमेकमुषासु ग्रसेत्
विनिहन्ति गुदामयमेहरुजः ।
हरति कासहलीमक कामलकं
द्रुतमेव हुताशनदीप्तिकरम् ॥

दशमूल, गिलोय, सटी (कचूर), गोखरु, चीता और भरंगी ५-५ तोले तथा शुद्ध भिलावे ५०० नग लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छानकर उसमें ६। सेर पुराना गुड़ मिलाकर पुनः पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार लें और ठंडा होने पर उसमें तेजपात, नाग-केसर, दालचीनी और लौंगका चूर्ण (२०-२० तोले) मिलाकर (२० ताले) घृत डालकर अच्छी तरह विलोडन करें और घृतके चिकने बरतनमें भरकर रख दें तथा सात दिन पश्चात् काममें लावें ।

इसके सेवनसे अर्शादि गुदरोग, प्रमेह, कास, हलीमक और कामलाका नाश होता तथा अग्निकी वृद्धि होती है ।

भल्लातकपाकः

(यो. चि. म.)

अमृतभल्लातकी प्र. सं. १४५ देखिये

(४८५९) **भल्लातकलेहः** (१)

(भल्लातकलौहः)

(वृ. मा. । अर्श.; ग. नि. । लेहा.; हा. सं. । स्था. ३ अ. १०; रसे. चि. म. । अ. ९; च. द. । अर्शो.; र. का. धे. । अर्श.)

चित्रकं त्रिफला मुस्तं ग्रन्थिकं चविकाऽमृता ।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गदण्डोत्पलकुठेरकाः ॥
एषां चतुष्पलान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ।
भल्लातकसहस्रे द्वे छित्त्वा तत्रैव दापयेत् ॥
तेन पादावशेषेण लोहपात्रे पचेद्भिषक् ।
तुलार्धं तीक्ष्णलोहस्य घृतस्य कुडवद्वयम् ॥
त्र्यूषणं त्रिफला वह्निं सैन्धवं विडमौद्भिदम् ।
सौवर्चलं विडङ्गं च पलिकांशं प्रकल्पयेत् ॥
कुडवं वृद्धदारस्य तालमूल्यास्तथैव च ।
सूरणस्य पलान्यष्टौ चूर्णं कृत्वा विनिक्षिपेत् ॥
सिद्धे शीते प्रदातव्यं मधुनः कुडवद्वयम् ।
प्रातर्भोजनकाले वा ततः खादेद्यथाबलम् ॥

अर्शांसि ग्रहणीदोषं पाण्डुरोगमरोचकम् ।
कृमिगुल्माश्मरीमेहान् शूलं चाशु व्यपोहति ॥
करोति शुक्रोपचयं वलीपलितनाशनम् ।
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम् ॥

चीतामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, पीपलामूल, चर्व, गिलोय, गजपीपल, अपामार्ग, सहदेवी और बनतुलसी २०–२० तोले तथा २ हजार शुद्ध भिलावे लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहनेपर छानकर उसमें ३ सेर १० तोले लोहभस्म और १ सेर घृत मिलाकर पुनः लोहेकी कढ़ाईमें पकावें। जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो आगसे नीचे उतारकर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, सेंधा, विडलवण, उद्भिद् लवण, सञ्चल (कालानमक) और बायबिड़ंगका चूर्ण ५–५ तोले तथा विधारेका चूर्ण २० तोले, तालमूली (मूसली) का चूर्ण २० तोले और जिमीकन्दका चूर्ण ४० तोले मिला दें और ठण्डा होनेपर उसमें १ सेर शहद मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें।

इसे प्रातःकाल या भोजनके समय यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अर्श, ग्रहणी, पाण्डु, अरुचि, कृमि, गुल्म, अश्मरी, प्रमेह, शूल और बलि पलितादि रोग नष्ट होकर बलवीर्य की वृद्धि होती है।

(४८६०) भल्लातकलेहः (२)

(ग. नि. । लेहा.)

भल्लातक सहस्रं तु द्रोणेऽपां विधिवत्पचेत् ।
ततः पादावशिष्टं तु पुनरग्नावधिश्रयेत् ॥
गुडस्य तु तुलां दत्त्वा तत्र भूयो विपाचयेत् ।
त्र्यूषणं त्रिफला दन्ती चित्रको हस्ति पिप्पली ॥
चव्याजमोदापाठाश्च पिप्पलीमूलमेव च ।
एषां द्विपालिकान्भागान् सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
लेहीभूते ततः पश्चात्प्रक्षिपेन्मतिमान्भिषक् ।
शीतीभूते ततः पश्चाच्चातुर्जातपलं क्षिपेत् ॥
उदुम्बरसमां मात्रां खादयेच्च यथाबलम् ।
अर्शांसि ग्रहणीदोषं प्लीहानं विषमज्वरम् ॥
दुष्टगुल्मोदरं हन्ति मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
कासश्वासहरो हृद्यो भल्लातकगुडः स्मृतः ॥

१ हजार शुद्ध भिलावेंको ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें ६। सेर गुड़ मिलाकर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, चीतामूल, गजपीपल, चव, अजमोद, पाठा और पीपलामूलका चूर्ण १०–१० तोले मिलाकर अग्निसे नीचे उतार लें और उसके ठण्डा होने पर उसमें दालचीनी, तेजपात, इलायची और नागकेसरका ५–५ तोले चूर्ण मिला दें।

इसमेंसे नित्य प्रति गूलरके फलके समान सेवन करनेसे अर्श, संग्रहणी, प्लीहा, विषमज्वर, दुष्ट गुल्म, उदर, मन्दाग्नि, अरुचि, खांसी और श्वासका नाश होता है।

यह लेह हृदयके लिये भी हितकारी है।

(४८६१) **भल्लातकादियोगः**

(ग. नि. । क्रिमि.)

भल्लातकास्थि स्वरसं विडङ्गार्धेन संयुतम् ।
सूर्यतप्तं लिहेद्युक्त्या सिद्धं क्रिमिविनाशनम् ॥

भिलावेके बीजोंके स्वरस में उससे आधा बायबिड़ंगका चूर्ण मिलाकर धूपमें रखकर खूब गरम कर लें।

इसे चाटनेसे कृमि रोग नष्ट होता है।

(४८६२) **भल्लातकावलेहः**

(वृ. यो. त. । त.१२०; यो. र. । कुष्ठ.; वृ. नि. र. । त्वग्दो.; ग. नि.। लेहा.; धन्व.; र. र.; व. से.; भा. प्र.; यो. त. । त. ६२)

निम्बगोपारुणाकट्वीत्रायन्तीत्रिफलाघनम् ।
पर्पटावल्गुजानन्तावचाखदिरचन्दनम् ॥
पाठाशुण्ठीसटीभार्गीवासाभूनिम्बवत्सकम् ।
श्यामेन्द्रवारुणीमूर्वाविडङ्गातिविषानलम्[१] ॥
हस्तिकर्णामृताब्दा[२]ह्वपटोलं रजनीद्वयम् ।
कृष्णारग्वधसप्ताह्वं शिरीषं[३] चोच्चटाफलम् ॥
मञ्जिष्ठा लाङ्गली रास्ना नक्तमालः पुनर्नवा ।
दन्तीबीजकसारश्च भृङ्गराजकुरण्टकम् ॥
एषां द्विपलिकान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ।
अष्टभागावशिष्टं च कषायमवतारयेत् ॥
भल्लातकसहस्राणि क्षिपेच्छित्वाऽर्मणेऽम्भसि ।
चतुर्भागावशिष्टं तु कषायमवतारयेत् ॥
तौ कषायौ समादाय वस्त्रपूतौ तु कारयेत् ।
एकीकृत्य कषायौ तौ पुनरग्नावधिश्रयेत् ॥

१ विडङ्गेन्द्रयवं जलमिति पाठान्तरम् । २ द्राक्षेति पाठान्तरम् ३...बिल्वश्योनाकपाटलाः इति पाठान्तरम्

गुडस्यैकतुलां दत्त्वा लेहवत्साधयेद्भिषक् ।
भल्लातकसहस्रस्य तत्र बीजानि दापयेत् ॥
त्रिकटुं त्रिफलां मुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा ।
चन्दनं सैन्धवं कुष्ठं दीप्यकं च पलं पलम् ॥
चातुर्जातं च सञ्चूर्ण्य घृतभाण्डे निधापयेत् ।
सौगन्धिकस्य दातव्यं चूर्णं पलचतुष्टयम् ॥
महाभल्लातको ह्येष महादेवेन निर्मितः ।
प्राणिनां तु हितार्थाय नाशयेच्छीघ्रमेव तु ॥
श्वित्रमौदुम्बरं दद्रुमृष्यजिह्वं सकाकणम् ।
पुण्डरीकं च चर्माख्यं विस्फोटं रक्तमण्डलम् ॥
कृच्छ्रं कापालिकं कुष्ठं पामां चापि विपादिकाम् ।
अर्शांसि षट्प्रकाराणि श्वासं कासं भगन्दरम् ॥
अनुपानेन दातव्यं छिन्नातोयेन तं भिषक् ।
भोजने न सदा योज्यमुष्णं चाम्लं विशेषतः ॥
अन्यान्यपि च कुष्ठानि नाशयेन्नात्र संशयः ॥

(१) नीमकी छाल, सारिवा, अतीस, कुटकी, त्रायमाना, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, पित्त-पापड़ा, बाबची, अनन्तमूल, बच, खैरसार, लाल-चन्दन, पाठा, सोंठ, कचूर, भरंगी, बासा, चिरा-यता, इन्द्रजौ, काली सारिवा, इन्द्रायणकी जड़, मूर्वा, बायबिड़ंग, अतीस, चीतेकी जड़, हस्तिकर्ण पलाशकी छाल, गिलोय, नागरमोथा, पटोल, हल्दी, दारुहल्दी, पीपल, अमलतास, सतौना, सिरसकी छाल, रक्तगुञ्जा, मजीठ, कलियारी, रास्ना, करञ्जकी छाल, पुनर्नवा (बिसखपरा), दन्तीबीज (जमाल-गोटा), बिजयसार, भंगरा और पियाबासा १०-१० तोले लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

(२) १००० शुद्ध भिलावोंको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहनेपर छान लें।

(३) उपरोक्त दोनों क्वाथोंको एकत्र मिलाकर उसमें ६। सेर गुड़ और १००० शुद्ध भिलावोंकी पिसी हुई गिरी मिलाकर पुनः पकावें और गाढ़ा होने पर उतार लें।

(४) सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिड़ंग, चीतामूल, सफेद चन्दन, सेंधानमक, कूठ, अजमोद दालचीनी, तेजपात, इलायची और नागकेसरका चूर्ण ५–५ तोले तथा नीलोत्पलका चूर्ण २० तोले लेकर उपरोक्त अवलेहमें मिलावें और उसे चिकने पात्रमें भरकर रख दें।

इसके सेवनसे श्वित्र, औदुम्बर, दाद, ऋष्यजिह्व, काकण, पुण्डरीक और चर्मकुष्ठादि अनेक प्रकारके कुष्ठ, विस्फोटक, रक्तमण्डल, कष्टसाध्य कापालिक कुष्ठ, पामा, विपादिका, ६ प्रकारकी अर्श, श्वास, खांसी, भगन्दर और अन्य अनेक प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं।

इसे गिलोयके क्वाथके साथ सेवन करना चाहिये और उष्ण तथा अम्ल पदार्थ न खाने चाहियें।

(मात्रा—६ माशे।)

नोट—गदनिग्रहमें क्वाथ्य द्रव्योंमें नीमकी छालसे प्रारम्भ करके नागरमोथे तकके पदार्थोंका तथा पीपलसे लेकर पुनर्नवा तकके पदार्थोंका अभाव है एवं प्रक्षेप द्रव्योंमें बिड़ंग, चीता, कूठ और चन्दन नहीं लिखे।

(४८६३) **भार्गीगुडावलेहः**

(ग. नि. । लेहा.; भै. र.; वृ. मा.; च. द. । हिक्काश्वासा.; व. से. । स्वरभेद.; यो. चि. म. । अ. ९; भा. प्र. । श्वासा.)

शतं संग्राह्य भार्ग्यास्तु दशमूल्यास्तथा परम् ॥
शतं हरीतकीनां च पचेत्तोये चतुर्गुणे ।
पादशेषे च तस्मिंस्तु रसे वस्त्रपरिस्रुते ॥
आलोड्य च तुलां पूतां गुडस्य त्वभयां ततः ।
पुनः पचेत्तु मृद्वग्नौ यावल्लेहत्वमागतम् ॥
शीते तु मधुनश्चात्र षट्पलानि प्रदापयेत् ।
त्रिकटु त्रिसुगन्धं च पालिकं च पृथक् पृथक् ॥
कर्षद्वयं यवक्षारं सञ्चूर्ण्य प्रक्षिपेत्ततः ।
भक्षयेदभयामेकां लेहस्यार्धपलं लिहेत् ॥
श्वासं सुदारुणं हन्ति कासं पञ्चविधं तथा ।
स्वरवर्णप्रदो ह्येष जठरानलदीपनः ॥
पलोल्लेखागते माने न द्वैगुण्यमिहेष्यते ।
हरीतकीशतस्यात्र प्रस्थत्वादाढकं जलम् ॥

भरंगीकी जड़ ६। सेर, दसमूल ६। सेर और हर्र १०० नग (१ सेर) लेकर भरंगी और दशमूलको अधकुटा कर लें और हर्रोंको कपड़ेकी पोटलीमें बांध लें एवं सबको एकत्र मिलाकर १०८ सेर पानीमें पकावें और २७ सेर पानी शेष रहने पर हर्रोंको अलग निकाल लें तथा क्वाथको छान लें।

इस क्वाथमें ६। सेर गुड़ मिलाकर छानें और फिर उसमें उपरोक्त हर्र डालकर पुनः पकावें। जब लेहके समान गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे नीचे उतार लें और ठण्डा होने पर उसमें ६० तोले

शहद तथा ५-५ तोले सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची और तेजपात का चूर्ण तथा २॥ तोले जवाखार मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रख दें।

इसमेंसे नित्य प्रति १ हर्र और २॥ तोले अवलेह खानेसे भयङ्कर श्वास और पांच प्रकारकी खांसी नष्ट होती तथा स्वर, वर्ण और जठराग्निकी वृद्धि होती है।

भार्गीहरीतक्यवलेहः

(यो. र. । श्वासा.; यो. त. । त. ३०.; ग. नि. । हिक्काश्वासा.)

यह प्रयोग भार्गीगुडावलेहके समान ही है केवल इतना अन्तर है कि इसमें शहद ४० तोले पड़ता है तथा प्रक्षेप द्रव्योंमें ४० तोले त्रिफला और ५ तोले नागकेसरका चूर्ण अधिक है।

गदनिग्रहके पाठानुसार शहद ८० तोले डालना और त्रिफला न डालना चाहिये।

(४८६४) **भार्ग्यादिलेहः** (१)

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां भार्ङ्गीं मधुकसंयुताम्।
पथ्यां तिक्ताकणाव्योषयुक्तां वा श्वासनाशनीम्॥

भरंगी और मुलैठीका चूर्ण अथवा हर्र, कुटकी, पीपल और त्रिकुटेका चूर्ण शहद और घीमें मिलाकर चाटनेसे श्वास नष्ट होता है।

(४८६५) **भार्ग्यादिलेहः** (२)

(व. से. । कासा.; वृ. यो. त. । त. ८७; यो. र. । कासा.; वृ. मा. । कास.)

भार्ङ्गीद्राक्षाशठी[1]भृङ्गीपिप्पलीविश्वभेषजैः।
गुडतैलयुतो लेहो हितो मारुतकासिनाम्॥

भरंगी, मुनक्का, कचूर (पाठान्तरके अनुसार गिलोय), काकड़ासिंगी, पीपल और सोंठके समान भाग मिश्रित चूर्णको गुड़ और तेलमें मिलाकर चाटनेसे वातज खांसी नष्ट होती है।

(४८६६) **भार्ग्याद्यवलेहः**

(ग. नि. । अवलेहा. ५)

भार्गीं हरीतकीं वासां कण्टकारीं तथैव च।
प्रत्येकं प्रस्थमादाय द्रोणेऽपां साधयेद्भिषक्॥
क्वाथे पादावशेषे तु गुडं प्रस्थमितं क्षिपेत्।
ततः पाकघनीभूते शीतेऽर्धकुडवं मधु॥
पिप्पलीं कट्फलं शृङ्गीं मधुयष्टिं लवङ्गकम्।
त्वक्क्षीरीं रजनीं चैव पलार्धप्रमितां क्षिपेत्॥
एषोऽवलेहः शमेत् पञ्च कासान् सुदारुणान्॥

भरंगी, हर्र, बासा और कटेली १-१ सेर लेकर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छानकर उसमें १ सेर गुड़ मिलाकर पुनः पकावें। जब वह गाढ़ा हो जाय तो उतारकर ठण्डा कर लें। तदनन्तर उसमें २० तोले शहद और २॥-२॥ तोले पीपल, कायफल, काकड़ासिंगी, मुलैठी, लैांग, बंसलोचन और हल्दीका चूर्ण मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर रख दें।

इसके सेवनसे ५ प्रकारकी दारुण खांसी नष्ट हो जाती है।

भूनिम्बाद्योऽवलेहः

(ग. नि. । कुष्ठा.)

"भूनिम्बादि चूर्णम्" सं. ४८३६ देखिये।

१—वृ. यो. त. में शठी के स्थानमें गिलोय लिखी है।

(४८६७) **भृगुहरीतकी**

(भा. प्र. । म. ख. कासा.)

समूलवल्कच्छदकण्टकार्या-
स्तुलां ततो द्रोणमितं जलञ्च ।
हरीतकीनां शतमेकपात्रे
विपाच्य कुर्याच्चरणाम्बुशेषम् ॥
तस्मिन्कषाये तनुवस्त्रपूते
हरीतकीभिः सहितं गुडस्य ।
तुलां विनिःक्षिप्य पचेत्सुपक्व-
मेतत्समुत्तार्थ सुशीतलञ्च ॥
पलं पलञ्चापि कटुत्रयञ्च
तथा चतुर्जातपलं विचूर्ण्य ।
पलानि षट्पुष्परसस्य चापि
विनिःक्षिपेत्तत्र विमिश्रयेच्च ॥
प्रयुज्यमानो विधिनैष लेहो
यथाबलञ्चापि यथानलञ्च ।
वातात्मकं पित्तकृतं कफोत्थं
द्विदोषजातान्यपि च त्रिदोषम् ॥
क्षतोद्भवञ्च क्षयजञ्च कासं
श्वासञ्च हन्यात्सहपीनसेन ।
यक्ष्माणमेकादशरूपमुग्रं
हरीतकी या भृगुणोपदिष्टा ॥

६। सेर कटेलीका पञ्चाङ्ग और १०० नग हर्रे लेकर हर्रोंको कपड़ेकी पोटलीमें बांध लें और कटेलीको अधकुटा कर लें । तत्पश्चात् दोनोंको ३२ सेर पानीमें एकत्र पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर क्वाथको छान लें । तथा हर्रोंको अलग निकाल लें । तदनन्तर उस क्वाथमें वे हर्रे और ६। सेर गुड़ मिलाकर पुनः पकावें । जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार लें और ठण्डा होनेपर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची तेजपात और नागकेसरका ५-५ तोले चूर्ण एवं ६० तोले शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे अग्निबलोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज, द्विदोषज, सन्निपातज, क्षतज और क्षयज खांसी तथा श्वास, पीनस और एकादश रूप राजयक्ष्माका नाश होता है ।

(४८६८) **भोजनान्तेऽवलेहः**

(रसायनसार)

कटुत्रयोग्राः सुरसेन्द्रपुष्पं
जीरद्वयं वाह्लि अकल्लकश्च ।
समाः समे स्तः पटूनी सिता च
रसाधिका द्वीपभवाऽऽर्द्रकञ्च ॥
निमज्जनार्हं खलु निम्बुनीरं
निधाय पात्रे समुपेक्ष्य पक्षम् ।
सेव्योऽवलेहो यदि भोजनान्ते
भुक्तिर्जरामेति यथाऽन्नकालम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, लौंग, भुने हुवे दोनों जीरे, भुनी हुई हींग और अकरकरा १-१ भाग, सेंधा नमक और काला नमक तथा मिश्री ९-९ भाग लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे एक कांचके पात्रमें डालदें तथा उसमें ९-९ भाग किसमिस, छुहारा और अदरकके टुकडे डालकर पात्रमें इतना नीबूका रस भर दें कि जिसमें सब चीजें डूब जायं । तदनन्तर पात्रका मुख बन्द करके रख दें । १५ दिन बाद चटनी तैयार हो जायगी ।

इसे भोजनके बादमें खानेसे भोजन अच्छी तरह और समय पर पच जाता है ।

इति भकारादिलेहप्रकरणम् ।

अथ भकारादिघृतप्रकरणम् ।

(४८६९) भद्रावहघृतम्

(भा. प्र. म. खं.; व. से. । मूत्राघाताद्य.)

अम्बष्ठा पाटला चैव वर्षाभूद्वयमेव च ।
विदारीकन्दकाशश्च कुशमोरटगोक्षुराः ॥
पाषाणभेदो वाराही शालिमूलं शरस्तथा ।
भल्लातकं शिरीषस्य मूलमेषामथाहरेत् ॥
समभागानि सर्वाणि क्वाथयित्वा विचक्षणः ।
पादशेषकषायेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
कल्कं दत्त्वाऽथ मतिमान्गिरिजं मधुकं तथा ।
नीलोत्पलञ्च काकोलीं बीजं त्रापुसमेव च ॥
कूष्माण्डञ्च तथैर्वारुसम्भवञ्च समं भवेत् ।
उष्णवातं निहन्त्येतद् घृतं भद्रावहं स्मृतम् ॥

क्वाथ—पाठा, पाढल, सफेद और लाल पुनर्नवा, बिदारीकन्द, कासकी जड़, कुशकी जड़, ईखकी जड़, गोखरु, पखानभेद, बाराही-कन्द, शालि धानकी जड़, रामशरकी जड़, भिलावा और सिरसकी जड़की छाल समान भाग-मिश्रित २ सेर लेकर सबको अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—शिलाजीत, मुलैठी, नील कमल, काकोली, खीरेके बीज, पेठेके बीज और ककड़ीके बीज समानभाग मिश्रित ६ तोले ८ माशे लेकर पीस लें ।

विधि—१ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह घृत उष्णवात (सोजाक) को नष्ट करता है ।

(४८७०) भद्रोत्कटाद्यं घृतम्

(भै. र. । स्त्रीरोगा.; र. र. । प्रसूति.; व. से. । स्त्रीरोगा.)

समूलपत्रशाखन्तु शतं भद्रोत्कटस्य च ।
वारिद्रोणेन संसाध्यं स्थाप्यं पादावशेषितम् ॥
घृतप्रस्थं विपक्तव्यं गर्भे दत्त्वा तु कार्षिकम् ।
सव्योषं पिप्पलीमूलं चित्रकं जीरकं तथा ॥
पञ्चमूलं कनिष्ठञ्च रास्नैरण्डसमन्वितम् ।
बला सिन्धु यवक्षारं सर्जिका कृष्णजीरकम् ॥
सिद्धमेतद् घृतं सद्यो निहन्यात्सूतिकामयान् ।
ग्रहणीं पाण्डुरोगञ्च अर्शांसि विविधानि च ॥
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं स्त्रीणां स्तन्यविशोधनम् ॥

क्वाथ—मूल, पत्र और शाखा सहित प्रसारणी (खींप) ६। सेर लेकर उसे अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, चीता, जीरा, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु, रास्ना, अरण्डमूल, खरैटी, सेंधा, जवाखार, सज्जी

और काला जीरा १।-१। तोला लेकर सबको पीस लें।

विधि—२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क मिलाकर क्वाथ जलने तक पकावें और फिर छान लें।

यह घृत सूतिकारोग, ग्रहणी, पाण्डु और अनेक प्रकारके अर्श रोगको शीघ्र ही नष्ट कर देता है। अग्निकी वृद्धि और स्त्रीके दूधको शुद्ध करता है।

(४८७१) **भल्लातकघृतम्** (१)

(सुश्रुत संहिता । चि. अ. ९)

भल्लातकाभयाविडङ्गसिद्धं वा सर्वेषाम् ॥

भिलावा, हर्र और बायबिडंगके क्वाथ तथा कल्कसे सिद्ध घृत समस्त प्रकारके कुष्ठोंको नष्ट करता है।

(क्वाथके लिये हरेक वस्तु २७ तोले लेकर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क के लिये हरेक वस्तु १ तोला १ माशा लेकर पीस लें। घी आधासेर।)

(४८७२) **भल्लातकघृतम्** (२)

(र. र. । गुल्मा.)

भल्लातकान् कल्ककषायपक्वं
सर्पिः पिबेच्छर्करया विमिश्रम् ।
तद्रक्तगुल्मं विनिहन्ति पीतं
बलासगुल्मं मधुना समेतम् ॥

क्वाथ—२ सेर भिलावेको कूटकर १६ सेर पानीमें पकावें और जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—६ तोले ८ माशे भिलावेको पीस कर बारीक कर लें।

विधि—१ सेर घीमें क्वाथ और कल्क मिलाकर क्वाथ जलने तक पकाकर छान लें।

इसमें चौथाई भाग खांड मिलाकर पीनेसे रक्त गुल्म और शहद मिलाकर पीनेसे कफज गुल्म नष्ट होता है।

(४८७३) **भल्लातकघृतम्** (३)

(च. सं. । चि. अ. ५ गुल्म; वा. भ. । चि. अ. १४; च. द. । गुल्मा.; ग. नि. । घृता.; वं. से. । गुल्मा.)

भल्लातकानां द्विपलं पञ्चमूलं पलोन्मितम् ।
साध्यं विदारीगन्धाद्यमापोथ्य सलिलाढके ॥
पादावशेषे पूते च पिप्पलीं नागरं वचाम् ।
विडङ्गं सैन्धवं हिङ्गुं यावशूकं बिडं शठीम् ॥
चित्रकं मधुकं रास्नां पिष्ट्वा कर्षसमान्भिषक् ।
प्रस्थं च पयसो दत्त्वा घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
एतद्भल्लातकं नाम कफगुल्महरं परम् ।
प्लीहपाण्ड्वामयश्वासग्रहणीकासगुल्मनुत् ॥

क्वाथ—भिलावे १० तोले, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु, शालपर्णी, विदारीकन्द, बला, नागबला, गोखरु, मूर्वा, सतावर, सारिवा, काली सारिवा, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, पुनर्नवा, अरण्डमूल, हंसपदी, वृश्चिकाली और कैांचकी जड़ ५-५ तोले लेकर सबको ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—पीपल, सोंठ, बच, बायबिड़ंग, सेंधा,

हींग, जवाखार, बिडलवण, शठी (कचूर), चीतामूल मुलैठी और रास्ना १।-१। तोला लेकर सबको पीस लें।

विधि—२ सेर घी, २ सेर दूध तथा उपरोक्त क्वाथ और कल्क एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

यह घृत कफज गुल्म, प्लीहा, पाण्डु, श्वास, ग्रहणी और खांसीको नष्ट करता है।

(४८७४) भल्लातकाद्यं घृतम्

(व. से. । वातव्याध्य.)

भल्लातकानि सिन्धूत्थमधूच्छिष्टमहौषधम् ।
अम्लेन पयसा वाऽपि घृतमेतद्विपाचयेत् ॥
एतेनोद्वर्त्तनं कार्यं प्रदेहश्चैव शाम्यति ।
अतिप्रवृद्धां खल्लीं तु तत्क्षणादेव नाशयेत् ॥

भिलावा, सैंधानमक, मोम और सोंठ १०-१० तोले लेकर मोमके सिवाय अन्य तीनों ओषधियों को पीस लें। तदनन्तर ४ सेर घीमें मोम और यह चूर्ण तथा १६ सेर काञ्जी अथवा दूध मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

इसकी मालिश करनेसे खल्ली शूल (बांयटे) का नाश होता है।

(४८७५) भार्गीषट्पलकं घृतम्

(च. द. । गुल्मा. २९; व. से. । गुल्मरोगा.)

षड्भिः पलैर्मगधजाफलमूलचव्य-
विश्वौषधज्वलनयावजकल्कपक्वम् ।
प्रस्थं घृतस्य दशमूल्युरुबूकभार्ङ्गी-
क्वाथेऽप्यथो पयसि दध्नि च षट्पलाख्यम्॥
गुल्मोदरारुचिभगन्दरवह्निसाद-
कासज्वरक्षयशिरोग्रहणीविकारान् ।
सद्यः शमं नयति ये च कफानिलोत्था
भार्ङ्ग्याख्यषट्पलमिदं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चव, सोंठ, चीता और जवाखार ५-५ तोले लेकर पीस लें।

क्वाथ—दशमूल की प्रत्येक वस्तु, अरण्डमूल और भरंगी समान भाग-मिश्रित १।। सेर लेकर सबको अधकुटा करके १२ सेर पानीमें पकावें और ३ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

विधि—२ सेर घी, उपरोक्त कल्क तथा क्वाथ और २ सेर दूध तथा ३ सेर दही एकत्र मिलाकर पकावें और घृतमात्र शेष रहने पर छान लें।

यह घृत गुल्म, उदररोग, अरुचि, भगन्दर, अग्निमांद्य, खांसी, ज्वर, क्षय, शिरोरोग, ग्रहणी-विकार और वातकफज रोगोंको नष्ट करता है।

(४८७६) भार्ग्यादिघृतम्

(व. से. । कासा.)

भार्ङ्गीकल्कैर्घृतक्वाथ पचेद्दध्नि चतुर्गुणे ।
भार्ङ्गीरसं द्विगुणितं वातकासहरं परम् ॥

भरंगीका क्वाथ ८ सेर, घी ४ सेर, दही १६ सेर और भरंगीका कल्क आधा सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसे सेवन करनेसे वातज खांसी नष्ट होती है।

(४८७७) भास्कराद्यं घृतम्

(व. से. । नेत्ररोगा.)

कृष्णा सशर्करा द्राक्षा चतुर्मधुकयष्टिका ।
एकद्वित्रिचतुर्गुणाभागाः सर्वेषु कल्पिताः ॥
मृद्वग्निना पचेद्धीमान्बहुदर्व्या विघट्टयन् ।
भास्कराख्यमिदं सर्पिर्ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ॥

तिमिरं शुक्तिकं हन्ति पिल्लं वाऽभ्युषितानि च ।
अदृष्टिं मन्ददृष्टिश्च दिवानक्तान्ध्यमेव च ॥
अस्योपयोगादत्यन्तं संहारादति वर्त्तयेत् ।
वयस्तम्भनमायुष्यं वलीपलितनाशनम् ॥
प्रदरश्च क्षयं श्वासं शुक्रमूत्रमलार्तिनुत् ॥

पीपल १ भाग, खांड २ भाग, मुनक्का ३ भाग और मुलैठी ४ भाग लेकर सबका चूर्ण करके ८ गुने घीमें मिलावें और उसमें घीसे ४ गुना पानी मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

यह घृत तिमिर, शुक्तिक, पिल्ल, अम्लाध्युषित, अदृष्टि, मन्ददृष्टि, दिवान्ध्यता और रतौंधा आदि समस्त नेत्ररोगोंको नष्ट करता है ।

इसके सेवनसे आयु स्थिर होती और बढ़ती है तथा बलि पलित, प्रदर, क्षय, श्वास, मूत्ररोग, शुक्ररोग और मल सम्बन्धी रोग नष्ट होते हैं ।

(४८७८) भूतरावघृतम् (१)

(वा. भ. । उ. अ. ५; ग. नि. । उन्मादा.)

त्रिकटुकदलकुङ्कुमग्रन्थिकक्षारसिंही निशादारुसिद्धार्थयुग्माम्बुशुक्राव्ययैः । सितलशुनफलत्रयोशीरतिक्तावचातुत्थयष्टीबलालोहितैलाशिलापद्मकैः दधितगरमधूकसारप्रियाह्वानिशाख्याविषातार्क्ष्यशैलैः सचव्यामयैः । कल्कितैर्घृतमभिनवमशेषमूत्रांशसिद्धं मतं भूतरावाह्वयं पानतस्तद्ग्रहघ्नं परम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, तेजपात, केसर, पीपला मूल, जवाखार, कटेली, हल्दी, देवदारु, दो प्रकार की सरसों, सुगन्धबाला, इन्द्रजौ, सफेद ल्हसन, हर्र, बहेड़ा, आमला, खस, कुटकी, बच, नीलाथोथा, मुलैठी, खरैटी, मजीठ, इलायची, मनसिल, पद्माक, तगर, महुवेका सार, कंगनी, हल्दी, अतीस, रसौत, शिलाजीत, चव और कूठ के कल्क तथा दही और आठ प्रकारके मूत्रके साथ ताजा घृत सिद्ध करें ।

इसे पीनेसे ग्रहोन्माद नष्ट होता है ।

(कल्क---समान भाग मिश्रित आधासेर, घी ४ सेर, दही ८ सेर और आठों मूत्र---गोमूत्र, बकरीका मूत्र, भेड़का मूत्र, भैंसका मूत्र, घोड़ीका मूत्र, हथिनीका मूत्र ऊंटनीका मूत्र और गधीका मूत्र समानभाग मिश्रित ४ सेर ।)

(४८७९) भूतरावघृतम् (२) (महा)

(वा. भ. । उ. अ. ५; ग. नि. । उन्मादा.)

नतमधुकरञ्जलाक्षापटोलीसमङ्गावचापाटलीहिङ्गुसिद्धार्थसिंहीनिशायुग्मलतारोहिणीबदरकटुफलत्रिकाकाण्डदारुकमिघ्नाजगन्धाभराङ्कोल्लकोशातकीशिग्रुनिम्बाम्बुदेन्द्राह्वयैः।गदशुकतरुपुष्पबीजोग्रयष्ट्यद्रिकर्णीनिकुम्भाग्निबिल्वैः समैः । कल्कितैर्मूत्रवर्गेण सिद्धं घृतम् । विधिविनिहितमाशु सर्वैः क्रमैर्योजितं हन्ति सर्वग्रहोन्मादकुष्ठज्वरांस्तन्महाभूतरावं स्मृतम् ।

कूठ, मुलैठी, करञ्ज, लाख, पटोल, मजीठ, बच, पाढल, हींग, सरसो, कटेली, हल्दी, दारुहल्दी, मालकांगनी, हर्र, बेर, कुटकी, हर्र, बहेड़ा, आमला, थूहर, देवदारु, बायबिड़ंग, तुलसी, गिलोय, अंकोल, तोरी, सहंजनेकी छाल, नीमकी छाल, नागरमोथा, इन्द्रजौ, कूठ, सिरसके फूल और बीज, बछनाग, मुलैठी, कोयल, दन्तीमूल, चीता और बेलकी छालका समान भाग मिश्रित कल्क आधासेर तथा घी ४ सेर और समानभाग

मिश्रित आठों मूत्र १६ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और घृतमात्र शेष रहने पर छान लें।

इसके सेवनसे ग्रहोन्माद, कुष्ठ और ज्वर नष्ट होता है।

(४८८०) भूनिम्बाद्यं घृतम्

(भा. प्र.; नपुंसकामृता.; यो. र. । उपदंशा.; वृ. यो. त. । त. ११७; धन्वन्त.; र. र.; भै. र.; वं. से. । उपदंशा.)

भूनिम्बनिम्बत्रिफलापटोल-
करञ्जजाती[1]खदिरासनानाम् ।
सतोयकल्कैर्घृतमाशुपक्वं
सर्वोपदंशापहरं प्रदिष्टम् ॥

क्काथ—चिरायता, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोल (परवल), करञ्जके बीज, चमेलीके पत्ते (पाठान्तरके अनुसार आमला), खैरसार और असना वृक्षकी छाल समान भाग मिश्रित २ सेर लेकर सबको अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—उपरोक्त औषधियां समान भाग मिश्रित ६ तोले ८ माशे लेकर पीस लें।

विधि—१ सेर घीमें उपरोक्त क्काथ और कल्क मिलाकर पकावें और जब क्काथ जल जाय तो घीको छान लें।

इसे सेवन करानेसे समस्त उपदंश नष्ट हो जाते हैं।

(४८८१) भृङ्गराजघृतम्

(र. र.; ध. व. । स्वरभेदा.; च. द. । स्व.भेदा. १३)

भृङ्गराजामृतावल्लीवासकदशमूलकासमर्दरसैः ।
सर्पिः सपिप्पलीकं सिद्धं स्वरभेदकास
जिन्मधुना ॥

(भृङ्गराजप्रभृतीनां चतुर्गुणः क्काथः पिप्पल्याः पादिकः कल्कः ।)

क्काथ—भंगरा, गिलोय, बासा, दशमूलकी प्रत्येक औषधि और कसौंधी समान भाग मिश्रित ४ सेर लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—२० तोले पीपलको पत्थर पर पीस लें।

विधि—२ सेर घीमें उपरोक्त क्काथ और कल्क मिलाकर पकावें। जब क्काथ जल जाय तो घीको छान लें।

इस घृतमें शहद मिलाकर सेवन करनेसे स्वरभेद और खांसी नष्ट होती है।

इति भकारादिघृतप्रकरणम् ।

---

[1]—धात्रीति पाठान्तरम् ।

अथ भकारादितैलप्रकरणम्।

(४८८२) भद्राद्यं तैलम्

(ग. नि. । तैला.)

भद्रश्रीदारुमरिचद्विहरिद्रात्रिवृद्घनैः ।
गोमूत्रपिष्टैः पलिकैर्विषस्यार्धपलेन तु ॥
ब्राह्मीरसार्कजक्षीरगोशकृद्रससंयुतम् ।
प्रस्थं सर्षपतैलस्य सिद्धमाशु व्यपोहति ॥
पानाद्यैः शीलितं कुष्ठदुष्टनाडीव्रणापचीन् ॥

सफेद चन्दन, देवदारु, काली मिर्च, हल्दी, दारुहल्दी, निसोत और नागरमोथा ५-५ तोले तथा शुद्ध बछनाग २॥ तोले लेकर सबको गोमूत्रके साथ पीसकर कल्क बनावें। तदनन्तर २ सेर सरसोंके तैलमें यह कल्क और ब्राह्मीका रस, आकका दूध और गायके गोबरका स्वरस समान--भाग--मिश्रित ८ सेर मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इसे पान, मर्दनादि द्वारा सेवन करनेसे कुष्ठ और दुष्ट नाड़ी व्रण (नासूर) शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ।

(४८८३) भल्लातकतैलम् (१)

(भै. र.; ध. व.; वृ. मा.; ग. नि. । नाडीव्रणा.; च. द. । नाडीव्रणा. ४५)

भल्लातकार्कमरिचैर्लवणोत्तमेन
सिद्धं विडङ्गरजनीद्वयचित्रकैश्च ।
स्यान्मार्कवस्य च रसेन निहन्ति तैलं
नाडीं कफानिलकृतामपचीव्रणांश्च ॥

भिलावा, आककी छाल, काली मिर्च, सेंधा नमक, बायबिड़ंग, हल्दी, दारुहल्दी और चीतेका चूर्ण समान भाग मिश्रित १० तोले, तैल २ सेर और भंगरेका स्वरस ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब रस जल जाय तो तेलको छानलें ।

यह तैल नाड़ीव्रण (नासूर) और कफवातज अपची (गण्डमाला भेद) और व्रणोंको नष्ट करता है

(४८८४) भल्लातकतैलम् (२)

(यो. चि. म. । अ. ६ तैला.; हा. सं. । स्था. ३ अ. ४२)

भल्लातकं त्र्यूषणमक्षचूर्णं
कुष्ठं च गुञ्जा त्रिफला च तैलम् ।
पञ्चैव लवणानि विपाचितानि
अभ्यङ्गतो हन्ति च कुष्ठदद्रून् ॥

भिलावा, सोंठ, मिर्च, पीपल, बहेड़ा, कूठ, गुञ्जा (चौंटली) हर्र, बहेड़ा, आमला और पांचों नमक समान भाग मिलाकर २० तोले लें और सबको पानीके साथ पत्थर पर पीस लें । तदनन्तर २ सेर तैलमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो तैलको छान लें ।

इसे मर्दन करनेसे कुष्ठ और दादका नाश होता है ।

(४८८५) भल्लातकतैलम् (३)

(च. सं. । चि. अ. १ पाद २)

भल्लातकतैलपात्रं सपयस्कं मधुकेन कल्केनाक्षमात्रेण शतपाकं कुर्यात्; समानं पूर्वेण ॥

भिलावेका तैल ८ सेर, गायका दूध ३२ सेर और मुलैटी का कल्क १। तोला लेकर सबको एकत्र मिलावें और जब दूध जल जाय तो तैलको छान लें। इस तैलको पुन: उपरोक्त विधिसे पकावें। इसी प्रकार १०० बार पाक करें।

इसे यथाविधि सेवन करनेसे जराव्याधिका नाश होता, आयु बढ़ती और रसायनके समस्त गुण प्राप्त होते हैं।

(४८८६) भल्लातकतैलरसायनम्

(वृ. मा. । रसायना.)

तैलं भल्लातकानां तु पिबेन्मासं यथाबलम् ।
सर्वोपद्रवनिर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं दृढः ॥

१ मास तक स्वशक्त्यनुसार भिलावेका तैल पीनेसे समस्त उपद्रव रहित १०० वर्षकी आयु प्राप्त होती है ।

(४८८७) भानुतैलम्

(र. र. । कुष्ठा.; र. का. धे. । अ. ४३ क्षुद्ररोगा.)

अर्कक्षीरं स्नुहीक्षीरं भृङ्गधत्तूरयोर्द्रवम् ।
द्रवं जम्बीरगोमूत्रं प्रत्येकं पलविंशतिम् ॥
तिलतैलं पलांस्त्रिंशत्सर्वमेकत्र पाचयेत् ।
तैलावशेषमुत्तार्य तत्र चूर्णं विनिक्षिपेत् ॥
काञ्चनी धातकीपुष्पं मञ्जिष्ठा च शतावरी ।
गन्धकं पञ्चलवणं द्विनिशा वत्सनाभकम् ॥
प्रतिचार्द्धपलं योज्यं एकीकृत्य विमर्दयेत् ।
घर्म्मस्थः सर्वकुष्ठानि भानुतैलं निहन्त्यलम् ॥

आकका दूध, स्नुही (सेंड-सेहुंड) का दूध, भंगरे और धतूरेका स्वरस, जम्बीरी नीबूका रस तथा गोमूत्र २॥-२॥ सेर और तिलका तैल ३॥। पौने चार सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और जब तैलमात्र शेष रह जाय तो छानकर उसमें गोरोचन, धायके फूल, मजीठ, शतावर, गन्धक, हल्दी, दारुहल्दी, पाँचों नमक और बछनागका २॥-२॥ तोले चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटें।

इसे प्रति दिन मर्दन करके थोड़ी देर धूपमें बैठनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट हो जाते हैं ।

(४८८८) भिष्यन्दनतैलम्

(धन्वन्तरि । भगन्दरा.)

चित्रकार्कौ त्रिवृत्पाठे मलपूहयमारकौ ।
सुधां वचां लाङ्गलिकां हरितालं सुवर्चिकाम् ॥
ज्योतिष्मतीं च संहृत्य तैलं धीरो विपाचयेत् ।
एतद्विष्यन्दनं नाम तैलं दद्याद्भगन्दरे ॥
शोधनं रोपणं चैव सावर्ण्यकरणं परम् ॥

चीतामूल, आककी जड़, निसोत, पाठा, कठूमरकी छाल, कनेरकी छाल, थूहर (सेंड—सेहुंड) का दूध, बच, कलियारी, हरताल, सज्जी और मालकंगनी के कल्कसे तैल पकाकर रक्खें ।

यह तैल भगन्दरके घावको शुद्ध करके भर देता है तथा त्वचाके रंगको ठीक करता है ।

(कल्क २० तोले । तेल २ सेर । पानी ८ सेर । मिलाकर पकावें ।)

(४८८९) भूधात्र्यादितैलम्

(वै. म. र. । पटल १६)

भूधात्रीमूलसिद्धं पयसि तिलभवं लेपनेनाशु हन्या-
द्दुष्टं स्रावाढ्यमुग्रं व्रणमणुसुषिरं दीर्घकालानुषक्तम् ॥

भुईआमलेकी जड़का कल्क २० तोले, दूध ८ सेर और तिलका तेल २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इसे लगानेसे दुष्ट, स्रावयुक्त और छोटे छिद्र वाले पुराने घाव नष्ट हो जाते हैं ।

(४८९०) भृङ्गराजतैलम् (१)

(व. से. । कासा.)

भृङ्गराजरसप्रस्थं भृङ्गबेररसं तथा ।
कटुतैलस्य च प्रस्थं गोमूत्रप्रस्थसंयुतम् ॥
दशमूलकुलित्थाश्च शुष्कमूलकशिग्रुकम् ।
भार्ङ्गी च कुडवांशानि क्राथयेत्सलिलाढके ॥
पादशेषेण तेनापि कल्कं दत्वा विपाचयेत् ।
देवदारुवचाकुष्ठं शताह्वालवणत्रयम् ॥
हिङ्गुतुम्बुरुणी व्योषं यवानी जीरकद्वयम् ।
चित्रकं पिप्पलीमूलं वरो भृङ्गरजस्तथा ॥
कट्फलं चित्रकश्चैव समभागानि कारयेत् ।
सम्यक् सिद्धञ्च विज्ञाय पाने नस्ये प्रयोजयेत्॥
वातश्लेष्मात्मके कासे प्रतिश्याये च पीनसे ।
श्वासरोगेषु सर्वेषु कफवातात्मकेषु च ॥
तैलं त्विदं भृङ्गराजं कफव्याधिविनाशनम्॥

क्वाथ—दशमूल (समान भाग-मिलित), कुलथी, सूखी मूली, सहंजनेकी छाल और भरंगी २०-२० तोले लेकर सबको अधकुटा करके ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर पानी शेष रहनेपर छान लें ।

अन्य द्रव पदार्थ—भंगरेका रस २ सेर, अदरकका रस २ सेर और गोमूत्र २ सेर ।

कल्क—देवदारु, बच, कूठ, सोया, सेंधा नमक, काला नमक, विडनमक, हींग, तुम्बरु (नेपाली धनिया), सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, सफेद जीरा, काला जीरा, चीता, पीपलामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, भंगरा, कायफल और चीतामूल समान भाग-मिश्रित २० तोले लेकर कल्क बनावें ।

विधि—२ सेर सरसोंके तैलमें उपरोक्त क्वाथ, समस्त द्रव पदार्थ और कल्क मिलाकर पकावें । जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें ।

इसे पान और नस्य द्वारा सेवन करानेसे वात कफज खांसी, प्रतिश्याय, पीनस, श्वास तथा अन्य कफज रोग नष्ट होते हैं ।

(४८९१) भृङ्गराजतलम् (२)

(हा. सं । स्था. ३ अ. २३)

भृङ्गराजरसं चैव कटुतुम्बीरसं तथा ।
सौवीकरसं चैव क्काथं वै दशमूलकम् ॥
माषकुल्माषयूषं च तथाजं दधि मिश्रयेत् ।
समांशकानि सर्वाणि तैलं चार्धं प्रयोजयेत् ॥
मृद्वग्निना पाचनीयं सिद्धं चैवावतारयेत् ।
अभ्यङ्गे च प्रयोक्तव्यं न पाने बस्तिकर्मणि ॥
पूरणं कर्णरोगेषु शिरःशूले च दारुणे ।
अर्धशीर्षविकारेषु भ्रुवः शङ्खाक्षिशूलके ॥

तस्य योगेन मनुजः सुखमापद्यते द्रुतम्।
हन्ति कुष्ठं च पामां त्वग्रोगांश्चाभ्यञ्जनेन तु॥
शीघ्रं विनाशमायान्ति हन्त्यपस्मारमुत्कटम्॥

भंगरेका रस २ सेर, कड़वी तूंबीका रस २ सेर, वस्त्रसे छनी हुई स्वच्छ सौवीरक काञ्जी २ सेर, दशमूलका क्वाथ २ सेर, उर्दका क्वाथ २ सेर, कुलथीका क्वाथ २ सेर और बकरीका दही २ सेर तथा तेल १ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें और तैलमात्र शेष रहनेपर छान लें।

इसकी मालिश करनी चाहिये तथा इसे कानमें डालना चाहिये परन्तु पिलाना न चाहिये और न ही बस्ती कर्ममें प्रयुक्त करना चाहिये।

यह तैल कर्णरोग, भयङ्कर शिरशूल, आधा सीसी, भौंका दर्द और शंख प्रदेश (कनपटी) तथा आंखोंकी पीड़ा, कुष्ठ, पामा, त्वग्रोग और भयङ्कर अपस्मारको नष्ट करता है।

(४८९२) **भृङ्गराजतैलम्** (३)

(ध. व. । क्षुद्ररोगा.)

भृङ्गराजं लोहचूर्णं त्रिफला बीजपूरकम्।
नीला च करवीरं च गुडमेतैः समैः शृतम्॥
पलितानि च कृष्णानि कुर्याल्लेपान्महौषधम्॥

भंगरा, लोहचूर्ण, हर्र, बहेड़ा, आमला, बिजौरेकी छाल, नील, करवीर की छाल और गुड़ समान भाग–मिश्रित २० तोले, तिलका तेल २ सेर और पानी ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे लगानेसे सफेद बाल काले हो जाते हैं।

(४८९३) **भृङ्गराजतैलम्** (४)

(रा. मा. । शिरोरोगा.)

भृङ्गारकपक्वतैलं द्विपदशनामलककृतमषीमिश्रम्।
खलतेरपि चिकुरचयं जनयत्यभ्यङ्गयोगेन॥

भंगरेके ४ सेर स्वरसमें १ सेर तेल और ५ तोले भंगरेका कल्क मिलाकर पकावें। जब स्वरस जल जाय तो तेलको छान लें। इस तेलमें हाथी दांत और आमलेकी भस्म मिलाकर लगानेसे गंज के स्थानमें भी घने बाल निकल आते हैं।

(४८९४) **भृङ्गराजतैलम्** (५)

(वा. भ. । उ. अ. २४)

क्षीरात्सहचराद्भृङ्गरजसः सौरसाद्रसात्।
प्रस्थैस्तैलस्य कुडवसिद्धो यष्टीपलान्वितः॥
नस्यं शैलोद्भवे भाण्डे शृङ्गे मेषस्य वा स्थितः॥

दूध, पियाबांसेका क्वाथ, भंगरेका रस और धनियेका क्वाथ २–२ सेर तथा तेल आधा सेर और मुलैठीका कल्क ५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तैलमात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर पत्थरके पात्र या मेढे के सींगमें भरकर रख दें।

इसकी नस्य लेनेसे सफेद बाल काले हो जाते हैं।

(४८९५) **भृङ्गराजतैलम्** (६)

(व. से. । श्वासा.)

तैलं दशगुणे सिद्धं भृङ्गराजरसे शुभे।
पीयमानं यथान्यायं श्वासकासौ व्यपोहति॥

१ सेर तैल और १० सेर भंगरेके रसको एकत्र मिलाकर पकावें । जब रस जल जाय तो तैलको छान लें ।

इसे पीनेसे श्वास और खांसी नष्ट हो जाते हैं ।

(४८९६) **भृङ्गराजतैलम्** (७)

(शा. ध. । खं. २ अ. ९; यो. र.; वृ. नि. र. । क्षुद्ररोगा.)

भृङ्गराजरसेनैव लोहकिट्टम् फलत्रिकम् ।
सारिवां च पचेत्कल्कैस्तैलं दारुणनाशनम् ॥
अकालपलितं कण्डूमिन्द्रलुप्तं च नाशयेत् ॥

भंगरेका स्वरस ८ सेर, तिलका तेल २ सेर और मण्डूर, हर्र, बहेड़ा, आमला तथा सारिवाका समानभाग-मिश्रित कल्क १० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तेलमात्र शेष रह जाय तो उसे छान लें।

यह तैल दारुण, अकाल पलित (बालोंका सफेद हो जाना); कण्डू (खुजली) और इन्द्र लुप्तको नष्ट करता है ।

(४८९७) **भृङ्गराजतैलम्** (८)

(वृ. मा. । नेत्ररोगा.; र. र. । नेत्र.; व. से.; च. द. । नेत्र.; भै. र. । नेत्ररोगा.; ध. व. । नेत्र.)

भृङ्गराजरसप्रस्थे यष्टीमधुपलेन च ।
तैलस्य कुडवं पक्कं सद्यो दृष्टिं प्रसादयेत् ॥
नस्याद्वलीपलितघ्नं मासेनतन्न संशयः ॥

भंगरेका रस २ सेर, मुलैठीका कल्क ५ तोले और तेल आध सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब रस जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल नेत्रोंको शीघ्र ही स्वच्छ कर देता है और इसकी नस्य लेनेसे १ मासमें बलिपलितका अवश्य नाश हो जाता है ।

(४८९८) **भृङ्गराजतैलम्** (९)

(यो. र.; वृ. नि. र.; व. से. । नेत्ररोगा.; ग. नि. । तैला.)

भृङ्गरसस्य प्रस्थं तैलात्कुडवं पलं च मधुकस्य।
क्षीरप्रस्थविपक्कं गतमपि चक्षुर्निवर्तयति ॥

भंगरेका रस २ सेर, तेल आधासेर और मुलैठीका कल्क ५ तोले तथा दूध २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें।

इस तेल से नष्ट हुई चक्षु भी ठीक हो जाती है ।

(इसकी नस्य लेनी चाहिये ।)

(४८९९) **भृङ्गराजतैलम्** (१०) (बृहद्)

(भै. र. । क्षुद्ररोगा.; ग. नि. । तैला.; वृ. मा. । क्षुद्ररोगा.)

आनूपदेशजं पुष्टं गृहीत्वा मार्कवं शुभम् ।
प्रक्षाल्य जर्जरीकृत्य रसं तस्य प्रपीडयेत् ॥
चतुर्गुणेन तेनैव तैलप्रस्थं विपाचयेत् ।
क्षीरपिष्टैरिमैर्द्रव्यैः संयोज्य मतिमान् भिषक् ॥
मञ्जिष्ठा पद्मकं रोध्रं चन्दनं गैरिकं बलाम् ।
रजन्यौ केसरं दारु प्रियङ्गुमधुयष्टिके ॥
प्रपौण्डरीकं सौम्यं च पलिकान्यत्र दापयेत् ।
कुष्ठं तगरमाषांश्च सिद्धार्थांश्चागुरुं तथा ॥
मुस्तकं चाथ शैलेयं कर्चूरं परिकल्कितम् ।
सम्यक्पक्कं ततो ज्ञात्वा शुभे भाण्डे निधापयेत् ॥

केशशाते शिरोदुःखे मन्यास्तम्भे हनुग्रहे ।
अकालपलिते चैव दारुणे चैव दारुणे ॥
दन्तकर्णाक्षिरोगेषु नस्यमेतत्प्रदापयेत् ।
नस्यप्रयोगान्मासेन क्षीरान्नप्रतिभोजिनः ॥
सुकुञ्चिताग्रान् केशांश्च स्निग्धान्कुर्याद्दृढंस्तथा।
खालित्ये सेन्द्रलुप्ते च तैलमेतद्यथाऽमृतम् ॥

जल प्रायः स्थानमें (नदी आदिके किनारे) उत्पन्न हुवा उत्तम पुष्ट भंगरा लाकर उसे धोकर कूटकर ८ सेर रस निकालें। तदनन्तर २ सेर तैलमें यह रस और निम्न लिखित कल्क मिलाकर पकावें। जब स्वरस जल जाय तो तैलको छानलें।

कल्क—मजीठ, पद्माक, लोध, सफेद चन्दन, गेरु, खरैंटी, हल्दी, दारुहल्दा, केसर, देवदारु, फूलप्रियङ्गु, मुलैठी, प्रपौण्डरीक (पुण्डरिया), कमल, कूठ, तगर, उर्द, सरसों, अगर, नागरमोथा, छार-छरीला और कचूर ५-५ तोले लेकर सबको दूधमें पीस लें।

इसकी नस्य लेनेसे बालोंका गिरना, शिरशूल, मन्यास्तम्भ, हनुग्रह, अकाल पलित, भयंकर दारुण नामक शिरोरोग, दन्तरोग, कर्णरोग और नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

यदि १ मास तक इसकी नस्य ली जाय और केवल दूधपर रहा जाय तो खालित्य और इन्द्रलुप्त नष्ट होकर घने, स्निग्ध और घुंघराले बाल निकल आते हैं।

नोट—भै. र. और वृ. मा. में देवदारु तथा कूठ से लेकर कचूर तककी औषधियां नहीं लिखीं।

(४९००) भृङ्गराजतैलम् (११) (स्वल्प)

(भै. र.; वृ. मा. । क्षुद्ररो.; ग. नि. । तैला.; वृ. यो. त. । त. १२७; र. र. । क्षुद्र.; व. से.; च. द. । क्षुद्ररो.)

भृङ्गरजस्त्रिफलोत्पलशारि-
लोहपुरीषसमन्वितकारि ।
तैलमिदं पच दारुणहारि
कुञ्चितकेशघनस्थिरकारि ॥

भंगरा, हर्र, बहेड़ा, आमला, अनन्तमूल, मण्डूर और आमकी गुठलीका कल्क २० तोले, तेल २ सेर तथा पानी ८ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे शिरमें लगाने से दारुण नामक शिरो रोग नष्ट होता और बाल घुंघराले, घने और मजबूत हो जाते हैं।

(४९०१) भृङ्गादितैलम्

(वृ. नि. र. । बालरोगा.)

स्वरसे भृङ्गवृक्षाणां तथैव हयगन्धिका ।
तैलं वचां च संयोज्य पचेदभ्यञ्जने शिशोः ॥

भंगरेका स्वरस ८ सेर, तिलका तेल २ सेर तथा असगन्ध और बचका कल्क ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब रस जल जाय तो तेल को छान लें।

इसे बालकके शरीरपर मलने से मुखमण्डिका ग्रहजनित विकार नष्ट होते हैं।

इति भकारादितैलप्रकरणम् ।

अथ भकाराद्यासवप्रकरणम्।

(४९०२) भृङ्गराजासवः

(ग. नि. । आसवा.)

भृङ्गराजरसद्रोणं गुडस्य द्वितुलां तथा।
हरीतकीनां प्रस्थार्धं स्निग्धे भाण्डे निवेशयेत्॥
पक्षादूर्ध्वं पिबेदेनं मात्रया च यथाबलम्।
जाते ह्यस्मिन्पुनर्दत्वा पिप्पल्याश्च पलद्वयम्॥
जातीफलं लवङ्गानि त्वगेलापत्रकेसरम्।
धातुक्षयं जयेत्पीतः कासं पञ्चविधं तथा॥
कृशानां च महापुष्टिं कुरुते च महाबलम्।
कामवृद्धिं करोत्येव वन्ध्यानां पुत्रदो भवेत्॥

भंगरेका स्वरस ३२ सेर लेकर उसमें १२॥ सेर गुड़ और आधसेर हर्रका चूर्ण मिलाकर चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और १५ दिन पश्चात् छानकर उसमें १०-१० तोले पीपल, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसरका चूर्ण मिलाकर पुनः मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और १५ दिन बाद निकालकर छानकर बोतलोमें भरकर रक्खें।

इसके सेवनसे धातुक्षय और पांच प्रकारकी खांसी नष्ट होती है। तथा यह कृश मनुष्यों को अत्यन्त पुष्ट कर देता है। अत्यन्त बलकारक और कामोद्दीपक है। इसके सेवनसे वंन्ध्या स्त्रीको पुत्रकी प्राप्ति होती है।

इति भकाराद्यासवप्रकरणम्।

अथ भकारादिलेपप्रकरणम्।

(४९०३) भद्रादिलेपः

(यो. त. । त. ७३)

भद्रं श्रियं पुण्डरीकं मधुकं नीलमुत्पलम्।
पद्माख्यं वेतसं मूर्वां लामज्जकमथापि वा॥
दार्वीहरिद्रामञ्जिष्ठाशारिवोशीरपद्मकम्।
एतैरालेपनं कुर्याच्छल्लकस्य प्रशान्तये॥

सफेद चन्दन, सफेद कमल, मुलैठी, नीलकमल, पद्माक, बेत, मूर्वा, लामज्जक (खस भेद), दारुहल्दी, मजीठ, सारिवा, खस और लालकमल

समान भाग लेकर सबको पानीमें पीस कर लेप करनेसे शंखक (कनपटीका तीव्र शूल) नष्ट होता है ।

(४९०४) **भल्लातकशोथान्तकलेपः** (१)

(वृ. मा. । शोथा.; व. से. । शोथा.)

भल्लातः श्वयथुं हन्ति ध्रुवमाश्वत्थधावनात् ।
महिषीक्षीरपिष्टैर्वा नवनीतसमन्वितैः ॥
भल्लातककृतः शोथस्तिलैर्लिप्तः प्रशाम्यति ॥

भिलावे के स्पर्श से उत्पन्न हुई सूजन पीपल वृक्षकी छालके क्वाथसे धोनेसे या भैंसके दूधमें पिसे हुवे तिलोंको नवनीत (नौनी घी) में मिलाकर लेप करनेसे नष्ट हो जाती है ।

(४९०५) **भल्लातकशोथान्तकलेपः** (२)

(व. से. । शोथा.)

भल्लातक्या जयेच्छोथं सतिलाकृष्णमृत्तिका ।
माहिषो नवनीतं वा लेपाद्दग्धं तिलान्वितम् ॥

तिल और कालीमिट्टीका अथवा जले हुवे तिलोंको भैंसके नवनीत (नैनी घी) में मिलाकर उसका लेप करनेसे भिलावेके स्पर्शसे उत्पन्न हुई सूजन नष्ट होती है ।

(४९०६) **भल्लातकादिलेपः** (१)

(रा. मा. । कर्णरोगा.; धन्व. । वाजीकरणा.)

भल्लातकं बालकमम्बुजिन्याः
पत्राणि कृष्णं लवणं च तुल्यम् ।
दग्ध्वा पुटान्तः स्वरसं निदध्या-
त्पकस्य तस्मिन्बृहतीफलस्य ॥
लिङ्गं पुरीषैर्महिषस्य पश्चा-
दुद्वर्तितं तेन विलिप्तमात्रम् ।
पुंसो भवत्युन्मदवाजिमेढ्र-
संकाशमातालमभिप्रमाणम् ॥

भिलावा, सुगन्धबाला, कमलिनीके पत्ते और कालानमक समान भाग लेकर सबको मिट्टीके बरतनमें बन्द करके भस्म करें ।

लिङ्गको भैंसके गोबरसे अच्छी तरह रगड़नेके बाद कटेलीके पके हुवे फलोंके रसमें मिलाकर उपरोक्त भस्मका लेप करनेसे लिंग अत्यन्त पुष्ट और वृहद् हो जाता हे ।

(४९०७) **भल्लातकादिलेपः** (२)

(रा. मा. । शिरोरोगा.)

भल्लातकैर्वा बृहतीफलैर्वा
सुश्लक्ष्णपिष्टै रुबुतैलयुक्तैः ।
सम्मिश्रितैर्वै मधुना प्रलिप्त-
मल्पैर्दिनैः शाम्यति शक्रलुप्तम् ॥

भिलावे अथवा कटेलीके फलको अत्यन्त महीन पीसकर अरण्डीके तेलमें मिला लें । इसमें शहद मिलाकर लेप करनेसे गंज (इन्द्रलुप्त) थोड़े दिनोंमें ही नष्ट हो जाता है ।

(४९०८) **भल्लातकादिलेपः** (३)

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

भल्लातकगजास्थीनि दन्तीनिम्बकपोतविट् ।
गुडसौराष्ट्र्यमृतजैर्लेपः श्लेष्मार्शसाञ्जये ॥

भिलावा, हाथीकी हड्डी, दन्ती, नीमकी छाल, कबूतरकी विष्ठा (बींट), गुड़, सौराष्ट्री (फटकी)

और बछनाग विष समान भाग लेकर सबको अत्यन्त महीन पीसकर लेप करनेसे कफज बवासीर नष्ट होती है ।

(४९०९) **भल्लातकादिलेपः** (४)

(वै. जी. । बिलास ४; शा. ध. । खं. ३ अ. ११; वृ. नि. र.; यो. र. । गण्डमाला.)

भल्लातकासीसहुताशदन्ती
मूलैर्गुडस्नुग्रविदुग्धदिग्धैः ।
लेपोचितैर्गच्छति गण्डमाला
समीरवेगादिव मेघमाला ॥

भिलावा, कसीस, चीता, दन्तीमूल और गुड़ समान भाग लेकर सबको अत्यन्त महीन पीस कर सेहुंड (सेंड—थूहर) और आकके दूधमें मिलाकर लेप बना लें ।

इसे लगानेसे गण्डमाला इस प्रकार नष्ट हो जाती है जैसे पवनके वेगसे मेघमाला ।

(४९१०) **भल्लातकादिलेपः** (५)

(ग. नि.; वृ. मा. । कुष्ठा.; वा. भ. । चि. अ. २०)

भल्लातकद्वीपिसुधार्कमूलं
गुञ्जाफलं त्र्यूषणशङ्खचूर्णम् ।
कुष्ठं सतुत्थं लवणानि पञ्च
क्षारद्वयं लाङ्गलिकां च पक्त्वा ॥
स्नुगर्कदुग्धे घनमायसस्थं
शलाकया तद्विदधीत लेपम् ।
कुष्ठे किलासे तिलकालकेषु
मषेषु दुर्नामसु चर्मकीले ॥

भिलावा, चीतामूल, थूहर (सेंड—सेहुंड)की जड़, आककी जड़, चैांटली (गुञ्जा—रत्ती), सोंठ, मिर्च, पीपल, शंख, कूठ, नीलाथोथा, पांचों नमक, सज्जीखार, जवाखार और कलियारी । इन सबके अत्यन्त महीन चूर्णको लोहपात्रमें सेंड और आकके चार गुने दूधमें पकाकर गाढ़ा लेप बना लें ।

इसे किलास कुष्ठ, तिल, कालक, मस्से, अर्शके मस्से और चर्मकील पर सलाईसे लगानेसे ये सब नष्ट हो जाते हैं ।

नोट—इसे सावधानी पूर्वक लगाना चाहिये । अन्य स्थानमें लगनेसे घाव हो जायगा ।

(४९११) **भार्ग्यादिलेपः** (१)

(व. से. । उपदंश.)

भार्ङ्गीसम्भवशिखरिजमूलं
भद्रश्रियं च सम्पिष्टम् ।
मनःशिलाश्च मधुना शमयत्युपदंशमचिरेण ॥

भरंगीकी जड़, चिरचिटे (अपामार्ग) की जड़, चन्दन और मनसिलके समान भाग—मिश्रित महीन चूर्णको शहदमें मिलाकर लेप करनेसे उपदंश (आतशक) के घावोंको शीघ्र ही आराम हो जाता है ।

(४९१२) **भार्ग्यादिलेपः** (२)

(व. से. । अन्त्रवृद्धिरो.; रा. मा. । वृद्ध्युपदंशा. १६)

तथाम्बुना तु सम्पिष्टं मूलं भार्ङ्ग्याः प्रलेपनात् ।
कुरण्डं गण्डमालाश्च हन्त्यवश्यं न संशयः ॥

भरंगीकी जड़को पानीके साथ अत्यन्त महीन पीसकर लेप करनेसे अण्डवृद्धि और गण्डमाला अवश्य नष्ट हो जाती हैं ।

(४९१३) **भूम्यामलक्याद्यो लेपः**

(वै. म. र. । पटल १६)

तामलकी नेत्ररुजं पिष्टा स्तन्येन ताम्राक्ता ।

सैवाक्षिरोगमभिनवमपनयति विलेपनान्मूर्ध्नि ॥

भुईआमलेको स्त्रीके दूधके साथ ताम्रपात्रमें घोटकर शिरपर लेप करनेसे नवीन नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है ।

(४९१४) भूस्तृणादियोनिलेपः

(ग. नि. । वन्ध्या. ५)

भूस्तृणस्य तु मूलानि वचा मुञ्जातकं तथा ।
समभागानि मधुना योनिलेपो निशामुखे ॥
शोभनं जनयेत्पुत्रं बलवीर्यसमन्वितम् ॥

गन्धतृणकी जड़, बच और मूंज समान भाग लेकर सबको अत्यन्त महीन पीसकर शहदमें मिला कर रातको योनिमें लेप करनेसे बलवीर्यवान् सुन्दर पुत्र उत्पन्न होता है ।

(४९१५) भृङ्गराजादिलेपः (१)

(भा. प्र. । म. खं. क्षुद्ररोगा.)

भृङ्गराजकमूलस्य रजन्या सहितस्य च ।
चूर्णन्तु सहसा लेपाद्वाराहद्विजनाशनम् ॥

भंगरेकी जड़ और हल्दी के चूर्णका लेप करनेसे वाराहदंष्ट्र (गुदभ्रंश रोगका एक भेद) नष्ट होता है ।

(४९१६) भृङ्गराजादिलेपः (२)

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

भृङ्गराजहरीतक्योर्मूलमन्तः पुटं दहेत् ।
आरनालेन तल्लेपाच्छ्वित्रकुष्ठविनाशनम् ॥

भंगरेकी जड़ और हर्रकी जड़ समान भाग लेकर दोनोंको बरतनमें बन्द करके जलावें ।

इस भस्मको काञ्जीमें पीसकर लेप करनेसे श्वेत कुष्ठ नष्ट होता है ।

(४९१७) भृङ्गराजादिलेपः (३)

(र. र. । उपदंशा.)

मार्कवस्त्रिफलादन्तीताम्रचूर्णमयोरजः ।
उपदंशं निहन्त्येतद्वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

भंगरा, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, ताम्र-चूर्ण और लोहचूर्ण समान भाग लेकर सबको अत्यन्त महीन पीस लें ।

इसका लेप करनेसे उपदंश अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है ।

(४९१८) भृङ्गराजादिलेपः (४)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३१)

भृङ्गराजरसं गृह्य तथा च सुरसादलम् ।
निष्पावकपटोलानां पत्राणि काञ्जिकेन तु ॥
पिष्ट्वा वातपीडिकानां लेपनं मेहनस्य च ॥

तुलसीके पत्ते, चैांटलीके पत्ते और पटोलके पत्ते १-१ भाग लेकर सबका महीन चूर्ण बनाकर उसमें १ भाग भंगरेका रस मिलावें ।

इसे कांजीमें पीसकर लेप करनेसे वातज प्रमेहपिडिका नष्ट होती हैं ।

(४९१९) भृङ्गविषनाशकलेपः

(यो. त. । त. ७८)

नागरं गृहकपोतपुरीषं
बीजपूरकरसो हरितालम् ।
सैन्धवं च विनिहन्ति विलेपा
दाशु भृङ्गजनितं विषमेतत् ॥

सोंठ, पालतु कबूतरकी बीट, हरताल और सेंधा नमक समान भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें ।

इसे बिजौर नीबूके रसमें पीसकर लेप करनेसे भैंरेका विष तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(४९२०) **भृङ्गादिलेपः**

(वै. म. र. । पटल १६)

जित्वेन्द्रलुप्तं रोमाणि जनयेद्भृङ्गजो रसः ।
चिञ्चामलकयोश्चापि काललोहसमन्वितः ॥

भंगरेके अथवा इमली और आमले के रसमें कृष्ण लोहके महीन चूर्णको पीसकर लेप करनेसे इन्द्रलुप्त (गंज) का नाश होकर बाल निकल आते हैं ।

इति भकारादिलेपप्रकरणम् ।

अथ भकारादिधूपप्रकरणम् ।

(४९२१) **भुजङ्गादिनाशकधूपः**

(व. से. । कृमि.)

लाक्षा भल्लातकश्च श्रीवासः श्वेताऽपराजिता ।
अर्जुनस्य फलं पुष्पं विडङ्गं सर्जगुग्गुलुः ॥
एभिः कृतेन धूपेन शाम्यन्ति नियतं गृहे ।
भुजङ्गमूषकादंशाघुणामशकमत्कुणाः ॥

लाख, भिलावा, तारपीनका तेल, सफेद कोयल, अर्जुनके फल और पुष्प, बायबिडंग, राल और गूगल समान भाग लेकर गूगलको तारपीनके तेलमें घोट लें और अन्य ओषधियोंका चूर्ण करके उसमें मिला लें ।

घरमें इसकी धूप देनेसे सांप, चूहे, डांस घुण, मशक और खटमल दूर हो जाते हैं ।

इति भकारादिधूपप्रकरणम् ।

अथ भकाराद्यञ्जनप्रकरणम् ।

(४९२२) **भद्रमुस्तायोगः**

(ग. नि. । नेत्ररोगा.)

छागमूत्रेण सङ्घृष्टभद्रमुस्ताञ्जनेन हि ।
चिरकालोद्भवं पुष्पं रक्तत्वं चापि नश्यति ॥

बकरीके मूत्रमें नागरमोथेको घिसकर आंखमें आंजनेसे पुरानी फूली और आंखोंकी लाली नष्ट हो जाती है ।

(४९२३) **भानुमतीवर्तिः (१) (लघु)**

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

बीजं करञ्जवृक्षस्य निस्तुषं द्विदलीकृतम् ।
चूर्णितं भावयेत्सम्यङ्मुख्याञ्जनदशांशकम् ॥
जातीरसे त्रिसप्ताहं पिष्ट्वा तेनैव कल्पिता ।
वर्तिर्भानुमती नाम छायायां परिशोषिता ॥
तोयघृष्टाऽञ्जनाद्धन्ति तिमिरं भास्करो यथा ।
सुखस्वभावबोधं च कुरुते शीलिता ध्रुवम् ॥

करञ्जके बीजोंका छिलका अलग कर दें और फिर उनका बारीक चूर्ण बना लें। तदनन्तर उसमें उससे दस गुना काला सुरमा मिलाकर सबको २१ दिन तक चमेली के रसमें घोटकर वर्तियां बना लें और उन्हें छायामें सुखाकर रक्खें।

इन्हें पानीमें घिसकर आंखमें आंजनेसे तिमिर नष्ट होता है।

(४९२४) **भानुमतीवर्तिः (२) (वृहत्)**

(ग. नि. । नेत्ररोगा.; र. का. धे. । अ. ५३)

शुक्रोपला जलनिधिप्रभवश्च फेनः
शैलेयचन्दनयुता खलु शङ्खनाभिः ।
भागानिमान् समरिचान् समनःशिलांशान्
कुर्याद्रसाञ्जनचतुर्गुणसंप्रयुक्तान् ॥
नक्तान्ध्यपिल्लतिमिरक्षतकाचकण्डू-
शुक्लाक्षिपाककफदोषकृतांश्च रोगान् ।
भानुर्यथैव तिमिराण्यपहन्ति नूनं
मध्वायुता जयति भानुमतीह वर्तिः ॥

मिश्री, समुद्रफेन, भूरिछरीला, लाल चन्दन, शंखनाभि, कालीमिर्च और मनसिल १-१ भाग तथा रसौत ४ भाग लेकर सबको अत्यन्त बारीक खरल करके बत्तियां बना कर छाया में सुखा लें। इन्हें आंखमें लगानेसे नक्तान्ध्य (रतौंधा), पिल्ल, तिमिर, क्षत, काच, कण्डू, फूला, नेत्रपाक और अन्य कफज रोग नष्ट होते हैं।

(४९२५) **भास्करचूर्णम्**

(वा. भ. । उ. अ. १३)

निर्दग्धं बादराङ्गारैस्तुत्थं नेत्थं निषेचितम् ।
क्रमादजापयः सर्पिः क्षौद्रे तस्मात्पलद्वयम् ॥
कार्षिकैस्ताप्यमरिचस्रोतोजकटुकानतैः ।
पटुरोध्रशिलापथ्याकणैलाञ्जनफेनिकैः ॥
युक्तं पलेन यष्ट्याश्च मूषान्तर्ध्मातचूर्णितम् ।
हन्ति काचार्मनक्तान्ध्यरक्तराजीः सुशीलितः ॥
चूर्णो विशेषात्तिमिरं भास्करो भास्करो यथा ॥

नीले थोथेको बेरीके कोयलोंकी अग्निपर तपा तपाकर क्रमशः बकरीके दूध, घी और शहद में बुझावें। तदनन्तर यह नीलाथोथा १० तोले, स्वर्णमाक्षिक-भस्म तथा मिरच, स्रोतोञ्जन (सुरमा), कुटकी, तगर, सेंधानमक, लोध, कपूर, हर्र, पीपल, इलायची, रसौत और समुद्रफेनका चूर्ण १।-१। तोला तथा मुलैठीका चूर्ण ५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर शरावसम्पुटमें बन्दकरके भस्म करें और फिर अत्यन्त बारीक पीसकर सुरक्षित रक्खें।

इसे आंखोंमें लगानेसे काच, अर्म, नक्तान्ध्य (रतौंधा) आंखोंकी लाल रेखाएं और विशेषतः तिमिर नष्ट होता है।

(४९२६) **भास्करवर्तिः**

(व. से. । नेत्ररोगा.; र. का. धे. । अ. ५३)

त्रिंशद्भागन्तु नागस्य गन्धपाषाणपञ्चकम् ।
शुल्वतालकयोर्द्वौ द्वौ वङ्गस्यैकोऽञ्जनत्रयम् ॥
अन्धमूषागतं ध्मातं पक्वं विमलमञ्जनम् ।
तिमिरान्तकृल्लोके द्वितीयो भास्करो यथा ॥

शुद्ध सीसा ३० भाग, शुद्ध गन्धक ५ भाग, शुद्ध ताम्र और हरताल २-२ भाग, शुद्ध बंग १ भाग और सुरमा ३ भाग लेकर धातुओंको रेतीसे रितवाकर बारीक चूर्ण करा लें और पीसने योग्य ओषधियोंको पिसवा लें । तत्पश्चात् सबको शराव सम्पुटमें बन्द करके भस्म करें और फिर बारीक पीसकर अञ्जन बना लें ।

इसे आंखमें लगानेसे तिमिर नष्ट होता है ।

(४९२७) **भास्कराञ्जनम्**

(वै. म. र. । पटल १६)

ताम्रपात्रघृष्टमम्लकाञ्जिकाच्छवारिणा ॥
परिणतनक्तमालतरुवल्कजः कुडवं
कुडवमथोषणस्य लिकुचस्य फलस्वरसम् ।
द्विकुडवमाढकेन पयसा च गवां सहितं
दिवसमुखे विशुद्धकलशेऽथ सुसंस्क्रियताम् ॥
अन्येद्युर्बहुशः खजेन मथितात्तस्माद्गृहीत्वा रसं
प्रक्षाल्य प्रबलेन कंसयुगलेनाकार्ष्ण्यभावं शनैः ।
सङ्घृष्येन्दुविमिश्रितं तिमिरजिद् स्यादञ्जितं स्वल्पशः
सायं सीसशलाकया प्रतिदिनं नाम्ना त्विदं भास्करम् ॥

करञ्जकी छालका चूर्ण २० तोले लेकर उसे ताम्रपात्रमें कांजीके स्वच्छ जलसे अच्छी तरह खरल करें और फिर एक स्वच्छ कलशमें यह चूर्ण तथा २० तोले कालीमिर्चका चूर्ण और १ सेर लकुचके फलोंका रस और ८ सेर गायका दूध डालकर उसका मुख बन्द करके रखदें । इसे पहिले दिन प्रातःकाल से दूसरे दिन प्रातःकाल तक इसी प्रकार रहने दें और फिर उसे मथनीसे खूब अच्छी तरह मथकर वस्त्रसे छानकर स्वच्छ रस निकालें ।

इस रसमें थोड़ासा कपूर डालकर उसे कांसी और कांस्यमाक्षिकके टुकड़ोंसे इतना घिसें कि जिससे समस्त रस काला हो जाय ।

इसे सायङ्कालके समय सीसेकी सलाईसे आंखोंमें लगानेसे तिमिर नष्ट हो जाता है ।

(४९२८) **भीमसेनीकर्पूरः**

(यो. र. । नेत्ररोगा.)

सुधांशोर्वसुभागाः स्युरेलाभागद्वयं तथा ।
चन्दनं चाब्धिफेनं च बीजं कतकसम्भवम् ॥
रसाञ्जनं भद्रमुस्तं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
सर्वं दुग्धे विमर्द्याथ पिण्डे गोधूमपिष्टवत् ॥
कृत्वा पात्रे निधायाथ क्षिपेत्पात्रं तथोपरि ।
अधः प्रज्वालयेद्दीपं वर्त्याऽङ्गुष्ठसमानया ॥
एवं प्रहरपर्यन्तं वह्निं कुर्याच्च युक्तितः ।
पात्रस्योपरिभागं तु शीतलं रक्षयेद्बुधः ॥
सदाऽर्द्रचैलखण्डेन शीतलेन च वारिणा ।
स्वाङ्गशीतं ततो ज्ञात्वा पश्चात्कर्पूरमाहरेत् ॥
स्फटिकाकारमत्यच्छं श्वेतहीरमणिप्रभम् ।
भीमसेनाख्यकर्पूरमौषधेषु प्रयोजयेत् ॥

कपूर ८ भाग, छोटी इलायचीके दाने २ भाग, सफेद चन्दन, समन्दर झाग, निर्मलीके फल, रसौत और नागरमोथेका चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको गायके दूधमें घोटकर उसकी टिकिया बना लें और उसे कांसीके पात्रमें रखकर कांसीकी कटोरीसे ढक दें तथा दानोंके जोड़को उड़दके आटेसे बन्द कर दें। तत्पश्चात् उसके नीचे दीपक जलावें। दीपक की बत्ती अंगूठे के समान मोटी होनी चाहिये। ऊपर वाले बरतन पर भीगा हुवा कपड़ा रखकर उसे ठंडा रखना चाहिये।

इसी प्रकार १ पहर तक दीपक जलाने के पश्चात् पात्रके स्वांग शीतल होने पर सन्धि को खोलकर ऊपरके पात्रमें लगे हुवे स्फटिक मणि और सफेद हीरेके समान स्वच्छ कर्पूर को निकाल लें।

यही भीमसेनी कर्पूर है जो अनेक प्रयोगों में पड़ता है।

(४९२९) **भैरवाञ्जनम्**

(वै. र.। ज्वर.; र. का. धे.। अ. १; र. रा. सु.। ज्वरा.)

सूततीक्ष्णकणागन्धमेकांशं जयपालकम्।
सर्वैस्त्रिगुणितं जृम्भवारिपिष्टं दिनाष्टकम्॥
नेत्राञ्जनेन हन्त्याशु सर्वोपद्रवयुग्ज्वरम्॥

शुद्ध पारद, फौलादभस्म, पीपल का चूर्ण और शुद्ध गन्धक १-१ भाग तथा शुद्ध जमाल गोटा १२ भाग लेकर सबको ८ दिन तक जम्भीरी नीबूके रसमें घोटकर अत्यन्त महीन चूर्ण बनावें।

इसे आंखमें लगानेसे उपद्रव सहित समस्त ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

(नोट—यह प्रयोग सावधानी पूर्वक बनाना और अनुभवी वैद्यके परामर्श से प्रयुक्त करना चाहिये। जमाल गोटे में तेलका अंश बिल्कुल न रहने देना चाहिये।)

इति भकाराद्यञ्जनप्रकरणम्।



अथ भकारादिनस्यप्रकरणम्।

(४९३०) **भस्मेश्वररसः** (नस्य)

(र. का. धे.। अ. १)

आरण्यगोमयं शुष्कं शुष्कं दग्ध्वा प्रकल्पयेत्।
तत्पुटेदर्कदुग्धेन शुष्कं वारत्रयेण च॥
छिक्किकामेतदर्धां तु कट्फलं छिक्किकार्धकम्।
मरिचं छिक्किकातुल्यं वस्त्रपूतं प्रकल्पयेत्॥
नस्येन रक्तिकामानं भक्षणेऽपि च तन्मतम्।
कफवातभवां पीडां शिरोद्भवासिकागताम्॥

अयं भस्मेश्वरो नाम नाशयेन्नात्र संशयः ॥

सूखे अरण्य उपलोंको भस्मको आकके दूध की ३ भावना देकर सुखा लें और फिर उसमें उससे आधा नकछिकनीका चूर्ण और उतना ही काली मिर्चका चूर्ण तथा मिर्चसे आधा कायफलका चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह घोटकर कपड़े से छान लें ।

इसमें से १ रत्ती चूर्ण सूंघने तथा खानेसे शिर, हृदय और नासिकाकी कफवातज पीड़ा अवश्य नष्ट हो जाती है ।

(४९३१) भूतोन्मादनाशकनस्यम्

(ग. नि. । भूतोन्मादा.)

नस्येन च गोमूत्रे देवाधिपवारुणीफलं पक्कम् । नाशयति पिशाचग्रहशाकिनिभूतादिरक्षांसि ॥

इन्द्रायणके पक्के फलको गोमूत्र में पीसकर नस्य देनेसे पिशाच, ग्रह, शाकिनी, भूत और राक्षस विकार नष्ट होते हैं ।

(४९३२) भृङ्गराजादिनस्यम्

(व. से. । शिरो.; वृ. नि. र.; यो. र. । शिरोरोगा.)

भृङ्गराजरसश्छागक्षीरतुल्योऽर्कतापितः ।
सूर्य्यावर्त्तं निहन्त्याशु नस्येनैव प्रयोजितः ॥

भंगरेका रस और बकरीका दूध बराबर बराबर लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर धूपमें गर्म करके नस्य लेनेसे सूर्यावर्त्त रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

इति भकारादिनस्यप्रकरणम् ।

अथ भकारादिकल्पप्रकरणम् ।

(४९३३) भृङ्गराज-कल्पः

(र. चि. म. । स्त. ९)

अथातो भृङ्गराजस्य कल्पमव्ययकारकम् ।
प्रवक्ष्यामि जरादुःखनाशनं जीविते हितम् ॥
गृहीत्वा भृङ्गराजस्य लघुबीजानि यानि च ।
समादाय ततस्तानि वापयेच्च समन्ततः ॥
त्रिफलाजलसिक्तानि रोहयेदतियत्नतः ।
उत्पद्यते तदा तस्माद्भृङ्गराजोतिकोमलः ॥
मृदुपल्लवसंकीर्णभूतलः प्रबलः फलः ।
तदग्रं प्रत्यहं नीत्वा कवलं तिलमिश्रितम् ॥
शेफालिकापत्ररसं तत्कालमनुपाययेत् ।
तच्चुलूकद्वयं नित्यं शीतलं शीलितं भवेत् ॥
ताम्बूलं भक्षयेत्पश्चाद्गन्धपूगादिसंस्कृतम् ।
एवं च प्रत्यहं कुर्यात्कल्पे श्रद्धापरो नरः ॥
द्वियामाद्भुज्यते पथ्यं दुग्धं भक्तं सशर्करम् ।
अथ मुद्गघृतं नान्यद्भुज्यते पथ्यसेवने ॥
अनेन शुभमार्गेण कर्तव्यं कल्पसेवनम् ।

कोमला निर्मलाः केशा वृद्धानामपि देहिनाम् ॥
जायन्ते सकले देहे कल्पकर्तुर्न संशयः ।
शरीरं नूतनं कुर्याद्दृढा दन्ता भवन्ति च ॥
अतिप्रभं शुभं तस्य शरीरं जायतेतराम् ।
एवं षण्मासपर्यन्तं भृङ्गराजस्य नित्यशः ॥
कल्पं कुर्यात्प्रयत्नेन नरो देवसमो भवेत् ।
माहात्म्यं शक्यते नास्य वक्तुं कल्पशतैरपि ॥

भंगरेके सूक्ष्म बीजोंको बो कर त्रिफलेके काथ से सींचें। इससे जो भंगरा उत्पन्न होगा वह अत्यन्त कोमल होगा। प्रति दिन प्रातः काल उसके कोमल कोमल पत्ते (कोंपल) लेकर तिलोंके साथ मिलाकर चबावें और ऊपर से २ चुल्लू संभालुका स्वरस बिना गर्म किये हुवे ही पी जायं। तत्पश्चात् सुपारी और इलायची आदि सुगन्धित पदार्थ युक्त पान खावें।

इसके २ पहर बाद दूध, भात, खांड, मूंग और घृतयुक्त भोजन करें। इनके अतिरिक्त अन्य कोई चीज़ न खावें।

इस प्रकार ६ मास तक भृंगराज सेवन करनेसे वृद्ध मनुष्यके बाल भी कोमल और निर्मल हो जाते हैं। शरीर नवीन और दांत दृढ़ हो जाते हैं तथा शरीर अत्यन्त कान्तिमान् देवतुल्य हो जाता है।

इति भकारादिकल्पप्रकरणम् ।

अथ भकारादिरसप्रकरणम् ।

(४९३४) भक्तपाकवटी (बृहत्)
(भुक्तपाकवटी)
(र. सा. सं.; र. रा. सु. । अजीर्णा.)

अभ्रं पारदगन्धकौ सदरदौ ताम्रञ्च तालं शिला
वङ्गञ्च त्रिफला विषञ्च कुनटी भाव्याऽच
दन्त्यम्बुना ।
शृङ्गी व्योषयमानिचित्रजलदं द्वे जीरके टङ्कणं
एलापत्रलवङ्गहिङ्गुकटकीजातीफलं सैन्धवम् ॥
एतान्यार्द्रकचित्रदन्तिसुरसावासानीरैर्विल्वजैः
पत्रोत्थैरपि सप्तधा सुविमले खल्वे विभाव्यान्यतः ।
खादेद्वल्लमितं तथा च सकलव्याधौ
प्रयोज्या बुधै-
र्विड्बन्धे कफजे त्रिदोषजनिते
ह्यामानुबन्धेऽपि च ॥
मन्दाग्नौ विषमज्वरे च सकले शूले
त्रिदोषोद्भवे
हन्यात्तानपि भक्तपाकवटिका भूयश्च सामं
जयेत् ॥

अभ्रकभस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध शिंगरफ (हिंगुल), ताम्र भस्म, हरताल, दन्तीके काथमें घोटा हुवा मनसिल, बंगभस्म, हर्र, बहेड़ा, आमला, शुद्ध बछनाग, काकड़ासिंगी, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, चीतेकी जड़, नागरमोथा, सफेद

जीरा, कालाजीरा, सुहागेकी खील, इलायची, तेजपात, लौंग, हींग, कुटकी, जायफल और सेंधानमक समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें भस्में तथा अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको अद्रक, चीता, दन्तीमूल, तुलसी, बासा और बेलके पत्तोंके स्वरस या काथकी सात सात भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे मलबन्ध, कफप्रधान सन्निपात, आम, अग्निमांद्य, विषम ज्वर तथा समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

भक्तवारिगुटिका

(व. से. । परिणाम शूला.)

पानीयभक्तवटी सं. ४३२५ देखिये ।

(४९३५) भक्तविपाकवटी

(भक्तपावकगुटिका)

(रसे. सा. सं. । अजीर्णा.; र. र. । रसायना. र. च. । अजीर्णा.)

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मनःशिला।
गगनं कान्तलौहं च सर्वमेषां समांशकम् ॥+
त्रिवृद्दन्तीवारिवाहं चित्रकश्च महौषधम् ।
पिप्पली मरिचं पथ्या यमानी कृष्णजीरकम् ॥
रामठं कटुका पाठा सैन्धवं साजमोदकम् ।
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत् ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च।
सूर्य्यावर्त्तरसेनैव तुलस्याः स्वरसेन च ॥
आतपे भावयेद्वैद्यः खल्लपात्रे च निर्म्मले ।
पेषयित्वा वटीं खादेद्गुञ्जाफलसमप्रभाम् ॥

+ कई ग्रन्थोंमें यह श्लोकार्द्ध नहीं है ।

स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, शुद्ध मनसिल, अभ्रकभस्म, कान्त लोहभस्म, निसोत, दन्तीमूल, नागरमोथा, चीतामूल, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, हर्र, अजवायन, काला जीरा, हींग कुटकी, पाठा, सेंधा नमक, अजमोद, जायफल और जवाखार समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको धूपमें अद्रक, संभालु, हुलहुल और तुलसीके स्वरसकी १–१ भावना देकर अच्छी तरह घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अग्नि प्रदीप्त होती है ।

(गुणोंके लिये "भुक्तोत्तरीया वटी" देखिये)

(४९३६) भक्तोत्तरचूर्णम्

(भै. र. । वृद्धिरोगा.)

अभ्रकं गन्धकश्चैव पिप्पली लवणानि च ।
त्रिक्षारं त्रिफला चैव हरितालं मनःशिला ॥
पारदं चाजमोदा च यमानी शतपुष्पिका ।
जीरकं हिङ्गु मेथी च चित्रकं चविका वचा ॥
दन्ती च त्रिवृता मुस्ता शिला च मृतलौहकम् ।
अञ्जनं निम्बबीजानि पटोलं वृद्धदारकम् ॥
सर्वाणि चाक्षमात्राणि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
शतं कनकबीजानि शोधितानि प्रयोजयेत् ॥
एतदग्निविवृद्ध्यर्थमृषिभिः परिकीर्त्तितम्।
श्लीपदान्यन्त्रवृद्धिश्च वातवृद्धिश्च दारुणाम्॥
अरुचिं चामवातश्च शूलं वातसमुद्भवम् ।
गुल्मं चैवोदरव्याधीन्नाशयत्याशु तत्क्षणात् ॥
भक्तोत्तरमिदं चूर्णमश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥

अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, पीपल, सेंधानमक, काला नमक, बिडलवण, सामुद्र लवण, सांभर, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, हर्र, बहेड़ा, आमला, शुद्ध हरताल, शुद्ध मनसिल, शुद्ध पारा, अजमोद, अजवायन, सौंफ, जीरा, हींग, मेथी, चीतामूल, चव, बच, दन्तीमूल, निसोत, नागरमोथा, शिलाजीत, लौहभस्म, सुरमा, नीमके बीज (निबौली) की गिरी, पटोल और विधारा १।-१। तोला तथा शुद्ध धतूरेके बीज १०० नग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह घोटकर रक्खें।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त होती और श्लीपद, अन्त्रवृद्धि, भयंकर वातवृद्धि, अरुचि, आमवात, वातज शूल, गुल्म और उदररोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा १-१।। माशा ।)

भगन्दरहररसः

(रसे. चि. म. । अ. ९; रसे. सा. सं.; र. रा. सु. । भगन्दर.; र. का. धे. । अ. ४९.)

रविताण्डवरस देखिये ।

(४९३७) भगन्दरारिरसः

(र. का. धे. । अ. ४९)

सूतं गन्धं मृतं ताम्रमभ्रकं दरदं समम् ।
मरिचं द्विगुणं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना ॥
त्रिदिनं भक्षयेन्नित्यं मधुना रक्तिकात्रयम् ।
भगन्दरं जयेच्छीघ्रं सविषं शम्भुशासनात् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म और शुद्ध हिंगुल १-१ भाग तथा कालीमिर्चका चूर्ण सबसे दो गुना लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको ३ दिन चीतेके काथमें घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें शहदके साथ सेवन करनेसे भगन्दर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(४९३८) भगन्दरोपदंशारिरसः

(र. का. धे. । अ. ४८)

रससोरककाशीशतुवरीटङ्कणं विषम् ।
पक्वस्तु डमरूयन्त्रे रसोऽयं हि द्विगुञ्जकः ॥
भगन्दरारिः कथितो दृष्टश्चाऽयं भिषग्वरैः ॥

शुद्ध पारा, शोरा, कसीस, फटकी, सुहागा और शुद्ध बछनाग समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके (४ पहर) डमरुयन्त्रमें पकावें और फिर उसके स्वांग शीतल होने पर निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसे २ रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करनेसे भगन्दर और उपदंश नष्ट होता है।

(सेवन विधि—औषधको लौंगके कल्कमें लपेटकर निगलवा देना चाहिये । भोजनमें नमक न देना चाहिये ।)

भल्लातकलौहः

(च. द. । अर्श.)

" भल्लातकलेहः " प्रयोग सं. ४८५९ देखिये ।

(४९३९) भल्लातकादियोगः

(ग. नि. । गुल्मा.)

भल्लातकं पिप्पलीं च लोहचूर्णं शिलाजतु ।
लशुनं वा प्रयुञ्जीत विधिवद्गुल्मशान्तये ॥

शुद्ध भिलावा, पीपल, लोहभस्म और शिलाजीत समान भाग लेकर एकत्र खरल करें।

इसे या ल्हसनको यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे गुल्म नष्ट होता है।

(मात्रा—४-६ रत्ती)

(४९४०) भस्मवटी

(र. रा. सु. । अजीर्णा.)

चूर्णीकृतं पञ्चपलं तुषाम्ले
स्विन्नं शिवायुग्विषतिन्दुबीजम् ।
हिङ्गु क्रिमिघ्नं त्रिपटु त्रिदीप्यं
पलं पृथक् त्र्यूषणगन्धयुक्तम् ॥
चूर्णीकृतं निम्बुरसेन भाव्यं
कोलास्थिमात्रा वटिका विधेया ।
संसेविता हन्ति नृणामजीर्णं
हृद्रोगगुल्मं क्रिमिजांश्च रोगान् ॥
प्लीहाग्निमान्द्यार्त्तिमथामवातं
शूलातिसारं ग्रहणीरुजं च ।
जलोदरार्शः क्रिमिजांश्च रोगा-
निहन्याद्बहून् वातकफोद्भवांश्च ॥

५-५ पल कुचला और हर्रको कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर दोलायन्त्र-विधिसे १ दिन कांजीमें पकावें और फिर हर्रोंकी गुठली निकाल दें और कुचलेको छील डालें तथा उसके भीतरकी पत्ती भी निकाल दें। तदनन्तर दोनोंको पीस लें और हींग, बायबिड़ंग, सेंधानमक, कालानमक, सांभर, देसी अजवायन, खुरासानी अजवायन, अजमोद, सेंठ, मिर्च, पीपल और गन्धकका चूर्ण १-१ पल (५-५ तोले) मिलाकर सबको १ दिन नीबूके रसमें घोटकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलियां बनाकर रख लें।

इनके सेवनसे अजीर्ण, हृद्रोग, गुल्म, क्रिमिजन्य रोग, तिल्ली, अग्निमांद्य, आमवात, शूल, अतिसार, संग्रहणी, जलोदर, अर्श और अन्य बहुतसे वातकफज रोग नष्ट होते हैं।

(४९४१) भस्मसूतरसः

(र. का. धे. । अ. १०)

अजाजीधान्यपथ्याभिः सक्षौद्रैः सकटुत्रिकैः ।
एतैः सार्धं भस्मसूतः सद्यो वान्तिं विनाशयेत् ॥

जीरा, धनिया, हर्र और सेंठ, मिर्च तथा पीपलका चूर्ण समान भाग लेकर उसमें पारदभस्म मिलाकर शहदके साथ चाटनेसे वमन शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(चूर्णकी मात्रा १ से ३ माशे तक। पारद भस्म १ से २ रत्ती तक। शहद २ तोले।)

(४९४२) भस्मामृतरसः (१)

(रसे. चि. म. । अ. ९)

पलैकं मूर्च्छितं सूतं मरिचं हिङ्गु जीरकम् ।
प्रतिकर्षं वचाशुण्ठि तत्सर्वं मार्कव द्रवैः ॥
दिनं पिष्ट्वा लिहेन्मासं मधुना वह्निदीप्तये ।
कर्षैकं भक्षयेच्चानु दाडिमं नागरं गुडैः ॥

मूर्च्छित पारद (कज्जली या रससिन्दूर) ५ तोले तथा काली मिरच, हींग, जीरा, बच और

सोंठका चूर्ण १।-१। तोला लेकर सबको भंगरेके रसमें १ दिन घोट कर १-१ माशेकी गोलियां बना लें।

इन्हें शहदके साथ सेवन करनेसे अग्नि दीप्त होती है।

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् अनारदाना, सोंठ और गुड़ का चूर्ण समान भाग मिश्रित १। तोला खाना चाहिये।

(४९४३) **भस्मामृतरसः** (२)

(रसे. चि. म. । अ. ९)

धान्याभ्रं सूतकं तुल्यं मर्दयेन्मारकद्रवैः।
दिनैकं तिलकल्केन पटं लिप्त्वाथ वर्तिकाम् ॥
कृत्वैव तस्य तैलेन विलिप्य च पुनः पुनः।
प्रज्वाल्य तामधः पात्रे सतैलं पारदं पचेत् ॥
स दिनं भूधरे पक्वो भस्मीभवति नान्यथा।
योजितो रसयोगेशस्तत्तद्रोगहरो भवेत् ॥
मर्दनं तप्तखल्वेऽस्य विशेषादग्निकारकः।
अत्र प्रकरणे वक्ष्ये शुद्धसूतस्य मारिकाः ॥
औषधीर्याः समस्ता वा व्यस्ताऽव्यस्ता दशोत्तराः।
योजिता घ्नन्ति देवेशि सूतं गन्धं विनापि ताः ॥
मेघनादो वज्रवल्ली देवदाली च चित्रकम्।
बला शुण्ठी जयन्ती च कर्कोटी तुम्बिका तथा ॥
कटुतुम्बीकन्दरम्भाकन्दवारणशुण्डिकाः।
कोषातक्यमृताकन्दं कन्यका चक्रमर्दकम् ॥
सूर्यावर्त्तः काकमाची गुञ्जा निर्गुण्डिका तथा।
लाङ्गली सहदेवी च गोक्षुरः काकतुम्बिका ॥
जाती लज्जालुपटुके हंसपादभृङ्गराजकम्।
ब्रह्मबीजं च भूधात्री नागवल्ली वरी तथा ॥
स्नुह्यर्कदुग्धं तुलसी धत्तूरो गिरिकर्णिका।
गोपाली पटुमेताभिर्वज्रमूषागतं पचेत् ॥
ग्रावा दग्धास्तुषा दग्धा दग्धा वल्मीकमृत्तिकाः।
लोहकिट्टं च घस्त्रार्द्धमाजक्षीरेण मर्दयेत् ॥
नृकेशशणसंयुक्ता वज्रमूषा च तत्कृतिः ॥

धान्याभ्रक और शुद्ध पारा बराबर बराबर लेकर दोनोंको १ दिन मारक ओषधियोंके रसमें खरल करें फिर उसमें समान-भाग तिलकी पिट्ठी मिलाकर १ दिन घोटें और उसका स्वच्छ वस्त्रपर लेप करके उसकी बत्ती बनावें। इसको तिलके तेलमें अच्छी तरह तर करके उसके एक सिरेमें आग लगा दें और दूसरे सिरेको चिमटे आदिसे पकड़ कर बत्तीको उलटा लटका दें तथा उसके नीचे चीनी या कांचका पात्र रख दें। इस पात्रमें जो पारदयुक्त तैल इकट्ठा हो जाय उसे मूषामें बन्द करके १ दिन भूधर यन्त्रमें पकावें। इस क्रियासे पारेकी भस्म बन जायगी।

रागोचित अनुपानके साथ सेवन करानेसे यह समस्त रोगोंको नष्ट करती है।

यदि इसे तप्त खल्वमें मर्दन कर लिया जाय तो इसकी जठराग्निवर्द्धक शक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है।

यहां प्रसंगवश पारेकी मारक ओषधियों के नाम भी लिखते हैं। इन ओषधियोंके योगसे गन्धकके बिना भी पारेकी भस्म बन जाती है।

कांटे वाली चौलाई, हड़जोड़ी, विंडाल, चीता, खरैटी, सोंठ, जयन्ती (जैत), ककोड़ा, कड़वी

तुम्बी, कड़वी तूंबीकी जड़, केलेका कन्द, हाथीसुंडी, तुरई, गुडूचीकन्द, ग्वारपाठा, पमाड़, हुलहुल, मकोय, गुंजा, संभालु, कलियारी, सहदेवी, गोखरु, काकनासिका, चमेली, लज्जालु, करेला, हंसपदी, भंगरा, ढाकके बीज, भुईआमला, पान, शतावर, थूहरका दूध, आकका दूध, तुलसी, धतूरा, कोयल, गोपाली और सेंधा नमक ।

इन सब या इनमें से दस या ततोधिक ओषधियोंके साथ घोटकर वज्रमूषामें पकानेसे पारेकी भस्म हो जाती है ।

वज्रमूषानिर्माणविधि—चूना, जले हुवे तुष, जली हुई बमीकी मिट्टी और मण्डूर समान भाग लेकर सबको २ पहर तक बकरीके दूधमें खरल करके उसमें कैंचीसे बारीक बारीक कटे हुवे मनुष्यके बाल और सन मिला दें और फिर इस मसालेकी मूषा बनावें । इसे वज्रमूषा कहते हैं ।

(४९४४) भस्मेश्वरचूर्णम्

(भस्मेश्वररसः)

(रसे. सा. सं.; भा. प्र. । ज्वर.; रसे. चि. म. । अ. ९; र. का. धे. । अ. १; र. म. । अ. ६; र. रा. सु. । कफज्वरा.; वृ. यो. त. । त. ५९)

भस्म षोडशनिष्कं स्यादारण्योपलकोद्भवम् ।
निष्कत्रयश्च मरिचं विषनिष्कश्च चूर्णयेत् ॥
अयं भस्मेश्वरो नाम सन्निपातनिकृन्तनः ।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदार्द्रकस्य रसेन तु ॥

अरने उपलोंकी भस्म १६ भाग, कालीमिर्च का चूर्ण ३ भाग, और शुद्ध बछनागका चूर्ण १ भाग लेकर सबको अच्छी तरह खरल करके रक्खें ।

इसे ५ रत्तीकी मात्रानुसार अदरकके रसके साथ देनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है ।

भागोत्तरगुटिका

(भागोत्तरवटकः)

बब्बूलादिगुटिका प्र. सं. ४७३३ देखिये ।

(४९४५) भानुचूडामणिरसः

(रसे. सा. सं. । ज्वर.)

सुवर्णं रससिन्दूरं प्रवालं वङ्गमेव च ।
लौहं ताम्रं तेजपत्रं यमानीं विश्वभेषजम् ॥
सैन्धवं मरिचं कुष्ठं खदिरं द्विहरिद्रकम् ।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च समभागञ्च कारयेत् ॥
वारिणा वटिका कार्य्या रक्तिद्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥

सुवर्णभस्म, रससिन्दूर, मूंगा भस्म, बंगभस्म, लोहभस्म, ताम्रभस्म तथा तेजपात, अजवायन, सोंठ, सेंधानमक, कालीमिरच, कूठ, खैरसार, हल्दी, दारुहल्दी और रसौतका चूर्ण तथा सोनामक्खी भस्म समान भाग लेकर सबको पानीके साथ घोट कर २–२ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इन्हें प्रातःकाल सेवन करनेसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ।

(४९४६) भास्करामृताभ्रम्

(भै. र. । अम्लपित्ता.)

वासामृताकेशराजपर्पटीनिम्बभृङ्गकम् ।
मुस्तं ह्रश्रीरबृहती वाट्यालकशतावरी ॥

एषां सत्त्वैः मलोन्मुक्तैर्मर्दितं विमलाभ्रकम्।
सहस्रपुटितं तत्र शतावर्या रसं क्षिपेत् ॥
वारद्वादशकं दत्त्वा वटिकां कारयेद्भिषक्।
भास्करामृतनामेदमम्लपित्तं नियच्छति ॥
शूलमन्नद्रवं शूलं शूलश्च परिणामजम्।
छर्दिं हृल्लासमरुचिं तृष्णां कासञ्च दुर्जयम् ॥
हृद्ग्रहं कामलां रक्तपित्तं यक्ष्माणमेव च।
दाहं शोथं भ्रमिं तन्द्रां विस्फोटं कुष्ठमेव च ॥
श्वासं मूर्च्छाञ्च मन्दाग्निं यकृत्प्लीहोदरं तथा ॥

सहस्रपुटी अभ्रकभस्मको बासा, गिलोय, काला भंगरा, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, सफेद भंगरा, नागरमोथा, सफेद पुनर्नवा, बनभण्टा, खरैटीकी जड़ और शतावरीके स्वरस में १-१ दिन घोटकर अन्तमें शतावरके रसकी १२ भावना देकर (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे साधारण शूल, अन्नद्रव शूल, परिणाम शूल, छर्दि, जी मिचलाना, अरुचि, तृष्णा, कष्टसाध्य खांसी, हृद्ग्रह, कामला, रक्तपित्त, राजयक्ष्मा, दाह, शोथ, भ्रम, तन्द्रा, बिस्फोटक, कुष्ठ, श्वास, मूर्च्छा, मन्दाग्नि, यकृत्, प्लीहा और उदररोग नष्ट होते हैं।

(४९४७) **भास्करो रसः** (१)

(र. प्र. सु. । अ. ८)

तालं ताप्यं गन्धकं सूतकं च
शिलाह्वं वै खेचरं चेत्समं हि।
चूर्णं कृत्वा चाटरूषेण मर्द्यं
सार्द्रेणैवं सौरसाया रसेन ॥
मर्दितं हि तदनु ताम्रनिर्मिते
धारयेच्च सकलं हि सम्पुटे।
मृतस्नया च परिवेष्ट्य सम्पुटं
पाचयेच्च सततं दृढाग्निना ॥
यामयुग्ममितमेव मात्रया
यन्त्रके हि कुरु शीतलं स्वयम्।
जायतेऽतिरुचिरो महारसो
पूर्ववद्भवति भास्करोदयः ॥
चित्रकार्द्रकरसेन योजितो
राजयक्ष्मकफवातनाशनः ॥

शुद्ध हरताल, शुद्ध सोनामक्खी, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा, शुद्ध मनसिल और कसीस समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको बासा, अद्रक और तुलसीके रसमें एक एक दिन घोटकर गोला बनावें और उसे ताम्रके सम्पुटमें बन्द करके उसपर ४-५ कपड़मिट्टी करके लवणयन्त्र में २ पहर तक तीव्राग्निपर पकावें। जब यन्त्र स्वांग शीतल हो जाय तो सम्पुटमें से औषधको निकालकर पीसकर रक्खें।

इसे अद्रक और चीतेके रसके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्मा,कफ और वायु नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—१-२ रत्ती)

(४९४८) **भास्करो रसः** (२)

(भै. र. । अग्निमान्द्या.; र. रा. सु. । अजीर्णा.)

विषं सूतं फलं गन्धं त्र्यूषणं टङ्कजीरकम्।
एकैकं द्विगुणं लौहं शङ्खमभ्रं वराटकम् ॥

सर्वतुल्यं लवङ्गश्च जम्बीरैर्भावयेद्भिषक् ।
सप्तवासरपर्य्यन्तं ततः स्याद्भास्करो रसः ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटीं कुर्याद्विचक्षणः ।
ताम्बूलीदलयोगेन वटीं सञ्चर्व्य भक्षयेत् ॥
शूलरोगेषु सर्वेषु विसूच्यामग्निमान्द्यके ।
सद्यो वह्निकरो ह्येष चन्द्रनाथेन भाषितः ॥

शुद्ध बछनाग विष, शुद्ध पारा, हर्र, बहेड़ा, आमला, शुद्ध गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुहागेकी खील और जीरा एक एक भाग तथा लोहभस्म, शंखभस्म, अभ्रकभस्म और कौड़ी भस्म २-२ भाग तथा लौंग इन सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको सात दिन तक जम्बीरी नीबूके रसमें घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १-१ गोली पानमें रखकर चबानेसे समस्त प्रकारके शूल, हैजा और अग्निमांद्यादि रोग नष्ट होकर शीघ्र ही अग्नि दीप्त हो जाती है ।

(४९४९) भास्वद्वटी

(वै. र. । शूला.)

गरलहुतभुग्विश्वाजाजीवचोषणहिङ्गुभि-
र्विधिविमृदितैर्भृङ्गद्रावैर्गुटीहरिमन्थवत् ।
हरति विविधं भुक्ताशूलं तथानिलमूढता-
मनलविरतिं सैषा भास्वद्वटी भुवि विश्रुता ॥

शुद्ध बछनाग विष, चीतामूल, सोंठ, जीरा, बच, काली मिरच और भुनी हुइ हींग समानमाग लेकर सबका चूर्ण करके उसे १ दिन भंगरेके रसमें घोटकर चनेके बराबर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे पाचन विकारसे उत्पन्न हुवा शूल नष्ट होता है तथा अपान वायु खुल जाता है ।

(४९५०) भिषभारसः

(वृ. यो. त. । त. ५९)

रसं गन्धकताम्रं च नागं वङ्गं विषं तथा ॥
जेपालं स्वर्णबीजानि समभागानि कारयेत् ।
आर्द्रके सप्तभाव्यानि सप्तभाव्यानि चित्रके ॥
निर्गुण्ड्यां सप्तभाव्यानि सिद्धोऽयं भिषभारसः । (?)
गुञ्जामात्रप्रमाणेन वटकान्कारयेत्ततः ॥
वटीमेकां प्रयुञ्जीत शृङ्गवेररसेन तु ।
सर्वज्वरहरा ज्ञेया याममात्रं तु शाम्यति ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, सीसाभस्म, बंगभस्म, शुद्ध बछनाग विष, शुद्ध जमालगोटा और शुद्ध धतूरेके बीज समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बना लें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको अदरक, चीता और संभालूके रसकी ७-७ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसके साथ सेवन करने से समस्त ज्वर १ पहरमें ही नष्ट हो जाते हैं ।

(४९५१) भीमपराक्रमरसः

(र. र. स. । उ. अ. १७; र. रा. सु. । प्रमेहा.)

तुल्याभ्यां रसगन्धाभ्यां कृत्वा कज्जलिकां त्र्यहम् ।
द्रावयित्वाऽऽयसे पात्रे मृदुना बदराग्निना ॥
निक्षिप्याष्टमांशेन सीसभस्म विनिक्षिपेत् ।

संमिश्रय कदलीपत्रे निक्षिप्य तदनन्तरम् ॥
आकृष्य परिपिष्टाथ सीसभस्मप्रमाणतः ।
कान्ताभ्रसत्त्वयोर्भस्म राजावर्तकभस्म च ॥
परिशुद्धं च गोमूत्रे शिलाजतु निधाय च ।
खल्वे निक्षिप्य तत्सर्वं यत्नेन परिमर्दयेत् ॥
तुल्यगुञ्जाङ्कुलीबीजचूर्णकल्कोत्थवारिणा ।
कतकाङ्घ्रिकषायेण निम्बपत्ररसेन च ॥
ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिप्त्वा लोहस्य भाजने ।
त्रिफलानां कषायेण सप्तधा परिभावयेत् ॥
अङ्कुलीबीजबर्बूरनिर्यासौ भृष्टचूर्णितौ ।
समौ रससमौ कृत्वा रसेन सह मर्दयेत् ॥
इति सिद्धरसः सोऽयं भवेद्भीमपराक्रमः ।
नामतः सर्वमेहघ्नो दृष्टप्रत्ययकारकः ॥
वल्लद्वयमितो ग्राह्यो जलैः पर्युषितैः सह ।
पथ्यं मेहोचितं देयं वर्ज्यं सर्वं विवर्जयेत् ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर दोनोंको तीन दिन तक घोटकर अत्यन्त बारीक कज्जली बनावें ।

तदनन्तर इसे घृत लगे हुवे लोहपात्रमें बेरीकी मन्दाग्निपर पिघलावें और फिर उसमें कज्जलीका आठवां भाग सीसेकी निरुत्थ भस्म मिलाकर उसे गायके गोबर पर फैले हुवे केलेके पत्तेपर डाल दें और उसपर दूसरा पत्ता ढककर उसे गोबर से दबा दें जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो पर्पटीको निकालकर पीस लें और उसमें कान्तलोहभस्म, अभ्रकसत्व भस्म, राजावर्तभस्म तथा गोमूत्रमें शुद्ध शिलाजीत; प्रत्येक सीसेकी भस्मके बराबर मिलावें और फिर उसे गुञ्जा तथा अंकोलके बीजोंके कल्कके रसमें तथा निर्मलीकी जड़के क्काथ और नीमके पत्तोंके स्वरसमें १-१ दिन घोटकर सुखा लें । तत्पश्चात् सात भावना त्रिफलाके क्काथकी लोहपात्रमें देकर उसमें उसके बराबर भुने हुवे अंकोल बीज और कीकरके गोंदका समान भाग मिश्रित चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटकर रक्खें ।

इसे बासी पानीके साथ ६ रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करनेसे समस्त प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(४९५२) भीममण्डूरवटकः

(वृ. यो. त. । त. ९५; यो. र.;व. से.; च. द.। परिणामशूला.; वृ. नि. र.; ग. नि. । शूला.; वृ. मा. । परिणामशूला.; र. का. धे. । अ. २१)

यवक्षारः कणा शुण्ठी कोलग्रन्थिकचित्रकात् ॥
प्रत्येकं पलमादाय प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ।
शनैः पचेदयः पात्रे यावद्दर्वीप्रलेपनम् ॥
दत्त्वाऽष्टगुणगोमूत्रं किट्टाच्छुद्धाद्विचक्षणैः ।
ततोऽक्षमात्रान्वटकान्योजयेत्सप्तरात्रतः ॥
आदिमध्यावसानेषु भोजनस्योचितस्य वै ।
स भीमवटको ह्येष परिणामरुगन्तकः ॥

जवाखार, पीपल, सोंठ, बेर, पीपलामूल और चीता ५-५ तोले तथा शुद्ध मण्डूर १ सेर लेकर सबका महीन चूर्ण बनाकर उसमें ८ सेर गोमूत्र मिलाकर लोहेकी कढ़ाईमें पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो १।-१। तोलेके गोले बना लें ।

इनमेंसे १-१ गोला भोजनके आदि, मध्य और अन्तमें ७ दिन तक सेवन करनेसे परिणामशूल नष्ट हो जाता है ।

(व्यवहारिक मात्रा--१॥-२ माशे ।)

(४९५३) **भीमरुद्रोरसः** (१)

(रसे. सा. सं.; र. रा. सु.; र. चं.; भै. र. । विषा.; र. र.; धन्व. । विषा.)

सूतराजस्य तोलैकं गन्धकस्य तथैव च।
अभ्रात्कर्षं ततो देयं तोलैकं कान्तलौहकम् ॥
परोक्तेनौषधेनैव भावयेच्च पृथक् पृथक् ।
विशालाबृहतीब्राह्मीसौगन्धिकमुदाडिमैः ॥
मर्कट्याश्चात्मगुप्तायाः स्वरसेन पृथक् पृथक् ।
एतद्रक्तिकमानेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
वटीमेकां भक्षयित्वा पिबेच्छीतजलन्ततः।
भीमरुद्रो रसो नाम चासाध्यमपि साधयेत् ॥
कुक्कुरस्य शृगालस्य विषं हन्ति सुदुस्तरम् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म और कान्तलोहभस्म समान भाग लेकर सबकी कज्जली बनाकर उसे १–१ दिन इन्द्रायनमूल, बनभण्टा, ब्राह्मी, कमल, अनार, चिरचिटा (अपामार्ग) और कौंचके रसमें घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे नित्य प्रति १–१ गोली शीतल जलके साथ सेवन करानेसे पागल कुत्ते और गीदड़का विष नष्ट हो जाता है।

(४९५४) **भीमरुद्रो रसः** (२)

(भै. र. । विषा.)

मनः शिलालमरिचैर्दारुणा दरदेन च।
अपामार्गस्य हेम्नश्च हयमारशिरीषयोः ॥
मूलै रुद्राक्षतोयेन विष्णुकान्ताम्बुना ततः।
शतधा भावितैः कुर्याद् वटिका मुद्गसम्मिताः॥
व्यालदष्टं पीतविषं निरिन्द्रियमचेतनम् ।
पुनः सञ्जीवयेदेष भीमरुद्राभिधो रसः ॥

शुद्ध मनसिल, शुद्ध हरताल, काली मिरच, शुद्ध संखिया, शुद्ध हिंगुल, अपामार्ग (चिरचिटे) की जड़, धतूरेकी जड़, कनेरकी जड़ और सिरसकी जड़का चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर उसे रुद्राक्ष और कोयलके रसकी १००–१०० भावना देकर मूंगके बराबर गोलियां बना लें।

सांपके काटे हुवे मनुष्यको, और जिसने विष पी लिया है उसे यदि बेहोशी हो गई हो और इन्द्रियां अपना काम न करती हों तो ये गोलियां खिलानेसे विष नष्ट होता और पुनः चेतना आ जाती है।

(४९५५) **भुक्तद्रावीरसः**

(यो. र. । अजीर्णा.)

द्वौ क्षारौ टङ्कणं सूतं लवङ्गं लवणत्रयम् ।
पिप्पली गन्धकं शुण्ठी मरीचं पलसम्मितम् ॥
कर्षमेकं विषं दत्त्वा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
अर्कदुग्धस्य दातव्या भावना सप्तवासरम् ॥
अन्तर्धूमं गजपुटे पक्त्वा शीतं समुद्धरेत् ।
ततो लवङ्गमरिचस्फटिकीनां पलं पलम् ॥
सर्वं सम्मर्द्य दृढवद् दृढभाण्डे निधापयेत् ।
सायं गुञ्जाद्वयं खादेद्भुक्तं द्रावयति क्षणात् ॥
पुनर्भोजनवाञ्छां च जनयेत्प्रहरोपरि ॥

जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, शुद्ध पारद, लौंग, सेंधा नमक, काला नमक, सांभर, पीपल, शुद्ध गन्धक, सोंठ और कालीमिर्च ५–५ तोले और शुद्ध बछनाग विष १। तोला लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें

अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर उसे सात दिन तक आकके दूधमें घोटें और फिर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें । जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो औषधको निकालकर पीस कर उसमें ५-५ तोले लौंग, काली मिर्च और फटकीका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटकर रक्खें ।

इसमेंसे २ रत्ती औषध सायङ्कालके समय खानेसे भोजन तुरन्त पच जाता है और १ पहर बाद फिर भोजनकी इच्छा हो जाती है ।

(४९५६) भुक्तोत्तरीयावटी

(र. रा. सु. । अजीर्णा.)

लगभग भक्तविपाकवटी सं. ४९३५ के समान ही है । केवल इतना अन्तर है कि इसमें हरिताल और अभ्रकके स्थानमें ताम्रभस्म पड़ती है तथा भावना द्रव्योंमें तुलसीकी जगह ज्योतिष्मती लिखी है और गुणोंमें निम्न लिखित श्लोक अधिक लिखे हैं:—

भक्षयेत्तां वटीं प्रायो लवङ्गेन नियोजिताम् ॥
भक्तोत्तरीये बहुभोजने वा
आमानुबन्धीं चिरमन्दवह्नौ ।
विट्सङ्ग्रहे वातकफानुबन्धे
शोथोदरे मेहगदेप्यजीर्णे ॥
शूले त्रिदोषे प्रभवे ज्वरे च
सम्यक् वटीं भुक्तविपाकसंज्ञा ।
सुखं विपच्याशु नरस्य कोष्ठं
मुहुर्मुहुर्वाञ्छति भोजनं च ॥

अर्थात् इनमें से १-१ गोली लौंगके चूर्णके साथ सेवन करनेसे अधिक किया हुवा भोजन भी शीघ्र ही पच जाता है और बार बार भूख लगती है ।

इनके सेवनसे आमविकार, पुरानी मन्दाग्नि, कब्ज, वातकफज शोथोदर, प्रमेह, अजीर्ण, शूल और सन्निपात ज्वर नष्ट होता है ।

(४९५७) भूतनाथभैरवरसः

(र. का. धे. । अ. १)

आकाशवल्लीरसतो रसं षोढा विभावयेत् ।
बृहतीफलजैर्द्रावैस्तालो मुनिविभावितः ॥
षड्भागममितं सौम्यं धूर्तोत्पन्नद्रवैः ।
चतुरंशाष्टङ्कणस्य शिवाक्षेण विभावनाः ॥
षट्जैपालाहिफेनांशा लवङ्गमरिचानि च ।
शिवनेत्रपुटैस्त्रेधा वचा ब्राह्मी च बाकुची ॥
त्रिर्यंशा भृङ्गराजस्य ददेद् द्वादश भावनाः ।
निम्बकाष्ठेन घृष्टोऽयं भूतनाथादिभैरवः ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वज्वरहरो मतः ॥

(१) १ भाग पारेको ६ रोज तक अकास बेलके रसमें घोटें ।

(२) १ भाग हरतालको बनभण्टेके फलोंके रसमें घोटें ।

(३) ६ भाग संखियेको १५ दिन धतूरेके रसमें घोटें ।

(४) ४ भाग सुहागेको रुद्राक्षके रसमें घोट लें ।

(५) जमाल गोटा और अफीम ६-६ भाग तथा लौंग और काली मिर्चका चूर्ण ३-३ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर उसे बच, ब्राह्मी और बाबचीके रसकी ३-३ भावना दें ।

अन्तमें उपरोक्त पांचों योगोंको एकत्र मिलाकर उसे १२ भावना भंगरेके रसकी नीमके सोटेसे घोटकर दें।

इसे यथोचित अनुपानके साथ सेवन करानेसे समस्त ज्वर नष्ट होते हैं।

(मात्रा—आधी रत्ती।)

नोट—इस प्रयोग में ५ वां भाग संखिया पड़ता है अत एव अत्यन्त सावधानी पूर्वक सेवन कराना चाहिये।

(४९५८) भूतभैरव चूर्णम् [१]

(ज्वराङ्कुशरसः, तालाङ्को रसः)

(र. चं. । ज्वर.; भा. प्र. । म. खं. ज्वरा.; वै. र. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । जीर्णज्वरा.; र. रा. सु.; भै. र. । ज्वरा.)

तालकं शुक्तिकाचूर्णं तुल्यं तत्रोभयोरपि।
नवमांशं तु तुत्थं स्यान्मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः॥
तत्तु संशुष्कमुपलैर्वन्यैर्गजपुटे पचेत्।
शीतं तत् पेषयेच्चूर्णं गुञ्जामात्रं सितायुतम्॥
प्रभाते भक्षयेत्तेन याति शीतज्वरक्षयम्।
वान्तिर्भवति कस्यापि कस्यापि न भवत्यपि॥
एकेन दिवसेनैव शीतज्वरहरं परम्।
मध्याह्नसमये पथ्यं भक्तं शिखरिणी तथा॥

[१]—इस रसके द्रव्योंका परिमाण भिन्न भिन्न ग्रन्थोंमें भिन्न भिन्न है। वै. र. और वृ. नि. र. में हरताल १ भाग, नीला थोथा २ भाग और शुक्तिभस्म ६ भाग लिखी है तथा धतूरेके रसकी भावना देकर गोलियां बनानेके लिये लिखा है। भैषज्यरत्नावलीमें हरताल २ भाग, नीलाथोथा १ भाग और शुक्तिभस्म ४ भाग लिखी है।

शुद्ध हरताल और मोतीकी सीप ९-९ तोले तथा शुद्ध नीला थोथा (तुत्थ) २ तोले लेकर सबको १ दिन घीकुमार (ग्वार पाठा) के रसमें घोटकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। जब पुट स्वांगशीतल हो जाय तो औषधको निकाल कर पीस लें।

इसमें से प्रातःकाल १ रत्ती दवा मिश्रीके साथ खिलानेसे शीत ज्वर १ ही दिनमें जाता रहता है।

इससे किसी किसीको वमन हो जाती है और किसीको नहीं भी होती।

पथ्य—दोपहरको भात तथा शिखरन खानी चाहिये।

(४९५९) भूतभैरवरसः (१)

(र. चं.; र. सा. स.; र. रा. सु. । कुष्ठा.; रसे. चि. म. । अ. ९; र. चि. म. । स्त. २; र. का. धे. । कुष्ठा. ४०.)

शुद्धं पंचदशात्र तालकमितं शुद्धं च षट् गन्धकः।
सप्ताष्टौ नव तिन्तिडीयकफलात्काठिल्लकानां दश॥
सेहुण्डार्कपयोभिरेव सततं सञ्चूर्ण्य तद्भावयेत्।
रोहीतस्य जटारसेन मृदितं श्लक्ष्णं ततः खल्लितम्॥
एकीकृत्य समस्तमेतदपि तट्टङ्कमेतज्जयेत्।
पश्चाद्द्रासविशुद्धवारिसहितं किञ्चिच्च तत्पीयते॥
ताम्बूलं शशिखण्डमण्डितवटीमिश्रं ततः स्वापयेत्।

शय्यायां मृगलोचनापरिभृतौ कर्माणि सम्पादयेत् ॥
देहं वीक्ष्य सुखं मुखं न विरसं विज्ञाय सम्यक् सुधीः ।
छागीदुग्धमिहापि तं ननु दिनं सुप्तं च तत्पाययेत् ॥
नित्यं नित्यमिदं करोति नियतं सर्वौषधैर्वर्जितम् ।
सामग्रामसमग्रमग्रिमतरं नीलं च पीतारुणम् ॥
श्वेतं स्फीतमनल्पकं भृशमति भायः क्रिमिव्याकुलम् ।
गन्धालिप्रमितं खटीकसदृशं कुष्ठं च चोत्साधनम् ॥
अष्टाष्टादशभूतभैरव इति ख्यातः क्षितौ हन्ति च ।
वातव्याधिनिकृन्तनः कफकृतान् कुष्ठान्विशेषानयम् ॥
हन्तीति ज्वरमुग्ररूपमधिकं दाहाभिधानामयम् ।
कुर्याद्रूपमनङ्गरङ्गगुणभृद् भृंगास्पदं विग्रहम् ॥
एवं समासात्कुरुते समानं पथ्यं च तथ्यं सकलं करोति ।
भुञ्जीत भक्तं सततं प्रयुक्तं घृतं शृतं वा विकृतं तदेव ॥
स्वच्छन्ददुग्धेन सुखेन जग्धं पथ्यं तदेतत्प्रवदन्ति सन्तः ।
कुष्ठं तु दुष्टं च निराकरोति गात्रं च कुर्याच्छुभगन्धयुक्तम् ॥

शुद्ध हरताल १५ भाग, शुद्ध गन्धक ६ भाग नवीन इमली ७ या ८ भाग और करेला १० भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके सेहुण्ड (थूहर—सेंड) और आकके दूध तथा रुहेड़ेकी जड़के क्वाथ की १—१ भावना देकर १—१ टङ्ककी गोलियां बना लें।

इनमें से १ गोली खाकर ऊपरसे थोड़ा स्वच्छ शीतल जल पीना चाहिये और उसके पश्चात् कपूर युक्त पान खाकर सो रहना चाहिये। उठने पर यदि शरीर स्वस्थ हो और मुख विरस न हो तो बकरीका दूध पीना चाहिये।

इसी प्रकार नित्य प्रति कुछ दिनों तक यह औषध सेवन की जाय तो नीला, पीला, लाल, सफेद, अत्यन्त, प्रवृद्ध और कृमियों से परिपूर्ण आदि समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट हो जाते हैं।

यह रस समस्त वातव्याधियों को और विशेषतः कफज कुष्ठोंको नष्ट करता है।

इसके अतिरिक्त यह भयङ्कर सन्ताप युक्त ज्वरको भी नष्ट करता है।

इसके सेवनसे समस्त कुष्ठ नष्ट होकर शरीर अत्यन्त स्वरूपवान हो जाता है।

पथ्य—घृत, भात और दूध अथवा केवल दूध।

भूतभैरवरसः (२)

(र. का. धे. । अपस्मारा. ५; धन्व. । अपस्मारा. भा. प्र. म. खं.; र. रा. सु.; रसे. सा. सं.; र. र.; यो. र. । अपस्मारा.; वृ. यो. त. । त. ८८; वृ. नि. र. । उन्मादा.; यो. त. । त. ३९)

चण्डभैरवरस प्रयोग संख्या १८७२ देखिये। कुछ ग्रन्थोंमें तो इस भूतभैरवका पाठ बिलकुल उसके समान ही है और कुछ में रसाञ्जनके स्थान में स्रोतोऽञ्जन और गोमूत्रके स्थानमें मनुष्यका मूत्र लिखा है तथा सेवन—विधि इस प्रकार लिखी

है:—इसमें से १ माशा रस घीके साथ खिलाकर ऊपरसे सोंठ, मिर्च, पीपल, हींग, घी, मनुष्यका मूत्र और काला नमक मिलाकर पिलावें। इसे भूतोन्मादमें धतूरेके ५ नग बीजोंको घीमें मिलाकर उसके साथ खिलाना चाहिये।

(४९६०) भूताङ्कुशरसः (१)

(र. र.; र. रा. सु.[१] । कासा.; यो. चि. म. । अ. ७; र. र. स. । उ. अ. १३; र. का. धे.[२] । कासा.)

शुद्धसूतस्य भागैकं द्वि भागं शुद्धगन्धकम् ।
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागकम् ॥
मृताभ्रस्य चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत् ।
भूताङ्कुशस्य भागैकं सर्वमम्लेन भावयेत् ॥
सोयं भूताङ्कुशो नाम यामैकं वातकासजित् ।
अनुपानं लिहेत्क्षौद्रैर्विभीतकफलत्वचम् ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, ताम्रभस्म २ भाग, काली मिर्चका चूर्ण १० भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग. और शुद्ध बछनाग तथा धतूरेके बीजोंका चूर्ण १—१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको नीबूके रसमें घोटकर १—१ रत्ती की गोलियां बना लें।

इनमेंसे ३—४ गोली खाकर ऊपरसे बहेड़ेकी छालका चूर्ण शहदमें मिलाकर चाटनेसे वातज खांसी १ पहरमें ही नष्ट हो जाती है।

१—र. रा. सु. और र. र. स. में गंधक १ भाग, ताम्रभस्म ३ भाग और कालीमिर्च ५ भाग लिखी हैं।

२—रसकामधेनुमें गन्धक १ भाग और ताम्र ३ भाग लिखा है।

(४९६१) भूताङ्कुशरसः (२)

(र. र.; र. सा. सं.; र. रा. सु.; भै. र.;[१] र. च.; धन्व. । उन्मादा.)

सूतायस्ताम्रमभ्रञ्च मुक्तां चापि समं समम् ।
सूतपादोत्तमं वज्रं शिलागन्धकतालकम् ॥
तुत्थं रसाञ्जनं शुद्धमब्धिफेनं शिलाञ्जनम् ।
पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मितम् ॥
भृङ्गराजचित्रवज्रीदुग्धेनापि विमर्दयेत् ।
दिनान्ते पिण्डिकां कृत्वा रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥
भूताङ्कुशो रसो नाम नित्यं गुञ्जाद्वयं लिहेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनापि भूतोन्मादनिवारणम् ॥
पिप्पल्याक्तं पिबेच्चानु दशमूलकषायकम् ।
स्वेदयेत्कटुतुम्ब्या च तीक्ष्णं रूक्षञ्च वर्जयेत् ॥
माहिषञ्च घृतं क्षीरं गुर्वन्नमपि भक्षयेत् ।
अभ्यङ्गः कटुतैलेन हितो भूताङ्कुशे रसे ॥

शुद्ध पारद, लोहभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म और मोतीभस्म १—१ तोला, हीराभस्म ३ माशे और शुद्ध मनसिल, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, शुद्ध तूतिया, रसौत, समुद्रझाग, काला सुरमा, सेंधानमक, सञ्चल (काला नमक), बिडलवण, समुद्र नमक, और सांभरनमक १—१ तोला लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १—१ दिन भंगरेके रस, चीतेके क्वाथ और थूहर (सेंड-सेहुंड) के दूधमें घोटकर गोला बनावें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो औषधको निकालकर पीसलें।

१—भै. र. में. अभ्रकके स्थानमें चांदी भस्म लिखी है।

इसमेंसे २ रत्ती औषध अद्रकके रसके साथ चटाकर ऊपरसे पीपलका चूर्ण मिलाकर दशमूलका क्वाथ पिलानेसे उन्मादरोग नष्ट हो जाता है।

इस रसके सेवनकालमें रोगीको कड़वी तूंबीके क्वाथकी भाप देनी चाहिये।

पथ्य—भैंसका घी और दूध तथा भारी पदार्थ खाने चाहियें और शरीरपर सरसोंके तैलकी मालिश करनी चाहिये।

अपथ्य—तीक्ष्ण और रूक्ष पदार्थोंका त्याग करना चाहिये।

(४९६२) भूदारो रसः

(र. र. । शूला)

शुद्धसूतं समं गन्धं मृताकारो मनःशिला।
सैन्धवं माक्षिकं तालं धत्तूरं हिङ्गु सूरणम् ॥
महाराष्ट्र्यर्कनिर्गुण्डीवासैरण्डद्रवैर्दिनम्।
मर्द्यं रुद्ध्वा पुटे पच्यात् कुक्कुटाख्ये समुद्धरेत् ॥
अष्टगुञ्जां लिहेत्क्षौद्रैर्भूदारो वातशूलजित्।
हिङ्गु सौवर्चलं शुण्ठीमक्षमुष्णाम्बुनाप्यनु ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, मुण्डलोहभस्म, शुद्ध मनसिल, सेंधा नमक, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध हरताल, धतूरेके शुद्ध बीज, भुनी हुई हींग और जिमीकन्द समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १-१ दिन जलपीपल, आक, संभालू, वासा और अरण्ड के रसमें घोटकर गोला बनावें और उसे शरावसम्पुट में बन्द करके कुक्कुटपुटमें फूंक दें एवं उसके स्वांगशीतल होनेपर औषधको निकालकर पीसकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें से १ माशा औषध शहदके साथ चाटकर ऊपरसे हींग, सञ्चल (काला नमक), सोंठ और बहेड़ाका चूर्ण गर्म पानीके साथ पीनेसे वातज शूल नष्ट होता है।

(४९६३) भूनिम्बादिगुटी

(वृ. नि. र. । पाण्डु.)

भूनिम्बाब्दपटोलनिम्बकटुकादार्वीविडङ्गामृता-
वासाक्षामलकाभयामरकणाविश्वौषधैश्चूर्णितैः।
तुल्यैः पर्पटचूर्णितैः सदहनैः सल्लोहचूर्णार्द्रकैः
कर्तव्या मधुसंयुता च गुटिका पाण्डवामयग्राहहा ॥

चिरायता, नागरमोथा, पटोल (परवल), नीमकी छाल, कुटकी, दारुहल्दी, बायबिडंग, गिलोय, वासा, बहेड़ा, आमला, हर्र, देवदारु, पीपल सोंठ, पित्तपापड़ा, और चीतेकी जड़का, चूर्ण तथा लोहभस्म समान भाग लेकर सबको अदरकके रसमें घोटकर (२-२ माशेकी) गोलियां बना लें।

इन्हें शहदके साथ सेवन करनेसे पाण्डुरोग नष्ट होता है।

(४९६४) भेकराजरसादिमोदकः

(वै. म. र. । पटल ९)

भेकराजरसैः सुभावितलोहयुक्तवराऽरज-
स्तुल्यभागवटच्छदोद्भवभस्म चाप्यभया पुनः ॥
षट्पदोत्थरसेन पेषितमक्षमात्रविनिर्मितम्।
पिण्डमस्यति पाण्डुरोगमुदश्विता सह सेवितम् ॥

लोहभस्म और त्रिफलेका चूर्ण समान भाग लेकर दोनोंको भंगरेके रसमें घोटकर उसमें दोनोंके बराबर बड़के पत्तोंकी भस्म और उतना ही हर्रका चूर्ण मिलाकर पुनः भंगरेके रसमें घोटकर १।-१। तोलेके गोले बनावें।

इन्हें उदश्वित (दहीमें बराबर भाग पानी मिलाकर बनाये हुवे तक्र) के साथ सेवन करनेसे पाण्डुरोग नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा ३–४ माशे)

भैरवनाथी पञ्चामृतपर्पटी

(र. रा. सु.; र. र. स.)

पञ्चामृतपर्पटी प्रयोग संख्या ४२८२ देखिये ।

(४९६९) भैरवरसः (१)

(भै. र. । उपदंशा.)

शुद्धसूतं ग्रहीतव्यं दशगुञ्जकमात्रकम् ।
त्रिगुणां शर्करां लौहे निम्बदण्डेन मर्दयेत् ॥
याममात्रं तत्र दद्याच्छ्वेतं खदिरचूर्णकम् ।
सूततुल्यं ततः कुर्यान्मर्दनात् कज्जलोपमम् ॥
विंशतिर्वटिकाः कार्याः स्थाप्याः गोधूमचूर्णके ।
निःशेषं निःसृता ज्ञात्वा पिडकास्ताः कलेवरे ॥
भैरवं देवमभ्यर्च्य बलिं तस्मै प्रदाय च ।
विधाय योगिनीपूजां दुर्गामभ्यर्च्य यत्नतः ॥
वटिकास्ताः प्रयोक्तव्या भिषजा जानता क्रियाम् ।
दिवसत्रितयं दद्यात्तिस्रस्तिस्रो विजानता ॥
चतुर्थाहात्समारभ्य एकामेकां प्रयोजयेत् ।
एवं चतुर्दशदिनैर्नीरोगो जायते नरः ॥
पथ्यं शर्करया सार्द्धमुष्णान्नं घृतगन्धि च ।
कुर्यात्साकांक्षमुत्थानं सकृद्भोजनमिष्यते ॥
जलपानं जलस्पर्शं न कदा च न कारयेत् ।
दुःसहायान्तु तृष्णायामिक्षुदाडिमकादिकम् ॥
शौचकार्येऽप्युष्णवारि वाससा प्रोञ्छनं द्रुतम् ।
वातातपाग्निसम्पर्कं दूरतः परिवर्जयेत् ॥
मेघागमे वा शीते वा कार्यमेतद्विजानता ।
मुखरोगे तु संजाते मुखरोगहरी क्रिया ॥
श्रमाध्वभाराध्ययनस्वमानस्माद्विवर्जयेत् ।
ताम्बूलं भक्षयेन्नित्यं कर्पूरादिसुवासितम् ॥
क्रिया श्लेष्महरी युक्ता वातपित्ताविरोधिनी ।
लवणं वर्जयेदम्लं दिवानिद्रां तथैव च ॥
रात्रौ जागरणञ्चैव स्त्रीमुखालोकनं तथा ।
सप्ताहद्वयमुत्क्रम्य स्नानमुष्णाम्बुना चरेत् ॥
व्यायामाद्यं वर्जनीयं यावन्न प्रकृतिर्भवेत् ।
एवं कृतविधानस्तु यः करोत्येतदौषधम् ॥
स एव पापरोगस्य पारं याति जितेन्द्रियः ।
पिडका विलयं यान्ति बलं तेजश्च वर्द्धते ॥
रुजा च प्रशमं याति ग्रन्थिशोथश्च शाम्यति ।
अस्थ्नां भवति दार्ढ्यञ्च आमवातश्च शाम्यति ॥
भैरवेण समाख्यातो रसोऽयं भैरवः स्वयम् ॥

शुद्ध पारा १० रत्ती और खांड ३० रत्ती; इन्हें एकत्र लोहपात्र में नीम के डण्डे से १ प्रहर घोटें । जब पारद के कण न दिखाई दें तब उसमें १० रत्ती श्वेत कत्थे का चूर्ण मिलाकर मर्दन करें । मर्दन करते २ जब कज्जल के समान होजाय तब उस सबकी बीस गोली बनावें । इन गोलियों को गेहूं के आटे में रखदें । जब यह देखें कि उपदंशज विष के कारण शरीर पर सम्पूर्ण पिडकायें निकल आई हैं तब भैरव की पूजा करें तथा बलि दें । इसी प्रकार योगिनी तथा दुर्गाकी पूजा करके तत्काल इन गोलियों का यथाविधि प्रयोग करावें । प्रथम तीन दिन तक प्रतिदिन तीन तीन गोलियां सेवन करावें । चौथे दिन से प्रतिदिन एक २ गोली खिलावें । इस प्रकार १४ दिन करने से मनुष्य नीरोग हो जाता है । पथ्य–खांड तथा अल्प घृतयुक्त उष्ण अन्न । यह भोजन भी

१ बार करना चाहिये। रोगी इस औषध के सेवन करते हुए कभी जलपान तथा जल को स्पर्श भी न करे। अत्यन्त असह्य प्यास लगनेपर गन्ने का रस अथवा मीठे अनार का रस पीने को देना चाहिये। उष्णजल द्वारा शौच क्रिया करके तत्क्षण वस्त्र द्वारा गुदा को शुष्क कर देना चाहिये। वातसेवा, आतप (धूप) सेवा तथा अग्नि सेवा (आग सेंकना); अत्यन्त निषिद्ध हैं। वर्षाऋतु या शीतऋतु में इस औषध का सेवन कराना उत्तम है। इसके सेवन से यदि मुखरोग होजाय तो तन्नाशक क्रिया करनी चाहिये। परिश्रम, अधिक चलना, भार उठाना, पढ़ना तथा दिन में सोना वर्जित है। सदा कपूर आदि से सुगन्धित ताम्बूलपत्र (पान) को चबाना चाहिये। इसमें श्लेष्म को हरने वाली परन्तु वातपित्तकी अविरोधिनी चिकित्सा करनी चाहिये। नमक, अम्लद्रव्य, दिन में सोना, रात्रिजागरण तथा मैथुन आदिका परित्याग करना उचित है। चौदह दिन औषध के अनन्तर रोगी गरम जल से स्नान करे। मात्रा में हितकर भोजन करे। परन्तु जब तक रोगी प्रकृतिस्थित (पूर्ण निरोग) न हो तब तक व्यायाम आदि निषिद्ध है। इस प्रकार नियमानुसार जो जितेन्द्रिय औषध सेवन करता है उसके उपदंश तथा तज्जनित पिड़का, वेदना, ग्रन्थिशोथ तथा आमवात आदि रोग नष्ट होते हैं। अस्थियां दृढ़ हो जाती हैं और बल एवं तेज की वृद्धि होती है।

(४९६६) भैरवरसः (२)

(र. र. रसा. ख. । उपदे. १)

सुवर्णं पारदं कान्तं मृतं सर्वं समं भवेत्।
शतावर्याः शिफाद्रावैर्भावयेद्दिवसत्रयम् ॥
त्रिदिनं त्रिफलाकाथैर्भृङ्गद्रावैर्दिनत्रयम्।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां भक्षयेद्भैरवं रसम् ॥
माषैकैकं वर्षमात्रं जीवेचन्द्रार्कतारकम्।
मूलचूर्णं शतावर्याः कृष्णाजपयसा युतम् ॥
पलैकैकं पिबेचानु क्रामकं परमं हितम् ॥

सुवर्णभस्म, पारदभस्म और कान्तलोहभस्म बराबर बराबर लेकर सबको ३-३ दिन शतावर, त्रिफला और भंगरेके रसमें घोटकर सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें से नित्य प्रति १ माषा रस शहद और घीके साथ १ वर्ष तक सेवन करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है।

औषध खानेके बाद ५ तोले शतावरका चूर्ण कालीबकरीके दूधके साथ सेवन करना चाहिये।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती। शतावरीके चूर्णकी मात्रा ३ माशे।)

(४९६७) भैरवरसः (३)

(र. चि. म. । स्तव. ७)

शुद्धं रसं समाहृत्य वेदमात्रपलं शुभम्।
अभ्रकं गन्धकं चैव तावन्मात्रं प्रदापयेत् ॥
श्वेतं सौवीरकं चापि चतुर्भागं च सैन्धवम्।
जम्बीरस्य च नीरेण मर्दयेत्सर्वमेकतः ॥
निक्षिप्य काचकूप्यां तन्निरुध्य चाति यत्नतः।
वालुकाभिः समापूर्य याममात्रं ततः परम् ॥
अग्निं च कुरुते मध्यं ततः शीतं समुद्धरेत्।
कनकस्य पलं पश्चात्पत्रं सूक्ष्मं विधाय तत् ॥
माक्षिकस्य पलं चात्र गन्धकस्य चतुष्टयम्।
द्वयमेकत्र तत्कृत्वा गन्धकं माक्षिकं तथा ॥

हेम्नः पत्रं च तन्मध्ये धृत्वा रुद्ध्वा शरावके ।
उपर्यपि भवेच्चान्यः शरावः सन्धिमुद्रितः ॥
कुञ्जराख्यः पुटो मुख्यस्तत्र देयः सुसंयतः ।
स्वाङ्गशीतं तदादाय भस्मीभूतं च काञ्चनम् ॥
सूक्ष्मं तच्चापि सञ्चूर्ण्य पूर्वसूतेन मेलयेत् ।
ज्वालामुखीरसैः सूतं मर्दयेदेकतः कृतम् ॥
ततो गव्येन हविषा रसं च मर्दयेद्दृढम् ।
कृत्वा तद्गोलकं सर्वं मृन्मूषान्तर्गतं च तत् ॥
विमुद्र्य सकलं भाण्डे मृन्मये तत्र दीयते ।
अग्निं हि वालुकाभिस्तं दिनसप्तावधिर्यथा ॥
अग्निं तत्र शनैः कुर्याच्छीतमादाय पारदम् ।
विचूर्ण्य रक्ष्यते भाण्डे राजते वाथ काञ्चने ॥
गुञ्जामेकामतो दद्यात्प्रतिवासरमुत्तमम् ।
कासे श्वासे ज्वरे मेहे गुल्मे दुष्टक्षये तथा ॥
व्योषेण मधुना साकं रसं गुग्गुलुनाऽथवा ।
घृतेन सह दातव्यः कुष्ठे क्वाथं वराभवम् ॥
अग्निमान्द्ये च दातव्यो रक्तरोगे महारसः ॥

(१) २० तोले शुद्ध पारा, २० तोले अभ्रकभस्म, २० तोले शुद्ध गन्धक, २० तोले सफेद सुरमा और २० तोले सेंधा नमक लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको १ दिन जम्भीरी नीबूके रसमें घोटकर कपडमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और उसे बालुका यन्त्रमें रखकर १ पहरकी मध्यम अग्नि दें । तत्पश्चाद् शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसमें से औषधको निकाल लें ।

(२) १ पल सोनामक्खी और ४ पल (२० तोले) गन्धकका बारीक चूर्ण करके उसके बीच में ५ तोले सोनेके अत्यन्त बारीक वर्क रखकर शरावसम्पुट में बन्द करके गजपुटमें फूंक दें । जब पुट स्वांग शीतल हो जाय तो सोनेकी भस्मको निकाल लें ।

(३) उपरोक्त दोनों औषधों अर्थात पारदवाले योग और स्वर्ण भस्मको पृथक् पृथक् खरल करके एकत्र मिलावें और फिर उसे हुलहुल तथा गायके घीमें १-१ दिन घोटकर गोला बनाकर मिट्टीकी मूषामें बन्द करें और उसे बालुकायन्त्र में रखकर उसके नीचे ७ दिन तक मन्दाग्नि जलावें । तदनन्तर यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकालकर पीसकर सोने या चांदीके पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे १ रत्तीकी मात्रानुसार त्रिकुटेके चूर्ण और शहदके साथ अथवा शुद्ध गूगलके साथ सेवन करनेसे खांसी, श्वास, ज्वर, प्रमेह, गुल्म और दुष्ट क्षय तथा अग्निमांद्यका नाश होता है ।

इसे घृतके साथ खिलाकर ऊपरसे त्रिफलाका क्वाथ पिलानेसे कुष्ट और रक्तविकार नष्ट होते हैं ।

(४९६८) **भैरवरसः** (४)

(र. रा. सु.; धन्व.; र. चं.; रसे. सा. सं.; भै. र. । स्वरभेदा.)

रसं गन्धं विषं टङ्कं मरिचं चव्यचित्रकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव सम्मर्द्य वटिकां ततः ॥
गुञ्जात्रयप्रमाणेन खादेत्तोयानुपानतः ।

स्वरभेदं निहन्त्याशु श्वासं कासं सुदुस्तरम् ॥*

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग विष, सुहागेकी खील, काली मिर्च तथा चव और चीतेका चूर्ण समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको अद्रकके रसमें घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें पानीके साथ सेवन करनेसे कष्टसाध्य स्वरभेद तथा श्वास और खांसीका नाश होता है।

भैरवरसः (५)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

"त्रिपुरभैरव रस" प्र. सं. २७३६ देखिये।

(४९६९) **भैरवरसः** (६) (भैरवी वटी)

(र. रा. सु. । श्वासा.)

पिप्पली मरिचं चैव टङ्कणं दरदं तथा ।
शुद्धं मनःशिला गन्धं हरितालं तथैव च ॥
विशुद्धं पारदं प्रोक्तं तथा शुद्धं विषं स्मृतम् ।
रौप्यभस्म चाभ्रकञ्च पलमान पृथक् पृथक् ॥
चूर्णं सूक्ष्म विधायाथ भावयेत्तु रसैः पुनः ।
कदलीमूलकं चित्रं धत्तूरस्य च मूलकम् ॥
पृथक् पृथक् पलमितं कुट्टयित्वा जले क्षिपेत् ।
शोडषांशे क्वाथयित्वा वस्त्रपूतं समाचरेत् ॥
खल्वे क्षिप्त्वा भावयेत्तु कुर्यान्मुद्गनिभां वटीम् ।
भैरवाख्या वटी ख्याता रसशङ्करसञ्ज्ञिता ॥
कासश्वासौ निहन्त्येषा सर्वव्याधिविनाशिनी ॥

पीपल, काली मिर्च, सुहागेकी खील, शुद्ध शंगरफ, शुद्ध मनसिल, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, शुद्ध पारद, शुद्ध बछनाग, चांदीभस्म और अभ्रक भस्म ५-५ तोले लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियों का बारीक चूर्ण मिलावें। तत्पश्चात् ५-५ तोले केलेको जड़, चीतामूल और धतूरेकी जड़को पृथक् पृथ कूटकर सबको ३ सेर पानीमें पकावें और ३ पाव पानी शेष रहने पर छानकर उसमें उपरोक्त रसको घोटकर मूंगके बराबर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे खांसी और श्वास तथा अन्य बहुतसे रोग नष्ट होते हैं।

(४९७०) **भैरवसिद्धिरसः**

(र. का. धे. । ज्वर. अ. १)

आदौ नागरसस्य योगविधया गद्याणकौ निक्षिपे-
देकैकं विषशुल्वलोहगगनादीनां च गद्याणकम् ।
एभिर्जातिदलस्य वासकरसैर्भृङ्गैः कृतं सप्तधा
सिद्धः सिद्धिधरस्त्रिदोषशमनः स्वामी रसो भैरवः ॥
अस्य वल्लद्वयं जातीफलेन सलिलेन च ।
दत्त्वा स्नानं सितायुक्तं दधिभक्तं हितं भवेत् ॥

सीसाभस्म २ भाग तथा शुद्ध बछनाग, ताम्रभस्म, लोहभस्म और अभ्रकभस्म १-१ भाग लेकर सबको चमेलीके पत्ते, बासा और भंगरेके

---

* र. रा. सु. तथा र. चं. में कर्णरोगमें कथित इसी नामके दूसरे रसमें चव्य चित्रकके स्थानमें कौड़ी भस्म लिखी है तथा गुण इस प्रकार लिखे हैं:—

वह्निमांद्यं चामरोगं श्लेष्माणं ग्रहणीगदम् ।
सन्निपातं तथा शोथं हन्ति श्रोत्रोद्भवं गदम् ॥

अर्थात् इसके सेवनसे अग्निमांद्य, आमरोग, कफ, ग्रहणी, सन्निपात, शोथ और कर्णरोगोंका नाश होता है।

रसकी सात सात भावना देकर सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसमेंसे ६ रत्ती दवा जायफलको पानीमें घिसकर उसके साथ देनेसे भयङ्कर सन्निपात ज्वर नष्ट होता है ।

ज्वर छूटनेके पश्चात् रोगीको स्नान कराके दहीभातमें खांड मिलाकर खिलावें ।

(४९७१) भैरवी गुटिका

(र. रा. सु. । ज्वरा.; र. का. धे. । आगन्तुक ज्वरा.; वृ. नि. । सन्निपाता.)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मर्दयेद् भिक्षुकद्रवैः।
दिनं भाव्यं च मर्द्यं च शोषयित्वा तु भृङ्गिजैः॥
चतुर्धा भावयेद्द्रावैस्तिलपर्ण्या द्रवैश्च तत्।
भावनाभिश्च शोष्याथ चूर्णयेद्वस्त्रगालितम्॥
चूर्णतुल्यं मृतं ताम्रं ताम्रादष्टांशकं विषम्।
कृष्णासिताविडङ्गानि कृष्णजीराशनं बला॥
ताम्रार्द्धं प्रतिचूर्णं स्यात् सर्वमेकत्र कारयेत्।
यामैकं भृङ्गिजैर्द्रावैर्मर्दयेत्कल्कतां गतम्॥
स्निग्धभाण्डगतं पाच्यं पिण्डं यावत् कृशाग्निना।
चणकाभा वटी योज्या चित्रकार्द्रकसैन्धवैः॥
सम्यक् त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
भैरवी गुटिका ख्याता दध्यन्नं पथ्यमाचरेत्॥

शुद्ध पारा १ भाग तथा शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर दोनोंकी कज्जली बनाकर उसे १ दिन तालमखानेके रसमें घोटकर सुखा लें और फिर भंगरे तथा हुलहुलके रसकी ४-४ भावना देकर सुखा कर अच्छी तरह खरल करके कपड़छन चूर्ण बनावें। तदनन्तर उसमें उसके बराबर ताम्रभस्म और ताम्रका आठवां भाग शुद्ध बछनाग तथा पीपल, मिसरी, बायबिड़ंग, काला जीरा, असनावृक्षकी छाल और खरैटीमें से प्रत्येकका चूर्ण ताम्रसे आधा मिलाकर सबको १ पहर भंगरेके रसमें घोटकर पिट्ठीसी बना लें और फिर उसे चिकने पात्रमें रखकर मन्दाग्निपर इतना गर्म करें कि गोली बनाने लायक हो जाय। तब चनेके बराबर गोलियां बनाकर सुखा लें।

इन्हें चीता आर सेंधा नमकके चूर्ण तथा अदरकके रसके साथ खिलानेसे भयङ्कर सन्निपात ज्वर नष्ट होता है ।

पथ्य—दही भात ।

(४९७२) भैरवी वटी

(र. रा. सु. । अजीर्णा.)

तिन्तिडीकं विषं शुद्धं दग्धशङ्खं नियोजितम्।
जातीफलं त्रुटियुतं सर्वमेकत्र कारयेत्॥
रसगन्धं समरिचं निम्बूरसविमर्दितम्।
चित्रकेन तु वारैकं वटिका माषमात्रका॥
देया यत्नेन सततं नाम्ना मन्दाग्निभैरवी।
कासे श्वासे प्रतिश्याये विषरोगादिके ज्वरे॥
सर्वरोगेषु विख्याता वटी भैरव सञ्ज्ञिता॥

तिन्तड़ीक, शुद्ध बछनाग विष, शंखभस्म, जायफल, छोटी इलायचीके बीज, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और काली मिर्च समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको नीबूके रस तथा चीतामूलके काथकी १-१ भावना देकर १-१ माशेकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अग्निमांद्य, खांसी, श्वास, प्रतिश्याय, विष और ज्वरादि अनेक रोग नष्ट होते हैं।

(४९७३) **भोगपुरन्दरी गुटिका**

(र. सं. क.। उल्लास ५; वृ. यो. त.। त. १४७)

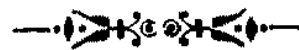
हिङ्गुलं च चतुर्जातं लवङ्गौषधचन्दनम्।
जातिजं केसरं कृष्णा त्वाकल्लमहिफेनकम्॥
कस्तूरीन्दु समं सर्वं तत्समे विजयासिते।
क्षौद्रात्कोलमिता कार्या गुटी भोगपुरन्दरी॥
शुक्रस्तम्भकरी ह्येषा बलमांसविवर्धिनी।
नरश्चटकवद्गच्छेच्छतवारं स्थिरेन्द्रियः॥

शुद्ध हिंगुल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, लौंग, सोंठ, सफेद चन्दन, जायफल, केसर, पीपल, अकरकरा, अफीम, कस्तूरी और कपूर १-१ भाग, मिश्री ७॥ भाग और भंग ७॥ भाग लेकर सबका महीन चूर्ण करके उसे शहदमें घोटकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलियां बना लें।

ये गोलियां शुक्रस्तम्भक, बलमांस वर्द्धक और अत्यन्त वाजीकरण हैं। इनके सेवनसे मनुष्य चिड़ेके समान एक ही समयमें अनेकबार स्त्री समागम कर सकता है।

इति भकारादिरसप्रकरणम्।

अथ भकारादिमिश्रप्रकरणम्।



(४९७४) **भल्लातकामृतम्**

(वृ. नि. र.। ग्रहणी.)

भल्लातकचतुःषष्टिपलं दुग्धं च तत्समम्।
दुग्धाच्चतुर्गुणं वारि पाच्यं दुग्धावशेषकम्॥
दुग्धतुल्यं घृतं योज्यं घृतपादं सितां क्षिपेत्।
मधुधात्री सितातुल्यं सितार्धमभयारजः॥
मृतलोहं गुडूची च प्रत्येकमभयार्धकम्।
क्षिपेत्स्निग्धघटे सर्वं धान्यराशौ निवेशयेत्॥
सप्ताहादुद्धृतं तत्तु खादेन्निष्कत्रयं त्र्यहम्।
भल्लातकामृतं नाम हन्ति रक्तार्शसां किल॥
क्षारं तीक्ष्णं न भोक्तव्यं तैलाभ्यङ्गं च वर्जयेत्॥

शुद्ध भिलावे ६४ पल (४ सेर), दूध ८ सेर और पानी ३२ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब दूधमात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें ८ सेर घी और १ सेर मिश्री मिलाकर पुनः पकावें और जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें १ सेर शहद, १ सेर आमलेका चूर्ण, आधासेर हर्रेका चूर्ण तथा पाव पाव सेर (२०-२० तोले) लोहभस्म और गिलोयका सत मिलाकर सबको चिकने घड़ेमें भरकर उसका मुख बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें और सात दिन पश्चात् निकालकर काममें लावें। इसे १।

तोलेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे रक्तार्श अवश्य नष्ट हो जाती है ।

इसके सेवनकालमें क्षार और तीक्ष्ण पदार्थों से परहेज करना चाहिये तथा शरीरपर तैलमर्दन न करना चाहिये ।

(४९७५) भैरवरसायनम्

(र. का. धे. । ज्वर. अ. १; वृ. नि. र; यो. र. । अपस्मारा.)

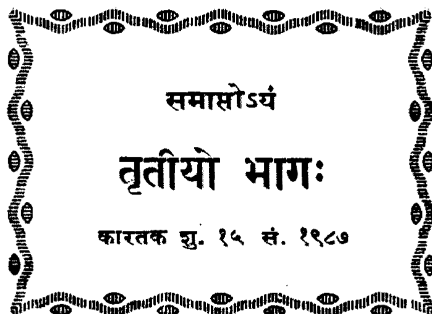
समुद्रफलरुद्राक्षमरिचं नागरं कणा ।
गोलोमी बृहतीबीजं सैन्धवं लशुनं तथा ॥
मधूकसारं तुल्यांशं बस्तमूत्रेण मर्दयेत् ।
सन्निपातं प्रशमयेद्भैरवोक्तं रसायनम् ॥

समुद्रफल, रुद्राक्ष, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल, बच, कटेलीके बीज, सेंधा नमक, ल्हसन तथा महुवेका सार समान भाग लेकर सबका महीन चूर्ण करके उसे बकरेके मूत्रमें घोटकर (३-३ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे सन्निपात और अपस्मार नष्ट होता है ।

इति भकारादिमिश्रप्रकरणम् ।

इत्यो३म्



समाप्तोऽयं

तृतीयो भागः

कारतक शु. १५ सं. १९८७

चिकित्सा-पथ-प्रदर्शिनी

अर्थात्

भारत-भैषज्य-रत्नाकर

(तृतीय भागकी)

रोगानुसारिणी सूची

आप

इस पथ-प्रदर्शिनी की सहायतासे कमसे कम निम्न लिखित लाभ अवश्य उठा सकते हैं।

(१) इसकी सहायतासे आप मालूम कर सकते हैं कि शास्त्रोंमें जो एक एक रोगके बहुतसे प्रयोग लिखे हैं उनमेंसे हरेकमें क्या विशेषता है।

(२) यह आपको बतलाएगी कि किस रोगकी किस अवस्था और किन लक्षणोंमें कौन प्रयोग अधिक उपयोगी है।

(३) यदि समय पर आपको किसी रोगके किसी प्रयोगका नाम विस्मृत हो जाय तो वह इसके पृष्ठों पर दृष्टि डालतेही तत्काल याद आ जायगा क्यों कि इसमें एक एक रोगके समस्त प्रयोगों के नाम एकही स्थान पर संग्रहीत हैं।

(४) इसमें क्वाथ चूर्ण, अवलेह, रसादि के प्रकरण पृथक् पृथक् होनेके कारण आप हरेक रोगीकी परिस्थितिके अनुसार इसकी सहायतासे आसानीसे औषध व्यवस्था कर सकते हैं।

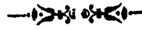
(५) किसी रोगीके लिये औषध व्यवस्था करनेके लिये अन्य किसी पुस्तक के एक पूरे अध्यायको पढ़नेसे जो लाभ होना सम्भव है वह इसके एक दो पृष्ठोंपर केवल १ दृष्टि डाल लेने से ही हो सकता है।



अनुक्रमणिका



चिकित्सा-पथ-प्रदर्शिनी



(१) अजीर्ण तथा अग्निमान्द्याधिकारः

कषाय-प्रकरण

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
२८१८	दन्त्यादि कल्कः	विसूचिका।
२८७५	दीपनीय महाकषायः (चरक)	दीपन
३२३६	धवादि क्वाथः	विषूचिकाका शूल, आम।
३३९८	निम्बुरसादिप्रयोगः	विसूचिका, वमन, तृषा।
४५८१	बिल्वादि क्वाथः	छर्दि, विसूचिका।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
२९५७	दाडिमाद्यं चूर्णम्	अग्निमांद्य, गुल्म, ग्रहणी, अफारा, पार्श्व शूल।
३८८०	पञ्चकोलचूर्णयोगः	मन्दाग्नि, आम, अरुचि।
३८८३	पञ्चमूल चूर्णम्	अग्निमांद्य, शूल, अरुचि।
३८८८	पञ्चाग्नि चूर्णम्	अग्निको दीप्त करता है।
३८९९	पथ्यादि „	अजीर्ण, शूल, विसूचिका।
३९०१	„ „	अग्निको दीप्त करता है।
३९०७	पथ्याद्यं चूर्णम्	४ प्रकारका अजीर्ण, अग्निमांद्य, अफारा, अरुचि, शूल।
४६२३	बिडलवणादिचूर्णम्	अत्यन्त पाचक।
४८२७	भस्मार्क चूर्णम्	आढ्यवात, अजीर्ण, विसूचिका, आनाह, पाण्डु आदि।
४८३३	भास्करलवणचूर्णम्	तिल्ली, उदर, ग्रहणी, शूल, आम, अग्निमांद्य आदि।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३२८१	धनञ्जय वटी	अजीर्ण, शूल तथा आध्मान नाशक, रोचक, दीपक।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३०२८	द्राक्षादि प्रयोगः	विदग्धाजीर्ण।
४८६८	भोजनान्तेऽवलेहः	पाचक, स्वादिष्ट।

घृतप्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३०४४	दशमूलादिघृतम्	अग्निमांद्य, ग्रहणी, विष्टम्भ, आम।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२९५	धान्यक घृतम्	अग्निवर्द्धक तथा कफ, आमशूल, गुदशूल, योनिशूल, उदावर्तादि नाशक।
३२९८	" "	समस्त प्रकारके अजीर्ण।
३२९९	धान्यादि "	अग्निवर्द्धक, रोचक।
४६६५	विडलवणादि "	अग्निमांद्य।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१४२	दारुषटकादिलेपः	आनाह।
४७१६	बृहत्याद्यो योगः	विसूचिका।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६५९	नीलकण्ठ रसः	अग्निमांद्य, शूल।
४२८०	पञ्चामृत चूर्णम्	"
४३०१	" वटी	"
४३२३	पानीयभक्त "	दीपन, आमनाशक।
४३२६	" " "	अग्निमांद्य।
४३२८	" " "	कफज अग्निमांद्य में अत्युपयोगी। शूल नाशक।
४३२९	" " "	वातकफज रोग, अग्निमांद्य, परिणाम शूल।
४३३०	" " "	ग्रहणी, अम्लपित्त, अग्निमांद्य, अरुचि।
४३९५	पाशुपतो रसः	दीपन, पाचन, विसूचिकानाशक।
४४५४	प्रभावतीगुटिका	आम, अजीर्ण, ग्रहणी।
४७४८	बुभुक्षुवल्लभोरसः	पाचक।
४७४९	" " "	"
४७५०	" " "	"
४९३४	भक्तपाक वटी	मलावरोध, आम, अग्निमांद्य, शूल।
४९३५	भक्तविपाकवटी	पुरानी मन्दाग्नि, आम, मलावरोध, वायु।
४९४०	भस्म वटी	अजीर्ण, गुल्म आदि
४९४२	भस्मामृत रसः	अग्निदीपक।
४९४३	" "	"
४९४८	भास्करो "	विसूचिका, अग्निमांद्य।
४९४९	भास्वद वटी	पाचनविकार, अपानवायुका रुकना।
४९५५	मुक्तद्रावी रसः	अत्यन्त पाचक, रोचक।
४९५६	भुक्तोत्तरीयावटी	पुरानी मन्दाग्नि, आम, मलावरोध।
४९७२	भैरवी वटी	अग्निमांद्य, प्रतिश्याय

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२२७	दन्त्यादि वर्तिः	आनाह, उदरशूल।
४५०२	पाचनीय क्षारः	पाचक।

(२) अतिसाराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८५५	दाडिम पुटपाकः	सर्वातिसार ।
२८५९	दाडिमादि कल्कः	अतिसार ।
२८६०	,, ,,	रक्तातिसार ।
२८६१	,, क्वाथः	कष्ट साध्य रक्तातिसार
२८९७	देवदार्वादि ,,	शोकातिसार ।
२९०१	,, ,,	अजीर्ण, अतिसार ।
३२४०	धातक्यादि ,,	सर्वातिसार, बालातिसार ।
३२४२	,, योगः	प्रवाहिका ।
३२६४	धान्य पञ्चकम्	आम, शूल, विबन्ध ।
३२६५	धान्यादि क्काथः	पुराना अतिसार, आम शूल, रक्तातिसार, ज्वर ।
३२६६	,, ,,	दीपन, पाचन ।
३२६७	,, जलम्	तृष्णा, दाह, अतिसार ।
३३५७	नागरादि क्काथः	तृष्णा, शूल, अतिसार।
३७५८	पटोलादि ,,	अतिसार, छर्दि ।
३७६८	पटोलादि सेकः	गुददाह, गुदपाक।
३७७३	पथ्यादि क्काथः	पक्कातिसार ।
३७७४	,, ,,	आमातिसार, शूल ।
३७८०	,, ,,	कफातिसार ।
३८०४	पाठादि ,,	शोथ, अतिसार ।
३८०७	,, ,,	कफ, शूल युक्त आमातिसार ।
३८०८	,, ,,	पित्तकफज अतिसार, ग्रहणी, शूल ।
३८२४	पिप्पली कल्कः	पुरानी प्रवाहिकाको भी ३ दिनमें नष्ट कर देता है ।
३८६६	पूतिकादि ,,	कफातिसार ।
३८६७	,, काथः	वातातिसार ।
३८६८	पूतिदार्वादिकषायः	वातकफातिसार ।
३८६९	पृश्निपर्ण्यादिकाथः	शोकातिसार ।
३८७७	प्रियङ्ग्वादिगणः	पक्कातिसार ।
४५४२	बदरीपल्लवरसयोगः	३ दिनमें रक्तातिसारको नष्ट करता है ।
४५४३	बदरी मूल कल्कः	रक्तातिसार ।
४५४४	बब्बूलपल्लवयोगः	अतिसार ।
४५४६	बब्बूल्यादिस्वरस प्रयोगः	समस्त प्रकारके अतिसार ।
४५५७	बलादि क्षीरम्	अतीसारमें मल क्षय होनेकी दशामें उपयोगी है ।
४५७१	बिल्वादि कषायः	आमयुक्त पित्तातिसार ।
४५७२	,, काथः	वातकफज अतिसार नाशक तथा पाचक
४५७५	,, ,,	कफातिसार नाशक तथा अग्नि और बल वर्द्धक ।
४५८०	,, ,,	अतिसार और छर्दि

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
		को तुरन्त नष्ट करता है।
४५८२	बिल्वादिक्काथः	ज्वरातिसार, शूल।
४५८७	बिल्वादियोगः	रक्तातिसार।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९५८	दाडिमाष्टकचूर्णम्	अतिसार, ग्रहणी, अग्निमांद्य।
२९५९	" "	आमातिसार, अरुचि, ग्रहणी, अग्निमांद्य।
२९६०	" "	अतिसार, ग्रहणी, खांसी, अरुचि।
२९६२	दार्वादि "	वातपित्तातिसार।
३२७१	धातक्यादि "	प्रबल अतिसार।
३४२८	नागरादि प्रयोगः	आमातिसार, शूल।
३४३६	नारायण्य चूर्णम्	रक्तातिसार, शोथ, कष्टसाध्य पुराना अतिसार, ज्वर, खांसी
३८९७	पथ्यादि "	कफातिसार।
३९०३	" "	आमातिसार, कफातिसार।
३९१२	पद्मकादि "	पक्कातिसार।
३९१७	पाठादि "	दाह और पीड़ायुक्त अतिसार।
३९१९	" "	कष्टसासाध्य अतिसार।
३९२१	पाठाद्यं "	कफातिसार।
३९२२	" "	पीड़ायुक्त आमातिसार।
३९४६	पिप्पल्यादि चूर्णम्	वमन विरेचनके मिथ्यायोगसे उत्पन्न हुई प्रवाहिका, अतिसार, शूल, परिकार्तिका।
३९६५	पिप्पल्याद्यं "	आमातिसार, कफातिसार, पित्तातिसार
३९९२	प्रियङ्ग्वाद्यं "	अतिसार, तृष्णा, छर्दि।
४६१३	बब्बूलादियोगः	कफातिसार।
४६२५	बिभीतक फलचूर्णम्	प्रवृद्ध अतिसार।
४६२९	बिल्वगुडादिप्रयोगः	शूलयुक्त प्रवाहिका।
४६३०	बिल्वगुडादि प्रयोगः	प्रवाहिका।
४६३६	बिल्वादि चूर्णम्	कष्ट साध्य अतिसार।
४८२०	भल्लातकादिचूर्णम्	समस्त प्रकारके अतिसार।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३००३	दाडिमीवटी	पक्कातिसार।
३००४	" "	"
३२८२	धातक्यादि मोदकः	समस्त अतिसार।
३४५३	नागराद्यो मोदकः	कफज अतिसार, ग्रहणी, पाण्डु, शोथ, कृमि, अर्श।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४७३	नवनीतावलेह	रक्तातिसार।

घृत–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०४७	दशमूलादिघृतम्	अतिसार, संग्रहणी, पाण्डु ।
३०६०	दारुहरिद्रादि "	त्रिदोषज अतिसार।
३२९६	धान्यक "	पित्तातिसार ।
३४७७	नागरादि "	कफ, ग्रहणी, प्रवाहिका, गुदभ्रंश, आनाह ।
४०७५	पाठाद्यं "	प्रवाहिका, गुदभ्रंश, ग्रहणी, अफारा, वायु ।

तैल–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६९१	बिल्वतैलम्	अतिसार, संग्रहणी, अर्श ।

रस–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१९७	दर्दुर रसः	अतिसार ।
३६३०	नामसुन्दर "	अनेक प्रकारका अतिसार, गुदभ्रंश।
४२८४	पञ्चामृता पर्पटी	पुराना अतिसार, ग्रहणी, अरुचि, छर्दि अग्निमांद्य, ज्वर ।
४४२९	पूर्णचन्द्रोदयरसः	अनेक प्रकारका अतिसार, शूल, संग्रहणी ।

मिश्र–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६७०	नागरादि पेया	रक्तातिसार ।
४५०४	पिच्छा बस्तिः	प्रवाहिका, रक्तस्राव, गुदभ्रंश ज्वर ।
४५०५	" "	पित्तातिसार, बारबार पीड़ाके साथ थोड़ा थोड़ा रक्त आना, अपानवायुका रुकना ।

(३) अपस्माराधिकारः

अवलेह–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०३१	द्राक्षाद्यवलेहः	भयङ्कर अपस्मार, खांसी, क्षय ।

घृत–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०५७	दाधिकं घृतम्	कष्टसाध्य अपस्मार, उन्माद, वातव्याधि
४०४८	पञ्च गव्यं "	अपस्मार, उन्माद, चातुर्थिक ।
४०५०	पञ्चगव्यं घृतम्	अपस्मार, भूतोन्माद, श्वास ।
४०५१	" " "	अपस्मार, ज्वर, खांसी, चातुर्थिक ।
४६७९	ब्राह्मी "	समस्त प्रकारके अपस्मार ।

तैल–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४११८	पलङ्कषाद्यं तैलम्	अपस्मार ।

धूप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४७२१	ब्रह्मसहो धूपः	अपस्मार, उन्माद।

नस्य-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३९७	निर्गुण्ड्यादि नस्यम्	अपस्मार ।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४४३६	प्रचण्ड भैरव रसः	अपस्मार, उन्माद, वातव्याधि, खांसी, छर्दि ।

(४) अम्लपित्ताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८५२	दशाङ्गक्वाथः	अम्लपित्त ।
३७२४	पटोलादि क्वाथः	पित्त, कफप्रधान अम्लपित्त, दाह, ज्वर, वमन, शूल, ।
३७५७	,, ,,	शूल, कफ, पित्त, अग्निमांद्य ।
३८०५	पाठादि ,,	कफप्रधान अम्लपित्त ।
४८०२	भूनिम्बादि ,,	अम्लपित्त ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३८८२	पंचनिम्ब चूर्णम्	भयंकर अम्लपित्त ।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३००७	द्राक्षादि गुटी	अम्लपित्त; कण्ठ और हृदयकी दाह, तृष्णा, अग्निमांद्य ।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२८४	धात्री चतुस्समावलेहः	अम्लपित्त ।
३२८८	धान्यकादिप्रयोगः	,, अरुचि, ज्वर
४०२५	पिप्पली खण्डः (बृहद्)	अम्लपित्त, उत्क्लेश, वमन, श्वास, अग्निमांद्य ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०७०	द्राक्षादि घृतम्	अम्लपित्त, खांसी, अग्निमांद्य, ज्वर ।
३४८४	नारायण ,,	कष्टसाध्य अम्लपित्त, दाह, छर्दि ।
४०६२	पटोल शुण्ठि ,,	अम्लपित्त ।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४२७१	पञ्चानन वटी	अम्लपित्त, अफारा, शूल ।
४३२५	पानीयभक्त ,,	अम्लपित्त, वमन, विष्टम्भ ।
४७३४	बलादि मण्डूरम्	असाध्य अम्लपित्त, तीव्र शूल ।
४९४६	भास्करामृताभ्रम्	अम्लपित्त, छर्दि, परिणाम शूल ।

(५) अरुचि रोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८५७	दाडिम रसः	असाध्य अरुचि।
२८५८	दाडिम रसादि कवलग्रह	अरुचि।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
२९५२	दाडिमादिचूर्णम्	रोचक, हृद्य, कासनाशक।
२९९५	द्राक्षाषाडवः	हर प्रकारकी अरुचिको नष्ट और मुखको शुद्ध करता है।
३९४४	पिप्पल्यादिचूर्णम्	पित्तज अरुचि।
३९६१	पिप्पल्याद्यं "	कफज अरुचि।
३९६७	" "	अत्यन्त रोचक, हृद्य, दीपन, वमन.नाशक, कण्ठशोधक।
४६२२	बिडलवण योगः	असाध्य अरुचि।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३६८३	निम्बुपानकः	रोचक, पाचक, दीपक।

(६) अर्शोधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२९०२	देवदाली योगः	मस्सों का नाश करने वाला शौच क्रियाके लिये उपयोगी जल तथा धूनी।
२९२९	द्राक्षादि योगः	रक्तार्श।
३३५४	नागरादि कल्कः	अर्श।
३७६९	पत्रकादि क्वाथः	"
४५६२	बालकादि कल्कः	पित्तज अर्श।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
२९७५	देवदाली प्रयोगः	अर्श।
३२६९	धत्तूरादि चूर्णम्	पित्तज अर्श।
३९३४	पारिभद्रादि क्षारः	कफज अर्श, रक्तार्श, शोथ, पाण्डु।
३९८६	पूतिकाद्यं चूर्णम्	१ मासमें अर्शके मस्सोंको गिरा देता है।
४८२१	भल्लातकादिचूर्णम्	अर्श, अग्निमांद्य, कुष्ठ।
४८२३	" "	अर्श, खांसी, श्वास, ज्वर।
४८२६	भल्लातकामृतम्	पित्तज अर्श।
	गुटिका-प्रकरणम्	
३००५	दुर्नामकुठारमोदकः	वातार्श।
३४५४	नागराद्यो मोदकः	हर प्रकारकी अर्श।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३९९५	पथ्यादि गुटिका	अर्श, पाण्डु, खांसी, ज्वर।
३९९६	" मोदकः	अर्श।
४००५	प्राणदा गुटिका	सर्व दोषज अर्श, रक्तार्श, सहजार्श, ज्वर।
४००६	प्राणप्रदो मोदकः	अर्श, कास, श्वास, अग्निमान्द्य।
४६४३	वृद्धदारु मोदकः	६ प्रकारका अर्श।
४८४९	भल्लातक वटकः	अर्श, उदर, शूल, अग्निमांद्य।
४८५०	" हरीतकी	कफार्श।
४८५२	भीमसेन वटकः	अर्श, पाण्डु, आनाह, विबन्ध।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०१६	दशमूल गुडः	अर्श, गुल्म, अग्निमांद्य।
३०१७	" "	अर्श, अजीर्ण, पाण्डु।
३४६४	नागकेसराद्यवलेहिका	अर्श।
४०१६	पटोलाद्यवलेहः	अर्श, पाण्डु, अफारा अरुचि, विबन्ध।
४०१७	पथ्यादि गुडः	अर्श, ग्रहणी, पाण्डु, शोथ, अग्निमांद्य।
४०१९	पथ्यावलेहः	अर्श, हिचकी, स्वास, खांसी, अग्निमांद्य, शोष, शूल, रक्तस्राव ग्रहणी।
४०२१	पद्मकेसर योगः	रक्तार्श।
४६४९	बाहुशाल गुडः	अर्श, पाण्डु, ग्रहणी
४८५७	भल्लातक गुडः	अर्श, खांसी, उदावर्त, पाण्डु, शोथ, अग्निमांद्य।
४८५८	" "	अर्शादि गुद रोग, कास, अग्निमांद्य, कामला।
४८५९	" लेहः	अर्श, पाण्डु, ग्रहणी, शूल और अरुचि नाशक तथा बल वर्द्धक।
४८६०	" "	अर्श, ग्रहणी, ज्वर, उदर, अग्निमांद्य, खांसी।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४७३	नवनीतादि योगः	रक्तार्श।
४०७२	पलाशादि घृतम्	अर्श।
४०९५	पिप्पल्याद्यं "	अर्श, शोथ, अफारा, ज्वर, अग्निमांद्य।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०८०	दन्त्याद्यं तैलम्	अर्शके मस्से।
४१२६	पिप्पल्याद्यं "	अर्श, गुदशोथ, गुदभ्रंश, कब्ज, अफारा, प्रवाहिका।
४५३२	फलवर्ति "	अर्श।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	आसवारिष्ट-प्रकरणम्	
३११८	दन्त्यरिष्टः	अर्श, उदावर्त, कृमि, ग्रहणी।
३११९	"	अर्श, अरुचि, ग्रहणी, पाण्डु। मल और वायुकी गतिको अनुलोम करता है।
३१२१	दशमूलारिष्टः	अर्श, अरुचि, ग्रहणी, उदावर्त, पाण्डु।
३१२४	दुरालभारिष्टः	अर्श, ग्रहणी, उदावर्त, अरुचि, तथा मलमूत्र, अपान वायु और डकारका रुकना।
३१२५	" "	अर्श, ग्रहणी, उदर रोग, शोथ, गुल्म, अग्निमांद्य।
३१२६	दुरालभासवः	अर्श, ग्रहणी, पाण्डु।
३१३०	द्राक्षासवः	अर्श, ग्रहणी, उदावर्त, ज्वर, पाण्डु, अग्निमांद्य।
३१३१	"	अर्श, शोथ, अरुचि, ज्वर, उदर रोग, पाण्डु।
४१५४	पील्वासवः	अर्श, अग्निमांद्य, गुल्म।
४१५५	पील्वासवः	अर्श, अग्निमांद्य, प्लीहा, उदर व्याधि।
	लेप-प्रकरणम्	
३५४४	निशादि लेपः	अर्श।
३५४९	" "	"
४१९३	पिप्पल्यादि "	अर्शके मस्से।
४१९५	" "	" "
४९०८	भल्लातकादि "	कफार्श।
	रस-प्रकरणम्	
३६५६	नित्योदित रसः	अर्श।
४४०९	पित्तार्शोहर "	पित्तार्श।
४४१८	पीयूषसिन्धु "	भयङ्कर अर्श, ग्रहणी, शूल, पाण्डु।
४७५३	बोलबद्धो "	रक्तार्श, पित्तार्श।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३२३३	देवदाल्यादिगुटिका	अर्शके मस्से।
३६६८	नवनीतादि योगः	रक्तार्श।
४५०८	पिप्पल्यादि पेया	अर्श।
४७७२	बिल्वशलाटु प्रयोगः	रक्तार्श।
	भल्लातकामृतम्	"

(७) अश्मर्यधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३५८	नागरादि क्वाथः	उग्र अश्मरी ।
३८१६	पाषाणभेदक्वाथः	पित्तज अश्मरी ।
३८१८	पाषाणभेदादि „	दुर्भेद्य अश्मरी ।
४५९२	बीजपूरमूलयोगः	शर्करा ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३९३६	पाषाणभेदाद्यं चूर्णम्	अश्मरी ।
३९८८	प्रसारणी चूर्णम्	„ मूत्रकृच्छ्र ।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०२४	पाषाणभेद पाकः	५ प्रकारकी अश्मरी मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, प्रमेह ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०८२	पाषाणभेदाद्यं घृतम्	वातज अश्मरी ।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१३०	पुनर्नवाद्यं तैलम्	शर्करा, अश्मरि, शूल, मूत्रकृच्छ्र तथा बस्ति और लिङ्गकी पीड़ा ।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४३९६	पाषाण भिन्नः	अश्मरी ।
४३९७	पाषाणभेदी रसः	„
४३९८	„ „	पथरीको तोड़कर निकाल देता है ।
४३९९	„ „	अश्मरी ।

(८) आमवाताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८४९	दशमूलीयोगः	गठिया ।
३८२२	पिचुमन्दमूलयोगः	„

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४२०	नागर चूर्णम्	आमवात, कफवातज रोग ।
३८८७	पञ्चसमं चूर्णम्	आमवातमें विशेष उपयोगी है । अग्निमांद्य, आध्मान ।
३९०८	पथ्याद्यं चूर्णम्	आमवात, शोथ, मन्दाग्नि ।
३९४९	पिप्पल्यादि „	आमशोथ, ग्रहणी ।
३९७६	पुनर्नवादि „	आमवात, आमाशयगतवायु, कष्टसाध्य गृध्रसि ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण

गुग्गुलु-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४५८	नवक गुग्गुलुः	आमवात, कफजरोग, मेदज रोग।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०४३	प्रसारिणी लेहः	आमवात।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४७६	नागर घृतम्	आमवात नाशक तथा अग्निवर्द्धक।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३११४	द्विपञ्चमूलाद्यंतैलम्	आमवात, कफवातजरोग, कमर जंघा पार्श्वकी पीड़ा।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४२७८	पञ्चाननो रसः	सन्धिवात, आमवात, कुक्षिशूल, जङ्घाशूल, पादाङ्गुलीशूल।

(९) उदररोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८१९	दन्त्यादि कल्कः	उदररोग।
२८३९	दशमूलादि क्वाथः	जलोदर, शोथ, श्लीपद।
२८४६	दशमूली योगः	वातोदर।
३७८२	पथ्यादि ,,	जलोदर।
३८४६	पुनर्नवादि क्वाथः	शोथ, आम, शूल, अजीर्ण।
३८४७	,, ,,	शोथोदर।
३८७०	पृश्निपर्ण्यादिक्षीरम्	पित्तोदर।
४५४५	बब्बूल रस क्रिया	जलोदर।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४३२	नाराचकं चूर्णम्	आनाह, गुल्म, शूल, उदावर्त इत्यादि।
३४३३	नाराचकं चूर्णम्	कफवातज समस्त उदररोग।
३४३५	नारायणं चूर्णम्	उदररोग, गुल्म, वायुका रुकना, मलकी कठिनता, परिवर्तिका आदि।
३८८९	पटोलाद्यं ,,	जलोदर, शोथ, कामला।
३८४०	पिप्पलीचूर्णयोगः	समस्त उदररोग।
३९४२	पिप्पली योगः	गुल्म, तिल्ली, अग्निमांद्य।
३९६८	पिप्पल्याद्यंचूर्णम्	प्लीहा।
३९७८	पुनर्नवादि ,,	तिल्ली, शोथोदर, अर्श।
३९७९	,, योगः	गुल्म, जलोदर।

गुटिका-प्रकरणम्

४००७ प्लीहारि वटिका — तिल्ली, कष्टसाध्य गुल्म।
४८४८ भल्लातक मोदकः — ७ दिनमें भयंकर तिल्लीको नष्ट कर देता है।
४८५४ भेदिनी वटी — रेचक, उदररोग-नाशक।

घृत-प्रकरणम्

३०४२ दशमूलषट्पलघृतम् — उदरव्याधि, शोथ, अपानवायुका रुकना, गुल्म, अर्श।
३०४९ दशमूलादि „ — वातोदर।
३०७८ द्विपञ्चमूलाद्यं „ — समस्त उदररोग।
३४७९ नागराद्यं यमकम् — कफवातज गुल्म तथा समस्त उदर रोग।
३४८३ नाराच घृतम् — उदर रोग, आमवात, प्लीहा, गुल्म, भगन्दर।
३४९३ नीलिन्यादि „ — गुल्म, उदररोग, शोथ, प्लीहा।
४०४५ पञ्चकोल घृतम् — उदर, शोथ, विष्टम्भ, वायु गुल्म,।
४०८३ पिप्पली „ — तिल्ली, अग्निमांद्य, यकृद्रोग।
४०८५ पिप्पलीचित्रकघृतम् — प्लीहा, यकृत्।
४०९१ पिप्पल्याद्यं „ — शूल, गुल्म, उदर रोग, अफारा, तिल्ली।
४६६९ बिल्वाद्यं „ — प्लीहा, आम, मलावरोध, वातज शूल, अपान वायुका रुकना, गुदभ्रंश।
४६७३ ब्रह्म घृतम् — प्लीहा तथा अन्य समस्त उदररोग।

तैल-प्रकरणम्

३०७९ दध्यादि तैलम् — वातोदर।

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

४१४७ पञ्चमूत्रासवः — प्लीहा, वातव्याधि

लेप-प्रकरणम्

४१५१ देवदार्वादि लेपः — उदररोग

रस-प्रकरणम्

४४१० पिप्पलीलोह योगः — तिल्ली।
४४१२ पिप्पल्यादि लोहम् — सर्व प्रकारके उदर रोग।
४४२७ पूतिकरञ्जाद्यं चूर्णम् — जलोदर।
४४५३ प्रभावती गुटिका — उदररोग, गुल्म, प्लीहा, (यह गुटिका

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
		पत्थर के समान कठिन मलको भी तोड़कर निकाल देती है ।
४४८३	प्राणेश्वरो रसः	८ प्रकारके गुल्म, वायु, प्लीहा, पाण्डु ।
४४८४	प्लीहशार्दूलो रसः	प्लीहा, अग्रमांस, यकृत्, गुल्म, शोथ, ज्वर ।
४४८५	प्लीहान्तको „	८ प्रकारके उदर रोग, आनाह, विषम ज्वर, आम शूल, शोथ और विशेषतः तिल्ली ।
४४८६	प्लीहारि रसः	यकृत्, पाण्डु, प्लीहा
४४८७	„ „	प्लीहा, ज्वर, शूल, अर्श ।
४४८८	„ „	प्लीहा, यकृत् गुल्म ।
४४८९	प्लीहारि वटिका	प्लीहा, यकृत, गुल्म, अग्निमांद्य, शोथ ।
४४९०	प्लीहार्णवो रसः	प्लीहा, ज्वर ।
४७५७	ब्रह्म वटी	६४ प्रकारके उदर रोग ।

(१०) उदावर्ताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८९१	दुःस्पर्शादिस्वरस प्रयोगः	मूत्रावरोध-जन्य उदावर्त ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९९९	द्विरुत्तर चूर्णम्	उदावर्त ।
३४३४	नाराच चूर्णम्	मलकी कठिनता, उदावर्त ।
४८१६	भद्रदार्वादि „	अफारा, उदावर्त ।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६४७	नाराच रसः	उदावर्त, शूल, गुल्म, जीर्णज्वर ।

(११) उन्मादरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६०८	ब्राह्म्यादिस्वरस प्रयोगः	उन्माद

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९९१	द्राक्षादि प्रयोगः	उन्माद

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४९१	निशादि घृतम्	उन्माद

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१०४	पुराण घृत प्रयोगः	उन्माद
४१०५	पैशाचकं घृतम् (महा)	उन्माद, ग्रह, अपस्मार,
४६६२	बलाद्यं घृतम्	उन्माद, अपस्मार, प्रवृद्ध पित्त, दाह, तृष्णा ।
४६७४	ब्राह्मी ,,	उन्माद तथा अपस्मार नाशक और वाणी, स्वर एवं स्मृति वर्द्धक ।
४६७६	,, ,,	उन्माद, अपस्मार।
४८७८	भूतराव ,,	ग्रहोन्माद ।
४८७९	,, ,,	,, ज्वर ।

धूप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५६५	निम्बादि धूपः	भूतोन्माद ।

अञ्जन-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४२४४	प्रचेतानाम गुटिका	भूतोन्माद ।
४७३२	ब्राह्मयाद्या वर्तिः	उन्माद ।

नस्य-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४२५२	पिप्पल्यादि प्रधमन नस्यम्	उन्माद, अपस्मार, चित्तविकृति ।
४२५४	पुण्डरेख्वादिनस्यम्	उन्माद ।
४९३१	भूतोन्मादनाशक ,,	,,

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४७५८	ब्राह्मीरसादि योगः	उन्माद, अपस्मार।
४९६१	भूताङ्कुश रसः	उन्माद ।

(१२) उपदंशाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२३८	धवादि क्वाथः	लिङ्गके घाव धानेका प्रयोग।
३७२५	पटोलादि क्वाथः	समस्त उपदंश ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०५९	पञ्चारविन्द घृतम्	उपदंश ।
४८८०	भूनिम्बाद्यं ,,	समस्त उपदंश ।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१०३	दार्व्यादि तैलम्	उपदंश ।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१४३	दार्व्यादि लेपः	उपदंशके घाव, सूजन, दाह
३५५४	नीलोत्पलादि ,,	उपदंश ।
४१७५	पद्मोत्पलादि ,,	पित्तज उपदंश ।
४१८८	पारदादि ,,	उपदंशके व्रण ।

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
४१८९	पारदादि सार्पिः	उपदंश, खुजली ।
४२००	पूगादि लेपः	उपदंशके व्रणोंको ३ दिनमें नष्ट करता है ।
४२०८	प्रपौण्डरीकादि ,,	वातज उपदंश ।
४३८४	पारदादिमलहरम्	उपदंशके व्रण ।
४७०४	बब्बूलादि योगः	उपदंशके व्रण ।
४९११	भार्ग्यादि लेपः	,, ,,
४९१७	भृङ्गराजादि ,,	उपदंश ।

धूप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३१५८	दरदादि प्रयोगः	उपदंश ।
४३८५	पारदादि धूपः	उपदंशके व्रण, पिडिका, शोथ ।
४५३४	फिरंगशमनीवटी (धूपः)	फिरंग ।

धूम्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३१६२	दरदादि प्रयोगः	फिरंग ।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२१७	देवकुसुमादि गुटिका	उपदंश ।
३६१७	नागभस्म योगः	,,
४५३५	फिरङ्गवातकेसरी रसः	आतशकको ७ दिनमें नष्ट कर देता है ।
४५३६	फिरङ्गशमनी वटी	,,
४५३७	फिरङ्गारि रसः	उपदंशके व्रण तथा अन्य बड़े बड़े और पुराने व्रण । (इससे मुखमें शोथ नहीं होता)
४७४४	बालहरितक्यादि योगः	उपदंश ।
४९६५	भैरव रसः	उपदंश, उपदंशकी पिडिका, शोथ और पीड़ा ।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६८१	निम्बादि प्रयोगः	उपदंश ।

(१३) कर्णरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८२८	दशमूलादिकषायः	बधिरता ।
४५८९	बिल्वादि स्वेदः	कफवातज कर्णशूल ।
४५९३	बीजपूर रसयोगः	कर्णस्राव, कर्णपीड़ा ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३८७८	पञ्चकषायचूर्णयोगः	कर्णस्राव ।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०९०	दशमूलादि तैलम्	बधिरतामें अत्युपयोगी ।

संख्या	प्रयोगनाम		मुख्य गुण
३१०६	दीपिका	तैलम्	कर्ण पीड़ा।
३१११	देवदार्वादि	,,	,,
३३०८	धुस्तूर	,,	कर्ण नाडी।
३५००	नागरादि	,,	कर्ण पीड़ा, बधिरता।
३५११	निर्गुण्डी	,,	पूतिकर्ण रोग।
३५१४	निर्गुण्ड्यादि	,,	कर्णपीड़ा, कर्णस्राव, कर्णनाद, बधिरता, कृमि।
३५१८	निशाद्यं	,,	कर्णनाड़ी।
४११०	पञ्चवल्कल	,,	कानोंका बन्द होना, कर्णपाक।

संख्या	प्रयोगनाम		मुख्य गुण
४१२७	पिप्पल्याद्यं	तैलम्	दारुण कर्ण शूलको तुरन्त नष्ट करता है।
४६८९	बाधिर्यनाशक	,,	बधिरता।
४६९२	बिल्व	,,	,,
४६९३	,,	,,	,, कफवातज कर्ण रोग।

मिश्र-प्रकरणम्

४७६६	बस्तमूत्रयोगः	तीव्र कर्णशूल, कर्णस्राव, कर्णनाद।

(१४) कासाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

३२३७	धवादि क्वाथः	क्षतज कास।
३७०९	पञ्चमूल्यादि क्षीरम्	खांसी।
३८२९	पिप्पल्यादि कल्कः	कफज खांसी,
३८६२	पुष्करादि क्वाथः	कफ प्रधान खांसी, श्वास, हृद्रोग।
४५४८	बलादि कल्कः	पित्तकफज खांसी।
४५५२	,, क्वाथः	पित्तज खांसी।
४५६३	बिभीतक पुटपाकः	खांसी
४७८९	भार्ग्यादि क्वाथः	खांसी, श्वास।

चूर्ण-प्रकरणम्

२९६८	दुरालभाद्यं चूर्णम्	वातज खांसी।
२९६९	दुःस्पर्शादिचूर्णम्	वातजखांसी
२९७०	देवदार्वादि ,,	हर प्रकारकी खांसी।
२९७२	,, ,,	प्रवृद्ध कफज खांसी।
२९८५	द्राक्षादि ,,	पित्तज खांसी।
२९८६	द्राक्षादि ,,	तमक श्वास, खांसी।
२९९८	द्विक्षारादि ,,	हर प्रकारकी खांसी।
३८९८	पथ्यादि ,,	कफज खांसी।
३९१०	पद्मबीज-योगः	पित्तज खांसी।
३९१३	पलाशफलादि ,,	रात्रिमें कष्ट देनेवाली खांसी।
३९१८	पाठादि चूर्णम्	कफज खांसी।
३९४५	पिप्पल्यादि ,,	पित्तज ,,
३९९२	पिप्पल्याद्यं चूर्णम्	खांसी।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३९८०	पुनर्नवादि योगः	रक्त युक्त खांसी ।
४६२४	विभीतक चूर्णम्	खांसी ।
४६२६	बिभीतकफल चूर्णम्	खांसी, श्वास ।
४६२७	बिभीतकादि ,,	खांसी ।
४८१७	भद्रमुस्तादि ,,	कफज खांसी ।
४८२८	भार्ग्यादि ,,	हर प्रकारकी खांसी, श्वास ।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३००२	दाडिमादि गुटिका	खांसी, श्वास, पीनस नाशक तथा रेचक, दीपन और स्वर शोधक ।
३२८०	धनञ्जय वटी	कास ।
३९९४	पथ्यादि गुटिका	खांसी, श्वास ।
४००१	पिप्पल्यादिक्षार-गुटीका	खांसी, श्वास, गलरोग ।
४००२	पिप्पल्यादि गुटिका	खांसी, प्रबल श्वास ।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०२५	दुरालभादि लेहः	वातज खांसी ।
३०२६	,, ,,	,, ,,
३०२७	देवदार्वाद्यवलेहः	वातकफज ,,
३०३३	द्विमेदादि लेहः	पित्तज खांसी ।
४०२०	पद्मकादि लेहः	समस्त कास ।
४०२७	पिप्पल्यादि लेहः	खांसी ।
४०२८	पिप्पल्यादिलेहः	पित्तज क्षतज खांसी।
४०३०	पिप्पल्याद्यवलेहः	खांसी, श्वास, क्षय, हृद्रोग
४०३१	,, ,,	क्षतज खांसी ।
४६५१	बिभीतकावलेहः	खांसी, श्वास, कफ
४८६५	भार्ग्यादि लेहः	वातज खांसी ।
४८६६	भार्ग्याद्यवलेहः	५ प्रकारकी भयङ्कर खांसी ।
४८६७	भृगु हरीतकी	हर प्रकारकी खांसी ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०४३	दशमूल षट्पल-घृतम्	खांसी, पसलीशूल, हिचकी, श्वास ।
३०४६	दशमूलादि घृतम्	वात कफज खांसी, श्वास ।
३०५४	दाडिमाद्यं ,,	खांसी, श्वास, रक्तपित्त ।
३०७७	द्विपञ्चमूलाद्यं ,,	क्षयकी खांसी ।
३४८९	निर्गुण्डी ,,	कफज ,,
३४९६	न्यग्रोधादि ,,	उरःक्षत, खांसी ।
४०८६	पिप्पल्यादि ,,	खांसी, श्वास संग्रहणी ।
४६५५	बदरीफलादि ,,	कास ।
४८७६	भार्ग्यादि ,,	वातज खांसी ।
४८८१	भृङ्गराज ,,	खांसी, स्वरभेद ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	तैल-प्रकरणम्	
३५०९	निर्गुण्डी तैलम्	खांसी, श्वास, क्षय।
४८९०	भृङ्गराज "	वातकफज खांसी, प्रतिश्याय, पीनस ।
	धूम्र-प्रकरणम्	
३१६१	दन्तीधूमः	कफज खांसीको तुरन्त नष्ट करता है।
३३२१	धत्तूरादि धूमः	कास ।
४२१९	प्रपौण्डरीकादि धूमः	कास ।
	रस-प्रकरणम्	
३१९४	दरदादि वटी	खांसीके वेगको तुरन्त शान्त करती है ।
३६२२	नाग रसः	खांसी, श्वास, क्षय, कफ ।
३६२६	नागवल्लभ रसः	खांसी, क्षय ।
३६५५	नित्योदय रसः	५ प्रकारकी पुरानी खांसी, राजयक्ष्मा, जीर्णज्वर, विषमज्वर ।
३६६३	नीलकण्ठ रसः	श्वास, खांसी, विषमज्वर ।
४२९०	पञ्चामृतरसः	वातज खांसी ।
४२९४	" "	खांसी, श्वास ।
४३९१	पारदादि वटी	खांसी, श्वास, कफ ।
४४२३	पुरन्दर वटी	खांसी, श्वास, अग्निमांद्य ।
४७३३	बब्बूलादि गुटिका	खांसी, ऊर्ध्व श्वास।
४७५४	बोलबद्धो रसः	कफज खांसी, श्वास, पाण्डु ।
४९६०	भूताङ्कुश रसः	वातज कासको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है ।
४९६९	भैरव रसः	खांसी, श्वास ।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३६६९	नवाङ्ग यूषः	कफज खांसी ।

(१५) कुष्ठाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८६८	दार्वादिकषायाष्टकम्	कुष्ठ नाशक लेप, पान स्नानादिके योग।
३२५०	धात्र्यादि क्वाथः	श्वित्र।
३२५७	„ स्वरसः	कुष्ठको १५ दिनमें नष्ट कर देता है।
३३८३	निम्ब स्वरस-प्रयोगः	कुष्ठ, शरीरकी क्षीणता।
३३८४	निम्बादि क्वाथः	कुष्ठ।
३३९७	„ महाकषायः	कण्डू, उदुम्बर, पुण्डरीक, अलसक आदि कुष्ठ शीघ्र नष्ट कर देता है।
३७१८	पटोलमूलादि योगः	कुष्ठ, शोथ, विषम ज्वर।
३७४५	पटोलादि क्वाथः	कुष्ठ।
३७६४	„ गणः	कुष्ठ, ज्वर, विष, वमन।
४५६०	बाकुचिका प्रयोगः	श्वेत कुष्ठ।
४५६१	बाकुची बीज योगः	श्वेत कुष्ठ, पुण्डरीक कुष्ठ।
४७७८	भद्रोदुम्बरिकादियोगः	„ „
४८०१	भूनिम्बादि क्वाथः	समस्त धातुगत कुष्ठ, वातरक्त, आमवात, पिडिका, शोथ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९७७	देवदाली प्रयोगः	कुष्ठ।
२९७८	„ „	पुराने कुष्ठको १ मासमें नष्ट कर देता है।
२९७९	„ „	गलित कुष्ठको ३ मासमें नष्ट कर देता है।
२९९४	द्राक्षाद्यं चूर्णम्	कुष्ठ।
३४३८	निम्बपञ्चक चूर्णम्	कुष्ठ, खांसी विष।
३४४२	निम्बादि चूर्णम्	कण्डु, कुष्ठ, पिडिका।
३८८१	पञ्चनिम्बकं „	कुष्ठ।
३९०९	पथ्यायोगः	कच्छू, पामा, शोथ।
३९२४	पाठाद्यं चूर्णम्	कुष्ठ, शोथ, कृमि, अर्श।
४६२०	बाकुचिकाद्यं चूर्णम्	समस्त प्रकारके कुष्ठ।
४८२५	भल्लातकाद्यं „	कुष्ठ।
४८३६	भूनिम्बादि „	कुष्ठ, सुप्ति।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३९९७	पथ्या वटकः	गलितकुष्ठ; दुर्गन्धित राधवाला और कृमियुक्त कुष्ठ।

गुग्गुलु-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४५९	नवकषायगुग्गुलुः	१८ प्रकारके कुष्ठ, विसर्प, विष।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४००९	पञ्चतिक्तघृतगुग्गुलु	सन्धि, अस्थि, मज्जागत वायु; कुष्ठ, वातरक्त।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४८६२	भल्लातकावलेहः	श्वित्र, औदुम्बर, दाद, ऋष्यजिह्व, कांकण, चर्म कुष्ठ, रक्तमण्डल।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०३५	दन्त्यादि घृतम्	कुष्ठ, (वामक, रेचक)
३०३६	,, ,,	कुष्ठ, किलास, अपची।
३४८६	निम्बादि ,,	कुष्ठ, दाद, रक्तदोष, पामा, विचर्चिका, कण्डू।
३४८८	,, ,,	सन्धि अस्थि तथा मज्जागत कुष्ठ, नाडी व्रण, अर्बुद, भगन्दर, वात रक्त, गण्डमाला।
३४९२	नीली ,,	धातुगत एवं त्वचागत कुष्ठ।
३४९४	,, ,,	श्वेत कुष्ठ, पामा, विचर्चिका, सिध्म, किटिभ।
४०५४	पञ्चतिक्तकं ,,	कुष्ठ, व्रण, कृमि।
४८७१	भल्लातक ,,	समस्त प्रकारके कुष्ठ

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१०४	दार्वाद्यं सूर्यपाक-तैलम्	दाद, खुजली, पामा।
३१०७	दूर्वा ,,	कच्छू, पामा, विचर्चिका।
३३०२	धन्तूर ,,	विपादिका।
३५०५	निम्ब ,,	पामा।
४१३३	पृथ्वि सार ,,	कुष्ठ, रक्तविकार।
४८८२	भद्राद्यं ,,	कुष्ठ, दुष्ट नाडी व्रण।
४८८४	भल्लातक ,,	कुष्ठ, दाद।
४८८७	भानु ,,	कुष्ठ।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१४०	दरदादि लेपः	दादकी खाज, विसर्प, मण्डल कुष्ठ, लूताविष।
३१४७	दूर्वादि लेप	पुराना दाद और खुजली ३ बार लेप करनेसे नष्ट हो जाते हैं।
३३१६	धात्री रसादि लेपः	सिध्म।
३३१८	धात्र्यादि ,,	कच्छू, खुजली, दाद।
३३२०	,, ,,	समस्त प्रकारके कुष्ठ।
३५५१	निशादि ,,	पामा।
४१६६	पत्रकादि ,,	सिध्म, श्वेत कुष्ठ।
४१६९	पथ्यादि ,,	कुष्ठ।
४१८४	पामादद्रु हरोरसः(,,)	पामा, दाद, विचर्चिका।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४२०१	पूतिकादि लेपः	श्वेत कुष्ठ, दाद।
४२०२	पूर्ण चन्द्र "	समस्त प्रकारके कुष्ठ।
४२०३	प्रपुन्नाटादि "	दाद
४२०४	" "	"
४२०५	" "	समस्त प्रकारके कुष्ठ, सुप्ति, विवर्णता।
४७०८	बलादि "	श्वेत कुष्ठ।
४७०९	बाकुच्यादि "	"
४७१०	बाणदलादि "	दुष्ट कुष्ठ।
४७१७	बौल्ल जलम्	दाद।
४९१०	भल्लातकादिलेपः	किलास, तिल, कालक, मस्से, चर्मकील।
४९१६	भृङ्गराजादि "	श्वेत कुष्ठ।

नस्य-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१८०	दन्त्यादि नस्यम्	कुष्ठ, कृमि।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१९८	दशसार सूतरसः	कुष्ठ, अर्श, श्वास, खांसी।
३३२५	धन्वन्तरि रसः	समस्त कुष्ठ।
३६२५	नागराज रसः	कष्टसाध्य कुष्ठको भी अवश्य नष्ट कर देता है।
३६३३	नागादि वटी	कुष्ठ, विचर्चिका, दाद।
३६४५	नाराच रसः	ऋष्य जिह्वक कुष्ठ।
३६५८	निशादि वटी	भयंकर कुष्ठ।
४२५९	पञ्चनिम्बादिचूर्णम्	१८ प्रकारके कुष्ठ, त्वग्दोष, व्यङ्ग, नीलिका।
४२६०	" "	विचर्चिका, उदुम्बर, पुण्डरीक, दद्रू, कपालकुष्ठ, वातरक्तादि। इसे अधिक समय तक सेवन करने वाले पर सर्प विषका प्रभाव नहीं होता।
४२७०	पञ्चाननो रसः	गजचर्म कुष्ठको १ मास में नष्ट कर देता है।
४३०८	परहित रसः	समस्त प्रकारके कुष्ठ।
४३९३	पारिभद्रो रसः	दाद, कुष्ठ।
४४००	पिङ्गलेश्वर रसः	समस्त प्रकारके कुष्ठ, पलित।
४४०५	पित्तलरसायनम्	समस्त कुष्ठ, विशेषतः श्वेत कुष्ठ, कृमि।
४४४०	प्रतापलङ्केश्वररसः	विपादिका।
४७३८	बाकुच्यादि लेहः	समस्त प्रकारके कुष्ठ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४७४०	बाकुच्याद्यं चूर्णम्	श्वित्र, चित्र आदि अनेक प्रकारके कुष्ठ ।
४७५१	बृहत्यादि लोहम्	कुष्ठ ।
४७५५	ब्रह्मरसः	प्रसुप्ति ।
४९५९	भूतभैरवरसः	समस्त वातव्याधि, विशेषतः कफज कुष्ठ ।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४७६८	बाकुचिका प्रयोगः	श्वेत कुष्ठ ।
४७६९	बाकुचि योगः	खुजली, किटिभ, पामा, शोथ ।

(१६) कृमिरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८५४	दाडिमत्वक् क्वाथः	३ दिनमें कोष्ठके कृमि निकाल देता है ।
३४००	निर्गुण्ड्यादिकषायः	कृमि और कृमि जन्य रोग ।
३८०२	पलाश बीज योगः	कृमि ।
३८१५	पारिभद्ररसादि प्रयोगः	,,
४५२२	फञ्ज्याादि कषायः	,,
४८०३	भूनिम्बादि क्वाथः	कफ, कृमि, छर्दि, वायु ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३९३१	पारसीय यमानीयोगः	पेटके कृमि शीघ्र निकाल देता है ।
४८२२	भल्लातकादि चूर्णम्	कृमि ।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४८६१	भल्लातकादि योगः	कृमि ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६६७	बिम्बी घृतम्	पक्वाशय तथा आमाशयगत कृमि ।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४५१४	पूपकयोगः	कृमि ।

(१७) क्षुद्ररोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	चूर्ण–प्रकरणम्	
२९४९	दाडिम कुसुमादि योगः	नखपीड़ा ।
	घृत–प्रकरणम्	
३४८७	निम्बादि घृतम्	पद्मिनी कण्टक ।
४०६०	पटोल घृतम्	अहिपूतना
	तैल–प्रकरणम्	
३५०६	निम्ब तैलम्	अनेक छिद्र और अत्यधिक स्राव युक्त बल्मीक ।
४६९७	बृहत्यादि ,,	अलस (खारवा)
	लेप–प्रकरणम्	
३१३८	दन्त्यादि लेपः	पिडिका ।
३१५२	देवदार्वादि ,,	ठाडीकी सन्धिकी सूजन ।
३५२८	नलिनी योगः	बिन्दुल नामक कीटके स्पर्श होजानेसे उत्पन्न पिडिकाएं ।
३५५३	नीली लेपः	जाल गर्दभ ।
४७१३	बिल्वाद्यौ योगौ	बगलकी दुर्गन्ध ।
४९१५	भृङ्गराजादि लेपः	बाराहदंष्ट्र ।
	रस–प्रकरणम्	
४४४६	प्रतिमेघ रसः	कृमियुक्त बल्मीक ।

(१८) गलरोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	लेप–प्रकरणम्	
३५३५	निचुलादि लेपः	गलेको अत्यधिक प्रवृद्ध सूजन ।

(१९) गुल्माधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय–प्रकरणम्	
२९०८	द्राक्षादिकषायः	पैत्तिकगुल्म ।
३२४५	धात्रीरसयोगः	रक्त गुल्म ।
३७०२	पञ्चमूली क्वाथः	कफज गुल्म ।
३७८१	पथ्यादिपाचन ,,	गुल्मको पकाता है।
३८६३	पुष्करादि क्वाथः	कोष्ठकी दाह, पीड़ा
४५९३	बीजपूर रसादि योगः	वातज गुल्म ।
	चूर्ण–प्रकरणम्	
२९९०	द्राक्षादि प्रयोगः	पित्तज गुल्म ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४११	नवसादर प्रयोगः	गुल्म, अग्निमांद्य।
३४१२	नवसारभस्म	गुल्म, समस्त उदर रोग।
३४२७	नागरादि प्रयोगः	वातज गुल्म, उदावर्त, योनिशूल।
३४३०	नादेयी क्षारः	गुल्म, अष्ठीला।
३४४७	नीलिन्यादि चूर्णम्	गुल्म।
३८९१	पत्रलवणम्	गुल्म, शोथ, अर्श।
३९२७	पाठाद्यं चूर्णम्	गुल्म, शूल।
३९४७	पिप्पल्यादि "	दुस्साध्य गुल्म।
४८३०	भार्ग्यादि "	रक्तगुल्म।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०००	दन्त्यादि गुटिका	रक्त गुल्म।
३००६	द्रवन्ती नागवटी	गुल्म, तिल्ली, यकृत्, अग्निमांद्य।
३४५५	निकुम्भाद्या गुटिका	गुल्म, अग्निमांद्य, प्लीहा, पांडु।
३९९९	पिण्याकादिगुटिका	गुल्म, शूल, अरुचि, अग्निमांद्य।

गुग्गुलु-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३००९	दन्तीगुग्गुलुः	गुल्म।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०१४	दन्ती हरीतक्यवलेहः	गुल्म, सूजन, अरुचि, अफारा।

घृत प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०५२	दशमूली-घृतम्	कफज गुल्म।
३०५३	दशाङ्ग "	वातज गुल्म, कृमि, प्लीहा, ज्वर, खांसी।
३०५९	दाधिकं घृतम्	हृद्रोग, गुल्म, प्लीहा।
३०७१	द्राक्षादि "	पित्तज गुल्म, तथा अन्य पित्तज रोग।
३२९२	धात्रीषट्पलकं "	गुल्म।
३४८२	नाराचकं "	वातगुल्म तथा उदावर्त नाशक और अग्निदीपक।
४०४६	पञ्चकोलाद्यं "	कफज, गुल्म, खांसी, ज्वर, प्लीहा।
४०५६	पञ्चपलं "	वातज गुल्म, शिर-पीड़ा, विषमज्वर।
४०६४	पथ्या "	गुल्म, पाण्डु।
४०७०	पलाशक्षार "	रक्तगुल्म।
४८७२	भल्लातक "	" " कफजगुल्म
४८७३	" "	कफज, गुल्म, प्लीहा, पाण्डु, खांसी।
४८७५	भार्गीषट्पलकं "	गुल्म, उदर, अरुचि, अग्निमांद्य।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०९१	दशमूलादि तैलम्	कफज गुल्म।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२११	दीक्षामर रसः	पित्तज गुल्म।
३६४०	नागेश्वर "	गुल्म, आध्मान, प्लीहा, शोथ।
३६४१	नाराच "	गुल्म। (रेचक)

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६४२	नाराच रसः	गुल्म, उदावर्त, अफारा। (रेचक।)
३६४३	" "	गुल्म, प्लीहा, उदररोग। (रेचक।)
३६४४	" "	"
३६४८	" "	गुल्म, आध्मान, शूल, उदररोग, उदावर्त। (रेचक)
४२७९	पञ्चाननो "	रक्तगुल्म।
४४६८	प्रवालपञ्चामृत	गुल्म, प्लीहा, उदर, आनाह, अजीर्ण, डकारआना, खांसी, श्वास।
४९३९	भल्लातकादियोगः	गुल्म।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४५१३	पूतीकपत्रादियोगः	गुल्म, अम्लपित्त।

(२०) ग्रहण्यधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२५९	धान्यकादि कषायः	वातज ग्रहणी।
३८४८	पुनर्नवादि क्वाथः	ग्रहणी, गुल्म, अर्श।
४५७०	बिल्व शलाटु योगः	भयङ्कर ग्रहणी।
४५८८	बिल्वादिसिद्धपयः	अत्यन्त प्रवृद्ध रक्त युक्त पुरानी ग्रहणी ३ दिनमें नष्ट हो जाती है।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९६१	दाडिमाष्टक चूर्णम्	ग्रहणी, अग्निमांद्य, अरुचि।
२९६७	दुरालभादि क्षारः	अग्नि, बल, वर्ण वर्द्धक।
२९९६	द्विक्षार चूर्णम्	कफवातज ग्रहणी, अर्श, अग्निमांद्य।
३४२५	नागरादि चूर्णम्	अग्निमांद्य, कोष्ठकी वायु।
३४२९	नागराद्यं "	पित्तज ग्रहणी, रक्त स्राव, अर्श, गुदशूल, प्रवाहिका।
३९२६	पाठाद्यं "	अग्निदीपक है।
३९२८	" "	ग्रहणी, अतिसार, शूल, ज्वर, अरुचि, हृदयकी दाह।
३९४३	पिप्पल्यादिक्षारम्	वातकफज रोग।
३९६०	पिप्पल्याद्यं चूर्णम्	कफज ग्रहणी नाशक तथा अग्नि, बल और मांसवर्द्धक।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
८९६४	पिप्पल्याद्यं चूर्णम्	वातज संग्रहणी, अग्निमांद्य
४६३२	बिल्वफलादिचूर्णम्	साम और रक्त ग्रहणी।
४८१९	भर्जितहरीतकीयोगः	ग्रहणीको नष्ट और वायुको अनुलोम करता है।
४८२४	भल्लातकाद्यः क्षारः	ग्रहणी, उदावर्त, शूल, गुल्म।
४८३५	भूनिम्बादि क्षारः	अग्नि दीपक।
४८३७	भूनिम्बाद्यं चूर्णम्	ग्रहणी, अरुचि, अतिसार, ज्वर।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३००८	द्राक्षादि गुटिका	पित्तज ग्रहणी, पाण्डु कामला, तृषा, भ्रम, हिचकी।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०१५	दशमूल गुडः	सूजन, सामग्रहणी, शूल, कब्ज, अर्श, अग्निमांद्य।
३०२३	दासलोहरसायनम्	कफपित्तज ग्रहणी।
४६४८	बाहुशाल गुडः	समस्त ग्रहणी, कामला, पाण्डु, शोथ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०७६	द्विपञ्चमूल्यादिघृतम्	अग्निवर्द्धक, पाचक।
४०५८	पञ्चमूलाद्यं घृतम्	अग्निवर्द्धक तथा शूल, अफारा और ग्रहणी नाशक।
४६६८	बिल्वाद्यं ,,	संग्रहणी, शोथ, अग्निमांद्य, अरुचि।
४६७२	बृहतीचित्रक क्षार ,,	अग्निदीपक, ग्रहणी-नाशक।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०९९	दाडिमाद्यं तैलम्	भयङ्कर संग्रहणी, अर्श।
४६९०	बिल्व तैलम्	ग्रहणी, मन्दाग्नि, अरुचि, अतिसार, अर्श, शोथ, ज्वर, खांसी, सूतिका रोग।

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१२३	दशमूलासवः	आध्मान, पाण्डु, शरीरकी पीड़ा, अग्निमांद्य।
४१५१	पिण्डासवः	अग्निदीपक।
४५३३	फलारिष्टः	ग्रहणी, अर्श, पाण्डु, विषमज्वर।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	रस-प्रकरणम्	
३६६४	नृपतिवल्लभ रसः	ग्रहणी, अतिसार, आम, अग्निमांद्य, शूल, अफारा, विसूचिका आदि ।
४३००	पञ्चामृतलोह-मण्डूरम्	शोथयुक्त पुरानी संग्रहणी, पाण्डु, जीर्णज्वर ।
४६२४	पानीयभक्तवटी (मध्यम)	कष्टसाध्य संग्रहणी, शोथ, अग्निमांद्य, अरुचि ।
४३८८	पारदादि वटी	संग्रहणी ।
४३८९	" "	ग्रहणी, शूल, शोथ, अतिसार ।
४४१७	पीयूषवल्ली रसः	पुरानी संग्रहणी, समस्त अतिसार, आम।
४४२८	पूर्ण कला वटी	ग्रहणी, दाह, शूल, ज्वर ।
४४३५	पोटली रसः	त्रिदोषज संग्रहणी ।
	मिश्र-प्रकरणम्	
४७७१	बिल्वयोगः	ग्रहणी
४७७३	बिल्वादि योगः	"

(२१) छर्द्यधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८९३	दूर्वादियोगः	पित्तज छर्दि।
३२५५	धात्र्यादि योगः	त्रिदोषज "
३३९६	निम्बादि प्रयोगः	वमन ।
३७९२	परूषकादि योगः	छर्दि, तृषा ।
३७९४	पर्पटादि क्वाथः	छर्दि, पित्तज्वर ।
४५७७	बिल्वादि "	त्रिदोषज और पित्तज छर्दि ।
४५९१	बीजपूरादिपुटपाकः	सर्व दोषज भयङ्कर छर्दि ।
४८१३	मृष्टमुद्गादिकषायः	छर्दि, अतिसार, दाह, ज्वर ।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
३८९४	पथ्यादि चूर्णम्	त्रिदोषज छर्दि।
३८९६	" "	छर्दि ।
	अवलेह-प्रकरणम्	
३०१३	दधित्थ रसादिलेहः	छर्दि ।
३२८६	धात्रीरसादि योगः	"
३२८९	धान्यकादि लेहः	वातज छर्दि ।
४६५२	बीजपूरकादि "	" "
	घृत-प्रकरणम्	
४०६८	पद्मकाद्यं घृतम्	छर्दि, तृष्णा, अरुचि, दाह ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	रस-प्रकरणम्	
३६६१	नीलकण्ठ रसः	छर्दि ।
४३८२	पारदादि चूर्णम्	"
४९४१	भस्मसूत रसः	छर्दि
	मिश्र-प्रकरणम्	
३३४४	धात्र्यादि प्रयोगः	त्रिदोषज छर्दि

(२२) ज्वरातिसाराधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
३२६२	धान्यकादि क्वाथः	आम, वातकफ ज्वर, शूल, अतिसार।
३३५९	नागरादि क्वाथः	ज्वरातिसार ।
३३६०	" "	शोथ, ज्वरातिसार ।
३८११	पाठादि "	भयङ्कर ज्वरातिसार।
३८१२	पाठासप्तक "	आमातिसार, ज्वर ।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
३४२३	नागरादि चूर्णम्	ज्वरातिसार ।
	अवलेह-प्रकरणम्	
३०२०	दाडिमावलेहः	ज्वरातिसार, आमशूल, आमरक्त, शोथ, धातुगत ज्वर ।
	घृत-प्रकरणम्	
४०७७	पाठाद्यं घृतम्	ज्वरातिसार, संग्रहणी, अलसक ।
	रस-प्रकरणम्	
३१९३	दरदादि पुटपाकः	ज्वरातिसार, अग्निमांद्य, निद्रानाश, अरुचि ।
३३६५	नृसिंहपोटलीरसः	दुस्साध्य ज्वरातिसार ग्रहणी, जीर्णज्वर ।
४२८३	पञ्चामृतपर्पटी रसः	ज्वरातिसार, संग्रहणी, क्षय, अग्निमांद्य ।
४२८५	पञ्चामृत पोटली "	ज्वरातिसार, शूल, अग्निमांद्य, बलह्रास
४४८३	प्राणेश्वरो "	ज्वरातिसार ।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३३३७	धातक्यादि पेया	शूलयुक्त ज्वरातिसार
४५१६	पृश्निपर्ण्यादि "	ज्वरातिसार ।

(२३) ज्वराधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८२०	दन्त्यादि क्वाथः	अभिन्यास सन्निपात, मलकी अधिकता ।
२८२२	दर्भमूलादिक्वाथः	वातज्वर ।
२८२३	दशमूलम्	उपद्रवसहित सन्निपात, खांसी, तन्द्रा, पार्श्वशूल, कण्ठग्रह।
२८३१	दशमूलादि क्वाथः	कर्णक सन्निपात ।
२८४१	" "	उपद्रव सहित वातज्वर ।
२८४४	दशमूलादि पञ्चदशाङ्ग क्वाथः	सन्निपात ।
२८४८	दशमूली कषायः	सन्निपात, श्वास, खांसी, तृषा ।
२८५०	दशमूलीरसप्रयोगः	कफवातज्वर, अतिनिद्रा, पार्श्वशूल, श्वास, खांसी ।
२८५३	दशाष्टाङ्ग क्वाथः	जीर्णज्वर, शोथ, श्वास, खांसी ।
२८६५	दार्वादि क्वाथः	कफवातज्वर, हिक्का, श्वास, खांसी ।
२८६७	दार्व्यम्बुदादि क्वाथः	सन्निपातज्वरकी मूर्च्छा ।
२८७३	दास्यादि क्वाथः	धातुस्थ विषमज्वर, बारीके समस्त ज्वर, कामज्वर, शोकज्वर, भूतज्वर, छर्दि ।
२८८०	दुरालभादि कषायः	वातपित्तज ज्वर ।
२८८१	" "	वातज्वर पर अत्यन्त सरल योग ।
२८८३	" "	समस्त ज्वरनाशक, अग्निवर्द्धक ।
२८८४	" "	ज्वर ।
२८८५	" क्वाथः	ज्वर, दाह, तृष्णा, रक्तपित्त ।
२८९०	दुःस्पर्शादि "	दाह, स्वेद, तृष्णा, चित्तभ्रान्ति और श्वासयुक्त ज्वर ।
२८९५	देवदार्वादि कषायः	चातुर्थिक ज्वर।
२८९८	" क्वाथः	वातकफज्वर, खांसी गलग्रह ।
२८९९	" "	सन्धिगत सतत ज्वर ।
२९०४	द्राक्षादि कल्कः	मुखशोष, अरुचि । (मुखमें मलनेकी औषध है ।)
२९०५	" "	सन्निपातमें जीभका फटना और शुष्क होना । (जीभ पर मलनेका योग है)
२९१०	द्राक्षादि क्वाथः	एकाहिक ज्वर ।
२९१२	" "	वातपित्त ज्वर ।
२९१३	" "	" " दीपन, पाचन ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९१४	द्राक्षादिक्वाथः	पित्तकफज्वर, शूल, उदावर्त ।
२९१६	,, ,,	प्रलाप, दाह, मूर्च्छा, शोष और तृष्णायुक्त पित्तज्वर ।
२९१७	,, ,,	तृष्णा और मूर्च्छायुक्त पित्तज्वर ।
२९१८	,, ,,	पित्तकफ ज्वर ।
२९१९	,, ,,	द्वन्द्वज ज्वर ।
२९२०	,, ,,	तृष्णा, दाह, मूर्च्छा, छर्दि, मुखशोथ, श्वास, खांसी, पित्तज्वर ।
२९२१	,, ,,	तृतीयक ज्वर ।
२९२६	,, क्षीरम्	सन्निपात ज्वर
२९२७	,, पाचनम्	हारिद्रज्वरमें दोषोंको पचाता है ।
२९३०	,, शीतकषायः	पित्तज्वर ।
२९३५	द्वात्रिंशदाख्यक्वाथः	सन्निपात, शूल, खांसी, हिक्का और आध्मान आदि ज्वरके उपद्रव । वातव्याधि।
२९३७	द्वादशाङ्ग क्वाथः	साम पित्तकफज्वर।
२९३९	द्विपञ्चमूल्यादि कल्कः	वातपित्तज्वर ।
२९४०	द्विवार्ताकी फलरसादिप्रयोगः	वातज्वर १ दिनमें, पित्तज्वर २ दिनमें और कफ ज्वर ३ दिनमें नष्ट करताहै।
३२३९	धातक्यादि क्वाथः	विषम ज्वर ।
३२५८	धान्यक हिमः	अन्तर्दाह ।
३२६१	धान्यकादि क्वाथः	दीपन, पाचन, कफनाशक, पित्तवातानुलोमक, भेदी, ज्वरनाशक ।
३३४६	नलदादि क्वाथः	पित्तज्वर ।
३३४७	नलमूलादिकषायः	सर्वज्वर ।
३३५०	नवाङ्ग कषायः	वातपित्तज्वर ।
३३५२	नागरसप्तकः	पित्तज्वर ।
३३५६	नागरादि क्वाथः	खांसी, श्वास, पार्श्व पीड़ा वातकफज्वर।
३३६२	,, ,,	पित्तकफज्वर, भ्रम, मूर्च्छा ।
३३६४	,, ,,	पित्तकफज्वर नाशक ग्राही ।
३३६६	,, ,,	तृतीयकज्वर ।
३३६७	,, ,,	भयङ्कर सन्निपात ।
३३६८	,, ,,	सर्वज्वर, सर्वातिसार।
३३७०	नागरादिपाचन कषायः	ज्वरमें दोषोंको पचाता है ।
३३७१	नागरादिपाचन क्वाथः	पित्तज्वर, कफ, रक्तशोष ।
३३७४	निदिग्धिकादिकषाय	वातपित्तज्वर ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३७५	निदिग्धिकादि क्वाथः	जीर्णज्वर, अरुचि, खांसी, शूल, श्वासादि।
३३७७	निदिग्धिकादिक्वाथः	ज्वर।
३३७८	,, ,,	कफवातज्वर, श्वास, खांसी, अरुचि।
३३८६	निम्बादि क्वाथः	वातश्लेष्म ज्वर, पर्वभेद, शिरशूल, खांसी।
३३८८	,, ,,	कफज्वर।
३३८९	,, ,,	,,
३३९०	,, ,,	,,
३३९३	,, ,,	सन्निपात।
३४०३	नीरदादि ,,	कफज्वर, श्वास, खांसी, शूल।
३४०५	नीलोत्पलादि कषायः	वातपित्तज्वर, प्रलाप, मोह।
३४०८	,, हिमः	वातपित्तज्वर, प्रलाप, छर्दि, भ्रम, मूर्छा, तृषा।
३६८९	पञ्चकोल कषायः	कफवातज्वर, गुल्म, प्लीहा, शूल।
३६९१	पञ्चतिक्त क्वाथः	८ प्रकारके ज्वर।
३६९३	पञ्चभद्रकम्	वातपित्तज्वर।
३६९४	पञ्चमुष्टिक यूषः	शूल, गुल्म, खांसी, श्वास, क्षय, ज्वर।
३६९८	पञ्चमूलादिक्वाथः	वातज्वर, शिरकाकांपना, पर्वभेद।
३६९९	पञ्चमूली कषायः	वातज्वर।
३७००	पञ्चमूली कषायः	कफज जीर्णज्वर।
३७०५	पञ्चमूल्यादिक्वाथः	वातज्वर।
३७०७	,, ,, ,,	,,
३७०८	,, ,, ,,	पित्त तथा कफ प्रधान सन्निपात।
३७१५	पटोल चतुष्कः	कफपित्तज्वर।
३७१९	पटोलादि कषायः	सर्वज्वर।
३७२०	,, क्वाथः	विषमज्वर।
३७२३	,, ,,	पित्तकफज्वर, वातकफज्वर, तथा रक्तपित्त ज्वरको नष्ट करता और मलको तोड़ कर निकालता है।
३७२७	,, ,,	अन्तस्ताप, पिपासा, सन्निपात, विषमज्वर।
३७२९	,, ,,	समस्त ज्वर।
३७३०	,, ,,	वातकफज्वर, तृष्णा, शूल, बेचैनी, श्वास, खांसी, कब्ज।
३७३१	,, ,,	कफज्वर।
३७३३	,, ,,	एकाहिक ज्वर।
३७३४	,, ,,	सन्तत ,,
३७३५	,, ,,	,, ,,
३७३६	,, ,,	सतत ज्वर, विषम ज्वर।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३७३७	पटोलादिकाथः	दुर्जलदोष जनित ज्वर।
३७३९	„ „	कासादियुक्त सतत ज्वर।
३७४०	„ „	पित्तकफ ज्वर।
३७४६	„ „	वातज्वर।
३७४८	„ „	।पत्तज्वर, दाह, तृष्णा।
३७४९	„ „	भयङ्कर पित्तज्वर, तृषा।
३७५०	„ „	अभिन्यास ज्वर।
३७५२	„ „	पित्तकफज्वर, छर्दि, दाह, कण्डू।
३७५३	„ „	कफपित्तज्वर, तृषा, दाह, छर्दि।
३७६०	„ „	तृतीयक, चातुर्थिक-अन्येद्युः और विषम ज्वर, दाहपूर्वज्वर।
३७६१	„ „	विषमज्वर।
३७६६	„ गणः	ज्वर, छर्दि, अरुचि, विष।
३७७२	पथ्यादि काथः	चित्तभ्रम सन्निपात।
३७७६	„ „	उदरपीड़ा, श्वास, खांसी, अरुचि और मुखशोषयुक्त ज्वर।
३७७७	„ „	अन्तक सन्निपात।
३७८४	पद्मकादि „	वातपित्त ज्वर, मोह, प्रलाप।
३७८५	„ „	पित्तज्वर।
३७८७	पद्मकादिकाथः	रक्तष्ठीवी सन्निपात।
३७९०	परूषकादि „	पित्तप्रधान „
३७९३	„ हिमः	पित्तज्वर।
३७९५	पर्पटादि काथः	पित्तज्वर, रक्तपित्त।
३७९६	„ „	तृषा, छर्दि, पित्त-ज्वर।
३७९७	„ „	तृष्णा, दाह, पित्त-कफज्वर।
३७९८	„ „	पित्तज्वर।
३८०६	पाठादि „	दोषोंको पचाता है।
३८१३	पाठा सिद्ध पयः	कम्पयुक्त शीत।
३८२३	पिचुमन्दादिकाथः	कफज्वर।
३८२५	पिप्पली „	ज्वर, प्लीहा।
३८२७	पिप्पलीमूलादि „	तृषा, मूर्च्छा, पित्त-ज्वर, दाह, मुंहका कड़वापन।
३८२८	पिप्पलीवर्द्धमानम्	ज्वर, खांसी, श्वास, पाण्डु, उदररोग।
३८३२	पिप्पल्यादि कषायः	ज्वर, श्वास, खांसी।
३८३७	„ काथः	वातज्वर।
३८३९	„ गणः	कफ, वात, प्रति-श्याय, शूल। दीपन पाचन है।
३८४१	„ योगः	विषम ज्वर।
३८४४	पुनर्नवादि कषायः	अभिन्यास सन्निपात
३८५९	पुष्करमूलादि काथः	खांसी, श्वास, कफ, सन्निपात।
४५१८	फलत्रिकादि काथः	कण्ठकुब्ज सन्नि-पात।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४५५३	बलादि काथः	पर्वभेद, शिरः कम्पन, वातपित्त ज्वर।
४५५६	,, ,,	पित्तकफज ज्वर।
४५६४	बिभीतकादि ,,	तृषा, दाह, विषम ज्वर।
४५६६	बिल्वपञ्चक ,,	प्रतिश्याय, ज्वर, छर्दि।
४५८३	बिल्वादि ,,	वातज्वर।
४५८६	,, क्षीरम्	जीर्णज्वर।
४५९१	बीजपूरकादिकषायः	हृदय तथा बस्तिकी पीड़ा, अफारा, अभिन्यास ज्वर।
४५९७	बीजपूरादिपाचन-कषायः	कफज्वर।
४६०३	बृहत्यादि काथः	सन्निपात ज्वर।
४६०४	,, ,,	कफ, ज्वर।
४६०५	,, गणः	कफ प्रधान सन्निपात तथा श्वासादि उपद्रव।
४६०७	ब्राह्मयादि काथः	चित्तभ्रम तथा रुग्दाह सन्निपात।
४७७७	भद्रादि ,,	समस्त प्रकारके शीत ज्वर।
४७८६	भार्ग्यादि ,,	पित्तकफज ज्वर।
४७८७	,, ,,	ज्वर, श्वास, अग्निमांद्य।
४७८८	भार्ग्यादि काथः	विषम ज्वर, सन्निपात, जीर्ण ज्वर, शोथ।
४७९०	,, ,,	जीर्णज्वर, धातुगत ज्वर और विषम ज्वर।
४७९१	,, ,,	जीर्ण ज्वर; सतत, सन्तत, अन्येद्युः, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर।
४७९२	,, ,,	तन्द्रिक सन्निपात।
४७९३	,, ,,	कर्णक सन्निपात।
४७९४	,, ,,	सन्निपात, हृदय और पसली शूल, आनाह, तन्द्रा खांसी
४७९५	भार्ग्यादि काथः	कफ, खांसी, प्रतिश्याय, श्वास, हृद्रोग।
४७९६	,, गणः	पित्तकफ ज्वर, हृल्लास, अरुचि, छर्दि तृष्णा, दाह।
४७९८	भूनिम्बादि कषायः	वातज्वर।
४८००	,, ,,	द्वन्द्वज ज्वर।
४८०५	,, काथः	अतिसार, ज्वर, रक्तपित्त, खांसी, श्वास
४८०६	,, ,,	कफज ज्वर।
४८०७	,, ,,	वातकफज ज्वर।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४८११	भूनिम्बाद्यष्टादशाङ्ग-क्वाथः	तन्द्रा, प्रलाप, खांसी दाह, मोह, श्वासादि उपद्रवयुक्त समस्त ज्वर ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९७६	देवदाली प्रयोगः	तीव्र ज्वर ।
२९८३	द्राक्षादि चूर्णम्	वातज्वर ।
३२७६	धात्र्यादि प्रयोगः	मलावरोध, अग्निमांद्य अरुचि, अजीर्ण-जीर्णज्वर ।
३२७८	धान्यादि चूर्णम्	विषमज्वर, श्वास-अग्निमांद्य, वायु ।
३४३९	निम्बपल्लवरजः	शरत्कालीन ज्वर ।
३४४१	निम्बादि चूर्णम्	दैनिक, तिजारी, चातुर्थिक, सन्तत, सतत और धातुगत ज्वर ।
३८७९	पञ्चकोल चूर्णम्	रोचक, पाचक । प्लीहा, ज्वर, कफ ।
३९०६	पथ्यादि योगः	दाह, ज्वर, खांसी-छर्दि ।
३९३९	पिप्पली चूर्णम्	खांसी, ज्वर, हिक्का श्वास, प्लीहा ।
४६११	बन्दाक योगः	विषम ज्वरके कष्ट-साध्य उपद्रव ।
४८२९	भार्ग्यादि चूर्णम्	८ प्रकारका ज्वर, भयङ्कर खांसी, शोथ आध्मान ।
४८३८	भूनिम्बाद्यं ,,	सन्निपात ज्वर ।
४८४०	भूनिम्बाद्योद्धूलनम्	अधिक पसीना आना

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०००	पिप्पली मादकः	धातुगत ज्वर, श्वास, खांसी, अग्निमांद्य, धातुक्षय ।
४५२७	फलत्रिकाद्योमोदकः	वातज ज्वर, अरुचि, खांसी, पार्श्वशूल ।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०१८	पथ्यावलेहः	दाह, ज्वर, खांसी, रक्तपित्त, श्वास, वमन ।
४०२३	पाचकावलेहः	ज्वरमें मुंहका स्वाद बिगड़ना, अरुचि, कब्ज ।
४०३२	पिप्पल्याद्यवलेहः	जीर्णज्वर, छर्दि, तृषा, अरुचि, शोष, रक्त-पित्त ।
४०३६	पुष्करमूलादि लेहः	ज्वर, खांसी, कफ ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०३८	दशमूलक्षीरषट्पल घृतम्	ज्वर, खांसी, अग्निमांद्य, तिल्ली ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०६२	दुरालभाद्यं घृतम्	ज्वर, दाह, भ्रम, खांसी, पसली शूल, तृष्णा, छर्दि, अतिसार।
४०४९	पञ्चगव्यं घृतम्	विषम ज्वर।
४०५२	पञ्चतिक्तकं ,,	,, ,, पाण्डु, विसर्प।
४०७८	पानीयकल्याणक ,,	ज्वर, खांसी, अग्निमांद्य, क्षय, प्रतिश्याय, तिजारी, चौथिया, वमन इत्यादि
४०८७	पिप्पल्याद्यं ,,	जीर्णज्वर, क्षय, खांसी, शिरशूल, पार्श्वशूल।
४१०२	पुनर्नवाद्यं ,,	विषमज्वर, खांसी, क्षय।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०८५	दशमूल तैलम्	सन्निपात, श्वास, भयङ्कर खांसी।
४१११	पटोलादि ,,	ज्वर, खांसी वातज रोग।
४११२	,, स्नेहः	ज्वर।
४११४	पद्मक तैलम्	ज्वर, तृष्णा, दाह।
४१४६	प्रह्लादन ,,	ज्वर, दाह।
४६८२	बला ,,	खांसी, श्वास, ज्वर, छर्दि, शूल, हिक्का, क्षय, प्लीहा, शोष।
४६८६	बलाद्यं ,,	वातपित्तज जीर्णज्वर

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३१०	धान्यकाद्यरिष्टः	समस्त प्रकारके ज्वर।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१३५	दध्यादि लेपः	सन्निपातकी दाह।
३५३१	नागरादि ,,	सन्निपातमें होने वाली गलेकी सूजन।
३५४८	निशादि ,,	कर्णमूल।
४१८१	पलाशादि ,,	पित्तज्वर, तृषा, दाह, बेचैनी।
४७०२	बदर्यादि ,,	रुग्दाह सन्निपात।
४७१४	बीजपूरकमूलादि लेपः	गलेकी सूजन।

धूप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५६४	निम्बादि धूपः	विषमज्वर।
३५६८	निर्गुण्ड्यादि ,,	सन्धिगत ज्वर।
३५६९	,, ,,	ग्रह और सन्निपात ज्वर।
४२१४	पलङ्कषादि ,,	ज्वर।

अञ्जन-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५८६	निशाद्यञ्जनम्	विषमज्वर।
४२३५	पिप्पल्याद्यञ्जनम्	भूतज्वर।
४२४५	प्रचेतानामगुटिका	ज्वरकी मूर्च्छा।
४९२९	भैरवाञ्जनम्	उपद्रव सहित समस्त ज्वर।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	नस्य-प्रकरणम्	
३५९३	नस्य भैरवः	सन्निपात।
४७३०	बृहत्याद्यं नस्यम्	बेहोशी।
४७३१	ब्रह्मदण्डी "	एकाहिक ज्वर।
४९३०	भस्मेश्वर रसः	शिर, हृदय और नासिकाकी कफ-वातज पीड़ा।
	रस-प्रकरणम्	
३२०२	दार्व्यादि वटिका	तरुणज्वर, जीर्ण-ज्वर, विषमज्वर।
३२०३	दाहज्वरघ्न वटी	दाह, ज्वर।
३२०५	दिनज्वरप्रशामनीवटी	दिनके समय आने वाला ज्वर, सन्ताप, अग्निमांद्य।
३२१०	दीपिका रसः	समस्त ज्वर।
३२१५	दुर्जलजेता रसः	दुर्जलदोष जनित ज्वर, अजीर्ण, मलावरोध, अफारा, खांसी शूल।
३२१८	देवभूति रसः	भयङ्कर सन्निपात, खांसी, श्वास, अग्निमांद्य, पाण्डु।
३२२२	द्विभुजो रसः	नवीन ज्वर।
३३२६	धातुज्वराङ्कुशरसः	धातुगत ज्वर, अजीर्ण, वातज खांसी, अरुचि।
३३३५	धूम्रकेतु रसः	नवीन ज्वर।
३६०१	नवज्वरमुरारि रसः	नवीन ज्वर।
३६०२	नवज्वर रिपु	" "
३६०३	नवज्वरहरी वटी	" "
३६०४	नवज्वरहरो रसः	नवीन ज्वरको १ पहरमें नष्ट कर देता है।
३६०५	नवज्वराङ्कुश "	नवीन ज्वरको १ दिन में नष्ट कर देता है।
३६०६	नवज्वरारि "	नवीन ज्वर।
३६०७	नवज्वरेभसिंह "	घोर नवीन ज्वर, धातुगत ज्वर, ग्रहणी
३६१२	नव्यचन्द्र "	नवीन ज्वरको १ पहरमें नष्ट कर देता है।
३६२३	नाग "	शीताङ्ग सन्निपात।
३६४९	नारायणज्वराङ्कुशः	शीतज्वर, सन्निपात, विषमज्वर।
३६६२	नीलकण्ठ रसः	ज्वर, श्वास, हिचकी, खांसी, । (वामक है।)
४२६४	पञ्चवक्त्र रसः	सन्निपात।
४२६५	" " (मृत्युञ्जय)	घोर सन्निपात, कफ, विषमज्वर, नवीनज्वर, अजीर्ण-ज्वर, अग्निमांद्य।
४२७५	पञ्चाननो रसः	सर्व प्रकारके ज्वर।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४२८१	पञ्चामृत पर्पटी	समस्त प्रकारके ज्वर, खांसी, क्षय, संग्रहणी, अर्श ।
४३०९	पर्णखण्डेश्वरः	वातकफज ज्वर ।
४३१०	पर्पटी रसः	ज्वर, ग्रहणी, क्षय, श्वास, कफ, स्वरभंग, (बच्चोंके लिये विशेष उपयोगी तथा अनुपान भेदसे अनेक रोगनाशक है ।)
४३११	पर्पटी रसः (मल्लपर्पटी)	कफ, वायु, मतिभ्रम । (ज्वरके वेगको रोकती है)
४३३१	पानीय वटिका	सन्निपात ज्वरकी मूर्च्छा, जीर्णज्वर, खांसी, श्वास ।
४३३२	पानीय वटिका (सिद्धफला)	भयङ्कर सन्निपात, दाह, खांसी, श्वास, मलावरोध । (स्वेदजनक है ।)
४४१५	पीयूषघन रसः	समस्त ज्वर ।
४४१६	,, ,,	शीतज्वर, उष्णज्वर, एकाहिक, चातुर्थिक, शूल, अग्निमांद्य ।
४४३७	प्रचण्ड रसः	नवीन ज्वर ।
४४३८	प्रतापतपनो रसः	सन्निपात ।
४४३९	प्रतापमार्तण्डोरसः	ज्वर
४४४१	प्रतापलङ्केश्वररसः	सन्निपातकी बेहोशी, क्षय, पाण्डु ।
४४४४	प्रतापाग्निकुमाररसः	सन्निपात ।
४४४५	प्रतिज्ञावाचकोरसः	समस्त ज्वर ।
४४८०	प्राणेश्वरो रसः (लघु)	शीतज्वर ।
४४८२	,, ,,	नवीन तीव्रज्वर, सन्निपात, दाहपूर्वज्वर, ज्वरका प्रचण्ड ताप, शूल ।
४७४५	बालार्क रसः	ज्वरको १ ही दिनमें नष्ट कर देता है ।
४७५६	ब्रह्मवटी	समस्त प्रकारके सन्निपात ।
४९४४	भस्मेश्वर चूर्णम्	सन्निपात ।
४९४५	भानुचूडामणिरसः ।	समस्त ज्वर ।
४९५०	भिषभा रसः	,, ,,
४९५७	भूतनाथ भैरव रसः	,, ,,
४९५८	भूतभैरव चूर्णम्	शीत ज्वरको १ दिनमें ही नष्ट कर देता है ।
४९६७	भैरव रसः	ज्वर, क्षय, खांसी, श्वास, अग्निमांद्य ।
४९७०	भैरवसिद्धि रसः	भयङ्कर सन्निपात ।
४९७१	भैरवी गुटिका	,, ,,

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
	मिश्र-प्रकरणम्	
३६७८	नारीक्षीर-प्रयोगः	ज्वर
४४९६	पञ्चसारम्	विषमज्वर, खांसी, श्वास, क्षय, हृद्रोग
४४९८	पटोलादिबस्तिः	विषमज्वर।
४९७५	भैरव रसायनम्	सन्निपात, अपस्मार।

(२४) तृष्णाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
२८५६	दाडिमबीजादि	तृष्णा
२९१४	द्राक्षादि क्वाथः	,,
३७१३	पञ्चाम्ल योगः	,, (मुखमें लेप करनेका योग।)
३७९१	परूषकादि गणः	वायु, तृषा, मूत्रदोष।
४५७९	बिल्वादि क्वाथः	कफज तृषा।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३१३४	दधित्थादिशिरोलेपः	तृष्णा, दाह।
४१६४	पञ्चाम्लको लेपः	तृषा।

नस्य-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३१८८	द्राक्षादि नस्यम्	तृष्णा।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
४३८३	पारदादि चूर्णम्	प्रवृद्ध तृषा।

(२५) दन्तरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३३६९	नागरादि गण्डूषः	शीताद।
४५४०	बकुल प्रयोगः	३ दिनके प्रयोगसे दांत दृढ़ हो जाते हैं।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
२९४१	दन्तमसी (दांतोकी मिस्सी)	दन्तशूल।
२९४२	दन्तरोगाशनि चूर्णम्	दन्तकृमि, दन्तशूल, मुखकी दुर्गन्ध।
२९४३	दन्तशूलनाशकयोगः	दन्तशूल।
२९४४	दन्त्यादि चूर्णम्	दन्तकृमि।
२९४६	दशन संस्कार चूर्णम्	दांतोंका मैल, समस्त दन्त रोग।
३४५०	नील्यादि प्रयोगः	दन्तकृमि।
३९२३	पाठाद्यं चूर्णम्	मसूढ़ोंकी पीड़ा, खुजली, पाक, स्राव, पाइरिया।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३९७३	पीतक चूर्णम्	मसूढ़ों के समस्त रोग, कण्ठरोग, मुखरोग, जिह्वारोग, तालुरोग।

गुटिका–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४८४७	भद्रमुस्तादि वटिका	दांतोंका हिलना।

अवलेह–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
१०२२	दार्व्यवलेहः	दांतोंकी निर्बलता, मसूढ़ोके व्रण।

घृत–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१०७	प्रपौण्डरीकाद्यं घृतम्	शीताद।

तैल–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०९२	दशमूलादि तैलम्	दांतोंका हिलना, कराल, दन्तहर्ष, कपाली, सौषिर।
३५१९	नीलसहचराद्यं ,,	दांतोंका हिलना।
४६८०	बकुलाद्यं ,,	,, ,,

रस–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२२१	द्विजरोपणी वटी	समस्त दन्तरोगोंको नष्ट और दांतोंको दृढ़ करती है।

मिश्र–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४७६०	बकुल–प्रयोगः	दांतोंका हिलना।
४७६१	बकुलबीज चर्वणम्	,, ,,

(२६) दाहाधिकारः

कषाय–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८७४	दाहप्रशमन महाकषायः	दाह (चरकोक्तयोग)
३७१४	पटीरादि क्वाथः	प्रबल दाह।

लेप–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५४२	निम्बकेन लेपः	दाह, तृषा, मोह।

रस–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२०४	दाहान्तको रसः	दाह, सन्ताप, मूर्छा
४३८१	पारदादि गुटिका	दाह

मिश्र–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३४५	धान्याम्ल सेकः	अङ्गदाह

(२७) नासारोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	तैल-प्रकरणम्	
३३०४	धवल्वगादि तैलम्	पित्तज तथा रक्तज प्रतिश्याय ।
४१२१	पाठादि "	पक्क पीनस ।
४१२५	पिप्पली "	क्षवथु ।
४६८८	बलाह्वयाद्यं "	कफज प्रतिश्याय ।
	नस्य-प्रकरणम्	
३५९४	निम्बादि नस्यम्	दीप्त नामक नासा-रोग ।
४२५०	पिप्पल्यादि "	प्रतिश्याय ।
	रस-प्रकरणम्	
४४४७	प्रतिश्यायहरो रसः	प्रतिश्याय ।

(२८) नेत्ररोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८६६	दार्वीसेकः	नेत्राभिष्यन्दके लिये आंख धोनेका योग
२८७२	दार्व्याद्याश्च्योतनम्	पित्तज, वातज और रक्तज नेत्राभिष्यन्द ।
२९३२	द्राक्षाद्याश्च्योतनम्	आंखोंकी खड़क, सूजन ।
३२४३	धात्रीफलरसादि सेचन कषायः	नेत्रशुक्र ।
३३७२	नागराद्याश्च्योतनम्	कफजनेत्राभिष्यन्द ।
३७११	पञ्चमूलाद्याश्च्योतनम्	वातज "
३७५९	पटोलादि क्वाथः	पिल्लरोग ।
३७६५	" गणः	नेत्रस्राव, रक्तप्रकोप ।
३८७४	प्रपौण्डरीकाद्याश्च्योतनम्	पित्तज वातज नेत्र पीड़ा ।
४५६५	बिभीतकादि क्वाथः	शोथ और शूलयुक्त नेत्रपाक ।
४५९०	बिल्वाद्याश्च्योतनम्	वाताभिष्यन्द ।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
३९७४	पुण्डरीक योगः	आंखोंकी लाली, अश्रुस्राव, पीड़ा, क्षत
	गुटिका-प्रकरणम्	
३४५२	नागरादि गुटिका	नेत्रपीड़ाको तुरन्त नष्ट करती है ।
	घृत-प्रकरणम्	
३०३९	दशमूल घृतम्	वातज तिमिर ।
३०४८	दशमूलादि घृतम्	वातज तिमिर ।
३०७५	द्राक्षाद्यं "	आंखोंका फूला,

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
		तिमिर, लाल रेखाएं, शिरपीड़ा।
४०६३	पटोलाद्यं घृतम्	समस्त नेत्ररोग।
४६५९	बलादि "	तिमिर।
४६६६	बिभीतकादि "	समस्त नेत्ररोग।
४८७७	भास्कराद्यं "	तिमिर, शुक्तिक, पिल्ल, अम्लाध्युषित, दृष्टिकी मन्दता, नक्तान्ध्य, दिवान्ध्य।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५२२	नीलोत्पलाद्यं तैलम्	तिमिर, काच, नक्तान्ध्य, पटल, अर्जुन, पिल्ल, रुधिरस्राव, पलकोंकी खाज।
३५२४	नृपवल्लभ "	तिमिर, पटल, काच, नक्तान्ध्य आदि।
४६९५	बिभीतकाद्यं "	तिमिर।
४८९७	भृङ्गराज "	नेत्रोंको स्वच्छ और १ मासमें बलि पलितको अवश्य नष्ट कर देता है।
४८९८	भृङ्गराज "	नष्ट चक्षु को ठीक करता है।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३१४८	दूर्वारसादिलेपः	नेत्रपीड़ा।
३५४५	निम्बुफलोद्भवादि योगः	नेत्ररोग।
४१७०	पथ्यादि लेपः	अभिष्यन्द आदि।
४१७१	" योगः	नेत्रपीड़ा।
४१७६	पयस्यादि लेपः	नेत्रपीड़ा, आंखोंकी लाली।
४१९०	पारिजातादिकल्कः	कफज नेत्रशूल।
४९१३	भूम्यामलक्याद्यो लेपः	नवीन नेत्राभिष्यन्द।

धूप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३५६७	निम्बादि धूपः	कफज नेत्राभिष्यन्द।

अञ्जन-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३१६४	दक्षाण्डत्वकाद्यञ्जनम्	फूला, अर्म।
३१६५	दन्तवर्तिः	नेत्रव्रण, शुक्र।
३१६६	दार्वी रस क्रिया	दाह, अश्रुस्राव, पित्तज नेत्ररोग।
३१६७	दार्वाद्यञ्जनम्	पित्तज तिमिर, नेत्रव्रण।
३१६८	दिव्यदृष्टिकरो रसः	
३१६९	दृक्प्रसादनी वर्तिः	समस्त नेत्ररोगोंको नष्ट और नेत्रोंको स्वच्छ करती है।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१७०	दृष्टिप्रदमञ्जनम्	समस्त नेत्ररोग।
३१७१	दृष्टिप्रदा वर्तिः	इसके सेवनसे अन्धेको भी दीखने लगता है।
३१७२	" "	आंखोंकी खाज, तिमिर।
३१७३	" "	पटल, तिमिर, फूला, अजकाजात।
३१७४	दृष्टिप्रसादनाञ्जनम्	नेत्रोंको स्वच्छ करता है।
३१७६	देवदारुरसक्रिया	अश्रुस्राव, रतौंधा, फूला, पिल्ल, तिमिर।
३१७७	देवदार्वञ्जनम्	पटल, रतौंधा।
३१७८	द्वादशामृताञ्जनम्	समस्त नेत्ररोग।
३१७९	द्विनिशादि वर्तिः	कुकूणक।
३३२२	धात्रीरस योगः	नेत्रपीड़ा।
३३२३	धात्र्याद्यञ्जनम	आंखसे पानी जाना, वातरक्तज नेत्रपीड़ा।
३५७३	नक्तान्ध्यकेतुः	नक्तान्ध्य।
३५७४	नक्तान्ध्य हरि वर्तिः	"
३५७५	नयन शाणाञ्जनम्	तिमिर पटल, पुष्प।
३५७६	नयनसुखा वर्तिः	तिमिर, अर्म, पटल, काच, अश्रुस्राव।
३५७७	नयनामृतवटी	तिमिर, पुष्प, पटल, नेत्रस्राव, रतौंधा, मांसवृद्धि, चिपिट।
३५७८	नयनामृताञ्जनम्	तिमिर, पटल, काच, शुक्र।
३५७९	नयनामृताञ्जनम्	नेत्ररोग।
३५८०	नवनेत्रदात्री वर्तिः	अभिष्यन्द, अधिमन्थ, सव्रण शुक्र, कुणक, तिमिर, पटल, विशेषतः कण्डू।
३५८१	नवाङ्गी वर्तिः	क्लेद, उपदेह, कण्डू तथा कफज नेत्र-रोग।
३५८२	नागाद्यञ्जनम्	तिमिर, अन्धता।
३५८३	नागार्जुनी गुटिका	तिमिर, पटल, रतौंधा, फूला, पिटिका।
३५८४	नागार्जुनी वर्तिः	तिमिर पटल।
३५८५	नारायणाञ्जनम्	नेत्रपाक, नेत्रशूल।
३५८८	नीलोत्पलादि गुटिकाञ्जनम्	दिवान्धता, नक्तान्ध्य।
३५८९	नीलोत्पलाद्यञ्जनम्	तिमिर।
३५९०	नेत्रवर्तिः	नेत्रपीड़ा।
३५९१	नेपालादि वर्तिः	कफज तिमिर रोग।
४२२०	पञ्चशतावर्तिः	तिमिर।
४२२१	पटलहराञ्जनम्	पटल।
४२२२	पत्राद्यञ्जनम्	तिमिर।
४२२३	पथ्याद्यञ्जनम्	अत्यन्त प्रवृद्ध अश्रुस्राव, कष्ट साध्य नेत्र प्रकोप।
४२२४	पलाशरसयोगः	नक्तान्ध्यको नष्ट करता है। इससे

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
		चन्द्रमाके चांदनेमें पुस्तक पढ़नेकी शक्ति प्राप्त होती है।
४२२५	पारदाद्यञ्जनम्	समस्त नेत्ररोग नाशक तथा दृष्टिवर्धक ।
४२२६	पारिजातादि योगः	कफज नेत्र पीड़ा ।
४२२७	पालङ्क्याादि गुटिका	तिमिर ।
४२२८	पाशुपतयोगः	समस्त नेत्राभिष्यन्द, लालिमा, पीड़ा
४२२९	पिण्डाञ्जनम्	दृष्टिको स्वच्छ तथा बलवती करता है ।
४२३१	पिप्पल्यादि गुटिका	अर्म, तिमिर, काच, कण्डू, शुक्र, अर्जुन, अजकाजात ।
४२३२	पिप्पल्याद्यञ्जनम्	फूला ।
४२३३	„ „	दृष्टिको गरुडके समान तीक्ष्ण करता है ।
४२३४	„ „	पिष्टक ।
४२३६	„ „	रतौंधा, तिमिर, आंखोंकी खाज ।
४२३७	पुण्डरीक योगः	नेत्रशूल, नेत्रक्षत, पाकात्यय, अजकाजात ।
४२३८	पुनर्नवा „	आंखोंकी खाज, नेत्रस्राव, फूला, तिमिर रतौंधा ।
४२३९	पुष्पकासीसाद्यञ्जनम्	पिल्लादि पक्ष्मरोग ।
४२४०	पुष्पहरीवर्तिः	फूला ।
४२४१	पुष्पाक्षादिरसक्रिया	अर्म, काच, तिमिर, अर्जुन ।
४२४२	पोत्रीदन्तादिवर्तिः	फूला ।
४२४३	प्रकाशिका गुटिका	नक्तान्ध्य, दिवान्ध्यता
४२४६	प्रभावती „	आंखकी खाज, तिमिर, शुक्र, अर्म और लाल रेखाएं ।
४२४७	प्रवालाद्यञ्जनम्	शुक्तिका ।
४२४८	प्रसादनाञ्जनम्	नेत्रोंको स्वच्छ करता है ।
४७२२	बिभीतकादि वर्तिः	पित्तज पटल रोग ।
४७२३	बिभीतमज्जादियोगः	फूला
४७२४	बिल्वाञ्जनम्	नेत्रोंकी सूजन, पीड़ा अभिष्यन्द, अधिमन्थ, सुर्खी ।
४७२५	„ „	नेत्रस्राव इत्यादि ।
४७२७	बृहत्यादि वर्तिः	वातज नेत्ररोग ।
४७२८	बृहत्याद्यञ्जनम्	फूला ।
४९२२	भद्रमुस्ता योगः	पुराना फूला, आंखोंकी लाली ।
४९२३	भानुमति वर्तिः	तिमिर ।
४९२४	„ „	नक्तान्ध्य, पिल्ल, तिमिर, नेत्रक्षत, नेत्रकण्डू ।
४९२५	भास्कर चूर्णम्	काच, नक्तान्ध्य, तिमिर, आंखोंकी लाल रेखा ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४९२६	भास्कर वर्तिः	तिमिर।
४९२७	भास्कराञ्जनम्	"
४९२८	भीमसेनी कर्पूर	

नस्य-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४७२९	बृहत्यादि नस्यम्	अत्यधिक निद्रा।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६००	नयनचन्द्रलोहम्	समस्त नेत्ररोग।
३६६६	नेत्राशनि रसः	आंखोंसे रक्तस्राव होना, नक्तान्ध्य, तिमिर, काच, पुराना पिष्टक।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३३९	धात्रीपिण्डी	आंखकी पित्तज पीड़ा।
३३४१	धात्री रसक्रिया	आंखोंके पित्तज वातज रोग, तिमिर, पटल।
३३४२	" "	पटल।
३६७२	नागादि शलाका	नेत्रोंकी चिपचिपाहट, कण्डू, पिल्ल, तिमिर।
३६७३	नागुर्जुनी शलाका	नेत्रज्योति-वर्द्धक।
३६७९	निम्बपत्रादि योगः	अक्षिपाक।
३६८०	निम्बादि पिण्डी	नेत्राभिष्यन्द।
३६८७	निशादि प्रयोगः	नेत्रपीड़ा।
४५०१	पलाशवृन्त योगः	पलकोंके बाल जमाता और नेत्रोंके कफज विकारों को नष्ट करता है।
४५०६	पिप्पलदलादि योगः	तिमिर।
४७७०	बाष्प स्वेदः	नेत्रपीड़ा
४७७४	बिसादि परिसेकः	नेत्राभिष्यन्द।

(२९) पाण्डुरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८३३	दशमूलादि क्वाथः	कफज पाण्डु, ज्वर अतिसार, शोथ, खांसी।
४५२१	फलत्रिकादि क्वाथः	कामला

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४२६	नागरादि चूर्णम्	कफजपाण्डु।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४५६	निम्बादि गुटिका	पाण्डु, कामला, ज्वर।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	अवलेह-प्रकरणम्	
३०२१	दार्वीत्वगाद्यवलेहः	कामला ।
३२८१	धात्र्यवलेहः	पाण्डु, कामला, हलीमक, खांसी, पित्त।
	घृत-प्रकरणम्	
३०३७	दन्त्याद्यं घृतम्	पाण्डु, तिल्ली, गुल्म।
३०६७	देवदार्वाद्यं "	पाण्डु, हृद्रोग, ग्रहणी, अर्श ।
३०६८	द्राक्षा "	पाण्डु, कामला, गुल्म, ज्वर, उदर-रोग ।
४०४४	पञ्चकोल "	पाण्डु, हलीमक, क्षय ।
४६५६	बला "	पाण्डु, कामला, दाह
४६५८	बलादि "	मिट्टी खानेसे उत्पन्न हुवा पाण्डु ।
	तैल-प्रकरणम्	
३५१२	निर्गुण्डी तैलम्	कष्ट साध्य कामला।
	आसवारिष्ट-प्रकरणम्	
३३०९	धात्र्यरिष्टः	पाण्डु, कामला, विषमज्वर, श्वास, अरुचि, हिचकी ।
४७००	बीजकासवः	पाण्डु, कामला, अर्श शोथ ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	नस्य-प्रकरणम्	
३१८६	देवदाली फलरस-नस्यम्	कामला
३१८७	देवदाली योगः	पुरानी कामला ।
	रस-प्रकरणम्	
३२००	दार्व्यादि मण्डूरवटकः	पाण्डुमें अत्युपयोगी तथा कुष्ठ, कामला और शोथनाशक ।
३२०१	दार्व्यादि लोहम्	कामला, पाण्डु।
३२२३	द्विहरिद्राद्यं लोहम्	कामला ।
३३३२	धात्री "	कष्टसाध्य कामला।
३६०८	नवायस चूर्णम्	पाण्डु, शोथ, उदर रोग, अग्निमांद्य, अर्श, अरुचि ।
३६१०	" "	पाण्डु, हलीमक, ग्रहणी, शोथ, श्वास, खांसी ।
३६११	नवायस लोहम्	पाण्डु, कामला, हलीमक, अर्श ।
३६५७	निशादि "	कामला, पाण्डु ।
४२७२	पञ्चानन वटी	शोथ, पाण्डु ।
४२७३	पञ्चाननो रसः	पाण्डु, हलीमक, मलावरोध ।
४३०२	पञ्चास्य रसः	कामला ।
४३१२	पाण्डुकथाशोषरसः	पाण्डु, हलीमक ।
४३१३	पाण्डुकुठार रसः	पाण्डु, शोथ, प्लीहा।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४३१४	पाण्डुगजकेसरी रसः	पाण्डु, हलीमक, शोथ, अग्निमांद्य ।
४३१५	पाण्डुनाशन रसः	समस्त प्रकारके पाण्डु ।
४३१६	पाण्डुनाशन रसः	पाण्डु, शोथ, कफ, वायु ।
४३१७	पाण्डुपङ्कशोषणरसः	पाण्डु, शोथ ।
४३१८	पाण्डुपञ्चानन रसः	हलीमक, पाण्डु, शोथ, अग्निमांद्य ।
४३१९	पाण्डुसूदन रसः	पाण्डु ।
४३२०	" "	पाण्डु, शोथ ।
४३२१	पाण्डुहारी हरीतकी	शोष, पाण्डु ।
४३२२	पाण्डुरि रसः	पाण्डु, कामला ।
४४०२	पित्तपाण्डुरि रसः	पित्तज पाण्डु ।
४४२०	पुनर्नवा मण्डूरम्	पाण्डु, कामला, हलीमक, ज्वर, शोथ, खांसी, श्वास ।
४४२१	पुनर्नवामण्डूरम्	पाण्डु, शोष, उदररोग, शूल ।
४४४३	प्रतापलङ्केश्वर रसः	सर्वदोषज पाण्डु ।
४४७०	प्रवाल प्रयोगः	पाण्डु ।
४४७८	प्राणवल्लभो रसः	कामला, पाण्डु, हलीमक और आनाह नाशक (कामलामें विशेष उपयोगी) ।
४७४६	बिभीतकाख्य लवणम्	पाण्डु ।
४७४७	बिभीतकाद्यो वटकः	भयङ्कर पाण्डु ।
४९६३	भूनिम्बादि गुटी	पाण्डु ।
४९६४	भेकराज रसादि मोदकः	पाण्डु ।

(३०) पित्तरोगाधिकारः

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४४०१	पित्तकृन्तनो रसः	पित्त रोग ।
४४०३	पित्तप्रभञ्जनो रसः	वात पित्तज रोग ।
४४०७	पित्तान्तक रसः	कोष्ठ तथा शाखाश्रित पित्त, अम्लपित्त, पाण्डु, हलीमक, भ्रान्ति, वमन
४४०८	" "	पित्त, पित्तज्वर, दाह तृषा, शोथ, क्षय ।

(३१) प्रमेहाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८६९	दार्व्यादि क्वाथः	प्रमेह ।
२८९२	दूर्वादि ,,	शुक्रमेह ।
२९३८	द्विनिशादिशीत-कषायः	प्रमेह ।
३२५५	धात्र्यादि क्वाथः	प्रमेह ।
३४०६	नीलोत्पलादि ,,	पित्त प्रमेह ।
३४०७	,, ,,	,, ,,
३७७१	पथ्यादि कषायः	,, ,,
३८००	पलाश पुष्प क्वाथः	अनेक प्रकारका प्रमेह ।
३८१०	पाठादि ,,	हस्ति मेह ।
३८१४	पारिजातादिकाथाष्टकम्	उदकमेह, इक्षुमेह, सुरामेह, सिकतामेह शनैमेह, लवणमेह, पिष्टमेह, सान्द्रमेह।
४५१९	फलत्रिकादि क्वाथः	समस्त प्रमेह ।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
३४४५	निशादि चूर्णम्	समस्त प्रमेह ।
३४५१	न्यग्रोधादि ,,	२० प्रकारके प्रमेह, मूत्रदोष । इसके सेवनसे प्रमेह पिडिका नहीं निकलने पातीं ।
४८३४	मूधात्र्यादि योगः	असाध्य प्रमेह ।
	अवलेह-प्रकरणम्	
३०३२	द्राक्षापाकः	प्रमेह, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, हाथपैरों की दाह ।
३२८५	धात्रीपाकः	प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पित्त ।
४०४१	पूगपांसुर योगः	प्रमेह, जीर्णज्वर।
४०४२	पूगीपाकः	प्रमेह, वायु, क्षीणता अग्निमांद्य, वृद्धावस्था
	घृत-प्रकरणम्	
३०४१	दशमूल घृतम्	प्रमेह पिडिका, प्रमेह के समस्त उपद्रव ।
३०५६	दाडिमाद्यं ,,	२० प्रकारके प्रमेह मूत्राघात, अश्मरि, भयंकर मूत्रकृच्छ्र, अफारा ।
३३००	धान्वन्तर ,,	प्रमेह, शोथ, अर्श, प्रमेहपिडिका ।
३३०१	,, ,,	,,

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	तैल-प्रकरणम्	
४१३६	प्रमेह मिहिर तैलम	ध्वजभंग, दाह, प्रमेह ।
	आसव प्रकरणम् ।	
३१२७	देवदार्वासवः	प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, वातव्याधि ।
	लेप-प्रकरणम्	
४९१८	भृङ्गराजादि लेपः	वातज प्रमेह पिडिका।
	रस-प्रकरणम्	
३६१४	नागभक्त्यादि रसः	सुरामेह ।
३६१६	नागभस्म योगः	समस्त प्रमेह ।
३६३६	नागेन्द्र गुटिका	सिकतामेह ।
३६३७	नागेन्द्र रसः	प्रमेह
३६५४	नित्यारोग्येश्वरो रसः	दुस्साध्य लालामेह।
४२६३	पञ्चलोह रसायनम्	समस्त प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, अपस्मार, क्षय ।
४२७४	पञ्चाननो रसः	शोष, प्रमेह ।
४२७६	" "	२० प्रकारके प्रमेह, अश्मरी, मूत्राघात, उग्र मूत्रकृच्छ्र ।
४३०५	पथ्यादि चूर्णम्	बहुमूत्र रोग
४४५६	प्रमदानन्दो रसः	भयंकर प्रमेह, ग्रहणी, कफ, वात शूल, मधुमेहनाशक वीर्य तथा कामशक्ति वर्द्धक ।
४४५९	प्रमेहकुञ्जरकेसरोरसः	रसायन है । १८ प्रकारके प्रमेहको १ मासमें नष्ट करता है । उत्साह, शुक्र अग्निवर्द्धक ।
४४६०	प्रमेहकुलान्तको रसः	वसामेह ।
४४६१	" "	२० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, मूत्राघात, अरुचि।
४४६२	प्रमेहकेतु रसः	प्रमेह ।
४४६३	प्रमेहगजसिंहो रसः	समस्त प्रमेह ।
४४६४	प्रमेहबद्धरसः	" "
४४६५	प्रमेहसिन्धुतारक रसः	" "
४४६६	प्रमेहहरो रसः	प्रमेह ।
४४६७	प्रमेहाङ्कुश रसः	"
४७३५	बहुमूत्रान्तको रसः	बहुमूत्र ।
४७३६	" "	बहुमूत्र और बहुमूत्रके उपद्रव ।
४७३७	बहुमूत्रान्तक लोहम्	बहुमूत्र ।
४९५१	भीमपराक्रम रसः	समस्त प्रमेह ।

(३२) बालरोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
३२६८	धान्यादि योगः	खांसी, श्वास ।
३३५५	नागरादि क्राथः	सर्वविध बालातिसार ।
३६९०	पञ्चतिक्तक गणः	विसर्प, कुष्ठ ।
३७०४	पञ्चमूली क्षीरम्	हिक्का ।
३७१७	पटोलमूलादिप्रयोगः	आमातिसार ।
३७४७	पटोलादि काथः	विसर्प और विस्फोटक ज्वर ।
३८३५	पिप्पल्यादि काथः	हिक्का ।
३८७६	प्रियङ्ग्वादि कल्कः	तृषा, छर्दि, अतिसार ।
४५६९	बिल्वमूलादि क्वाथः	छर्दि, अतिसार ।
४५७३	बिल्वादि काथः	उत्फुल्लिका ।
४५७६	" "	अतिसार ।
४७७६	भद्रमुस्तादि क्वाथः	समस्त प्रकार के ज्वर ।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
२९५०	दाडिमचतुःसम चूर्णम्	अतिसार ।
२९५१	दाडिमबीजादि प्रयोगः	तृष्णा ।
२९६५	दार्व्यादि चूर्णम्	कर्णपाक, कर्णस्राव, मुखपाक ।
२९८७	द्राक्षादि "	खांसी, तमक श्वास।
२९९३	" योगः	खांसी ।
३२७२	धातक्यादि प्रयोगः	इसके उपयोगसे दांत आसानी से निकल आते हैं ।
३२७९	धान्यादि चूर्णम्	अतिसार, छर्दि ।
३४२४	नागरादि "	कफज ग्रहणी ।
३९००	पथ्यादि "	तालुकण्टक नष्ट होता तथा गर्दन दृढ़ होती है ।
३९३३	पारशीयादि "	खांसी, ज्वर, अतिसार, छर्दि, विशेषतः उदरके कृमि ।
३९५०	पिप्पल्यादि चूर्णम्	तृषा ।
३९५१	" "	भयङ्कर ग्रहणी ।
३९५३	" "	अधिक रोना ।
३९५६	" "	डब्बा ।
३९५७	" "	हिक्का, वमन ।
३९५८	" "	हर प्रकारका अजीर्ण शूल, अफारा, अग्निमांद्य ।
३९८४	पुष्करादि "	खांसी ।
३९८९	प्रियङ्ग्वादि "	दुग्धदोष-जनित विकार ।
४५२५	फलिन्यादि चूर्णम्	तृष्णा, छर्दि, अतिसार ।
४६३४	बिल्वादि चूर्णम्	रक्तातिसार ।
४८३१	भार्ग्यादि योगः	खांसी, श्वास ।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४००३	पियालादि मोदकः	पौष्टिक ।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२८३	धातक्याद्यवलेहः	ज्वरातिसार, छर्दि ।
३४६५	नागरादि लेहः	खांसी, कफज छर्दि ।
३४६८	निशाद्यवलेहः	खांसी, छर्दि ।
४६४७	बालकुटजावलेहः	रक्तातिसार, आमशूल

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४७८	नागराद्यं घृतम्	खांसी, श्वास, अपतन्त्रक ।
४०६६	पथ्याद्यं "	गुल्म, अफारा, गुदभ्रंश, श्वास, खांसी, विलम्बिका।
४०७३	पाठाद्यं घृतम्	बुद्धि, स्मृति, रूप और बल वर्द्धक ।
४०७४	" "	अग्निमांद्य, कृमि, अतिसार, पाण्डु, गुल्म, शोथ ।
४०७६	" "	मिट्टी भक्षणसे उत्पन्न हुवे विकार ।
४०८९	पिप्पल्याद्यं "	दूध पीकर वमन कर देना तथा अपानवायुके साथ दस्त आना ।
४०९३	" "	दन्तोद्भेदरोग ।
४६६४	बालचाङ्गेरी घृतम्	अतिसार, कष्टसाध्य संग्रहणी ।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०८१	दशनफलादि तैलम्	बालकोंके शिरोरोग
३०९४	दशमूलाद्यं "	उन्माद, अपस्मार, ग्रह ।
३५१७	निशादि "	नाभिपाक ।
४११७	पयस्यादि "	पूतनाग्रह ।
४६९४	बिभीतकाद्यं "	पूतिकर्णरोग ।
४९०१	भृङ्गादि "	मुखमण्डिका ।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५२६	नरास्थि लेपः	कुकूणक ।
३५५७	न्यग्रोधादि "	दाह लाली और वेदना युक्त विसर्प ।
४२०६	प्रपौण्डरीकादि "	विसर्प ।
४२१३	प्लक्षाद्यो "	त्वग्दोष, रक्तविकार, चकते, विस्फोटक ।

धूप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१५९	दशाङ्ग धूपः	ग्रहदोष ।
४२१५	पलङ्कषादि धूपः	ज्वरके वेगको घटाती है ।
४२१६	पारिभद्रादि धूपः	समस्त ग्रहदोष ।
४२१७	पुरीषादि "	पूतनाग्रह ।
४२१८	पूतिकरञ्जादि "	समस्त ग्रहदोष ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	रस-प्रकरणम्	
३१९१	दन्तोद्भेदगदान्तक	दांत निकलनेके समयके रोग, ज्वर, आक्षेपक, अतिसार।
३६३१	नागादि वटिका	महा श्वास।
३६३२	नागादि चूर्णम्	दूध पीने वाले बच्चोंके ग्रहदोष, उदर विकार, अजीर्ण, कब्ज और कृशता नाशक। पौष्टिक, पाचक।
४७४१	बालज्वराङ्कुशरसः	गर्भिणी और बालकोंके समस्त ज्वर।
४७४२	बालयकृदरि लोहम्	कष्टसाध्य यकृत्, ज्वर, प्लीहा, शोथ, पाण्डु, खांसी।
४७४३	बालरसः	ज्वर, सन्निपात, खांसी।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२२५	दन्तोद्भेदकः	दांत निकलनेके समयके समस्त रोग।
३२२६	दन्तोद्भेदगदान्तक क्रिया	"
३६८६	निर्गुण्डी मूल बन्धनम्	दन्तोद्भेद पीड़ा।
४५००	पद्मिनी पत्रयोगः	काच निकलना।
४७६५	बलामूलचूर्णप्रक्षेपः	शिरोव्रणके कृमि।

(३३) ब्रध्न रोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३७८३	पथ्या योगः	ब्रध्न।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६३३	बिल्वमूलाद्यं चूर्णम्	ब्रध्न।

(३४) भगन्दराधिकारः

गुग्गुलु-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४६०	नवकार्षिक गुग्गुलुः	भगन्दर, कुष्ठ, नाड़ी-व्रण।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५१६	निशादि तैलम्	भगन्दर।
४८८८	भिष्यन्दन "	भगन्दरका व्रण।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	लेप-प्रकरणम्	
३१३९	दन्त्यादि लेपः	दुस्साध्य भगन्दर।
४७११	बिडालास्थि लेपः	भगन्दर, दुष्ट व्रण।
	रस-प्रकरणम्	
३६५०	नारायण रसः	भगन्दर, नाड़ी व्रण।
३६५१	नारायण रसः	भगंदर, गुल्म, शूल।
४९३७	भगन्दरारि रसः	भगन्दर।
४९३८	भगन्दरोपदंशारि रसः	भगंदर, उपदंश।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३६८८	निशादि वर्तिः	भगंदर और नासूर।

(३५) मुखरोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२९०७	द्राक्षादि कषायः	मुखपाक नाशक कवलग्रह।
२९०९	,, ,,	मुखपाक नाशक गण्डूष।
३६९२	पञ्चपल्लव क्वाथः	मुखपाक।
३७१२	पञ्चवल्कलादिक्वाथः	,,
३७२१	पटोलादि क्वाथः	समस्त मुखरोग।
३७३२	,, ,,	मुखपाक।
३८३०	पिप्पल्यादिकवलः	उपकुशादि मुखरोग।
३८३१	,, ,,	समस्त मुखरोग।
४६००	बृहत्यादि क्वाथः	कृमिदन्तकी पीड़ा।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
२९८१	द्राक्षादि चूर्णम्	गलरोग।
३९१२	पीतक ,,	मुखरोग, कण्ठरोग।
	गुटिका-प्रकरणम्	
३९९३	पञ्चकोलाद्या गुटिका	कण्ठरोग
	तैल-प्रकरणम्	
३११०	देवदारु तैलम्	गलरोग।
	लेप-प्रकरणम्	
३५६२	न्यग्रोधाद्युद्वर्तनम्	मुखकी झांई।
४१६७	पत्राङ्गादि लेपः	रंग गोरा करता है।
४२११	प्रियङ्ग्वादि ,,	अत्यन्त सौन्दर्य वर्द्धक।
	रस-प्रकरणम्	
४३९४	पार्वती रसः	मुखरोग, तृष्णा।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३२२४	दन्तधावन योगः	मुखकी गन्ध।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२३०	दार्वीरसक्रिया	मुखका नाड़ी व्रण, रक्तदोष ।
३२३१	दार्व्यादि गण्डूषः	मुखपाक ।
३२३२	दार्व्यादि घनः	मुखपाक, मुखका नाड़ी व्रण ।
३६८४	निर्गुण्डी प्रयोगः	उपजिह्वा ।
३६८५	निर्गुण्डीमूलचर्वणम्	कण्ठशालूक, उपजिह्वा ।
४४९९	पथ्या योगः	प्रसेक ।
४७७५	बीजपूर योगः	मुखकी दुर्गन्ध ।

(३६) मूत्रकृच्छ्रमूत्राघाताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८३८	दशमूलादि क्वाथः	अष्ठीला, वातकुण्डलिका, वातज मूत्राघात ।
२८६२	दाडिमाम्बु योगः	मूत्राघात ।
२८७९	दुरालभादिकषायः	मूत्रकृच्छ्र, दाह, शूल।
२९०६	द्राक्षादि कल्कः	मूत्रकृच्छ ।
३२४७	धान्यादि क्वाथः	सैंकड़ों योगोंसे आराम न होनेवाला मूत्रकृच्छ्र ।
३२४८	” ”	मूत्रकृच्छ्र, पीडा, दाह ।
३३४८	नलादि ”	वेदना युक्त मूत्राघात ।
३३८०	निदिग्धिकादि स्वरसः	मूत्रकृच्छ्र ।
३३८१	निदिग्धिकास्वरस प्रयोगः	सशोणित ऊष्णवात ।
३८१७	पाषाणभेदादिकषाय	भयङ्कर मूत्रकृच्छ्र ।
३८१९	” ” क्वाथः	पीड़ा, दाह, मूत्रावरोध, मूत्रकृच्छ ।
३८२०	पाषाणभेदादि क्वाथः	मूत्रावरोध, शुक्राश्मरी, शर्करा ।
३८२१	” ” ”	मूत्रावरोध ।
४५६८	बिल्वमूलादिकषायः	मूत्रकृच्छ्रको ३ दिनमें नष्ट करता है।
४६०२	बृहत्यादि क्वाथः	त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्र।
४६०६	” गणः	अरुचि, हृल्लास, मूत्रकृच्छ ।
४८१४	भृष्टेक्षुरसपानम्	मूत्रकृच्छ्र ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९५५	दाडिमादि योगः	मूत्रकृच्छ्र नाशक, हृद्य ।
२९७३	देवदार्वादि चूर्णम्	मूत्राघात ।
३९१६	पाटलाभस्म योगः	”
४८१८	भद्रादि चूर्णम्	”

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२९७	धान्यगोक्षुरघृतम्	मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, भयङ्कर शुक्र दोष।
४८६९	भद्रावह ”	उष्णवात ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	लेप-प्रकरणम्	
४१५९	पङ्कलेपः	मूत्रकृच्छ्र ।
	रस-प्रकरणम्	
४४७१	प्रवाल प्रयोगः	कफज मूत्रकृच्छ्र ।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३६७४	नारिकेलजलादि पेयम्	मूत्रकृच्छ्र ।
३६७६	नारिकेलादिपेयम्	,, ।

(३७) मूर्छामदात्ययाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८८५	दुरालभादि कषायः	भ्रम, मूर्च्छा ।
२९२३	द्राक्षादि काथः	मूर्च्छा ।
२९२८	,, प्रयोगः	मूर्च्छा, भ्रम ।
३६९५	पञ्चमूल कषायः	मदात्यय, मूर्च्छा ।
	गुटिका-प्रकरणम्	
४८५५	भ्रमनाशिनी गुटी	भ्रम ।
	अवलेह-प्रकरणम्	
३०२९	द्राक्षाद्यवलेहः	अरुचि, मदात्यय, मूर्च्छा, श्वास, खांसी
	घृत-प्रकरणम्	
४०६५	पथ्याद्यं घृतम्	मद, मूर्च्छा ।
४०९७	पुनर्नवादि ,,	मद्यपानसे हुवा ओजक्षय ।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३६७७	नारिकेलादि योगः	तृषा, मूर्च्छा, भ्रम।

(३८) मेदरोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
४५७८	बिल्वादि काथः	मेद ।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
४४२४	फलत्रिकादिचूर्णम्	मेद, कफ, वायु ।
	गुग्गुलु-प्रकरणम्	
३०११	दशाङ्ग गुग्गुलुः	मेद, आमवात, कफरोग ।
	मिश्र-प्रकरणम्	
४७६४	बब्बूलादि योगः	अधिक पसीना आना ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण	संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण

(३९) रक्तदोषाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३८२	निम्बस्वरसपानम्	सर्वदोषजरक्तविकार।

(४०) रक्तपित्ताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९११	द्राक्षादि क्काथः	रक्तपित्त, श्वास, खांसी।
२९२५	,, क्षीरम्	रक्तपित्त।
२९३४	द्राक्षाहरीतकीयोगः	रक्तपित्त, जीर्णज्वर।
३२६१	धान्यकादिहिमः	रक्तपित्त,ज्वर, दाह, तृष्णा, शोष।
३७२८	पटोलादि क्काथः	रक्तपित्त।
३७८६	पद्मकादि ,,	,,
३७८९	पद्मोत्पलादिक्काथः	भयङ्कर रक्तपित्त।
३८७५	प्रियङ्ग्वादिकषायः	रक्तपित्त।
४५५८	बलासिद्ध क्षीरम्	,,

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९८२	द्राक्षादि चूर्णम्	नाक, मुंह, गुदा, योनि, लिंग आदि-से होनेवाला रक्त-स्राव; रक्तातिसार, रक्तप्रदर, रक्तार्श।
३४४९	नीलोत्पलादि योगः	रक्तपित्त।
३८९२	पत्रादि चूर्णम्	रक्तपित्त, दाह,ज्वर, खांसी, क्षय; मुंह या मूत्रमार्गसे अत्यधिक रक्तस्राव होना।
३८९३	पथ्याचूर्ण योगः	रक्तपित्त।
३९८७	पृथ्वीका योगः	श्वासमें लोहकी और उद्गारमें धुवेंकी गन्ध आना।
३९९०	प्रियङ्ग्वादिचूर्णम्	हरप्रकारका रक्तपित्त, शस्त्राघातका रक्त-स्राव।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०२२	पलाशवृन्त योगः	रक्तपित्त।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०६५	दूर्वाद्यं घृतम्	हर प्रकारका रक्तपित्त, रक्तकी वमन।
३०७३	द्राक्षादि ,,	रक्तपित्त, ज्वर, रक्त-प्रमेह।
४०७१	पलाश ,,	रक्तपित्त।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	तैल-प्रकरणम्	
३१०९	दूर्वाद्यं तैलम्	रक्तपित्त, वायु ।
	लेप-प्रकरणम्	
३३१७	धात्री लेपः	नकसीर ।
	नस्य-प्रकरणम्	
३१८२	दाडिमकुसुमरस प्रयोगः	नकसीर ।
३१८४	दाडिमादि नस्यम्	नकसीर
३१८५	,, ,,	,,
४२५६	प्रियङ्ग्वादि ,,	रक्तपित्त ।
४२५७	प्लाण्ड्वादि ,,	नकसीर ।
	मिश्र-प्रकरणम्	
४४९४	पञ्चमूल्यादि पेया	रक्तातिसार, अधोगत रक्तपित्त ।

(४१) रसायनवाजीकरणाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
३२५६	धात्र्यादि योगः	वृद्धावस्था
४५५९	बल्यमहाकषायः	
४५९९	बृंहणीय महाकषायः	
४७७९	भल्लातक क्षीरम्	रसायन
४७८०	,, क्षौद्रम्	,,
४७८१	,, रसायनम्	शुक्रशोधक, बलिपलितनाशक, कुष्ठकृमि नाशक ।
४७८४	भल्लातकादि योगः	अत्यन्तवाजीकरण ।
४८१२	भृङ्गराज रसायनम्	रसायन
	चूर्ण-प्रकरणम्	
२९९२	द्राक्षादि प्रयोगः	धातुक्षीणता, बलह्रास ।
३२७५	धान्यादि चूर्णम्	इसके सेवनसे आयुपर्यन्त बाल काले और इन्द्रियां विकार रहित रहती हैं ।
३४१८	नागवल्याद्यं चूर्णम्	वीर्यवर्द्धक, स्तम्भक, रसायन ।
३४३१	नारसिंह चूर्णम्	जरा, व्याधि, बलि, पलित, खालित्य, प्रमेह आदि ।
३९१४	पलाशबीजादियोगः	१ मास तक सेवन करनेसे वृद्धभी तरुणके समान हो जाता है ।
३९८१	पुनर्नवा योगः	वृद्ध भी नवीन शरीर प्राप्त करता है ।
४६१२	बब्बूरादि प्रयोगः	कृशपुरुषको स्थूल करता है । देहकम्प और शोषमें हितकारी है ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६१६	बलादि चूर्णम्	वाजीकरण।
४८४३	भृङ्गराज रसायनम्	पलित।
४८४४	,, ,,	,,
४८४५	भृङ्गराजादि चूर्णम्	रसायन। रोगोंसे बचाता है।
४८४६	,, ,,	रसायन।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०२४	दासरसायन लौहम्	रसायन।
२४६६	नागराद्यवलेहः	,,
२४७१	नारिकेल पाकः	नपुंसकता नाशक, वीर्यवर्द्धक।
४०३३	पिष्टीपाकः	कमरके दर्द तथा कृशता को नष्ट करता है। उत्तम वाजीकरण है।
४०३९	पूग खण्डः	प्रमेह, बन्ध्यत्व आदि नाशक; उत्तम वाजीकरण।
४०४०	पूगपाकः (बृहद्)	नपुंसकता, प्रमेह, हाथ पैरोंकी दाह, अग्निमांद्य।
४६४६	बादाम पाक	उत्तम वाजीकरण।
४६५३	ब्राह्मी रसायन	रसायन।
४६५४	,, ,,	इसके सेवनसे शरीरपर विषका प्रभाव नहीं होता; यदि सर्प काट खाय तो वह स्वयं ही मर जाता है।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४८०	नारसिंहघृतम्	अत्यन्त बल तथा सौन्दर्य वर्द्धक।
३४८१	,, ,,	अत्यन्त वाजीकरण।
४६७७	ब्राह्मी (सारस्वत) ,,	स्वर, कान्ति, स्मृति मेधा और शुक्र वर्द्धक।
४६७८	ब्राह्मी घृतम्	समस्त इन्द्रियों के बल और आयुकी वृद्धि तथा अपस्मार, उन्माद और ज्वरका नाश करता है।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१०१	दाडिमाद्यं तैलम्	लिङ्ग वर्द्धक।
४११९	पलाशबीज ,,	नपुंसकता, हस्तक्रियाके दोष। (तिला है।)
४१२२	पानीनाशक ,,	इन्द्रीकी नसोंका पानी निकाल कर नपुंसकता दूर कर देता है।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६९६	बृहती तैलम्	नपुंसकता।
४८८५	भल्लातक ,,	रसायन।
४८८६	भल्लातक तैल-रसायनम्	,,

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१२०	दशमूलारिष्टः	दुबले मनुष्यों को पुष्ट करता तथा बल वीर्य और तेज की वृद्धि करता है।
३१२९	द्राक्षासवः	अत्यन्त वाजीकरण।
३१३२	,, (महा)	अत्यन्त वीर्य वर्द्धक।
३५२५	नारिकेलासवः	कामशक्ति तथा सौन्दर्य वर्द्धक, बलि पलित नाशक

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५३२	नागरादि लेपः	नपुंसकता।
३५४६	निर्गुण्ड्यादिप्रयोगः	शरीरकी झुर्रियां।
४९०६	भल्लातकादि लेपः	लिङ्गको पुष्ट और वृहद् करता है।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२०६	दिव्यखेचरीगुटिका	रसायन।
३२०७	दिव्यखेचरी वटिका	,,
३२०९	दिव्यामृत रसः	,,
३३२७	धातुबद्ध रसः	,,
३३२९	धात्री लोहम्	वाजीकरण।
३३३३	धात्र्यादि प्रयोगः	रसायन।
३६३९	नागेश्वर विधिः	अत्यन्त वाजीकरण।
३६५२	नारीमत्तगजाङ्कुशरसः	,, ,,
४२६१	पञ्चबाणो रसः	,, ,, लिङ्गवर्द्धक।
४२६६	पञ्चशरो रसः	अत्यन्त वाजीकरण
४२६७	पञ्चसायकः	,, ,,
४२८७	पञ्चामृत रसः	समस्त रोग।
४२८९	,, ,,	रसायन।
४२९५	,, ,,	,,
४२९६	,, ,,	सप्तधातु, बल, बुद्धि कान्ति, रुचि और अग्नि वर्द्धक, तथा कफरोग, बन्ध्यत्व और नपुंसकता नाशक एवं रसायन।
४२९८	,, ,,	समस्त रोग।
४३०३	पतङ्गयोगः	अत्युत्तम शुक्र-स्तम्भक है।
४३०४	पथ्यादि चूर्णम्	वृद्धावस्थाको नहीं आने देता।
४३०६	पथ्यादि योगः	वृद्धावस्था।
४३३३	पारद गुटिका	कमरमें बांधने से वीर्य स्तम्भन होता है।
४३८६	पारदादि योगः	वीर्यस्तम्भक।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४४२४	पुष्पधन्वा रसः	वाजीकरण ।
४४२५	,, ,,	बल तथा आयु वर्द्धक, अत्यन्त वाजीकरण ।
४४२६	,, ,,	अत्यन्त वाजीकरण।
४४३१	पूर्णचन्द्रो ,,	पुष्टि, वीर्य तथा अग्नि वर्द्धक एवं पित्तरोग और कृशता नाशक ।
४४३२	,, ,,	दुर्बल मनुष्यको १ मासमें ही बलवान बना देता है ।
४४३३	,, ,,	बल्य, रसायन, वाजीकर
४४५७	प्रमदेभाङ्कुश रसः	कामिनीमद भञ्जक, अत्यन्त स्तम्भक, नपुंसकता नाशक।
४७३९	बाकुच्यादि लोहम्	जरा, मृत्यु, विष ।
४९६६	भैरव रसः	रसायन ।
४९७३	भोगपुरन्दरीगुटिका	शुक्र स्तम्भक, अत्यन्त वाजीकरण तथा बलमांस वर्द्धक

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३४०	धात्री योगः	रसायन ।
४५११	पीलु रसायनम्	अर्श, ग्रहणी, गुल्म, आदिमें अमृतोपम।
४५३८	फलद्रावः	वाजीकरण ।
४५३९	,,	,,

(४२) राजयक्ष्माधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८३७	दशमूलादि क्वाथः	खांसी, ज्वर, क्षय, निर्बलता ।
२८४३	दशमूलादिपञ्च-दशाङ्गः	क्षय, खांसी; पसली, कन्धे और शिरकी पीड़ा ।
२९३३	द्राक्षा रसादियोगः	रक्तपित, क्षतक्षय, खांसी ।
३२६०	धान्यकादि क्वाथः	पार्श्व पीड़ा, ज्वर, श्वास ।
३८३३	पिप्पल्यादि कषायः	पसली शूल, ज्वर, श्वास ।
४५४९	बलादि कल्कः	क्षतक्षय ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९८४	द्राक्षादि चूर्णम्	ज्वर, खांसी, शोथ।
२९८८	,, ,,	कृशता, शोष, क्षय, रक्तपित्त, अग्निमांद्य ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्यगुण
२९८९	द्राक्षादिचूर्णम्	दाह, पित्त, छर्दि, मूर्च्छा, अरुचि, क्षय तृष्णा, श्वास।
३४१७	नागबला योगः	क्षय।
४६१९	बलादि चूर्णम्	क्षय, जीर्णज्वर, शिरशूल, पित्तविकार, रुधिर क्षय, श्वास, इन्द्रियोंकी क्षीणता, मार्गचलने या अधिक श्रमसे उत्पन्न थकान।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्यगुण
३०१८	दशमूल हरीतकी	बलि, पलित, खांसी, क्षय, ज्वर, हिचकी, ग्रहणी, अरुचि।
३०३०	द्राक्षाद्यवलेहः	पित्तज खांसी, क्षय, पाण्डु।
३४६२	नवनीतावलेहः	क्षयके रोगीको पुष्ट करता है।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्यगुण
३०५०	दशमूलाद्यं घृतम्	शिर, पसली और शरीरकी पीड़ा, खांसी, श्वास, ज्वर, स्वरभेद, क्षय।
३०६९	द्राक्षा „	क्षीणता, श्वास, वातपित्त ज्वर, रक्त पित्त, राजयक्ष्मा।
३२९३	धात्र्यादि घृतम्	राजयक्ष्मा, रक्तपित्त खांसी, अपस्मार।
३४९०	निर्गुण्डी „	क्षतक्षय, शोष।
४०६७	पथ्याद्यं „	क्षतक्षय।
४०७९	पाराशरं „	उपद्रव युक्त राजयक्ष्मा।
४०८०	„ „	राजयक्ष्मा, रक्तपित्त, पाण्डु, अर्श।
४०८८	पिप्पल्याद्यं „	क्षय, खांसी।
४१०१	पुनर्नवाद्यं „	शोष।
४६६०	बलाद्यं „	उरःक्षत। खांसी, हृद्रोग।
४६६१	„ „	राजयक्ष्मा, स्वरभंग।
४६६३	„ „	क्षय, खांसी, ज्वर, शिरशूल, पार्श्व शूल।

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्यगुण
३१२२	दशमूलासवः	धातुक्षय, खांसी, श्वास, अरुचि, शूल, शोथ, वमन।
३१२८	द्राक्षारिष्टः	राजयक्ष्मा, खांसी, श्वास, उरःक्षत।
४१४८	पञ्चसायकः	हर प्रकारका क्षय।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१५२	पिप्पलीमूलाद्योऽरिष्टः	क्षय, खांसी, ज्वर, तिल्ली, अग्निमांद्य ।
४१५३	पिप्पल्यरिष्टः	क्षय, ज्वर, खांसी, अरुचि ।
४१५८	पुष्करमूलासवः	क्षय, खांसी, शोथ ।
४६९८	बब्बूल्यासवः	क्षय, खांसी, श्वास ।
	भृङ्गराजासवः	क्षय, खांसी और कृशतानाशक तथा अत्यन्त बलवर्द्धक ।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४७०७	बल्यादि लेपः	राजयक्ष्मा में होने वाला शिरशूल, पार्श्वशूल, अंशशूल ।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१९६	दरदेश्वरो रसः	क्षय, खांसी आदि
३२०८	दिव्यामृत रसः	श्वास, खांसी, क्षय, ज्वरादि ।
३६०९	नवायस चूर्णम् (वृहत्)	राजयक्ष्मा । क्षय, खांसी, श्वास, ज्वर, अग्निमांद्य, शोथ, ग्रहणी ।
३६६०	नीलकण्ठ रसः	राजयक्ष्मा ।
४२८२	पञ्चामृत पर्पटी (भैरव नाथी)	सम्पूर्ण लक्षण युक्त क्षय, श्वास, खांसी, छर्दि, प्रसेक, अरुचि।
४२८६	पञ्चामृत रसः	राजयक्ष्मा, खांसी, श्वास, अग्निमांद्य, शिरोरोग ।
४२८८	” ”	त्रिदोषज, क्षय, खांसी, ज्वर ।
४२९२	” ”	राजयक्ष्मा ।
४४३०	पूर्णचन्द्रो रसः	राजयक्ष्मा, पित्तज्वर, शोष, पाण्डु ।
४४७५	प्राणदा पर्पटी	अतिसार, ज्वर, खांसी, यक्ष्मा, अग्निमांद्य ।
४४७६	प्राणनाथ रसः	दुस्साध्य राजयक्ष्मा, शोथ, ग्रहणी, ज्वर ।
४४७७	प्राणनाथ रसः	राजयक्ष्मा, शोष, ज्वर, ग्रहणी आदि ।
४४७९	प्राणीकल्पद्रुम गोल रसः	क्षय, शोष, पित्तरोग, खांसी, श्वासादि ।
४९४७	भास्करो रसः	राजयक्ष्मा, कफ, वायु।

(४३) वातरक्ताधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८२६	दशमूलक्षीरयोगः	वातरक्तकी पीड़ा।
३२४९	धात्र्यादि क्वाथः	वातरक्त।
३४४९	नवकार्षिक ,,	वातरक्त, कुष्ठ, पामा, लाल चाठे, कपालिका कुष्ठ।
३७५५	पटोलादि क्वाथः	पित्ताधिक वातरक्त।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
२९७४	देवदाली प्रयोगः	वातरक्त, कुष्ठ, भगन्दर।
३४१०	नवक्षारकं चूर्णम्	वातरक्त, अरुचि।
३४४३	निम्बादि ,,	भयङ्कर वातरक्त, कुष्ठ।
	गुग्गुलु-प्रकरणम्	
४०१२	पुनर्नवा गुग्गुलुः	वातरक्त, वृद्धि
	घृत-प्रकरणम्	
३०७४	द्राक्षादि घृतम्	वातरक्त।
४०८१	पारूषकं ,,	वातरक्त, ज्वर, विसर्प।
	तैल-प्रकरणम्	
३०८२	दशपाकबलातैलम्	वातरक्त, वातपित्त।
३३०३	धत्तूराद्यं ,,	,, ,,
३४९९	नागबला ,,	,, (बस्तिकेलिये)
४११५	पद्मक तैलम् (खुड्डाक)	वातरक्त।
४११६	पद्मकतैलम् (महा)	वातरक्त, ज्वर।
४१२३	पिण्ड तैलम् (महा)	गलित स्फुटित भयङ्कर वातरक्त, कुष्ठ, विसर्प।
४१२४	,, ,,	वातरक्त।
	लेप-प्रकरणम्	
३५२९	नवनीतादि लेपः	शरीरका फूटना।
	रस-प्रकरणम्	
३२२०	द्वादशायसः	वातरक्त, गलत्कुष्ठ, शोथ, कण्डू, अग्निमां.
४२९१	पञ्चामृत रसः	वातरक्त।

(४४) वातव्याध्यधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८१७	दध्यम्ल प्रयोगः	अपतानक ।
२८२१	दन्त्यादि योगः	ऊरुस्तम्भ ।
२८२९	दशमूलादिकषायः	विश्वाची, अपबाहुक
२८३६	,, क्वाथः	गृध्रसी, खञ्जवात, पङ्गुता ।
२८५१	दशमूल्यादि ,,	मिन्मिन्वात ।
३७०१	पञ्चमूली कषायः	गृध्रसी, शूल, गुल्म।
३७०३	,, क्वाथः	मन्यास्तम्भ ।
३७१०	पञ्चमूल्यादिक्षीरम्	वातव्याधि ।
३८३८	पिप्पल्यादि क्वाथः	ऊरुस्तम्भ ।
३८५१	पुनर्नवादि ,,	,,
४५५१	बलादि क्वाथः	बाहुशोष, मन्यास्तम्भ ।
४५५५	,, ,,	बाहुशोष नाशक नस्य ।
४७८३	भल्लातकादिक्वाथः	कष्ट साध्य ऊरुस्तम्भ ।
४७८५	भल्लातकादि योगः	ऊरुस्तम्भ ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४२१	नागरादि चूर्णम्	२१ दिनमें समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं ।
३८९०	पत्रलवणम्	वातव्याधि ।
३९३७	पिचुमन्दाद्युद्वर्तनम्	ऊरुस्तम्भ ।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३००१	दशसार वटी	समस्त वातज रोग।
४००४	प्रभावती वटिका	हर्षवात, गुल्म, प्रमेह ।
४६४०	बल्लितर्वादिगुटिका	सर्वाङ्ग वायु ।
४८५३	भुजङ्गी गुटिका	समस्त वातजरोग ।

गुग्गुलु-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३०१२	द्वात्रिंशको गुग्गुलुः	गृध्रसी, पक्षाघात, आम, उदावर्त, अन्त्रवृद्धि ।
४००८	पक्षाघातारि गुग्गुलुः	वातव्याधि, पक्षाघात ।
४०११	पथ्यादि गुग्गुलुः	गृध्रसी, नवीन खञ्जवात, कष्टसाध्य प्लीहा ।
४६४५	बिल्वाद्यो गुग्गुलुः	वातकफज रोग ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३०४०	दशमूल घृतम्	वातव्याधि ।
३०४५	दशमूलादि ,,	,,
३४७५	नागर ,,	वातकफ, कटिशूल, आमशूल ।
४०५३	पञ्चतिक्तकं ,,	ऊर्ध्वजत्रुगत वातरोग, सन्धि अस्थि, मज्जागत वायु ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०९२	पिप्पल्याद्यं घृतम्	पार्श्वशूल, कटिशूल, ठोडीका रह जाना।
४८७४	भल्लातकाद्यं ,,	खल्ली शूल ।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०९३	दशमूलादि तैलम्	वातव्याधि ।
३०९५	दशमूलाद्यं ,,	अर्दित ।
३०९६	दशमूलाद्यं ,,	समस्त वातव्याधि ।
३०९७	दशाङ्ग ,,	आक्षेपक, हनुस्तम्भ, अपतन्त्रक, अर्दित, अपबाहुक, पक्षाघातादि ।
३०९८	दशाङ्ग ,,	समस्त वातव्याधि, विशेषतः अपस्मार, उन्माद, गूंगापन, गद्गदता ।
३११६	द्विपञ्चमूलाद्यं तैलम्	पुराना ऊरुस्तम्भ, खुडवातादि ।
३५०१	नारायण तैलम्	वातव्याधि, अपस्मारादि अनेक रोग ।
३५०२	,, ,, (मध्यम)	पक्षाघात, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ इत्यादि ।
३५०३	,, ,, ,,	समस्त भयङ्कर वातव्याधि ।
३५०४	,, ,, (महा)	मनुष्य और पशुओंके समस्त वातज रोग ।
३५१०	निर्गुण्डी तैलम्	वातव्याधि ।
४१०८	पञ्चमूलाद्यं ,,	कफान्वित वात ।
४१२८	पीलुपर्ण्याद्यं तैलम्	ऊरुस्तम्भ ।
४१३२	पुष्पराजप्रसारणी ,,	भग्न, अस्थि, खञ्जता, पङ्गुता, हनुग्रह ।
४१३७	प्रसारणि ,,	समस्त वातव्याधि।
४१३८	,, ,,	कफरोग, समस्त वातव्याधि ।
४१३९	,, ,,	एकाङ्ग तथा सर्वाङ्ग ग्रह, त्वचागत वायु और अन्य समस्त वातव्याधि।
४१४०	,, ,,	समस्त वातव्याधि, विशेषतः हनुस्तम्भ, जिह्वास्तम्भ, अर्दित, मन्यास्तम्भ ।
४१४१	,, ,,	हृदय और शिरके रोग, पक्षाघात, अङ्गोंका सूख जाना इत्यादि ।
४१४२	,, ,,	गृध्रसि, अस्थिभङ्ग, त्वचा, शिरा और सन्धिगतवायु; अपस्मार, उन्माद ।
४१४३	,, ,,	समस्त वातव्याधि, वातकफजरोग, कुब्जता, अङ्गोंका सङ्कुचित हो जाना आदि ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१४४	प्रसारणी तैलम्	सन्धि शिरागत वायु
४६८१	बला ,,	समस्त वातव्याधि।
४६८३	,, ,,	धातुगत वायु।
४६८४	,, ,,	समस्त वातव्याधि, धातुक्षीणता, भग्न आदि।
४६८५	बलादि ,,	समस्त वातजरोग।

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६९९	बलारिष्टः	प्रबल वातव्याधि नाशक तथा बल पुष्टि और अग्नि-वर्द्धक।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५३३	नारीपयसादिप्रयोगः	जानु और बाहुगत वायु।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१९५	दरदादिवटी	समस्त वातव्याधि।
३६२४	नागरसायनम्	८० प्रकारके वात-रोग, विशेषतः धनुर्वात।
४२७०	पञ्चाननवटी	आमवात, वात-व्याधि।
४२९९	पञ्चामृतलोह गुग्गुलुः	वातव्याधि, स्नायु-रोग, मस्तिष्क रोग।
४४१३	पिष्टी रसः	अर्दित, कम्पवात, दाह, सन्ताप, पित्तज मूर्च्छा।

(४५) विद्रधि गलगण्ड गण्डमाला तथा ग्रन्थ्यधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३८४५	पुनर्नवादि क्वाथः	वातज विद्रधि।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४४४	निर्गुण्ड्याद्यं वमनम्	अपची।
४९३०	पाठामूल योगः	भयङ्कर अन्तरविद्रधि।
४८३९	भूनिम्बाद्यं चूर्णम्	विद्रधि।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३११५	द्विपञ्चमूली तैलम्	विद्रधि, गुल्म।
३५२३	नील्यादि ,,	कक्षाग्रन्थि, विद्रधि।
४१४५	प्रियङ्ग्वाद्यं ,,	विद्रधि, व्रण।
४५३१	फणिज्जकाद्यं ,,	कण्ठमाला, गल-गण्ड, गलग्रन्थि।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	लेप-प्रकरणम्	
३१३६	दन्तीमूलादि लेपः	ग्रन्थिको फाड़ता है।
३१३७	दन्त्यादि ,,	पक्व और शोथ-युक्त अन्तर विद्रधि।
३१५०	देवदार्वादि ,,	कफज गलगण्ड।
३५३४	निचुलादि ,,	गलगण्ड।
४१८२	पलाशादि ,,	,,
४७१८	ब्रह्मदण्डी योगः	स्फुटित गण्डमाला।
४९०९	भल्लातकादि लेपः	गण्डमाला।
	नस्य-प्रकरणम्	
३५९६	निर्गुण्डीमूलनस्यम्	गण्डमाला।
	मिश्र-प्रकरणम्	
४५१५	पूपलिका योगः	अपची।

(४६) विषाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
३२३५	धत्तूरयोगः	उन्मत्त कुत्तेका विष।
३४०४	नीलनीमूल कल्कः	मण्डलीक सर्पका विष।
३८५५	पुनर्नवा योगः	एकबार सेवन करनेसे १ वर्ष तक सर्प और बिच्छू नहीं काटता।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
३९७०	पिप्पल्याद्योऽगदः	दूषी विष।
३९७५	पुत्रजीवमज्जायोगः	उग्र दूषी विष।
४६३१	बिल्व प्रयोगः	मूषक-विष।
	घृत-प्रकरणम्	
३४७४	नागदन्त्याद्यं घृतम्	कीटविष, मूलविष, गरविष।
	तैल-प्रकरणम्	
३१०५	दीपतैलाभ्यङ्गः	कानखजूरेका विष।
	लेप-प्रकरणम्	
३१५७	द्विनिशादि लेपः	दन्त और नखविष।
३५३०	नवसादरादि ,,	बिच्छूका विष।
४१६३	पञ्चशिरीष ,,	समस्त प्रकारके विष।
४१८०	पलाशबीजादि ,,	बिच्छूका विष।
४१९१	पिण्डीतगरमूल योगः	सर्पदंशपर लेप

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
		करनेसे मृतप्राय: रोगी को भी चेत आ जाता है।
४९१९	भृङ्गविषनाशकलेपः	भौंरेका विष।

धूप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१६०	दशाङ्ग धूपः	समस्त प्रकारके विष।

अञ्जन-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५७२	नक्तमालाद्यञ्जनम्	विषकी बेहोशी।
३५८३	नागार्जुनी गुटिका	बिच्छूका विष।
४२३०	पिण्डीतगराञ्जनम्	सर्पदंशसे मृतप्राय: रोगीको भी सचेत कर देता है।
४७२६	बिल्वादि योगः	सर्प, बिच्छू, चूहे और मकड़ीका विष।

नस्य-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५९२	नवसादरचूर्णयोगः	बिच्छूका विष।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४९५३	भीमरुद्रो रसः	अलर्क विष।
४९५४	,, ,,	सर्पदंश तथा विष-भक्षण से उत्पन्न मूर्च्छा।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२२९	दशाङ्गागदः	समस्त कीट विष।
३२३४	द्राक्षाद्यगदः	सर्व प्रकारके विष, विशेषतः मण्डलीक सर्पका विष।
४४९५	पञ्चशिरीषोऽगदः	चर तथा अचर विष।
४५०३	पारावत पुरीषादि योगः	बिच्छूका विष।

(४७) विसर्पाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८८२	दुरालभादिकषायः	तृष्णा, विसर्प।
२९३१	द्राक्षादिशोधन योगः	विसर्प (रेचक योग है।)
३७२२	पटोलादि क्वाथः	पित्तज, कफज और विषजन्य विसर्प, विस्फोटक।
३७४१	पटोलादि क्वाथः	विसर्प।
३७४२	,, ,,	,,
३७५१	,, ,,	,,

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३७६७	पटोलादि वमन	विसर्प।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३०६४	दूर्वादि घृतम्	शोफयुक्त विसर्प, ज्वर, दाह, पाक, विस्फोटक।
४०६९	पद्मकाद्यं "	विसर्प, विषैले जन्तुओंका दंश, मकड़ीका विष।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
३१४१	दशाङ्ग लेपः	विसर्प, व्रणशोथ।
३५२७	नलादि "	विसर्प।
३५५८	न्यग्रोधादि लेपः	ग्रन्थिविसर्प।
३५६०	" "	दाह, पाक, पीड़ा, स्राव और शोथ युक्त आगन्तुक तथा रक्तज विसर्प।
४१६२	पञ्चवल्कलादिलेपः	अत्यन्त दाह युक्त अग्निविसर्प।
४१७२	पद्मकादि "	विसर्प, दाह।
४१७४	पद्मिनी पङ्कादि "	पित्त विसर्प।
४२०७	प्रपौण्डरीकादि "	दाहयुक्त विसर्प, शोथ, विस्फोटक।
४२०९	प्रपौण्डरीकादि "	पित्तज विसर्प।
४२१०	" " "	" "
४७०६	बलादि "	ग्रन्थि "

(४८) विस्फोटक मसूरिकाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोग नाम	मुख्य गुण
२८३०	दशमूलादिकषायः	त्रिदोषज विस्फोटक।
२८३५	" काथः	वातज "
२८८८	दुरालभादिकाथः	पित्तकफज मसूरिका।
२८८९	" "	विस्फोटक।
२९२२	द्राक्षादि काथः	उपद्रव सहित पित्तज विस्फोटक।
२९३६	द्वादशाङ्ग काथः	द्वन्द्वज, त्रिदोषज और रक्तज विस्फोटक।
३३६३	नागरादि काथः	वातकफज मसूरिका
३३८५	निम्बादि "	पीपयुक्त मसूरिकाको धोनेका योग।
३३८७	" "	पित्तज तथा रक्तज मसूरी।
३३९१	" "	अपक्व विस्फोटक।
३४०२	निशादि "	मसूरिका, विस्फोटक, रोमान्तिका, वमन, ज्वर।
३६९७	पञ्चमूलादि काथः	कफज मसूरिका।
३७१६	पटोल मूलादि "	मसूरिका।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३७२६	पटोलादि क्वाथः	अपक्व मसूरिका को शान्त और पक्वको शुद्ध करता है। विस्फोटक ज्वर में अत्यन्त उपयोगी।
३७६२	" "	विस्फोटकज्वर।
३७६३	" "	विस्फोटक, दुष्टव्रण विसर्प।
४७९९	भूनिम्बादिकषायः	सर्व प्रकारके विस्फोटक।
४८००	" क्वाथः	विस्फोटक, दाह, ज्वर, मुखशोष, वमन, तृषा।
४८०८	" "	कफज विस्फोटक
४८०९	" "	मसूरिका।
४८१०	" सप्तकः	दुःखदायी शीतला।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३८८५	पञ्चवल्कल चूर्णम्	पीपयुक्त मसूरिका।
४६२१	बादरचूर्ण योगः	मसूरिकाको शीघ्र पकाता है।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०५५	पञ्चतिक्तकं घृतम्	त्रिदोषज विस्फोटक विसर्प, खुजली।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५५०	निशादि लेपः	रोमान्तिका, विस्फोटक।
३५५९	न्यग्रोधादि "	वातज मसूरिका।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२१६	दुर्लभो रसः	मसूरिका।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३४३	धात्र्यादि गण्डूषः	मसूरिकामें होनेवाले मुख तथा कण्ठ के घाव।

(४९) वृद्ध्यधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९६४	दार्वी चूर्णम्	अण्डवृद्धि।
३९०५	पथ्यादि चूर्णम्	वृद्धि।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३११३	द्विक्षीरकाद्यं तैलम्	अण्डवृद्धि।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१६१	पञ्चवल्कलादिलेपः	पित्तज अण्डवृद्धि।
४१९४	पिप्पल्यादि "	अन्त्रवृद्धि।
४१९८	पुनर्नवादि "	वृद्धि, शूल।
४७१९	ब्राह्मणयष्टिकादि "	कुरण्ड रोग।
४९१२	भार्ग्यादि "	अण्डवृद्धि गण्डमाला।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	रस-प्रकरणम्	
४९३६	भक्तोत्तर चूर्णम्	अन्त्रवृद्धि, भयंकर वातज वृद्धि, उदर रोग, शूल।

(५०) व्रणाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८१२	दण्डोत्पला स्वरसः	शस्त्रका घाव।
२८४७	दशमूलावसेचनम्	व्रणप्रक्षालन योग है।
३४०९	न्यग्रोधादि गणः	व्रण, भग्न, दाह।
३७४४	पटोलादि क्वाथः	घावको शुद्ध करता और भरता है।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३८८६	पञ्चवल्कलादिचूर्णम्	घावको भरता है।
३९९१	प्रियङ्ग्वादि ,,	,, ,,

गुग्गुलु-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०१०	दशक गुग्गुलुः	व्रण, वातरक्त, सूजन।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०६१	दार्व्यादि घृतम्	व्रण रोपण।
३०६३	दूर्वादि ,,	,, ,,
४१०६	प्रपौण्डरीकाद्यं घृतम्	,, ,,

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१०८	दूर्वादि तैलम्	व्रण रोपण।
३११२	द्रवन्त्यादि ,,	व्रण शोधक।
३५१३	निर्गुण्डी तैलम्	दुष्ट नाडी व्रण, अपची, विस्फोटक।
४११३	पटोली ,,	अग्निदग्ध व्रणकी पीड़ा, स्राव, दाह।
४१३४	प्रपौण्डरीकाद्यं तैलम्	व्रण रोपण।
४८८३	भल्लातक तैलम्	व्रण, नाडीव्रण; कफवातज अपची।
४८८९	भूधात्र्यादि ,,	दुष्ट, स्रावयुक्त और छोटे छिद्र वाले पुराने घाव।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१३३	दग्धयवादि लेपः	अग्निदग्ध व्रण।
३१४६	दूर्वादि ,,	घावोंका पित्तज शोथ।
३१५४	द्राक्षादि ,,	व्रणशोधक।
३३११	धत्तूरपत्रादि ,,	व्रणशोथ।
३३१३	धातकी चूर्ण ,,	अग्निदग्ध व्रण, मर्मस्थानोंका दुष्ट नाड़ी व्रण, विसर्प, लूता विष।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५३७	निम्बदलादि लेपः	व्रण शोधक, रोपण।
३५३८	निम्बपत्र प्रयोगः	,, ,,
३५३९	निम्बपत्रादि योगः	,, ,,
३५४०	,, ,,	,, ,,
३५४१	,, ,,	,, ,,
३५४३	निम्बादि लेपः	व्रणके कृमि।
३५६१	न्यग्रोधादि ,,	व्रणशोथ।
४१८६	पारदादिमलहरम्	व्रणरोपण।
४१८७	,, ,,	व्रण शोधक, रोपण, नाडीव्रणनाशक।
४१९६	पुत्रजीवकादि लेपः	वेदनायुक्त काले फोड़े, विषैले फोड़े, कक्षा-ग्रन्थि, गलेकी गांठ।
४७२०	ब्राह्म्यादि लेपः	व्रणके स्थानपर बाल उगाता है।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	धूप-प्रकरणम्	
३५६६	निम्बादि धूपः	व्रणके कृमि, कण्डू, पीड़ा
३५७०	निर्गुण्ड्यादि धूपः	दुष्ट पीड़ायुक्त विषमव्रण, भगन्दर।
	रस-प्रकरणम्	
३१९२	दरद गुटिका	नाडीव्रण, घावसे रक्त या मवाद आना, घाव के कृमि, विचर्चिका, पुराना घाव इत्यादि।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३६८२	निम्बादि वर्तिः	शोधन रोपण।
४५१७	प्रतिसारणीय क्षारः	व्रणको फोड़ता है।
४७६२	बदरीफल त्वगादि वर्तिः	नाड़ी व्रण।



(५१) शिरोरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२५१	धात्र्यादि क्वाथः	भ्रूशूल, शङ्खकशूल, अर्द्धावभेदक, सूर्यावर्त तथा नेत्ररोग।

गुग्गुलु-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४६१	निम्बादि गुग्गुलुः	वातकफज भयङ्कर शिरपीड़ा।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०६६	देवदार्वादि घृतम्	शिर, भ्रू, ललाट

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
		और शंख प्रदेशकी पीड़ा; आधासीसी।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०८३	दशमूल तैलम्	कफज, सन्निपातज तथा वातकफज भयङ्कर शिरशूल, नेत्रशूल।
३०८४	” ”	कफवातज शिरोरोग
३०८७	” ”	सन्निपातज ”
३०८८	” ”	वातकफज शिरोरोग, शोथ, मन्यास्तम्भ।
३०८९	” ”	वातज, पित्तज तथा कफज शिरशूल, सूर्यावर्त, जलदोषज शिरोरोग।
३११७	द्विहरिद्राद्यं तैलम्	अरुंषिका।
३३०७	धुस्तूर ”	शिरशूल, दाह, सन्निपातज्वर।
३५०७	निम्बतैलप्रयोगः	इसकी नस्यसे बहुत पुराना पलित रोग नष्ट हो जाता है।
३५०८	निम्बबीजतैलम्	पलित रोगको समूल नष्ट करता है (नस्य)
३५१५	निर्गुण्डयादि ”	समस्त शिरशूल।
३५२०	नीली तैलम्	पलित।
३५२१	नीलोत्पलादि तैलम्	शिरपीड़ा, पलित।
४१३५	प्रपौण्डरीकाद्यं ”	समस्त शिरोरोग।
४६८७	बलाद्यं यमकम्	समस्त ऊर्ध्व जत्रुगत रोग (नस्य)।
४८९१	भृङ्गराज तैलम्	भयङ्कर शिरशूल, शंखक, आधाशीशी, भौंका दर्द।
४८९२	” ”	पलित।
४८९३	” ”	इन्द्रलुप्त।
४८९४	” ”	पलित।
४८९६	” ”	दारुण, पलित, इन्द्रलुप्त, कण्डू।
४८९९	” ”	बालोंका गिरना, शिरशूल, मन्यास्तम्भ, खालित्य, दारुण।
४९००	” ”	दारुणको नष्ट और बालोंको काले, घने आर घुंघराले करता है।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१४४	दार्व्यादि लेपः	शंखक।
३१७९	देव दार्वादि ”	शिरपीड़ा।
३३१४	धात्री कसेरवादि ”	पित्तज शिरपीड़ा, नकसीर।
३३१५	धात्री फलाद्यो ”	दारुण।
३३१९	धात्र्यादि लेपः	पलित।
३५३६	निम्ब जलादि ”	अरूंषिका।
३५५२	नीलाब्ज केसरादि ”	दारुण।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३५५५	नीलोत्पलाद्यो लेपः	खालित्य ।
३५५६	नील्यादि „	पलित । (खिजाब)
४१६८	पथ्यादि „	„
४१८५	पारद „	शिरकी जू (यूका), लिक्षा ।
४१९२	पिण्याकादि „	अरुंषिका ।
४२१२	प्रियालादि „	दारुण ।
४७०१	बदरीमूलादियोगः	शिरपीड़ा ।
४७०५	बलादि लेपः	शंखक, अनन्तवात।
४७१५	बृहत्यादि „	इन्द्र लुप्त ।
४९०३	भद्रादि „	शंखक ।
४९०७	भल्लातकादि „	इन्द्रलुप्त ।
४९२०	भृङ्गादि „	„

नस्य-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१८१	दशमूल्यादिनस्यम्	आधासीसी, शिरशूल, सूर्यावर्त ।
३१८३	दाडिमादि „	शिरशूल ।
३५९२	नवसादरचूर्णयोगः	वातकफज शिरशूल ।
३५९४	नागरादि नस्यम्	तीव्रतर शिर पीड़ा ।
४२४९	पलितनाशकनस्यम्	सैकड़ों औषधोंसे न आराम होने वाला पलित ।
४२५१	पिप्पल्यादिनस्यम्	शिरशूल
४२५३	पिप्पल्याद्यं „	„
४२५५	पूतिकरञ्जाद्योऽवपीडः	कृमि ।
४९३२	भृङ्गराजादिनस्यम्	सूर्यावर्त ।

(५२) शीतपित्ताधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४४०	निम्बयोगः	शीत पित्त, कोठ, कण्डू ।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१०२	दार्वादि तैलम्	शीत पित्त ।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१४५	दूर्वादि लेपः	शीत पित्त, पामा, कृमि ।

(५३) शूलाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८६४	दार्वादि क्वाथः	वातकफशूल, आम, मलावरोध ।
२८७८	दुरालभादि कल्कः	वातपित्तज शूल ।
२९२४	द्राक्षादि क्वाथः	पित्तकफज „
३२५४	धात्र्यादि प्रयोगः	पित्तशूल ।
३३५३	नागरादि कल्कः	परिणाम शूल ।
३३६१	नागरादि क्वाथः	शूलको ३ दिनमें नष्ट करता है ।
३३६५	„ „	वातज शूल ।
३३७६	निदिग्धिकादि „	शूल ।
३७५४	पटोलादि „	पित्तकफज शूल।
३७७५	पथ्यादि „	आम, कफज शूल ।
३८५४	पुनर्नवादि स्वेदः	वातज शूल ।
४५५४	बलादि क्वाथः	„ „
४५७४	बिल्वादि „	कफज „
४५९४	बीजपूररसयोगः	दारुणहृच्छूल ।
४५९६	बीजपूरस्वरसयोगः	पसली, बस्ति और हृदय का शूल, कोष्ठकी वायु ।
४६०१	बृहत्यादि क्वाथः	भयङ्कर पित्तज शूलको तुरन्त नष्ट करता है ।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
२९४५	दन्त्यादि चूर्णम्	विरेचन होकर परिणाम शूल नष्ट होता है ।
२९५४	दाडिमादि „	पित्तज शूल ।
२९६६	दीप्यकादि „	शूल, मन्दाग्नि ।
३२७३	धात्री चूर्णम्	पित्तज शूल ।
३८९५	पथ्यादि चूर्णम्	कफज शूल ।
३९०२	„ „	वातज, कफज और आम जन्य शूल ।
३९०४	„ „	वातज शूल।
३९४१	पिप्पलीमूलादि प्रयोगः	शूल ।
४६३५	बिल्वादि चूर्णम्	शूलको तुरन्त नष्ट करता है
४६३७	बीजपूर „	वातज शूल ।
	गुटिका-प्रकरणम्	
४६४१	बिल्वादि गुटिका	वातज शूल ।
	अवलेह-प्रकरणम्	
३४६९	नारिकेल खण्डः	शूल, वमन, अम्लपित्त, अरुचि,
३४७०	नारिकेलखण्डपाकः	परिणाम शूल ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४७२	नारिकेलामृतम्	भयंकर शूल, अम्लपित्त, परिणाम शूल, अन्नद्रव शूल ।
४०३८	पूग खण्डः	शूल, अजीर्ण, अम्लपित्त, तृषा, कब्ज।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०५८	दाधिकं घृतम्	हृदय शूल, पार्श्वशूल, योनिशूल, गुल्म ।
४०८४	पिप्पली „	परिणाम शूल ।
४६७१	बीजपूराद्यं „	शूल, यकृच्छूल, पार्श्वशूल, गुल्म ।

रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३२८	धात्रीफलादिचूर्णम्	पित्तज शूल ।
३३३०	धात्री लोहम्	समस्त प्रकार के शूल, परिणाम शूल, अम्लपित्त ।
३३३१	धात्री लोहम्	कष्ट साध्य शूल, अम्लपित्त ।
४२६९	पथ्यात्मको रसः	वातज शूल ।
४३०७	पथ्यादि लोहम्	त्रिदोषज परिणाम शूल ।
४३२७	पानीयभक्तवटी	शूल, ग्रहणी, गुल्म।
४३३४	पारद द्रुतिः	शूल, गुल्म ।
४४१४	पीडाभञ्जी रसः	आमशूल, विशेषतः कृमिशूल ।
४४२२	पुनर्नवादिमण्डूरम्	परिणाम शूल ।
४९५२	भीममण्डूर वटकः	„ „
४९६२	भूदारो रसः	वातज शूल ।

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६७५	नारिकेल योगः	परिणाम शूल ।
४४९१	पञ्चकोलसिद्धपेया	कफज शूल ।

(५४) शोथाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८६३	दार्व्यादि कल्कः	सर्व शोथ ।
२८९४	देवदारु-क्षीरम्	शोथ ।
२९०३	देवद्रुमादियोगः	शोथोदर, उदर के कृमि ।
३७५६	पटोलादि क्वाथः	पित्तजशोथ, तृष्णा, ज्वर ।
३७७०	पथ्यादि कषायः	उदर और हाथ पैरोंका रक्ताश्रित शोथ ।
३८२६	पिप्पली मूलादि क्वाथः	कफज शोथ ।
३८४३	पुनर्नवादि कल्कः	„ „
३८४९	„ क्वाथः	शोथ ।
३८५०	„ „	शोथोदर, पाण्डु, स्थूलता ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३८५२	पुनर्नवादि क्वाथः	सर्वाङ्ग शोथ, उदर, खांसी, शूल ।
३८५३	,, स्वेदः	शोथ ।
३८५६	पुनर्नवाष्टकम्	सर्वाङ्ग शोथ, उदर, पाण्डु ।
३८६४	पूतिकरञ्जरसयोगः	कफपित्तज शोथ ।
३८७२	पृश्निपर्ण्यादिशृतम्	पित्तज शोथ ।
४५६७	बिल्वपत्ररसादि योगः	त्रिदोषज शोथ, मलावरोध ।
४७९७	भूनिम्बादि कल्कः	सर्वाङ्गशोथ ।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९४७	दशमूलादि चूर्णम्	शोथ ।
२९६३	दार्वादि योगः	समस्त शोथ ।
२९७१	देवदार्वादि चूर्णम्	शोथ ।
३९२५	पाठाद्यं ,,	त्रिदोषज पुराना शोथ ।
३९६६	पिप्पल्याद्यं ,,	शोथ ।
३९७७	पुनर्नवादि ,,	सर्वाङ्ग शोथ । आठ-प्रकारके उदररोग ।

गुग्गुलु-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०१३	पुनर्नवादि गुग्गुलुः	त्वग्दोष, शोथोदर, स्थौल्य, कफप्रसेक।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०१९	दशमूल हरीतकी	भयङ्कर शोथ ।
४०३४	पुनर्नवहरीतक्यवलेहः	शोथ, गुल्म, उदर।
४०३५	पुनर्नवादि लेहः	कफज शोथ, श्वास, खांसी, अरुचि ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०४७	पञ्चकोलाद्यं घृतम्	शोथ ।
४०६१	पटोलमूलादि ,,	शोथ, दाह, विसर्प विष ।
४०९६	पुणर्नवा ,,	शोथ ।
४०९८	पुनर्नवादि ,,	,,
४०९९	,, ,,	वातज शोथ ।
४१००	पुनर्नवाद्यं ,,	कष्टसाध्य शोथ ।
४१०३	,, ,,	भयङ्कर शोथ, प्लीहा, गुल्म ।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०८६	दशमूल तैलम्	भयङ्कर शोथ, श्वास, ज्वर खांसी
४१०९	पञ्चमूलाद्यं ,,	भयङ्कर वातकफज शोथको ३ दिनमें नष्ट करता है ।
४१२९	पुनर्णवादि ,,	शोथोदर, जीर्णज्वर

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१५६	पुनर्नवासवः	प्रवृद्ध शोथ, पाण्डु उदर, संग्रहणी ।
४१५७	,, ,,	शोथोदर, प्लीहा, यकृत् ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
लेप-प्रकरणम्		
३१५३	दोषघ्न लेपः	हर प्रकारका शोथ ।
३१५६	द्विनिशादि लेपः	आगन्तुक तथा रक्तज शोथ ।
४१६५	पटोलादि „	पित्तज शोथ ।
४१९७	पुनर्नवादि „	कफवातज शोथ ।
४१९९	„ „	सर्व प्रकारके शोथ।
४७१२	बिभीतकादि „	शोथकी दाह, पीड़ा।
४९०४	भल्लातकशोथान्तक लेपः	भिलावेकी सूजन ।
४९०५	„ „	„ „

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
रस-प्रकरणम्		
३२१२	दुग्ध वटी	अनेक प्रकारका शोथ, पाण्डु कामला ।
३२१३	„ „	अनेक प्रकारका शोथ, ग्रहणी, विषम ज्वर, मन्दाग्नि, पाण्डु ।
३२१४	„ „	शोथ, संग्रहणी, जीर्णज्वर, अतिसार।
४२९३	पञ्चामृत रसः	जलदोष जन्य भयङ्कर शोथ, जलोदर तथा ज्वरातिसार युक्त शोथ ।

(५५) श्लीपदाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
कषाय-प्रकरणम्		
३८०१	पलाशमूल स्वरसः	श्लीपद
३८६५	पूतिकरञ्जरस योगः	„
चूर्ण-प्रकरणम्		
३९३८	पिण्डारक बन्धूक योगः	भयङ्कर श्लीपद ।
३९५२	पिप्पल्यादिचूर्णम्	श्लीपद, वातव्याधि
४६१४	बलादि „	असाध्य श्लीपद ।
गुग्गुलु-प्रकरणम्		
४०१०	पथ्यादि गुग्गुलुः	श्लीपद

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
घृत-प्रकरणम्		
२०३४	दन्ती घृतम्	दुस्साध्य श्लीपद ।
३२९४	धात्र्यादि घृत गुग्गुलुः	कठोर श्लीपद, सन्निपातज गण्डमाला, पुराना शोथ ।
लेप-प्रकरणम्		
३३१२	धत्तूरादि लेपः	दुस्साध्य पुराना श्लीपद

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	रस-प्रकरणम्	
३६५३	नित्यानन्द रसः	कफ वातज तथा रक्त, मांस और मेदगत श्लीपद, अन्त्रवृद्धि ।

(५६) स्त्रीरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८२४	दशमूल क्वाथः	सूतिका रोग।
२८२५	„ „	„ „
२८२७	„ दुग्धप्रयोग	„ „
२८३४	दशमूलादि क्वाथः	गर्भाशय शोधक।
२८७०	दार्व्यादि „	पीड़ायुक्त श्वेत, लाल, पीला और काला प्रदर।
२८७१	„ „	पीड़ायुक्त लाल तथा सफेद प्रदर।
२८७६	दुग्धशोधक तथा वर्द्धक प्रयोगाः	दुग्ध शोधक तथा वर्द्धक।
२८९६	देवदार्वादि क्वाथः	प्रसूताका शूल, खांसी, ज्वर, तन्द्रा, मूर्च्छा, तृष्णा, अतिसार आदि अनेक उपद्रव।
३२४१	धातक्यादि क्वाथः	प्रदरको ३ दिनमें नष्ट करता है।
३२४४	धात्री रस प्रयोगः	बहुमूत्र।
३२४६	धात्रीरसादिप्रयोगः	योनिदाह।
३३७३	नारिकेल पुष्पादि क्वाथः	गर्भस्राव।
३३९४	निम्बादि प्रयोगः	कफज प्रदर।
३३९५	„ „	सूतिका रोगको शीघ्र नष्ट करता है।
३४०१	निर्गुण्ड्यादिक्वाथः	कफवातज कष्ट साध्य सूतिका रोग।
३६९६	पञ्चमूल क्वाथः	सूतिका रोग।
३७३८	पटोलादि क्वाथः	अण्डाधार रोग।
३७४३	„ „	दुग्धशोधक है।
३७७९	पथ्यादि क्वाथः	सर्वदोषज प्रदर।
३७८८	पद्मकादि गण	दुग्धवर्द्धक, वृष्य, बृंहण।
३७९९	पलाशपत्र योगः	इसके सेवनसे पुत्रोत्पत्ति होती है।
३८०३	पलाशादि क्वाथः	पीला, सफेद प्रदर, पाण्डु
३८०९	पाठादि „	दुग्ध शोधक।
३८३६	पिप्पल्यादि „	वातज, पित्तज, कफज तथा सन्निपातज सूतिकारोग।
३८४०	„ यूषः	वातज, पित्तज, कफज

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
		तथा सन्निपातज सूतिका रोग ।
३८४२	पुत्रकमञ्जरी योगः	इसके सेवनसे पुत्र प्राप्ति होती है ।
३८७१	पृश्निपर्ण्यादिनिर्यूहः	गर्भिणीका रक्तपित्त कामला, शोथ, श्वास, खांसी, ज्वर ।
४५२०	फलत्रिकादि क्वाथः	सन्निपातज रक्त-प्रदर ।
४५४७	बलादि कल्कः	रक्तप्रदर ।
४५५०	" "	पित्तज प्रदर ।
४५८४	बिल्वादि क्वाथः	योनिशूलको तुरन्त नष्ट करता है ।
४५८५	" "	गर्भिणीके वातज रोग।

चूर्ण-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२७०	धातकीपुष्पादियोगः	बन्ध्यत्व ।
३२७४	धात्रीयोगः	रक्तप्रदर ।
३२७७	धात्र्यादियोगः	पुराना बन्ध्यत्व ।
३४१३	नागकेसर योगः	इसके सेवनसे स्त्री वीर पुत्रको जन्म देती है ।
३४१४	" "	श्वेत प्रदर ।
३४१५	नागकेसरादियोगः	गर्भस्थापकः
३४४६	नीलाब्जकन्द योगः	गर्भपातजनित विकार
३४४८	नीलोत्पलादिचूर्णम्	प्रदर ।
३९११	पद्मबीजादि योगः	स्तनोंको दृढ़ करता है
३९१५	पलाशादिचूर्णम्	योनिकी दुर्गन्ध, पिच्छिलता, क्लेद ।
३९३२	पारावत पुरीष योगः	गर्भवतीका रक्तस्राव।
३९३५	पार्श्वपिप्पलादियोगः	पुत्रोत्पादक ।
३९५५	पिप्पल्यादिचूर्णम्	गर्भरोधक ।
३९५९	" "	बन्ध्यत्व
३९८५	पुष्यानुग चूर्णम्	रक्तप्रदर, योनिदोष, रजोदोष, प्रसूतरोग, योनिस्राव ।
४६०९	बब्बूरचूर्ण योगः	प्रदर ।
४६१५	बलादि चूर्णम्	रक्त प्रदर ।
४६१७	" "	इसके प्रभावसे पुत्र प्राप्त होता है ।
४६१८	" "	बन्ध्यत्व निवारक ।
४८४१	भूमिकुष्माण्डादि योगः	स्तन्यवर्द्धक, पौष्टिक।
४८४२	भूम्यामलक्यादि चूर्णम्	२-३ दिनमें भयङ्करप्रदर नष्ट हो जाताहै ।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६४४	बोलवटिका	क्षय, पाण्डु, प्रसूत रोग ।

अवलेह-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४०१४	पञ्चजीरकगुडः	प्रसूतरोग, योनिरोग, शरीरकी दुर्गन्धि

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
		और वातव्याधि नाशक; तथा गर्भिणीके लिये हितकारी ।
४०१५	पञ्चजीरक पाकः	प्रसूत रोग, योनि रोग, कृशता ।
४०३७	पुष्करलेहः	सर्व उपद्रव युक्त पुराना प्रदर ।
४८५६	भद्रोत्कटाद्यवलेहः	सूतिका रोग, अफारा ।

घृत-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३२९०	धात्री घृतम्	सोमरोग, तृष्णा, दाह, मूत्ररोग ।
३२९१	” ”	”
३४९५	नीलोत्पलादि ”	रक्तप्रदर, पित्तज गुल्म ।
३४९७	न्यग्रोधाद्यं ”	नीला, लाल, श्वेत, काला और अन्य हर प्रकारका कष्ट साध्य प्रदर । योनिशूल, योनिदाह ।
४०५७	पञ्चपल्लवाद्यं ”	योनिकी दुर्गन्ध, आर्तवविकार ।
४०९४	पिप्पल्याद्यं ”	सूतिका रोग ।
४५२८	फल ”	योनिदोष, रजोदोष, गर्भस्राव, बन्ध्यत्व ।
४५२९	” ”	”
४५३०	फल घृतम्	योनिशूल, योनिविभ्रंश, योनिका बाहर आ जाना इत्यादि ।
४६५७	बलादि ”	इसके प्रभावसे स्त्री गर्भ धारण कर लेती है ।
४८७०	भद्रोत्कटाद्यं ”	सूतिका रोग, ग्रहणी और पाण्डुका नाश तथा दूधको शुद्ध करता है ।

तैल-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१००	दाडिमाद्यं तैलम्	स्तनोंको उन्नत करता है ।
३३०५	धातक्यादि ”	सूतिका रोग ।
३३०६	” ”	सूजन युक्त, ऊपरको उभरी हुई तथा विप्लुता, उपप्लुता शूल युक्त योनि ।
५४९८	नताद्यं तैलम्	योनि शूल, विप्लुता योनि ।

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१४९	पत्राङ्गासवः	सफेद तथा लाल पीड़ा युक्त प्रदर, ज्वर, शोथ ।

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	लेप-प्रकरणम्	
३५४७	निशादि लेपः	स्तनमूलकी तीव्र पीड़ा।
४१६०	पञ्चकोलादि ,,	स्तन्य शोधक।
४१७३	पद्मकादि ,,	रक्त प्रदर, योनिदाह।
४१७७	परूषकादि ,,	मूढगर्भ।
४१७८	पलाशफलादि ,,	योनिकी शिथिलता।
४१७९	पलाशबीज ,,	गर्भरोधक।
४१८३	पाठादि ,,	सुखपूर्वक, प्रसव करा देता है।
४९१४	भूस्तृणादियोनि ,,	बल वीर्यवान सुन्दर पुत्रोत्पादक।
	धूप-प्रकरणम्	
३५६३	निम्बकाष्ठ धूपः	गर्भरोधक।
	रस-प्रकरणम्	
३२१९	द्रुतिसार रसः	बन्ध्यत्व, सूतिका रोग।
३६१३	नष्ट पुष्पान्तक रसः	नष्टार्तव, योनिदाह, योनिक्लेद।
४४१९	पुत्रप्रदो रसः	
४४४२	प्रतापलङ्केश्वर रसः	प्रसूतिवात, दन्तबन्ध, भयङ्कर सन्निपात, अतिसार।
४४४८	प्रदरान्तक लोहम्	लाल, सफेद, पीला तथा काला दुस्साध्य प्रदर, योनिशूल कटिशूल।
४४४९	प्रदरान्तको रसः	असाध्य प्रदर।
४४५०	प्रदरारि ,,	दुस्साध्य प्रदर।
४४५१	,, लोहम्	श्वेत, लाल, काला और पीला दुस्साध्य प्रदर, कटिशूल।
४४५५	प्रमदानन्दो रसः	समस्त जरायुरोग।
४७५२	बोलपर्पटी ,,	रक्तप्रदर, रक्तार्श।
	मिश्र-प्रकरणम्	
३३३७	धत्तूरमूल योगः	गर्भरोधक।
३६७१	नागरादि ,,	वातज प्रदर।
४५०९	पिप्पल्यादि वर्तिः	योनिस्राव नाशक तथा योनि शोधक।
४५१०	पुनर्नवामूलधारणम	मूढगर्भ।
४७६३	बदरीमूल योगः	स्तन्य वर्द्धक, स्तन्यकृमि नाशक।
४७६७	बस्त मूत्रादि ,,	बन्ध्यत्व।

(५७) स्नायुक रोगाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
३३९९	निर्गुण्डीस्वरस प्रयोगः	कष्ट साध्य स्नायुक (नहरुवे) को ६ दिनमें नष्ट कर देता है ।
	लेप-प्रकरणम्	
४७०३	बब्बूलबीजादि लेपः	शोथ और पीडा-युक्त हर प्रकारका स्नायुक ।

(५८) स्वरभेदाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८७७	दुग्धामलकयोगः	स्वरशोधक ।
३३७९	निदिग्धिकादिप्रयोगः	स्वरभेद ।
४५५१	बदरीपत्रयोगः	स्वरभंग, खांसी ।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
३९५४	पिप्पल्यादि चूर्णम्	कफज स्वरभंग ।
४५२३	फलत्रिकादि चूर्णम्	स्वरभंग ।
४६३८	ब्राह्म्यादि ,,	स्वर शोधक तथा वर्द्धक ।
४६३९	,, ,,	,, ,,
	अवलेह-प्रकरणम्	
३४६७	निदिग्धिकाद्यो ऽवलेहः	स्वरभंग, प्रतिश्याय, खांसी ।
४६५०	बिभीतकावलेहः	स्वरभेद ।
	घृत-प्रकरणम्	
४०९०	पिप्पल्याद्यं घृतम्	कफज स्वरभंग ।
	रस-प्रकरणम्	
४३९२	पारिजातटङ्कणम्	स्वरभंग, क्षय इत्यादि समस्त रोग।
४९६८	भैरवरसः	कष्टसाध्य स्वरभेद, श्वास, खांसी ।

(५९) हिक्का श्वासाधिकारः

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	कषाय-प्रकरणम्	
२८३२	दशमूलादि काथः	श्वास, खांसी, पार्श्व-शूल।
२८४२	" जलम्	हिचकी, श्वास।
२८४५	" यवागूः	पार्श्वपीडा, श्वास, हिचकी।
२८८७	दुरालभादि काथः	वातज श्वास, खांसी, ज्वर।
२९००	देवदार्वादि "	समस्त श्वास, खांसी,
३२५३	धात्र्यादि "	भयङ्कर हिक्का।
४७८२	भल्लातकादि "	कफ प्रधान तमक श्वास तथा वातज श्वास।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
२९५६	दाडिमाद्यं चूर्णम्	खांसी, श्वास।
२९८०	द्राक्षादि "	भयङ्कर श्वास।
२९९७	द्विक्षारादि "	हिक्का, श्वास।
३४२२	नागरादि "	खांसी, श्वास।
३४३७	निदिग्धिकादि योगः	३ दिनमें श्वासको नष्ट कर देता है।
४६२८	बिभीतकाद्यं चूर्णम्	श्वास, खांसी।
४८३२	भार्ग्यादि योगः	हिक्का, श्वास।
	गुटिका प्रकरणम्	
४५२६	फलत्रय गुटी	श्वास, खांसी।
४८५१	भार्ग्यादि गुटिका	" " अरुचि
	अवलेह-प्रकरणम्	
४०२६	पिप्पली मूलाद्यवलेहः	हिचकी, खांसी।
४०२९	पिप्पल्यादि लेहः	अत्यन्त बढ़े हुवे श्वासको व्यवस्थित करता है।
४८६३	भार्गीगुडावलेहः	भयङ्कर श्वास, खांसी।
४८६४	भार्ग्यादि लेहः	श्वास।
	घृत-प्रकरणम्	
३०५१	दशमूलाद्यं घृतम्	हिक्का, श्वास।
३४८५	नारीक्षीराद्यं "	हिचकी।
४६७०	बीजपूरकाद्यं "	" श्वास, स्वर-भंग, पसलीकी पीडा।
४६७५	ब्राह्मी "	श्वास, खांसी।
	तैल प्रकरणम्	
४८९५	भृङ्गराज तैलम्	श्वास, खांसी।
	धूम्र-प्रकरणम्	
३१६३	देवदार्वादिधूम्रप्रयोगः	भयङ्कर श्वास।
३५७१	नेपालिकादि " "	हिक्का

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
	रस–प्रकरणम्	
४३८७	पारदादि रसः	खांसी, श्वास, शूल।
४३९०	पारदादि वटी	श्वास, खांसी, कफ, मंदाग्नि, अफारा।
४४११	पिप्पल्यादि लोहम	भयंकर हिचकी, छर्दि तथा तृष्णा २ दिनमें अवश्य शान्त हो जाती है।
४४६९	प्रवाल प्रयोगः	हिक्का।

(६०) हृद्रोगाधिकारः

कषाय प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२८४०	दशमूलादि क्वाथः	हृद्रोगनाशक
३३५१	नागर क्वाथः	अग्निमांद्य, शूल, हृद्रोग, वायु।
३८६०	पुष्करादि कल्कः	वातज हृद्रोग।
३८६१	„ क्वाथः	हृद्रोग।

चूर्ण–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
२९५३	दाडिमादि चूर्णम्	हृद्रोग, श्वास, अपतन्त्रक।
३४१६	नागबला „	„ „ „
३९२०	पाठादि „	हृद्रोग, गुल्म, शूल।
३९६९	पिप्पल्याद्यं „	वातज हृद्रोग।
३९७१	पिप्पल्याद्यो योगः	हृच्छूल, कष्ट साध्य हृद्रोग
३९८२	पुष्कर मूलचूर्णम्	हृच्छूल, श्वास, हिक्का।

घृत–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३०५५	दाडिमाद्यं घृतम्	हृद्रोग, पाण्डु, शूल।
३०७२	द्राक्षादि „	पित्तज हृद्रोग।

तैल–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१३१	पुनर्नवाद्यं तैलम्	वातज हृद्रोग।

आसवारिष्ट–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४१५०	पार्थाद्यरिष्टः	हृदय और फेफड़ेके समस्त रोग।

रस–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६३४	नागार्जुनाभ्र रसः	हृद्रोग, छर्दि, अरुचि, हृल्लास, ज्वर।
४२६८	पद्मसारो रसः	पित्तज हृद्रोग।
४४५२	प्रभाकर वटी	हृद्रोग।

परिशिष्ट

(१) धातु शोधन मारण

तथा

पारद–प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण	
४३५२	„ „ „	तलभस्म ।	
४३५३	„ „ „	„	
४३५४	„ „ „	पीतभस्म ।	
४३५५	„ „ „	„	
४३५६	„ „ „	श्वेतभस्म ।	
४३५९	पारद शोधनम्		
४३६०	„ „		
४३६१	„ „		
४३६२	„ „		
४३६३	„ „		
४३६४	„ „		
४३६५	„ स्वेदनम्	१	पारदस्याष्टसंस्काराः
४३६६	„ „	१	
४३६७	„ „	१	
४४६८	„ मर्दनम्	२	
४३६९	„ मूर्च्छनम्	३	
४३७०	„ „	३	
४३७१	पारदोत्थापनम्	४	
४३७२	पारदाधः पातनम्	५	
४३७३	पारदोर्ध्व पातनम्	५	
४३७४	„ „	५	
४३७५	पारदस्य तिर्यक पातनम्	५	
४३७६	पारदस्य रोधन संस्कारः	६	
४३७७	„ नियमन संस्कारः	७	
४३७८	„ „ „	७	
४३७९	„ दीपन „	८	
४३८०	„ अग्निस्थायी करणम्		
४४०४	पित्तल-भस्मविधिः	८ पुटी भस्म ।	
४४०६	पित्तल शोधनम्		
४४७२	प्रवाल मारणम्	२ पहरी भस्म ।	
४४७३	„ „		
४४७४	„ लक्षणगुणाः		

(२) औषधि कल्पाधिकारः

३१९९	देवदाली कल्पः	श्वेत कुष्ठ ।
३२००	„ „	रसायन ।
३३२४	धामार्गव „	
३५९८	निर्गुण्डी „	रसायन वाजीकरण।
३५९९	„ „	„
४२५८	पिप्पली „	रसायन है। खांसी श्वास, गलग्रह, प्रहणी, पाण्डु, विषमज्वर, शोथ, हिक्का, प्लीहा आदि ।
४७५९	बीजपुर „	
४९३३	भृङ्गराज „	रसायन

(३) मिश्राधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

२८१३	दधिदुग्धकृतिः	तत्काल दूधसे दही बनाता है ।
२८१४	„ „ „	„
२८१५	„ „ „	गन्नेके रससे दूध बनाता है
२८१६	„ „ „	तक्रसे दही बनाता है ।
४८१५	मेदनीयकषायदशकः	

चूर्ण-प्रकरणम्

२९४८	दशासार चूर्णम्	समस्त पित्तविकार प्रमेह, तृष्णा, दाह

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३४१९	नागरङ्गफलादि चूर्णम्	परदेशका पानी नहीं लगता।
३८८४	पञ्चलवणम्	
३९८३	पुष्करमूल चूर्णम्	शरीरकी दुर्गन्ध।

गुटिका-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४६४२	बीजपूरादि गुटिका	कफज रोग।

लेप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३१५५	द्विनिशादि योगः	सौन्दर्य वर्द्धक तथा शरीरको सुगन्धित करनेवाला।

धूप-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
४९२१	भुजङ्गादि नाशक धूपः	

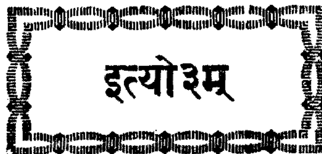
रस-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३६४६	नाराच रसः	रेचक
४३५७	पारदभस्मानुपानानि	
४३५८	पारदविकार हरो योगः	

मिश्र-प्रकरणम्

संख्या	प्रयोगनाम	मुख्य गुण
३३३६	धत्तूरबीज शुद्धिः	
३६६७	नखद्रव्य शुद्धिः	
४४९२	पञ्चगव्यम्	
४४९३	पञ्चमित्रम्	
४४९७	पञ्चाम्लम्	
४५०७	पिप्पली शोधनम्	
४५१२	पुष्परेचनी गुटिका	आमको निकालती है





हमारे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

अष्टांगहृदयम् (वाग्भट कृत, हिन्दी अनु० सहित)—लालचन्द्र वैद्य (सजिल्द) ५५
(अजिल्द) ४५

क्लीनीकल मेडिसिन (दो भागों में) —अत्रिदेव शीघ्र

कायचिकित्सा—धर्मदत्त वैद्य १६

चरकसंहिता—श्री जयदेव विद्यालंकार (हिन्दी अनुवाद सहित) भाग १ (सजिल्द) ४५
(अजिल्द) ३०
भाग २ (अजिल्द) ३०; (सजिल्द) ४५

देहधात्वग्निविज्ञानम्—हरिदत्त शास्त्री १५

भावप्रकाशनिघंटु—विश्वनाथ द्विवेदी कृत हिन्दी टीका सहित २०

भैषज्यरत्नावली—श्री जयदेव विद्यालंकार कृत हिन्दी टीका सहित, आठवां संस्करण
(अजिल्द) ९०; (सजिल्द) १३५

माधवनिदान (मधुकोश संस्कृत टीका, हिन्दी अनुवाद सहित)—नरेन्द्रदेव शास्त्री
(अजिल्द) ३५; (सजिल्द) ५५

रसतरंगिणी (सदानन्द कृत हिन्दी टीका) —काशीनाथ शास्त्री (सजिल्द) ६०
(अजिल्द) ३५

रसरत्नसमुच्चय (धर्मानन्द शर्मा कृत हिन्दी व्याख्या)—अत्रिदेव विद्यालंकार
(अजिल्द) ३०; (सजिल्द) ४५

रसेन्द्रसारसंग्रह—नरेन्द्रनाथ (सजिल्द) २५
(अजिल्द) २०

व्याधिविज्ञान—आशानन्द पञ्चरत्न, प्रथम भाग १५, द्वितीय भाग (सजिल्द) ४५
(अजिल्द) ३०

सुश्रुतसंहिता (सम्पूर्ण)—अत्रिदेव विद्यालंकार कृत हिन्दी टीका सहित (सजिल्द) १२०
(अजिल्द) ९०

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली वाराणसी पटना मद्रास

आधुनिक चिकित्साशास्त्र

धर्मदत्त वैद्य

इस ग्रन्थ की यह विशेषता है कि इसमें आधुनिक काय-चिकित्सा के वर्णन के साथ-साथ आयुर्वेदिक काय-चिकित्सा का भी उल्लेख है। ये दोनों एक-दूसरे के सहायक सिद्ध हुए हैं। जहां आधुनिक काय-चिकित्सा How के प्रश्न का समाधान करती है वहां आयुर्वेदिक काय-चिकित्सा Why के प्रश्न का समाधान करती है, अर्थात् रोग का मूल कारण बताती है, जिसके फलस्वरूप चिकित्सा सुगम और ठीक होती है। यह स्पष्ट बताती है कि शरीर के तीन मूल तत्त्व देहाग्नि, देहप्राण, तथा देहवृद्धि हैं। इनके किसी अंग में मन्दता आ जाने से रोगोत्पत्ति होती है।

आयुर्वेद का एक विशेष दृष्टिकोण है जिससे त्रैदोषिक या त्रैधातुक चिकित्सा-शास्त्र का अध्ययन किया जाता है और रोगों में औषध, आहार, विहार आदि उपचारों का विधान किया जाता है। आयुर्वेद का मूल त्रैदोषिक दृष्टिकोण कभी नहीं बदला चाहे औषधियाँ भले ही बदलती रहें। अतः आयुर्वेद उपचारों के प्रयोग में स्वतन्त्रता देता है। इस प्रकार आयुर्वेद-चिकित्साशास्त्र का छात्र त्रैधातुक या त्रैदोषिक दृष्टिकोण को कभी दृष्टि से ओझल नहीं होने देता। इसलिए इन दोनों चिकित्साओं के अध्ययन से अवश्यमेव लाभ ही होगा क्योंकि दोनों का लक्ष्य रोगी को रोगमुक्त करना ही है। (सजिल्द) रु० १४०

(अजिल्द) रु० ६५

मानव-शरीर-रचना (दो भागों में)

मुकुन्दस्वरूप वर्मा

सम्पूर्ण चिकित्साशास्त्र आयुर्वेद के जिन तीन मूल आधारों पर आश्रित है उन्हें शरीररचनाविज्ञान, शरीरक्रियाविज्ञान और विकृतिविज्ञान कहते हैं उनमें शरीररचनाविज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके बिना अन्य आयुर्वेद-शाखाओं का ज्ञान होना सम्भव ही नहीं।

इस विषय में पाश्चात्य वैज्ञानिकों के ही अनुसंधान उपयोगिता की दृष्टि से अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। पाश्चात्य भाषाओं से अपरिचित चिकित्सक इन अनुसंधानों से लाभ नहीं उठा सकते। इस अभाव की पूर्ति के लिए इस ग्रन्थ की रचना की गई है। दुरूहता को हटाने के लिए अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों के अनुवाद में स्वीकृत वैज्ञानिक-तकनीकी-शब्दावली का प्रयोग किया गया है और सैकड़ों चित्रों से समझाया गया है।

प्रथम भाग में ऊतकविज्ञान (Histology), भ्रूणविज्ञान (Embryology) और अस्थिविज्ञान (Osteology) विषयों का वर्णन है और द्वितीय भाग में सन्धिविज्ञान (Syndesmology), मांसपेशीविज्ञान (Myology) और वाहिका-विज्ञान (Angiology) विषयों का विवेचन हुआ है।

यह कृति शरीर-रचना के जिज्ञासुओं के लिए अतीव उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रथम भागः रु० ५०

द्वितीय भागः (अजिल्द) रु० ७५; (सजिल्द) रु० १००

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली वाराणसी पटना मद्रास